सूर्यकुमारी पुस्तकमाला २१

भारतेन्दु ग्रन्थावली

तीसरा खण्ड

गोलोकवासी भारत-भूषण भारतेन्दु बा० हरिश्चंद्र जी
की समग्र प्राप्त गद्य रचनाओं का संग्रह

संकलनकर्ता तथा संपादक

ब्रजरत्नदास बी० ए०, एल-एल० बी०

काशी नागरी प्रचारिणी सभा

प्रकाशक—नागरीप्रचारिणी सभा—काशी
मुद्रक—महताबराय, नागरीमुद्रण—काशी
प्रथम संस्करण सं० २०१० वि०, २००० प्रतियाँ
मूल्य

परिचय

जयपुर राज्य के शेखावाटी प्रांत में खेतड़ी राज्य है। वहाँ के राजा श्री अजीतसिंह जी बहादुर बड़े यशस्वी और विद्याप्रेमी हुए। गणित-शास्त्र में उनकी अद्भुत गति थी। विज्ञान उन्हें बहुत प्रिय था। राजनीति में वह दक्ष और गुणग्राहिता में अद्वितीय थे। दर्शन और अध्यात्म की रुचि उन्हें इतनी थी कि विलायत जाने के पहले और पीछे स्वामी विवेकानंद उनके यहाँ महीनों रहे। स्वामी जी से घंटों शास्त्र-चर्चा हुआ करती। राजपूताने में प्रसिद्ध है कि जयपुर के पुण्यश्लोक महाराज श्रीरामसिंह जी को छोड़कर ऐसी सर्वतोमुखी प्रतिभा राजा श्रीअजीतसिंह जी ही में दिखाई दी।

राजा श्रीअजीतसिंह जी की रानी आउआ (मारवाड़) चाँपावत जी के गर्भ से तीन संतति हुईं—दो कन्या, एक पुत्र। ज्येष्ठ कन्या श्रीमती सूर्यकुमारी थी जिनका विवाह शाहपुरा के राजाधिराज सर श्रीनाहरसिंह जी के ज्येष्ठ चिरंजीव और युवराज राजकुमार श्रीउमेदसिंह जी से हुआ। छोटी कन्या श्रीमती चाँद-कुँवर का विवाह प्रतापगढ़ के महारावल साहब के युवराज महाराजकुमार श्रीमान-सिंह जी से हुआ। तीसरी संतान जयसिंह जी थे जो राजा श्रीअजीतसिंह जी और रानी चाँपावतजी के स्वर्गवास के पीछे खेतड़ी के राजा हुए।

इन तीनों के शुभचिंतकों के लिये तीनों की स्मृति, संचित कर्मों के परिणाम से, दु:खमय हुई। जयसिंह जी का स्वर्गवास सत्रह वर्ष की अवस्था में हुआ। सारी प्रजा, सब शुभचिंतक, संबंधी, मित्र और गुरुजनों का हृदय आज भी उस आँच से जल ही रहा है। अश्वत्थामा के व्रण की तरह यह घाव कभी भरने का नहीं। ऐसे आशामय जीवन का ऐसा निराशात्मक परिणाम कदाचित् ही हुआ हो। श्रीसूर्यकुमारी जी को एकमात्र भाई के वियोग की ऐसी ठेस लगी कि दो ही तीन वर्ष में उनका शरीरांत हुआ। श्रीचाँदकुँवर बाई जी को वैधव्य की विषम यातना भोगनी पड़ी और भ्रातृ-वियोग और पति-वियोग दोनों का असह्य दु:ख वे झेल रही हैं। उनके एकमात्र चिरंजीव प्रतापगढ़ के कुँवर श्रीरामसिंह जी से मातामह राजा श्रीअजीतसिंह जी का कुल प्रजावान् है।

श्रीमती सूर्यकुमारी जी के कोई संतति जीवित न रही। उनके बहुत आग्रह करने पर भी राजकुमार श्रीउमेदसिंह जी ने उनके जीवन काल में दूसरा विवाह नहीं किया। किंतु उनके वियोग के पीछे, उनके आज्ञानुसार, कृष्णगढ़ में विवाह किया जिससे उनके चिरंजीव वंशांकुर विद्यमान हैं।

श्रीमती सूर्य्यकुमारी जी बहुत शिक्षित थी। उनका अध्ययन बहुत विस्तृत था। उनका हिंदी का पुस्तकालय परिपूर्ण था। हिंदी इतनी अच्छी लिखती थी और अक्षर इतने सुंदर होते थे कि देखनेवाले चमत्कृत रह जाते। स्वर्गवास के कुछ समय पूर्व श्रीमती ने कहा था कि स्वामी विवेकानंद जी के सब ग्रंथो, व्याखानो और लेखो का प्रामाणिक हिंदी अनुवाद मैं छपवाऊँगी। बाल्य-काल से ही स्वामी जी के लेखो और अध्यात्म विशेषत. अद्वैत वेदांत की ओर श्रीमती की रुचि थी। श्रीमती के निर्देशानुसार इसका कार्य्यक्रम बाँधा गया। साथ ही श्रीमती ने यह इच्छा प्रकट की कि इस संबध में हिंदी में उत्तमोत्तम ग्रंथो के प्रकाशन के लिए एक अक्षय निधि की व्यवस्था का भी सूत्रपात हो जाय। इसका व्यवस्थापत्र बनते बनते श्रीमती का स्वर्गवास हो गया।

राजकुमार श्रीउमेदसिंह जी ने श्रीमती के अंतिम कामना के अनुसार बीस हजार रुपए देकर काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा के द्वारा ग्रंथमाला के प्रकाशन की व्यवस्था की। तीस हजार रुपए के सूद से गुरुकुल विश्वविद्यालय, कांगडी में 'सूर्यकुमारी आर्यभाषा गद्दी (चेयर)' की स्थापना की।

पाँच हजार रुपए से उपर्युक्त गुरुकुल में चेयर के साथ ही सूर्यकुमारी निधि की स्थापना कर सूर्यकुमारी ग्रंथावली के प्रकाशन की व्यवस्था की।

पाँच हजार रुपए दरबार हाई स्कूल शाहपुरा में सूर्यकुमारी-विज्ञान भवन के लिए प्रदान किए।

स्वामी विवेकानंद जी के यावत् निबंधों के अतिरिक्त और भी उत्तमोत्तम ग्रंथ इस ग्रंथमाला में छापे जायँगे और अल्प मूल्य पर सर्वसाधारण के लिये सुलभ होंगे। ग्रंथमाला की बिक्री की आय इसी में लगाई जायगी। यों श्रीमती सूर्यकुमारी तथा श्रीमान् उमेदसिंह जी के पुण्य तथा यश की निरंतर वृद्धि होगी और हिंदी भाषा का अभ्युदय तथा उसके पाठको को ज्ञान लाभ होगा।

निवेदन

भारतेंदु श्री हरिश्चद्र जी का जन्म भाद्रपद शुक्ला ५ (ऋषि-पंचमी) स० १९०७ (ता० ९ सितबर सन् १८५० ई०) को काशी में हुआ था और माघ कृष्ण ६ स० १९४१ (ता० २५ जनवरी सन् १८८५ ई०) को उनका देहावसान हुआ था। स० १९९१ में काशी नागरीप्रचारिणी सभा ने भारतेंदुजी की मृत्यु-अर्द्धशती मनाने का आयोजन किया और इसके साथ भारतेंदुजी की समग्र रचनाओं की चार भागों में एक सुसंपादित ग्रथावली भी प्रकाशित करने का निश्चय किया। इस के अनुसार यह योजना बनाई गई कि द्वितीय खंड मे काव्य ग्रथ, तृतीय में नाटक तथा चतुर्थ में गद्य रचनाएँ रहे और प्रथम खंड में बची हुई रचनाएँ, भारतेंदुजी की जीवनी, आलोचना आदि सगृहीत की जायँ। इसके अनुसार अर्द्ध शताब्दि के अवसर पर केवल द्वितीय खंड ही प्रकाशित हो सका, जिसमे यथाशक्ति तथा प्राप्त सभी काव्यग्रंथ, स्फुट कविताएँ तथा पद सकलित हो गए हैं। अन्य खडों का प्रकाशन इसके अनतर बहुत दिनों तक रुका रहा। इसके पद्रह वर्ष के अनतर जब दूसरा अवसर भाद्रपद शुक्ला ५ स० २००७ को भारतेंदु जन्मशती जयती मनाने का आया तब नाटक खड प्रकाशित हुआ। इस कारण कि अन्य खडों को सभा न जाने कब प्रकाशित करने में समर्थ हो सकेगी, इसी खड को प्रथम योजना के विपरीत प्रथम मानकर प्रकाशित किया गया। परतु बड़े सौभाग्य की बात है कि शीघ्र ही इस तीसरे खड के प्रकाशन में सभा ने हाथ लगा दिया और यह खड इस रूप में प्रकाशित हो सका। द्वितीय खड भी इसी समय समाप्त हो गया और उसके द्वितीय सस्करण के मुद्रण का आरभ हो गया है।

इस खड में पहिले ऐतिहासिक तथा पुरावृत्त सबधी तेरह रचनायें तथा इसके अनतर धर्म एव सप्रदाय सबधी बत्तीस रचनाएँ और लेख दिये गये हैं। इसके उपरात एक पूरा उपाख्यान तथा एक उपन्यास का एकमात्र प्राप्त प्रथम परिच्छेद देकर उनकी परिहासात्मक रचनाएँ सकलित कर यह खड पूरा करने का विचार था परंतु योजनानुसार स्थान बचने पर भारतेंदुजी के निबध देकर यह खड पूरा किया गया है। बचे हुए निबध, पत्र तथा अन्य रचनाएँ यात्रा विवरण आदि जो लगभग दो सौ पृष्ठों से कम न होंगे और जिसके खोज

आदि करने पर बढने ही की सभावना अधिक है वे सब चौथे खड मे उनकी जीवनी, आलोचना आदि के साथ दिए जायँगे। आशा है कि वह खड भी शीघ्र प्रकाशित हो जायगा।

हिंदी साहित्य सेवा करने का कुछ अनुभव प्राप्त करलेने पर बहुत दिनों से इच्छा थी कि हम अपने मातामह भारतेंदुजी की एक विस्तृत जीवनी लिखें और उनकी समस्त रचनाओं को ग्रथावली के रूप में प्रकाशित करावें। इस उद्देश्य से यह कार्य आरभ कर दिया तथा साधन एकत्र होने लगे। उसी समय यह ज्ञात हुआ कि यदि दस पद्रह वर्ष और पहिले इस कार्य में हाथ लगा देते तो उनकी जीवनी के सबध मे बहुत कुछ अन्य बातें भी ज्ञात हो जातीं तथा उन लोगो से जो भारतेंदु जी के समकालीन, मित्र, सहपाठी आदि रहे थे उनसे मिलकर हमें बहुत कुछ मौलिक बातें ज्ञात हो जातीं, परतु गत न शोचामि। ऐसे ही समय मे अर्द्ध शती मनाए जाने का अवसर आया और भारतेंदुजी की जीवनी प्रयाग हिंदुस्तान एकैडेमी से तथा भारतेंदुग्र थावली द्वितीय खड सभा से प्रकाशित हुआ। बाद मे सभा ने दो खड और प्रकाशित किए और यदि चौथा खड भी शीघ्र प्रकाशित हो जाय तो हमारी यह इच्छा पूरी हो जाय।

इस ग्र थावली के सपादन तथा सकलन मे सबसे बडी कठिनाई यह थी कि भारतेंदुजी की सभी रचनाओं की प्रतियाँ तथा उनके अनेक सस्करण कहीं भी एकत्र सगृहीत न मिल सके और जो कुछ प्राप्त भी हैं वे यत्र तत्र बिखरे हुए हैं। कितने ही सज्जनो तथा सस्थाओं से उन्हे प्राप्त करना, केवल मिलान कर लौटा देने मात्र के लिए भी, सुलभ नही प्रत्युत् दुर्लभ ही है। लिखने पर तो वे प्रायः मौन ही रहना उचित समझते हैं। भारतेंदुजी की रचनाएँ जिन्हें लिखे तथा प्रकाशित हुए अभी एक शताब्दि भी नही व्यतीत हो सका है, उन्हें अब प्राप्त करना इस प्रकार कठिन हो गया तब उनके समकालीन कवियों तथा सुलेखकों की रचनाओं के सबध मे क्या कहा जा सकता है? स्पष्टत: तो यही जान पडता है कि भारतीयों को अपने साहित्य ग्र थों से कुछ भी प्रेम नहीं थी और स्यात् अब भी नहीं है और उन्हे सुरक्षित रखना तो दूर स्यात् वे एकाद पारायण कर उन्हे नष्ट कर देते थे, नहीं तो भारतेंदु जी की रचनाओं, पत्र-पत्रिकाओं आदि के अनेक सग्रह सुविधा से मिल जाते। सतोष इतना ही है कि तत्कालीन कवि लेखकों की कुछ ग्र थावलियाँ इधर प्रकाशित होने लगी हैं, तब भी हिंदी प्रेमियों की अपने कवियों तथा लेखकों के प्रति उदासीनता क

ऊपर किया आक्षेप बना ही रहता है। कारण यही है कि इन ग्रथावलियों के प्रकाशन कराने का प्रयास उन्ही कवियों तथा लेखकों के वशजों ही द्वारा कुछ कुछ चल रहा है, जो कभी भी अनेक कारणों से बद हो सकता है।

यह भी ध्यान रखना चाहिए कि हिदी भारत की राष्ट्रभाषा तथा राजभाषा के उच्चासन पर प्रतिष्ठित हो चुकी है इसलिए प्रत्येक हिंदी प्रेमी, साहित्यसेवी, सस्था तथा प्रकाशक का यह कर्तव्य हो गया है कि वह उसके साहित्य-भाडार को इतना भरा पूरा कर दे कि उसे विश्व की किसी भी भाषा का मुखापेक्षी न होना पड़े और इसके लिए यह भी आवश्यक है कि हम अपनी निजी निधि की पूर्णरूपेण रक्षा भी करे। ऐसा न हो कि एक ओर हम नया साहित्य निर्माण करते चलें और दूसरी ओर पहिले का साहित्य लुप्त होता चले।

इस ग्रथावली के पाठकों से एक यह भी साग्रह निवेदन है कि यदि वे इसमे कोई त्रुटि, अभाव या भूल देखें और उन्हे दूर करने के साधन भी ज्ञात हों तो वे अवश्य थोडा कष्ट उठाकर मुझे सूचित कर दे जिससे उनके परिमार्जन करने का अवसर मिल सके।

भारतेंदुजी के साहित्य पर अब कुछ विशेष अनुशीलन भी होने लगा है और इसके लिए यथाशक्ति उनकी समग्र प्राप्त रचनाओं का प्रकाशन आवश्यक हो गया था। इन तीन खडों के प्रकाशन से यह अभाव बहुत अश मे दूर हो गया है और आशा है कि इनसे अनुशीलनकर्ताओं को बहुत कुछ सहायता स्वाध्याय करने मे मिलेगी।

अधिक वैशाख शु० १५ सं० २०१० }

विनम्र

व्रजरत्नदास

विषयानुक्रम

विषय	पृष्ठ संख्या
क. ऐतिहासिक रचनाएँ	१–४२०
१. अग्रवालों की उत्पत्ति	३–१२
२. चरितावली	१३–११४
विक्रम	१५–२०
कालिदास	२०–३३
रामानुजाचार्य	३३–४२
शंकराचार्य	४२–४६
जयदेव	४६–६०
पुष्पदंताचार्य	६१–६७
वल्लभाचार्य	६८–७०
सूरदास	७१–७७
सुकरात	७८–८०
नेपोलियन तृतीय	८०–८४
जंगबहादुर	८४–८६
द्वारिकानाथ मिश्र, जज	८६–८८
राजाराम शास्त्री	८८–९०
लार्डम्यो (मायो)	९०–१०१
लार्ड लॉरेंस	१०१–०३
महाराजाधिराज जार	१०३–०८
कुंडलियाँ	१०८–१४
३ पुरावृत्त संग्रह	११५–१६५
अकबर और औरंगजेब (नवोदिता हरिश्चंद्र चंद्रिका ख० ११ सं० १ सन् १८८४ ई०)	११७–२४
कन्नौज के राजा का दानपत्र (हरिश्चंद्र चंद्रिका ख० २ सं० १ सन् १८७४ ई०)	१२४–६
क्वींस कालेज के फाटकों के लेख	१२६–७

विषय		पृष्ठ संख्या
	इडिअन म्यूजियम, अशोक की चारदिवाली तथा बौध गया के लेख	१२७–३५
	राजा जन्मेजय का दानपत्र (हरिश्चद्र चद्रिका ख० १ स० ११ अगस्त सन् १८७४ ई०)	१३५–६
	मगलीश्वर का दानपत्र	१३६–७
	मणिकर्णिका (कविवचनसुधा २२ मई सन् १८७२ ई०)	१३७–६
	काशी (हरिश्चद्र मैगजीन पृ० ३६ सन् १८७३ ई०)	१२६–४६
	शिवपुर का द्रौपदी कुड (हरिश्चद्र चद्रिका ख० १ स ११ अगस्त १८७४ ई०)	१४६–७
	पपासर का दानपत्र (वही ख० २ स० ३ दिसबर १८७४)	१४७–५०
	कन्नौज का दानपत्र (वही ख० २ स० १ अक्टूबर १८७४)	१५०–२
	नाममगला का दानपत्र (हरि० मैगजीन पृ० ३६ सन् १८७३)	१५३–७
	चित्रकूटस्थ रमाकुड (हरि० च० मोहन च० स० १६३६)	१५७–६
	गोविददेव जी की प्रशस्ति ,,	१६०–२
	सारनाथ आदि के लेख	१६२–३
	प्राचीनकाल का सवत्-निर्णय (हरि० च० ख०१ स० ११ अगस्त १८७४)	१६३–५
४	महाराष्ट्र देश का इतिहास	१६७–७६
५	दिल्ली दरबार दर्पण	१८१–२१०
६	उदयपुरोदय	२११–४३
७	खत्रियों की उत्पत्ति	२४५–६०
८	बूँदी का राजवश	२६१–७०
६	काश्मीर कुसुम	२७१–३१२
१०	बादशाह दर्पण	३१३–४५
११	कालचक्र	३४७–७३
१२	रामायण का समय	३७७–८८
१३	पचपवित्रात्मा	३६१–४१६
	मुहम्मद	३६१–६६
	बीबी फातिमा	३६६–४०२
	अली	४०३–०६

विषय	पृष्ठ संख्या
इमाम हसन और इमाम हुसैन	४०६–१२
तालिका	४१४–१६
ख. धार्मिक रचनाएँ	४२१–८०८
१४ कार्तिक नैमित्तिक कृत्य	४२१–४३
१५ कार्तिक कर्म विधि	४४५–७५
१६ मार्गशीर्ष महिमा	४७७–६५
१७ माघस्नान विधि	४६७–५०२
१८ पुरुषोत्तम मास विधान	५०३–१५
१६ भक्तिसूत्र वैजयती	५१७–४३
२० वैष्णव सर्वस्व	५४५–६४
२१ वल्लभीय सर्वस्व	५६५–८०
२२ तदीयसर्वस्व	५८१–६४२
२३ श्री युगुल सर्वस्व	६४३–८८
२४ दूषणमालिका	५८६–६८
२५ तहकीकात-पुरी की तहकीकात	६६६–७११
२६ अष्टादश पुराण की उपक्रमणिका	७१३–५१
२७ उत्सवावली	७५३–६२
२८ हिंदी कुरानशरीफ	७६३–७४
२६ चतुश्श्लोकी	७७५–७७
३० श्रुतिरहस्य	७७६–८२
३१ ईशू ख्रुष्ट वा ईश कृष्ण	७८३–८८
३२ वैष्णवता और भारतवर्ष	७८६–८०२
ग. आख्यान	
३३ मदालसोपाख्यान	८०३–१२
३४ एक कहानी कुछ आप बीती कुछ जग बिती	८१३–१५
घ. प्रहसनात्मक	
३५ प्रहसन-पचक	८१७–३८
सबै जाति गोपाल की	८१६–२२
बसत पूजा	८२२–२५
ज्ञातिविवेकिनी सभा	८२५–२६

विषय	पृष्ठ सख्या
सडभडयोः सवाद.	८२६–३२
स्वर्ग में विचार सभा	८३२–३८
३६ स्तोत्र पचरत्न	८३८–६७
वेश्यास्तवराजः	८४३–४५
स्त्रीसेवापद्धति	८४५–४७
मदिरास्तवराजः	४४८–५१
ककरस्तोयत्र	८५१–५३
अग्रजस्तोत्र	८५४–५८
ईश्वर बडा विलक्षण है	८५८–६०
३७ मुशायरा	८६१–६७
३८ पाँचवे (घूसा) पैगम्बर	८६८–७३
३९ कानून ताजीरात शौहर	८७५–८७
४० भारतवर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है ?	८८९–९०३
४१ सगीत सार	९०५–१७
४२ खुशी	९१९–३४
४३ जातीय सगीत	९३५–८
४४ लेवी प्राण लेवी	९३८–४०
४५ हरिद्वार (दो पत्र)	९४०–४५
४६ लखनऊ	९४५–४७
४७ जब्बलपुर	९४८–५१
४८ सरयूपार की यात्रा	९५१–५८
४९ वैद्यनाथ की यात्रा	९५८–६५
५० जनकपुर की यात्रा	९६५–६६
५१ भारतेंदुजी के कुछ पत्र	९६७–७६

भारतेन्दु-ग्रन्थावली

भारतेन्दु ग्रन्थावली

तीसरा खण्ड

अगरवालों की उत्पत्ति

सं० १९२८

[प्रथमबार सन् १८७१ ई० मे द मेडिकल हॉल प्रेस से डबल-
क्राउन ३२ पेजी के पृ० स० २० में छपा। उसी वर्ष
कविवचन सुधा में विज्ञापन निकला।]

भूमिका

—※—

यह वंशावली परंपरा की जनश्रुति और प्राचीन लेखों से संगृहीत हुई है परंतु इसका विशेष भाग भविष्य पुराण के उत्तर भाग में के श्रीमहालक्ष्मी व्रत की कथा से लिया गया है। इसमें वैश्यों में मुख्य अगरवालों की उत्पत्ति लिखी है। इस बात का महाराज जय सिंह के समय में निर्णय हुआ था कि वैश्यों में मुख्य अगरवाले ही हैं। इन अगरवालों का संक्षेप वृत्तांत इस स्थान पर लिखा जाता है। इनका मुख्य देश पश्चिमोत्तर प्रांत है और बोली स्त्री और पुरुष सब की खड़ी बोली अर्थात् उर्दू है। इन के पुरोहित गौड़ ब्राह्मण हैं और इनका व्यवहार सीधा और प्रायः सच्चा होता है और इस जाति में एक विशेषता यह है कि इन में कोई ऊँचे नीचे नहीं होते और न किसी को कोई अल्ल (उपाधि) होती है। बनारस और मिरजापुर में तो पुरबियों का नाम भी सुनाता है पर जो देश में पूछो कि तुम पुरबिए हो कि पछाँही तो वे लोग बड़ा आश्चर्य करते हैं और कहते हैं कि पुरबिए शब्द का क्या अर्थ है। बनारस के पछाँही लोगों में भी ठीक अगरवाले की रीतें नहीं मिलतीं और उनकी बोली भी वैसी नहीं है। केवल जो घर दिल्ली वाले लोगों के हैं उनमें वे बातें हैं। इन लोगों में जैसा विवाहादिक में उत्साह होता है वैसा ही मरने में बरसों दुःख भी करते हैं परंतु जो बूढ़ा मरता है तब तो विवाह से भी धूमधाम विशेष कर देते हैं ॥ १ ॥

देश में तो जामा पगड़ी पहन के सब दाल भात खाते हैं पर इधर वह व्यवहार नहीं करते और केवल पूरी खाने में जाति का साथ देते हैं। एक बात यह भी इस जाति में उत्तम है कि अगरवालों में मांस और मदिरा की चाल कहीं नहीं है पर हुक्का इनके पुरोहित और ये दोनों पीते हैं यों जो लोग नेमी हों वे न पियें पर जाति की चाल है। विवाह के समय इन का बहुत व्यय करना सब में प्रसिद्ध है और इसीं बिपत से कई घर बिगड़ गए पर यह रीति छोड़ते नहीं। इन में

कुछ लोग जैनी भी होते है। और देस मे सब जनेऊ पहिरते हैं पर इधर पूरब मे कोई कोई नहीं भी पहिरते। इन के पुरुषो का पहिरावा पगडी पायजामा या धोती और अगा है और स्त्रियो का पहिरावा ओढ़ना घॅघरा या छोटेपन मे सुथना है। और दशो सस्कार होने की चाल इन मे अब तक मिलती है। पुरबियो के अतिरिक्त मारवाडी अगरवाले भी होते है पर इनका ठीक पता नहीं मिलता कि कब से और कहाॅ से है। जैसे पछाँही अगरवालो की चाल खत्रियो से मिलती है वैसे ही इन मारवाडियो की महेशरियो से मिलती है पर पुरबियो की चाल तो इन दोनो से विलक्षण है।

अगरवालो की उत्पत्ति की भूमिका मे यह बात लिखनी भी आनद देने वाली होगी कि श्रीनदरायजी, जिन के घर साक्षात् श्रीकृष्णचद्र प्रगट हुए, वैश्यही थे और यह बात श्रीमद्भागवतादि ग्रथो से भी निश्चय की गई है। जो हो, इस कुल मे सर्वदा से लोग बड़े धनवान और उदार होते आए पर इन दिनो वे बाते जाती रही थीं। मुगलो के समय से इनकी वृद्धि फिर हुई और अब तक होती जाती है।

मैने इस छोटे से ग्रथ मे संक्षेप से इनकी उत्पत्ति लिखी है। निश्चय है कि इसे पढ के वे लोग अपनी कुछ परपरा जानैगे और मुझे भी अपने दीन और छोटे भाइयो मे स्मरण रक्खैगे।

वैशाख शुद्ध ५ सं १९२८ } श्री हरिश्चद्र
काशी

वैश्यवंशावतंसाय भगवते श्रीकृष्णचन्द्राय नमः

अगरवालों की उत्पत्ति

दोहा

विमल वैश्य वशावली, कुमुदबनी हित चंद।
जयजय गोकुल, गोप, गो, गोपी-पति नँद-नद ॥ १ ॥

भगवान ने अपने मुख से ब्राह्मण और भुजा से क्षत्री और जाँघ से वैश्य और चरण से शूद्रों को बनाया। उसमे वैश्य को चार कर्म का अधिकार दिया—पहिला खेती, दूसरा गऊ की रक्षा, तीसरा व्यापार और चौथा ब्याज। जैसे वेद और यज्ञादिक का स्वामी ब्राह्मण और राज्य और युद्ध का स्वामी क्षत्री वैसे ही धन का स्वामी वैश्य है और ब्राह्मण-क्षत्री-वैश्य इन तीनो की द्विज सज्ञा है और तीनो वर्ण वेद कर्म के अधिकारी है। पहिला मनुष्य जो वैश्यो मे हुआ उसका नाम धनपाल था, जिसे ब्राह्मणो ने प्रतापनगर मे राज पर बिठाकर धन का अधिकारी बनाया। उसके यहाँ आठ पुत्र और एक कन्या हुई। उस कन्या का नाम मुकुटा था और वह याज्ञवल्क्य ऋषि से ब्याही गई। उन आठ पुत्रो के ये नाम थे—शिव, नल, अनिल, नद, कुद, मुकुंद, बल्लभ और शेखर। इन पुत्रो को अश्वविद्या शालिहोत्र के आचार्य विशाल राजा ने अपनी आठ बेटियाँ ब्याह दी थीं। उन कन्या लोगों के ये नाम थे और यही वैश्य लोगो की मात्रिका है—पद्मावती, मालती, काती, शुभ्रा, भव्या, भवा, रजा और सुदरी। इनका ब्याह नाम के क्रम से हुआ। इन आठ पुत्रो मे नल नामा पुत्र जोगी दिगबर होकर बन मे चला गया और सात पुत्रो ने सात द्वीप का अधिकार पाया। और पृथ्वी मे इनका वश फैल गया। जबू द्वीप मे विश्य नामा राजा हुआ जो आठ पुत्रो मे शिव के कुल मे था और उस विश्य को वैश्य हुआ। उस के वंश मे

एक सुदर्शन राजा हुआ, जिस के दो स्त्रियाँ थीं जिन के नाम सेवती और नलिनी थे। उस का पुत्र धुरधर हुआ। इसी धुरधर का पड़पोता समाधि नामा वैश्य हुआ था। इसी समाधि के वश मे मोहन दास बडा प्रसिद्ध हुआ, जिस ने कावेरी के तट पर श्रीरगनाथ जी के बहुत से मंदिर बनाए। इस का पडपोता नेमिनाथ हुआ, जिसने नैपाल बसाया और उस का पुत्र वृद हुआ, जिसने श्री वृन्दावन मे यज्ञ करके वृदा देवी की मूर्ति स्थापन किया। इस वश मे गुर्जर बहुत प्रसिद्ध हुआ, जिस के नाम से गुजरात का देश बसा है। इसके वंश मे हीर नामा एक राजा हुआ, जिस के रग इत्यादिक सौ पुत्र थे, जिन मे रग ने तो राज पाया और सब बुरे कर्मो से शूद्र हो गए और तप के बल से फिर इन लोगो ने वश चलाये, जिन के वश के लोग वैश्य हुए पर उनके कर्म शूद्रो के से थे। रग का पुत्र विशोक हुआ, उस के पुत्र का नाम मधु और उसका पुत्र महीधर हुआ। महीधर ने श्री महादेव जी को प्रसन्न करके बहुत से बर पाये। इसके वश मे सब लोग व्यौहार मे चतुर और सब धन और पुत्र से सुखी थे।

इसी वंश मे वल्लभ नामा एक राजा हुए और उस के घर मे बडे प्रतापी अग्र राजा उत्पन्न हुए। इसको अग्रनाथ और अग्रसेन भी कहते थे। यह बड़ा प्रतापी था। इसने दक्षिण देश मे प्रतापनगर को अपनी राजधानी बनाया। यह नगर धन और रत्न और गऊ से पूर्ण था। यह ऐसा प्रतापी था कि इद्र ने भी उससे मित्रता की थी। एक समय नाग लोक से नागो का कुमुद नाम राजा अपनी माधवी कन्या को लेकर भूलोक मे आया और उस कन्या को देखकर इद्र मोहित हो गया और नागराज से वह कन्या माँगी। पर नागराज ने इद्र को वह कन्या नहीं दी और उसका विवाह राजा अग्र से कर दिया। यही माधवी कन्या सब अगरवालो की जननी है और इसी नाते से हम लोग सर्पों को अब तक मामा कहते है।

इद्र ने इस बात से बड़ा क्रोध किया और राजा अग्र से बैर मान कर कई बरस उनकी राजधानी पर जल नहीं बरसाया और अग्रराजा से बड़ा युद्ध किया, तब भगवान ब्रह्मदेव ने दोनो को युद्ध से रोका। इससे

राजा अपनी राजधानी मे फिर आया और राज अपनी स्त्री को सौंप के आप तीर्थो मे घूमने चला गया और सब तीर्थो मे फिर कर महालक्ष्मी की उपासना किया और काशी मे आकर कपिलधारा तीर्थ पर महादेव जी का बडा यज्ञ करके बहुत सा दान किया, तब श्री महादेवजी प्रसन्न होकर प्रगट हुए और कहा कि वर माँगो तब राजा ने कहा कि मै केवल यही वर माँगता हूँ कि इंद्र मेरे वश मे होय। इसपर प्रसन्न होकर अनेक वर दिये और कहा कि तुम महालक्ष्मी की उपासना करो तुम्हारी सब इच्छा पूरी होगी। यह सुन कर राजा फिर तीर्थ मे चला और एक प्रेत की सहायता से हरिद्वार पहुँचा और वहाँ से गर्गमुनि के संग सब तीर्थो मे फिरा और जब फिर हरिद्वार मे आया तब वहाँ महालक्ष्मी की बडी उपासना किया और देवी ने प्रसन्न होकर वर दिया कि इंद्र तेरे वश मे होगा और तेरे वश मे दुःखी कोई न होगा और अंत मे तुम दोनो स्त्री पुरुष ध्रुवतारा के आसपास रहोगे और इस समय तुम कोलापुर मे जाओ, वहाँ नागराज के अवतार राजा महीधर की कन्याओ का स्वयंवर है वहाँ उन कन्याओं से ब्याह करके अपना वंश चलाओ। देवी से ये वर पाकर राजा कोलापुर मे गया और वहाँ उन कन्याओं से धूमधाम से ब्याह किया और फिर कर दिल्ली के पास के देशो मे आया और पंजाब के सिरे से आगरे तक अपना राज स्थापन किया और इन्हीं देशो मे अपना वंश फैलाया। जब इंद्र ने राजा के वर का समाचार सुना तब तो घबडाया और उससे मित्रता करनी चाही। और इस बात के हेतु नारद जी को भेजा और एक अप्सरा जिसका नाम मधुशालिनी था देकर मेल कर लिया। इसके पीछे राजा अग्रसेन ने जमुना जी के तट पर श्री महालक्ष्मी का बडा तप किया और श्रीलक्ष्मीजी ने प्रसन्न होकर ये वर दिये कि आज से यह वंश तेरे नाम से होगा और तेरे कुल की मै रक्षा करने वाली और कुलदेवी हूँगी और इस कुल मे मेरा दीवाली का उत्सव सब लोग मानैंगे। यह वर देकर श्री महालक्ष्मी चली गई। तब राजा ने आकर अपना राज बसाया। उस राज की उत्तर सीमा हिमालय पर्वत और पंजाब की नदियाँ थीं और पूर्व और दक्षिण की सीमा श्रीगंगा जी और पश्चिम की सीमा जमुनाजी से लेकर मारवाड़ देश के पास के

देश थे। इनके वंश के लोग सर्वदा इन्हीं देशों में बसे। इनसे मुख्य अगरवाले लोग वेही है जो पंजाब प्रांत से इधर मेरट-आगरे तक के बसने वाले हैं। अगरवालों के मुख्य बसने के नगर ये है १—आगरा, जिस का शुद्ध नाम अग्रपुर है। यह नगर राजा अग्र के पूर्व-दक्षिण प्रदेश की राजधानी था। २—दिल्ली, जिसका शुद्ध नाम इंद्रप्रस्थ है। ३—गुडगाँवाँ, जिस का शुद्ध नाम गौड ग्राम है। यह नगर अगरवालो के पुरोहित गौड ब्राह्मणों को मिला था, इसी से प्राय. अगरवाले लोग यहीं की माता को पूजते है। ४—मेरट, जिस का शुद्ध नाम महाराष्ट्र है।❀ ५—रोहतक, जिसका शुद्ध नाम रोहिताश्व है। ६—हाँसीहिसार, जिसका शुद्ध नाम हिसारि देश है। ७—पानीपत, इसका शुद्ध नाम पुन्यपत्तन जाना जाता है। ८—करनाल। ९—कोट काँगडा, जिस का शुद्ध नाम नगर कोट है। अगरवालो की कुलदेवी महामाया का मंदिर यहीं है और ज्वाला जी का मंदिर भी इसी नगर की सीमा मे है। १०—लाहौर, इस नगर का शुद्ध नाम लवकोट है। ११—मंडी इसी नगर की सीमा मे रैवालसर तीर्थ है। १२—बिलासपुर, इसी नगर की सीमा मे नयना देवी का मंदिर बसा है। १३—गढवाल। १४—जींदसपीदम। १५—नाभा। १६—नारनौल, इस का शुद्ध नाम नारिनवल है। ये सब नगर उस राज मे थे और राजधानी का नाम अग्र नगर था, जिसे अब अगरोहा कहते है। आगरा और अगरोहा † ये दोनो नगर राजा अग्रसेन के नाम से आज तक प्रसिद्ध है। राजा अग्रसेन ने अपनी राजधानी मे महालक्ष्मी का एक बडा मंदिर किया था।

राजा अग्रसेन ने साढ़े सत्रह यज्ञ किये। इसका कारण यह है कि जब राजा ने अट्ठारवाँ यज्ञ आरंभ किया और आधा हो भी चुका तब राजा को यज्ञ की हिंसा से बड़ी ग्लानि हुई और कहा कि हमारे कुल मे यद्यपि कहीं भी कोई मांस नहीं खाता परंतु दैवी हिंसा होती है, सो आज से जो मेरे वंश मे हो उसको यह मेरा आन है कि दैवी हिंसा भी न करै अर्थात् पशु यज्ञ और बलिदान भी हमारे वंश मे न होवै

❀ इसको कोई मयराष्ट्र भी कहते हैं।

† अब यह एक गाँव सा बच गया है।

और इससे राजा ने उस यज्ञ को भी पूरा नहीं किया। राजा को सत्रह रानी और एक उपरानी थीं। उनसे एक एक को तीन तीन पुत्र और एक एक कन्या हुई और उसी साढ़े सत्रह यज्ञ से साढ़े सत्रह गोत्र हुए। कोई लोग ऐसा भी कहते है कि किसी मनुष्य का व्याह जब गोत्र मे हो गया तो बड़े लोगो ने एकही गोत्र के दो भाग कर दिये, इससे साढ़े सत्रह गोत्र हुए पर यह बात प्रमाण के योग्य नहीं है। राजा अग्र के उन बहत्तर पुत्र और कन्याओ के बेटा अग्रवाल कहाए। अग्रवाल का अर्थ अग्र के बालक है। अग्रवालो के साढ़े सत्रह गोत्रो के ये नाम है— १ गर्ग २ गोइल ३ गावाल ४ बात्सिल ५ कासिल ६ सिहल ७ मगल ८ भद्दल ९ तिंगल १० ऐरण ११ टैरण १२ ठिंगल १३ तित्तल १४ मित्तल १५ तुंदल १६ तायल १७ गोभिल, और गवन अर्थात् गोइन आधा गोत्र है, पर अब नामो मे के कुछ अक्षर उलट पुलट भी हो गए है। राजा अग्र ने अपने सहायक गर्ग ऋषि के नाम से अपना प्रथम गोत्र किया और दूसरे गोत्रो के नाम भी यज्ञो के अनुसार रक्खे। राजा अग्र ने अपने कुल पुरोहित गौड़ ब्राह्मण बनाए और उस काल मे सब अगरवाले वेद पढ़नेवाले और त्रिकाल साधनेवाले थे। राजा अग्र बूढा होकर तप करने चला गया और उसका पुत्र विभु राज पर बैठा और उसके कई वंश तक राजा लोग अपने धर्म मे निष्ठ होकर राज करते रहे। इस वश मे दिवाकर एक राजा हुआ, जो वेदधर्म छोडकर जैनी हो गया और उस ने बहुत से लोगो को जैनी किया और उसी काल से अगरवालो मे वेदधर्म छूटने लगा परतु अगरोहा और दिल्ली के अगरवालो ने अपना धर्म नहीं छोडा। इस वश मे राजा उग्रचद्र के समय से राज घटने लगा और जब शहाबुद्दीन ने चढाई किया तब तो अगरोहा सब भॉति नाश कर दिया। शहाबुद्दीन की लडाई मे बहुत से लोग मारे गए और उनकी बहुतसी स्त्री सता हुई, जो हम लोगो के घर मे अब तक मानी और पूजी जाती है। यह अगरवालो के नाश का ठीक समय था। इसी समय से इन मे से बहुतो ने धर्म छोड़ दिये और यज्ञोपवीत तोड़ डाले। उस समय जो अगरवाले भागे वे मारवाड़ और पूर्व मे जा बसे और उनके वश मे पुरबिये और मारवाड़ी अगरवाले हुए, और उतराधी और दखिनाधी लोग भी इसी भॉति हुए, पर मुख्य

अगरवाले पछाँही वेही कहलाए जो दिल्ली प्रांत मे बच गए थे। जब मुगलो का राज हुआ तब अगरवालो की फिर बढ़ती हुई और अकबर ने तो अगरवालों को अपना वजीर बनाया। उसी काल से अगरवालो की विशेष वृद्धि हुई। अकबर के दो मुख्य और प्रसिद्ध अगरवाले वजीर थे, जिन का नाम महाराज टोडरमल* और मद्धूशाह था। मद्धूसाही पैसा इन्हीं के नाम से चला है।

* राजा टोडरमल खत्री थे। (स०)

चरितावली

सं० १९२८ से स० १९३७ वि० तक लिखी
गई तथा विभिन्न पत्रिकाओ में प्रकाशित
जीवनियो का सग्रह

चरितावली

१—विक्रम

इस के पूर्व कि हम विक्रमादित्य का कुछ चरित्र लिखे हम को श्रीमद् बुहलर साहब का धन्यवाद करना चाहिए, जिन्हो ने विक्रमाकचरित्र नाम ग्रथ खोज कर प्रकाश किया। यह श्रीहर्षचरित्र के चाल का एक दूसरा ग्रथ है, जो अब प्रकाश हुआ। यह ग्रथ विल्हण कवि का है और अनेक छदो मे अठारह सर्ग मे लिखा हुआ है। इस के सत्रह सर्गों मे विक्रमादित्य का चरित्र और अठारहवे सर्ग मे कवि ने अपना वर्णन किया है। प्रसिद्ध है कि चौरपचाशिका इसी विल्हण की बनाई हुई है। कहते है कि गुजरात के राजा बैरीसिंह की बेटी चन्द्रलेखा वा शशिकला को विल्हण पढाता था और उस ने उससे गधर्व विवाह भी किया था। जब राजा ने इस बात से क्रुद्ध होकर विल्हण को फॉसी की आज्ञा दिया, रास्ते मे इस ने चौरपचाशिका बनाई, जिससे प्रसन्न होकर राजा ने फॉसी के बदले अपनी कन्या की बॉह उसके गले मे डाली। इन कथाओ पर हमारा कुछ ऐसा विश्वास नहीं, क्योंकि इस ग्रंथ मे विल्हण ने इन बातो की कहीं चर्चा नहीं की है। विल्हण अपना हाल यो लिखता है:—कश्मीर के देश मे जिहलम और सिध के मुहाने पर प्रवरपुर नाम का बडा सुदर नगर था। अनत देव वहॉ का बड़ा प्रतापी और धार्मिक राजा था, जिस की रानी का नाम सुभटा था। उस रानी का भाई क्षितिपति भोज के समान कवियो का गुणग्राहक और बड़ा विष्णुभक्त था। अनत का बेटा कलश हुआ और कलश के पुत्र हर्षदेव और विजयमल्ल थे। प्रवरपुर के पास ही विजयवन मे खीनमुख नाम का एक गॉव था, जहॉ कुशिक गोत्र के ब्राह्मण बसते थे, जिन को गोपादित्य मध्य देश से बड़े आदर से लाया था। उन ब्राह्मणो मे मुक्तिकलश सब से मुख्य था और उस को राज्य कलश और

राज्य कलश को ज्येष्ठ कलश पुत्र हुआ। ज्येष्ठ कलश को इष्टराम, बिल्हण, आनद तीन पुत्र थे। बिल्हण व्याकरण और काव्य अच्छी तरह पढ़ा था और श्री वृन्दावन मे बहुत दिन तक उस ने काल बिताया और फिर कन्नौज, प्रयाग, बनारस और अयोध्या मे फिरता रहा और फिर कुछ दिन दाहाल के राज्य मे, कुछ दिन धार मे और कुछ दिन गुजरात मे रहकर अपनी कविता से लागो को प्रसन्न करता रहा। जब यह दक्षिण मे चाल देश मे गया, तो वहाँ के राजा से इसको विद्यापति की पदवी मिली। उस की माता का नाम नागादेवी था। कर्णके दरबार मे गगाधर कवि के मुकाबिले मे राम जी के चरित्र मे काव्य बनाया। यह अपने ग्रथ मे लिखता है कि किसी कारण से वह राजा भोज से न मिल सका। विक्रमाक चरित्र उस ने अपने बुढापे मे बनाया। विदित रहे कि बिल्हण ईसवी ग्यारहवे शतक के मध्य और अत भाग मे हुआ है, क्योकि विक्रमादित्य ने (जिस के दरबार का यह पडित था) सन् १०७६ से ११२७ तक राज्य किया था। बिल्हण की कविता मे कई बाते विशेष जानने के योग्य है, जैसा उस ने कादम्बरी का अपने ग्रंथ मे वर्णन किया है, जिससे स्पष्ट जाना जाता है कि बाण कवि बिल्हण के पहिले हुआ है और उस के समय मे भी बाण की कविता का माधुर्य भारतवर्ष मे फैला हुआ था। फारसी (शिकस्त) के चाल के कोई अक्षर बिल्हण के समय मे कश्मीर मे लिखे जाते थे, क्योकि उस ने कश्मीर के वर्णन मे लिखा है कि वहाँ कायस्थ लोग अपने लिखावट की जाल से किसी को ठग नहीं सकते थे। बिल्हण गुजरातियो से बहुत नाराज था, क्योकि वह लिखता है कि गुजराती राक्षसी बोली बोलते है और लाँघ नहीं बाँधते और मैले होते हैं। बिल्हण के बाप ने महाभाष्य पर कोई तिलक किया था, परतु अब वह नहीं मिलता। बिल्हण की कविता वैदर्भी और ओज और प्रसाद गुण से पूर्ण है। कविता से जहाँ कवि के और गुण प्रकट होते है वहाँ साथ ही उस का अभिमान, उद्दण्डता और परिहास का स्वभाव भी पाया जाता है।*

* बिल्हण का यह स्फुट श्लोक मिला है, जिस से उसका अभिमान स्पष्ट प्रगट होता है।

इसी कवि ने विक्रमादित्य का चरित्र अठारह सर्गों मे कहा है। इस समय हम इस बात का झगड़ा नहीं ले बैठते कि विक्रम कितने भए और किस किस समय मे भए। यहाँ पर हम केवल उस विक्रम का चरित्र वर्णन करते है जो दक्षिण देश मे राज्य करता था, कल्याण जिस को राजधानी थो और विक्रमादित्य जिस का नाम था। हमारे पाठक लोगो को यह जान कर बड़ा आश्चर्य होगा कि यह वह विक्रम नहीं है जिस का सवत् चलता है और न इस विक्रमादित्य के हुए १६४१ वर्ष हुए।

इस विक्रमादित्य का जन्म चालुक्य * नामक क्षत्रीवंश मे हुआ था। विल्हण लिखता है कि ब्रह्मा एक बेर अजुली मे जल लेकर अर्घ देना चाहते थे कि इद्र अपनी विपत्ति कहने लगा, जिस से ब्रह्मा ने अपनी अजुली का जल गिरा दिया और उसी से चालुक्य नामक क्षत्रियों का कुल उत्पन्न हुआ। हारीत और मानव्य इस वश के पूर्व पुरुष थे और पहले से ये लोग अयोध्या के राजाओ के अधिकार में अयोध्या जी मे बसते थे। श्री रामचद्र के समय मे भी ये लोग उन की सेवा मे उपस्थित थे। फिर इन लोगो ने दक्षिण मे अधिकार आरंभ किया और धीरे-धीरे वहाँ के राजा हो गये। काल पाकर श्री तैलप नामक इस वश मे एक राजा हुआ। इसने सन् ६७३ से ६६७ तक राज्य किया। इस ने हिंदुस्तान के बहुत से राजाओं को मार कर अपना अधिकार बढ़ाया। श्रीयुत बूलर साहब लिखते है मुज को इसी ने मारा था और मालवा पर इस ने बड़े धूमधाम से चढ़ाव किया था। उस के पीछे सत्याश्रय राजा हुआ, जिस ने ग्यारह वर्ष अर्थात् सन् १००८ तक राज्य किया। इसी का नामांतर सत्यश्री था। इस के पीछे जय सिह राजा हुआ, जिस ने सन् १०४० तक राज्य किया। इस के पीछे आहव

वासः शुभ्रमृतुर्वसन्तसमयः पुष्पशरन्मल्लिका।
धानुष्कः कुसुमायुधः परिमलः कस्तूरिकाऽस्त्रवनु ॥
वाणीतर्वरसोज्वला प्रियतमा श्यामावयो यौवन।
देवोमाधवएवपंचमलया गीतिर्कविर्विल्हणः ॥

* "बदी राजवंश वर्णन" में देखिये।

मल्लदेव राजा हुआ। इसी का नामातर त्रिभुवनमल्ल और त्रैलोक्यमल्ल था। इस ने पवारो* के देश मालव की राजधानी धारानगरी पर चढ़ाई किया। करनाटक, कुंतल और डाहल देश मे इस का निज राज्य था, पर चोल, केरल और द्रविड़ देश इस ने जीत के अपने राज्य मे मिला लिया था। विल्हण लिखता है कि अद्भुत कथा और दश रूप काव्य मे इस राजा का बहुत सा वर्णन है। इस को पुत्र नहीं होता था इससे इसने महादेव जी की घर ही में बडी आराधना की और काल पाकर सोमदेव, विक्रमादित्य और जय सिह तीन पुत्र हुए। विक्रम के शरीर में छोटेपन ही से शूरता इत्यादिक उत्तम गुण झलकते थे। जब यह जवान हुआ, तो पहिले इस ने बगाले पर चढ़ाव किया और कामरूप जीता। समुद्रपार हो कर सिहल पर† इस ने चढ़ाव किया और द्राविड़ और चोलो की राजधानो काची तीन बेर लूटा। जब वह सिहल जीत-कर लौटा, तो गोदावरी के पास सुना कि तुगभद्रा के किनारे पिता ने देह त्याग किया। यह उसी समय घर गया और इस का बड़ा भाई सोमदेव राजा हुआ। विल्हण लिखता है कि सोमदेव बड़ा मदोन्मत्त

---

*"बून्दी राजवश वर्णन" और बाबू रामचरित्र सिंह सग्रहीत "नृपवशावली" और "राजस्थान" मे देखिये।

†सिहल के इतिहास मे बगाल का पहला हाल इतना लिखा है कि सिह-बाहु नाम एक बगाले का राजा था। उस का बडा बेटा विजयसिंह प्रजाओं को पीडा देने के कारण जब देश से निकाला गया, तो सात सो आदमियों के साथ जहाज में चढकर निकला। अनेक प्रकार के कष्ट सहने के उपरान्त सिंहल मे जा पहुँचा और वहाँ के लोगों को जीत कर उन का राजा बन गया। विजय-सिंह के मरने के बाद उस का भतीजा पाडुवास जो बङ्गाल मे रहता था सिहल-द्वीप के सिहासन पर बैठा। यह सिहलद्वीप के राजाओं मे पहला राजा था। सिहवश के राजा होने के कारण इस टापू का नाम सिंहलद्वीप हुआ। जिस साल बुद्धदेव का परलोक हुआ था उसी साल विजयसिह सिंहल में पहुँचा। यह साफ जान पडता है कि ५०० बरस ईस्वी सन् के पहले बगाले में आर्यवश के लोगों का अधिकार बहुत बढा था, क्योंकि उन लोगों ने भी समुद्र की राह से जहाज पर चढ़ कर दूर दूर के देशों को जीता था।

हो गया था और इन्दुमित्र नामक एक बुरा राजा उस को सहायता को मिल गया, इस से विक्रम ने इसका सग छोड़ा। इसी को चालुक्य कहते है। डिया और कोकण का राजा जयकेश इस से मिलकर दक्षिण मे बहुत से देश जीते और अपना अपना अलग राज स्थापन किया। उस समय इस का छोटा भाई जयसिंह भी इस के साथ था। द्रविड़ देश के राजा ने अपनी कन्या देकर इस से मैत्री की और जब वह राजा मर गया तो विक्रम ने उस के बेटे अर्थात् अपने साले को बड़े धूमधाम से गद्दी पर बैठाया। और फिर गागकुडपुर होता हुआ तुगभद्रा के किनारे आकर रहा। जब चेगो के राजा राजिक ने इस के साले को जीत लिया था तब यह बड़ी धूमधाम से उस से लडने को गया था। कहते हैं कि राजिक इस के बड़े भाई सोमदेव का मित्र था, इस से राजिक की ओर से सोमदेव भी लड़ने को आया था। यह लडाई बड़ी तैयारी से हुई और सोमदेव अंत मे पकडा गया। राजिक भागा और विक्रमादित्य अपने बाप की गद्दी पर बैठा। काहाट के राजा की कन्या ने स्वयवर किया था, जिस मे विक्रमादित्य भी गया था। विल्हण ने यहाँ पर राजाओ के स्वाभाविक अभिमान और काम की चेष्टा के वर्णन मे बहुत ही अच्छी स्वभावोक्ति दिखाई है और 'पारसीक तैल' के नाम से आतशबाजी के भाति की किसी वस्तु का वर्णन किया है। स्वयवर मे विल्हण ने नीचे लिखे हुए राजाओ का वर्णन किया है, जिस से प्रगट होता है कि इतने राजा उस समय अलग अलग वर्त्तमान और अच्छी दशा मे थे, यथा अयोध्या, चदेरी, कान्यकुब्ज (अर्जुन के कुल का राजा), चबल के तट का देश, कालिजर, गोपाचल, मालव, गुजरात, मंदराचल के समीप का पांड्यदेश और चोल। कन्या ने जयमाल विक्रमादित्य के गले मे डाली और धूमधाम से इस का विवाह हुआ।

इस राजा के बहुत से ऐश्वर्य्य और बिहार वर्णन के पीछे विल्हण लिखता है कि एक दिन विक्रम ने दूत के मुख से सुना कि उस का छोटा भाई बागी हो गया है और चेगो जीतने के पीछे विक्रम ने जो उसे देश और सेना दी थी उस पर सतोष न करके बहुत से सिपाही नौकर रख के सारे दक्षिण मे लूट मार करता फिरता है और द्रविड़ के

राजा [शायद विक्रम का साला] ने उसे बहुत ही बहकाया है और छोटे छोटे बहुत से उपद्रवी राजा उससे मिल गए हैं। यह सुन कर बहुत पछताया और सेना लेकर बाहर निकला। जब भाई की सेना के पास इस का डेरा पहुँचा, तो इसने दूतो के और पत्रो के द्वारा उस को बहुत समझाया, पर वह न माना और अत मे विक्रम से हारकर कहीं दूर जा रहा। विक्रम फिर सुख से राज्य करने लगा। एक बेर काची पर फिर चढ़ा था, क्योंकि वहाँ का राजा इससे फिर गया था। कवि ने विक्रम के स्वाभाविक बहुत से गुण लिखे है, जिन मे उदारता का बहुत ही सविशेष वर्णन है। इस ने इक्यावन वर्ष राज्य किया था।

ऊपर के लिखे अनुसार लोगो को विक्रम का जीवनवृत्त विदित होगा। कवि ने उस मे जो जो सद्गुण लिखे है वह उस में रहे हो, पर अपने दो भाइयो को उस ने जीता और बडे भाई को कैद करके आप गद्दी पर बैठा, इस से उस के चरित्र मे हम को थोड़ा सदेह होता है। क्योंकि जब उस के बड़े भाई के जीतने का कवि वर्णन करेगा, तो उस दोष के छिपाने के वास्ते उस के उस भाई को बुरा लिखे, इस मे क्या सदेह है। जो कुछ हो, विक्रम एक बड़ा राजा और गुणग्राही मनुष्य हो गया है और यह पडितो के आदर ही का फल है कि उस का सपूर्ण वर्णन आज हम पाठको को सुनाते हैं।

—❀—

कालिदास का जीवनचरित्र

यह सब वार्ता केवल बगदेशियो की है। पश्चिम प्रदेशीय पडित लोग भारतवर्षीय कवियो मे कालिदास को सर्वोच्चासन देते है। बंबई के प्रसिद्ध पडित भाऊदाजी ने केवल कालिदास की कविता ही नहीं पढ़ी वरन बहुत परिश्रम करके प्राचीन सस्कृत ग्रंथ और ताम्रपत्रो से उन का जीवनवृत्तात संग्रह की। हम ने भी उन के ग्रथ से कई एक बाते ग्रहण किया है।

कालिदास विख्यात महाराजा विक्रम के नवरत्नों में थे। इसके * व्यतिरिक्त उन के जीवन की और कोई प्रामाणिक बात लोग नहीं जानते। बगदेश के कई अभिमानी पडितो ने कालिदास को लपट ठहरा कर उन के नाम से हास्यरस की कविताओं का प्रचार किया। पाठशाला के युवा ब्राह्मण थोड़ा सा मुग्धबोध व्याकरण पढ़ के इन श्लोकों का अभ्यास करके धनिक लोगों का मनोरंजन करते हैं और इसी प्रकार धनी लोगों से प्रति वर्ष कुछ पाते हैं। यथार्थ मे तो यह सब कविता कालिदास की नहीं है, परतु नवीन कवियों की बनाई हुई है। "प्रफुल्लित ज्ञान नेत्र" नामक पद्यमय पुस्तक बगभाषा मे मुद्रित हुई है। इस ग्रथ में लोगो ने मिथ्या कल्पना करके कालिदास मे ऊपर लिखा हुआ दोष ठहराया है। इसी प्रकार से इन दिनो अगरेजी भूमिका सहित एक रघुवश की सटीक पोथी मुद्रित हुई है। इस मे भी लोगो ने मिथ्या कल्पना किया है। कालिदास ने कोई भी ग्रथ मे अपना वृत्तात कुछ भी नहीं लिखा है, केवल इतनाही प्रकट किया है।

धन्वन्तरिः क्षपणकोमरसिंहशंकुः वेतालभट्टघटखर्परकालिदासाः।
ख्यातोवराहमिहिरोनृपतेःसभायांरत्नानिवैवररुचिर्नवविक्रमस्य॥

केवल इतनाही परिचय नवरत्नो का लिखा है। अभिज्ञानशाकुतल-ग्रथकर्ता के इतनेही परिचय से सतुष्ट न रह के और-और संस्कृत ग्रथो से इस विषय का अनुसधान करना उचित है। प्राय: ५०० वर्ष हुए कि कोलाचल मल्लिनाथ सूरि ने कालिदास कृत काव्यो की टीका की है। उन्हीं ने यह टीका दक्षिणावरनाथ की टीका देख कर बनाई। परतु वह अब दुष्प्राप्य है। भाषातत्ववित् लासेन साहब ने यह लिखा है कि

* राजा लक्ष्मण सिह रघुवश के उल्था मे यों लिखते है.-"कालिदास नाम के कई कवि हुए है। उनमे दो मुख्य गिने जाते है—एक वह जो राजा वीर विक्रमाजीत की सभा के नौरत्नों में था, दूसरा जो राजा भोज के समय में हुआ। इनमें भी पण्डित लोग पहले को दूसरे से श्रेष्ठ मानते हैं और उसी के रचे हुए रघुवंश, कुमारसम्भव, मेघदूत, ऋतुसहार इत्यादि काव्य और शाकुतल नाटक, विक्रमोर्वसी त्रोटक और और अच्छे अच्छे ग्रथ समझे गए हैं।

कालिदास ईस्वी दो सवत् मे समुद्र गुप्त की सभा मे वर्त्तमान थे। लासेन ने एक पत्थर देखा था, जिस पर यह लिखा था कि "समुद्र गुप्त कवि बधु काव्य प्रिय" और इसी से वह अनुमान करते है कि कविश्रेष्ठ कालिदास उन के सभासद थे। बेन्टली ने एशियाटिक नामक पत्रिका मे भोज प्रबध का फरासीसी अनुवाद और "आईने अकबरी" को देख कर लिखा है कि भोज राजा के राज्य के ८०० वर्ष पश्चात् विक्रमादित्य के सभा मे कालिदास वर्त्तमान थे, परतु यह बात कदापि नहीं हो सकती। बेटली ने स्वीय ग्रंथो मे कई एक ऐसी अशुद्ध बाते लिखी है जिन के पढ़ने से बोध हाता है कि वह हिदुओ का इतिहास कुछ भी नही जानते।

कर्नेल विलफोर्ड, प्रिसेप और एलफिनस्टन ने लिखा है कि कालिदास प्राय. १४०० वर्ष पूर्व वर्त्तमान थे।

भोज प्रबध के प्रमाणानुसार गुजरात, मालव और दक्षिण के पडित कहते है कि कालिदास सन् ११०० ईस्वी मे भोजराजा के सभासद थे। उज्जैन के राजसिहासन पर कई विक्रमादित्य और भोजराज नामक राजा बैठे, परतु सब से अत के भोज राजा तो सवत् ११०० ईस्वी मे राज्य करते थे। और इससे बोध होता है कि अत के विक्रम ही को भोजराज कहते है और उन्हीं की नवरत्न की सभा थी। हमने स्वय "भोजप्रबध" पाठ कर के देखा है कि उसमें यह लिखा है कि मालव देशातर्गत धारानगराधिप भोज सिन्धुल के पुत्र और मुज के भ्रातृपुत्र थे। भोज के बाल्यावस्था मे उन के पिता का परलोक हुआ तो उन के पितृव्य मुज राजपद पर अभिषिक्त हुए और भोज ने उन के मत्री बनकर बहुत विद्या उपार्जन किया और इसी प्रकार भोज दिन प्रतिदिन विख्यात होने लगे। तो मुज के मन मे यह शका हुई कि अब लोग हमको पदच्युत करेगे और यह विचार करने लगे कि किसी प्रकार से भोज का प्राणनाश करूँ। इसी हेतु मुज ने वत्सराज राजा को बुला कर अपना दुष्ट विचार प्रकाशित किया और कहा कि भोज को शीघ्र ही अरण्य मे ले जाकर इसका प्राणनाश करो। परतु इस राजा ने भोज को तो छिपा रक्खा और पशु के रक्त से भरे हुए खड्ग

को राजा मुंज के पास भेज दिया। इस को देखकर उन्होंने सानन्द चित्त से पूछा कि भोज ने मानव लीला समाप्त किया ? यह सुन वत्स राजा ने एक पत्र पर लिख दिया कि—"मान्धाता, जो भोज क्या, एक समय नृप कुल का शिरोमणि था अब परलोक मे है। रावणारि रामचद्र जिन्होंने समुद्र मे सेतु बाँधा था वह कहाँ है ? और बहुत से महोदय गण और राजा युधिष्ठिर ने स्वर्गारोहण किया है, परतु पृथ्वी उन के साथ नहीं गई। पर आप के साथ पृथ्वी अवश्य रसातल को जायगी।" इस पत्र के पढते ही मुंज का शरीर रोमांचित हुआ और भोज के लिये अत्यत व्याकुल हुए। परतु जब उन्होंने सुना कि भोज जीता है, तो उन का वत्सराज से शीघ्र बुलवा कर धारानगर के राज-सिहासन पर बैठाया और आप ईश्वराराधन के निमित्त अरण्य मे प्रवेश किया। भोज ने पितृसिंहासन पा के बहुत से पडितो को अपनी सभा मे बुलाया। हम को भोज प्रबध मे कालिदास के सहित नीचे लिखे हुए पडितो के नाम मिले है :—

कर्पूर, कलिंग, कामदेव, कोकिल, श्रीदचन्द्र, गोपालदेव, जयदेव, तारेचद्र, दामोदर, सामनाथ, धनपाल, बाण, भवभूति, भास्कर, मयूर, मल्लिनाथ, महेश्वर, माघ, मुचकुद, रामचंद्र, रामेश्वर, भक्त, हरिवश, विद्याविनोद, विश्ववसु, विष्णुकवि, शकर, सामदेव, शुक, सीता, सोम, सुबधु इत्यादि।

सीता अवश्य किसी स्त्री का नाम है और इसी से बोध होता है कि स्त्रीशिक्षा उस समय प्रचलित थी। तो हम नहीं समझते कि हम-लोगो के स्वदेशीय अब इस को क्यो बुरा समझ के अपने देश की उन्नति नहीं होने देते। देखिये, अमेरिका में स्त्रीशिक्षा कैसी प्रचलित है और जो लोग एक समय अत्यत मूर्ख अवस्था मे थे अब यूरप के लोगो को भी दबा लिया चाहते है, तो यह देखकर हे हिंदुस्तानियो ! क्या तुम को थोड़ी भी लज्जा नहीं आती ?

पण्डित शेषगिरि शास्त्री ने लिखा है कि बल्लालसेन ने १२० ईस्वी मे भोजप्रबध बनाया। इस से बोध होता है कि वे भोजराज के विद्योत्साही और उन के समान के वृद्धि के हेतु कालिदास, भवभूति

इत्यादि कवियो को केवल अनुमान ही से भोजराज का सभासद ठहराया है। भोजचरित मे इन सब कवियो के नाम मिलते हैं इस लिये भोजप्रबध को कैसे प्रामाणिक ग्रंथ कहै? इसी भोजराज ने चपू रामायण, सरस्वती कंठाभरण, अमरटीका, राजवार्तिक, पातंजलिटीका और चारुचार्य इत्यादि बहुत से ग्रथ मिलते है, परंतु कालिदास, भवभूति आदि कवियो के नाम इन मे से एक भी ग्रथ मे नहीं लिखे है। विश्वगुणादर्शक ग्रथकार वेदाताचार्य कालिदास श्रीहर्ष और भवभूति एक समय भोजराज के सभा मे वर्त्तमान थे, जैसा लिखा भी है।

माघश्चोरो मयूरो मुररिपुरेपरो भारविः सारविद्यः।
श्री हर्षःकालिदासः कविरथ भवभूत्यादयो भोजराजः॥

इस में वे भी भोजप्रबधप्रणेता बल्लाल के न्याय महाभ्रम मे पतित हुए है, क्योकि श्रीहर्ष, कालिदास और भवभूति एक काल मे वर्तमान नहीं थे। इस विषय मे बहुत से प्रमाण भी है।

भारतवर्ष के बहुत से राजाओ का नाम विक्रमादित्य था। उज्जयिनी के अधीश्वर विक्रमादित्य जो ५७ खी० पू० मे राज्य करते थे और जिन्हो ने 'सवत्' स्थापन किया है तो अब हम लोगों को देखना चाहिये कि कालिदास इस विक्रम की सभा मे उपस्थित थे वा नहीं। हम्बोल्ट लिखते हैं कि कविवर होरेस और वर्जिल कालिदास के समकालि थे। इस बात को बहुत से यूरोपीय पडितो ने स्वीकार किया है। कर्नेल टॉड ने अपने राजस्थान के इतिहास मे लिखा है कि "जब तक हिंदू साहित्य वर्तमान रहेगा तब तक लोग भोज प्रमार और उनके नवरत्नो को न भूलेगे"। परतु यह ठहराना बहुत कठिन है कि वह गुण-पडित तीन भोजराजो मे से किस भोजराज की नवरत्न की सभा थी। कर्नेल टाड ने यह निरूपण किया है—प्रथम भोजराज सवत् ६३१ मे, द्वितीय ७२१ और तृतीय भोजराज सवत् ११०० मे वर्तमान थे। "सिहासनबत्तीसी" "वेतालपचीसी" और "विक्रमचरित्र" आदि ग्रथो मे महाराज विक्रमादित्य की बहुत सी अलौकिक कथा भरी हुई है, इसी कारण इन मे

कोई सत्य इतिहास नहीं मिल सकता। मेरुतुग कृत "प्रबध चिंतामणि" और राजशेखरकृत "चतुर्विंशति प्रबध" मे लिखा है कि महाराजा विक्रमादित्य अति शूर वीर और महाबल पराक्रांत नृपति थे। परतु उन मे नवरत्न और कालिदास आदि कवियो का कुछ भी वृत्तात नहीं लिखा है।

जैन ग्रथो मे लिखा है कि सिद्धसेन नामक जैन पुरोहित विक्रमादित्य के उपदेष्टा थे। परतु हम नहीं कह सकते कि यह बात कहाँ तक शुद्ध है। और एक जैन लेखक कहते है कि ७२३ संवत् मे भोजराज के राज्य मे बहुत से लोग उज्जयिनी नगर मे जा बसे थे। यह और वृद्ध भोज दोनो जैनमतावलबी थे। ये सब वृत्तात जैन ग्रंथो से ज्ञात होते है। और और सस्कृत ग्र थो मे ये सब प्रमाण नहीं मिलते। वृद्धभोज मनातुग सूरि के शिष्य थे। मनातुग और बाण, मयूर भट्ट के समकालिक जैनाचार्य्य थे। बाणकृत हर्षचरित पढ़ने से ज्ञात होता है कि उन्हो ने सन् ७०० ईस्वी मे श्रीकठाधिपति हर्षवर्द्धन के साथ भेट किया था। यहाँ कान्यकुब्जाधिपति हर्षवर्द्धन शिलादित्य थे और इन्हीं की सभा मे हियाग सियाग नामक चैनिक परिव्राजक बुलाए गए थे। बाण कवि ने हियागसियाग के ग्र थ को पाठ करके अपना ग्रथ बनाया। हर्षवर्द्धन के साथ चैनिकाचार्य्य के भेट का वृत्तात हर्षचरित्र मे "यवन प्रोक्त पुराण" नामक ग्र थ से लिया गया है।

महर्षि कण्व ने अपने "कथा सरित्सागर" के १८ वे अध्याय मे नरवाहन दत्त को विक्रमादित्य का उपन्यास कहा है। उसमे लिखा है कि विक्रमादित्य सन् ५०० ईस्वी मे राज्य करते थे। नरवाहन दत्त जैन ग्र थ, कथा सरित् सागर और मत्स्य-पुराण के मतानुसार शतानिक के पौत्र थे। नासिक मे एक पत्थर की चट्टान मिली है जिस पर विक्रमादित्य का नाम लिखा है और उन को नाभाग, नहुष, जन्मेजय, ययाति और बलराम के नाई योद्धा वर्णन किया है। पाठक जनो को देखना उचित है कि एक विक्रमादित्य के इतिहास मे कितनी गड़बड़ है। लोगो मे जो केवल एक ही विक्रमादित्य प्रसिद्ध है, इस समय के भारतवर्षीय इतिहासो मे कई एक विक्रमादित्यो के नाम मिले है।

परतु हम को उस विक्रमादित्य का इतिहास ज्ञात होना आवश्यक है जिस से हम लोगो का सन्देह दूर हो और यह जान पड़े कि नवरत्नो के अमूल्यरत्न कवि-चक्रचूडामणि कालिदास का विक्रमादित्य से कुछ सबध है वा नहीं।

श्री देवकृत विक्रमचरित मे लिखा है कि विक्रमादित्य तीर्थंकर वर्द्धमान के नाश होने के ४७० वर्ष परे उज्जयनी में राज्य करते थे और इन्होने ही सवत् स्थापन किया है, परतु इस ग्रथ मे कालिदास का नाम भी नहीं लिखा है।

पडित तारानाथ तर्कवाचस्पति कहते है कि महाकवि कालिदास ने 'रघुवश', 'कुमारसम्भव' और 'मेघदूत' बनाने के अनतर ३०६८ कलिगताब्द मे "ज्योतिर्विदाभरण" नामक कालज्ञान शास्त्र बनाया। मेघदूत-प्रकाशक बाबू प्राणनाथ पडित महाशय ने भी इस बात को अपनी भूमिका मे लिखा है, परतु यह किसी का ग्रथ नहीं दृष्टि पडता कि 'ज्योतिर्विदाभरण' रघुकार कालिदास रचित है। तर्कवाचस्पति महाशय के मत को सहायता देने के निमित्त "ज्योतिर्विदाभरण" के कतिपय श्लोको का अनुवाद करके नीचे लिखते है, जैसा कालिदास ने लिखा।

मैने इस प्रफुल्लकर ग्रथ को भारतवर्षातरगत मालव देश मे (जिस मे १८० नगर है) राजा विक्रमादित्य के राज्य के समय रचा है ॥ ७ ॥

शकु, वररुचि, मणि, अशुदत्त, जिष्णु, त्रिलोचन हरि, घटकर्पर, अमर सिह और और बहुत से कवियो ने उनके सभा को सुशोभित किया था ॥ ८ ॥

सत्य, वराहमिहिर, श्रुतिसेन, श्रीवादरायणी, मनित्थ, कुमार सिह और कई एक महाशय ज्योतिषशास्त्र के अध्यापक थे ॥ ९ ॥

धन्वतरि, क्षपणक, अमर सिह, शकु, बैतालभट्ट, घटकर्पर, कालिदास और वराहमिहिर और वररुचि, ये सब महाशय विक्रम के नवरत्न थे ॥ १० ॥

विक्रम की सभा में ८०० छोटे छोटे राजा और उनके महासभा मे १६ वाग्मी, १० ज्योतिषी, ६ वैद्य और १६ वेद-पारग पडित उपस्थित रहते थे ॥ ११ ॥

कोई कहते है कि यह कवि, मालवा के हर्ष विक्रमादित्य के समय, हज़रत ईसा की छठवीं सदी मे था। उस राजा की राजधानी उज्जैन नगरी थी। इसी कारण कालिदास भी वहाँ रहा था। राजा विक्रम की सभा मे नौ रत्न थे, उनमे से एक कालिदास था। कहते है कि लड़कपन मे इस ने कुछ भी नही पढा लिखा, केवल एक स्त्री के कारण इसे यह अनमोल विद्या का धन हाथ लगा। इस की कथा यो प्रसिद्ध है कि राजा शारदानद की लड़की विद्योत्तमा बड़ी पडिता थी। उसने यह प्रतिज्ञा की कि जो मुझे शास्त्रार्थ मे जीतेगा, उसी को ब्याहूँगी। उस राजकुमारी के रूप, यौवन, विद्या की प्रशसा सुनकर दूर दूर से पडित आते थे पर शास्त्रार्थ के समय उस से सब हार जाते थे। जब पडितो ने देखा कि यह लडकी किसी तरह वश मे नहीं आती और सब को हरा देती है, तो मन मे अत्यत लज्जित होकर सबने पक्का किया कि किसी ढब विद्योत्तमा का विवाह किसी ऐसे मूर्ख के साथ करावे, जिस मे वह जन्म भर अपने घमड पर पछताती रहे। निदान वे लोग मूर्ख के खोज मे निकले। जाते जाते देखा कि एक आदमी पेड़ के ऊपर जिस टहनी के ऊपर बैठा है, उसी को जड से काट रहा है। पडितो ने उसे महा मूर्ख समझ कर बड़ी आवभगत से नीचे बुलाया और कहा कि चलो हम तुम्हारा ब्याह राजा की लडकी से करा देवे। पर खबरदार राजा की सभा मे मुह से कुछ भी बात न कहो, जो बात करनी हो इशारो मे कहियो। निदान जब वह राजा की सभा मे पहुँचा, जितने पडित वहाँ बैठे थे, सब ने उठकर उस की पूजा की, ऊँची जगह बैठने को दी और विद्योत्तमा से यों निवेदन किया कि ये बृहस्पति के समान विद्वान हमारे गुरु आपके ब्याहने को आये है। परतु इन्होने तप के लिये मौन साधन किया है। जो कुछ आप को शास्त्रार्थ करना हो, इशारो से कीजिए। निदान उस राजकुमारी ने इस आशय से, कि ईश्वर एक है, एक उगली उठाई। मूर्ख ने यह समझकर कि धमकाने के लिये उँगली दिखा कर आँख फोड़ देने का इशारा करती है, अपनी दो उंगलियाँ दिखलाई। पडितो ने उन दो उँगलियो के ऐसे अर्थ निकाले कि उस राजकुमारी को हार माननी पड़ी और विवाह भी उसी दम हो गया। रात के समय जब

दोनो का एकांत हुआ, किसी तरफ से एक ऊट चिल्ला उठा। राजकन्या ने पूछा कि यह क्या शोर है, मूर्ख तो कोई भी शब्द शुद्ध नहीं बोल सकता था, कह उठा उट्र चिल्लाता है। और जब राजकुमारी ने दुहरा-कर पूछा तो, उट्र की जगह उश्ट्र कहने लगा, पर शुद्ध उष्ट्र का उच्चारण न कर सका। तब तो विद्योत्तमा को पंडितो की दगाबाजी मालूम हुई और अपने धोखा खाने पर पछताकर फूट २ कर रोने लगी। वह मूर्ख भी अपने मन मे बड़ा लज्जित हुआ। पहिले तो चाहा कि जान ही दे डालूं पर सोच समझ कर घर से निकल विद्या उपार्जन मे परिश्रम करने लगा। और थोडे ही दिनो मे ऐसा पंडित हो गया, जिस का नाम आज तक चला जाता है। जब वह मूर्ख पंडित होकर घर मे आया, तो जैसा आनंद विद्योत्तमा के मन को हुआ, लिखने से बाहर है। सच है, परि-श्रम से सब कुछ हो सकता है।

कालिदास के समय घटखर्पर, वररुचि आदि और भी कवि थे। कालिदास ने काव्य, नाटकादि अनेक ग्रंथ संस्कृत-भाषा मे लिखे है। इन की काव्य-रचना बहुत सादी, मधुर और विषयानुसारिणी है। अंगरेज लोग कालिदास को अपने शेक्सपियर के सदृश उपमा देते है। इसके समय मे भवभूति नामक एक कवि था। कहते हैं कि उसकी विद्या कालिदास से अधिक थी। परंतु कवित्वशक्ति कालिदास की सी न थी। भवभूति कालिदास के श्रेष्ठत्व को मानता था।

कालिदास सारस्वत ब्राह्मण था। उस को आखेट आदि खेलो की बडी चाह थी और उस ने अपने ग्रंथ मे इस का वर्णन किया है कि मनुष्य के शरीर पर ऐसे खेलो से क्या क्या उपकारी परिणाम होते हैं।

विक्रमादित्य ने उस को कश्मीर का राजा बनाया और यह राज्य उस ने चार बरस नौ महीने किया।

कालिदास उज्जैन मे रहता था, परंतु उसकी जन्मभूमि कश्मीर थी। देशांतर होने पर स्त्री के वियोग से जो जो दुःख उस ने पाये, उन का बखान मेघदूत काव्य मे लिखा है। कालिदास बड़ा चतुर पुरुष था। उसकी चतुराई की बहुत सी कहानियाँ है और वे सब मनोरंजन हैं, यथा उनमे से कई एक ये हैं।

(१) भोजराजा को कवित्व पर बडी प्रीति थी। जो कोई नया कवि उसके पास आता और कविताचातुर्य बताता, तो उसको वह अच्छा पारितोषिक देता, और चाहता तो अपनी सभा मे भो रखता। इस प्रकार से यह कविमडल बहुत बढ गया। उसमे कई कवि तो ऐसे थे कि वे एक बार कोई नया श्लोक सुन लेते, तो उसे कठ कर सकते थे। जब कोई मनुष्य राजा के पास आ कर नया श्लोक सुनाता था, तो कहने लगते थे. कि यह तो हमारा पहिले ही से जाना हुआ है और तुरत पढ कर सुना देते थे।

एक दिन कालिदास के पास एक कवि ने आकर कहा कि महाराज, आप यदि राजा के पास ले चले और कुछ धन दिला देवे, तो मुझ पर आप का बडा उपकार होगा। जो मै कोई नया श्लोक बनाकर राज-सभा मे सुनाऊ, तो उस का नूतनत्व मान्य होना कठिन है इस लिए कोई युक्ति बताइए।

कालिदास ने कहा कि तुम श्लोक मे ऐसा कहो कि राजा से मुझ को रत्नो का हार लेना है, और जो कुछ मै कहता हूँ, सो यहाँ के कई पडितो को भी मालूम होगा। इस पर यदि पडित लोग कहे कि यह श्लोक पुराना है, तो तुम को रत्नो का हार मिल जायगा, नहीं नए श्लोक का अच्छा पारितोषक मिलेगा।

उस कवि ने कालिदास की बताई हुई युक्ति को मानकर वैसा ही श्लोक बनाया और जब उस को राजसभामे पढा, तो कविमडल चुपचाप हो रहा और उस कवि को बहुत सा धन मिला।

(२) एक समय कालिदास के पास एक मूढ़ ब्राह्मण आया और कहने लगा कि कविराज मै अति दरिद्री हूँ और मुझ मे कुछ गुण भी नही है, मुझ पर आप कुछ उपकार करे तो भला होगा।

कालिदास ने कहा, अच्छा हम एक दिन तुम को राजा के पास ले चलेगे, आगे तुम्हारा प्रारब्ध। परन्तु रीति है कि जब राजा के दर्शन निमित्त जाते हैं, तो कुछ भेट ले जाया करते है * इसलिए

* राजा कन्या ज्योतिषी, वैद गुरू सुर सिद्ध।
भरे हाथ इन पै गए, शेष कार्य सब सिद्ध ॥

मै जो ये सॉटे के चार टुकडे देता हूँ सो ले चलो। ब्राह्मण घर लौटा और उन सॉटे के टुकडो को उस ने धोती मे लपेट रक्खा। यह देख किसी ठग ने उस के बिन जाने उन टुकडो को निकाल लिया और उन के बदले लकडी के उतने ही टुकडे बॉध दिए।

राजा के दर्शनो को चलने के समय ब्राह्मण ने सॉटे के टुकडो को नहीं देखा। जब सभा मे पहुँचा तब यह काष्ठ की भेट राजा को अर्पण की। राजा उस का देखते ही बहुत क्रोधित हुआ। उस समय कालिदास पास ही था। उस ने कहा, महाराज, इस ब्राह्मण ने अपनी दरिद्ररूपी लकड़ी आप के पास ला कर रक्खी है इस लिये कि उस को जला कर इस ब्राह्मण को आप सुखी करे। यह बात कवि के मुख से सुनते ही राजा बहुत प्रसन्न हुआ और उस ब्राह्मण को बहुत धन दिया।

(३) एक समय राजा भोज कालिदास को साथ ले वनक्रीड़ा के हेतु अरण्य को गए, और घूमते घूमते थके मॉदे हो, एक नदी के किनारे जा बैठे। इस नदी मे पत्थर बहुत थे, उन पर पानी गिरने से बडा शब्द होता था। उस समय राजा ने कालिदास से विनोद करके पूछा कि कविराज यह नदी क्यो रोती है? कालिदास ने उत्तर दिया कि महाराज वह छोटे ही पन मे अपने मैके से ससुराल को जाता है।

कालिदास के प्रसिद्ध ग्रंथ शकुनला, विक्रमोर्वशी, मालविकाग्निमित्र और मेघदूत है। शकुतला बहुत वर्णनीय ग्रथ है। उस का उल्था यूरप मे सब देशो की भाषाओ मे हो गया है।

एक समय कविवर कालिदास अपने मकान मे बैठ कर अपने प्रिय पुत्र को अध्ययन कराता था, उसी समय क्षत्रिय-कुल-भूषण शकारि विक्रमादित्य सयोग से आ गए। कविवर कालिदास ने महाराज को देख प्रिय पुत्र का पढ़ाना छोड़ कर शिष्टाचार की रीति से महाराज का आदर मान किया। जब क्षत्रिय-कुल-भूषण राजा विक्रमादित्य ने पढ़ाने की प्रार्थना की तब फिर अध्ययन कराना प्रारभ किया। उस समय कविवर कालिदास अपने प्रिय पुत्र को यही पढाता था कि राजा अपने देश ही मे मान पाता है और विद्वान् का मान सब स्थानो मे होता है। महाराज इस प्रकार की शिक्षा को सुन कर अपने मन मे

कुतर्क करने लगे कि कविराज कालिदास ऐसा अभिमानी पंडित है कि मेरे ही सामने पंडितों की बड़ाई करता है और राजाओं को वा धनवानों को वा मुझे नीचा देखता है। मैं पंडितों का विशेष आदर मान करता हूँ और जो मेरे वा राजाओं के वा धनवानों के यहाँ पंडितों का आदर नहीं, तो कहाँ हो सकता है। ऐसा कुतर्क करते हुए अपने घर पर गए। महाराज विक्रमादित्य ने कविवर कालिदास को जो धन संपत्ति दी थी उस को हर लेने के लिए मंत्री को आज्ञा दी। मंत्री ने वैसा ही किया जैसा महाराज ने कहा था। कविवर कालिदास की जीविका जब हर ली गई तब दुःखी होकर अपने बाल बच्चों के साथ अनेक देशों में भटकता अन्त में करनाटक देश में पहुँचा। करनाटक देशाधिपति बड़ा पंडित और गुणग्राहक था। उसके पास जाकर कविवर कालिदास ने अपनी कविताशक्ति दिखाई, तो उस पर करनाटक देशाधिपसि ने अति पसन्न होकर बहुत सा धन और भूमि दे कर उस को अपने राज्य में रक्खा। कविवर कालिदास राजा से सम्मान पाकर उस देश में रह कर प्रति दिन राजसभा में जाने लगा। वहाँ राजा के सिंहासन के पास ऊँचे आसन पर बैठ सब राजकाजों में उत्तम सलाह देने लगा और अनेक प्रकार की कविताओं से सभासदों के मन की कली खिलाता हुआ सुख से रहने लगा। जब से कविवर कालिदास को विक्रमादित्य ने छोड़ा तब से वे बड़े शोक-सागर में डूबे थे। नवरत्नों में कविवर कालिदास ही अनमोल रत्न था। इसके सिवाय जब राजा को राजकाज के कामों से फुरसत मिलती थी तब केवल कविराज कालिदास ही की अद्भुत कविताओं को सुन कर राजा का मन प्रफुल्लित होता था। इस लिए ऐसे गुणी मनुष्य के बिना राजा का सब वस्तुओं से मन उदास होने लगा। फिर राजा ने कविराज कालिदास का पता लगाने के लिये सब देशों में दूतों को भेजा। जब कहीं पता न लगा तब राजा आप ही भेष बदल कर खोजने के लिये निकले। कई देशों में घूमते फिरते जब करनाटक देश में गए उस समय उन्हें पथव्यय के लिए एक हीरा जड़ी हुई अंगूठी को छोड़ और कुछ नहीं था। उस अंगूठी को बेचने के लिये वे किसी जौहरी की दुकान पर गये। रत्न-पारषी ने ऐसे दरिद्र के हाथ में ऐसी अनमोल रत्न-जड़ित-अँगूठी को देख कर मन में चोर

समझा और कोतवाल के पास भेजा। कोतवाल राज-सभा मे ले गया। वे चारो ओर देखते भालते जो आगे बढे तो कविवर कालिदास को देखा और कहा, महाराज मैने जैसा किया वैसा ही फल पाया। कविवर कालिदास उठ कर राजा को अंक मे लगा कर करनाटक देशाधिपति से परिचय करा और सब व्यौरा कह कर राजा वीर विक्रमादित्य के साथ चला आया।

पर इन कथाओं से भी वही झंझट पाई जाती है और कविवर कालिदास का समय ठीक निश्चय होना कठिन है।

कोई कोई कहते हैं कि कविवर कालिदास की सहायता से एक ब्राह्मण ने राजा भोज से एक श्लोक पर अनेक रुपया इस चतुराई से लिया था।

उज्जैन नगरी मे राजा भोज ऐसा विद्यारसिक और गुणज्ञ और दानशील था कि विद्या की वृद्धि के प्रयोजन से उसने यह नियम प्रचलित किया था कि जो कोई नवीन आशय का श्लोक बना के लावे, तो उसको लाख रुपये देवे। इस बात को सुन के देश देशातर के पडित लोग नये आशयके श्लोक बना के लाते थे, परतु उसकी सभा मे चार ऐसे पडित थे कि एक को एक बार, दूसरे को दा बार, तीसरे को तीन बार और चौथे को चार बार सुनने से नया श्लोक कठस्थ हो जाता था। सो जब कोई परदेशी पडित राजा की सभा मे नवीन आशय का श्लोक बना के लाता तो वह राजाके सम्मुख पढके सुनाता था। उस समय राजा अपने पडितो से पूछता था कि वह श्लोक नया है वा पुराना। तब वह मनुष्य जिसको कि एक बार के सुनने से कठस्थ होने का अभ्यास था कहता कि यह पुराने आशय का श्लोक है और आप भी पढ़ के सुना देता था। इसके अनन्तर वह मनुष्य जिसको दो बार सुनने से कंठ हो जाता था पढ के सुनाता और इसी प्रकार वह मनुष्य जिसको तीन बार और वह भी जिसको चार बार के सुननेसे कठस्थ होने का अभ्यास था, क्रम से सब राजा को कंठाग्र सुना देते। इस कारण परदेशी विद्वान अपने प्रयोजन से रहित हो जाते थे और इस बात की चर्चा देश देशांतर मे फैली। सो एक विद्वान ऐसा देश काल मे चतुर और बुद्धिमान

था कि उसके बनाये हुए आशय को इन चार मनुष्यों को भी अंगीकार करना पडा कि यह नवीन आशय है और वह श्लोक यही है।

श्लोक

राजन् श्रीभोजराज त्रिभुवनविजयी धार्मिकस्ते पिताऽभूत।
पित्रा तेन गृहीता नवनवतिमिता रत्नकोटिर्मदीया ॥
तां त्वं देहि त्वदीयैस्सकल बुधवरैर्ज्ञायते वृत्तमेत-
न्नोचेज्जानंतितेवैनवकृतमथवा देहि लक्षं ततो मे ॥ १ ॥

हे राजा भोज, तीनो लोक के जीतनेवाले, तुम्हारे पिता बडे धर्मिष्ट हुए है। उन्होने मुझसे निन्नानबे करोड़ रत्न लिया है सो मुझे आप दीजिये और इस वृत्तात को तुम्हारे सभासद विद्वान् जानते होगे, उनसे पूछ लीजिये। जो वह कहें कि यह आशय केवल नवीन कविता मात्र है, तो अपने प्रण के अनुसार एक लाख रुपया मुझे दीजिए। इस आशय को सुन कर चारो विद्वानो ने विचाराश किया कि जो इसको पुराना आशय ठहरावे, तो महाराज को निन्नानबे करोड़ द्रव्य देना पडता है और नवीन कहने मे केवल एक लाख। सो उन चारो ने क्रम से यही कहा कि पृथ्वीनाथ, यह नवीन आशय का श्लोक है। इस पर राजा ने उस विद्वान को लाख रुपया दिया।

—:o:—

३. श्री रामानुज स्वामी का जीवनचरित्र

दक्षिण मे पूर्व सागर के पश्चिम तट से बारह कोस दूर तोंडीर देश में भूतपुरी नामक नगरी है। यहाँ हारीत गोत्र के केशव नामक एक ब्राह्मण रहते थे। यह संतान-हीन होने के कारण बहुत दुखी रहा करते। एक बार चंद्रग्रहण मे पुत्रप्राप्ति के हेतु इन्होने यज्ञ भी किया था। कहते है स्वप्न मे शेषजी ने दर्शन देकर इनको आज्ञा किया कि हम तुम्हारे घर मे अवतार लेगे। तदनुसार श्री रामानुजाचार्य का केशव के घर चैत्र

सुदी ५ को जन्म हुआ। लक्ष्मण आर्य्य और रामानुज यह दो नाम इनका रक्खा गया। सोलहवें बरस रक्षकाबा नामक एक स्त्री के साथ इनका विवाह हुआ। विवाह के पीछे केशवजी मर गए। तब रामानुज स्वामी विद्या पढने को काचीपुर गए और वहाँ यादव नामक प्रसिद्ध पडितके पास विद्या पढ़ने लगे। जिन दिनो स्वामी वहाँ विद्या पढते थे उन्हीं दिनो मे कांचीपर के राजा की कन्या को ब्रह्मपिशाच की बाधा हुई। रामानुज स्वामी ने अपना पैर छुला कर उसकी पिशाचबाधा दूर कर दी। इससे प्रसन्न होकर राजा ने उनको बहुत सा द्रव्य दिया। उसी काल मे स्वामी के मौसा गोविंद नामक एक बडे पडित यादव पडित से शास्त्रार्थ करने आये और रामानुज स्वामी का और इनका मत-विषयक एक विश्वास होने से दोनो मे अत्यत प्रीति हुई। यादव पडित जो वास्तव मे मायावादी थे गोविद पडित और स्वामी से वाद मे बारबार पराभूत होने से इस कुविचार मे फसे कि किसी भॉति स्वामी के प्राण हरण किए चाहिए। इसी वास्ते प्रगट मे बहुत स्नेह दिखला कर स्वामी को साथ लेकर यात्रा के बहाने से प्रयाग की ओर चले। मार्ग मे गोड़ा के जगल मे गोविद पडित ने स्वामी से यादव की सब कुप्रवृत्ति कह दिया। स्वामी भयभीत होकर जंगल मे छिपे। वहाँ उस जगल के देवता नारायण हस्तिगिरिनाथ ने लक्ष्मी समेत व्याधमिथुन बनकर दर्शन दिया और अपनी रक्षा मे उनको काचीपुर ले आए।

इसी समय रगपुर मे यामुनाचार्य्य नामक एक त्रिदंडी संन्यासी थे। उनको सर्वलक्षणसपन्न एक शिष्य करने की इच्छा हुई। उन्होने अपने चेलो को चारो ओर भेजा कि एक सर्वगुणसयुक्त लड़का खोज लाओ। उन शिष्यो ने आचार्य्य से जाकर रामानुज स्वामी का कुल गुण विद्या आदि का वर्णन किया।

गोविद पडित इस समय कालहस्ति नगर मे आ बसे और वहाँ एक शिव स्थापन करके अध्यापन कराने लगे। यादव भी प्रयाग से काची फिर आए और स्वामी का दैवी प्रभाव देख कर शिष्यो के द्वारा उनसे मैत्री करके रहने लगे।

यामुनाचार्य्य रामानुज स्वामी को देखने के हेतु काचीपुर चले और मार्ग मे हस्तिगिरि नारायण के दर्शन के हेतु और अपने शिष्य कांची-

पूर्ण से मिलने को हस्तिपुर मे ठहरे। संयोग से रामानुज स्वामी आदि शिष्यो के साथ यादव पडित भी हस्तिगिरि नाथ के दर्शन को आये थे। वहाँ काचीपूर्ण ने आचार्य्य से स्वामी का परिचय कराया और आचार्य्य इनको देख कर बहुत प्रसन्न हुए और कुछ दिन के पीछे सब लोग अपने अपने नगर गए। एक दिन रामानुज स्वामी अपने गुरु यादव पडित को तेल लगाते थे। उसी समय 'कप्यास्य' इस श्रुति का अर्थ यादव ने कुछ अशुद्ध किया, इससे स्वामी को बड़ा कष्ट हुआ और शास्त्रार्थ मे स्वामी ने यादव को परास्त किया। इससे यादव ने क्रोधित होकर स्वामी को निकाल दिया। स्वामी वहाँ से हस्तिगिरि चले आए और काचीपूर्ण के उपदेश से हस्तिगिरिनाथ वरदराज नारायण की सेवा करने लगे।

यह वृत्तांत सुन कर यामुनाचार्य ने अपने शिष्य पूर्णाचार्य को अपने बनाए स्तोत्र देकर हस्तिगिरि भेजा। एक दिन वरदराज स्वामी के सामने पूर्णाचार्य वह सब स्तोत्र पढ रहे थे कि रामानुम स्वामी ने सुन कर और उनकी भक्तिपूर्ण रचना से प्रसन्न होकर पूर्णाचार्य्य से पूछा कि यह स्तोत्र किसके बनाए हैं। पूर्णाचार्य ने कहा कि यह सब स्तोत्र यामुनाचार्य के बनाए हैं और वे आप के दर्शन की बडी इच्छा रखते है। पूर्णाचार्य के उपदेश से रामानुज स्वामी यामुनाचार्य्य से मिलने रगपुर चले और मार्ग मे महापूर्णाचार्य से मिलाप हुआ। स्वामी का आना सुन कर यामुनाचार्य भी आगे से उन को लेने चले, किंतु कावेरी के किनारे पहुँच कर शरीर छोड दिया। स्वामी भी शीघ्रता से वहाँ पहुँचे, तो देखा कि आचार्य्य ने शरीर छोड़ दिया है, परतु तीन अगुली उठाये हुए है। स्वामी ने आचार्य्य का आशय समझ कर [अर्थात् १ बोधायन मतानुसार ब्रह्मसूत्रादि का भाष्य बनाना, २ दिल्ली के तत्सामयिक बादशाह से श्रीराममूर्त्ति का उद्धार करना और ३ दिग्विजय पूर्वक विशिष्टाद्वैत मत का प्रचार] प्रतिज्ञा किया कि हम आपकी इच्छा पूर्ण करेंगे, जो सुन कर सुखपूर्वक आचार्य्य वैकुण्ठ धाम गए और स्वामी भी कांची फिर आए। एक बेर काचीपूर्ण के घर स्वामी भोजन करने गए थे, तब कांचीपूर्ण ने स्वमत विषयक उन को अनेक उपदेश किया और कहा कि आप रगपुर जाकर पूर्णाचार्य्य से सब ग्रथ पढ़िए।

स्वामी उन के उपदेशानुसार रंगपत्तन आए और विधिपूर्वक पंच संस्कार * दीक्षित होकर संस्कृत और द्राविड़ भाषा के ग्रंथ सरहस्य पूर्णाचार्य्य से पढ़े। कुछ काल पीछे एक कुए में से जल निकालते समय पूर्णाचार्य्य की स्त्री से और स्वामी की स्त्री से कुछ कलह हो गई, इससे स्वामी रक्तकाम्बा से उदास हो गए। एक यही नहीं, अनेक समय में रक्तकाम्बा के खरतर स्वभाव का परिचय मिलने से स्वामी का जी उस की ओर से खिंच गया था, इस से स्वामी ने उनको नैहर भेज दिया और आप भी सब धन गृह आदि का त्याग करके त्रिदण्ड सन्यास ग्रहण किया। कांचीपूर्ण ने इस पर अति प्रसन्न होकर 'यतिराज' को स्वामी को पदवी दिया।

कुछ दिन पीछे स्वामी के भांजे दाशरथि और अनंतभट्ट के पुत्र कूरनाथ यह दोनों आकर कांची रहने लगे और स्वामी से विद्या पढने लगे। एक समय यादव पंडित कांची आए और शंख चक्र से स्वामी का कलेबर चिन्हित देख कर बडा आक्षेप किया। इस पर स्वामी की इच्छा से कूरनाथ ने शास्त्रार्थ पूर्वक स्वमत स्थापन कर के यादव को निरुत्तर किया। यादव पंडित ने भी ज्ञान पाकर त्रिदंड ग्रहणपूर्वक गृहस्थाश्रम का परित्याग किया और दीक्षित होकर गोविंददास यह नाम पाया। इन्हीं गोविंददास ने 'यतिधर्म्म समुच्चय' नामक ग्रंथ बनाया है।

कुछ काल के पीछे यमुनाचार्य्य के पुत्र वररंग स्वामी रामानुज को लेने को हस्तिगिरि आए। यहाँ उन्हों ने नाटकों का अभिनय दिखला कर श्रीवरदराज को माँगा और वहाँ से रामानुज स्वामी को लाकर रंग-नाथ जी को समर्पण किया, जिस से स्वामी अब रंगनाथ जी की सेवा का अधिकार और उस संप्रदाय का आचार्य्यत्व दोनों के अधिकारी हुए।

उसी समय में स्वामी के ममेरे भाई वेंकट गोविंद पंडित से, जो कि बड़े शैव थे, वेंकटगिरि के निवासी श्री शैलपूर्ण नामक वैष्णव यति

---

* दो०—ऊर्ध पुंड, मुद्रा बहुरि, माला, मंत्र, विचार।
संसकार ए वैष्णवी, धर्म कर्म को सार॥ १॥

से बड़ा भारी शास्त्रार्थ हुआ, जिस मे गोविंद पंडित ने पराजय पाकर श्री शैलपूर्ण का शिष्यत्व अंगीकार किया।

कुछ दिन पीछे पूर्णाचार्य्य के उपदेश से स्वामी रामानुज अठारह बेर गोष्ठीपुर मे गोष्ठीपूर्णाचार्य्य से तत्त्व पढ़ने की इच्छा से गए और यद्यपि पहिले उन्हो ने बहुत आनाकानी की पर अंत मे सब रहस्य स्वामी को उपदेश किया किंतु यह कह दिया था कि यह किसी को बतलाना मत।

स्वामी रामानुज मंत्रो का रहस्य पाकर ऐसे परितुष्ट हुए कि अनेक लोगो से उन्होंने दयापूर्वक वह रहस्य कहा। जब गोष्ठीपूर्णाचार्य्य को यह बात मालूम हुई, तब उन्हो ने स्वामी को बुला कर पूछा कि "जो गुरु की आज्ञा उल्लंघन करै उस की क्या गति होती है?" स्वामी ने उत्तर दिया 'नर्क'। तब गुरु ने पूछा कि फिर तुम ने हमारी आज्ञा उल्लंघन कर के रहस्य क्यों लोगो से कहा। इस पर स्वामी ने अपने दयापरवश उदार स्वभाव से निर्भय हो कर उत्तर दिया—

"पतिष्ये एक एवाहं नरके गुरुपातकात्।
सर्वे गच्छन्तु भवतां कृपया परमं पदम्॥"

अर्थात् आप की आज्ञा टालने से मै एक नरक मे पड़ूँ किंतु और लोग जिन से हम ने रहस्य का उपदेश किया है वे आप की दया से परम पद पावैं।

गुरु उन के इस उदार वाक्य से ऐसे प्रसन्न हुए कि "मन्नाथ," अर्थात् हमारे भी स्वामी, उन का नाम रक्खा और वरदान दिया कि आज से यह वैष्णव सिद्धांत रामानुज सिद्धांत से प्रचलित होगा और संसार मे तुम आचार्य रूप से प्रसिद्ध होगे।

कुछ काल पीछे स्वामी के भांजे दाशरथि स्वामी की आज्ञा से पूर्णाचार्य्य की बेटी के ससुराल मे उस का काम काज सम्हालने को रहने लगे। वहाँ एक वैष्णव श्रुतियो का कुछ विरुद्ध अर्थ करता था। उस से शास्त्रार्थ कर के उस को उन्हो ने स्वामी के पास दीक्षित होने को भेज दिया और वह वैष्णव दास नाम पाकर इस मत का एक मुख्य पंडित हुआ।

इस सम्प्रदाय मे मालाधर नामक एक बड़े पडित थे। शठकोपाचार्य्य कृत सहस्रगीतिका स्वामी ने उन से व्याख्यान सुना। ऐसे ही अनेक वयोवृद्ध और ज्ञानवृद्धो से स्वमत का अनेक सिद्धात स्वामी ने लिया। वरंच अपने पुत्र सुदरबाहु को मालाधर ही से दीक्षित कराया।

रंगजी ठाकुर का आभूषण एक बार चोर लोग चुरा ले गए थे और उन लोगो को इस दोष से कारागार हुआ था। वे चोर स्वामी से बड़ा द्वेष रखते थे। इस से उन लोगो ने स्वामी के अगसेवको को घूस देकर इन के भोजन मे विष मिला दिया। किंतु परमेश्वर ने यह सब वृत्त अनुभव द्वारा स्वामी को बतला दिया, इस से उन की रक्षा हुई।

यज्ञमूर्ति नामक एक वेदांत का बडा भारी सन्यासी पंडित था। वह दिग्विजय करता हुआ रगनगर मे स्वामी से शास्त्रार्थ करने आया। स्वामी ने अठारह दिन पर्य्यंत उस से शास्त्रार्थ कर के उस को परास्त किया और उस से प्रायश्चित्त करा के उस को फिर से शिखा सूत्र धारण कराया। देवराज, देवमन्नाथ और मन्नाथ यह तीन नाम उस पडित के रक्खे गए और वह एक बड़े मठ का स्वामी नियत हुआ। इस पडित ने ज्ञानसार और प्रमेयसार नामक द्राविड़ भाषा मे वैष्णव मत के दो बड़े सुदर ग्रंथ बनाए है।

एक समय पुण्यनगर से अनंताचार्य्य बहुत से वैष्णवो के साथ स्वामी के दर्शन को आए। स्वामी ने उन को वेंकटगिरि की सेवा का अधिकार दिया। तब वे वेंकटगिरि गए और वहाँ वृंदावन बना कर रहने लगे। इन्होंने वेंकटनाथ स्वामी का "रामानुज" 'लक्ष्मण' इत्यादि नाम रक्खा है।

स्वामी इस के पश्चात् देशाटन करने को निकले और वेंकटगिरि होते हुए उत्तर की यात्रा को चले। मार्ग मे दिल्ली मे त्रिविक्रमाचार्य्य से भेंट किया। वहाँ से बदरीनाथादि होते हुए लौट कर अष्ट सहस्र गाँव मे आए। वहाँ वरदाचार्य्य और यज्ञेश नामक अपने दो शिष्यो को मठाधिपति नियुक्त किया। वहाँ से हस्तगिरि आए और पूर्णाचार्य्यादि से मिल कर कापिल तीर्थ को गए। वहाँ कुछ दिन तक रहे और देश के राजा बिट्ठलदेव को शिष्य किया। इस राजा बिट्ठलदेव ने तोंडीर

मडलादिक अनेक गॉव स्वामी को भेट किए। वहॉ से वृषाचलादि स्थानो मे अपना माहात्म्य प्रकाश करते हुए रंगनगर स्वामी लौट आए।

स्वामी के मामा के पुत्र गोविंदपडित को विराग मे ऐसी रुचि हुई कि स्वामी ने बहुत कहा परंतु उन्हो ने गृहस्थाश्रम स्वीकार नहीं किया। तब स्वामी ने उनको सन्यास दिया।

एक बार केवल कूरेश को साथ लेकर स्वामी शारदापीठ गए क्योंकि वहॉ बिशिष्टाद्वैत * मत का मूल ग्रंथ बौधायन कृत ब्रह्मसूत्र वृत्ति की पुस्तक थी। जिस को देखकर स्वामी को तदनुसार भाष्य बनाना बहुत आवश्यक था। शारदापीठ के सब पंडितो को स्वामी ने शास्त्रार्थ मे पराजित किया। जब वहॉ से लौटे तो बौधायन वृत्ति की पुस्तक स्वामी के साथ थी। किंतु शारदापीठ के पंडितो ने द्वेष करके रात को डॉका डाला और वह पुस्तक लूट ले गए। स्वामी को इससे बड़ा दु'ख हुआ। तब कुरेश ने कहा कि आप इतना दुःख क्यो सहते हैं। एक बार मैंने आद्योपांत उस पुस्तक को देखा है, इससे उसके प्रति अक्षर मुझको कठाग्र है। मै सब आप को लिख दूंगा। तदनुसार एकश्रुतिधर कुरेश ने बौधायन सूत्र वृत्ति सब स्वामी को लिख दी। इसी वृत्ति के अनुसार स्वामी ने वेदात सूत्र पर श्रीभाष्य, वेदातदीप, वेदांतसार, वेदार्थसंग्रह और गीताभाष्यादि ग्रथ बनाए।

इन ग्र थों के बनाने के पीछे बहुत से शिष्यो को साथ लेकर स्वामी दिग्विजय करने निकले। क्रम से चोलमंडल, पाड्यमडल, कुरुक इत्यादि देशों मे जाकर वहॉ के पडितो को शास्त्रार्थ मे जीत कर उनको वैष्णव धर्म से दीक्षित किया और कुरग देश के राजा को दीक्षित करके केरल देश के पडितो को जीता। वहॉ से क्रम से द्वारिका, मथुरा, शालिग्राम, काशी, अयोध्या, बदरिकाश्रम, नैमिषारण्य और श्रीवृंदावन आदि तीर्थों

---

* दो०—कहहि एक अद्वैतमत, दुतिय द्वैत मत जान।
त्रितिय विशिष्टाद्वैत है, ता मधि तीन प्रमान॥ १॥
प्रगट लोक मत लोक मैं, दुतिय वेदमत जान।
तृतिय संतमत करत जिहि, हरिजन अधिक प्रमान॥ २॥

मे होते हुए फिर से शारदापीठ गए। वहाॅ सरस्वती ने प्रत्यक्ष होकर "कप्यास्य" इस श्रुति का तात्पर्य पूछा। स्वामी ने जो अर्थ कहा इस से प्रसन्न होकर सरस्वती ने श्री भाष्य अपने सिर पर चढा कर स्वामी को दिया और उन का दोनो हाथ पकड़ कर "भाष्यकार" नाम से पुकारा। इस के अनतर स्वामी ने वहाॅ के पडितो को शास्त्रार्थ मे पराजित करके पुरुषोत्तम क्षेत्र गमन किया। वहाॅ जाकर देखा कि बौद्ध और कापालिक लोग पुरुषोत्तम की सेवा मे नियुक्त है। स्वामी ने उन को जीतकर वैष्णवगण को सेवा मे नियुक्त किया और वहाॅ रामानुज मठ बना कर रहने लगे। स्वामी की इच्छा थी कि पचरात्र के विधि से जगन्नाथ जी की सेवा हो परतु पडे लोग अपने मन से सब काम करते थे और श्री जगन्नाथ जी भी इसी से प्रसन्न थे। क्योकि जब स्वामी जी ने इस बात मे आग्रह किया, तो एक रात देवगण ने स्वामी को सोते हुए उठा कर कूर्मक्षेत्र में रख दिया। जाग कर स्वामी ने यह चरित्र देखा और भगवदिच्छा मुख्य समझ कर फिर इस विषय मे आग्रह न किया।

कुछ दिन कूर्माचल रहकर स्वामी सिहाचल, अहोबलक्षेत्र, गरुडाचलादि तीर्थो मे गए और वहाॅ से फिर वेकटगिरि जाकर वहाॅ के शैवो को शास्त्रार्थ मे परास्त किया।

कुछ काल पीछे कूरेश को व्यास-पराशर के अश के दो पुत्र एक साथ उत्पन्न हुए। स्वामी ने एक का नाम पराशर और दूसरे का व्यास वा श्री रामदेशिक रक्खा। इन्हीं पराशर को रगेश ने अपुत्र होने के कारण गोद लेकर बड़े धूमधाम से विवाह किया था। गोविद को भी कालातर मे पुत्र हुआ, तो स्वामी ने पराकुश उसका नाम रक्खा।

मथुरा के एक धनिक धनुर्दास को उस की भार्या हेमागना समेत स्वामी ने वैष्णव दीक्षा दी। यह धनुर्दास ऐसा उत्तम वैष्णव हुआ है कि रंगनाथ जी के उत्सव मे स्वामी एक बार उस को मित्र की भाॅति पकडे हुए थे और इस पर जब लोगो ने पूछा तो स्वामी ने उसकी वैष्णवता की बड़ी स्तुति की।

उसी समय मे चोलदेश का एक बड़ा भारी शैव राजा कृमिकठ हुआ था, जिस ने चित्रकूट तक विजय किया था। इस ने एक बार

शास्त्रार्थ के हेतु प्रार्थनापूर्वक स्वामी को बुलाया। स्वामी उस के यहाँ जाते थे कि मार्ग मे चेलाचलाम्बा और उसके पति को दीक्षित किया। और बहुत से बौद्धो को शास्त्रार्थ मे जय किया। इसी प्रकार कुछ दिन भक्तनगर मे रहे। वहाँ स्वप्न देखने से इन्होने यादवाचल जाकर वहाँ छिपी हुई भगवन्मूर्त्ति को निकाला और शके १०१२ मे उस मूर्त्ति को यादवाचल मे प्रतिष्ठित किया।

एक बार स्वामी को खबर मिली कि दिल्ली के राजा के घर मे रामप्रिय नामक एक नारायण की मूर्त्ति है। स्वामी यह सुन कर दिल्ली गए और वहाँ कुछ दिन रह कर राजा से वह मूर्त्ति ले आए। कहते है कि दिल्ली के राजा की बेटी उस भगवद्विग्रह पर ऐसी आसक्त थी कि भक्ति प्रभाव से आज तक नारायण की मूर्त्ति उस के पास तथा यादवाचल मे वर्त्तमान है।

इसके पीछे बिष्णुचित्त की बेटी गोदा को स्वामी ने उपदेश दिया। इन के ७४ शिष्य बड़े प्रसिद्ध हुए है। इन मे भी आंध्रपूर्ण की बड़ी महिमा है।

इस प्रकार स्वामी रामानुज आचार्य्य एक सौ बीस वर्ष पृथ्वी पर रहे और चारो ओर वैष्णव संप्रदाय का प्रचार करके सब शिष्यो को भगवद्भक्ति का उपदेश करके माघ सुदी १० को परम-धाम पधारे। इनके पीछे रंगनाथ जी के मंदिर का अधिकार पराशर को मिला और दाशरथि, पूर्णाचार्य, गोविंद और कुरुक ये चार मत-शाखा-प्रवर्तक हुए।

इस संप्रदाय के मुख्य बडे बडे लोग शठकोपाचार्य, रंगेश, वेंकटेश, वरद, बकुलाभरण, सुंदर, यामुनाचार्य, वररंग, पूर्णाचार्य, गोष्ठीपूर्ण, मासभद्र, माधवदास, कासार, भक्तिसार, फणिकृष्ण, कुलशेखर, भट्टनाथ, पद्मराज और अनंताचार्य आदिक है।

दानपत्रादिको से और दक्षिण राजाओ के घर के लेखो से निश्चय होता है कि ईस्वी सन् १०१० वा इसके आस पास किसी संवत् मे स्वामी का जन्म हुआ था और द्वादश शताब्दी के पूरे पूरे भोग मे ये वर्त्तमान थे।

इनका मत विशिष्टाद्वैत है और उपास्यदेव साकार ब्रह्मनारायण हैं। ये भुजा पर तप्त शख चक्र की छाप देते हैं। हिदुस्तान के सब प्रात मे इस मत के लोग मिलते हैं। और बहुत बड़े बड़े पडित इस मत मे हुए हैं। बड़गल और तिंगल ये दो शाखा इस मत की बहुत प्रसिद्ध हैं। पीछे तो रामानद आदि अनेक शाखा इस की हुई हैं। इनके सप्रदाय के वैष्णव श्री वैष्णव कहलाते हैं।

—:※:—

४–श्रीशंकराचार्य्य

इन्दीवरदलश्याममिन्दिरानन्दकन्दलम्।
वन्दारुजनमन्दार वन्देऽहं यदुनन्दनम्॥

धन्य वह ईश्वर है जो अपनी सृष्टि मे अनेक अद्भुत शक्ति के मनुष्यो को उत्पन्न करता है और उनके द्वारा लोगो की पहिली चाल चलन को बदल देता है। फिर कुछ काल के अनतर दूसरे को उत्पन्न करता हुआ उससे भी वैसा ही कराता है, इसी प्रकार से अपने सृष्टि क्रम को निरतर चलाता है।

देखो कुछ न्यूनाधिक ११०० वर्ष हुए इस सारे भारतवर्ष मे बौद्ध-मत फैल गया था और लोग उसी मत पर चलते थे और जो उस मत को स्वीकार करने मे अप्रसन्न थे उन को अनेक प्रकार के क्लेश सहने पड़ते थे। प्राय. कन्याकुमारी अतरीप से चान देश तक और ब्रह्मा के देश से ईरान तक जहाँ देखो बौद्धमत के मनुष्य देख पड़ते थे। फाहि-यान और ह्वानसांग जो चीन देश से यात्रा के लिये यहाँ आए थे और जिनके स० ३६६ और ६४० ईस्वी निश्चित किए गए हैं, अपने ग्रथ मे उस समय का भारतवर्ष का वृत्तांत लिखते हैं कि बौद्धधर्म की बड़ी उन्नति है, राजाओ ने बौद्ध भिक्षुको को गॉव, बाग, घर, विहार बनाने के लिये दे दिये हैं और उनमे श्रमण लोग सुख से बास करते हैं। मास खाने का बड़ा निषेध किया गया है, कोई यज्ञ याग करने नहीं पाते, न देवी के सामने बलिदान कर सकते हैं, और पटने मे जिसे

पाटलिपुत्र भी कहते हैं शाक्यमुनि बुद्ध का बड़ा उत्सव होता है और प्रायः बड़े बड़े नगरों में स्तूप* और विहार देख पड़ते है।

ह्वान्सांग लिखता है कि बौद्धमत केवल भारतवर्ष ही मे फैला न था परंतु तूरान और काबुल में भी सौ से अधिक विहार बने थे और उन दिनों में गजनी, काबुल इत्यादि पश्चिम के देश इसी भारतवर्ष के राजाओं के अधीन थे। सब मिल के अस्सी राजा गिने जाते थे। जालंधर से गंगासागर तक और हिमालय से महानदी तक देश कन्नौज के बौद्ध राज हर्षवर्धन के अधीन थे और मगध देश मे बौद्ध राजा राज करते थे।

* "गोरखपुर दर्पण" में एक लेख यों लिखा है :—

भागलपुर के निकट एक पत्थर की लाट है जिस पर पुराने अक्षर खुदे हुए हैं। उन अक्षरों को प्रिन्सेप साहिब ने बनारस में पढा था। सहिया गाँव परगने सलेमपुर मझौली में है। वहाँ एक पुराना मंदिर है, जिसके बीच एक बुद्ध की मूर्त्ति वर्त्तमान है और कहाँव जो सलेमपुर से छ मील पश्चिम है उस गाँव में एक लाट २४ फुट ऊँची गडी है और उस पर छ फुट लंबे १६ कोने के कलश पर एक बुद्ध की मूर्त्ति स्थापित है। उस पर जो पुराने अक्षर अंकित हैं उनका उल्था नीचे लिखा जाता है।

मूल—यस्योपस्थानभूमिर्नृपतिशतशिरः पातवातावधूता।
गुप्तानां वंशजस्य प्रविसृतयशसस्तस्य सर्वोत्तमर्द्धेः॥
राज्ये शक्रोपमस्य क्षितिपशतपतेः स्कन्दगुप्तस्य शान्ते।
वर्षे त्रिंशद्दशैकोत्तरकशततमे ज्येष्ठमासि प्रपन्ने॥ १॥
ख्यातेऽस्मिन् ग्रामरत्नेकक्कुभरति जनैस्साधुससर्गपूते।
पुत्रोयस्सोमिलस्य प्रचुरगुणनिधेर्भट्टिसोमो महार्थः॥
तत्सूनूरुद्रसोमः प्रथुलमतियशाव्याघ्र इत्यन्यसञ्ज्ञो।
मद्रस्तस्यात्मजोऽभूद्द्विज गुरुयतिषु प्रायशः प्रीतिमान्यः॥ २॥
पुण्यस्कंध स चक्रे जगदिदमखिलं संसरद्वीक्ष्य भीतो।
श्रेयोऽर्थं भूतभूत्यै पथि नियमवतां मर्हतामादिकर्त्तृन्॥
पञ्चेंद्रान्स्थापयित्वा धरणिधरमयान्सन्निखातस्ततोऽयं।
शैलस्तम्भ. सुचारुः गिरिवर शिखराग्रोपमः कीर्त्तिकर्त्ता॥ ३॥

इस से यह न समझना चाहिए कि भारतवर्ष मे वैदिक मत लुप्त हो गया था। बहुत से ऐसे ऐसे देश दक्षिण मे और काशी, कुरुक्षेत्र, काश्मीर इत्यादि उत्तर मे थे जहाँ वैदिक मत के लोग रहते थे और यज्ञ योगादिक सब अपने कर्म करते थे।

जब इस प्रकार से बौद्धमत भारतवर्ष मे फैल गया, ईश्वर ने सोचा कि अब वैदिक मत डूबने पर है, जो इस की सहायता न करेंगे तो इस का चलना कठिन है। द्रविड़ देश मे जो अब मदराज हाते मे है चिद्-बरपुर मे द्राविड ब्राह्मण के कुल मे सर्वज्ञ नामक तपस्वी का जन्म हुआ। उस की स्त्री का नाम कामाक्षी था और वे दोनो चिद्बरेश्वर की, जा आकाशलिंग कर के दक्षिण देश मे प्रसिद्ध है, सेवा करने लगे। और एक कन्या उन को हुई उस का नाम विशिष्टा रक्खा। आठवे वर्ष उस कन्या का विवाह विश्वजित् ब्राह्मण से कर दिया और वह विशिष्टा भी सर्व काल अपने मा बाप के सदृश उसी महादेव की सेवा करती थी। उस का पति विश्वजित् उस को छोड कर जंगल मे तप करने को गया, परंतु विशिष्टा ने महादेव का सेवा नहीं त्यागी। ईश्वर उस से

उल्था—राजा स्कन्दगुप्त जिस के प्रस्थान के समय अर्थात् जब वह अपने मन्दिर से बाहर निकलता था सैकडों राजाओं के सिर के मुकुट उस के चरणों पर झुकते थे। बडा यशस्वी और प्रचुर रत्न से युक्त था। उस के स्वर्ग वास करने से ३२१ वर्ष के अनन्तर ज्येष्ठ महीने मे राजा सोमिल का बेटा भट्टिसोम, उस का बेटा रुद्रसोम, जिस का व्याघ्र भी नाम है, उस का बेटा मद्रसोम, जिस की भक्ति ब्राह्मण गुरु और सन्यासियो मे अधिक थी, जगत् का ससकरण अर्थात् दिन दिन नाश अवलोकन करके बहुत भययुक्त हुआ। और उस से अपनी और अपनी प्रजा की रक्षा के लिये ककुभ ग्राम मे जिस को अब कहाव कहते हैं और जिस मे साधु जन अधिक बसते थे, जिन के रहने से वह पवित्र गिना जाता था, एक यज्ञ किया। उस यज्ञ में पाँच इंद्र पहाडों के बराबर अर्थात् पाँच स्तंभ पर इंद्र की मूर्त्ति बना कर स्थापित की। वह (१) कहाव में (२) भागलपुर मे (३) सारण मे (४) बेतिया के राज्य मे (५) तराई में अब भी कई फुट के लंबे गडे हुये खड़े मौजूद हैं और उन के सिवाय एक और स्तंभ स्थापन किया, जो उस की कीर्त्ति को प्रकाश करता है।

प्रसन्न हुआ और उस को एक लड़का उत्पन्न हुआ, जिस का नाम शङ्कराचार्य्य रक्खा। पुराण और तन्त्रो मे शङ्कराचार्य्य को शिव का अवतार लिखा है और इन के प्रतिवादी वैष्णव लोग भी इन को शिव का अवतार होने मे कुछ विवाद नहीं करते। इन की उत्पत्ति का समय अभी तक ठीक ठीक नहीं ज्ञात हुआ परतु शिष्य परपरा से जो आचार्य के अनतर अभी तक चली आती है, जान पड़ता है कि कुछ न्यूनाधिक एक हजार वर्ष हुए। डाक्तर डाकवेल साहब अपने ग्रथो मे ६०० वर्ष लिखते है, और पण्डित जयनारायण तर्क-पञ्चानन १२०० वर्ष के निकट अनुमान करते हैं।

उस नगर के निवासी ब्राह्मणो ने इनके जात कर्मादिक सस्कार किये और तीसरे वर्ष मे चौल और पॉचवे मे यज्ञोपवीत किया। तब से श्रीशकराचार्य जी ने आठवे वर्ष तक सकल विद्या का पूर्ण अभ्यास किया और सब विद्या मे पारगत हुए और शिष्यो को भी विद्या सिखलाई। आठवे वर्ष मे श्रीगोविद योगींद्र के उपदेश से सन्यासाश्रम स्वीकार किया और इनके मुख्य शिष्य बारह थे, जिनके नाम पद्मपाद, हस्तामलक, समित्पाणि, चिद्विलास, ज्ञानकन्द, विष्णुगुप्त, शुद्धकीर्ति, भानुमरीचि, कृष्णदर्शन, बुद्धिवृद्धि, विरचपाद, अनन्तानन्दगिरि थे। इनके समय मे पचास से अधिक मत प्रचलित थे, उनमे जो जो कुछ मुख्य मत थे उनके नाम ये है। शैव, वैष्णव, सौर, गाणपत्य, शाक्त, कापालिक, कौल, पाचरात्र, भागवत, बौद्ध, जैन, चार्वाक इत्यादि। इन सब मतवालो के आचार्यों को उन्होने शास्त्रार्थ मे जीत लिया और उन सब को अपना शिष्य किया।

तब आचार्य जी काशी मे गये और मध्याह्न के समय मणिकर्णिका पर स्नान करते थे, इतने मे श्रीव्यास जी बूढ़े ब्राह्मण का भेष लेकर वहॉ आये और शकराचार्य से पूछा कि मैने सुना है कि आपने ब्रह्मसूत्र मे बहुत परिश्रम किया है। आचार्य ने उत्तर दिया, हॉ, जहॉ तुम्हारी इच्छा हो वहॉ पूछो। व्यास जी ने एक स्थल मे पूछा, आचार्य जी ने उसका यथार्थ उत्तर दिया। इस पर व्यास जी फिर कुछ विवाद करने लगे। आचार्य जी को क्रोध आया और अपने पद्मपाद नामक शिष्य

से कहा कि इस बूढ़े ब्राह्मण को बाहर निकाल दो, तब शिष्य ने यह श्लोक पढा ।

> शङ्करः शङ्करः साक्षात् व्यासो नारायणः स्वयम् ।
> तयोर्विवादे सम्प्राप्ते किङ्करः किङ्करिष्यति ॥

आचार्य जी ने यह सुनकर कहा जो सचमुच यह बूढा ब्राह्मण व्यास होगा, तो अवश्य हमारे उत्तर पर सतुष्ट हो के प्रत्यक्ष दर्शन देगा। व्यास जी यह सुन कर आप प्रत्यक्ष हुए और आचार्य जी से कहा कि मै तुम्हारी परीक्षा लेने के वास्ते आया था। तुम तो शिव के अवतार हो तुम को कौन जीतने वाला है। फिर व्यास ने आचार्य को वर दिया और ब्रह्मा को बुला कर इनकी आयु बढा दी। तब से आचार्य का प्रताप द्विगुणित बढ गया। कुछ समय के अनतर आचार्य जी रुद्रपुर मे गए। वहाँ भट्टपाद, जिसे कुमारिल कहते हैं और जिस ने मीमासा-तन्त्र वार्तिक नामक एक बडा भारी ग्रंथ बनाया है, तुषाग्नि मे बैठा था। आचार्य जी ने उससे भेंट करके वाद-भिक्षा माँगी, परतु भट्टपाद ने कहा कि मै अब शरीर दग्ध होने के कारण तुम्हारे साथ शास्त्रार्थ करने मे असमर्थ हूँ। मेरा बहनोई मडनमिश्र, जो हस्तिनापुर से आग्नेय दिशा मे विजिलबिंदु नाम नगर मे रहता है, तुम से शास्त्रार्थ करेगा और उससे तुम्हारा गर्व शान्त हो जायगा।

आचार्य जी यह वचन सुन कर वहाँ गये और लोगो से मंडनमिश्र के घर का ठिकाना पूछा। लोगो ने उत्तर दिया कि जहाँ तोते और मैने शास्त्रार्थ करते है वही मडनमिश्र का घर है। शकराचार्य जी ने सोचा कि जो मै दरवाजे से जाता हूँ तो मुझे बहुत काल लगेगा, इस लिये मत्र के बल से आकाशमार्ग से उसके घर मे उतरे। कोई कहते है कि उस के घर के पीछे एक लबा ताड़ का पेड़ था उस पर चढ कर घर मे गये। उस समय मंडनमिश्र श्राद्ध करता था। इनको देखते ही बहुत क्रुद्ध हो गया क्योंकि ये संन्यासी थे और उस ने सन्यास का खडन किया था और कहा, "कुतो मुण्डी"। आचार्य जी ने उत्तर दिया, "आगलान्मुण्डी"। मंडन ने कहा—"सुरापीता"। शंकर जी ने कहा—"साहिश्वेता" इत्यादि दोनो के संवाद हुए। मिश्र जी श्राद्ध समाप्त करने के

अनतर आचाय से शास्त्रार्थ करने मे प्रवृत्त हुए और उसकी स्त्री सरस-बाणी, जिसे सरस्वती का साक्षात् अवतार कहते थे, मध्यस्थ हुई। दोनो से सौ दिन तक शास्त्रार्थ हुआ। अंत मे मडनमिश्र का पराजय हुआ और सन्यासाश्रम को स्वीकार किया। पुराण मे मडनमिश्र को ब्रह्मा का अवतार लिखा है।

जब मंडनमिश्र सन्यास लेने लगे उस के पहिले ही सरसबाणी अपना पूर्व शरीर छोड़ कर ब्रह्मलोक को जाने लगी। शंकराचार्य ने वनदुर्गा मंत्र मे आकर्षण किया और कहा कि मुझसे शास्त्रार्थ करके चला जाओ। उसने कहा मैने वैधव्य के भय से अपने पति के संन्यास के पहले ही पृथ्वी को त्याग किया। अब पृथ्वी पर नहीं आ सकती, क्योकर तुम से शास्त्रार्थ करूँ। आचार्य ने उत्तर दिया कि आकाश मे भूमि से छ हाथ दूरी पर खड़ी होके मुझसे शास्त्रार्थ कर। उस ने आचार्य के कहने के अनुसार शास्त्रार्थ किया अत मे हार गई, तब उस ने सोचा कि यह सन्यासी है इस को काम-शास्त्र नहीं आता होगा इसमे जो पूछेंगे तो उत्तर नहीं दे सकेगा। फिर सरसवाणी ने कहा कि काम-शास्त्र मे विवाद करो। शकराचार्य्य इस वचन को सुनकर चुप हो गये और कहा कि छ. महीने के अनतर तुमसे इसी शास्त्र मे विवाद करूँगा।

तब शकराचार्य्य अमृतपुर मे गए। वहाँ का राजा मर गया था। इसका नाम अमरु करके प्रसिद्ध था। उसका शरीर जलाने के लिये चिता पर रक्खा था इतने मे शकराचार्य ने अपने शरीर से प्राण निकाल कर परकायप्रवेश विद्या के बल से उस राजा के मृत शरीर मे प्रवेश किया और शिष्यो ने आचार्य का शरीर एक पहाड़ की गुफा मे रक्खा। कहीं लिखा है इस राजा की सौ रानी थीं उन मे जो बड़ी थी उस ने देखा कि पति की चेष्टा पहले ऐसी नहीं है केवल पहला शरीर मात्र वही है और इस की आत्मा किसी योगी की जान पड़ती है नहीं तो इतना चातुर्य इस मे कहाँ से होता। रानी ने आज्ञा दी कि जहाँ कहीं मृत शरीर मिले उसी क्षण उस को जला दो। राजदूतो ने आचार्य का शरीर गुफा मे पाया और उसको जलाने के लिये चिता पर रक्खा और आग लगा दी। आचार्य

के शिष्यो ने देख कर राजा की स्तुति की। उस का अभिप्राय यही था कि राजा, तू शकराचार्य्य है दूसरा कोई नहीं। उसी क्षण राजा के शरीर से प्राण ने निकल कर उस चिता पर रक्खे हुए शरीर में प्रवेश किया और अग्नि शात होने के लिये नृसिंह की स्तुति की। नृसिंह ने प्रसन्न हो के वर दिया। वहाँ से सरस्वती के पास आये और उसको जीत लिया और उस को साथ लेकर शृंगपुर मे आये, जिस को अब शृंगेरी कहते है और जो तुगभद्रा के तीर पर है। उसी स्थल पर सरस्वती की स्थापना की और भारती सप्रदाय की शिष्य परपरा करने की रीति स्थापन की।

शकराचार्य की गुरुपरपरा इस प्रकार से लिखी है। पहिले नारायण, फिर ब्रह्मा, वशिष्ठ, शक्ति, पराशर, व्यास, सुक, गौड़पाद, गोविंद योगीन्द्र, श्री शकाराचार्य्य। इन के १२ मुख्य शिष्य हुए उन के नाम पहिले लिख आये है।

शृंगेरी मे १२ बरस रह कर काचीपुर मे गये। वहाँ कामाक्षा देवी की स्थापना की और काची का नगर बसाया और विष्णुकाची मे वरदराज विष्णु का और शिवकाची मे शिव का मदिर बनवाया और अवताम्रपर्णी नदी के तीर पर रहने वाले लोगो को शिष्य किया। प्रायः सब भारतवर्ष मे इनकी शिष्यशाखा फैली।

श्री शकराचार्य्य जी ने व्यास सूत्र पर अद्वैत भाष्य और दस महोपनिषदो और गीता पर भी भाष्य बनाये। और कई एक ग्रथ बनाये है वे सब अब तक मिलते हैं। इनका मत यह था कि इस प्रपच मे ब्रह्म को छोड कर जो कुछ दिखाई देता है सब मिथ्या है, सब ब्रह्म रूप है, और ईश्वर और जीव एक ही है इत्यादि, उनके ग्रथो को देखने से जान पडता है। इसी लिये किसी मत को जिस मे ईश्वर की सत्ता मानी जाती है सर्वथा खडन नहीं किया। नास्तिक मत को छोड़ कर सब मतो को स्थापन किया और ३२ बरस के वय मे परलोक को चले गये। शक्ति सगम तत्रादिक ग्रथो मे तो १६ ही वर्ष लिखे हैं परंतु शकर विजयादि ग्रथो से ज्ञात हुआ कि जो ऊपर सख्या लिखी है ठीक है क्योकि इतना कृत्य इतने थोड़े समय मे नहीं हो सकता। इनकी

कीर्ति अब तक इस भारतवर्ष मे चली जाती है और प्रायः यहाँ के लोग भी इसी मत पर चलते है।

मै ने शकराचार्य्य का जीवनवृतांत बहुत सक्षेप से लिखा है। यदि इसमे कहीं शीघ्रता के हेतु भूल हो तो पढने वाले उस पर क्षमा करे क्योकि शास्त्र मे लिखा है कि भ्राति पुरुष का धर्म है।

—:o:—

५. महाकवि श्री जयदेव जी*

जयदेव जी की कविता का अमृत पान करके तृप्त, चकित, मोहित और घूर्णित कौन नहीं होता और किस देश मे कौन सा ऐसा विद्वान है जो कुछ भी सस्कृत जानता हो और जयदेव जी की काव्य-माधुरी का प्रेमी न हो। जयदेव जी का यह अभिमान कि अंगूर और ऊख की मिठास उनकी कविता के आगे फीकी है बहुत सत्य है। इस मिठाई को न पुरानी होने का भय है न चींटी का डर है, मिठाई है, पर नमकीन है यह नई बात है। सुनने पढने की बात है पर गूगे का गुड़ है। निर्जन मे जगल पहाड़ मे जहाँ बैठने को बिछौना भी न हो वहाँ गीतगोविद सब आनद सामग्री देता है, और जहाँ कोई मित्र-रसिक भक्त-प्रेमी न हो वहाँ यह सब कुछ बन कर साथ रहता है। जहाँ गीतगोविद है वहीं वैष्णव गोष्ठी है, वहीं रसिक-समाज है, वहीं वृदावन है, वहीं प्रेमसरोवर है, वहीं भाव-समुद्र है, वहीं गोलोक है और वहीं प्रत्यक्ष ब्रह्मानद है। पर यह भी कोई जानता है कि इस पर-ब्रह्म-रस प्रेम-सर्वस्व शृङ्गार-समुद्र के जनक जयदेव जी कहाँ हुए? कोई नहीं जानता और न इसकी खोज करता। प्रोफेसर लैसेन ने लैटिन भाषा मे और पूना के प्रिन्सिपल आरनल्ड साहब ने अँगरेज़ी मे गीत-गोविद का अनुवाद किया, परतु कवि का जीवनचरित्र कुछ न लिखा।

* चद्रिका अभिनव किरणावली खड ६ सख्या १० अप्रैल सन् १८७६ मे पूर्वार्ध छपा।

केवल इतना ही लिख दिया कि सन् ११५० के लगभग जयदेव उत्पन्न हुए थे। किंतु धन्य है बाबू रजनीकात गुप्त कि जिन्होने पहिले पहल इस विषय में हाथ डाला और "जयदेवचरित्र" नामक एक छोटा सा ग्रथ इस विषय पर लिखा। यद्यपि समयनिर्णय मे और जीवनचरित्र मे हमारे उनके मत मे अनेक अनेक्य है तथापि उनके ग्रथ से हम को अनेक सहायता मिली है, यह मुक्त कठ से स्वीकार करना होगा। और इसमे कोई सशय नहीं कि उन्हीं के ग्र थ ने हमारी रुचि को इस विषय के लिखने पर प्रबल किया है।

वीरभूमि से प्राय: दस कोस दक्षिण * अजयनद के उत्तर किन्दु-बिल्व † गॉव मे श्रीजयदेव जी ने जन्म ग्रहण किया था।

सभव है कि कन्नौज से आए हुए ब्राह्मणो मे से जयदेव जी का वंश भी हो। इन के पिता का नाम भोजदेव और माता का नाम रामादेवी था ‡। इन्होने किस समय अपने आविर्भाव से धरातल को भूषित किया था यह अब तक नहीं ज्ञात हुआ। श्रीयुक्त सनातन गोस्वामि ने लिखा है कि बगाधिपति महाराज लक्ष्मणसेन की सभा मे जयदेव जी विद्यमान थे। अनेक लोगो का यही मत है और इस मत को पोषण करने को लोग कहते है कि लक्ष्मणसेन के द्वार पर एक पत्थर

---

* अजयनद भागीरथी का करद है। यह भागलपुर जिला के दक्षिण से निकल कर सौताल परगने के दक्षिण भाग दक्षिण की ओर और फिर वर्द्धमान और वीरभूमि के जिले के बीच में से पश्चिम की ओर बह कर कटवा के पास भागीरथी से मिला है। (ज० च० बगदेश विवरण)।

† किन्दुबिल्व वीरभूमि के मुख्य नगर सूरी से नौ कोस है। यहाँ श्रीराधा दामोदर जी की मूर्ति प्रतिष्ठित है। वैष्णवों का यह भी एक पवित्र क्षेत्र है।

‡ बबई की छपी हुई पुस्तक में राधा देवी जो इन की माता का नाम लिखा है वह असगत है। हाँ, वामादेवी और रामादेवी यह दोनों पाठ अनेक हस्त-लिखित पुस्तकों मे मिलते हैं। बगला मे र और व में केवल एक बिन्दु के भेद होने के कारण यह भ्रम उपस्थित हुआ है।

खुदा हुआ लगा था, जिस पर यह श्लोक लिखा हुआ था "गोवर्द्धनश्च शरणो जयदेव उमापतिः । कविराजश्च रत्नानि समितौ लक्ष्मणस्य च ॥"

श्रीसनातन गोस्वामी के इस लेख पर अब तीन बातो का निर्णय करना आवश्यक हुआ। प्रथम यह कि लक्ष्मणसेन का काल क्या है। दूसरे यह कि यह लक्ष्मणसेन वही है जो बगाले का प्रसिद्ध लक्ष्मणसेन है कि दूसरा है। तीसरे यह कि यह बात श्रद्धेय है कि नहीं कि जयदेव जी लक्ष्मणसेन की सभा मे थे।

प्रसिद्ध इतिहास लेखक मिनहाजिउद्दीन ने तबकाते नासिरी मे लिखा है कि जब बख्तियार खिलजी ने बगाला फतह किया तब लछमनिया नाम का राजा बगाले में राज करता था। इन के मत से लछमनिया बगदेश का अतिम राजा था। किंतु बगदेश के इतिहास से स्पष्ट है कि लछमनिया नाम का कोई भी राजा बगाले मे नहीं हुआ। लोग अनुमान करते है कि बल्लालसेन के पुत्र लक्ष्मणसेन के माधवसेन और केशवसेन "लाक्ष्मणेय" इस शब्द के अपभ्रश से लछमनिया लिखा है।

राजशाही के जिले से मेटकाफ साहब को एक पत्थर पर खोदी हुई प्रशस्ति मिली है। यह प्रशस्ति विजयसेन राजा के समय मे प्रद्युम्नेश्वर महादेव के मदिर-निर्माण के वर्णन मे उमापतिधर की बनाई हुई है। डाक्टर राजेन्द्र लाल मित्र के मत से इस की सस्कृत की रचना प्रणाली नवम वा दशम वा एकादश शताब्दी की है। शोच की बात है कि इस प्रशस्ति में सवत् नहीं दिया है, नहीं तो जयदेव जी के समय निरूपण मे इतनी कठिनाई न पड़ती। इसमे हेमतसेन, सुमंतसेन और वीरसेन यही तीन नाम विजयसेन के पूर्वपुरुषो के दिये है, जिस से प्रगट होता है कि वीरसेन ही वशस्थापनकर्त्ता है। विजयसेन के विषय मे यह लिखा है कि उस ने कामरूप और कुरुमडल [मद्रास और पुरी के बीच का देश] जय किया था और पश्चिम जय करने को नौका पर गगा के तट मे सेना भेजी थी। तवारीखो मे इन राजाओ का नाम कहीं नहीं है। कहते है आइनेअकबरी का सुखसेन (बल्लालसेन का पिता) विजयसेन का नामांतर है, क्योकि बाकरगंज की प्रस्तरलिपि मे जो चार नाम है वे

विजयसेन, बल्लालसेन, लक्ष्मणसेन और केशवसेन इस क्रम से है। बल्लालसेन बड़ा पडित था और दानसागर और वेदार्थ स्मृति सग्रह इत्यादि ग्रथ उसके कारण बने। कुलीनो की प्रथा भी बल्लालसेन की स्थापित है। उसके पुत्र लक्ष्मणसेन के काल मे भी सस्कृतविद्या की बडी उन्नति थी। भट्ट नारायण (वेणी सहार के कवि) के वश मे धनंजय के पुत्र हलायुध पडित उसके दानाध्यक्ष थे, जिन्होंने ब्राह्मण सर्वस्व बनाया और इनके दूसरे भाई पशुपति भी बड़े स्मार्त आन्हिककार थे। कहते है कि गौड़ का नगर बल्लालसेन ने बसाया था, परतु लक्ष्मणसेन के काल से उस का नाम लक्ष्मणावती (लखनौती) हुआ। लक्ष्मणसेन के पुत्र माधवसेन और केशवसेन थे। राजावली मे इन के पीछे सुसेन वा शूरसेन और लिखा है और मुसलमान लेखको ने नौजीव (नवद्वीप ?), नारायण, लखमन और लखमनिया ये चार नाम और लिखे है वरच एक अशोकसेन भी लिखा है किंतु इन सबो का ठीक पता नहीं। मुसलमानो के मत से लखमनिया अतिम राजा है, जिस ने ८० वर्ष राज्य किया और बख्तियार के काल मे जिसने राज्य छोडा। यह गर्भ ही से राजा था। तो नाम का क्रम वीरसेन से लछमनिया तक एक प्रकार ठीक हो गया, किंतु इन का समय निर्णय अब भी न हुआ, क्याकि किसी दानपत्र मे सवत् नहीं है। दानसागर के बनने का समय समय-प्रकाश के अनुसार १०१६ शके (१०६७ ई०) है। इस से बल्लालसेन का राजत्व ग्यारहवीं शताब्दी के अत तक अनुमान होता है और यह आईनेअकबरी के समय से भी मेल खाता है। बल्लालसेन ने १०६६ मे राज्य आरभ किया था। तो अब सेनवश का क्रम यों लिखा जा सकता है।

वीरसेन	
सामंतसेन . . .	
हेमतसेन . .	
विजयसेन वा सुखसेन	
बल्लालसेन	१०६६
लक्ष्मणसेन	११०१
माधवसेन	११२१

केशवसेन	११२२
लछमनिया	११२३

बल्लालसेन का समय १०६६ ई० समय-प्रकाश के अनुसार है। यदि इस को प्रमाण न मानै और फारसी लेखका के अनुसार लछमनिया के पहले नारायण इत्यादि और राजाओ को भी मानै तो बल्लालसेन ओर भी पीछे जा पडैगे। तो अब जयदेव जी लक्ष्मणसेन की सभा मे थे कि नहीं यह विचारना चाहिए। हमारी बुद्धि से नहीं थे। इस के कई दृढ प्रमाण है। प्रथम तो यह कि उमापतिधर जिसने विजयसेन की प्रशस्ति बनाई है वह जयदेव जी का समसामयिक था। तो यदि यह मान ले कि जयदेव उमापति गोवर्द्धनादिक सब सौ बरस से विशेष जिए है तब यह हो सकता है कि ये विजयसेन और लक्ष्मण दोनो की सभा मे थे। दूसरे चद कवि ने जिसका जन्म ११५० सन् के पास है अपने रायसा मे प्राचीन कवियो की गणना मे जयदेव को लिखा है।* तो सौ डेढ़ सो वष पूर्व हुए बिना जयदेव जी की कविता का चद के समय तक जगत् मे आदरणीय होना असभव है। गोवर्द्धन ने अपनी सप्तशती मे "सेन-कुल तिलक भूपति" इतना ही लिखा, नाम

---

* भुजगप्रयात—प्रथम भुजगी सुधारी ग्रहन। जिनै नाम एक अनेक कहन ॥
दुती लम्भय देवत जीवतेस। जिनै विश्व राख्यौ बलीमत्र सेस ॥
चव वेद बभ हरी कित्ति भाषी। जिनै ध्रम्म साध्रम्म ससार साषी ॥
तृती भारती व्यास भारत्थ भाष्यौ। जिनै उत्त पारत्थ सारत्थ साष्यौ ॥
चव सुक्खदेव परीषत्त पाय। जिनै उद्धर्यौ अव्व कुर्वस राय ॥
नर रूप पचम्म श्रीहर्ष सार। नलैराय कठ दिने पद्ध हार ॥
छुट कालिदास सुभाषा सुबद्ध। जिनै बागवानी सुबानी सुबद्ध ॥
कियो कालिका मुक्ख वास सुसुद्ध। जिनै सेत बध्योति भोज प्रबद्ध ॥
सतं डडमाली उलाली कवित्त। जिनै बुद्धि तारग गागा सरित्त ॥
जयदेव अट्ठ कवी कब्बिराय। जिनै केवल कित्ति गोविंद गाय ॥
गुर सब्ब कब्बी लहू चद कब्बी। जिनै दर्सिय देवि सा अग हब्बी ॥
कवी कित्तिकित्ति उकत्ती सुदिक्खो। तिनै कोउ चिष्टोकवीचंद भक्खो ॥

कुछ न दिया, किंतु उस की टीका मे "प्रवरसेन नामा इति" लिखा है। अब यदि प्रवरसेन, हेमतसेन या विजयसेन का नामांतर मान लिया जाय और यह भी मान लिया जाय कि जयदेव जी की कविता बहुत जल्दी ससार मे फैल गई थी और समय-प्रकाश का बल्लाल का समय भी प्रमाण किया जाय तो यह अनुमान हो सकता है कि विजयसेन के समय मे वा उस से कुछ ही पूर्व सन् १०२५ से १०५० तक मे किसी वर्ष मे जयदेव जी का प्राकट्य है और ऐसा ही मानने से अनेक विद्वानो की एकवाक्यता भी होती है। यहाँ पर समय विषयक जटिल और नीरस निर्णय जो बंगला और अगरेजी ग्रथो मे है वह न लिख कर सार लिख दिया है। इससे "जयदेव चरित" इत्यादि बगला ग्रथो में जो जयदेव जी का समय तेरहवी वा चौदहवीं शताब्दी लिखा है वह अप्रमाण होकर यह निश्चय हुआ कि जयदेव जी ग्यारहवीं शताब्दी के आदि मे उत्पन्न हुए है।

जयदेव जी की बाल्यावस्था का सविशेष वर्णन कुछ नहीं मिलता। अत्यत छोटी अवस्था म यह मातृपितृविहीन हो गए थे, यह अनुमान होता है। क्योकि विष्णुस्वामि चरितामृत के अनुसार श्री पुरुषोत्तम-क्षेत्र मे इन्होंने उसी सप्रदाय के किसी पडित से पढी थी। इनके विवाह का वर्णन और भी अद्भुत है। एक ब्राह्मण ने अनपत्य होने के कारण जगन्नाथ देव की बड़ी आराधना कर के एक कन्या-रत्न लाभ किया था। इस कन्या का नाम पद्मावती था। जब यह कन्या विवाह योग्य हुई तो जगन्नाथ जी ने स्वप्न मे उसके पिता को आज्ञा किया कि हमारा भक्त जयदेव नामक एक ब्राह्मण अमुक वृक्ष के नीचे निवास करता है, उसको तुम अपनी कन्या दो। ब्राह्मण कन्या को लेकर जयदेव जी के पास गया। यद्यपि जयदेव जी ने अपनी अनिच्छा प्रकाश किया तथापि देवादेशानुसार ब्राह्मण उस कन्या को उनके पास छोड कर चला आया। जयदेव जी ने जब उस कन्या से पूछा कि तुम्हारी क्या इच्छा है तो पद्मावती ने उत्तर दिया कि आज तक हम पिता की आज्ञा मे थे, अब आप की दासी है। ग्रहण कीजिए वा परित्याग कीजिए मै आप का दासत्व न छोडूँगी। जयदेव जी ने उस कन्या के मुख से यह सुन कर प्रसन्न होकर उस का पाणिग्रहण किया। अनेक लोगो का

मत है कि जयदेव जी ने पूर्व मे एक विवाह किया था। उस स्त्री की मृत्यु के पीछे उदास होकर पुरुषोत्तमक्षेत्र मे रहते थे। पद्मावती उनकी दूसरी स्त्री थी। इन्हीं पद्मावती के समय, ससार मे आदरणीय कविता रत्न का निकष गीतगोविद काव्य जयदेव जी ने बनाया।

गीतगोविद के सिवा जयदेव जी की और कोई कविता नहीं मिलती। प्रसन्नराघव, पक्षधरी, चन्द्रालोक और सीताविहार काव्य विदर्भ नगर वासी कौडिन्य गोत्रोद्भव महादेव पडित के पुत्र दूसरे जयदेव जी के बनाए है, जिनका काव्य मे पीयूषवर्ष और न्याय मे पक्षधर उपनाम था। वरंच अनेक विद्वानो का मत है कि तीन जयदेव हुए है, यथा गीतगोविदकार, प्रसन्नराघवकार और चन्द्रालोककार, जिनका नामातर पीयूषवर्ष है।

पद्मावती के पाणिग्रहण के पीछे जयदेव जी अपने स्थापित इष्टदेव की सेवा निर्वाहार्थ द्रव्य एकत्र करने की इच्छा से वा तीर्थाटन और धर्मोपदेश की इच्छा से निज देश छोड़ कर बाहर निकले। श्रीवृदावन की यात्रा करके जयपुर वा जयनगर होते हुए जयदेव जी मार्ग मे चले जाते थे कि डॉकुओ ने धन के लोभ से उन पर आक्रमण किया और केवल धन ही नहीं लिया, वरच उनके हाथ पैर भी काट लिए। कहते है कि किसी धार्मिक राजा के कुछ भृत्य लोग उसी मार्ग से जाते थे। उन लोगो ने जयदेव जी की यह दशा देखा और अपने राज्य मे उन को उठा ले गए। वहाँ औषध इत्यादि से कुछ इनका शरीर स्वस्थ हुआ। इसी अवसर मे चोर भी उस नगर मे आए और साधु वेश मे उस नगर के राजा के यहा उतरे। तब राजा के घर मे जयदेव जी का बडा मान था और दान धर्म इन्हीं के द्वारा होता था। जयदेव जी ने इन साधु वेशधारी चोरो को अच्छी तरह पहचान लिया और यदि वे चाहते तो भली भाँति अपना बदला चुका लेते, परतु उनके सहज उदार और दयालु चित्त मे इस बात का ध्यान तक न आया, वरच दानादिक देकर उनका बड़ा आदर किया। बिदा के समय भी उन को बडे सत्कार से अच्छी बिदाई देकर बिदा किया और राजा के दो नौकर साथ कर दिये कि अपनी सरहद तक उन को पहुँचा

आवे। मार्ग मे राजा के अनुचर ने उन चोरो से पूछा कि इन साधू जी ने और लोगो से विशेष आपका आदर क्यो किया। इस पर उन चाडाल चोरो ने यह उत्तर दिया कि जयदेव जी पहिले एक राजा के यहाँ रहते थे, इन्होने कुछ ऐसा दुष्कर्म किया कि राजा ने हम लोगो को इन के प्राण हरने की आज्ञा दिया, किंतु दया परवश हो कर हम लोगो ने इन के प्राण नहीं लिए, केवल हाथ पैर काट के छोड़ दिया। इसी बात के छिपाने के हेतु जयदेव ने हमलोगो का इतना आदर किया। कहते है कि मनुष्यो की आधारभूता पृथ्वी इस अनर्थ मिथ्याप्रवाद को न सह सकी और द्विधा विदीर्ण हो गई। वे चोर सब उसी पृथ्वीगर्त मे डूब गए और परमेश्वर के अनुग्रह से जयदेव जी के भी हाथ पैर फिर से यथावत् हो गए। अनुचरो के द्वारा यह वृत्तात सुन कर और जयदेव जी से पूर्ववृत्ति जान कर राजा अत्यंत ही चमत्कृत हुआ। आश्चर्य घटना-अविश्वासी विद्वानो का मत है कि जयदेव जी ऐसे सहृदय थे कि उनके सहज स्वभाव पर रीझ कर लोगो ने यह गल्प कल्पित कर ली है।

तदनतर जयदेव जी ने अपनी पत्नी पद्मावती को भी वहीं बुला लिया। कहते हैं कि एक बेर उस राजा की रानी ने ईर्षा-वश पद्मावती की परीक्षा करने को उस से कह दिया कि जयदेव जी मर गए। उस समय जयदेव जी राजा के साथ कहीं बाहर गए थे। पतिप्राणा पद्मावती ने यह सुनते ही प्राण परित्याग कर दिया। जब जयदेव जी आए और उन्होने यह चरित देखा तो श्रीकृष्ण नाम सुना कर उस को पुनर्जीवन दिया, किंतु उस ने उठ कर कहा कि अब आप हमको आज्ञा दीजिए, हमारा इसी मे कल्याण है कि हम आपके सामने परमधाम जायँ, और तदनुसार उस ने फिर शरीर नहीं रक्खा। जयदेव जी इससे उदास होकर अपनी जन्मभूमि केंदुली ग्राम मे चले आए और फिर यावत् जीवन वहीं रहे।

श्री जयदेव जी के गीतगोविंद के जोड पर गीतगिरीश नामक एक काव्य बना है, किंतु जो बात इस मे है वह उस मे सपने मे भी नहीं है।

गीतगोविंद के अनेक टीकाकार भी हुए हैं, यथा उदय, जो खास गोवर्द्धनाचार्य का शिष्य था और जयदेव जी से भी कुछ पढा था। एक टीका उस की बनाई है और पीछे से अनेक टीका बनी हैं। उदयन की टीका जयदेव जी के समय मे बन चुकी थी और इस मे भी कोई सदेह नही कि गीतगोविंद जयदेव जी के जीवन काल ही से सारे ससार मे प्रचलित हो गया था। गीतगोविंद दक्षिण मे बहुत गाया जाता है और बाला जी मे सीढ़ियो पर द्राविड़ लिपि मे खुदा हुआ है। श्री वल्लभाचार्य सप्रदाय मे इस का विशेष भाव है, वरच आचार्य के पुत्र गोसाईं विट्ठलनाथ जी की इस के प्रथम अष्टपदी पर एक रसमय टीका भी बडी सुदर है, जिस मे दशावतार का वर्णन शृगार परत्व लगाया है। वैष्णवों मे परिपाटी है कि अयोग्य स्थान पर गीतगोविंद नहीं गाते, क्योंकि उनका विश्वास है कि जहाँ गीतगोविंद गाया जाता है वहाँ अवश्य भगवान का प्रादुर्भाव होता है। इस पर वैष्णवो मे एक आख्यायिका प्रचलित है। एक बुढ़िया को गीतगोविंद की "धीर समीरे यमुना तीरे" यह अष्टपदी याद थी। वह बुढ़िया गोवर्द्धन के नीचे किसी गाँव मे रहती थी। एक दिन वह बुढ़िया अपने बैंगन के खेत मे पड़ो को सींचती थी और अष्टपदी गाती थी, इस से ठाकुर जी उस के पीछे पीछे फिरे। श्रीनाथ जी के मदिर मे तीसरे पहर को जब उत्थापन हुए तो श्री गोसाईं जी ने देखा कि श्रीनाथ जी का बागा फटा हुआ है और बैंगन के काँटे और मिट्टी लगी हुई है। इस पर जब पूछा गया तो उत्तर मिला कि अमुक बुढ़िया ने गीतगोविंद गाकर हमको बुलाया इस से काँटे लगे, क्योकि वह गाती गाती जहाँ जाती थी मै उस के पीछे फिरता था। तब से यह आज्ञा गोसाईं जी ने वैष्णवो मे प्रचार किया कि कुस्थान पर कोई गीतगोविंद न गावे।

किवदती है कि जयदेव जी प्रति दिवस श्रीगगा स्नान करने जाते थे। उन का यह श्रम देख कर गंगा जी ने कहा कि तुम इतनी दूर क्यो परिश्रम करते हो, हम तुम्हारे यहाँ आप आवेगे। इसी से अजयनद नामक एक धार मे गगा अब तक केदुली के नीचे बहती है।

जयदेव जी विष्णुस्वामी सप्रदाय मे एक ऐसे उत्तम पुरुष हुए है

कि सप्रदाय की मयावस्था मे मुख्यत्व कर के इन का नाम लिया गया है। यथा—

विष्णुस्वामीसमारम्भा जयदेवादिमध्यगा। श्रीमद्वल्लभपर्य्यन्तास्तुमोगुरुपरम्पराम् ॥१॥

जयदेव जी का पवित्र शरीर केदुली ग्राम मे समाधिस्थ है। यह समाधि मदिर सुदर लताओ से वेष्टित हो कर अपनी मनोहरता से अद्यापि जयदेव जी के सुदर चित्त का परिचय देता है।

"जयदेव जी नितात करुण हृदय और परम धार्मिक थे। भक्ति विलसित महत्व छटा और अनुपम प्रीति व्यंजक उदार भाव यह दोनो उनके अत.करण मे निरतर प्रतिभासित होते थे। उन्हो ने अपने जीवन का अद्धकाल केवल उपासना और धर्मघोषणा मे व्यतीत किया। वैष्णव सप्रदाय मे इन के ऐसे धार्मिक और सहृदय पुरुष विरले ही हुए है"।

जयदेव जी एक सत्कवि थे, इस मे कोई सन्देह नहीं। यद्यपि कालिदास, भवभूति, भारवि इत्यादि से बढकर वह कवि थे यह नहीं कह सकते, पर उनकी अपेक्षा इनको सामान्य भी नहीं कह सकते। बगभूमि मे तो कोई ऐसा सत्कवि आज तक हुआ नहीं। "ललितपद विन्यास और श्रवण मनोहर अनुप्रास छटा निबधन से जयदेव की रचना अत्यत ही चमत्कारिणी है। मधुर पद विन्यास मे तो बड़े बड़े कवि भी इस से निस्सन्देह हारे है"।

जयदेव जी का प्रसिद्ध ग्रथ गीतगोविद बारह सर्गो मे विभक्त है। जिस मे पूर्व मे श्लोक और फिर गीत क्रम से रक्खे है। इस ग्रथ मे परस्पर विरह, दूती, मान, गुण-कथन और नायक का अनुनय और तत्पश्चात् मिलन यह सब वर्णित है। जयदेव जी परम वष्णव थे। इस स उन्हो ने जो कुछ वर्णन किया अत्यत प्रगाढ भक्ति पूर्ण हो कर वर्णन किया है। इन्हो ने इस काव्य मे अपनी रसशालिनी रचना शक्ति और चित्तरजक सद्भाव-शालित्व का एक शेष प्रदर्शन दिया है। पंडितवर ईश्वरचद्र विद्यासागर स्वप्रणीत सस्कृत विषयक प्रस्ताव मे लिखते है "इस महाकाव्य गीतगोविद की रचना जैसी मधुर कोमल और मनोहर

है उस तरह की दूसरी कविता संस्कृत-भाषा में बहुत अल्प है। वरंच ऐसे ललित पद विन्यास, श्रवण मनोहर, अनुप्रास छटा और प्रसाद गुण और कहीं नहीं है।" वास्तव में रचना विषय में गीतगोविंद एक अपूर्व पदार्थ है। और तालमानों के चातुर्य से और अनेक रागों के नाम के अनुकूल गीतों में अक्षर से स्पष्ट बोध होता है कि जयदेव जी गाना बहुत अच्छा जानते थे। कहते हैं कि गीतगोविंद को अष्टपदी और अष्टताली नाम से भी लोग पुकारते हैं।

अनेक विद्वानों ने लिखा है गीतगोविंद विक्रमादित्य की सभा में गाया जाता था। किंतु यह कथा सर्वथा अश्रद्धेय है। यह कोई और विक्रम होंगे जिनकी सभा में गीतगोविंद गाया जाता था, क्योंकि शकारि विक्रम के अनेक सौ वर्ष पश्चात् जयदेव जी का जन्म है। हाँ, कलिंग, कर्णाट प्रभृति देश के राजाओं की सभा में पूर्व में गीतगोविंद निस्संदेह गाया जाता था। वरंच जोनराज ने अपनी राजतरंगिणी में लिखा है कि श्रीहर्ष जब क्रम सरोवर के निकट भ्रमण करते थे उन दिनों गीतगोविंद उन की सभा में गाया जाता था।

कहते हैं कि "प्रिये चारुशीले" इस अष्टपदी में "स्मरगरल खण्डन मम शिरसि मण्डन" इस पद के आगे जयदेव जी की इच्छा हुई कि "देहि पदपल्लवमुदारं" ऐसा पद दें, किंतु प्रभु के विषय में ऐसा पद देने को उन का साहस नहीं पड़ा, इस से पुस्तक छोड़ कर आप स्नान करने चले गए। भक्तवत्सल, भक्तमनोरथपूरक भगवान इस समय स्नान से फिरते हुए जयदेव जी के वेश में घर में आए। प्रथम पद्मावती ने जो रसोई बनाई थी उस को भोजन किया, तदनंतर पुस्तक खोल कर "देहि पदपल्लवमुदारं" लिख कर शयन करने लगे। इतने में जयदेव जी आए तो देखा कि पतिप्राणा पद्मावती, जो बिना जयदेव जी का भोजन कराये जल भी नहीं पीती थी वह, भोजन कर रही है। जयदेव जी ने भोजन का कारण पूछा तो पद्मावती ने आश्चर्य पूर्वक सब वृत्त कहा। इस पर जयदेव जी ने जाकर पुस्तक देखा तो "देहि पदपल्लव मुदारं" यह पद लिखा है। वह जान गए कि यह सब चरित्र उसी रसिकशिरोमणि भक्तवत्सल का है। इस से आनंद पुलकित हो कर पद्मावती का थाली का अन्न खा कर अपने को कृतार्थ माना।

६. पुष्पदंताचार्य और महिम्न

यह स्तोत्र अब ऐसा प्रसिद्ध है कि आर्ष की भाँति माना जाता है, वरच पुराणो मे भी कहीं-कहीं इसका माहात्म्य मिलता है। एक प्रसग है कि जब पुष्पदंत ने महिम्न बना के शिवजी को सुनाया तब शिवजी बडे प्रसन्न हुए, इससे पुष्पदत को गर्व हुआ कि मैने ऐसी अच्छी कविता किया कि शिवजी प्रसन्न हो गए। यह बात शिवजी ने जाना और अपने भृगी-गण से कहा कि मुह तो खोलो। जब भृंगी ने मुँह खोला, तो पुष्पदत ने देखा कि महिम्न के बत्तीसो श्लोक भृगी के बत्तीसो दाँत मे लिखे है। इससे यह बात शिवजी ने प्रगट किया कि ये श्लोक तुमने नहीं बनाए है। वरच यह तो हमारी अनादि स्तुति-श्लोक है। यह बात प्रसिद्ध है कि पुष्पदत जब शाप से ब्राह्मण हुआ था तब यह स्तोत्र बनाया है और ऐसी ही अनेक आख्यायिका है। अब वह पुष्पदत कौन है और कब वह ब्राह्मण हुआ इसका विचार करते है। कथासरित्सागर मे एक पहिला ही प्रसग है, जिससे यह प्रसग बहुत स्पष्ट होता है। उस मे लिखते है कि पार्वती जी का मान छुडाने को शिवजी ने अनेक विचित्र इतिहास कहे और उस समय नदी को आज्ञा दी थी कि कोई भीतर न आवै, परंतु पुष्पदंत गण ने योगबल से नदी से छिप कर भीतर जा कर वह सब कथा सुनी और अपनी स्त्री जया से कही और जया ने फिर पार्वती से कही। यह सुन कर पार्वती ने बड़ा क्रोध किया और पुष्पदत और उस के मित्र माल्यवान् को शाप दिया कि दोनो मृत्युलोक मे जन्म लो। फिर जब उन सबो ने पार्वती को बहुत मनाया तब पार्वती ने कहा कि अच्छा विध्याचल मे सुप्रतीक नाम यक्ष काणभूति पिचाश हुआ है उसको देख कर पुष्पदत जब यह सब कथा कहेगा तब दोष दूर होगा और काणभूति से जब माल्यवान् सुनेगा तब शाप से छूटेगा। वही पुष्पदत वररुचि नामक कवि कौशाबी मे हुआ और सुप्रतिष्ठ नगर मे माल्यवान् गुणाढ्य कवि हुआ। यथा—

अवदच्चन्द्रमौलिः कौशाम्बीत्यस्तियामहानगरी।
तस्या सपुष्पदतो वररुचि नामा प्रिये जातः॥ १॥

अन्यश्च माल्यवानपि नगरे सुप्रतिष्ठाख्ये ।
जातो गुणाढ्य नामा देवितयोरेषवृत्तान्तः ।। २ ।।"

कौशाबी नगरी मे सामदत्त वा अग्निशिख नामा ब्राह्मण की स्त्री बसुदत्ता से वररुचि का जन्म हुआ और पिता छोटे ही पन मे मर गया, इस से माता ने बडे कष्ट से इस का पालन किया। यह छोटे ही पन मे ऐसा श्रुतिधर था कि एक बेर जो सुनता वा जो कला देखता कठ कर लेता और जान जाता। एक समय बेतसपुर के देवस्वामी और कद्बक नामा ब्राह्मण के पुत्र इद्रदत्त और व्याड़ि इसके घर मे आए। वहाँ इन दोनो ने वररुचि को एकश्रुतिधर सुन के प्राति शाख्य पढ़ा और वररुचि ने उन दोनो को वह ज्यो का त्यो सुना दिया और वररुचि के पिता का मित्र भवानद नामक नट उस रात्रि को कहीं अभिनय करता था। वह देख कर वररुचि ने अपने माता के सामने ज्यो का त्यौं फिर कर दिखाया। उन दोनो ब्राह्मणो का इसकी एकश्रुतिधरता से बड़ी प्रसन्नता हुई, क्योकि जब इन दोनो ने विद्या के हेतु तप किया था तब इन को वर मिला था कि पाटलिपुत्र मे वर्ष नामक उपाध्याय से सब विद्या पाओगे। वर्ष, उपवर्ष यह दो भाई शकर स्वामि ब्राह्मण के पुत्र थे। उनमे उपवर्ष पडित और धनी था और वर्ष मूर्ख और दरिद्री था। उपवर्ष की स्त्री से अनादर पा कर वर्ष ने विद्या के हेतु तप किया और स्कद से सब विद्या पाई, परतु स्कद ने कहा था कि जो एकश्रुतिधर हो उसके सामने तुम अपनी विद्या प्रकाश करना। सो जब वर्ष के पास ये दोनो ब्राह्मण गए तब उसकी स्त्री ने कहा कि एकश्रुतिधर कोई हो तो ये अपनी विद्या प्रकाश करें, अन्यथा न प्रकाश करैंगे। इसी से वे दोनो ब्राह्मण वररुचि को एकश्रुतिधर पा कर बड़े प्रसन्न हुए। वररुचि की माता से उन दोनो ने सब वृत्तात कह कर वररुचि को साथ लिया और फिर पाटलिपुत्र मे आए, क्योकि उसकी माता से भी आकाशवाणी ने कहा था कि तेरा पुत्र एकश्रुतिधर होगा और वर्ष से सब विद्या पढ़ेगा और व्याकरण का आचार्य होगा। वर्ष ने तब उन तीनो को विद्या पढ़ाया और बहुत प्रसन्न हुआ, क्योकि वररुचि एकश्रुतिधर, व्याड़ि द्विश्रुतिधर और इद्रदत्त त्रिश्रुतिधर था। वर्ष को नगर के लोग मूर्ख जानते थे,

पर जब एकाएकी उस के विद्या का प्रकाश हुआ तो सब ब्राह्मणवर्ग बड़े प्रसन्न हुए और नद राजा ने भी बहुत सा धन वर्ष को दिया। फिर इन तीनो ने बड़ी विद्या पढी और वररुचि ने उपवर्ष की कन्या उपकोषा से विवाह किया और उपकोषा अपने पतिव्रत और चरित्र से नद की भगिनी हुई। वष के एक पाणिनि * नामा मूर्ख शिष्य ने शिव

*राजा शिवप्रसाद यो लिखते हैं :—"समय के उलट फेर मे हमारे पडित लोग जो कुछ अपनी पडिताई दिखलाते है, लिखने योग्य नही है। इसी एक बात से सोच लो कि जिस पडित से पाणिनि वैय्याकरण का जमाना पूछोगे छूटते कहेगा कि सत्ययुग में हुआ था। लाखो बरस बीते परतु इस से इन्कार न करेगा कि कात्यायन की पतजलि ने टीका लिखी और पतजलि की व्यास ने। अब हेमचन्द्र अपने कोश मे कात्यायन का नाम वररुचि बतलाता है और कश्मीर का सोमदेव भट्ट अपने कथासरित्सागर में लिखता है कि कात्यायन वररुचि कौशाम्बी मे, जो अब प्रयाग के पास जमुना के किनारे कोसम गाँव कहलाता है, पैदा हुआ, पाणिनि से व्याकरण मे शास्त्रार्थ किया और राजा नद का मत्री हुआ। मुद्राराक्षस इत्यादि बहुत ग्रथों से साबित है कि नद के बाद ही चद्रगुप्त राज्यसिहासन पर बैठा और चद्रगुप्त का जमाना ऐसा निश्चय ठहर गया है कि जैसे पलासी की लडाई अथवा नादिरशाही अथवा पृथ्वीराज और विक्रम का कहो कि हम पाणिनि का जमाना अब अढाई हजार बरस से इधर मानें या लाखो बरस से उधर ? पतजलि चद्रगुप्त के पीछे हुआ इसमे किसी तरह का सदेह नही, क्योंकि उसने अपने भाष्य में "सभाराजा मनुष्य पूर्वा" इस सूत्र पर "चद्रगुप्तसभम्" ऐसा उदाहरण दिया है।"

Dr Rajendra Lal Mitra LL. D in his Indo-Aryans No. 1. P 19 says, "Accordng to Dr Goldstucker, the Grammar of Panini was composed between the 9th and 11th centuries before Christ Professor Max Muller brings down the age of Grammar to the 6th cetury B C,"

पाणिनीय व्याकरण के समय में निम्नलिखित बातें होती थीं।

१ उस समय के लोगों मे हँसी करने की चाल थी। एहिमन्ये ओदनं

जी से वर पाकर व्याकरण बनाया और जब वररुचि ने उससे वाद किया तो शिवजी ने हुँकर के वररुचि का इंद्रमत का व्याकरण भुला दिया, इस से वररुचि ने फिर तपस्या कर के शिवजी से पाणिनि व्याकरण सीखा। यह वररुचि बहुत दिन तक योगानद का मत्री रहा और इस का नामातर कात्यायन था, परतु यह नद का मत्री कैसे हुआ और कब

भोद्यसे इति भुक्त· सोऽतिथिभि·—मानो भात खाने आया है सब खा पी गया।

२ श्राद्धों मे नाती को अवश्य बुलाने की चाल थी। निमन्त्रण, आवश्यके श्राद्धभोजनादौ दौहित्रादे· प्रवर्तन—निमत्रण, अर्थात् जैसे नाती वगैरह को श्राद्ध भोजन मे बुलाना।

३ नृत्य और नृत मे भेद। गात्र विक्षेपमात्र नृत-भाँडों का तमासा, बदन तोडना इत्यादि। पदार्थाभिनयोनृत्य—भावादिकों का दिखलाना।

४ बहुत सी कहावते उस समय के लोग जानते थे। जैसा—नविश्वसेद-विश्वस्त—जिस का विश्वास एक बेर गया फिर उसका विश्वास न करना।

५ आलिंगन करने की रीति थी। अश्लिक्षत् कन्या देवदत्त.—देवदत्त ने कन्या को आलिगन दिया।

६ लडकियों को गहना पहिनाने की चाल। उपस्कृता कन्या—अलकार पहिनाई गई कन्या।

७ मुहावरेवार बोलने की चाल। हस्तयते—हाथी पर चढके जाता है। पादयते—लात मारता है।

८ लोग बहुत भावुक थे। सिद्धशब्दो ग्र थान्ते मङ्गलार्थ—ग्र थ के अत में सिद्ध—ऐसा लिखो, क्योंकि यह मगल है।

९ वृषस्यतिगौः—गाय उठी है।

१० महल बना करते थे। कुटीयति प्रासादे। महल मे बैठ कर झोपडी समझता है।

११ भिक्षुक लोग राजा के पास जाया करते थे। भिक्षुकः प्रभुमुपतिष्ठते।

१२ मल्लयुद्ध हुआ करता था। आह्वयते—मैदान मे खड़े होकर पुकारना। नहीं तो आह्वयति।

१३ खिराज दिया जाता था। कर बिनयते—कर देने को निकालता है।

१४ शास्त्र की चर्चा रहा करती थी। शास्त्रेवदते—शास्त्र मे बोल सकता है।

तक रहा यह यहाँ नहीं लिखते, क्योंकि प्रसग के बाहर है। यह बन बन फिरने लगा। जब शकटार ने चाणक्य द्वारा नदवश का नाश किया तब उदास हो कर और विध्याचल मे कालभूति पिशाच को देख कर अपना पूर्व जन्म स्मरण करके उस से सब कथा कह कर बदरिकाश्रम मे जा कर योग से अपनी गति को गया और शाप से छूटा। गंधर्व से भी पहिले जन्म मे यह गगातीर के ग्रहार नामक ग्राम मे गोविददेव ब्राह्मण अग्निदत्ता ब्राह्मणी का पुत्र देवदत्त था और प्रतिष्ठानपुर के राजा की कन्या से विवाह किया था। उस कन्या ने पहले दॉत मे फूल दबा कर उस को संकेत बताया था। इससे जब वह ब्राह्मण वरदान पाकर शिव-गण हुआ तब उस की स्त्री भी जया प्रतिहारी हुई।

इस कथा के व्याख्यान से यह स्पष्ट होता है कि वर्णन नंद के राज्य के समय का है और उस समय के देवता शिव और स्कध थे और व्याकरण का बडा प्रचार था। कातंत्र, कालाप, एन्द्र, पाणिनी इत्यादि मत मे परस्पर बड़ा विरोध था। सस्कृत, प्राकृत, पैशाची और देश भापा बहुत प्रसिद्ध थी, परंतु पॉच और भाषा भी प्रचलित थीं। पाटलिपुत्र नया बसा था, प्रतिष्ठानपुर और अयोध्या भी बहुत बसती थी. धूर्तता फैल गई थी और हिंदुस्तान मे पश्चिम देश बहुत मिला हुआ था इत्यादि।

इस वृहत्कथा मे ऐसे ही गुणाढ्य कवि के भी तीनो जन्म लिखे है और उस का वृहत्कथा का पैशाची भाषा मे निर्माण करना, उस मे छ लाख ग्र थ जला देना और एक लाख ग्र थ नर वाहन दत्त के चरित्र का राजा शातवाहन को देना इत्यादि सविस्तर वर्णित है।

अब यह वृहत्कथा कब बनी है और किस ने बनाया है इस के विचार मे चित्त बहुत दोलायित होता है, क्योंकि इस का काल ठीक निर्णीत नहीं होता। नंद के समय की भी नहीं मान सकते, क्योंकि इसी वृहत्कथा मे विक्रमादित्य, उदयन ऐसे प्राचीन नवीन अनेक राजाओं का वर्णन है, परतु इतना कह सकते है कि इस का मूल प्राचीन काल से पड़ा है और उस को अनेक काल मे अनेक कवि बढ़ाते गए हैं, क्योंकि "कात्यायनाद्यैक्रुतिः, तत्पुष्पदन्तादिभिः"

इत्यादि पदो मे आदि शब्द मिलता है। वा अनेक प्राचीन सुनी हुई कथाओ को किसी ने एकत्र कर के आदर के हेतु उस मे पुष्पदंत का नाम रख दिया हो तो भी आश्चर्य नहीं, क्योकि कात्यायन वररुचि का होना खीस्ताब्दीय के १२० वर्ष पूर्व लोग अनुमान करते है और विक्रम का काल पडितो ने ५०० खीस्ताब्द के लगभग निश्चय किया है और ऐसा मानने से प्रोफेसर गोल्डस्टकर इत्यादि इतिहासवेत्ताओ का दो वररुचि मानने वाला मत भी स्पष्ट खडित होता है, क्योकि बृहत्कथा मे जब विक्रम का चरित्र है तब उसी विक्रमादित्य वाले वररुचि का नाम कात्यायन सभव है।

परतु हमारा कथन यह है कि सस्कृत बृहत् कथा गुणाढ्य की बनाई ही नही है, क्योकि उस मे स्पष्ट लिखा है कि गुणाढ्य ने सस्कृत बोलना छोड़ दिया था, इस से पिशाच भाषा मे बृहत्कथा बनाया। तो इस दशा मे सभव है कि किसी ने यह बृहत्कथा बना कर वररुचि, गुणाढ्य, पुष्पदत इत्यादि का नाम आदर और प्रमाण पाने के हेतु रख दिया हो।

अब जो बृहत्कथा मिलती है वह तीस हजार श्लोक मे रामदेव भट्ट के पुत्र सोमदेव भट्ट की बनाई है, जो उसने कश्मीर के राजा सग्रामदेव के पुत्र अनत देव की रानी सूर्यवती के चित्तविनोद के हेतु बनाई है और इसी अनतदेव के पुत्र कमलदव हुए और कमलदेव के पुत्र श्री हर्षदेव हुए। कश्मीर के इन राजाओ के नाम चित्त को और भी सशय मे डालते है, क्योकि रत्नावली वाला श्रीहर्ष कालिदास के पहिले का है, क्योकि कालिदास ने मालविकाग्निमित्र मे धावक कवि का नाम प्राचीन कवियो मे लिखा है। अब इस दशा मे विरोध का परिहार यो हो सकता है कि जिस विक्रम का चरित्र बृहत्कथा में है वह नवरत्न वाला विक्रम नहीं, किंतु कोई प्राचीन विक्रम है। और यह बृहत्कथा धावक के थोड़े ही काल पहिले कश्मीर मे सोमदेव ने बनाई है, क्योकि इस मे नद और विक्रम के नाम की भाँति भोज, कालिदास इत्यादि का नाम नहीं है और नवरत्न वाला वररुचि दूसरा था, क्योकि उस काल में राजा और कवियो के वही नाम बारबार होते थे, इस से बृहत्कथा सवत् और खिस्तसन के पूर्व बनी है और गुणाढ्य और वररुचि कुछ इस से भी पहिले के है।

परतु वृहत्कथा के किसी लेख का हम प्रमाण नहीं करते, क्योंकि यह बड़ा ही असगत ग्र थ है। जैसा अनत पडित की बनाई मुद्राराक्षस की पूर्व पीठिका मे नद का नाम सुधन्वा लिखा है और इस मे योगनद है। उस मे जो वररुचि के मत्री होने का प्रसग है वह इस पीठिका मे कहीं मिलता ही नहीं और पाणिनी, वर्ष, कात्यायन, व्याडि, इ द्रदत्त और अनेक व्याकरण के आचार्य वृहत्कथा के मत से एक काल के थे, पर बुद्धिमानो ने इन सबके काव्य मे बड़ा भेद ठहराया है। इससे इतिहास विषय मे वृहत्कथा अप्रमाणिक है।

वृहत्कथा का वर्णन और गुणाढ्य इत्यादि कवियो का वर्णन आर्य्या सप्तशती बनानेवाले गोवर्द्धन कवि ने किया है और गोवर्द्धन कवि का काव्य जयदेव जी के काल से निश्चित होगा। बगाली लेखको ने जयदेव जी का समय पन्द्रहवॉ शतक ठहराया है, पर इस निर्णय मे परम भ्रात हुए हैं, क्योकि जयदेव जी का काल एक सहस्र वर्ष के पूर्व है और इसमे प्रमाण के हेतु पृथ्वीराज रायसा मे चंद कवि का जयदेव जी का और गीतगोविद वर्णन ही प्रमाण है। जयदेव जी ने गोवर्द्धन कवि का वर्णन वर्त्तमान क्रिया से किया है। इससे अनुमान होता है कि उस काल मे गोवर्द्धन कवि था। बगाली लोगो मे कोई बारहवे शतक मे लक्ष्मण सेन के काल मे जयदेव को मानते है और उसके समकालीन गोवर्द्धन इत्यादि कवियो को लक्ष्मण सेन की सभा के पंचरत्न मानते है। यह बात भी असभव है, क्योकि पृथ्वीराज ग्यारहवे शतक मे था और चद भी तभी था। तो जयदेव चद के सैकड़ो वर्ष पहिले निस्सदेह हुए है, क्योकि चद ने प्राचीन कवियो की गणना मे बड़ी भक्ति से जयदेव जी का वर्णन किया है। हॉ, यदि लक्ष्मण सेन को पृथ्वीराज के पहिले मानो तो जयदेव उसकी सभा के पडित हो सकते हैं, नहीं तो समझ लो कि आदर के हेतु इन कवियो का नाम लक्ष्मण सेन ने अपनी सभा मे रक्खा है। इससे चल सखि कुज की भाषा और अँगरेजी इतिहासवेत्ताओ का मत लेकर बगालियो ने जयदेव जी का जो काल निर्णय किया है वह अप्रमाण है यह निश्चय हुआ और वृहत्कथा उस काल के भी पहिले बनी है यह भी सिद्धांतित हुआ।

—:o:—

७. श्री वल्लभाचार्य्य

दोहा

तम पाखड हि हरत कर, जन मन जलज विकास ।
जयति अलोकिक रवि कोऊ, श्रुति पथ करन प्रकाश ॥

जो लोग बहुत प्रसिद्ध हैं और जिन को लाखो मनुष्य सिर झुकाते है उनके जीवनचरित्र पढने या सुनने की किसकी इच्छा न होगी। इस हेतु यहाँ पर श्री वल्लभाचार्य्य का जीवनचरित्र सक्षेप से लिखा जाता है।

मद्राज हाते मे, तैलगदेश के आकबीडु जिले मे कॉकरवल्लि गॉव मे भारद्वाज गोत्र, तैलग ब्राह्मण जाति, पचप्रवर, यजुर्वेद, तैत्तिरीयशाखा, दीक्षित सोमयागी उपनाम, यज्ञनारायण भट्ट के प्रसिद्ध वश से लक्ष्मण भट्ट जी की धर्मपत्नी इल्लमगारु के गर्भ से चम्पारण्य मे इनका जन्म हुआ।

लक्ष्मण भट्ट जी के तीन पुत्र थे। बडे रामकृष्ण भट्ट जी युवावस्था ही मे सन्यस्त हो गये और केशव पुरी नाम से प्रसिद्ध हुए। मॅझले पूर्वोक्ताचार्य और छोटे रामचद्र भट्ट जी, जिन के कृष्णकुतूहल, गोपाल लीला इत्यादि ग्रथ है। इन्होने अपने नाना की वृत्ति पाई थी, परतु विवाह न करके अपना सब जीवन अयोध्या मे बिताया।

लक्ष्मण भट्ट जी अपने घर के खान पान से बहुत सुखी थे। वे जब काशी मे अपने जाति के ब्राह्मणो का सत्कार करने आये तो मार्ग मे बितिया के इलाके मे चौरा गॉव के पास चम्पारण्य मे सवत् १५३५ बैशाख बदी ११, * आदित्यवार को मध्याह्न समय आचार्य का जन्म

* वल्लभदिग्विजय मे लिखा है :—सवत् १५३५ शाके १४४० वैशाख मास कृष्णपक्ष ११ रविवार मध्याह्न। एक पद श्रीद्वारकेशजी कृत ॥रागसारग॥

५ ३ ५ १
तत्व गुन बान भुवि माधवासित तरणि प्रथम सौभग दिवस प्रकट लक्ष्मण-सुवन।
धन्य चपारन्य मन्य त्रैलोक्य जन अन्य अवतार भुवि है न ऐसो सुवन ॥१॥
लग्न वृश्चिक कुभ केतु कवि इदु सुख मीन बुध उच्च रवि बैरि नाशे।
मद बृष कर्क गुरु भौम युत सिंह मै तमस के योग ध्रुव यश प्रकाशे ॥२॥

हुआ। जब ये पॉच वर्ष के हुए तब चैत सुदी ६ के दिन अपने पिता से गायत्री उपदेश लिया और कृष्णदास मेघन को उसी दिन अष्टाक्षर मत्र का उपदेश करके प्रथम वैष्णव किया।

उसी साल असाढ सुदी ८ को काशी के प्रसिद्ध पडित माधवानद तीर्थ त्रिदण्डी से विद्याध्ययन किया और छोटेपन ही मे पत्रावलम्बन ग्रथ कर के विश्वनाथ के दरवाजे पर लगा दिया और डौड़ी पीट कर काशी के पडितो से पहला शास्त्रार्थ किया। जब इन के पिता काशी से चले तो लक्ष्मणबाला जी मे उनका देहात हुआ। उनकी क्रियादिक के पीछे आचार्य पृथ्वी परिक्रमा को चले और विद्यानगर मे जाकर कृष्ण-देव राजा की सभा मे सब पडितो को जीत कर आचार्य पद पाया। सवत् १५४८ के वैशाख बदी २ को ब्रह्मचर्य धर्म से पहिलो पृथ्वी परि-क्रमा करने चले और पढरपुर, त्र्यबक, उज्जैन होते हुए वृज आए और चार महीने श्रीवृदावन मे रह कर श्रीमद्भागवत का पारायण किया और फिर सोरो, अयोध्या वो नैमिषारण्य होते हुए काशी आए।

रिछ धनिष्ठा प्रतिष्ठा अधिष्ठान स्थिर बिरह बदनानलाकार हरि को।
यहै निश्चय 'द्वारकेश' इन के शरण और को श्री वल्लभाधीश सरि को ॥३॥

श्री महाप्रभुन की जन्मकुण्डली ऊपर के कीर्त्तन अनुसार।

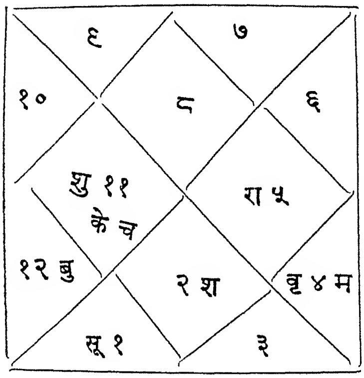

राह मे जो पडित मिलते उन से शास्त्रार्थ करते और वैष्णव धर्म फैलाते थे।

काशी जी से गया और जगन्नाथ जी होते हुए फिर दक्खिन चले गए और सवत् १५५४ मे अपना पहिला दिग्विजय समाप्त किया। दूसरे दिग्विजय मे बृज मे गोवर्द्धन पर्वत पर श्रीनाथ जी का स्वरूप प्रगट कर के उन की सेवा स्थापन किया और तीन पृथ्वी परिक्रमा कर के सारे भारतखड मे वैष्णव मत फैला कर बावन वर्ष की अवस्था मे सवत् १५८७ आषाढ़ सुदी २ को काशी जी मे लीला मे प्राप्त भए। इनके दो पुत्र—बड़े श्री गोपीनाथ जी, छोटे श्री विट्ठलनाथ जी। गोपीनाथ जी के पुत्र श्री पुरुषोत्तम जी, पर उनके आगे वश नहीं। श्री विट्ठलनाथ जी के सात पुत्र, जिनमे बड़े गिरधर जी और छोटे पुत्र यदुनाथ जी का वश अब तक वर्त्तमान है। इनका मत शुद्धाद्वैत अर्थात् जगत्ब्रह्म के सच्चित्रूप से अभिन्न और सत्य, परतु भक्ति बिना ब्रह्मस्वरूप का ज्ञान फलदायक नहीं। परमोपास्य श्रीकृष्ण और विष्णुस्वामी परमाचार्य, साधन सेवा मुख्य, प्रमाण ग्रथ, वेदव्याससूत्र, गाता और भागवत। तिलक दो रेखा का लाल ऊर्द्धपुड्र, शख, चक्र, शीतल।

आचार्य ने अणुभाष्य, तत्वदीप, निबध, रसमडन, श्री मद्भागवत पर सुबोधिनी टीका, सिद्धांत मुक्तावली, पुष्टिप्रवाह मर्यादा, पुरुषोत्तम सहस्र नाम, सिद्धात रहस्य, अंत.करण प्रबोध, भक्ति प्रकरण, नवरतन, विवेक धैर्य्याश्रय, पत्रावलबन, कृष्णाश्रय, भक्तिवर्द्धिनी, जलभेद संन्यासनिर्णय, जैमिनी सूत्रभाष्य, चित्तप्रबोध, निरोधलक्षण, व्यास-विरोध लक्षण, परिवृढ़ाष्टक और वैद्यवल्लभ ये चौबीस ग्रंथ बनाये है, जिनमे दोनो सूत्रो का भाष्य और भागवत की टीका बहुत बड़े ग्रथ हैं।

—※—

८. सूरदास जी❀

दो०—हरि पद पकज मत्त अलि, कविता रस भरपूर।
दिव्य चक्षु कवि-कुल-कमल, सूर नौमि श्री सूर ॥

सब कवियो के वृत्तात मे सूरदास जी का वृत्तात पहिले लिखने के योग्य है, क्योकि यह सब कवियो के शिरोमणि है और कविता इनकी सब भाँति की मिलती है। कठिन से कठिन और सहज से सहज इनके पद बने है और किसी कवि मे यह बात नहीं पाई जाती। और कवियो की कविता मे एक बात अच्छी है और कविता एक ढग पर बनती है परतु इन की कविता मे सब बात अच्छी है और इनकी कविता सब तरह की होती है, जैसे किसी ने शाहनशाह अकबर के दरबार मे कहा था—

दो०—उत्तम पद कवि गग को, कविता को बल वीर।
केशव अर्थ गँभीर को, सूर तीन गुन धीर ॥

और इस के सिवाय इन की कविता मे एक असर ऐसा होता है कि जी मे जगह करै। जैसे एक वार्ता है कि किसी समय मे एक कवि कहीं जाता था और एक मनुष्य बहुत व्याकुल पडा था। उस मनुष्य को अति व्याकुल देख कर उस कवि ने एक दोहा पढ़ा।

दो०—किधौ सूर को सर लग्यो, किधौं सूर की पीर।
किधौ सूर को पद सुन्यौ, जो अस विकल शरीर ॥

इस वार्ता के लिखने का यह अभिप्राय है कि निस्सदेह इन के पदो मे ऐसा एक असर होता कि जो लोग कविता समझते है उनके जी पर इस की चोट लगे।

ये जाति के ब्राह्मण थे और इनके पिता का नाम बाबा रामदास जी था, जो गाना बहुत अच्छा जानते थे और कुछ धुरवपद इत्यादि भी बनाते थे और देहली या आगरे या मथुरा इन्हीं शहरो मे रहा

❀ कवि वचन सुधा जिल्द २ प्राचीन पुस्तकावली में और श्री हरिश्चद्र-चद्रिका खड ६ सख्या ५ नवबर सन् १८७८ ई० मे छपा।

करते थे और उस समय के नामी गुनियों में गिने जाते थे। उन के घर यह सूरदास जी पैदा हुए। यह इस असार संसार के प्रपंच को न देखने के वास्ते आँख बंद किए हुए थे। इन के पिता ने इन को गाना सिखाने में बड़ा परिश्रम किया था और इन की बुद्धि पहिले ही से बड़ी विलक्षण और तीव्र थी। सम्वत् १५४० के कुछ न्यूनाधिक में इनका जन्म हुआ था और आगरे में इन्होंने कुछ फारसी विद्या भी सीखी थी। इनकी जवानी ही में इनके पिता का परलोक हुआ और यह अपने मन के हो गए और भजन तभी से बनाने लगे। उस समय में इनके शिष्य भी बहुत से हो गए थे और तब अपना नाम पदों में सूर स्वामी रखते थे। उन्हीं दिनों में इनने महाराज नल और दमयंती के प्रेम की कथा में एक पुस्तक बनाई थी, जो अब नहीं मिलती।* उस समय इनकी पूर्ण युवा अवस्था थी। और उन दिनों में ये आगरे से नौ कोस मथुरा के रास्ते के बीच में एक स्थान जिस का नाम गऊघाट है, वहीं रहते थे और बहुत से इनके शिष्य इनके साथ थे। फिर ये आचार्य-कुल-शिरोरत्न श्री श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु के शिष्य हुए। तब से यह अपना नाम पदों में सूरदास रखने लगे। ये भजनों में नाम अपना चार तरह से रखते थे—सूर, सूरदास, सूरजदास, और सूरश्याम। जब यह सेवक हुए थे तब इन्होंने यह भजन बनाया था।

भजन—चकई री चलि चरन-सरोवर, जहँ नहिं प्रेम-वियोग।
जहँ भ्रम-निसा होत नहि कबहूँ सो सागर सुख जोग ॥१॥
सनक से हंस मीन शिव-मुनि-जन नख-रवि-प्रभा-प्रकास।
प्रफुलित कमल निमेषन ससि डर गुंजत निगम सुबास ॥२॥
जेहि सर सुभग मुक्ति-मुक्ताफल सुकृत बिमल जल पीजै।
सो सर छाँड़ि कुबुद्धि बिहंगम इहाँ कहा रहि कीजै ॥३॥
जहँ श्री सहस सहित नित क्रीड़त सोभित 'सूरज दास'।
अब न सुहाइ बिषै रस छीलर वा समुद्र की आस ॥४॥

---

* यह पुस्तक मिल गई है पर इसके रचयिता कोई अन्य सूरदास है।(सं०)

फिर तो इन की सामर्थ्य बढती ही गई और इन्हो ने श्री मद्भागवत को भी पदो मे बनाया, और भी सब तरह के भजन इन्हो ने बनाए। इन के श्रीगुरु इनको सागर कह कर पुकारते थे, इसी से इन ने अपने पदो को इकट्ठा करके उस ग्रथ का नाम सूरसागर रक्खा। जब यह वृद्ध हो गए थे और श्री गोकुल मे रहा करते थे, धीरे धीरे इन के गुण शाहनशाह अकबर के कानो तक पहुचे। उस समय ये अत्यत वृद्ध थे और बादशाह ने इनको बुलावा भेजा और गाने की आज्ञा किया। तब इनने यह भजन बनाकर गाया।

मन रे करि माधो सो प्रीति।

फिर इन से कहा गया कि कुछ शाहनशाह का गुणानुवाद गाइए। उस पर इन्होने यह पद गाया।

केदारा—नाहिन रह्यो मन मे ठौर।

नद-नदन अछत कैसे आनिये उर और॥ १॥
चलत चितवत दिवस जागत सुपन सोवत राति।
हृदय ते वह मदन मूरति छिनु न इत उत जाति॥ २॥
कहत कथा अनेक ऊधा लाग लोभ दिखाइ।
कहा करौ चित प्रेम पूरन घट न सिधु समाइ॥ ३॥
श्यामगात सरोज आनन ललित गति मृदु हास।
'सूर' ऐसे दरस कारन मरत लोचन खास॥ ४॥

फिर सवत् १६२० के लगभग श्रीगोकुल मे इन्होने इस शरीर को त्याग किया। सूरदास जी ने अत समय यह पद किया था।

बिहाग—खजन-नैन रूप-रस माते।

अतिसय चारु चपल अनियारे पल पिंजरा न समाते॥
चलि चलि जात निकट श्रवनन के उलटि फिरत ताटक फंदाते।
'सूरदास' अजन गुन अटके नातरु अब उड़ि जाते॥

दो०—मन समुद्र भयो सूर को, सीप भये चख लाल।
हरि मुक्ताहल परतहीं, मूँदि गए तत् काल॥

ससार मे जो लोग भाषा काव्य समझते होगे वे सूरदास जी को अवश्य जानते होगे और उसी तरह जो लोग थोडे बहुत भी वैष्णव

होगे वे इनका थोडा बहुत जीवन-चरित्र अवश्य जानते होगे। चौरासी वार्ता, उस की टीका, भक्तमाल और उस की टीकाओ मे इन का जीवन विवृत किया है। इन्हीं ग्रथो के अनुसार ससार को और हम को भी विश्वास था कि ये सारस्वत ब्राह्मण है, इनके पिता का नाम रामदास, इन के माता पिता दरिद्री थे, ये गऊघाट पर रहते थे, इत्यादि। अब सुनिए, एक पुस्तक सूरदास जी के दृष्टिकूट पर टीका [टीका भी सभव होता है उन्हीं की, क्योकि टीका मे जहॉ अलकारो के लक्षण दिए है वह दोहे और चौपाई भी सूर नाम से अकित है] मिली है। इस पुस्तक मे ११६ दृष्टिकूट के पद अलकार और नायिका के क्रम से है और उन का स्पष्ट अर्थ और उनके अलकार इत्यादि सब लिखे है। इस पुस्तक के अत मे एक पद मे कवि ने अपना जीवनचरित्र दिया है, जो नीचे प्रकाश किया जाता है। अब इस को देख कर सूरदास जी के जीवनचरित्र और वश को हम दूसरी ही दृष्टि से देखने लगे। वह लिखते है कि 'प्रथजगात * प्रार्थज गात्र वश मे इन के मूल पुरुष ब्रह्मराव † हुए जो बड़े सिद्ध और देवप्रसाद-लब्ध थे। इन के वश में भौचद ‡ हुआ। पृथ्वीराज § ने जिस को ज्वाला देश दिया, उस के चार पुत्र, जिन मे पहिला राजा हुआ। दूसरा गुणचद्र। उस का पुत्र सीलचद्र उसका वीरचद्र। यह वीरचद्र रत्नभ्रमर [रणथम्भौर] के

---

*'प्रथ जगात' इस जाति वा गोत्र के सारस्वत ब्राह्मण सुनने में नहीं आए। पडित राधाकृष्ण सगृहीत सारस्वत ब्राह्मणों की जाति माला मे 'प्रथ जगात', 'प्रथ' वा 'जगात' नाम के कोई सारस्वत ब्राह्मण नहीं होते। जगा वा जगातिआ तो भाट को कहते हैं।

† ब्रह्मराव नाम से भी सदेह होता है कि यह पुरुष या तो राजा रहा हो या भाट।

‡ 'भौ' का शब्द हुआ अर्थ में लीजिए तो केवल चद्र नाम था। चंद्र नाम का एक कवि पृथ्वीराज की सभा में था! आश्चर्य्य !!!

§ पृथ्वीराज का काल सन् ११७६।

राजा प्रसिद्ध हम्मीर ❀ के साथ खेलता था। इसके वंश में हरिचंद्र † हुआ। उसके पुत्र को सात पुत्र हुए, जिन में सब से छोटा [कवि लिखता है] मैं सूरजचंद था। मेरे छः भाई मुसलमानों के युद्ध ‡ में मारे गए। मैं अंधा कुबुद्धि था। एक दिन कुएँ में गिर पड़ा, तो सात दिन तक उस [अंधे] कूएँ में पड़ा रहा, किसी ने न निकाला। सातएँ दिन भगवान ने निकाला और अपने स्वरूप का (नेत्र दे कर) दर्शन कराया और मुझ से बोले कि वर माँग। मैं ने वर माँगा कि आप का रूप देख कर अब और रूप न देखें और मुझ को दृढ भक्ति मिले और शत्रुओं § का नाश हो। भगवान ने कहा ऐसा ही होगा। तू सब विद्या में निपुण होगा। प्रबल दक्षिण के ब्राह्मण-कुल ¶ से शत्रु का नाश होगा। और मेरा नाम सूरजदास, सूर, सूरश्याम इत्यादि रखकर भग-

---

❀ हम्मीर चौहान, भीमदेव का पुत्र था। रणथंभौर के किले में इसी की रानी इस के अलाउद्दीन (दुष्ट) के हाथ से मारे जाने पर सहस्रावधि स्त्री के साथ सती हुई थी। इसी का वीरत्व यश सर्वसाधारण में 'हमीर हठ' के नाम से प्रसिद्ध है (तिरिया तेल हमीर हठ, चढ़ै न दूजी बार)। इसी की स्तुति में अनेक कवियों ने वीर रस के सुंदर श्लोक बनाए हैं–"मुञ्चति मुञ्चति कोष भजति च भजति प्रकम्पमरिवर्गं। हम्मीर वीर खड्ग त्यजति च त्यजति क्षमामाशु"। इस का समय सन् १२९० (एक हमीर सन् ११९२ में भी हुआ है)।

† संभव है कि हरिचंद के पुत्र का नाम रामचंद्र रहा हो, जिसे वैष्णवों ने अपनी रीति के अनुसार रामदास कर लिया हो।

‡ उस समय तुगलकों और मुगलों का युद्ध होता था।

§ शत्रुओं से लौकिक अर्थ लीजिए तो मुगलों का कुल [इससे संभव होता है इन के पूर्वपुरुष सदा से राजाओं का आश्रय कर के मुसल्मानों को शत्रु समझते थे या तुगलकों के आश्रित थे, इससे मुगलों को शत्रु समझते थे], यदि अलौकिक अर्थ लीजिए तो काम-क्रोधादि।

¶ सेवा जी के सहायक पेशवा का कुल, जिस ने पीछे मुसल्मानों का नाश किया। अलौकिक अर्थ लीजिए तो सूरदास जी के गुरु श्री वल्लभाचार्य दक्षिण-ब्राह्मण कुल के थे।

वान अतर्ध्यान हो गए। मै व्रज मे बसने लगा। फिर गोसाई * ने मेरी अष्टछाप † मे थापना की इत्यादि। इस लेख से और लेख अशुद्ध मालूम होते है, क्योकि जैसा चौरासी वार्त्ता की टीका मे लिखा है कि दिल्ली के पास सीही गॉव मे इन के दरिद्र माता पिता के घर इनका जन्म हुआ, यह बात नहीं आई। वह एक बडे कुल मे उत्पन्न थे और आगरे वा गोपाचल मे इन का जन्म हुआ। हॉ, यह मान लिया जाय कि मुसलमानो के युद्ध मे इतने भाइयो के मारे जाने के पीछे भी इन के पिता जीते रहे और एक दरिद्र अवस्था मे पहुँच गए थे और उसी समय मे सीही गॉव मे चले गए हो तो लड मिल सकती है। जो हो, हमारी भाषा कविता के राजाधिराज सूरदास जी एक इतने बड़े वश के है, यह जान कर हम को बडा आनद हुआ। इस विषय मे कोई और विद्वान जो कुछ और विशेष पता लगा सके तो उत्तम हो।

भजन—प्रथमही प्रथ जगत मे प्रगट अद्भुत रूप।
ब्रह्मराव विचारि ब्रह्मा राखु नाम अनूप॥
पान पय देवी दियो सिव आदि सुर सुर पाय।
कह्यो दुर्गा पुत्र तेरो भयो अति अधिकाय॥
पारि पायन सुरन के सुर सहित अस्तुति कीन।
तासु वश प्रसिद्ध मे भौचद चारु नवीन॥
भूप पृथ्वीराज दीन्हो तिन्है ज्वाला देस।
तनय ताके चार कीन्हो प्रथम आप नरेस॥

---

* 'गोसाईं' श्री बिट्ठलनाथ जी, श्री बल्लभाचार्य के पुत्र।

† अष्टछाप यथा सूरदास, कुभनदास, परमानद दास और कृष्णदास ये चार महात्मा आचार्य जी के सेवक और छीत स्वामि, गोविन्द स्वामि, चतुर्भुज दास और नददास ये गोसाईं जी के सेवक। ये आठो महाकवि थे।

दोहा—श्री वल्लभआचार्य के, चारि शिष्य सुखरास।
परमानदऽरु सूर पुनि, कृष्णऽरु कुभनदास॥१॥
बिट्ठलनाथ गोसाई के, प्रथम चतुर्भुज दास।
छीतस्वामि, गोविंद पुनि, नददास सुख बास॥२॥

दूसरे गुनचद ता सुत सीलचंद सरूप ।
बीरचद प्रताप पूरन भयो अद्भुत रूप ॥
रत्नभौर हमीर भूपति सग खेलत आय ।
तासु वश अनूप भा हरिचद अति विख्याय ॥
आगरे रहि गोपचल मे रह्यौ ता सुत वीर ।
पुत्र जनमे सात ताके महा भट गभीर ॥
कृष्णचद, उदारचद जु, रूपचद सुभाइ ।
बुद्धिचद प्रकाश चौथौ चंद भे सुखदाइ ॥
देवचद प्रबोध संसृत चंद ताको नाम ।
भयो सप्तो नाम सूरज चद मद निकाम ॥
सो समर करि स्याहि सेवक गए विधि के लोक ।
रहो सूरज चद हग ते हीन भरि बर सोक ॥
परो कूप पुकार काहू सुनी ना ससार ।
सातएँ दिन आइ जदुपति कीन आपु उधार ॥
दियो चख दै कहो सिसु सुनु माँगु वर जो चाइ ।
हौ कही प्रभु भगति चाहत, शत्रु नाश सुभाइ ॥
दूसरो ना रूप देखौ देखि राधास्याम ।
सुनत करुनासिधु भाख्यो एवमस्तु सुधाम ॥
प्रबल दच्छिन बिप्रकुल ते सत्रु ह्वै है नास ।
अषित बुद्धि बिचारि विद्यामान माने सास ॥
नाम राखो मोर सूरजदास, सूर सुश्याम ।
भए अतरधान बीते पाछली निसि जाम ॥
मोहि पन सोइ है ब्रजकी बसे सुखि चित थाप ।
थापि गोसाई करी मेरी आठ मद्धे छाप ॥
विप्र प्रथ जगात को है भाव भूरि निकाम ।
सूर है नंदनद जू को लयो मोल गुलाम ॥

—०—

६. सुकरात

इतिहासो से प्रगट है कि यूनान देश प्राचीन काल मे हर तरह की विद्या, शिल्प, विज्ञान आदि के लिए अति प्रसिद्ध था, वरन हर एक विद्याओ की खान या उत्पत्ति भूमि कहा जाय तो कुछ अनुचित न होगा। वहीं के बडे बड़े विद्वान और विज्ञानियो मे एक सुकरात भी था। यह ईसाई सन् ४७१ वर्ष पहिले आसीनिया * नगर मे पैदा हुआ था और "होनहार बिरवान के होत चीकने पात वाली कहावत के अनुसार छोटी ही उमर मे अपने बाप के सौदागरी पेशे का काम झटपट सीख सिखाय भलीभॉति प्रखर हो गया। तब यह हर तरह की विद्याओ के सीखने मे प्रवृत्त हुआ और अपना समय यूनान देश के विद्वानो मे काटने लगा, जिन के सतसग से कुछ दिनो के उपरात अपनी विमल बुद्धि के कारण यह सपूर्ण विद्या, विज्ञान और शिल्प-शास्त्र मे भली भॉति कुशल हो यूनान के बड़े बडे विद्वान् और दार्शनिको से भी वाद विवाद मे भिड़ जाता था। उन का पक्ष खडन कर अपनी बात अनेक युक्तियो से सिद्ध करता था। यहॉ तक कि कुछ दिनो मे सपूर्ण यूनान भर मे इस की लोकोत्तर चमत्कार बुद्धि की धूम मच गई। एक बार सुकरात का बाप कहीं बाहर सफर को जाते समय इसे चार हजार लूर, जो उस समय का यूनानी सिक्का था, इस के निज के खर्च के लिए दे गया था। पर इस ने उन सब रुपयो को बतौर ऋण के अपने एक मित्र को दे दिया। उसने रुपये इसे फिर लौटा कर न दिए, पर सुकरात ने इस बात का कुछ भी ख्याल न किया और न रुपए उससे कभी मॉगे। मेसिडोनिया का राजा अर्किलीस ने बहुत कुछ चाहा कि सुकरात एक बार उससे किसी बात के लिए कुछ कहे, पर इस ने कभी इस बात की ओर ध्यान भी न किया। इस बुद्धिमान हकीम मे धीरज इतना था कि किसी तरह की तकलीफ या रज जो इस पर आ पडते थे तो यह किसी प्रकार और लोगो को उस मानसी व्यथा को नहीं प्रगट होने देता था। उस के मन की सब से बडी अभिलाषा जिस के लिए वह अत्यत लौलीन रहा किया यह थी कि जिस तरह हो सके

* यह ४६६ ई० पूर्व में एथन्स नगर में पैदा हुआ था। [स०]

हम अपनी जन्मभूमि को कुछ फाइदा पहुँचा सके और सब लोग कुमार्ग से बच सके और सीधे राह पर चले, एक दूसरे की बुराई कभी न चेते। यद्यपि इस सज्जन पुरुष ने कोई स्कूल या वाज करने को कोई जगह नही बनवाया पर अक्सर जहाँ लोगो की बहुत भीड़ भाड़ रहती उन के बीच यह खड़ा हो घटो तक सदुपदेश किया करता था और दिन रात मनसा वाचा कर्मणा अपने देश के लोगो के हित मे तत्पर रहा। हकीम अफलातून सुकरात का बहुत बड़ा शागिर्द था। मरती बार सुकरात ने तीन बात के लिये अपनी प्रसन्नता प्रगट की और हाथ जोड़ कर कहा, हे जगदीश्वर, मै तुझे कोटि कोटि धन्यवाद देता हूँ कि तूने मुझे बातो के मर्म समझने की बुद्धि दी, यूनान ऐसे देश मे जन्म दिया और अफलातून ऐसा शिष्य मुझे दिया। एक दिन अट्रिका का राजा अलसीबिडीस बड़े घमड मे भर यह दून हाँक रहा था कि मेरे पास बड़ा धन है और मै बडे भारी राज्य का स्वामी हूँ। जब सुकरात ने उस की यह घमड की बात सुनी उससे कहा, अलसीबिडीस, तनिक इधर आ और भूगोल के नकशे की ओर ध्यान कर, और बता तेरा राज्य अट्रिका कहाँ पर है। जब उसने नकशे को देखा, घमड के नशे मे जो चूर चूर था सब उतर गया और उस की आँख खुल गई। सिर नीचा कर कहा कि मेरा मुल्क यूनान, जो सपूर्ण यूरोप का एक छोटा सा देश है, उस का भी एक अत्यत छोटा प्रदेश है। उस की यह बात सुन सुकरात ने कहा, तो ऐ प्यारे, फिर क्यो इतनी दून की हाँक रहा है? घमड बहुत बुरा होता है, सर्व शक्तिमान जगदीश्वर के करतब से इस भूमंडल पर एक से एक चढ़ बढ़ कर पड़े है, उन के सामने तू किस गिनती मे है? थोडे दिन बाद यूनान के बहुत से अत्याचारी निष्ठुर मनुष्यो ने ईर्ष्या मे उनहत्तरवे वर्ष मे सुकरात पर यह दोष लगाया कि यह बुड्ढा असीना नगर के नव युवा लोगो को बुरे चाल-चलन की ओर रुजू करता है, उन के बाप दादाओ के पुराने बर्त्ताव और मत से हटा कर उन्हें नास्तिक बनाया चाहता है और उन के देवी देवताओ की निदा करता है। इन दोषा के कारण वह अदालत के सपुर्द हुआ। अदालत ने इसे विष पीकर मर जाने की सजा तज-वीज की। उस निर्दोषी पर प्राणात दड की सजा का हुकुम सुन जब

सब उस के बधु भाई और मित्र विलाप कर और पछता रहे थे, सुकरात अत्यत धैर्य के साथ विष का प्याला उठा कर घूँट गया और अपने मरने तक सबो को सदुपदेश देता रहा। जब विष इस के सर्वांग मे व्याप्त हो गया, यहाँ तक कि बोल भी न सकता था, तब इस ने आँख बद कर ली और सिधार गया।

—※—

१०. महाराजाधिराज नेपोलियन

९ वीं जनवरी सन् १८७३ ई० को बारह बजे के २५ मिनट पर महाराजाधिराज तृतीय नेपोलियन ने इस असार संसार को त्याग किया। जो मनुष्य मरने के अढाई वर्ष पूर्व एक प्रधान देश का राजा और ससार के सब मनुष्यो मे मुख्य वीर और बुद्धिमान था और पाँच लाख योद्धा जिस के साथ चलते थे और जिस ने एक सामान्य मेला किया था उस मे सारे ससार के राजा और महाराज दौडे आए थे, वही नेपोलियन इगलैड के एक गाँव मे एक छोटे घर मे मरा!!! इस से बढ़ के और क्या दु:ख होगा कि जिस के एक खेल मे रूम और रूस के महाराज पारिस की गलियो मे दौड़ते थे, उस के शव के साथ वही ग्राम निवासी लोग!!! क्यो धन के अभिमानियो! तुम अब भी अपने धन का अभिमान करोगे और अपने से छोटो को दु ख देने मे प्रवृत्त होगे? यह वही नेपोलियन है, जिस का दादा ऐसा प्रतापी था, जिस ने सारे यूरप को हिला दिया था और सब अगरेजो को दाँतो चने चबवा दिए थे। जर्मनी के युद्ध मे नेपोलियन पराजित हुआ, इस का कुछ शोच नहीं, क्योकि जिस काल मे नेपोलियन के स्थान का वा उस की समाधि का वा उस युद्धस्थान का भी चिन्ह न मिलैगा, उस समय तक उन का नाम वर्त्तमान रहेगा।

महाराज नेपोलियन चिजिलहर्स्ट नामक स्थान मे गाड़े गए। उस समय बोनापार्ट के वंश के सब लोग और पारिस के समस्त शिल्प-

विद्या के गुणियो का समाज विमान के आगे था। लार्ड साइडनी और लार्ड स्फील्ड महारानी विक्टोरिया और युवराज की ओर से आए थे और पचास सहस्र मनुष्य केवल कौतुक देखने को एकत्र थे और राजकुमार और विधवा महारानी भी साथ थीं। शव को समाधि करने के पीछे बोनापार्ट के वंश के सब लोगो ने राजकुमार को पिता के स्थानापन्न भाव से वंदना किया। इंगलैंड, रूस इत्यादि सब राजकीय कार्यालय दस दिवस तक शोक भेष मे रहे।

हम को लिखने मे अत्यंत खेद होता है कि पृथ्वी पर का एक महा विख्यात पुरुष समाप्त हुआ। इस मनुष्य की सब आयुष्य प्रारंभ से अंत तक चमत्कारिता और फेरफार की एक विलक्षण शृंखला थी। कुछ काल तक राजा और कुछ काल तक एक सांप्रत सब पराक्रमी राजा उस का आदर करते थे, तो क्या अब उस को तुच्छ मान कर उस की अप्रतिष्ठा करनी चाहिए?

यद्यपि वे राजसिंहासन पर न थे और इंगलैंड मे केवल एक साधारण मनुष्य के समान रहते थे तथापि उन के मरण की दुःखवार्त्ता श्रवण कर के राजकीय और राजसभा के अधिकारियो के चित्त अवश्य चकित होंगे और फ्रांस के राज्य-प्रबंधो मे इन के मृत्यु से कुछ विलक्षण फेरफार होगा। यह नेपोलियन फ्रेंच लोगो के मुख्य महाराज थे। और इनको तीसरे नेपोलियन कहते थे और बड़े नेपोलियन बोनापार्ट के भतीजे थे। इन का जन्म २० अप्रैल सन् १८०८ ई० मे फ्रांस देश मे हुआ था और इन के पिता का नाम लुई बोनापार्ट था, जो लालैंड के महाराज थे। जब यह सात वर्ष के हुए थे तब प्रथम नेपोलियन का अंत का पराभव हुआ था। अनंतर इन को और इन के माता को फ्रांस छोड़ कर के अन्य देश मे जाना पड़ा। इन्हों ने स्विटज़रलैंड मे विद्याभ्यास आदि किया। पीछे इन को वहाँ की सेना मे रहने की आज्ञा मिली। कुछ दिवस पर्यंत थन सरोवर के तट के तोपखाने में अभ्यास किया। तदनंतर सन् १८३० मे फ्रांस देश मे राज्य संबंधी हलचल देखकर के फिर अपने स्वदेश मे आने का उद्योग किया परंतु वह सफल न हुआ, उलटी सीमा के बाहर रहने की आज्ञा हुई। एक

वर्ष के अनंतर स्विटज़रलैंड छोड़ कर के टस्कनी मे जाकर रहना पड़ा और रोम के युद्ध मे मिल गए। इतने मे उन के ज्येष्ठ भ्राता का देहांत हुआ। फिर वहाँ से निकल कर इगलैंड में जाकर रहे। सन् १८३२ से सन् १८३५ पर्यंत काल ग्रथ लिखने मे व्यतीत किया। इसी काल मे उनके चचेरे भाई, प्रथम नेपोलियन के पुत्र नेपोलियन की सहायता करके उसे दूसरा नेपोलियन कहला कर राजसिहासन पर बैठावे, फ्रास देश के कई एक मुख्य निवासियो के चित्त मे यह बात आई थी और फ्रास के सीमा तक आगमन की इच्छा करते थे तो इतने मे उन का भी देहांत हुआ, इससे फ्रास के राजसिहासन पर बैठने का अधिकार उक्त नेपोलियन को प्राप्त हुआ और वह सपादन करने का विचार उन के चित्त मे आया। सन् १८३६ पर्यंत प्रयत्न करके स्ट्रासबर्ग पर चढाई किया, परतु यह प्रयत्न सफल न होकर आपही पकडे गए। अत मे पारिस मे उन को ले गए। उन की माता और दूसरे महाशयो के उद्योग से इनका प्राण बचा और ये यूनाइटेड स्टेट्स भेजे गए। वहाँ एक दो वर्ष रहकर स्विटजरलैंड मे लौट आए, तो वहाँ उनके माता का देहात हुआ। सन् १८३८ मे उन की अनुमति से एक महाशय ने स्ट्रासबर्ग के चढाई का वर्णन लिखा, इस से फ्रेंच सरकार को बड़ा खेद हुआ और उक्त महाशय को दड दिया और नेपोलियन को स्विट्-जरलैंड से निकाल देने के हेतु वहाँ के सरकार को लिख भेजा। परतु नेपोलियन आपही स्विट्जरलैंड छोड कर पुनः इगलैंड मे गए। वहाँ दो वर्ष रहकर सन १८४० मे फ्रास का राज्य मिलने के हेतु प्रयत्न करते रहे और बोलोन पर चढ़ाई किया, परतु वह भी प्रयत्न निष्फल हुआ और पकड़े गए और इन के सहकारी जितने मनुष्य थे सभो को जन्म भर के हेतु वहाँ के दुर्ग मे कारागार हुआ। इस दुर्ग मे छः वर्ष पर्यंत रहे। अनतर सन् १८४६ के मई महीने के २५ वीं तारीख को अपूर्व वेश धारण कर के बेलजिअम मे भाग कर फिर इगलैंड मे गए। सन् १८४८ ई० के फ्रास के युद्ध तक वहाँ रहे। इस युद्ध के समय फ्रास के निवासियो ने इनको नैशनल असेम्ब्ली का सभासद नियत किया। तदनतर उन्हीं महाशयो ने इन को अध्यक्ष नियत किया। तारीख २ दिसम्बर सन् १८५१ को उन्हो ने कई महाशयो के विचार से और

पारिस के सर्व प्रसिद्ध राजकीय महाशयो को घेर कर कारागार मे डाल दिया और नेशनल असेब्ली को तोड़ कर के स्वत मुख्याधिकारी डिक्टेटर नाम से आप प्रसिद्ध हुए । कुछ सेना मार्ग मे रख कर प्रबध करने के अनतर 'सकल देश का हम को दस वर्ष अध्यक्ष का अधिकार मिला' यह प्रसिद्ध किया और उन्हीं के इच्छानुसार सब अधिकार उनको प्राप्त हुआ और उन्होने फ्रेच लोगो की सम्मति से तारीख २ दिसम्बर सन् १८५२ को अपने को महराज तीसरा नेपोलियन कहवाया ।

इगलैड के सरकार ने प्रथम उन को मान्य किया और पश्चात् यूरोपियन सब राजाओ ने धीरे धीरे उन को फ्रेच का महाराज कहना स्वीकार किया । सन् १८५३ के जनवरी की १३ तारीख को उन्हो ने विवाह किया । तदनतर १८५४ मे रशिया के युद्ध का आरभ हुआ और सन् १८५६ मे समाप्त हुआ । इस युद्ध से उन को बड़ी प्रतिष्ठा हुई । सन् १८५६—६० इस वर्ष मे उन्हो ने विक्टर इमानुअल की सहायता करके इटली को आस्ट्रिया के अधिकार से निकाल कर स्वतत्र किया और आस्ट्रिया का पराभव करने से उन की और भी विशेष प्रतिष्ठा बढ़ी और उन को कुछ देश भी इसी कारण मिला । इसी समय मे महाराज नेपोलियन ने अत्युच्च पद की प्राप्ति किया, यह समझना चाहिए । तदनतर मेक्सिको मे इन्होने प्रयत्न और लड़ाई करके अपना राज्य स्थापन किया, परतु इस का परिणाम अत्यत दु:खकारक हुआ । अत मे सन् १८७० मे प्रशिया और उनके युद्ध का आरभ होकर इन का भली भॉति पराभव ता० २ सेप्टेम्बर सन् १८७० मे हुआ । तदनंतर कुछ दिवस जरमनी के दुर्ग मे बद्ध रह कर छूट गए । पश्चात् इगलैड मे आप और अपनी रानी और पुत्र चिरजीव प्रिस नेपोलियन यह सब ता० २० मार्च सन् १८७१ को एकत्र हुए । इस पुत्र का जन्म ता० १६ मार्च सन् १८५६ मे हुआ था । * अत का समय उन का साधारण मनुष्य के

* इसका नाम यूजीन लूई जीन जोसेफ नेपोलिअन था और यह चौबीस वर्ष की अवस्था मे जूलू युद्ध मे १ जून सन् १८७६ ई० को मारा गया । [स०]

समान परदेश मे और परराष्ट्र मे व्यतीत हुआ। उन को कई दिन से रोग हुआ, पर शास्त्रोपाय बहुत करते थे, परंतु उससे कुछ न्यून न हुआ और बहुत कृश हो गए। तारीख ६ को दिन के साढ़े बारह बजे उनका देहात हुआ। जब ये राजसिहासन पर थे इन्हो ने रोम के प्रथम प्रख्यात महाराज जुलियस-सीज़र का इतिहास लिखा। इन सब वृत्तांत से स्पष्ट विदित होगा कि इन को जन्म भर फेरफार उलट पुलट करते व्यतीत हुआ ; उन को भली भाँति स्वस्थता कभी नहीं हुई थी। प्रशियन लोगो से इन का पराभव होने तक सर्व पृथ्वी मे इधर दश वर्ष पर्यंत इन के समान बुद्धिमान और सर्व सामान्य गुणयुक्त दूसरा पुरुष नहीं हुआ। ऐसा लोग कहते है कि इन को शीघ्र इस दशा मे पहुँचने का मुख्य कारण यही है कि इन से कोई परोपकार नहीं हुआ और इन के हाथ जेनरल वाशिगटन के समान निष्काम और परोपकार से रहित थे और अपनी बुद्धि से कोई उत्ताम कृत्य नहीं किया। इसी कारण इनकी कीर्त्ति का उदय और अस्त अतकाल मे हुआ तथापि यह मनुष्य अति उच्च पद को प्राप्त कर के पतन हुआ और परिणाम अत्यत खेदजनक हुआ। इस से सकल मनुष्यो को खेद हुआ यह वार्ता प्रसिद्ध है।

—०—

११. महाराज जंगबहादुर

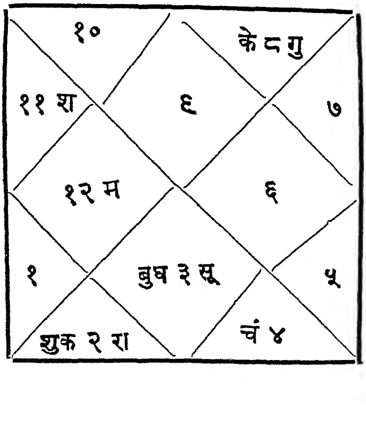

श्री मन्महाराज जंगबहादुर का बैकुंठवास होना सब पर विदित है और बहुत से समाचारपत्रो मे यह समाचार प्रकाश हो चुका है, परंतु हमारी लेखनी इस शोच से काले आँसुओ से न रुदन करै यह चित्त नहीं सहन कर सकता। बादशाह रजीत सिह को सब लोग भारतवर्ष का अतिम मनुष्य कहते थे, परतु महाराज जगबहादुर ने अपने अप्रमेय बल से उन्हीं लोगो से यह कहलाया कि महाराज जंगबहादुर भी हिंदुस्तान मे एक मनुष्य हैं। पूर्वोक्त महाराज ने १८७७ फरवरी की पचीसवीं तारीख को वीर प्रसू भारतभूमि को पुत्रशोक दिया। यो तो अनेक जननी-यौवन-कुठार नित्य जनमते और मरते हैं, पर यह एक ऐसा पुरुष मरा कि भारतवर्ष के सच्चे हितकारी लोगो का जी टूट गया। भादो की गहरी अँधेरी मे एक दीप जो टिम टिम कर के झिलमिला रहा था, वह भी बुझ गया। क्या इस अभागिन भारतमाता को फिर ऐसे पुत्र होंगे ? नीति के तो मानो ये मूर्तिमान अवतार थे। ऐसे प्रदेश मे रह कर जो चारो ओर भिन्न भिन्न राज्यो से घिरा हो, स्वामी की उन्नति साधन करते हुए आस पास के कठिन महाराजो को प्रसन्न रखना नीति सूत्र के परम चतुर सूत्रधार का काम है। हम लोगो के भाग्य ही ऐसे है, यह रोना कहाँ तक रोएँ।

पूर्वोक्त महाराज प्रतिवर्ष की भाँति दौरा करते हुए शिकार खेलते थे कि एकाएक सुगौली मे जो पहुँचे तो रोगाक्रांत हो गए। कहते है कि उबांत और दस्त होने से एक साथ बहुत व्याकुल हो गए और उसी समय कहारो को आज्ञा दी कि बाघमति गगा पर पालकी ले चलो। बड़ी महारानी महाराज के साथ थीं और उन्होने अत्यत सावधानी से अपने जगत् विख्यात प्राणपति की उभयलोकसाधिनी अतिम सेवा की। कहारो के बदले पालकी क्षत्रियों ने उठाई थी। जब नदी पर सवारी पहुँची तब दानादिक कर के महाराज ने इस असार ससार का त्याग किया। उन के भाई जनरल रणोद्दीप सिह बहादुर उसी समय काठमाडू गए और महाराज से एकात मे यह शोक समाचार कहा। महाराजाधिराज ने उसी समय उन को महाराजगी का पद और उन के भाई को जो जो अधिकार प्राप्त थे सब दिए। महाराज रणोद्दीप सिंह ने

बाहर आकर चालीस हजार सेना मे से बीस हजार को बाहरी और सीमा के प्रांतो पर और बीस हजार को नगर के चारो ओर उपस्थित रहने की आज्ञा दिया, जिस से किसी प्रकार के उपद्रव को शका न हो। इस सेना भेजने की आज्ञा केवल स्वकीय रक्षा के निमित्त थी। राजधानी मे दो दिन तक यह समाचार छिपा रहा दूसरी रात्रि को एक साथ यह वज्रपात सा समाचार नगर मे फैल गया, जिस से सारी राजधानी मे महा हाहाकार फैल गया। महाराज के संग एक बडी रानी और दो छोटी रानी अत्यत प्रसन्नता पूर्वक सती हुई। कहते हैं कि जिन रानियो से विशेष प्यार था और सदा महाराज के साथ सती होना प्रकाश करती थीं वे न सती हुई और इन दोनो छोटी रानियो से प्रकाश मे प्रेम विशेष नही था और ये सती हुई। कहाँ है और देश की स्त्रियाँ, आवै, और ऑख खोल कर भारतभूमि का प्रेम और पातिव्रत देखै और लाज से सिर झुका ले।

—❀—

१२. जज्ज द्वारकानाथ मित्र

स्वर्गीय आनरेबुल द्वारकानाथ मित्र ने सन् १८३१ मे हुगली जिला के अतर्गत आपता से एक कोस दूर अगुनाशी गाँव मे एक साधारण हुगली और हबडा की कचहरी के मुख्तार विश्वनाथ मित्र के घर जन्म लिया था। बगाली पाठशाला और हुगली ब्राच स्कूल मे पढकर हुगली कालेज मे इन्हो ने अगरेजी विद्याध्ययन करके अपनी बुद्धि के चमत्कार से सब शिक्षकादिको को अचभित किया। ये अगरेजी भाषा की पारग-तता के अतिरिक्त हिसाब किताब भी बहुत अच्छी भाँति जानते थे। हुगली कालेज से ये हिंदू कालेज मे आए, जब इन के शील, औदार्य, चातुर्य, स्वातत्र्य इत्यादि गुण सब छोटे बडे के चित्त पर भली भाँति खचित हो गए थे। हुगली कालेज मे मुख्य छात्रवृत्ति पाना तथा अपने पहिले ही लेख पर पारितोषिक पाना, कौन्सिल आफ एजुकेशन के

रिपोर्ट मे इन की स्थिति का लिखा जाना, और कलकत्ता युनिवर्सिटी के फेलोशिप के हेतु इन का चुना जाना ही इन के गुणो और विद्या का प्रत्यय देता है। एक कानूनी मनुष्य के पुत्र होने के कारण इन की चित्तवृत्ति एक साथ कानून की ओर फिरी और उस मे योग्य क्षमता पाकर सन् १८५६ मे ये वकीली की परीक्षा मे उत्तीर्ण हुए और उसी वर्ष के मार्च मे अपना वर्तमान इटरप्रिटर का पद छोड कर इन्हो ने सदर कचहरी मे वकीली करना आरभ किया। इन्हो ने केवल अपने व्यय से एक औषधालय नियत किया और द्रव्यहीन छात्रो को उत्तम परीक्षा होने तक सहायता करते थे और इन के सत्यप्रियता, निष्पक्ष-पातिता, दीनो पर दया, मुकद्मो के सूक्ष्म भावार्थों की समझ और कार्य मे चातुर्य इत्यादि गुण हाकिमो से लेकर चपरासियो तक विदित हो गए थे। और जज्ज लोग इन को विवाद की जड़ समझने और समझाने से बहुत ही प्यार करते थे। विशेष कर के आनरेबुल पडित शंभूनाथ अपनी वकीली से लेकर के जज्ज होने की अवस्था तक इन्हें बहुत प्यार करते थे। ठकुरानी दासी के कर-सबधी बडे मुकद्दमे मे १५ जज्जो के फुलबेच के सामने मिस्टर डाइन ऐसे प्रसिद्ध वकील और अनेक अंगरेज वकीलो को सात दिन तक अनवरत वाग्धारा-वर्षण से और कानून सबधी सूक्ष्म बातो की झर से परास्त कर के हिदू वकीलो मे इन्होने चिरकीर्त्ति का ध्वज स्थापित किया * और गवर्नमेट की इन पर विशेष दृष्टि से उस समय मे जब कि इन की आमदनी एक लाख रुपये साल की थी, ये गवर्नमेट के मुख्य वकील हुए। और पडित शंभूनाथ के मृत्यु पर सन् १८६७ मे ये बिना इच्छा किये भी जस्टिस पीकाक की प्रार्थनानुसार गवर्नमेट से प्रधान जज्ज नियत किये गये और विचारासन पर बैठ कर जैसी योग्यता और शुद्ध चित्त से साव-धान होकर इन्होने काम किया वह हिदूसमाज मे चिरस्मरणीय है। जस्टिस पीकाक के अतिरिक्त कोई जज्ज इन की योग्यता के तुल्य नहीं गिने जाते थे और एक व्यभिचारिणी के दाय भाग के बडे मुकद्दमे के समय बीमार होकर सात बरस जज्जी का काम करके अपने ग्राम मे

* सन् १८६५ ई० में। (स०)

अपनी वृद्धा माता, तीसरी स्त्री, दो बालक और दो विवाहिता बालिका को छोड कर ये भारतवर्ष को शून्य कर के अपनी ४३ वर्ष की अवस्था मे ता० २५ फेब्रुवरी सन् १८७४ बुध के दिन परलोक को सिधारे।

—❀—

१३. श्री राजाराम शास्त्री

श्रीयुत् पडितवर राजाराम शास्त्री वेद श्रौतादि विविध विद्यापारीण श्रीयुत् गोविंदभट कार्लेकर के तीन पुत्रो मे कनिष्ठ थे। जब ये दस वर्ष के लगभग थे तब इन के पितृचरण परलोक को सिधारे। फिर त्रिलोचन घाट पर एक ऋषितुल्य महातपस्वी श्रीयुत् रानडोपनामक हरिशास्त्री विद्वान ब्राह्मण रहते थे, उन के पास इन्होने अपनी तरुण अवस्था के प्रारंभ मे काव्य और कौमुदी पढ़ कर आस्तिकनास्तिको भयविध द्वादश दर्शनाचार्यवर्य परम मान्य जगद्विदितकीर्ति श्रीयुत् दामोदर शास्त्री जी के पास तर्कशास्त्राध्ययन प्रारंभ किया। थोड़े ही दिनो मे इन की अतिलौकिक प्रतिभा देख कर इन को उक्त शास्त्री जी महाशय ने अपनी वृद्ध अवस्था के कारण पढ़ाने का आयास अपने से न हो सकेगा, जान कर श्रीमान् कैलास निवास परमानदनिमग्न दिगगनाविख्यात-यशोराशि प्रसिद्ध महा पण्डितवर्य श्रीयुत् काशीनाथ शास्त्री जी के, जिन के नाम श्रवणमात्र से सहृदय पडितवर समूह गद्गद होकर सिर डुलाते हैं, स्वाधीन कर दिया। और इन के प्रतिभा का अत्यंत वर्णन कर के कहा कि मै एक रत्न आपको पारितोषिक देता हूँ जो आपके सुविस्तीर्ण शाखाकाडमडित कुसुमचयाकीर्ण यशोवृक्ष को अपनी यशश्चन्द्रिका से सदा अम्लान और प्रकाशित रक्खेगा। फिर इन्हो ने उक्त महाशय के पास व्याकरणादि विविध शास्त्र पढ़कर चित्रकूट मे जाकर उत्तम उत्तम पडितो के साथ विप्रतिपत्तियो मे अत्युत्तम प्रतिष्ठा पाई और श्रीमत विनायक राव साहेब ने बहुत सन्मान किया। फिर जब संस्कृतादि विविध विद्या कलादि गुण-गण मडित श्रीमान् जान

म्यूर साहब श्री काशी मे आए और पाठशाला मे विविध विद्या पारगत पडिततुल्य विद्यार्थियो की परीक्षा ली तब उक्त शास्त्री जी महाशय के विद्यार्थिगण मे इन की अद्भुत प्रतिभा और अनेक शास्त्रोपस्थिति देख प्रसन्न होकर केवल इस अभिप्राय से कि ऐसे उत्तम पडित-रत्न का अपने पास रहना यशस्कर है और आजमगढ़ के जिले मे उक्त साहेब महाशय प्राड्विवाक थे इस लिए कहीं कहीं हिंदू धर्म शास्त्र के अनुसार निर्णय करने के विमर्श मे और उन की बनाई हुई अनेक सुदर सुदर कविता के परिशोधन मे सहायता के लिए इन को अपने साथ ले गए। उन के साथ चार पॉच वर्ष के लगभग रह कर ग्वालियर मे गए। वहॉ बहुत से उत्तम उत्तम पडितो के साथ शास्त्रार्थ मे परम प्रतिष्ठा और राजा की ओर से अत्युत्तम सन्मान पूर्वक बिदाई पाकर सवत् १९१२ के वर्ष में काशी आए। तब यद्यपि विधवोद्वाहशकासमाधि अर्थात् पुनर्विवाह खडन श्रीमान् परम गुरु श्री काशीनाथ शास्त्री जी तैयार कर चुके थे तथापि उस को इन्हो ने अपूर्व अपूर्व अनेक शंका और समाधानो से पुष्ट किया। इसी कारण उक्त शास्त्री जी महाराज ने अपने नाम के पहिले इन्हीं का नाम उस ग्रथ पर लिख कर प्रसिद्ध किया। सवत् १९१३ के वर्ष के अत मे श्रीमान् यशोमात्रा विशेष वालएटेन साहेब महाशय ने साख्यशास्त्राध्यापन के कार्य मे इनको नियुक्त किया। उस कार्य पर अधिष्ठित होकर सपरिश्रम पाठन आदि मे अनेक विद्यार्थियो को ऐसे व्युत्पन्न किया जिन की सभा मे तत्काल अपूर्व कल्पनाओ को देख कर प्राचीन प्रतिष्ठित पडित लोग प्रसन्न होकर श्लाघा करते थे। सवत् १९२० के वर्ष मे राजकीय श्री संस्कृत पाठशालाध्यक्ष श्रीमान् ग्रिफिथ साहेब महाशय ने इन को धर्मशास्त्राध्यापक का पद दिया। तब से बराबर पढा पढ़ा कर शतावधि विद्यार्थियो को इन्हो ने उत्तम पडित किया, जो सप्रति देशदेशातर मे अपने अपने विद्यार्थिगण को पढाकर इन की कीर्त्ति को आसमुद्रात फैला रहे है। कुछ दिन हुए श्रीमान् नदन नगर की पाठशाला के सस्कृताध्यापक मोक्षमूलर साहिब महाशय की बनाई हुई अगरेजी और सस्कृत व्याकरण की पुस्तक का परिशोधन और कई स्थलो में परिवर्तन किया था, जिससे उक्त साहिब महाशय ने अति प्रसन्न होकर इनकी कीर्त्ति अनेक द्वीपातर निवासियो मे विख्यात

की, यहाँ तक कि जब उन्होने अपने पुस्तक की द्वितीयावृत्ति छपवाई तब उस की भूमिका में लिखा है कि इन के समान सस्कृत व्याकरण जानने वाला इस द्वीप मे तो क्या ससार भर मे दूसरा कोई नहीं है। वे उक्त पंडित वर राजाराम शास्त्री सप्रति पॉच चार वर्ष से विरक्त हो कर योगाभ्यास मे लगे थे और अपने दीन बान्धवो का पोषण और दीन विद्यार्थी प्रभृति के परिपालन ही के हेतु अर्जन करते थे और आप साधारण ही वृत्ति से जीवन करते हुए मठ मे निवास करते थे। सवत् १६३२ श्रावण शुक्ल १२ के दिन सन्यास लेकर उसी दिन से अन्न परित्याग पूर्वक परमार्थ का अनुसधान करते करते मरण काल से अव्यवहित पूर्व तक सावधानता पूवक परमेश्वर का ध्यान करते करते भाद्रपद कृष्ण ३ गुरुवार को प्रात काल ८ बजते बजते परमपद को प्राप्त हो कर यशोमात्रावशिष्ट रह गए।

—:०:—

१४. लार्ड म्योसाहिब *

हा ! यह कैसे दु ख की बात है कि आज दिन हम उस के मरण का वृत्तात लिखते है जिस की भुजा की छॉह मे सब प्रजा सुख से कालक्षेप करती थी और जो हम लोगो का पूरा हितकारी था। ऐसा कौन है जो इस को पढ़कर न कपित होगा और परम शोक से

* कवि वचन सुधा जि० ३ स० १३ शनिवार २४ फरवरी सन् १८७२ ई० से उद्धृत। (स०)

रिचर्ड साउथवेल बोर्क, मायो के छठे अर्ल का जन्म २१ फरवरी सन् १८२२ ई० को हुआ था। डबलिन से एल-एल. डी की डिगरी प्राप्त की। १२ जनवरी सन् १८६६ ई० मे भारत के वाइसराय हुए। अजमेर में इन्हीं के नाम पर कालेज स्थापित हुआ। यह ८ फरवरी सन् १८७२ ई० को मारे गए। (स०)

किस की आँखो से आँसू न बहैंगे ? मनुष्य की कोई इच्छा पूरी नहीं होने पाती और ईश्वर और ही कुछ कर देता है। कहाँ युवराज के निरोग होने के आनद मे हम लोग मग्न थे और कैसे कैसे शुभ मनोरथ करते थे, कहाँ यह कैसा विज्जुपात सा हाहाकार सुनने मे आया। निस्सदेह भरतखड के वृत्तात मे सर्वदा इस विषय को लोग बडे आश्चर्य और शोक से पढ़ैंगे और निश्चय भूमि ने एक ऐसा अपूर्व स्वामी खो दिया है जैसा फिर आना कठिन है। तारीख १२ को यह भयानक समाचार कलकत्ते मे आया और उसी समय सारा नगर शोकाक्रात हो गया।

गुरुवार ८ वीं तारीख को श्रीमान् लार्ड म्यौ साहिब पोर्ट ब्लेयर उपद्वीप मे ग्लासगो नामक जहाज पर आए और ढाका और नेमिसिस नाम के दो जहाज और भी सग आए और साढ़े नौ बजे उन टापुओ मे पहुँचे और ग्यारह बारह के भीतर श्रीमान् ने बर्मा के चीफ कमिश्नर इत्यादि लोगो के साथ कैदियो की बारक, गोराबारिक और दूसरे प्रसिद्ध स्थानो को देखा। उस समय श्रीमान् की शरीर-रक्षा के हेतु बहुत से सिपाही, कास्टेब्ल और गार्ड बडी सावधानी से नियत किए गए और थोड़ी देर जेनरल स्टुअर्ट साहिब की कोठी पर ठहर कर सब लोग जहाजो को फिर गए। अढाई बजे सब लोग फिर उतरे और इन टापुओ के लोगो का स्वभाव जानकर सब लोग बडी सावधानी से चले और बड़े यत्न से सब लोग श्रीमान् की रक्षा करते रहे। उस समय श्रीमती लेडी म्यौ और सब स्त्रियाँ ग्लासगो जहाज पर ही थीं। ये लोग अबरदीन और ऐडो होते हुए वाइयर टापू मे पहुँचे। यह स्थान रास के टापू से ढाई कोस है और यहाँ १३०० कैदी रहते है, जो अपने बुरे कर्मो से काले पानी भेजे गए है। भय का स्थान समझ कर कास्टेबल और सरकारी पलटन रक्षा के हेतु सग हुई और जेलखाना इत्यादि स्थानो को देख कर चथाम टापू मे गए और वहाँ कोयले की खान देख कर फिर जहाज पर फिर आने का विचार करने लगे। अब ५ बजने का समय आया और सब लोग जहाज पर जाने को घबडा रहे थे कि श्रीमान् ने कहा कि हम लोग हिरात की पहाडी पर चढै और वहाँ से सूर्यास्त की शोभा देखै। यह पहाड़ी इसी टापू मे है और

इसके ऊपर कोई बस्ती नहीं है, परतु नीचे होप टौन नामक एक छोटी बस्ती है, जिस मे कुछ कैदी काम करने वाले रहते है। यद्यपि सबेरे ऐसा लोगो ने सोचा था कि समय मिलैगा तो इस पहाड़ी पर जायँगे, पर ऐसा निश्चय नहीं था और न वहाँ कुछ तयारी थी। ऐलिस साहिब इस पहाडी पर नहीं चढ़े और यहाँ पलटन के न होने से चथाम से पलटन बुलाई गई कि वह श्रीमान् की रक्षा करै और वहाँ से आठ कास्टेबल रक्षा के हेतु सग हुए। श्रीमान् एक छोटे टट्टू पर चलते थे और सब लोग पैदल थे। ऊपर बहुत से ताड़ और सुपारी के पेड़ो से स्थान घना हो रहा था और चोटी पर पहुँच कर श्रीमान् पाव घटे तक सूर्यास्त की शोभा देखते रहे। यद्यपि सूर्यास्त हो चुका था, पर ऊपर प्रकाश इतना था कि नीचे की घाटी दिखाती थी और अधकार होता जान कर सब लोग नीचे उतरने लगे। मार्ग मे केवल दो छुटे हुए कैदी मिले और उन लोगो ने कुछ बिनती करना चाहा। पर जेनरल स्टुअर्ट ने उन को टोका और कहा कि जब श्रीमान् स्वस्थ रहैं तब आओ। इन के अतिरिक्त और कोई मार्ग मे नहीं मिला। कप्तान लकउड और कौट बाल्गम्टन आगे बढ गए थे और एक चट्टान पर बैठे उन लोगो का मार्ग देखते थे। इस समय अधेरा हो गया था, परतु कुछ मार्ग दिखाई देता था और उन लोगो ने केवल कुछ मनुष्यो को पानी ले जाते देखा और कोई नहीं मिला। श्रीमान् सवा सात बजे नीचे पहुँचे और उस समय सपूर्ण रीति से अधेरा हो गया था और एक अफसर ने मशाल लाने की आज्ञा दिया। इस से कई मनुष्य भी सग के उन को बुलाने हेतु दौड़ गए। जब कैदियो के झोपडे के आगे बढ़े, जेनरल स्टुअर्ट एक आवर्सियर को आज्ञा देने के हेतु पीछे ठहर गए और श्रीमान् आगे बढ़ गए। उस समय श्रीमान् के आगे दो मशाल और कुछ सिपाही थे और उन के प्राइवेट सेक्रेटरी मेबर्न और जमादार भी कुछ दूर हो गए थे और कर्नल जरविस और मि० हाकिन और मि० एलिन भी पीछे छूट गए थे कि इतने मे एक मनुष्य उन के बीच से उछला और श्रीमान् को दो छुरी मारी, जिस मे से पहिली दहिने कधे पर और दूसरी बाएँ पर लगी। यह नहीं जाना गया कि वह किस मार्ग से वहाँ आया, क्योकि चारो ओर

लोग घेरे थे। पर ऐसा अनुमान होता है कि चट्टानो के नीचे छिप रहा था। श्रीमान् चोट लगते ही उछले और पास ही पानी के गड्हे मे गिर पड़े। यद्यपि लोगो ने उन को उठाकर खडा किया, पर ठहर न सके और तुरत फिर गिर पड़े। उन के अंत के शब्द यह हैं "They've hit me Burne" (बर्न उन लोगो ने मुझे मारा) और फिर दो एक शब्द कहे वह समझ न पड़े और उन के शरीर को लोग उठाकर जहाज पर लाने लगे, परतु श्रीमान तो पर्व ही शरीर त्याग कर चुके थे और वीरो की उत्तम गति को पहुँच चुके थे। उस दुष्ट को अर्जुन सिह नामक क्षत्रिय ने बड़े साहस से पकडा। कहते है कि उस ने पहिले तो उस हत्यारे के मुख पर अपना दुपट्टा डाल दिया और फिर आप उस पर एक साहिब की सहायता से चढ़ बैठा और फिर तो सब लोगो ने उस को हाथो हाथ पकड लिया और यदि उस समय विशेष रक्षा न की जाती तो लोग क्रोधावेश में उस को मार डालते। कहते है कि जिस समय उन का शरीर जहाज पर लाए है उस समय अनवरत रुधिर बहता था। जब श्रीमान् का शरीर ग्लासगो पर लाए उस समय लेडी म्यौ के चित्त की दशा सोचनी चाहिये! हा! कहाँ तो यह प्रतीक्षा करती थीं कि प्यारा पति फिर के आता है, अब उस के साथ भोजन करेंगे और यात्रा का वृत्तांत पूछेंगे, कहाँ उस पति का मृतक शरीर सामने आया। हाय हाय! कैसा दारुण समय हुआ है!! परतु वाह रे इन का धैर्य कि उसी समय शोच को चित्त में छिपा कर सब आज्ञा उसी भाँति किया जैसी श्रीमान् करते थे। जब यह समाचार कलकत्ते मे १२ वीं तारीख को पहुँचा उसी समय आज्ञा हुई दुर्गध्वज अधोमुख हो और ३६ मिनिट पर सायकाल तोप छुटे। कानून के अनुसार लार्ड नेपियर गवर्नर-जेनरल हुए और उसी टापू से एक जहाज उन के लाने को भेजा गया और श्रीमान् के भाई भी फिर बुला लिए गए। परतु लार्ड नेपियर के आने तक आनरैब्ल स्ट्रेची स्थानापन्न गवर्नर-जेनरल हुए। कहते है कि लार्ड नेपियर १६ तारीख को चले। जिस दिन ये वहाँ से चले थे उस दिन सब लोग शोक वस्त्र पहरे हुए इनको बिदा करने को एकत्र हुए थे। श्रीमान् का शरीर कलकत्ते मे आया और वहाँ से आयर्लैंड गया। लेडी म्यौ और श्रीमान् के दोनो भाई और पुत्र तो

बम्बई जायगे, वहाँ से जहाज पर सवार होगे, पर श्रीमान् का शरीर सीधा कलकत्ते से ग्लासगो पर जायगा।

नीचे लिखा हुआ आशय का पत्र कलकत्ते के छापे वालो को सर्कार की ओर से मिला है। 'आठवीं तारीख वृहस्पति के दिन श्रीमान् गवर्नर जेनरल बहादुर पोर्टब्लेअर नाम स्थान पर पहुँचे और रास नाम स्थान का भली-भाँति निरीक्षण कर वाइपर नामे टापू मे पहुँचे, जहाँ महा दुष्ट गण रहते है। स्टीवर्ट साहेब सुपरिटेन्डेन्ट ने श्रीमान् के शरीर रक्षा के हेतु बहुत अच्छा प्रबध किया था कि कोई मनुष्य निकट न आने पावे। पुलिस के व्यतिरिक्त एक विभाग पद्चारियो का साथ था, परतु यह श्रीमान् को क्लेशकर जान पडता था और उन्हो ने कई बार निषेध किया। यहाँ से लोग चाथम मे गए, जहाँ आरे चलते है और लकडी काटी जाती है। परतु यह सब कर्म पाँच बजे के भीतर ही हो गया, तो श्रीमान् ने कहा कि होपटाउन प्रदेश मे चल कर हरियट पर्वत पर आरोहण कर के प्रदोष काल की शोभा देखना चाहिए। यह स्थिर कर सब लोग उसी ओर चले और साढ़े पाँच बजे वहाँ पहुँचे। थोडे से पुलिस के सिपाही साथ मे थे, क्योकि वहाँ यह आशा न थी कि कोई दुष्कर्मा मिले—वहाँ सब रोग ग्रसित और श्रमित लोग रहते है। श्रीमान् बहुत दूर पर्यंत एक टट्टू पर आरूढ़ थे और उनके सहचारी लोग भूमि पर चलते थे। हारियट पर्वत पर पहुँच कर लोगो ने किंचित् काल विश्राम किया और फिर तीर की ओर चले। मार्ग मे दो श्रमिक व्यक्ति मिले और श्रीमान् से कुछ कहने की इच्छा प्रकट की, परतु, स्टीवर्ट साहेब ने उनसे कहा कि तुम लोग लिख कर निवेदन करो। दो साहेब आगे थे और और लोग साथ मे थे। उन लोगो के तीरपर पहुँचने के पूर्व ही अधकार छा गया और श्रीमान् के पहुँचते पहुँचते "मशाल" जल गए। तीर पर पहुच कर स्वीटर्ट साहेब पीछे हट कर किसी को कुछ आज्ञा देने लगे। शेष २० गज आगे नहीं बढ़े थे कि एक दुष्कर्मी हाथ मे छुरी लिए द्रुतवेग से मडल मे आया और श्रीमान् को दो छुरी मारी, एक वाम स्कध पर और दूसरी दक्षिण स्कध के पुट्ठे के नीचे। अर्जुन नाम सिपाही और हाबिन्स साहेब ने उसे पकड़ा और बड़ा कोलाहल मचा और "मशाल" बुत गए। उसी समय श्रीमान् भी या तो करारे

पर से गिर पडे वा कूद पडे। जब फिर से प्रकाश हुआ तो लोगो ने देखा कि गवर्नर जेनरल बहादुर पानी मे खडे थे और स्कध देश से रुधिर का प्रवाह बड़े वेग से चल रहा था। वहाँ से लोग उन्हें एक गाडी पर रख कर ले गए और घाव बाँधा गया, परतु वे तो हो चुके थे। जब उन की लाश ग्लासगो नाम नौका पर पहुँची तो डाक्टरो ने कहा कि इन दोनो घाओ मे एक भी प्राण लेने के समर्थ था। परतु उस समय लेडी म्यो का साहस प्रशसनीय था। उन को अपने "राज" नाश की अपेक्षा भारतखड के राज के नाश और प्रजा के दुःख का बड़ा शोच हुआ।' स्टुअर्ट साहेब ने इस विषय का गवर्नमेंट को एक रिपोर्ट किया है और एक सार्टिफिकेट डाक्टरो की ओर से भी गवर्नमेंट को भेजा गया है।

शव यात्रा

हा! शनिश्चर (१७ वीं) को कलकत्ते की कुछ और ही दशा थी। सब लोग अपना अपना उचित कर्म परित्याग कर के विषन्नबदन प्रिंसेप घाट की ओर दौडे जाते थे। बालक अपनी अवस्था को विस्मृत कर और खेल कुतूहल छोड़ उस मानव-प्रवाह मे बहे जाते थे, वृद्ध लोग भी अपने चिरासन को छोड़ लकुट हाथ मे, शरीर काँपते हुए उन के अनुसरण चले।—स्त्री बेचारी कुलमर्याद-सीमा-परिबद्ध उद्विग्न चित्त होकर खिडकियो पर बैठी युगल नेत्र प्रसारनपूर्वक अपने हितैषी, परमविद्याशाली और परम गुणवान उपराज के मृतक शरीर के आगमन की मार्ग प्रतीक्षा करती थी। मार्ग मे गाड़ियो की श्रेणी बँध गई थी, नदी मे सपूर्ण नौकाओ के पताका युक्त मस्तूल झुक रहे थे, मानो सब सिर पटक पटक कर रो रहे हैं। दुर्ग से सेना धीरे धीरे आई और गवर्नमेन्ट हाउस से उक्त घाट पर्यंत श्रेणीबद्ध होकर खड़ी हुई और प्रत्येक वर्ग के पुरुष समुचित स्थान पर खडे थे। एक सन्नाटा बँध गया था कि पौने पाँच बजे घाट पर से एक शतघ्नी (तोप) का शब्द हुआ और उसका प्रतिउत्तर दुर्ग और कानी नाम नौका पर से हुआ। बाजावालो ने बडी सावधानी से अपने अपने वाद्य यत्रो को उठाया और कलकत्ते के वालंटियर्स लोग आगे बढ़े। एक तोप की गाड़ी पर इगलैंड के राजकीय पताका से आच्छादित श्रीमान् गवर्नर जेनरल का मृतक शरीर शव-

यात्रा के आगे हुआ। उस समय लोगों के चित्त पर कैसा शोच छा गया था उसका वर्णन नहीं हो सकता। ऐसा कौन पाहनचित्त होगा जिसका हृदय उस श्रीमान् के चचल अश्व को देखकर उस समय विदीर्ण न हुआ होगा। उस के नेत्र से भी अश्रुधारा प्रवाहित होती थी। हा! अब उस घोड़े का चढनेवाला इस ससार मे नहीं है। उस से भी शोकजनक श्रीमान् के प्रिय पुत्र की दशा थी जो कि विषन्नवदन, अधोमुख, सजलनयन, बाल खोले अपने दोनों चचा के साथ पिता के मृतक शरीर के साथ चलते थे। हा ! ऐसी वयस मे उन्हे ऐसी विपद पडी। परमेश्वर बड़ा विषमदर्शी दीख पड़ता है। वैसे ही मेजर बर्न भी देखे जाते थे। शोक से आँखे लाल और डबडबाई हुई थीं और अनाथ की भाँति अपने स्वामी वरन् उस मित्र के शोक मे आतुर थे, जिनने उन्हे अत मे पुकारा और मरण समय उन्हीं का नाम लिया। हा! यह यात्रा निम्नलिखित रीति पर गवर्नमेट हाउस मे पहुँची। क्वार्टर मास्टर जेनरल के विभाग का एक अश्वारोही अफसर, फर्स्ट बगाल केवलरी (अश्वरोही सेना) का एक भाग, कलकत्ते के वालटीयर्स की रैफल पलटन अस्त्र उलटा लिए हुए और श्री महाराणी की १४ वीं रेजिमेट का शोकसूचक बाजा बजता हुआ।

श्रीमान् का बाजा
बॉडी गार्ड (शरीररक्षक) पैदल
दुर्ग और कथीड्रल गिरजा के पादरी श्रीमान् के चापलेन
डाक्टर जे. फेअरर सी. एस. आई., करनेल जी. डिलेन कमांडिग

बाडी गार्ड
क. एफ. एच. ग्रेगरी
एडीकॉग
डाक्टर ओ. बर्नेट
के. एच. वी. लॉकउड एडीकॉग
क. टी. एम जोन्स आर. एन.
एल. टी. डीन
क. आर. एच. ग्रांट एडिकांग

श्रीमान् का
मृतक शरीर
एक तोप की गाड़ी पर

सुबादार मेजर और सरदार बहादुर शिवबख्श अवस्ती

एडिकांग

क. सी. एल. सी. डी रोवक

एडिकांग

ले. सी. हाकिन्स आर. एन.

मेजर ओ. टी. बर्न प्राईवेट सेक्रेटरी।

मुख्य शोक प्रकाशक।

आनरेब्ल आर. बोर्क, आनरएब्ल टी. बोर्क, मेजर बोर्क।

श्रीमान् का विश्वासपात्र क्लर्क वा लेखक।

श्रीमान् के सेवक।

श्रीमान् के पलटन के अफसर।

श्रीमान् के एतद्देशीय सेवक।

माझी नौकास्थ लोग और ग्लासगो और डाफनी नाम नौका का तोपखाना।

उक्त नौकाओ के अफसर।

अस्मिन् कालिक गवर्नर-जेनरल।

बगाल के लेफ्टिनेन्ट-गवर्नर और श्रीमान् कमांडर-इन-चीफ।

बगाल के चीफ जस्टिस, कलकत्ते के लॉर्ड बिशप, आर्क बिशप और पश्चिम बगाल के विकार अपॉस्टोलिक।

श्रीमान् गवर्नर-जेनरल के सभा के सभासद्।

कलकत्ते के पुइन जज्ज।

सभा के अधिक सभासद्।

एतद्देशीय राजे।

कन्सल्स जेनरल। बरमा के चीफ कमिश्नर।

अन्य देशो के कन्सल एजेन्ट।

गवर्नमेन्ट के सेक्रेटरी।

इन के पीछे और बहुत से लोग पलटन के अफसर इत्यादि और लेफ्टिनेन्ट गवर्नर के साथ के लोग थे।

बद कर दिया और बीस बीस मिनट पर किले से शोक सूचक तोप छूटी और नगर मे एक दिन तक सब काम बद रहा। सुना है कि महाराज कलकत्ते जायगे। पटियाला के महाराज ने एक शोकसूचक इश्तिहार प्रकाशित किया और अपने दर्बारियो को आज्ञा दिया कि शोक का वस्त्र पहिरे। महाराज कपूरथला ने भी ऐसा ही किया और अवध अजुमन के सेक्रेटरी को एक पत्र भेजा कि उन के स्मरणार्थ उद्योग करै। कलकत्ते की दशा तो लिखने के योग्य ही नहीं है, न ऐसा कभी पूर्व मे हुआ था और न ईश्वर करै होय। वसंत पचमी का नाच गान सब बद हो गया और नगर मे दूकाने सब कई दिन तक बद रहीं, बरात नहीं निकली, कई लग्न टाल दिए गए। वहॉ के जस्टिस आफ दि पीस लोग मिल कर एक शोकपत्र श्री लेडी म्यो को देने वाले है और भी अनेक शोकसूचक कृत्य हो रहे है। बबई मे भी सब दूकाने बद हो गईं और सब कारखाने बद हो गए। बनारस मे भी इस समाचार के आने से कई स्कूल बद हो गए और कई शोकसूचक कमेटियॉ हुईं। बबई मे फरासीस, इटली और प्रशिया इत्यादि देशो के राजदूतो ने अपनी कोठियो के राज के झडे आधे गिरा दिये और सब मिल कर शोक का वस्त्र पहिन कर वहॉ के गवर्नर के पास गए थे और वहॉ सब लोगो ने शोक भरी वार्त्ता किया और उस के उत्तर मे लाट साहिब ने भी एक सुरस भाषण किया। हा ! ईश्वर फिर यह दिन न लावे ! !

उस चाडाल दुष्ट हत्यारे शेरअली के विषय मे फ्रेंड आफ इ डिया के संपादक से हम पर्ण सम्मति करते हैं। निस्सदेह उस दुष्ट को केवल प्राण दड देना तो उस की मुँह मॉगी बात देनी है, क्योकि मरने से डरता तो ऐसा कर्म न करता। सपादक महाशय लिखते हैं कि ये दुष्ट प्राण से प्रतिष्ठा और धर्म को विशेष मानते है इस से ऐसा करना चाहिये जिस मे इन दुष्टो का मुख भंग हो और धर्म और प्रतिष्ठा दोनो को हानि पहुँचे। वह लिखते है (और बहुत ठीक लिखते हैं, अवश्य ऐसा ही वरन् इस से बढ़ कर होना चाहिये) कि उस के प्राण अभी न लिये जाय और उसे खाने को वह वस्तु मिलै जो "हराम" हैं और वस्त्र के स्थान पर उस को सूअर के चर्म की टोपी और कुरता पहिनाया जाय। यावच्छक्ति उस को दुःख और अनादर दिया जाय। ऐसे नीच

के विषय मे जितनी निर्दयता की जाय सब थोड़ी है और ऐसे समय हमलोगो को कानून छप्पर पर रखना चाहिए और उस को भरपूर दुःख देना चाहिये।

श्रीमान् लार्ड म्यो स्वर्गवासी के मरने का शोक जैसा विद्वानो की मंडली मे हुआ वैसा सर्वसाधारण मे नहीं हुआ। इस मे कोई संदेह नहीं कि एक बेर जिस ने यह समाचार सुना घबड़ा गया, पर तादृश लोग शोकाक्रांत न हो गए इस का मुख्य कारण यह है कि लोगो मे राजभक्ति नहीं है। निस्सदेह किसी समय मे हिंदुस्तान के लोग ऐसे राजभक्त थे कि राजा को साक्षात् ईश्वर की भाँति मानते और पूजते थे, परतु मुसल्मानो के अत्याचार से यह राजभक्ति हिदुओ से निकल गई। राजभक्ति क्या इन दुष्टो के पीछे सभी कुछ निकल गया, विद्या ही का वैसा आदर न रहा। अब हिंदुस्तान मे तीन बात का बड़ा घाटा है–वह यह है कि लोग विद्या, स्त्री, राजा का तादृश स्वरूप ज्ञान पूर्वक आदर नहीं करते। विद्या को केवल एक जीविका की वस्तु समझते हैं। वैसे ही स्त्री को केवल काम शांत्यर्थ वा घर की सेवा करने वाली मात्र जानते हैं। उसी भाँति राजा को भी केवल इतना जानते हैं कि वह मुझ से बलवान है और हम उस के वश मे हैं। राजा का और अपना संबध नहीं जानते और यह नहीं समझते कि भगवान की ओर से वह हम लोगो के सुख दुख का साथी नियत हुआ है, इस से हम भी उस के सुख दु:ख के साथी हैं।

हम आशा रखते हैं कि श्रीमान् गवर्नरजेनरल बहादुर के अकाल मृत्यु का समाचार अब सब को भली भाँति पहुँच गया। हम लोगों ने जिस समय यह सवाद सुना शरीर शिथिलेंद्रिय और वाक्य-शून्य हो गया। यदि कोई आकर कहे कि चद्रमा मे आग लगी है तो कभी विश्वास न होगा। उसी प्रकार भरतखड के उपराज का एक कैदी के हाथ से मारा जाना किसी समय मे एकाएकी ग्राह्य नहीं हो सकता। हाय! देश को कैसा दुःख हुआ! अभी वे ब्रह्म देश की यात्रा कर के अडमन्स नाम द्वीपस्थित दुखियो के सहायार्थ उपाय करने को जाते थे और वहाँ ऐसी घटना उपस्थित हुई। चीफ जस्टिस नारमन का मरण

भूलने न पाया और एक उस से भी विशेष उपद्रव हुआ और फिर भी मुसल्मान के हाथ से। यद्यपि कई अग्रेजी समाचार पत्र सपादको ने लिखा है कि जो कारण नारमन साहेब के मारने का था सो श्रीमान् के घात का कारण नहीं हो सकता, परतु इस मे हमारी सम्मति नहीं है। क्योकि यदि शेरअली के मन यह बात पहिले से ठनी न होती तो वह ऐसे निर्जन स्थान मे छुरी ले कर छिपा क्यो बैठा रहता। फिर एक दूसरे कैदी के "इजहार" से स्पष्ट ज्ञात होता है। जिस समय शेरअली ने अब्दुल्ला के और नारमन साहेब के मरण का समाचार सुना कैसा प्रसन्न हुआ और लोगो का निमत्रण किया। यदि वह उस वर्ग का न होता जो कि तन मन से चाहते है कि सरकार "काफिर" है इस लिये उस के बड़े बड़े अधिकारियो के मारने से बड़ा "सवाब" होता है। प्रसन्नता और निमत्रण का क्या कारण था? फिर वह स्वतः कहता है कि अपने मरण के पूर्व मै एक बात कहूँगा। वह कौन सी बात हो सकती है! इन सब विषयो को भली भॉति दृढ़ कर के तब उस को फॉसी देना उचित है।

—०—

१५. लार्ड लारेन्स

सन् १८११ ई० ४ मार्च को उक्त महात्मा ने जन्म ग्रहण किया था। उन्हो ने पहिले कुछ दिन वर्ड लण्डन डेरी के काथेल कालिज* मे शिक्षा लाभ की थी, बाद उस के हेलिवार कालिज† मे पढ़ने लगे। १८२६ ई० मे सिविलियन हो कर भारतवर्ष मे आए। १८३१ ई० मे दिल्ली के रेज़िडेण्ट और चीफ कमिश्नर के सहकारी हुए। १८३२ ई० मे प्रतिनिधि मजिस्टर और कलक्टर हुए। १८३४ ई० मे पानीपत के

* लदनडेरी के अतर्गत ब्रिस्टल का फॉयल कालेज। (स.)

† रैक्सौल हॉल हेलेबेरी। (स.)

प्रतिनिधि मजिस्टर हो के गए। दो बरस के बाद गुड़गाँव के एजेण्ट मजिस्टर और डिपटी कलक्टर हुए। कई एक वर्षों के बाद दिल्ली के मजिस्टर हुए। उस समय यहाँ के गवर्नरजेनरल सर हेनरी हारडिङ्ग थे। उन्हो ने इन की चमत्कार राजनीति देख कर इन को शतद्रु तीरस्थ प्रदेशो का कमिश्नर कर के भेज दिया। १८४८ ई० मे लारेन्स लाहौर के रेज़िडेण्ट के प्रतिनिधि हुए। सिक्खो की दूसरी लड़ाई के बाद डल-हौसी ने पजाब शासन करने के लिये एक एडमिनिस्ट्रेशन बोर्ड स्थापन किया। उस मे यह और इन के बडे भाई सर हेनरी लारेन्स, चार्ल्स और मानसेल सभ्य नियुक्त हुए। इन दोनो भाइयो ने राज्य शासन संबध मे अति उत्तम क्षमता और निपुणता दिखाई।❋ जॉन लारेन्स ने १८५७ ई० के गदर मे अपनी अद्भुत शक्ति के प्रभाव से पजाब को शांत रक्खा था, इसी लिये आज तक भारत साम्राज्य अव्याहत है। उस समय लारेन्स पजाब के चीफ कमिश्नर थे। १८५६ ई० मे लारेन्स को के. सी बी की उपाधि मिली और बाद ही इन को जी सी बी की भी उपाधि मिली थी। १८५८ ई० मे यह महाराज बारनट हो कर प्रीवी कौसिल के सभ्य हुए। १८६३ ई० के डिसेम्बर महीने मे भारतवर्ष के गवर्नर-जेनरल हो कर लार्ड एलगिन के उत्तराधिकारी हुए। १८६६ ई० के मार्च महीने मे यह लार्ड उपाधि प्राप्त हो कर पार्लियामेण्ट मे सभ्य हुए। लार्ड लारेन्स का धर्म विषय मे विशेष अनुराग था। इन्हो ने भारतवर्ष के गवर्नमेंट स्कूल समूहो मे बाइब्ल पढाने का प्रस्ताव किया था। और और भी विशेष गुण इन मे थे। आज कल यह पार्लियामेण्ट मे भारतवर्ष सबधी विषयो की चर्चा विशेष करने लगे थे। जिस मे भारतवर्ष का मगल हो, इन की यही इच्छा और चेष्टा रहती थी। ऐसे हितकारी मित्र को खोकर जो भारतवर्ष शोकाकुल न होगा, यह कहना बाहुल्य है। उन के सन्मानार्थ १ जुलाई को कलकत्ता के किले का निशान गिरा था और

❋ सन् १८५३ ई० में बोर्ड टूट गया और यह चीफ कमिश्नर नियत हुए। सन् १८५९ ई० मे पजाब के प्रथम लेफटिनेट गवनर हुए। (स०)

३१ तोपे दागी गई थीं। लार्ड हेस्टिंग्स के बाद और किसी का ऐसा सम्मान नहीं किया गया था। वेस्टमिनिस्टर ऐबे मे इन को समाधि दी गई है।*

—❀—

१६. महाराजाधिराज जार

ता० १३ मार्च (१८८१ ई०) रविवार के दिन रूस के शाहनशाह जार राजकीय गाडी मे बैठकर भजन मंदिर से अपने भवन में जाते थे कि इस बीच मे किसी दुष्ट ने कुलफीदार गोला उन की गाड़ी के नीचे फेका, परतु वार खाली गया। तब दूसरा फेका। इस बेर गोला फूट गया और उस के भीतर की बारूद और गोलियो ने चारा ओर उड़ कर गाडी को विध्वस किया। और जार के पैरो का पता न लगा। केवल दो घण्टा प्राण रहा, पश्चात् शाहनशाह रूस पचत्व को प्राप्त हुए। इस गोले ने कई मनुष्यों का प्राण लिया। इस दुष्ट घातक के पकड़ने का शोध हुआ और पकडा गया। इस की अवस्था केवल २१ वष की है, नाम इस का रोसा काफ है। यह खनन विद्या मे निपुण है। पहले तो इस दुष्ट ने अपते अपराध को अस्वीकार कर के बचाव किया था, पर यह गुप्तभाव कब छिपे। अत मे इस ने सब कुछ अपने मुख से प्रगट किया। इस घोर विपत्ति से रूस मे हाहाकार मचा है। यूरोप के लोगो को भी बडा दु.ख हुआ है। राजकुमार जारविच् रूसी राज्य के उत्तराधिकारी अपने पिता के पद पर नियुक्त हुए और उन का राजकीय नाम "तृतीय एलेक्जैंडर" रक्खा गया है। ड्यूक आफ एडिम्बरा सपत्नीक सेंटपीटर्सबर्ग मे गये है। इगलैंड मे इस मास भर अधिकारी लोग शोचसूचक वस्त्र धारण करेंगे। हाउस आफ कामस और लार्ड्स की तरफ से दु:ख सात्वन पत्र भेजे जायगे। निहिलिस्ट लोग इस दुष्ट कर्म के करने मे बहुत दिन से लगे हुए थे और कई बेर

* २७ जून सन् १८७६ ई० को इनकी मृत्यु हुई थी। (स०)

जो नहीं सो कर चुके थे पर शाहनशाह की आयुष्य थी, इस से इनका यत्न पूरा नहीं होता था। अब की इन्होने अपना दुष्ट सकल्प पूरा किया। शाहनशाह रूस जैसे शूर और पराक्रमी थे सो समस्त भूमडल मे प्रख्यात ही है।

इस महान् व्यक्ति का जन्म सन् १८१८ मे हुआ। उस समय इन के चाचा अलेक्ज़ाडर प्रथम रूस के राजसिहासन पर थे।* इन की पूरी सात वर्ष की अवस्था भी नहीं हुई थी कि इन के चाचा साहब स्वर्गवासी हुए। मृत अलेक्ज़ाडर के भाई कास्टेटाइन ने राज्य के भार से मुख मोड़ लिया था, इस कारण ज़ार के पिता निकोलस को गद्दी मिली† और ये युवराज हुए। इस के अनतर रूसी सैनिक लोगो मे बलवा उत्पन्न हुआ और वह कई दिन तक रहा। इन बलवाइयो का नाम "डेकाब्रिस्टस" था और ये लोग राजकीय कुटुब के पूर्ण शत्रु थे। इन का यह सकल्प था कि जैसे जर्मनी के छोटे छोटे हिस्से हो गए है, वैसे ही इस राज्य के भी हो जावे। परतु बहुत सी अन्य प्रामाणिक सैन्य समूह ने प्रथम निकोलस को इन के पराजय करने मे बड़ी ही सहायता दी, जिस से इन का दुष्ट सकल्प निर्मूल हो गया। सन् १८२५ मे राजकीय व्यवस्था भली भॉति स्थापित करके निकोलस अपनी इच्छानुसार राज करने लगे। ज़ार की माता प्रुशिया के सम्राट् तृतीय फ्रेडरिक की कन्या थीं। इन्हो ने स्वय अपने लड़के ज़ार को विद्या सिखाई, परंतु इस बात से इन के पिता अप्रसन्न रहते थे। उन्हो ने ज़ार को फौजी गवर्नरो और निपुण शिक्षको के पास विद्योपार्जन के निमित्त बैठाया। इस बात को ज़ार ने अनहित समझ अपने को उस शिक्षा से हटाया और देश देश पर्यटन करने लगे और कुछ काल तक अपनी माता की सबंधिनी स्त्रियो के सहवासी रहे। ये राजकीय प्रबधो से बहुत प्रसन्न रहते थे। सैनिक कामो मे इन का मन

* अलेक्ज़ेडर प्रथम सन् १८०१ ई० के मार्च मे गद्दी पर बैठे और सन् १८२५ ई० में मरे। (स०)

† यह सन् १८२५ ई० में गद्दी पर बैठे और २ मार्च सन् १८५५ ई० में मरे। (स०)

कुछ भी नहीं लगता, जो बात रूसी राज दरबार के सपूर्ण विरुद्ध थी। इस विषय मे पूर्ण चितना और यह कल्पना होने लगी कि इस युवराज के अधिकार मे पुराने रूसी समूह क्योकर रहने पावेगे। यह बात इन के भाई ग्रांडड्यूक कास्टेन्टाइन के लिये परमोपयोगी थी। इन दोनो भाइयो मे इस कारण ईर्षा उत्पन्न हुई। सामान्यत: इस बात की चर्चा होने लगी और कभी कभी लडाई भी हो जाती थी।

एक समय की बात है कि इन के भाई कस्टेन्टाइन ने जो समुद्रीय सेना के एडमिरल थे, इतनी अधिक शत्रुता इन पर की कि ये कैद कर लिए गए। इस व्यवहार के पल्टे निकोलस ने यही दड देना कम्टेन्टाइन को योग्य समझा। इस आपुस के विरोध से इनके पिता को बड़ा शोच रहता था। जब कि सन् १८४२ मे अलेक्जैंडर का प्रथम पुत्र जन्मा तब निकोलस ने कास्टेन्टाइन से शपथ ली कि वह युवराज का आज्ञाकारी रहेगा। निदान निकोलस ने अपने मरने के समय दोनो लड़को को बुलाकर उन के समक्ष अलैक्जैंडर को राज्याधिकार का तिलक दे दिया और इन दोनो से शपथ ली कि आपुस मे विरोध रहित राज्य प्रबध मे सन्नद्ध रहें, जिस से प्रजा और राज्य को हानि न पहुँचे। यह सुन शाहजादे ने बड़े बडे प्रधान मत्रियो के सन्मुख प्रतिज्ञा की कि राज्य प्रबध हम भलीभॉति करेंगे और अपने को द्वितीय अलेजैंडर के नाम से विख्यात किया। उसी दिन अपराह्न समय सब राजकीय और सैनिक कर्मचारियो ने जो सेन्टपीटर्सबर्ग मे थे आज्ञाकारिता स्वीकार की और भेंटे दीं। एक कौंसिल जो नवीन अलेक्जेंडर के लिए नियत हुई थी उस में यह विचार ठहरा कि जो युद्ध उस से और अन्य राजो से हो रहा है वह हुआ करे। अलेक्जैंडर का प्रथम काम यह था कि उस ने समग्र राज्यभर मे अपने नाम और राज्यसिहासन पर स्थित होने का विज्ञापन दिया और उस मे यह आशय प्रगट किया कि मुख्य अभिप्राय मेरा यह है कि जिस प्रकार से पीटर, कैथराइन, अलेक्जेंडर प्रथम के समय से राज्य की प्रभा और वैभव बढती आई है वैसी ही बढा करे। जेनरल रूडीगर को वास नामक स्थान से बुलाकर राजकीयगार्ड की कमान दी और अपनी शान, शौकत के मुआफिक सेना भरती की, वाणिज्य की उन्नति मे भी बड़ी चेष्टा की। राज्य मे बहुत से

गुलाम जो सरदार लोगो के पास थे उनमे से २३०००००० गुलामों को दासत्व भाव से मुक्त कराया। यही नहीं वरन् उन को पेट भरने का उद्योग भी बतला दिया। निस्सदेह यह काम जार का, जो सन् १८६१ मे हुआ था, अत्यत प्रशसा के योग्य है। इन्हो ने सरकारी कालेज स्थापित किए। देश देश मे सभा नियत कराई। फेब्रुअरी सन् १८६८ मे पोलैंड के लौडी गुलामो को भी स्वाधीन किया। इस के करने का अभिप्राय यह था कि पोलैंड के सरदारो का ऐश्वर्य्य न्यून हो जाय, क्योकि पूर्व मे उस भूमि के स्वामी वेही लोग थे। जार की विद्याविभाग की ओर दृष्टि इतनी अधिक बढी थी कि उन्होने यूरप के कालिजो के समान अपनी राजकीय पाठशाला मे बडे बडे पद स्थापित किए थे और यह प्रबध बडा ही उत्तम था कि प्रत्येक सूबे की ओर से मेबर भरती होते थे। इन की सभा प्रथम सन् १८६५ मे हुई थी, जिस से बहुत कुछ उपकार के पलटे अपकार की सभावना भी हुई। जार ने अपनी प्रजा को युद्ध विद्या मे बहुत निपुण किया और राज्य मे पचायती कोर्ट न्याय करने को स्थापित कर दिए। सन् १८६६ मे इन्हो ने बुखारे के अमीर से लडाई प्रारभ की, जो डेढ़ वर्ष तक होती रही। इस मे रूसी लोग विजयी हुए और समरकद पर अपना अधिकार जमा लिया। सन् १८६८ मे जार ने अपना अमेरिका प्रदेश यूनाइटेड स्टेट्स की गवर्नमेन्ट अमेरिका के हाथ १४०००००) रुपये को बेच दिया। जब फ्रेंच और जर्मन मे लडाई होने लगी और जर्मन लोगो ने पैरिस नामक स्थान को घेर लिया तब जार ने सन् १८५६ के सधिपत्र को (जिस से बल्पकसी की सीमा बाँधी गई थी) मानना अगीकार किया। इस से बडे बडे राष्ट्रो को बडी कठिनता देख पड़ने लगी। सन् १८७१ मे इस निमित्त एक कान्फरेन्स हुआ, जिस मे जार के इच्छानुरूप संधिपत्र स्थापित हुआ। सन् १८७२ मे जब जार बर्लिन नगर को गए तो जर्मन और ऑस्ट्रिया के सम्राट् से भेट किया। ये दोनो महाराज सेन्टपीटर्सबर्ग मे थे। शाहनशाह की भेट के लिए निमत्रित होकर आए थे। उस अवसर मे बडा उत्सव हुआ था। सन् १८७३ मे जेनरल कॉफमैन ने खीवा को अधिकार में लाकर इस का कुछ खड रूसी महाराज्य मे जोडा था। सन् १८७४ मे इन्हो ने अपने

राज्य के चारो ओर पर्यटन किया। जहाँ जहाँ इन का गमन होता था वहाँ वहाँ की प्रजा बड़ी धूम धाम से इनका आदर सन्मान करती थी। सन् १८७५ मे इनके जेनरल कॉफमैन ने कोखद नामक स्थान को सर किया और सब्ज दरिया का उत्तर भाग अपने अधिकार मे करके मस्कविट के राज्य को मिला लिया। सन् १८७६ मे जब टर्की और सर्विया के बीच मे युद्ध प्रारभ हुआ, उनमे इन्होंने कुछ स्वय सहायता किसी को नहीं की। हाँ, रूसी लोग सर्विया की सैन्य समूह मे गए थे। जब तुर्क लोगो ने अलेक्जिनाक को फत कर लिया उस समय कुस्तुन्तुनिया मे रहने वाले वकील ने सुल्तान को छ सप्ताह तक युद्ध बद करने के लिए एक निवेदनपत्र प्रदर्शित किया था, जिसे सुल्तान ने मान्य किया। सन् १८७७ मे टर्की और सर्विया के मध्य एक सधिपत्र हुआ और इसी वर्ष मे यूरप के सब राजों के वकीलो का कुस्तुन्तुनिया मे कान्फरेस हुआ था, उस मे जो व्यवस्था नियत हुई सो टर्की के सुल्तान को माननीय न हुई, इस कारण जार ने टर्की से लड़ने का उद्देश प्रगट किया। इस युद्ध मे तुर्क लोग बड़ी शूरता से लडे, परंतु तुर्की लोग पराजित हुए।

उस समय रूसी सेना कुस्तुन्तुनिया के द्वार तक पहुची थी। सन् १८७८ ता० १६ फेब्रुअरी को एक सधिपत्र स्थान स्टेफेनो मे हुआ, जिस के नियम वर्लिन के कान्फरेस मे कुछ परिवर्तन हुए थे। जार का चित्त सर्वदा धर्म विषय मे लगा रहता था, इसी कारण ये सब भजनमदिरो के अध्यक्ष हुए थे, परतु ये रोमनकैथलिक चच से द्वेष रखते थे। जार के ऊपर दो मारण-प्रयोग हुए—प्रथम सन् १८६६ ता० १६ एप्रिल को ज्योंहीं ये गाडी पर सवार होते थे कि एक काराकोजोव विद्यार्थी ने गोली चलाई, परतु एक कारीगर ने उसी क्षण अपने बुद्धिबल से उस विद्यार्थी के हाथ को फेर दिया, इस कारण निशाना उस का खाली गया।

इस बात को देखकर जार ने उस कारीगर कामिसरोफ नामक को उच्च पदवी का सरदार बनाया। द्वितीय सन् १८६७ मे ता० ६ जून को पारिस मे पोल जाति के बरेजोवास्की नामक पुरुष ने इन पर गोली चलाई थी, उस समय जार अपने दोनो पुत्र और शाहनशाह नेपोलियन

के साथ गाड़ी मे बैठे थे। परंतु कुशल हुई, कि गोली किसी को न लगी केवल एक अर्दली सवार का घोड़ा जख्मी हुआ। दूसरी गोली वह दुष्ट छोडता ही था कि बदूक की नली फट गई और उसी के हाथ मे जा लगी। जार का विवाह ता० २८ एप्रिल सन् १८४१ मे हेंस की राजकन्या मेरिया एलेक्जांड्रोविना से हुआ, जिससे सतति बहुत हुई। ज्येष्ठ पुत्र स्वर्गवासी निकोलस का जन्म ता० २२ सेप्टेम्बर सन् १८४३ मे हुआ था जो सन् १८६५ मे मृत्यु के वश हुआ। द्वितीय पुत्र एलेग्जेंडर ता० १० मार्च सन् १८४५ मे जन्मे और उन का विवाह ता० ६ नवम्बर सन् १८६६ मे डेनमार्क की राजकन्या मेरिया फेडोरविना से हुआ। इन की राजकन्या डचेज मेरी का विवाह ता० २३ जनवरी सन् १८७४ मे इगलैंड के राजकुमार ड्यूक आफ एडिम्बरा से हुआ।

Francis I King of France.

इन का जन्म सन् १४६४ सेप्टेम्बर की १२ वीं तारीख को दो पहर बाद १० घटा ३७ मिनट पर। जन्मदेश का अक्षांश याम्य ४८ अंश, उस समय दशम का विषुवाश ३३ अश ४८ कला, दशम लग्न ११ राशि ६ अश, जन्म लग्न ३ राशि ५ अश ५६ कला।

सायनाः स्पष्ट ग्रहाः।

र०	च०	बु०	शु०	म०	गु०	श०	ग्रहाः
५	१०	६	४	४	५	११	रा०
२८	२७	१६	१५	२३	२३	१०	अ०
३६	३०	१०	५०	१५	५४	२२	क०

दक्षिण चन्द्र क्रातिः १० अश २ कला। दक्षिण शनिक्रांतिः ६ अश ४३ कला।

जन्म कुंडली ।

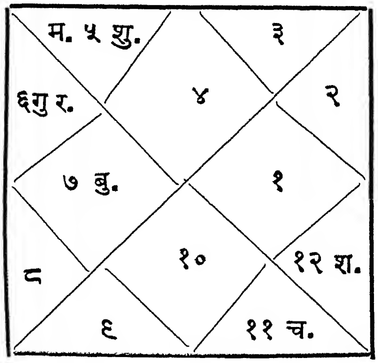

Charles V Emperor of Germany.

इन का जन्म सन् १५०० फेब्रुअरी की चौबीसवीं तारीख आधी-रात के बाद २ घन्टा ३९ मिन्ट । जन्मस्थान का अक्षांश याम्य ५२ अंश । उस समय दशम का विषुवांश २२० अंश, दशम लग्न ७ राशि १२ अंश २७ कला, जन्म लग्न ९ राशि ५ अंश ४४ कला ।

सायनाः स्पष्ट ग्रहाः ।

र०	चं०	बु०	शु०	म०	गु०	श०	ग्रहाः
११	९	११	११	१	११	१	रा०
१४	६	१९	२६	२४	७	१७	अ०
३०	४५	३६	४०	४०	२९	३७	क०

जन्म कुंडली।

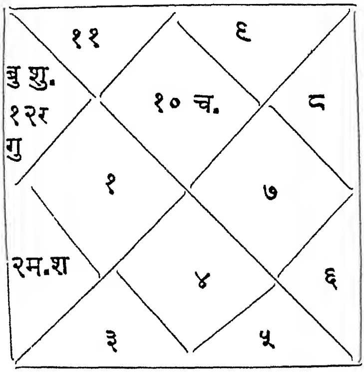

Napoleon III Emperor of France

इन का जन्म सन् १८०८ एप्रिल की २० वीं तारीख की आधीरात के बाद १ घटा पर। जन्मस्थान प्यारिस, दशम का विषुवांश २२२ अंश ५६ कला, दशम लग्न ७ राशि १५ अंश २४ कला, जन्म लग्न ६ राशि १ अंश २४ कला।

सायनाः स्पष्ट ग्रहाः संक्रांतयः ।

र०	च०	बु०	शु०	म०	गु०	श०	उर्नस	ग्रहा.
०	१०	०	०	०	११	७	७	रा०
२९	२६	२	२	२९	९	२०	३	अं०
४५	२९	३२	२	५३	२४	२४	८	क०
क्रा ३	क्रा ६	क्रा ६	क्रा ६	क्रा ३	क्रा ६	क्रा ६	क्रा ६	
११	७	१	०	११	८	१५	१२	अं०
२४	४६	१८	३८	७	५५	२८	३	क०

जन्म कुंडली ।

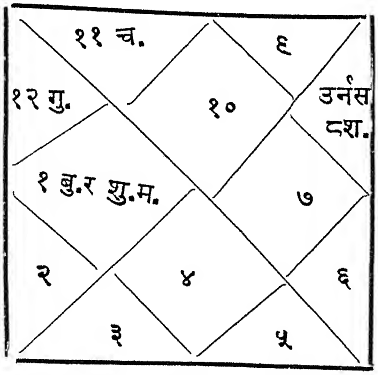

Frederic William V Emperor of Germany

इन का जन्म सन् १७९७ मार्च की २२ वीं तारीख को दो पहर के बाद दो बजे पर। जन्मस्थान बर्लिन, दशम का विषुवांश ३० अंश ३०

कला ४४ विकला, दशम लग्न १ राशि २ अंश ३३ कला, जन्म लग्न ४ राशि १८ अंश ५१ कला।

सायनाः स्पष्ट ग्रहाः संक्रांतयः।

र०	च०	बु०	शु०	म०	गु०	श०	उर्नस	ग्रहाः
०	६	११	११	१	११	२	५	रा०
२	२५	७	१४	१५	२७	२१	६	अ०
२५	२४	२२	५२	२८	३६	४८	५६	क०
क्रा ३	क्रा ६	क्रा ६	क्रा ६	क्रा ३	क्रा ६	क्रा ३	क्रा ३	
०	२३	१०	७	१७	१	२२	८	अ०
५८	३०	४६	१६	२	५६	१२	३५	क०

जन्म कुंडली।

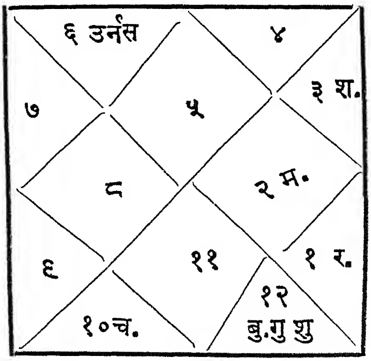

महाराज मल्हार राव की जन्म कुण्डली

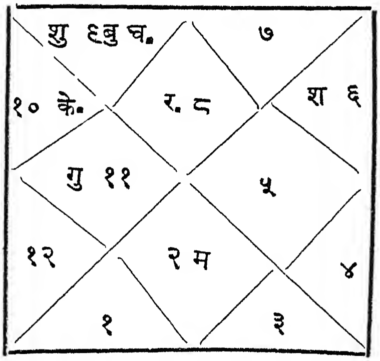

महाराज के प्रस्तुत दशा का का कारण लग्नेश ७, भौम है दशमेश रवि १ तनु भावि दोनो का परस्पर दृष्टि योग है।

लग्नकर्माधिनेतारौ अन्योन्याश्रयि सम्थितौ ।
राजयोगावितिप्रोक्तौ विख्यातौविजयीभवेत् ॥ १ ॥

टीपू सुल्तान की जन्म कुण्डली ।

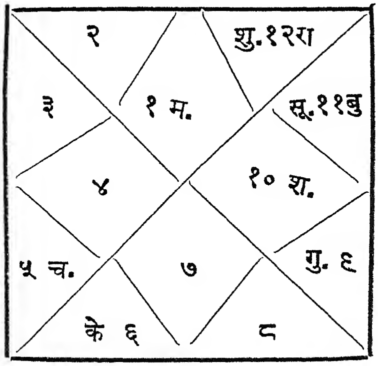

सिकन्दर की जन्म कुण्डली।

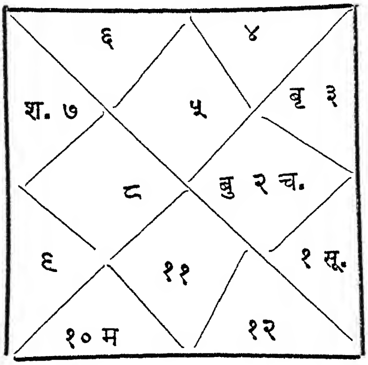

रावण की जन्म कुंडली।

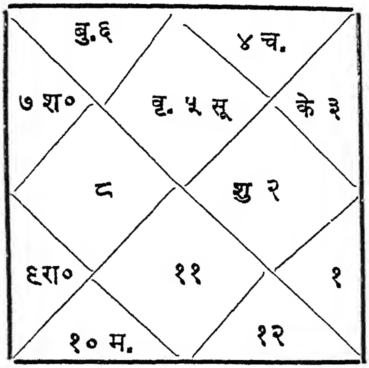

—❀—

पुरावृत्त-संग्रह

स० १६३२-३

सब लेख सन् १८७२-७४ के तथा
एक सन् १८८२ का विभिन्न
पत्रिकाओं में प्रकाशित
होने पर सगृहीत
हुआ।

पुरावृत्त-संग्रह

—❀—

[इस प्रबध मे प्राचीन पुस्तके तथा राजा, बादशाह आदि के वृत्त और आरभ मे सर्कारी अमलदारी की दशा जो कुछ हाथ लगेगी प्रकाशित होगी ।]

१. अकबर और औरंगजेब

काशी मे राजा पटनीमल्ल बहादुर अग्रवाल कुलके भूषण हो गए है। इन के उद्योग, अध्यवसाय, साहस, धर्मनिष्ठा, गभीर गवेषणा, बुद्धि और अपूर्व औदार्य सभी गुण प्रशंसा के योग्य है। कई बेर राजविप्लव मे ऐसे लुट गए कि कुछ भी पास न रहा, किंतु अपने उद्योग से फिर करोडो की सपत्ति पैदा किया। गया, काशी, मथुरा, वैतरणी, किस तीर्थ मे इन के बनाए मदिर, घाट, तालाब आदि नहीं है। कर्मनाशा का पक्का पुल अद्यापि इन की अतुल कीर्त्ति का चिह्न वर्त्तमान है। फारसी विद्या के ये पारगत थे। काशीखड का संपूर्ण फारसी मे इन्होने स्वय अनुवाद किया है। और भी कई ग्रथो का हिंदी और फारसी मे इन्होने अनुवाद कराया था। वेद, स्मृति, पुराण, काव्य, कोष आदि विषय मात्र की पुस्तके इन्होने सग्रह की थीं। फारसी पुस्तको के सग्रह की तो कोई बात ही नहीं, अँगरेजी यद्यपि स्वय नहीं जानते थे किंतु

दस पद्रह हजार की पुस्तक अगरेजी भाषा की सग्रह की थीं और सब के ऊपर फारसी मे उस का नाम, विषय, कवि, मूल्य आदि का वृत्तात लिखा हुआ था। उनका सरस्वती भडार और औषधालय तीन लाख रुपये का समझा जाता था। किंतु हाय! वह अमूल्य भडार नष्ट हो गया। कीट, दीमक, छुईमुई, चूहे आदि उन अमूल्य ग्र थो को खा गए। उनके स्वकार्य निपुण छ पौत्र और अनेक प्रपौत्रो के होते भी यह अमूल्य सग्रह भस्मावशेष हो गया। मै ने दो बेर इस भडार का दर्शन किया था। रुपये का चार आना तो पहली ही बेर देखा था, दूसरी बेर एक आना मात्र बचा पाया। सो भी खडित छिन्न भिन्न। इस पुण्य-कीर्ति-उदार मनुष्य की उदारता और अध्यवसाय और उस के सगृहीत वस्तु की यह दुर्दशा देख कर मेरी छाती फट गई। इस्कन्दरिया का पुस्तकालय मानो अपनी आँखो से जला हुआ देख लिया। अस्तु! ईश्वर की यही गति है!! नाशान्ता. सचय' सर्वे!!!

उन के प्रपौत्र और अपने फुफेर भाई राय प्रह्लाद दास से कह कर उस संग्रह की भस्मावशिष्ट हड्डियो मे से मैं टूटे फूटे दस पाँच ग्रंथ ले आया हूँ। इन मे कुछ सर्कारी पुराने छपे हुए कागज और कुछ खडित पुस्तके हैं। इस प्रबध मे बहुत सी बात उन्हीं सबो मे से चुन कर लिखी जायँगी, इस हेतु उस सुगृहीतनामा महापुरुष का भी थोड़ा वृत्तांत लिखे बिना जी न माना।

प्रकृति मनुसरामः

मै ने बादशाहदर्पण नामक अपने छोटे इतिहास मे अकबर और औरगजेब की बुद्धि और स्वभाव का तारतम्य दिखलाया है। अब पूर्वोक्त राजा साहब की अगरेजी किताबो मे सन् १७८२ से लेकर १८०२ तक के जो पुराने एशियाटिक रिसर्चेज़ के नबर मिले है, उन मे जोधपुर के राजा जसवन सिह का वह पत्र भी मिला है जो उन्होने औरगजेब को लिखा था और श्रीयुक्त राजा शिवप्रसाद सी० एस०

आई० ने भी अपने इतिहास मे जिस का कुछ वर्णन किया है। तथा मेरे मित्र पंडित गणेश राम जी व्यास ने मुझ को कुछ पुस्तके प्राचीन दी है, उन मे महा कवि कालिदास के बनाए सेतुबंध काव्य की टीका मिली है, जिस मे कुछ अकबर का वर्णन है। इन दोनो को हम यहाँ प्रकाश करते हैं, जिस से पूर्वोक्त दोनो बादशाहो का स्पष्ट चित्त और विचार policy प्रकट हो जायगी।

यह टीका राजा रामदास कछवाहे* की बनाई है। अपना वंश उस ने यो लिखा है। कुलदेव को क्षेमराज, उन के पुत्र माणिक्य राय, फिर क्रम से मोकलराय, घोरराय, नापाराय (उन के पौत्र) पातलराय, खाना- राय, चंद्राराय और उदयराज हुए। इन्हीं उदयराज का पुत्र रामदास हुआ, जो सर्व भाव से अकबर का सेवक है। अकबर के विषय मे वह लिखता है.—

श्लोक।

आमेरोरासमुद्रादवति वसुमतीं यः प्रतापेन तावत्।
दूरे गा पाति मृत्योरपि करममुचत्तीर्थवाणिज्य वृत्योः।
अप्यश्रौषीत् पुराण जपति च दिनकृन्नाम योगं विधत्ते।
गङ्गाम्भोभिन्नमम्भो न च पिबति जयत्येषजल्लालुदीन्द्रः ॥ ३ ॥
अङ्ग-वङ्ग-कलिङ्ग-सिलिहट-तिपुरा-कामता-कामरूपा
नान्ध कर्णाट लाट द्रविड-मरहट द्वारका-चोल-पाण्ड्यान्।
भोटान्नं मारुवारोत्कलमलयखुरासानखान्धारजाम्बू ॥
काशा-काश्मार ढक्का बलक-बदखशा-काबिलान् य.प्रशास्ति ॥४॥
कलियुगमहिमाऽपचीयमानश्रुतिसुरभिद्विजधर्मरक्षणाच ।
वृतसगुणतन तमप्रमेय पुरुषमकव्वरशाहमानतोस्मि ॥ ५ ॥

अर्थ—जो समुद्र से मेरू तक पृथ्वी को पालता है, जो मृत्यु से गउओ की रक्षा करता है, जिस ने तीर्थ और व्यापार के कर छुड़ा दिए, जिस ने पुराण सुने, जो सूर्य्य का नाम जपता, जो योग धारण

* देखिए मुगल-दरबार भाग १ पृ० स० ३३५—८। (स०)

करता है और गगाजल छोड़ कर और पानी नहीं पीता उस जलालुद्दीन की जय ॥ ३ ॥

अग वग कलिग सिलहट तिपुरा कामता (कामटी ?) कामरूप अंध कर्णाटक लाट द्रविड महाराष्ट्र द्वारका चोल पाड्य भोट मारवाड़ उडीसा मलय खुरासान कदहार जम्बू काशी ढाका बलख बदख़शाँ और काबुल को जो शासन करता है ॥ ४ ॥

कलियुग की महिमा से घटते हुए वेद गऊ द्विज और धर्म की रक्षा को सगुण शरीर जिस ने धारण किया है उस अप्रमेय पुरुष अकबरशाह को हम नमस्कार करते है ॥ ५ ॥

पाठक गण ! अकबर की महिमा सुनी । यह किसी भाट की बनाई नहीं है, एक कट्टर कछवाहे क्षत्रिय महाराज की बनाई है, इसी से इस पर कौन न विश्वास करैगा । उसने गो-वध बद कर दिया था यह कवि परंपरा द्वारा तो श्रुत था, अब प्रमाण भी मिल गया । हिंदूशास्त्रो को वह सुना करता था । यह तो और इतिहासो मे लिखा है कि वह आदित्यवार को पवित्र समझता था । देखिए उसके इस कार्य से. गायत्री के देवता सूर्य के आदर से, हिंदूमात्र उससे कैसे प्रसन्न हुए होगे । मै समझता हूँ कि उस समय सूर्यवशी राजा बहुत थे और सूर्य को यह सम्मान दिखा कर अकबर ने सहज उन लोगो का चित्त वश कर लिया था । योग साधने से हिंदुओ की प्रसन्नता और शरीर की रक्षा दोनो काम हुए । विशेष यह बात जानी गई कि वह गगाजल छोड कर और पानी नहीं पीता था । यह उस की सब क्रिया हिंदुओ को वश करने को एक महामोहनास्त्र थीं । इसी से उसको परमेश्वर का अवतार तक कहने मे हिंदुओ ने सकोच न किया । उस को लोग जगद्गुरु पुकारते थे, यह आगे वाले महाराज जसवत सिंह के पत्र से प्रकट होगा । इसके विरुद्ध औरगजेब से हिंदुओ का जी कैसा दु.खी था और उस समय राज्य की भी कैसी अवनति थी यह भी इस पत्र ही से प्रकट हो जायगा, हम विशेष क्या लिखे ।

विदित हो कि इस पत्र के लेखक महाराज जसवत सिंह जोधपुर के महाराज गजसिंह के द्वितीय पुत्र थे । सन् १६३८ मे गजसिंह युद्ध मे

मारे गए। अपने बडे पुत्र अमर सिह को अति क्रूर और प्रजापीडक समझ कर गज सिह ने त्याग कर दिया। यही अमर सिह फिर शाहजहाँ के दर्बार मे रहा और वहाँ भी अपनी उद्धतता से एक दिन काम पर हाजिर नहीं हुआ। इस पर शाहजहाँ ने उस पर जुर्माना किया। जुर्माना अदा कराने को सलाबत खाँ खजानची को भेजा। उस का भी अमर सिह ने निरादर किया। इस पर बादशाह ने उस को दरबार मे बुला भेजा। यह अति क्रोधावेश मे एक कटार लिए हुए दर्बार मे निर्भय चला गया। बादशाह को क्रोधित देख कर रोषानल और भी भडका। पहले सलाबत का प्राण सहार किया फिर वही शस्त्र बादशाह पर चलाया। खभे मे लग कर कटार गिर पडी, किंतु उस आघात मे बल इतना था कि खभे का दो अगुल पत्थर टूट गया। * दर्बार मे चारो ओर हाहाकार हो गया। पाँच बडे बडे मोगल सर्दारो को अमर ने और मारा। अत में उस को उस का साला अर्जुन गारा †(बूदी का राजकुमार) पकडने चला, तो उससे लडा और उसी की तलवार से गिरा भी। अब तक तख्त पर लहू की छींट और टूटा हुआ खभा उस के वीर दर्प का चिन्ह आगरे के किले मे विद्यमान है। लाल किले का दरवाजा, जिस से अमर सिह आया था, बुखारा दरवाजा कहलाता था, उस दिन से अमर फाटक कहलाता है। उसके सरदार चपावत गोती और कंपावत गोती‡ भी दरबार मे अपनी निज सैन्य लेकर घुस आए और बहुत से मुगलो को मार कर मारे गए। अमर सिह की स्त्री बूदी की राजकुमारी पति का देह लेने को उसी हल्ले मे अपने योद्धाओ को लिये

---

* आनि के सलाबत खाँ जोर कै जनाई बात तोरि धर पजर करेजे जाय करकी।
दिल्लीपति नाह के चरन चलबे को भए गाज्यो राजसिंह को सुनी है बात बरकी ॥
कहै 'बनवारी' बादशाह के तखत पास फरकि फरकि लोथ लोथन सी अरकी।
हिंदुन की हद्द सह राखी तै अमर सिह कर की बडाई कै बडाई जमधर की ॥

† गौड शब्द शुद्ध है। (स०)

‡ बल्लू जी चपावत तथा कपावत रानी हाडी के साथ अमर सिंह का शव लेने के लिए गए थे, जो किले के मैदान मे रखा गया था। (स०)

किले मे चली आई और देह ले गई और डेरे मे जा कर सती हो गई। इस घटना के वर्णन मे राजपुताने मे कई ग्रथ, ख्याल आदि बने हैं और अब तक इस लीला को नट, सुथरेसाही, जोगी, भवैये, गवैये गाया करते है।

अथ पत्र

"सब प्रकार की स्तुति सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर को उचित है और आप की महिमा भी स्तुति करने के योग्य है, जो चद्र और सूर्य की भाँति चमकती है। यद्यपि मैने आज कल अपने को आप के हाथ से अलग कर लिया है किंतु आपकी जो सेवा हो उस को मैं सदा चित्त से करने को उद्यत हूँ। मेरी सदा इच्छा रहती है कि हिंदुस्तान के बादशाह रईस मिर्जा राजे और राय लोग तथा ईरान तूरान रूम और शाम के सरदार लोग और सातो बादशाहत के निवासी और वे सब यात्री जो जल या थल के मार्ग से यात्रा करते है मेरी सेवा से उपकार लाभ करैं।

यह इच्छा मेरी ऐसी उत्तम है कि जिस मे आप कोई दोष नहीं देख सकते। मैने पूर्वकाल मे जो कुछ आप की सेवा की है, उस पर ध्यान कर के मुझ का अति उचित जान पड़ता है कि मै नीचे लिखी हुई बातो पर आप का ध्यान दिलाऊँ, जिस मे राजा और प्रजा दोनो की भलाई है। मुझ को यह समाचार मिला है कि आप ने मुझ शुभ-चिंतक के विरुद्ध एक सैना नियत की है और मैने यह भी सुना है कि ऐसी सैनाओ के नियत होने से आप का खजाना जो खाली हो गया है उस को पूरा करने को आप ने नाना प्रकार के कर भी लगाए है।

आप के परदादा मुहम्मद जलालुद्दीन अकबर ने, जिनका सिहासन अब स्वर्ग मे है, इस बड़े राज्य को ५२ बरस तक ऐसी सावधानी और उत्तमता से चलाया कि सब जाति के लोगो ने उससे सुख और आनद उठाया। क्या ईसाई, क्या मूसाई, क्या दाऊदी, क्या मुसल्मान, क्या ब्राह्मण, क्या नास्तिक सब ने उन के राज्य मे समान भाग से राजा का

न्याय और राज्य का सुख भोग किया। और यही कारण है कि सब लोगो ने एक मुंह होकर उन को जगत्‌गुरु की पदवी दिया था।

शाहनशाह मुहम्मद नूरुद्दीन जहाँगीर ने, जो अब नंदनवन मे बिहार करते है, उसी प्रकार २२ बरस राज्य किया और अपनी रक्षा की छाया से सब प्रजा को शीतल रक्खा। और अपने आश्रित या सीमा-स्थित राजवर्ग को भी प्रसन्न रक्खा और अपने बाहु बल से शत्रुओ का दमन किया।

वैसे ही परम प्रतापी शाहजहाँ ने बत्तीस बरस राज्य करके अपना शुभ नाम अपने गुणो से विख्यात किया।

आप के पूर्व पुरुषो की यह कीर्ति है। उन के विचार ऐसे उदार और महत् थे कि जहाँ उन्हो ने चरण रक्खा, विजय लक्ष्मी को हाथ जोड़े अपने सामने पाया और बहुत से देश और द्रव्य को अपने अधिकार मे किया। किंतु आप के राज्य मे वे देश अब अधिकार से बाहर होते जाते है और जो लक्षण दिखलाई पड़ते है उनसे निश्चय होता है कि दिन दिन राज्य का क्षय ही होगा। आप की प्रजा अति दु खी है और सब देश दुर्बल पड गये है। चारो ओर से बस्तियो के उजड़ जाने की और अनेक प्रकार की दु ख ही की बाते सुनने मे आती है। जब बादशाह और शाहजादा के देश की यह दशा है तब और रईसो की कौन कहै। शूरता तो केवल जिह्वा मे आरही है। व्यापारी लोग चारो ओर रोते है। मुसल्मान अव्यवस्थित हो रहे है। हिंदू महा दु खी है, यहाँ तक कि प्रजा को सन्ध्या को खाने को भी नहीं मिलता और दिन को सब मारे दु ख के अपना सिर पीटा करते है।

ऐसे बादशाह का राज्य कै दिन स्थिर रह सकता है, जिसने भारी कर से अपने प्रजा की ऐसी दुर्दशा कर डाली है ? पूरब से पच्छिम तक सब लोग यही कहते है कि हिंदुस्तान का बादशाह हिंदुओ का ऐसा द्वेषी है कि वह ब्राह्मण से बडा योगी वैरागी और सन्यासी पर भी कर लगाता है और अपने उत्तम तैमूरी वंश को इन धनहीन उदासीन लोगो को दु:ख देकर कलंकित करता है। अगर आप को उस किताब पर विश्वास है जिस को आप ईश्वर का वाक्य कहते है तो उस मे देखिए

कि ईश्वर को मनुष्य मात्र का स्वामी लिखा है, केवल मुसलमानो का नहीं। उस के सामने गबर और मुसल्मान दोनो समान है। नाना रग क मनुष्य उसी ने इच्छा से उत्पन्न किये है। आप के मसजिदो मे उस का नाम लेकर चिल्लाते है और हिदुओ के यहाॅ देवमदिरो मे घटा बजाते है, किंतु सब उसी को स्मरण करते है। इस से किसी जात को दु ख देना परमेश्वर को अप्रसन्न करना है। हमलोग जब कोई चित्र देखते है, उसके चितेरे को स्मरण करते है और कवि की उक्ति के अनुसार जब कोई फूल सूॅघते है उस के बनानेवाले को ध्यान करते है।

सिद्धात यह है कि हिदुओ पर जो आप ने कर लगाना चाहा है वह न्याय के परम विरुद्ध है। राज्य के प्रबध को नाश करनेवाला है और बल को शिथिल करने वाला है तथा हिंदुस्तान के नीत रीत के अति विरुद्ध है। यदि आप को अपने मत का ऐसा आग्रह हो कि आप इस बात से बाज न आवै, तो पहिले रामसिह से, जो हिदुओं मे मुख्य है, यह कर लीजिए और फिर अपने इस शुभचितक को बुलाइए। किंतु यो प्रजापीडन वा रण भङ्ग वीर धर्म उदारचित के विरुद्ध है। बडे आश्चर्य की बात है कि आप के मत्रियो ने आप को ऐसे हानिकर विषय मे कोई उत्तम मत्र नहीं दिया।"

महात्मा कर्नॅल टॉड साहब लिखते है कि यह पत्र महाराज जसवतसिह ने नहीं लिखा था, महाराणा राजसिह ने लिखा था।

—❀—

२. कन्नौज के राजा का दानपत्र

यह प्रसिद्ध दानी कन्नौज के राजा गोविदचंद के अन्यतर दानपत्र की प्रति है। यह राजा बड़ा ही दानी था।

ताम्रपत्र।

स्वस्ति। अकुण्ठोत्कुण्ठवैकुण्ठकण्ठपीठलुठत्कर'।
सरम्भ' सुरतारम्भे सश्रिय श्रेयसेऽस्तुव.॥ १॥

आसीद्दशीतद्यु ति वशजातदमापालमालासुदिवगतासु ।
साचाद्विवस्वानिवभूरिधाम्ना नाम्ना यशोविग्रहइत्युदारः ॥ २ ॥
तत्सुतोभून्महीचन्द्रश्चन्द्रधामनिभनिज ।
येनायारमकूपार पारेव्यापारितयशः ॥ ३ ॥
तस्याऽभूत्तनयोनयैकरसिकः क्रांतद्विषन्मडलो
विध्वस्ताद्भुतवीरयोध विजितः श्रीचन्द्रदेवोनृपः ।
येनोदारतरप्रतापशमिताशेषप्रजोपद्रव
श्रीमद्गाधिपुराधिराज्यसमम दोर्विक्रमेनोर्जितं ॥ ४ ॥
तीर्थाणि काशिकुशिकोत्तरकोसलेन्द्रस्थानीयकानि परिपायताभिगम्य ॥
हेमात्मतुल्यमनिशददता द्विजेभ्यो येनाकिता वसुमती शतशस्तुलाभिः ॥५॥
तस्यात्मजोमदनपालइतिचितींद्रचूड़ामणिर्विजययेनिजगोत्रचन्द्र. ।
यस्याभिषेककलशोल्लसितै.पयोभिः प्रचालितकलिरजःपटलधरित्र्याः ॥६॥
यस्यासी द्विजयःप्रयाणसमये तुगाचलौघश्चलन
माद्यत्कुभिपदक्रमात्समसरत्त्र्यस्यन्महीमडले ।
चूडारत्न विभिन्नतालुगलितस्थानास्टगुद्भासिता'
शेष पेशवशार्दित'चणमसौक्रोडेनिलीनाननः ॥ ७ ॥
तस्माद्जायत निजायत बाहुबल्लिबद्धावरुद्धनवराष्ट्र गजोनरेंद्रः ।
सांद्रामृतद्रवसुधा प्रभवी गवां यो गोविंदचद्रइति चद्रइवाबुराशेः ॥८॥
नकथमप्यलभन्तरणचमां स्तिस्टषुदिचुगजानथतच्चिणः ।
ककुभिवभ्रमुरभ्रमुवल्लभ प्रतिभटाइवयस्यघटागजाः ॥ ९ ॥

सोयं समस्तराजचक्रससेवितचरणः परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परममाहेश्वर निज भुजोपार्जित श्रीकान्यकुब्जाधिपत्य श्रीचन्द्रदेवपादानुध्यात परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परम माहेश्वर श्रीमदनपाल देव पदानुध्यात परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परम माहेश्वराश्वपति गजपति नरपति राजत्रयाधिपति विविध विद्याविचारवाचस्पति श्रीमद्गोविन्दचन्द्रदेवो विजयी खरकापत्तलायां मधुवाग्राम निवासिनो निखिलजन पदानुपगतानपि राजाराज्ञी युवराज मन्त्रिपुरोहित प्रतीहार सेनापति भाडागारिकाऽत्तपट लिकभिषग्नि मित्तिकान्त. पुरिकदूत करितुरगपत्तनाकरस्थानाऽऽगोकुलाधिकारि पुरुषान्समाज्ञापयति बोधयत्यादिशतिच यथा विदितमस्तुभवतां यथो-

परिलिखितग्राम सजलस्थल. सलोहलवणाकर. समत्स्यकार: सगर्तोखर: समधूकाम्रवनवाटिका विटपतृणप्रतिगोचरपर्यन्तश्चतुराघाटशुद्धस्वसीमा-पर्यन्त. सोड्डाध: सवत् ११६५ माघ बदि ६ सोमदिने प्रयागे वेण्यां स्नात्वा विधिवन्मन्त्राद्देव मुनिमनुजभूत पितृणा स्तर्पयित्वा तिमिर पटल पाटन पटुसहस्रमुष्णरोचिषमुपस्थायौषधिपतिंसकलसन्नभस मभ्यर्च्च त्रिभुवनत्रातुर्वासुदेवस्य पूजा विधायप्रचुरपायसेनहविषा हविर्भुजहुत्वा मातापित्रोरात्मनश्च पुण्यशोभिवृद्धये कौशिकगोत्राय कौशिकावदल्य विश्वामित्र देवरातत्रिप्रवराय पण्डित श्रीकैकप्रपौत्राय पण्डित श्रीमहादित्य पौत्राय पण्डित श्रीसाचृतपुत्रायपण्डित श्रीविद्याकचसभाराय ब्राह्मणाय अस्मा भिर्गोकर्णकुशलतापूतकरतलोदकपूर्वमाचन्द्रार्कं यावदाशासनी कृत्यप्रदत्तोमत्ताराद्यदीयमानभाग भोग कर प्रवणिकर प्रभृति समस्ता-दायानांविधियाश्रयदास्यर्न्निति भवन्तिचात्र। श्लोका.।

भूमिय प्रातगृह्णाति यश्चभूमिप्रयच्छति। उभौ तौपुण्यकर्माणौ नियतस्वर्गगामिनो। शखभद्रासनछत्र वराश्वावरवारणा:। भूमि-दानस्यचिन्हानि फलमेतत्पुरंदर। सर्वानेतान्भाविन पार्थिवेंद्रान्-भूयोभूयो याचतेरामभद्र:। सामान्योयधर्मसेतुर्नृपाणां काले-कालेपालनीयोभवद्भि:। बहुभिर्वसुधाभुक्ता राजभि.सगरादिभि:॥ यस्ययस्ययदाभूमिस्तस्यतस्यतदाफल। स्थलमेकंग्राममेक भूमे-रप्येकमगुल। हरन्नरकमाप्नाति यावदाभूतसुसप्लव। ठकुर श्रीवालिकेन लिखितमिदम्।

—:o:—

काशी क्वीन्स कालिज (Queen's College Benares) के फाटक पर यह लेख है—

तालुकदार दाउदपुर के राय पृथ्वीपाल सिह ने
अपने कीर्त्ती के लिये दो द्वार रचवाये।

(१)

रामरास बाबू सुघर, वैश्यवंश औतार।
हर्षचन्द्र तिन के तनय, रचवाये दुइद्वार॥

(२)

राजा पटनीमल्ल के, पुत्र नारायण दास ।
रचवाये दुइद्वार यह, अचल कीर्त्ति के आस ॥

(३)

श्री देवकीनन्दन सूनुरासीघो जनकी पूर्वपद प्रसाद ।
तदङ्ग जो द्वारमिद द्रव्य धत राम प्रसन्नोपमहीश्वरोये ॥

(४)

श्री मत् बाबू देवकीनन्दन पौत्र उदार ।
बाबू रामप्रसन्ना सिंह रचवाये यह द्वार ॥स० १८०७॥

(५)

श्री बाबू भगवानदास बडे दानि बिदित ।
मृजापुर बिच धाम तिन रचवाए द्वार दुइ ॥

(६)

सुनय जानकिदास के, श्री विश्वेश्वर दास ।
रचवाए दुइ दुवार वर मुक्ति सुजस के आस ॥

(७)

राजा दर्सन सिंह के, सुत कुल अति उजियार ।
राजा रघुबरदयाल जस, चाहि किन दुइ दुवार ॥

(८)

इण्डियन म्यूज़ियम (Indian Museum) मे एक पत्थर के मुड़ेरे के एक टुकड़े पर नीचे की ओर निम्न लिखित लेख लिखा है। वह पत्थर अशोक के चारदिवाली का है, परंतु यह लेख सन् ईसवी दो सौ बरस पहले का नहीं हो सकता। यह गुप्ताक्षर मे पुराचीन रीति से लिखा है—

दी पढका कता येषां दान × × मशमनिनाचार्य्य ।

—(.)—

अशोक के चारदिवाली के मुड़ेरे के पत्थर पर निचली ओर निम्न लिखित लेख लिखा है। यह दो लाइन (पंक्ति) मे है और प्रत्येक लाइन ६ फीट लबा है।

१। कारितो यन्त्रवज्रासन वृहत्‌गभ्भकुटी प्रमादमर्द्धत्रिकोट्यां भश्मतैर्म्मधुलेपकस्यपुन लटिकः गिक रेदगतुट मादन्यार्क्क तारक भगवने बुद्धाय ×× रदानेन घृतप्रदोपः × रारिध दिए प्रति समधने रदनी माया च प्रदह घृतप्रदीपै' गुणे शतदानेनापारेण कारित' बिहारेपि भगवते रेत्यपद्ध ।

२। ह्यग्रटा पात्तय नः धिकरो धमशत त द व ग प्रदेष च च नं पं × × × × प × मनीनू माधुर लातीत तदस सव्वं चा प्रहतत × त्तनुमत्पादित तद्वेतत्‌ सव्वं यन्मया बुद्धौ प्रचेतमभारतन ।

मेजर (Major Mead) ने बोधगया के बडे मदिर की एक कोठरी से एक मूर्त्ति निकाली थी उस के पाव के समीप निम्न लिखित लिपि थी—

इदमतितरचित्र सव्वं सत्वानुकम्पिने ।
भवनवरमदारजितमाराय पतये ॥
सु (शु) द्धात्मा कारयामास बोधिमार्गरतोयतिः ।
बोधि षे (से) णो (नो) तिविख्यातो दत्तगल्लनिवासक. ॥
भवबन्धविमुक्त्यार्थं पित्रोर्वन्धुजनस्य च ।
तथोपाध्यायपूर्वाणामाइवाग्रनिवासिनां ॥ ली ॥

ए० ग्रोट साहिब (A. Grote Esqr) प्रेसिडेन्ट बंगाल एशियाटिक सोसाइटी ने निम्नलिखित लिपि, जो एक साढ (नदी) की मूर्ति के पीठ पर लिखी हुई है, एशियाटिक सोसाइटी मे भेज दी थी। यह लेख कुटिलाक्षर (Kutila Character) मे लिखा हुआ है। भीमकवल्ला के पुत्र श्री सुफन्दी भट्टारक ने यह मूर्ति संवत्‌ ७८१ मे सन्तति के लिए चढ़ाई थी।

ए सम्ब ७८१ वैशाख बदि ६ षरुध्य ग्रामव × × × × त्तम भिमक वल्लसुतेन श्री सुफन्दिनभट्टारक श्र (?) ग्र (?) त्त मतया × × ा त्मनापत्यहेतोः वृषभट्टारकप्रतिष्ठितेति ।

जनरल कनिङ्घम (General Cunningham) ने बोधगया के मन्दिर के फाटक के चूर के नीचे एक पत्थर देखा था जिस पर निम्न लिखित लिपि खुदी हुई है। यह लेख २० लाइन मे है और कुटिलाक्षर मे लिखा हुआ है।

(१) नमोबुद्धाय ॥ आसीद्दृप्तनरेन्द्रवृन्दविजयी श्रीराष्ट्रकूटान्वयः श्रीमान्नन्द इति त्रिलोकविदितस्तेजस्विनामग्रणीः। सत्येन प्रयत्येन शौच-विधिना श्लाघ्येन विख्यापितस्त्यागैः कल्प महीरुहः प्रणयिषु प्राज्ञो नरेन्द्रात्मज ॥

(२) यो मत्तमातङ्गमभिद्रवन्तन्नरेन्द्रवीथ्याऽतुरगेन्द्रगागी । कशाभिघातेन विजित्य वीर' प्रख्यातवान्हस्तितलप्रहारः ॥

(३) दुर्ग दुर्जयमूर्जितक्षितिभुजामत्युत्तमैर्विक्रमैः श्रीमद्राम कृपाण पुण्यविभवैरुच्चैर्विजिग्ये च य'। येनाद्यापि नरेन्द्रससदि सदा सम्भूतरोमोद्गमैर्व्वर्णाङ्कै र्मणिपूरदुर्गधवल' सवर्ण्य सूरिभि. ॥

(४) य शौर्यातिशयादनल्पसदृशात्ख्यातो महोभृद्रक' (?) सन्मार्गेण गुणावलोक इति च श्लाघ्यामभिख्यान्दधौ । गेयैर्बुद्धगुणाढ्यैरभिन वस्वान्तर्व्विशोषोद्गतैर्यश्रान्ते तनुमुत्ससर्ज विधि वद्योगीव तीर्थाश्रयः॥

(५) तस्यात्ति सूनुर्विजितारिवर्गः प्रतापसतापितदिग् विभागः । प्रहर्षितार्थिव्रजपद्मषण्डः पूषेव पादाश्रितसर्व्व लोक. ॥

(६) धर्म्मार्थकामेषु गृहीतसार' श्रिया सदाराधितपादपद्मः। अरातिमातङ्गकुलैकसिंहस्त्रिलोकविख्यातयश' पताक. ॥

(७) कोपे यमः कल्पतरु. प्रसादे प्रयोगमागप्रणयी कलाना । अगण्यविक्रान्तविलासभूमिः प्रभूतसद्वर्णशशाङ्ककीर्त्तिः ॥ रूपोदयैरर्पितचित्रयोनिर्मतङ्गजारोहनलब्धशब्दः । तुरङ्गमाध्यासनकौशलाप्तः प्रभासते राजसु कीर्त्तिराजः ॥

(८) तस्यात्मजः शुभशतोदितपुण्यमूर्त्तिः साक्षान्मनोभव इव प्रयतात्मभावः । दृप्तद् विषद्विपिनवन्हिरुदीर्णदीप्तिरस्तीह तुङ्ग इति-सान्वयनामधेयः ॥

(९) कामिनीवदनपङ्कजतिग्मभानुर्विद्वन्मनः कुमुदकाननकान्त-रश्मिः। शास्त्रप्रयोगकुशलः कुशलानुवर्त्ती धर्म्मावलोकइति च प्रथितः पृथिव्याम् ॥

(१०) शैलेन्द्रस्य द्विमूर्त्तीननवरतगलद्दानमत्तद्विरेफश्रेणीसङ्कीर्णनाद-प्रतिगजविजयोद्‌गारिभेरीविरावान्। दृष्ट्वा यो दन्तिशास्त्रे षु गुरु रिव गुरुः प्रो गु × × × × लोलः कालजः पुण्यपूत कलयति मृगवद्व-न्यकान्वारणेन्द्रान् ॥

(११) येनागाधतया जितो जलनिधि. शान्त्या मुनिस्तेजसा भानुः कान्ततया शशी मृगपति' शौर्य्यण नीत्या गुरुः।
कर्णस्त्यागितया विलासविधिना दैत्यद्विषामीश्वर. वाचालापितया यथार्थ-पद्या नैवास्ति यस्योपमा ॥

(१२) धत्ते य श्रीनिधान हृतकलिचलित धर्ममामूलमुच्चैरुत्तुङ्ग. स्वर्गमार्गप्रणयिभिरतुलै कीर्त्तनै. शुद्धकीर्त्तिः कुर्वतसेवामनिन्द्यामनुदिन-ममलैरन्नपानैर्यतीना शिष्टैस्सत्कारयन्नेर्भव इव चलितं रावणेनाच-लेन्द्रम् ॥

(१३) तेन प्रसन्नमनसा जितमारशत्रोरुत्तीर्णजन्मजलधेरस्तृ × × भवैकबन्धोः। श्रीमद्विशुद्धगुणरत्नस—विप्रेन्द्रशेखरितपादसरोजरेणोः ॥

(१४) मोहान्धकारनिधनोद्गतभास्करस्य सग्रामरेणुशमनैकघना-घनस्य। द्वेषोरगोद्धरणकर्म्मणि तार्क्ष्यस्य गिरिदारणवज्रधाम्नः ॥

(१५) स्फुर्ज्जत्प्रवादिकरियूथमृगाधिपस्य नैरात्म्यसिंहनिनदप्रविभा-वितस्य। धर्म्माभिषेकपरिपूतजगत्त्रयस्य—गुणरत्नमहार्णवस्य ॥

(१६) निर्म्मापिता गन्धकुटीयमुच्चै. सोपानमालेव दिवो दिदेश। गृहीतसारेण धनोद्यानामनित्यताभावितमा—॥

(१७) तरामर्शविचक्षणेन शरत्प्रसन्नेन्दुमनोहरेण। मदानभिज्ञेन गुणाभिरामैरावर्जिताजय्यसमागमेन ॥

(१८) मुनिरिह गुणरत्न—प्रजानामभयपथविदर्शी सन्निधत्तां सदैव। विदधदभिमतानां सिद्धिमभ्युन्नतीनामनयविमुखबुद्धेर्दायकस्यास्य भूयः ॥ त देवराज सम्वत् १५ श्रावणदिनपञ्चम्या। सिंहलद्वीपजन्मना पण्डितरत्न श्रीजनभिक्षुणा ॥

एक मूर्त्ति पर बोधगया मे यह लेख लिखा है। यह दो पक्ति मे है जो प्रत्येक ६ फीट लम्बी है। पूर्णभद्र सुमतस के पुत्र ने इस [मूर्त्ति] को बनवाया था। इस से उस का और उस के वश का कुछ वृत्तांत मालूम होता है।

१। बावस्तस्यैव स्वसङ्घत. सङ्व ।
२। सिध्धा। पर. श्रीभान् तस्य सुत. श्रीधर्म्मः।
३। थर्थिय जगती कृत्तिक प्रतापनेप्रतां यातः॥ तेनयशः
१। सिन्धौ दातृ × गजो गल्लभूमज .—
नरवर सिद्व ग
२। नुसपुररन्ध्री सदुदयक्रम × पुन. पूतः श्री दुर्गजयसेनः
कुमा कु तर सयू शुभ
म्वोधिलासुकृत ग
१। ये धर्म्मा हेतुप्रभवा हेतुस्तेषा तथागतः ह्यवदत् तेषाञ्चयो निरोध स्ववादी महा—
२। श्रमणः।
३। श्रीसामन्तस्तदात्मजस्तस्य । श्रीपुनुभद्रनामा प्रतापेन चन्द्रमः कोत्ति । द्राच्च
१। सु × यिष्ठो × × श्रीमान्
२। सेनोसन द्योत । श्रीमति उदण्डपूरे येन
३। तिलरलकता × सिंव चन्द्रनमवृत सुधिय.॥

———

महाबोधी मन्दिर के समीप एक पत्थर के टुकडे पर खोदी हुई निम्न लिखित लिपि डबल्यू हाथोर्न (W Hawthorne Esqr.) ने पायी थी, उस पत्थर को बचनन हमिलटन (Mr Buchanan Hamilton) ने ईस्ट इन्डिया कम्पनी के म्यूजियम (Museum) मे रख दिया था।

नमोबुद्धाय सकल्पोयं प्रवरमहावीरस्वामिनः परमोपासकस्य दैवज्ञ-चरणारविन्दमकरन्दमधुकरहलकारभूपालवेश्मोत्पन्नाऽकृत्स्ननृपति गुरूह नारायण रिपुराज मत्तगज सिहति रिवल महीपाल जनकेत्पादिनिज-

निरखेल प्रशस्ति समलंकृत सपादलक्ष शिखरिख समेण राजाधिराज श्रीमदशोकचन्द्रदेवकनिष्ठभ्रातृ श्रीदशरथनामधेयकुमारपादपद्मोपजीवि भारादागारिक सत्यव्रतपरायणाविनिवर्त्तनीयबोधिसत्व चरितस्कन्धिस्व-कुलदीय श्री सहस्रपातु नामधेयस्य महात्मक श्रीचाट ब्रह्मसुतस्य महा-महात्मक श्री ऋषि ब्रह्मपौत्रस्य यदत्रपुराय तद्भट्टाचार्य्योपाध्याय माता-पित्र शर्वाङ्ग सङ्गता सकल पुण्यराशि रनन्तविज्ञानफलावाप्तव इति श्रीमल्लक्षण सेनदेवपादानामतीतराज्ये स० ७६ वैशाख वदि १२ गुरौ।

बोधगया के बड़े मंदिर के बारहदरी के सामने एक छोटे मंदिर में एक संगमरमर के तख्ते पर तीन लिपि खोदी हुई है। यह तख्ता कुछ नीले रंग का चार फीट लंबा और दो फीट ३ इंच चौड़ा है। इस के आगे की ओर दो लिपि है, पहली अपभ्रंश पाली भाषा में और दूसरी ब्रह्मा देश की भाषा में है। और तख्ते की पिछली ओर ३० पंक्ति ब्रह्मा देश की भाषा में है ? परंतु यह संस्कृत नहीं है। उन में से केवल पालीलिपि को यहाँ नागरी अक्षर में प्रकाश किया है—

१। नमस्तस्मै भगवते अरहते सम्यक् सम्बुद्धाय ॥ जयतु ॥ बोधिमूले जिना सर्व्वे सर्व्वज्ञुतो तथा अयं। जयत धर्म्मगतापि बोधि-प्रसादनेन सा। पथ्यावर्त्तश्लोक। अय महाधर्म्मराजा अनेकशेनि-भप्रतिच्छद्दन्तगजराजस्वामि अनेकशताम आदित्यकुलसम्मतान। पीतुपीतामहअव्ययकपाय्यकादिमहा धर्म्मराजन सम्यकृदि।

२। छिकान धर्म्मिकान प्रवरराजवशानुक्रमेण असम्मितत्तेत्रिय वशजो। सन्ध्याशीलाद्यनेकगुनाधिवासो। दानरागेण सन्तो-षमानसो। धर्म्मिको धर्म्मगुरुधर्म्मकेतु धर्म्मध्वजो। बुद्धादिरतनत्रये सतत समितं निम्नपोण प X रहूदयो। नानाविधानि। शारिरिक, परिभोग उद्देश्यक चैत्यानि नानाप्रकारेण नन्दति माने।

३। ति पूजेति संस्करोति। मारजयनक्लेशविध्वसनसर्व्वधर्म्मविघा-तनवीरभूत महाबोधिम्बि। अभिप्रसादेन पुनप्पुनं मनसि × × X X। समति परिवृन्दति कलैरारम्भने गन्य। सप्तपञ्च-द्विके गते। वसूरतवभूवव्वैं ?। धर्म्म विहगे नमारबन्वः।

पुराकपिल व × × ॥ माया देव्यो सुद्धोदवी । निक्षमित्वा × म्तनूले अनु × अ × ।

४ । त पद् तेन सुदेसिनो धर्म्मो सघो चास्यानुशामितो । दिश्यते दानिलोक । मू बोधित्वस्य न दिश्यते । इति हि पूराणतन्त्रागतानुरूप । अयं महाधर्म्मरागमनसि करोनो विमसन्तो । परिपृच्छन्ती पीतामहच्छद्दन्त गजराजस्वामि महाधर्म्मराजकाले । मध्यपदैरागतैहि वाणिरैहि ब्राह्मणैहि × गोहि च ।

५ । मगधराष्ट्रे । गयाशीषपदे च नद्यानेरञ्जनाप्रतीरे सुसमे भूमिभागे । वनप्रतिभूत्वा प्रतिष्ठिभाव । अर्धखण्डसाखाप्रमाणेन हस्तशत विस्ताराद् ये धर्म्मभाव । × कादी पाति हराय्यं गृहणक । लेयय । षिद्दान दक्षिण महासाखाय स्वयमेवच्छिन्नाकारदषा मानभाव बोधिमण्डसखानवज्रासनयानसिरिधम्मासोके ।

६ । न नाम सकल जम्बुद्वीपेश्वरमहाराज्ञा कृतचेतियस्य विद्यमानभाव । पूर्व्वे षड्शतसप्तपन्नाषसकराजे श्वेतगजेन्द्रमहाराजेन तं चैत्यमतिसखरित्वा धर्म्मभासाय सेनज्ञ स्वामिनभाव च श्रुत्वा । तदेतत् वचन अनेकतन्त्रागतवचनेन स सन्दति समेति । यथात गगोदकेन यमुनोदकस्मि । युक्तायुक्त विदि ।

७ । त्वा । अवश्यमेवेष भगवता सह जातो महाबोधीसि निसषय । सन्निधानमकासि । यथावत् कठोन विशेष नियमिते हि । मनुरपान क्षेत्रवस्त्वादिकर्म्मकरण × ततो यथानुक्रममुन्नतुन्नतभावेन षदवी युगेधे । अष्टराजकरोष मात्रविस्तारोकेष मश्रु प्रमाणानम्पित णानमधिहल्ले । समन्तातिनलना ।

८ । गन्ध गुम्बबनप्रतीन प्रदक्षिणावद्याभिमूखपरिवारितो रजतवर्णबालुकाविप्रकिर्ण । भेरितलमिव समे भूमिभागे । बोधिमण्ड सघायस्थ वज्रासनपल्लङ्कस्य अपस्मयफलकमिव सन्धुक्षुत्वा । साखा पर्ण × मणिपत्रमिव पटिच्छादेत्वा महाबोधिवृक्ष. प्रतिष्ठाति तस्मिन् पनवज्रासनपल्लङ्के अत (न) ।

९ । न (त) ग्रेपि काले सर्व्वेपि असख्येया सम्यक् सम् बुद्धा आणा-प्राणवस्तुज्ञानपादकन्धत्रिराकोटिषतसहमूसविपस्सता ज्ञानसघात महाबञज्ञान भावेत्वा अ ।

१० । मार्गपदष्ठान सब्बज्ञान ज्ञानपति रभिसु । न याहिसे । सण-वहन्ते कल्पे पयस सणवहितो । विनाश्यन्तेपि प × विन्नश्यन्तो अचलपदेषो पृथुद्वीप × बो ।

११ । धिमण्डो नाम होति ॥ एव अतिचरिय मन्वचरिय महाबोध-वृत्त एकसत विदित्वा अभिप्रसादमानसो । यथा कालि × चक्रवत्तिसिरिधम्मासोको प × महिकोसलो । महार्घ्य यतिर्वा महाबोधिमभिपूजेसु । तथा पूजेतुकामो । सिरिपबरसुधम्म-महाराजाधिराजाति । मूलभासाय श्रीप्रबरधम्मिक राजा × × × मल ।

१२ । ञतो अनेकश्चेति × प्रतिसरदकुमुदकुन्दइन्दु प्रभासमानबर्ण-च्छद्दन्तगजराजस्वामिमहाधर्म्मराजा । पुरोहित महाराजिन्द अग्ग महाधम्मराज गुरूभि × न भूमिनन्दभारिकामत् पञ्च-महाराजाभिरूप सागरसूरनामक । अनेकशतपरिजनेहि मूद । द्विसहस्सत्रिशतपञ्चषष्टिसासनबर्षे । एकसहस्मै

१३ । शिक शतत्याशीतिसकराजे कार्त्तिकमाससरदऋतुप । स्वबि-जिनरक्ताङ्कदेन नु सार जलजस्थलजमार्गेण पेसेत्वा सरिञ्चर महाराजिन्दाररता देवी नामिकाय अग्गमहेसिया सार्द्ध । महाबोधिमूले बुद्धत प्राप्त भगवन्तमुद्देष्य । दक्षिणोदक पा-तन्तो । इम महापृथुवि साक्षि कृत्वा महार्घ्य ।

१४ । हि सोर्ण रोप्य माणिवथ विचित्रेहि । ल । × । छत्र । ध्वज । पद्योत । कलश । मालाङ्ग लेहि महाबोधिमभिपूजेसि । ससा रौधनिम्मुग्ग सत्वगणताणर्ह्म पि बुद्धत प्रयतमकासि । माता-पीतुपीतामहआर्घ्यक पार्घ्यकादिन पि सत्वान पुण्यभागम-दासि ॥ यथानेह रबिससि । यावत् त्रयाबतिष्ठति ।

१५। तथापि दसेलत्तर । तिष्ठत अनुमोदयति। इदमनेकश्चेतिभ-प्रतिच्छदन्तगजराजस्वामिमहाधर्म्मराजोत्तर पुञ्यसेलदार। महाजेयसहस्रनामेन पण्डितामन्येन बन्धित। इद सेलत्तर सिरिराजिन्दमहाधर्म्मराजगुरूनामिकेन पुरोहितेन नागरीलेखाय लिखित।.॥ ॥

—०—

राजा जन्मेजय का दानपत्र

यह दानपत्र युधिष्ठिर के सवत् १११ का है, जो गौज अगराहर तालुका अनतपुर जिला महानाद नगर इलाका मैसूर मे मिला है। इस मे सर्पयाग और सूर्यपर्व का वर्णन है। कर्नेल एलिस् साहिब सोचते हैं कि यह उस जन्मेजय का नहीं है, विजयनगर के राजाओ मे से किसी का है। वह कहते है कि जैसा सूर्यग्रहण इस मे लिखा है वैसा स० १५२१ ई० मे हुआ था। कोलब्रुक साहिब कहते है कि यह प्राचीन काल मे ब्राह्मणो ने जाल करके बनाया होगा। परतु उन दोनो साहिबो की बात का कोई दृढ प्रमाण नहीं। इस की लिपि प्राचीन वालवन्द अथवा नन्दिनागर अक्षरो मे है। इसके पीछे का भाग बहुत सा टूट गया है और यहाँ हम भा इस का वह भाग नही लिखते जिस ने उन दक्षिणी ग्रामो के और उन की चारो सीमाओ के वर्णन मे बड़े कठिन कठिन कर्णाटकी शब्द लिखे है।

"जयत्याविष्कृत विष्णोर्वाराह क्षोभितार्णवम्।
दक्षिणोन्नतदष्ट्राग्रे विश्रान्तम्भुवनवपु.॥

स्वस्ति समस्तभुवनाश्रय श्री पृथ्वी वल्लभ महाराज परमेश्वर परम भट्टारक हस्तिनापुरवराधीश्वर आरोहभगदत्तरिपुराय कान्तादत्त वैरिवैधव्यपाण्डव कुलकमलमार्त्तण्डकदन प्रचण्ड कलिङ्ग कोदण्ड मार्त्तण्ड एकाङ्गवीर रणरङ्गधीर अश्वपतिराय दिशापति गजपतिराय सहारक नरपतिराय मस्तक तलप्रहारिहयारूढाप्रौढरेखरेवन्त सामान्त मृगचामर कोङ्कणचतुर्दश भयङ्करनित्यकर पराङ्गनापुत्र सुवर्णवराहलाञ्छनध्वजसमस्त राजावलिविराजित समा

स्नान पवित्री कृतशिरसाम् चाल्क्यानावशेसभूत शक्तित्रयसपन्नः चाल- क्यवशाम्बर पूर्णचन्द्रः अनेकगुणगणालकृतशरीर' सर्वशास्त्रार्थतत्वनिवि- ष्टबुद्धिः अतिबलपराक्रमोत्साहसपन्न' श्रीमगलिश्वरोरणविक्रान्त. प्रवर्द्ध- मानराज्यरसवत्सरे द्वादशेशकनृपतिराज्याभिषेक सवत्सरे ष्वतिक्रन्तेषु पचसुशतेषु निजभुजावसम्बितखड्गधारानमितनृपशिरो मकुट मणिप्रभा- रजिपादयुगल' चतु सागरपर्य्यन्तावनिविजय' माङ्गलिकागार' परमभागवतोलयये मयाविष्णुगृहअतिदैव मानुष्यकाम अत्यद्भुतकर्म विरचितभूमि भागोपभागो परिपर्य्यन्तातिशय दर्शनीय तमकृत्वातस्मिन् महाकार्तिक्यापौर्णमास्याब्राह्मणेभ्योमहाप्रदानत्वाभगवतः प्रलयोदिताक्र मण्डलाकारचक्रपितापकारिपक्षरय विष्णोः प्रतिमाप्रतिष्ठापनाभ्युदये निपिमलिङ्ग श्वरम् नामग्रामनारायणावल्युपहारार्थ षोडशमूड्ल्येभ्योब्राह्म- णेभ्यश्च सत्रनिबन्ध प्रतिदिनअनुविधान कृत्वाशेष च परिब्राजकभोज्य- दत्वा सकलजगन्मडलावनसमर्थारथहस्त्यश्च पदातसकुलानेकयुद्धलब्धजय पताकालम्बितचतुस्समुद्रोर्म्मिनिवारितयशः प्रतापनोपशोभिताय देवद्विज- गुरुपूजिताय ज्येष्ठायस्मद्भात्रे कीर्तिवर्मणेपराक्रमेश्वरातत् पुण्यो पचयफलम् आदित्याग्निमहाजन समुक्षमुदक पूर्वविश्राणितमस्मद्- भ्रातृशुश्रूषणे यत्फलतन्मह्यस्यादितिनकैश्चित्परि हापितव्यः। बहुभिर्व सुधादत्ता बहुभिश्चानुपालिता यस्ययस्ययदाभूमिस्तस्यतस्यतदाफलम्। स्वदत्तापरदत्तावायत्राद्रक्षयुधिष्ठिर। महीमही क्षिताश्रेष्ठदानाच्छ्रे योनु- पालन। स्वदतापरदत्तावायोहरेतवसुधराम्। श्वविष्ठायाक्रमिभूत्वापितृ- भिस्सहमज्जति। व्यासगीताःश्लोका:।

—❀—

मणिकर्णिका।

अहा! ससार का भी कैसा स्वरूप है और नित्य यह कुछ से कुछ हुआ जाता है, पर लोग इस को नहीं समझते और इसी मे मग्न रहते है। जहाँ लाखो रुपये के बडे बडे और दृढ मदिर बने थे वहाँ अब कुछ भी नहीं है और जो लाखो रुपये अपने हाथ से उपार्जन व्यय

लिङ्गित श्री सोमवंशोद्भव श्री परीक्षित चक्रवर्त्ती । तस्यपुत्रो जन्मेजय-चक्रवर्त्ती हस्तिनापुरे सुखसत्कथाविनोदेन राज्यङ्करोति । दक्षिण दिशावरे दिग्विजययात्रेयविजयङ्करोमि । तुङ्गभद्राहरिद्रासङ्गमे श्री हरिहरेश्वर-सन्निधौ कटकमुत्क्रमितचैत्रमासे कृष्णपक्षदर्शके रवि वासरे ववकरणे उत्तरायण संक्रान्तौ व्यतीपातनिमित्त सूर्यपर्व्वणि अर्द्धग्रासग्रसित समये सपर्यागङ्करोमि ॥

इस के पीछे ३२००० ब्राह्मण जो वनवासे शान्तलिको गौतम ग्राम और दूसरे गाँवों से आए थे जिन में मुख्य गौतमगोत्री कण्वशाखीय गोविन्द पट्टवर्धन कर्णाट ब्राह्मण, काण्वशाखीय वशिष्ठगोत्री वामन-पट्टवर्द्धन कर्णाट ब्राह्मण, कण्वशाखीय भारद्वाजगोत्री केशव यज्ञ दीक्षित कर्णाटक ब्राह्मण, कण्वशाखीय श्रीवत्सगोत्री नारायण दीक्षित कर्णाटक ब्राह्मण थे । उन को गौतम ग्राम के बारहो गाँव नाद बल्लि, बूदबल्लि, चिक्कहार, कतरलगेरे, सुरलगोड्डु, ताग, रुङ्गु, जिअलूरु, वाचेन, हल्लि, त्रपगोड्डु और किरूसम्य गोड्डु सब सपर्य्या अष्टभोग समेत पूजन करके दिया । इस के नीचे इन गाँओं की सीमा लिखी है । उस के पीछे 'सर्वानेतान् भाविना पार्थिवेन्द्रान' यह और 'दान वा पालन वापि' ये दो प्राचीन श्लोक है ।

मंगलीश्वर का दानपत्र ।

यह दानपत्र मंगलीश्वर का क्लादगी जिले में बदामी में हिंदू मत की बड़ी गुहाओं के पास खुदा है, इसकी लबाई और चौड़ाई २५ × ४३ इञ्च है । यह मंगलीश्वर कीर्ति वर्म्मा का भाई पुलकेशी का पुत्र था, जो शक ४७७ में राज्य करता था । यह दानपत्र श० ५०० (ई० ५७८) में लिखा गया है जिस के १२ वर्ष पूर्व्व अर्थात् शाके ४८८ (ई० ५६६) में यह राज्य पर बैठा था । इस दानपत्र में मंगलीश्वर ने एक विष्णुमन्दिर बनाया और अपने बड़े भाई को स्मरणार्थ जो निपि-म्मलिगेश्वर ग्राम दिया है उस का वर्णन है ।

स्वस्ति । श्रीस्वामिपादानुध्याताना मण्डव्यसगोत्राणाम् हारीति पुत्राणाम् अग्निष्टोमाग्निचयनवाजपेयपौडरीक बहुसु वर्णाश्वमेधावभृथ-

स्नान पवित्री कृतशिरसाम् चाल्क्यानावशेसभूत शक्तित्रयसपन्नः चाल-क्यवशाम्बर पूर्णचन्द्: अनेकगुणगणालकृतशरीर' सर्वशास्त्रार्थतत्वनिवि-ष्टबुद्धिः अतिबलपराक्रमोत्साहसपन्न श्रीमगलिश्वरोरणविक्रान्तः प्रवद्ध-मानराज्य२सवत्सरे द्वादशेशकनृपतिराज्याभिषेक सवत्सरे ष्वतिक्रन्तेषु पचसुशतेषु निजभुजावसम्बितखड्गधारानमितनृपशिगे मकुट मणिप्रभा-रजिपाद्युगल' चतु सागरपर्य्यन्तावनिविजय. माङ्गलिकागारः परमभागवतोलयये मयाविष्णुगृहअतिदैव मानुप्यकाम अत्यद्भुतकर्म विरचितभूमि भागोपभागो परिपर्य्यन्तातिशय दर्शनीय तमकृत्वातस्मिन् महाकार्तिक्यापौर्णमास्याब्राह्मणेभ्योमहाप्रदानत्वाभगवतः प्रलयोदिताक्र् मण्डलाकारचक्षपितापकारिपक्षरय विष्णोः प्रतिमाप्रतिष्ठापनाभ्युदये निविमलिङ्गेश्वरम् नामग्रामनारायणावल्युपहारार्थ षोडशमृड्ख्येभ्योब्राह्म-णेभ्यश्च सत्रनिबन्ध प्रतिदिनअनुविधान कृत्वाशेष च परिव्राजकभोज्य-दत्वा सकलजगन्मडलावनसमर्थारथहस्त्यश्व पदातसकुलानेकयुद्धलब्धजय पताकालम्बितचतुस्समुद्रोर्म्मिनिवारितयशः प्रतापनोपशोभिताय देवद्विज-गुरुपूजिताय ज्येष्ठायस्मद्भ्रात्रे कीर्तिवर्मणेपराक्रमेश्वरातत् पुण्यो पचयफलम् आदित्याग्निमहाजन समुक्षमुदक पूर्वविश्राणितमस्मद्-भ्रातृशुश्रूषणे यत्फलतन्मह्यस्यादितिनकैश्चित्परि हापितव्य. । बहुभिर्व सुधादत्ता बहुभिश्चानुपालिता यस्ययस्ययदाभूमिस्तस्यतस्यतदाफलम् । स्वदत्तापरदत्तावायत्राद्रक्षयुधिष्ठिर । महीमही क्षिताश्रेष्ठदानाच्छे योनु-पालन । स्वदतापरदत्तावायोहरेतवसुधराम् । श्वविष्ठायाकृमिभूत्वापितृ-भिस्सहमज्जति । व्यासगीताःश्लोकाः ।

—❀—

मणिकर्णिका ।

अहा ! ससार का भी कैसा स्वरूप है और नित्य यह कुछ से कुछ हुआ जाता है, पर लोग इस को नहीं समझते और इसी मे मग्न रहते है । जहॉ लाखो रुपये के बडे बडे और दृढ मदिर बने थे वहॉ अब कुछ भी नहीं है और जो लाखो रुपये अपने हाथ से उपार्जन व्यय

करते थे उन के वशवाले भीख मागते फिरते है नित्य नित्य नए नए स्थान बनते जाते है वैसेही नए नए लोग होते जाते हैं।

यह मणिकर्णिका तीर्थ सब स्थानों मे प्रसिद्ध है और हिंदूधर्म्मवालों को इस का आग्रह सर्वदा से रहा है। इसी कारण जो बडे बड़े राजा हुए उन सबो ने इस स्थान पर कीर्त्ति करनी चाही और एक के नाम को मिटा कर दूसरा अपना नाम करता रहा। इस स्थान पर तीर्थ दो है, एक तो गगाजी दूसरा चक्रपुष्करिणी तीर्थ और इन दोनो पर लोगो की सदा दृष्टि रही। घाट के नीचे ब्रह्मनाल और नीलकंठ तक अनेक घाटो के बनने के चिह्न मिलते हैं। थोडे दिन हुए कि मणिकर्णिका पर एक पुराना छत्ता था जिस को लोग राजा कीचक का छत्ता कहते थे, पर न जाने यह कीचक किस वश मे और किस समय मे उत्पन्न हुआ था। ऐसा ही राजा मान का एक जनाना घाट है जो गली की भाति ऊपर से पटा है, पर अब इस के ऊपर ब्रह्मनाल की सडक चलती है। निश्चय है कि योही घाटो के नीचे अनेक राजाओ के बनाए घाटो के चिह्न मिलैगे। हम आजकल मे मणिकर्णिका पर से एक प्राचीन पत्थर उठा लाए है जिस्से उस समय का कुछ वृत्तात मिलता है। यह पत्थर सवत् १३५६ तेरह सै उन्सठ का लिखा है जो ईसवी सन् १३०२ के समय का होता है। इस के अक्षर प्राचीन काल के है और मात्रा पडे है। पर शोच का विषय है कि पूरा नहीं है, कुछ भाग इस का टूट गया है, इससे नाम का पता नहीं लगता कि किस राजा का है। जो कुछ वृत्त उससे जाना गया वह यह है—"उक्त समय मे क्षत्रिय राजा दो भाई बडे विष्णुभक्त और ज्ञानवान हुए और इन की कीर्त्ति परम प्रगट थी, उन लोगो ने मणिकर्णिका घाट बनवाया। उस घाट के निर्माण का विस्तार वीरेश्वर से विश्वेश्वर तक था और मध्य मे मणिकर्णिकेश्वर का बडा लम्बा चौडा और ऊँचा मदिर बनाया और बीच मे बडी बडी वेदिका बनाई (वेदिका चबूतरे को कहते हैं) यह राजा बड़ा गुणज्ञ था" इत्यादि। इससे निश्चय है कि उस की बनाई कोई वस्तु शेष नहीं रही। अब जो मणिकर्णिकेश्वर है वह एक गहिरे नीचे सङ्कीर्ण स्थान मे है और विश्वेश्वर और वीरेश्वर भी नए नए स्थानो मे है। ऐसा अनुमान होता है कि गङ्गाजी आगे ब्रह्मनाल की ओर बहुत दब के बहती

थीं, क्योंकि अद्यापि वहाँ नीचे घाट मिलते है। निश्चय है कि इस राजा के पीछे भी अनेक वार घाट बने होंगे, परतु अब जो कुछ टूटा फूटा घाट बचा है वह अहल्याबाई साहब का बनाया है।

मणिकर्णिका कुण्ड की सीढिया जो वर्त्तमान है वह दो सै उनचास २४९ वर्ष की बनी हुई है और इन को नारायणदास नामक वैश्य ने (जिस का पुकारने का नाम नरैनू था) बनवाई है। यह सोमवशी राजा बासुदेव का मन्त्री था और रावत इस के पिता का नाम था। यह बात इन श्लोको से प्रगट होती है जो वहाँ एक पत्थर पर खुदे मिले है।

व्योमाष्टषट् चन्द्रमिते शुभेब्दौ मासे शुचौ विष्णुतिथौ शिवाया।
चकार नारायणदासगुप्त: सोपानमेतन्मणिकर्णिकाया.॥ १॥
जात. क्षितौवासतुल्यतेजा. सीमान्यये भूपति बासुदेवा.
तस्यानुवर्त्ती मणिकर्णिकायाश्चकार सोपान ततिर्नरेणु ॥ २॥
वासुदेवाग्रसचिवो नरेणुरावतात्मज.।
चक्रपुष्करणी तीर्थं जीर्णोद्वारमचीकरत्॥ ३॥

॥ काशी ॥

मै इस मे काशी के तीन भाग का वर्णन करूगा यथा प्रथम भाग मे पचक्रोश का, दूसरे मे गोसाइयो के काल का, तीसरे कुछ अन्य स्फुट वर्णन। मै पचक्रोशी का वर्णन ऐसा नहीं करना चाहता कि जिसे देख कर लोग पचक्रोशी की यात्रा करने चले जायॅ वरच मै भगवान काल के उस परम प्रबल फेर फार रूपी शक्ति को दिखाता हूँ जिस से धैर्य्यमानो का धैर्य्य और अज्ञानो का मोह बढता है। आहा! उस की क्या महिमा है और कैसी अचित्य शक्ति है? अतएव मै मुक्तकठ से कह सकता हू कि ईश्वर भी काल का एक नामान्तर है। क्योकि इस ससार की उत्पत्ति प्रलय केवल इसी पर अटकी है। जिस विजयी और बिख्यात सिकन्दर ने ससार को जीता उसकी अस्थि कहा गडी है और जिस कालिदास की कविता संसार पढता है वह किस काल मे और

किस स्थान पर हुआ ? यह किसका प्रभाव है कि अब उस का खोज भी नहीं मिलता ? काल का अतएव यदि हम प्राचीन, नवीनो से नवीन, बलवानो से बलवान, उत्पत्ति, पालन, नाश कर्त्ता और सर्व तन्त्रष्वतन्त्रादि विशेषणो से विशिष्ट ईश्वर को काल ही का एक नामान्तर कहै, तो क्या दोष है।

इस पचक्रोशी के मार्ग और मदिर और सरोवरो मे से दो सौ वा तीन सौ वर्ष से प्राचीन कोई चिन्ह नहीं है और इस बात का कोई निश्चायक नहीं कि पचक्रोश का मार्ग यही है केवल एक कर्दमेश्वर का मदिर मात्र बहुत प्राचीन है और इस के बौद्धो के काल का वा इस के पीछे के काल का कहै, तो अयोग्य न होगा। इस मंदिर के अतिरिक्त और कोई प्राचीन चिन्ह नहीं, पर हां, पद पद पर पुराने बौद्ध वा जैन मूर्त्तिखड, पुराने जैन मदिरो के शिखर, दासे, खभे और चौखटै टूटी फटी पड़ी है। क्यो भाई हिदुओ! काशी तो तुम्हारा तीर्थ न है ? और तुम्हारा वेद मत तो परम प्राचीन है ? तो अब क्यो नहीं कोई चिह्न दिखाते जिस से निश्चय हो कि काशी के मुख्य देव विश्वेश्वर और विदुमाधव यहाँ पर थे और यहाॅ उन का चिह्न शेष है और इतना बड़ा काशी का क्षेत्र है और यह उस की सीमा और यह मार्ग है और यह पचक्रोश के देवता है। बस इतना ही कहो भगवते कालाय नमः। हमारे गुरु राजा शिवप्रसाद तो लिखते है कि "केवल काशी और कन्नौज मे वेदधर्म्म बच गया था" पर मै यह कैसे कहूँ, वरच यह कह सकता हूँ कि काशी मे सब नगरो से विशेष जैन मत था और यहीं के लाग दृढ़ जैनी थे, भवतु काल जा न करे सब आश्चर्य्य है। क्या यह सभावना नहीं हो सकती कि प्राचीन काल मे जो हिदुओ की मूर्त्तियाॅ और मदिर थे उन्हीं मे जैनो ने अपने काल मे अपनी मूर्त्तियाॅ बिठा दीं ? क्यो नहीं। केवल कुछ क्षण दिल्ली के सिहासन पर एक हिदू बनिया बैठ गया था उतने ही समय मे मसजिदो मे हिदुओ ने सिदूर के भैरव बना दिये और कुरान पढने की चौकियो पर व्यासो ने कथा बाॅची, तो यह क्या असम्भावित है।

कर्दमेश्वर का मंदिर बहुत ही प्राचीन है और उस के शिखर पर बहुत से चित्र बने हैं जिन मे कई एक हिदुओ के देवताओ के है, पर

अनेक ऐसे विचित्र देव और देवी बनी है जिस का ध्यान हिदू शास्त्र मे कहीं नहीं मिलता अतएव कर्दमेश्वर महादेव जी का राज्य उस मदिर पर कब से हुआ यह निश्चय नहीं और पलथी मारे हुए जो कर्दमजी की श्री-मूर्त्ति है वह तो निस्सन्देह * * * कुछ और ही है और इसके निश्चय के हेतु उस मदिर के आस पास के जैन खड प्रमाण है और उसी गाव मे आगे कूप के पास दाहिने हाथ एक चौतरा है उसपर वैसी ही ठीक किसी जैनाचार्य्य की मूर्त्ति पलथी मारे खडित रक्खी है देख लीजिए और उस के लबे कान उस का जैनत्व प्रमाण करते है। अब कहिए वह तो कर्दम ऋषि है ये कौन है कपिलदेव जी है? ऐसे ही पचक्रोशी के सारे मार्ग मे वरच काशी के आस पास के अनेक गाव मे सुदर सुंदर शिल्पविद्या से विरचित जैन खड पृथ्वी के नीचे और ऊपर पडे है। कर्दमेश्वर का सरोवर श्रीमती रानी भवानी का बनाया है और उस पर यह श्लोक लिखा है।

"शाके गोत्रतुरभूपतिमिते श्रीमत्भवानीनृपा
गौड़ाख्यानमहीमहेन्द्रवनिता निष्कर्दम कार्दम।
कुड ग्रावसुखडमडिततट काश्यां व्यधादादरात्
श्रीतारातनया पुरातकपर प्रीत्यै विमुक्त्यै नृणा॥

अर्थ—शाके १६७७ मे अपनी कन्या श्रीतारा देवी के स्मरणार्थ यह कर्दम कुंड बगाले की महारानी श्रीभवानी ने बनाया। इन महारानी की कीर्त्ति ऐसी ही सब स्थानो मे उज्ज्वल और प्रसिद्ध है और राजा चन्द्रनाथ राय (उनके प्रपौत्र) मानो उस पुन्य के फल है। भीमचडी के मार्ग मे भी ऐसे ही अनेक चिह्न हैं और भद्राची नामक ग्राम मे एक बडा पुराना कोट उलटा हुआ पड़ा है और पंचक्रोशी करानेवाले उस के नीचे उसी के ईटो से छोटे २ घर बनाते है और इस मे पुन्य समझते है। सम्भावना है कि यहाॅ कोई छोटी राजसी रही हो, क्योकि काशी के चारो ओर ऐसी छोटी छोटी कई राजसियाॅ थीं जैसा आशा-पुर। काशीखंड मे आशापुर को एक बड़ा नगर कर के लिखा है पर अब तो गाॅव मात्र बच गया है। भीमचडी का कुड भी श्रीमती रानी भवानी का बनाया है और उस मे यह श्लोक लिखा हुआ है।

शाके कालाद्रिभूपे गतविलकमत्त गौडराजेन्द्रपत्नी
गन्धर्व्वाम्भोधिमम्भोनिधिसमखनन स्वर्गसोपानजुष्ट ।
चक्रे राज्ञी भवानी सुकृतिमतिकृतिर्भीमचडी सकाशे
काश्यामस्यास्सुकीर्त्तिस्सुर पतिसमितौगीयतेनारदाद्यै. ।

अर्थात् शाके १६७६ मे रानी भवानी ने यह सरोवर बनाया तो इस लेख से ११८ का प्राचीन यह सरोवर है। इस से प्राचीन भी कुछ चिन्ह है, पर अत्यन्त प्राचीन नहीं। देहली विनायक जो मुख्य काशी की सीमा है वही ठीक नहीं हैं, क्योंकि वहाॅ कोई भी प्राचीन चिन्ह शेष नहीं है। वहाॅ के मदिर और सरोवर सब एक नागर के बनाये हुए हैं जिसे अभी केवल सत्तर अस्सी बरस हुए। पर इतने ही समय मे वह बहुत टूट गए है। काशी के कतिपय पडित कहते है कि प्राचीन देहली विनायक वहाॅ से कोसो दूर है। अतएव पचक्रोशी का प्रचलित मार्ग ही अशुद्ध है और यह सभावना भी है, क्योकि सिधुसागर तीर्थ का बहुत सा भाग इस मार्ग मे बाम भाग पड़ता है, पर प्राचीन मार्ग की सडक खेतवालो ने सपूर्ण नष्ट कर डाली। रामेश्वर मे श्री रानी भवानी की धर्म्मशाला और उद्यान है, परतु रामेश्वर के कोस भर उधर बीच मार्ग ही मे एक बड़ा प्राचीन मदिर खड पडा है। बीच मे शिवपुर एक विश्राम है और वहाॅ पाॅचो पाडव है, परतु यह विश्राम इत्यादि कोई काशीखड लिखित नहीं है। सब साहो गोपाल दास के भाई भवानी दास साहो के बनाए हुए है और अब वह एक ऐसा विश्राम हो गया है कि सब काशी के बधु वहीं पचक्रोशी वालो से मिलने जाते है। कपिलधारा मानो जैनो की राजधानी है। कारण ऐसा अनुमान होता है कि प्राचीन काल मे काशी उधर ही बसती थी, क्योकि सारनाथ वहाॅ से पास ही है और मै वहाॅ से कई जैन मूर्त्ति के सिर उठा लाया हूॅ। ऐसी भी जनश्रुति है कि महादेवभट्ट नामक कोई ब्राह्मण था, उसी ने पचक्रोशी का उद्धार किया है।

मुझे शिव मूर्त्ति अनेक प्रकार की मिली है १ पचमुख दशभुज, २ एक मुख द्विभुज, ३ एक मुख चतुर्भुज, ४ पद्मपर से पैर लटकाए हुए बैठे और पार्वती गोद मे बैठी, ५ पालथी मारे, ६ पार्वती को आलिगन

किए हुए इत्यादि। तो इस अनेक प्रकार की शिव मूर्त्तियों की प्राप्ति से शंका होती है कि आगे लिंग पूजन का आग्रह नहीं था।

काशी में किसी समय में दश नामी गोसाइयों का बड़ा प्राबल्य था और इन महात्माओं ने अनेक कोटि मुद्रा पृथ्वी के नीचे दबा रक्खी है अतएव अनेक ताम्र पत्र पर बीजक लिखे हुए मिलते हैं, पर वे द्रव्य कहाँ है इसका पता नहीं। इन गोसाइयों ने अनेक बडे बडे मठ बनवाए थे और ये सब ऐसे दृढ बने है कि कभी हिल भी नही सकते। इन गोसाइयों मे पीछे मद्यपान की चाल फैली और इसी से इन का तेजो-नाश हुआ और परस्पर की उन्मत्तता और अदालत की कृपा से इन का सब धन नाश हो गया, पर अद्यापि वे बडे बड़े मठ खड़े है। इन गोसाइयों के समय मे भैरव की पूजा विशेष फैली थी। कालिज मे एक विस्तीर्ण पत्थर पडा है उस पर एक गोसाइयों के बनाए मठ और शिवाले और उसकी विभूति का सविस्तर वर्णन है मै उस को ज्यो का त्यो आगे प्रकाश करूंगा जिससे वह समय स्पष्ट हो जायगा।

यहाँ जिस मुहल्ले मे मै रहता हूँ उस के एक भाग का नाम चौखम्भा है। इस का कारण यह है कि वहाँ एक मसजिद कई सै बरस की परम प्राचीन है। उसका कुतबा कालबल से नाश हो गया है पर लोग अनुमान करते है कि ६६४ बरस की बनी है और मसजिदे चिहल सुतून, यही उस की 'तारीख' पर यह दृढ़ प्रमाणी भूत नहीं है। इस मसजिद मे गोल गोल एक पंक्ति मे पुराने चाल के चार खभे बने है अतएव यह नाम प्रसिद्ध हो गया है। यही व्यवस्था ढाई कनगूरे के मसजिद की है, यह मसजिद भी बड़ी पुरानी है। अनुमान होता है कि मुगलो के काल के पूर्व की है। इसकी निर्मिति का काल मे १०५६ ई० बतलाते है। इस से निश्चय होता है कि इस मुहल्ले मे आगे अब सा हिंदुओ का प्राबल्य नहीं था, पर यह मुहल्ला प्राचीन समय से बसा है।

मै ने जो अनेक स्थलो पर लिखा है कि जैन मूर्त्ति बहुत मिलती हैं इससे यह निश्चय नहीं कि काशी मे जैन के पूर्व हिंदूधर्म्म नहीं था, क्योकि जैन काल से पूर्व की और सम काल की हिंदुओ की अनेक

मूर्त्ति अद्यापि उपलब्ध होती है। कालिञ्ज मे एक प्रस्तर खड पड़ा है और उस की लिपि परम प्राचीन है। पडित शीतलाप्रसाद जी का अनुमान है कि यह लिपि पाली के भी पूर्व की है। इस पत्थर पर एक काली के मदिर की प्रतिष्ठा का समाचार है और इस का काल अनेक सहस्र वर्ष पूर्व्व है और उस मे ये श्लोक लिखे है।

१

ख्याता वाराणसीय त्रिभुवनभवने भोगचौरीति दूरात्।
सेवन्ते यां विरक्ता', जननमरणयो मोक्षमत्तैकरक्ता ॥

२

यत्र देवोऽविमुक्त यो दृष्ट्या ब्रह्महाऽपि च्युतकलिकलुषो जायते शुद्धभाव:। अस्यामुत्तुङ्गशृङ्गस्फुटशशि किरिणा ॥

३

प्रतुलिविविधजनपदस्त्रीविलासाऽभिराम विद्या वेदान्ततत्त्वव्रतजपनियमव्यग्रचद्राभिजुष्ट ॥ श्रीमत्स्थान सुसेव्य ॥

४

तत्राऽभूत् सार्थनामा शिशुरपि विनयव्यापदो भद्रमूर्त्तिः त्यागी धीर: कृतज्ञ: परिलघविभवोप्यात्मवृत्याभिजीवी ।

५

वर्णी चडनरोत्तमांगरचितव्यालम्बिमालोत्कटा।
सर्प्पत्सर्प्पविवेष्टिताङ्गरपशुव्याविद्धशुष्कामिषा लीला नृत्यरुचिपिलोत्प

६

यस्यापि न तस्य तुष्टिरभवत् यावत् भवानीग्रह शुशिलष्टा ऽमलसन्धि वन्धघटित घटानिनादोज्ज्वलं। रम्य दृष्टिहर शिलोच्च्याय ॥
ध्वज चामर सुकृति नाश्रेयोऽर्थिना कारितं

७

इस लेख के उपसहार काल मे मणिकर्णिका घाट का अवशिष्ट वर्णन करता हूँ। अब जो साप्रत घाट वर्तमान है वह अहल्याबाई का बनवाया हुआ है और दो बड़े बड़े शिवालय भी घाट की सीमा पर उन्हीं के बनाए है और उन पर ये श्लोक लिखे है।

श्रीमान् होलकरोपाख्यख्यातो राजन्यदर्प्पहा ।
मल्लारिरावनामाऽभूत् खडेरावस्तु तत्सुतः ॥ १ ॥
विलासी गुणकल्पद्रुः शूरो वीराभिसम्मतः ।
तत्पत्नी पुण्यचरिता कुलद्वयविभूषणा ॥ २ ॥
अहल्याख्या तया ख्याता तृषु लोकेषु कीर्तये ।
बद्धोघट्टस्सुसोपानो मणिकर्ण्यास्सुविस्तृतः ॥ ३ ॥
तत्पार्श्वयोर्विधायेमौ प्रासादावुन्नतौ पृथक् ।
तयो' पश्चिमदिक्संस्थे स्थापितो गौतमेश्वरः ॥ ४ ॥
प्राक् संस्थे तारकेशांक अहल्योद्वारकेश्वरः ।
स्थापितो वसुवेदैह विधुसम्मतवैक्रमे ॥ ५ ॥
रामेन्दूदधि भू युक्ते शालिवाहनजेशके ।
राधशुक्लद्वितीयाया गुरौ दु दुभिवत्सरे ॥ ६ ॥
घट्टोत्सर्गः सुसम्पन्नः यजमान्यभ्यनुज्ञयया ।
स्वामिकार्यहितैकेच्छु जीवाजीशर्म्म हस्ततः ॥ ७ ॥

(शाके १७१३)

काशी मे बिन्दुमाधव घाट सम्वत् १७६२ मे श्री छत्रपति महाराज के पन्त प्रतिनिधि परशुराम के पुत्र श्री श्री निवास की स्त्री श्रीमती राधाबाई ने बनवाया है और ऐसा अनुमान होता है जब यह घाट नहीं बना था तभी से इस का नाम नरसिह दाढा था, क्योकि नरसिंह दाढ़े का नाम उस श्लोक मे पड़ा है जो बाई साहब के काल का बना है। निश्चय है कि नरसिह दाढ़ा के नाम से लोग सोचेगे कि यह कौन वस्तु है, परतु मै इतना ही कह सकता हूँ कि वह नरसिंह दाढ़ा एक पत्थर का केवल मुख का आकार है जो रामानद की मढ़ी में हनुमान जी की बाईं ओर दीवार मे लगा है और जब वहाँ तक पानी चढ़ता है तब इद्रदमन का नहान लगता है। ऐसा अनुमान होता है कि यह इसी नाप के हेतु बनाया हो वा यह किसी पुरानी मूर्ति का मुँह है जो नरसिह जी के मुँह के नाम से पूजता है। पर कोई कहते हैं कि वह रामानद गोसाईं का मुँह है। जो हो, मुँह तो गोल पुराना मुछमुंडा सा है।

यही श्लोक वहाँ खुदा है।

स्वस्ति श्री विक्रमार्केद्विवननगरधरासमिते १७६२ क्रोधनाद्वे ।
मासीषे शुक्लके दिक्तिथिहरिभयुतेचान्हिविश्वेशतुष्ट्यै ॥
श्रीशाहो. श्रीनिवासः प्रतिनिधिपदग पर्शुरामात्मजस्त ।
इजायाराधाकृतोय जयतिनृहरिदष्ट्राख्यवट्ट' सुबद्धः ॥ १ ॥
प्रत्यतरमिद ऊर्ध्व श्लोकस्यद्वारिदीपवत् ।
अकारिबालकृष्णेन स्वामिकार्यनिरूपक ॥ २ ॥

तथा काशी मे जो वृद्धकाल महादेव का मदिर है वह भी किसा छत्रपति के आश्रितो मे मेघश्याम के पुत्र चाविक उपनामक देवराज ने बनाया है और एक तो कालेश्वर के लिग का जीर्णोद्धार किया और अपने नाम देवराजेश्वर एक शिव और बैठाया है जो इन श्लोको से प्रगट है।

अब्देत्वीश्वरसज्ञके शुभदिने सस्थाप्य कालेश्वर ।
प्राचीन प्रणतार्तिभजनपर श्रीदेवराजेश्वर ॥
शाहूछत्रपते कृपालुवशग. श्रीदेवरोय. स्वय ।
मेघश्यामसुतः शिवालयमहो काश्यामबध्नात्ध्रव ॥ १ ॥
श्रीमत्प्रौढ़प्रतापप्रगटितयशस. शाहुभूपालकस्य ।
प्राजस्याज्ञानुकारिद्विजहितविहितश्चाविकोदेवराय. ।
धात्रब्देमोग्भट्टानुमितमुपवन गेहशालाविशाल ।
काश्याविश्वेश्वरस्यत्रिजगदधनुष. प्रीतयेनिर्निमाय ॥ २ ॥

पापभत्तेश्वर भैरव का मदिर भी बाजीराव का बनाया है। जो हो, अब काशी मे जितने मदिर वा घाट है उन मे आधे से विशेष इन महाराष्ट्रो के बनाए हुए है।

शिवपुर का द्रौपदी कुण्ड

यह बात प्रसिद्ध है कि शिवपुर काशी की पचक्रोशी मे कोई तीर्थ नहीं केवल लोगो के वहाँ टिकते टिकते वह टिकान हो गई है और देवता बिठा दिये गए है। पर अबकी द्रौपदी कुड मे एक पत्थर के

देखने से ज्ञात हुआ कि यह प्राचीन तीर्थ है और तीन सौ बरस पहिले भी यहाँ पाडवो का मदिर था। वरच "सुकृति कृति हितैषी" पद जो उस मे राजा टोडरमल का विशेषण दिया है उस से ज्ञात होता है कि उन्हो ने भी किसी के बनाये हुए कु ड का जीर्णोद्धार किया है इससे उसकी और भी प्राचीनता सिद्ध होती है। यह बावली राजा टोडरमल ने स० १६४६ मे बनवाई थी और "पाडव मडपे" इस पद से स्पष्ट है कि वहाँ उस काल मे पाडवो का मदिर था। इस का पहिला श्लोक नहीं पढ़ा गया बाकी के तीन श्लोक पाठको के विनोदार्थ यहाँ प्रकाशित होते है।

प्रत्यर्थिक्षितिपालकालनसु ***** ने दूतिका।
मुद्राङ्क प्रकटप्रतापतपनप्रोल्लासिताशामुखे ॥ १ ॥
क्षाणाशेकवरे प्रशासति महीं तस्मिन् नृपालावलिस्फूर्जन्मौ-
लिमरीचिवीचिरुचिरोदञ्चत्पदाम्भोरुहे ॥ २ ॥
तद्राज्यैकधुरन्धरस्य वसुधा साम्राज्यदीक्षागुरोः।
श्रीमद्दण्डनवशमण्डनमणे श्रीटोडरक्ष्मापतेः।
धर्मौघैकविधौ समाहितमतेरादेशताऽचीकर-
द्वापीं पाण्डवमण्डपे**वनो गोविन्ददास. सुधीः ॥ ३ ॥
ऋतुनिगमरसात्मासम्मिते १६४६ वत्सरेशे
सुकृतिकृतिहितैषी टोडरक्षोणिपालः।
विहितविविधपूर्त्तोऽचीकरच्चारु वापीम्
विमलसलिलसारा बद्धसोपान पंक्तिम् ॥ ४ ॥

—❀—

पंपासर का दानपत्र।

यह दानपत्र गोदावरी के तीर पर एक खेतवाले को मिला है। यह पॉच टुकड़ो मे अच्छा गहिरा खुदा हुआ कपाली लिपि मे पॉचो टुकड़े एक तामे की सिकड़ी मे बंधे हुए एक तामे के डब्बे मे बद और उसी डब्बे मे शीसे की भॉति किसी वस्तु के आठ टुकड़े और एक चोगा

जिस मे सील लगी हुई थी निकला है। अनुमान होता है कि इस चोगे मे कागज रहा होगा, जो काल पाकर भीतर ही भीतर गल गया है। यह पत्र चन्द्रवंशी क्षत्री दो राजाओ के दिए स० १६७ के है और इन के पढने से उस काल की बहुत सी चाल व्यवहार और उन के राज्य करने की नीति इत्यादि प्रगट होती है। इस से इनका यथा-स्थित सस्कृत का भाषानुवाद यहाँ प्रकाश होता है। इस वश का और कहीं पता नहीं लगा है। केवल उन दोनो ताम्रपत्रो से जो कालेपानी से सं० १८५७ मे एशियाटिकसोसाइटी मे आए थे इन का सबध ज्ञात होता है, क्योकि उन मे यही लिपि और इन्हीं दोनो वशो का वर्णन है पर नाम अलग अलग है और उन दोनो मे सबध भी नहीं है।

विजनजवन नामक क्षत्रियो के दो प्राचीन कुल थे जिन की संज्ञा ढढ़िया और पुछड़िया थी ॥ १ ॥

अपने बैरियो का सर्व्वस्व धन और धर्म्म नाश करके और भोग करके ढढ़िया वश समाप्त हुआ।

पुछड़िया कुल के राजा जब दोनो कुलो के स्वामी हुए तब इन लोगो ने प्रजा का बड़ा आडम्बर से सत्कार किया और चक्रवर्त्ती हो गए ॥ ३ ॥

विद्या मे बडे बड़े पद और सभाओ मे बडी बड़ी वक्तृता और आदर के अनेक आकाशी चिन्हो से इन के अनुयायी सदैव शोभित रहते थे ॥ ४ ॥

उदार ऐसे थे कि समाधि मे भी रुपया नहीं बचने पाता था, चारो ओर केवल जाचक ही जाचक दिखाई देते थे ॥ ५ ॥

कलानिपुण ऐसे थे कि इन के सिवा और कोई था ही नहीं और राजनीति के छल बल के तो एकमात्र वृहस्पति थे ॥ ६ ॥

कहते हैं कि शौरसेन यादव वश मे बलदेव जी से इस वंश का साक्षात् सबध है, क्योकि अब तक ये जैसे हलीमद प्रिय भी है ॥७॥

ये इतने चतुर थे कि और सब जाति के लोग इन के सामने मूर्ख ज्ञात होते थे और प्रबल भी इतने कि इन की बात कभी दोहराई नहीं जाती थी ॥ ८ ॥

इन मे वेणु के पुत्र सगर के पौत्र द्वीपसिंह के प्रपौत्र नाभाग और त्रिशकु नामक दो राजा हुए ॥ ९ ॥

नाभाग को भोज मदमत्त और भगवान तीन पुत्र और त्रिशंकु को बावन नामक एक पुत्र था ॥ १० ॥

बावन को गौरचद्र और हनूमान दो पुत्र हुए, जो अब तमसा कृष्णा तक नीलगिरि से हिमगिरि के प्रात तक राज्य करते है ॥ ११ ॥

इन के अभिषेक के जलकण से और हाथियो के मद से तथा शूरो के परिश्रम और रति शूरो के स्वेद जल और इन के शत्रुओ की स्त्री के नेत्रजल से मिल कर इन की दान जलधारा नगर के चारो ओर खाई सी बन रही है ॥ १२ ॥

जिन लोगो को ये जीतते थे उन की ऐसी दुर्गति होती थी कि वे अन्न वस्त्र को भी दीन हो जाते थे तथापि ये ऐसे दयालु थे कि यही मात्र उन के शरण होते थे ॥ १३ ॥

प्राचीन कर सब इन लोगो ने क्षमा कर दिए। इन के काल मे केवल आठ दस कर बच गए। उस पर भी प्रजा को दुःखी देख कर ये उन का बड़ा प्रतिपालन करते थे ॥ १४ ॥

वरच ये ऐसे दयालु थे कि और राजाओ की भांति आप कर लेने मे ये ऐसे लज्जित होते थे जिस का वर्णन नहीं। इसी से पाठशाला धर्म्मशाला इत्यादि धर्म कार्य के हेतु कर सगृहीत हो कर उन्हीं कामो मे व्यय होता था ॥ १५ ॥

शुक्लानधान उसी को समझते थे जो इन के जातिवालो की नौकरी वा बनज के मिस आवे ॥ १६ ॥

लक्ष्मी के एक मात्र आश्रय सरस्वती के पूरे दुर्गा के वर्ग तीनो शक्ति से ये सम्पन्न और त्रिदेव पुरजन के बड़े आग्रही थे ॥ १७ ॥

इन धर्मावतारो ने पपासर तीर्थ पर चन्द्रमा के पूर्ण ग्रास पर फाल्गुनी पौर्णिमा सम्वत् १९७ पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र व्यतीपात योग वैद्रथ करण शनिवार कन्या पर गुरु मेष पर शुक्र मीन पर सूर्य कुम्भ मे चद्रमा मिथुन मे बुध करकट मे मगल और शनि मे पंपासर तीर्थ मे स्नान कर परम धार्मिक परमेश्वर परम माहेश्वर भट्टारक महाराज

गौरचद्र तथा हनुमच्चद्र मुडाल गोत्र गर्गाङ्गिरस मुडाल द्विजवर ठक्कुरनासी के पौत्र ठक्कुर उव्वट के पुत्र ठक्कुर चुप्पठ शर्म्मा को कलिगदेशान्तर्गत खातावी प्रगने के छींछल प्रगने का पसेसरी और कारस नामक दो ग्राम दे कर इस के सीर सायर आकास पाताल खेत खवट बाटी तिवारी जल थल सब पर इन का अधिकार करते है इन के वश का जो होय वह उस को मानै कोई कर नहीं लगेगा ।

मि० चैत्र शुद्ध १ सं० १६८ विक्रम के लिख सूत्रधार प्रवासी राय और ब्राह्मण ब्राह्ममय ने शुभ ।

(इस के आगे ये श्लोक लिखे है)

ये सर्वेंस्युर्भाविन' पार्थिवेन्द्रान्तेभ्यो भूयोयाचते रामचन्द्रः ।
सामान्योऽयं धर्म्मसेतुर्नृपाणा काले काले रक्षणीयो भवद्भि. ॥
स्वदत्ता परदत्ता वा ब्रह्मवृत्ति हरेत्तुय. ।
षष्ठि वर्ष सहस्राणि विष्ठाया जायते क्रिमि ॥
शुभमस्तु श्री ॥

—❀—

कन्नौज का दानपत्र

यह दानपत्र राजा गोविन्दचन्द्र कन्नौज के राजा का है जो दिल्ली के बादशाही खजाने से सिख लोग लाहौर लूट कर ले गए थे और अब श्री पडित राधाकृष्ण चीफ पडित लाहौर ने उस की एक प्रति हमारे पास भेजी है । इस राजवश का पूर्व स्थापक गाहरवाल राजा था और करल्ल इस का अन्तिम राजकुमार हुआ । उसी वश की एक शाखा महिआल मे (वा महिआल का पुत्र) भोज हुआ जिस का काल ८८५ ईस्वी है । इन भोज और करल्ल की कीर्त्ति समाप्त होने के पीछे उसी वंश की शाखा मे यशोविग्रह राजा हुआ उस का पुत्र महीचन्द्र, उस का पुत्र चन्द्रदेव, उस का पुत्र मदनपाल और उस मदनपाल का पुत्र गोविदचन्द्र था, जिस ने यह दान किया है । यह राजा ऐसा दानी था

कि इस के दिये हुये गाँवो के शतावधि दानपत्र मिले है। ये लोग वैष्णव वा वैष्णवो के अनुयायी थे, क्योंकि इन के दानपत्रो पर गरुड़ का चिह्न और गोविद्चन्द्र की मोहर पाचजन्य शख है। 'अकुठोत्कुठ' यह श्लोक प्रायः दानपत्रो पर है। यह दानपत्र संवत् ११८२ मे माघ वदी ६ शुक्रवार को ग्रीवमती (?) तीर्थ मे गगा मे स्नान कर के राजा गोविद्चन्द्र ने गौतम गोत्र के गोतमाङ्गिरस मुद्गल विप्रवर के ब्राह्मण ठक्कर अल्हन के पुत्र छीम्हठ बाम्हठ दोनो भाइयो को हलद तालुके का गोउली नाम गाँव दिया है।

स्वस्ति—'अकुण्ठोत्कुण्ठवैकुण्ठकण्ठलुठत्करः। सरम्भः सुरतारम्भे सश्रियः श्रेयसेऽस्तुव.॥ १॥ आसीदशीतद्युति वंशजातक्ष्मापालमालासुदिवङ्गतासु। साक्षाद्विवस्वानिवभूरिधाम्ना नाम्ना यशोविग्रह इत्युदारः॥ २॥ तत्सुतोऽभून्महीचन्द्रश्चन्द्रधामनिभनिजम्। येनापारमकूपार पारेव्यापारितयश.॥ ३॥ तस्याभूत्तनयोनयैकरसिकः क्रातद्विषन्मण्डलो विध्वस्तोद्धतवीरयोतिमिरः श्रीचन्द्रदेवोनृप.। येनोदार तरप्रतापशमिताशेषप्रजोपद्रवम् श्रीमङ्गाधिपुराधिराज्यमसम दोर्विक्रमेणार्जितम्॥ ४॥ तीर्थानि काशिकुशिकोत्तरकौशलेन्द्रस्थानीयकानि परिपालयताभिगम्य॥ हेमात्मतुल्यमनिशददता द्विजेभ्यो येनाङ्किता वसुमती शतशस्तुलाभिः॥५॥ तस्यात्मजोविजयपालइतिक्षितीन्द्रचूडामणिर्विजयतेनिजगोत्रचन्द्रः। यस्याभिषेककलशोल्लसितै. पयोभि. प्रक्षालितकलिरजः पटल धरित्र्याः॥ ६॥ यस्यासी द्विजयप्रयाणसमये तुङ्गाचलोच्चैश्चलन्माद्यत्कुम्भिपदक्रमायमभरभ्रम्यन्महीमण्डलम्। चूड़ारत्न विभिन्नतालुगलितसनासृगुद्भासितः शेषः पेषवशादिवक्षणमसौक्रोडेनिलीनाननः।' ७॥ तस्माद्जायत निजायत बाहुबल्लिवद्धावरुद्धनवराज्य गजोनरेन्द्रः। सान्द्रामृतद्रवमुचा प्रभवो गवा यो गोविन्दचन्द्रइति चन्द्रइवाम्बुराशेः॥ ८॥ नकथमप्यलभत्तरणक्षमास्तिसृषु दिक्षुगजानथवज्रिणः। ककुभिबभ्रमुरभ्रमुवल्लभ प्रतिभटाइवयस्यघटागजाः॥ ९॥

सोय समस्तराजचक्रससेवितचरणः परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परममाहेश्वर निज भुजोपार्जित श्रीकान्यकुब्जाधिपत्य श्रीचन्द्रदेवपदानुयात परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परम माहेश्व-

राश्वपति गजपति नरपति राज्यत्रयाधि विविध विद्याविचारवाचस्पतिः श्रीमद्गोविन्दचन्द्रदेवो विजयी इल्द्दोपपत्तनायामगोउल्लीग्राम निवासिनो निखिलजन पदानुपगतानपि च राजाराज्ञी युवराज मन्त्रिपुरोहित-प्रतिहार-सेनापतिभाण्डारिकाक्षपटलिकभिकनैमिमित्तिकान्तः पुरिक-दूत-करि-तुरगपत्तनाकरस्थान्नागोकुलाधि पुरुषानाज्ञापयति बोधयत्यादिशतिच यथा विदितमस्तुभवतां मयोपरिलिखितग्रामः सजलस्थलः सहोहलवणा-करः समत्स्याकर. सगर्तोखरः समधूकाम्रवनवाटिकः विटपतृणयुतोगोचर-पर्य्यन्तः सोर्ध्वाविम्बस्तारः घटविबद्धः स्वसीमापर्य्यन्तः द्वयषीत्यधिकैका दशशत सवत्सरे ११८२ माघेमासि कृष्णपक्षे षष्टयांतिथौ भृगावपिते. श्रीवमतीस्थलेगङ्गाया स्नात्वा विधिवन्मन्त्रदेव मुनिमनुजभूत पितृगणा स्तर्पयित्वा तिमिर पटल पाटन पटुमहसमुद्धतार्चिषमुपस्थायौषधिपति-सकलशेखरं सप्रभ्यर्च्य त्रिभुवनत्रातुर्वासुदेवस्य पूजा विधायप्रचुरपाय-सेनहविषा हविर्भुजंहुत्वा मातापित्रो रात्मनश्च पुण्ययशोभिवृद्धयेऽस्मा-भिरग्रे करणकुशलतायुतकमतुलोदक पूर्वगौतमगोत्राभ्यागौतमाङ्गिर समुद्गलत्रिः प्रवराभ्याठक्कुर श्रीआल्हनपुत्राभ्या श्रीछीछट श्रीवाछट शर्म्मभ्या आचन्द्रार्क यावच्छासती कृत्यप्रदत्तामत्वा यथा दीयमानभाग-भोगकर प्रवणिकरतुरुष्कदण्ड सर्वादायनाज्ञा विधेकोभूयत्तान्तव्योति।

भवन्तिचात्र श्लोकाः।

भूमिय.प्रतिगृह्णाति यश्चभूमिप्रयच्छति। उभौ तौपुण्यकर्माणौ नियतस्वर्गगामिनौ॥ १ ॥ सबधमासनछत्र वराश्वावरवारणा.। भूमिदानस्य-चिन्हानि फलमेतत्पुरदर॥ २ ॥ सर्व्वानेतान्भाविन.पार्थिवेन्द्रान्भूयो भूयो याचतेरामचन्द्र.। सामान्योऽयं धर्मसेतुर्नृपाणा कालेकालेपाल-नीयोभवद्भिः॥ ३ ॥ बहुभिर्वसुधाभुक्ता राजभि.सगरादिभि। यस्ययस्य-यदाभूमिस्तस्यतस्यतदाफलम्॥४॥ गामेकाम् स्वर्णमेकञ्च भूमेरप्येकमङ्गलम्। हरन्नरकमाप्नोति यावदाहूतसंसवम्॥ ५ ॥ तड़ागाना सहस्रेणा-प्यश्च मेघशतेनच। गवाकोटिप्रदानेन भूमिहर्त्ता न शुद्ध्यति" ॥ ६ ॥ इति।

—※—

नागमंगला का दानपत्र ।

श्रीरङ्गपट्टन से १५ कोस उत्तर नागमंगल शहर मे एक मदिर है। वहाँ पर निम्नलिखित लेख ६ ताम्रपत्रो पर खोदा हुआ मिला है जो कि एक मोटे धातु के कड़े से वेधित है, ये पत्रे १० इच लम्बे और ५ इंच चौड़े है।

इस लेख से ज्ञात होता है कि पृथिवी निगुड राजा की स्त्री कुदेवी जो पल्लवाधिराज की पोती थी उसने शके ६६६ मे एक जैन मदिर स्थापित किया था। इसी के सहायता के कारण उस के पति को विजय स्कन्धावार के महाराज पृथ्वी कोगणि से उस के राज्यप्राप्ति के पचास बरस बाद प्रार्थना करने पर यह दानपत्र मिला था।

मर्कए के पत्रों के लेख से मिलता हुआ कुछ कोएगू राजाओ का वृत्तांत इस लेख के पूर्व मे है, जो सन् ४६६ से आरभ होता है। इन लेखो मे केवल इतना ही अतर है कि इस मे प्रथम महाराज का नाम कोडगणी वर्म धर्म महाधिराज और छठे का कोगणी महाधिराज लिखा है और केवल दानकर्त्ता को कौएगणी लिखा है। इस शब्दके भिन्न भिन्न प्रकार के लिखे जाने से कुछ प्रयोजन नहीं केवल इस से यह सूचना होती है कि कुर्ग मे जो एक पत्थर पर खुदा लेख निकाला था और जिस को सत्यवाक्य कोड़गिणी वर्म धर्म महाराजाधिराज ने सन् ८४० मे लिखा था उस मे भी इसी शब्द कोएगणी ही का अपभ्रश है और इस का कभी कभी कोडगू भी लिखते थे जो कि कोड़ागू से बहुत मिलता है। यह कोड़ागू उस दश का प्रचलित नाम है जिस को अग्रेज़ लोग कुर्ग लिखते है।

मर्करा के लेख के सदृश इस से भी ज्ञात होता है कि दूसरे माधव और कदब राजाओ मे सबध भया था अर्थात् पूर्वोक्त ने दूसरे की भगिनी से विवाह किया था, इस मे विष्णु गोप के पुत्र गोद लेने और डिडिकरराय के राज्य का कुछ भी वर्णन नहीं है। इस समय से लेकर भूविक्रम के राज्य तक जिसने सन् ५२१ मे राज्यसिहासन को सुशोभित किया दानपत्र और राज्य इतिहास दोनो मे राजाओ की नामावली

सपूर्ण मिलती है। इस के पश्चात् विलड जिस का शुद्ध नाम राजा श्रीवल्लभाख्य था उस को इतिहास मे वर्त्तमान राजा का भाई लिखा है (प्रोफेसर डाउसन के अनुसार छोटा भाई और टेलर के अनुसार बडा)। यथार्थ मे वह राजा और राज्यप्रबध का कार्य सम्पादक दोनो था। दानपत्र मे छोटे भाई का नाम नवकाम लिखा है। कोगणीमहाराज सोमेश्वर का वृत्तांत जिस का शुद्ध नाम डाउसन शिवग महाराय टेलर शिवरामराय बताते है पीछे लिखा है। इतिहास मे तो यो है कि इस का पौत्र पृथ्वी कोग्णगणी महाधिराज था, जो सन् ७४६ मे राज्य-सिहासन पर था। यही नाम दानकर्त्ता का है और यदि भीमकोप और राजाकेसरी इसी राजा के नामातर मान लिये जाय जैसा कि सभव होता है तो इतिहास और उन पत्र का वृत्तात एक मिल जाता है।

(१) स्वस्ति जित भगवता गतघनगगनाभेन पद्मनाभेन श्रीमज्जान्हवेकुलामलव्योमावभासनभास्कर स्वखड्गैकप्रहारखडितमहाशिलास्तभलब्धबलपराक्रमोदारणारिगणविदारणापलब्धवारणविभूषणविभूपितः काण्वायनसगोत्रश् श्रीमत्कोदगिनवर्माधर्ममहाधिराज तस्य पुत्रः पितुरन्वागतगुणयुक्तो विद्याविनयविहितवृत्तः सम्यक्प्रजापालनमात्राधिगतराज्यप्रयोजनो विद्वत्कविकांचननिकषोपलभूतो नीतिशास्त्रस्य वक्तृ-प्रयोक्तृकुशलो दत्ताकसूत्रवृत्ते. प्रणेता श्रीमान्मामहाधिराज. तत्पुत्रः पितृपैतामहगुणयुक्तोऽनेकचतुर्दन्तयुद्धावाप्तचतुरुदधिसलिलास्वादितयशा. श्रीमद्धरिवर्मामहाधिराजः, तत्पुत्रो द्विजगुरुदेवतापूजनपरो (२) नारायणचरणानुध्यात. श्रीमान्विष्णुगोपमहाधिराज' तत्पुत्रो त्र्यंबकचरणाम्भोरुहराजपवित्रीकृतोत्तमाङ्ग स्वभुजबलपराक्रमक्रयकृतराज्यः कलियुगबलपकावमन्नधर्मवृषोद्धरणनित्यसन्नद्धः श्रीमान्माधवमहाधिराज' तत्पुत्रश् श्रीमत्कदबकुलगगनभक्तिमालिनः कृष्णवर्ममहाधिराजस्य प्रियभागिनेयो विद्याविनयातिशयपरिपूरितांतरात्मा निरवग्रहप्रधानशौर्यो विद्वत्सु प्रथमगण्य' श्रीमान् कोगणिमहाधिराज अविनतनामा तत्पुत्रो विजृभमाणशक्तित्रय "अदरिह" "अलत्तुप" "पौरुलाले" पेलगराज्यानेकसमरमुखमखहुतशूरपुरुष पशूपहारविघसविहस्तीकृतकृतान्ताग्निमुखः किरातार्जुनीयपचदशसर्गो (३) दिकोकारो दुर्विनतीतनामधेय. तस्य पुत्रो दुर्दान्तविमर्द मिमृमितविश्वम्भरादिपचालिमालामकरन्दपुजपिजरीक्रीय-

माणचरणयुगलनलिनोमुत्तरनामनामधेयः तस्य पुत्रश्चतुर्दशविद्यास्थानाधिगतविमलमति' विशेषतो नवकोशस्य नीतिशास्त्रस्य वक्तृप्रयोक्तृकुशलो रिपुतिमिरनिकरनिराकरणोदयभास्करः श्रीविक्रमप्रथितनामधेयः तस्य पुत्रः अनेकसमरसम्पादितविजृम्भितद्विरदरदनकुलिशघातव्रणसमरुद्धस्वास्थ्यद् विजयलक्षणलक्ष्मी कृतविशालवक्षस्थलः समधिगतसकलशास्त्राधितत्त्वः समाराधितत्रिवर्गो निरवद्यचरितप्रतिदिनवर्द्धमानप्रभावो भुविक्रमनामधेयः अपिच ॥

नानाहेतिप्रहारप्रतिहतसुभटारामवाटोत्थितासृग्।
भारास्वादामृताशक्षुधितपरिसरद्गृध्रसंरुद्धसीमे ॥
सामन्तान्पल्लवेन्द्रान्नरपतिमजयद्योविलदाभिधाने।
राज्याश्रीवल्लभाख्यः समरशतजयावाप्तलक्ष्मीविलासः ॥

तस्यानुजो नतनरेन्द्रकिरीटकोटिरत्नार्कदीधितिविराजितपादपद्म।
लक्ष्म्याः स्वयं वृतपतिर्नवकामनामाशिष्टप्रियोरिगणदारणगीतकीर्तिः ॥

तस्य कोगणिमहाराजस्य सीमेश्वरापरनामधेयस्य पौत्र समवनतसमस्तसामन्तमुकुटतटघटितबहुबलरत्नविलसदमरधनुष्काण्डमण्डितचरणनखमण्डलो नारायणे निहितभक्ति. शूरपुरुषतुरगनरवारणघटा संघट्टदारुणसमरशिरसिनिहितात्मकोपो भीमकोप. प्रकटरतिसमय समनुवर्तनचतुरयुवतिजनलोकधूर्तो लोकधूर्तः सुदुर्धरानेकयुद्धमूर्धन्यलब्धविजयम्पद्हितगजघटा (५) तकेसरीराजकेसरी अपिच ॥

यो गगान्वयनिर्मलालरतलव्याभासनप्रोल्लसन्।
मार्तण्डोरिभयकरः शुभकर' समागरत्नाकरः ॥
सौराज्य समुपेत्यराज्यसवितारा जन्यतारोत्तमो।
राजा श्रीपुरुषेश्वरो विजयते राजन्यचूडामणि' ॥
काम. रामः सचापे दशरथतनयो विक्रमे जामदग्न्यः।
प्राज्ये वीर्ये बलारिर्बहुमहसिरविः स्वप्रभुत्वेधनेशः ॥
भूयोविख्यातशक्तिः स्फुटतरमखिलप्राणभाजाविधाता।
धात्राश्लिष्टः प्रजानापतिरितिकवयायप्रशसतिनित्यम् ॥

तेन प्रतिदिनप्रवृत्तमहादानजनितपुण्याहघोषमुखरितमन्दिरोदारेण श्रीपुरुषप्रथमनाममधेयेन पृथ्वीकोगणिमहाराजेन, अष्टानवत्युत्तरषट्च्छ-

तेषु शकवर्षेष्वातितेष्वात्मनः प्रवद्धमानविजयवीर्यं संवत्सरेपचाशत्तमेव-द्धमाने मान्यपुरमधिवसति विजयस्कंदावारे श्रीमूलमूलशरणाभिनंदितनंदिसगान्वयइकृगित्तरनाम्निगने मूलिकलगछे स्वच्छतर गुणाकरकीरप्रततिप्रल्हादितसकललोक' चन्द्रइवापरः चन्द्रनंदिनामगुरुरस्ति तस्य शिष्यः समस्तविबुधलोवपरिरक्षणक्षमात्मशक्ति' परमेश्वरलालनीयमहिमा कुमारवद्द्वितीयः कुमारनंदिनामा मुनिपतिरभवत् तस्यांतेवासी समधिगतसकलतत्वार्थसमपितबुधसार्द्धसपत्सपादितकीर्तिः कीर्तिनंद्याचार्यो नामा महामुनिः समजनि, तस्य प्रियशिष्यः शिष्यजनकमलाकरप्रबोधजनक मिथ्याज्ञानसततसनुतससन्मानात्मकसद्धर्मव्योमावभासनभास्करोविमलचन्द्राचार्यः समुदपादि, तस्य महर्षेर्धर्मोपदेशनयाश्रीमद्बाणकलकलः सर्वतपोमहानदीप्रवाहः वाहुदण्डमण्डलाखण्डितारिमंडलद्रुमशुडाडुडुप्रथमनामधेयो निगुण्डयुवराजो जज्ञे, तस्य प्रियात्मजः आत्मजनितनयविषनि'शेषीकृतरिपुलोक. लोकहितः मधुरमनोहरचरितः चरितार्तत्रिकर्णप्रवृत्ति परमगुणप्रथमधेयः श्रीपृथ्वीनिगुंडराजोऽजायत पक्ववाधिराज प्रियतमजाया सगरकुलतिलकात् मरुवर्मणो जातांकुण्डाधिनामधेयामुवाह भर्तृभावनाविर्भुवयातयासततप्रवर्तितधर्मकार्ययानिर्मिताय श्रीपुरोत्तरदिशामल कुर्वतेलोभतिलकधाम्नेजिनभवनाय खण्डस्फुटितनवसस्कारदेवपूजादानधर्मप्रवर्तनार्थं तस्य एव पृथ्वी' निगुण्डराजस्य विज्ञापनया महाराजाधिराजपरमेश्वर श्रीजसहितदेवेन निगुंडविषयातः पाति पोन्नालिनामाग्रामः सर्वपरिहारोपेदत्तः तस्य सीमां तराणि पूर्वस्यादिशि नोलिबेलदा वेगलेमालदि, पूर्वदक्षिणाम्यादिशिपाण्यगेरि, दक्षिणस्यादिशि वेडगल्ली गेरयादिल गेरयापल्लादकुदल, दक्षिणपश्चिमायादिशिजयद शकेय्यावेडगलमोलादुत्तरपश्चिमायादिशि हेनके वितालतुवाजराकेलि, पश्चिमोत्तरस्यांदिशि पुणुसेयगोट्टगालाकालकुप्ये, उत्तरस्यादिशि सामगेडेयपल्लदाह पेरमुडिक्क उत्तरपूर्वस्यादिशि कलाम्बेत्यगट्ट, ईशान्यामन्यादिक्षेत्राणि दत्तानि डु डुसमुद्रदावयलुलकिलुदाडामेगेपदिरक्कडुगमणामपालेयरेनल्लु राजारपाकट्टक्क डुग श्रीवरदडु डगामण्डरातांडडापडुययाडुतांडु श्रीवरदावयतुल्लकम्मरगत्तिनल्लिरिकडुग कालानिपेरगिलयकेडगेआरमडुगं रेपूलिगिलेयाकोयेलगोदायद्दइरुपत्तगुडुग भेद्य अद्दुबुश्रीवरवा बड़गणापदुवणाकोनुणन् देवगेशीम-

दर्प एह्दि मूवन्ताद्बिन्दुमनेतान अस्य दानस्य साक्षिण: अष्टादशप्रकृतय: अस्य दानस्य साक्षिण: षराणवति सहस्रविषयप्रकृतय: योऽस्यापहर्ता लोभान्मोहात्प्रमादेन वा सपचभिर्महद्भि पातकै: सयुक्तो भवति यो रक्षति सपुण्यभाग् भवति अपि चात्रमनुगीता श्लोका' ।

स्वदातुं सुमहच्छक्यं दु'खमन्न्यस्य पालनं ।
दान वा पालन वेति दानाच्छ्रेयोऽनुपालन ॥
देवस्व तु विषं घोर न विष विषमुच्यते ।
विषमेकाकिनं हन्ति देवस्वं पुत्रपौत्रकौ ॥

सर्वकलाधारभूतचित्रकलाभिज्ञेन विश्वकर्माचार्येणेद शासन लिखित चतुष्कण्डुकत्री हिवीजमात्र द्विकण्डुककगुक्षेत्रं तदपि ब्रह्मदेयमिव रक्षणीय ।

चित्रकूट (चित्तौर) स्थ रमा कुंड प्रशस्ति:

ओनम: श्रीगणेशप्रसादात् सरस्वत्यै नम: ॥ श्रीचित्रकोटाधिपति श्रीमहाराजाधिराज महाराणा श्रीकुभकर्ण पुत्री श्रीजीर्ण प्रकारे सोरठ पति महाराया राय श्रीमडलीक भार्या श्रीरमाबाई ए प्रासाद रामस्वामिरु रामकुड कारायिता सवत् १५५४ वर्षे चैत्र सुदि ७ रवौ मुहूर्त कृता. । शुभ भवतु ।

श्रीमत्कुभ नृपस्य दिग्गज रदातिक्रात कीर्त्यं बुधे: । कन्या यादव वंश मंडन मसि श्रीमडलीक प्रिया । सगीतागम दुग्ध सिधुजसुधा स्वादे परा देवता । प्राद्युम्न कुरुते वनीपक जन कं न स्मरत रमा ॥ १ ॥ श्रीमत्कुभलमेर दुर्ग शिखरे दामोदर मदिरं श्रीकुंडेश्वर दक्षणा श्रित गिरे स्तीरे सर: सुदरं । श्रीमद्भूरि महाब्धि सिधु भुवने श्रीयोगिनी पत्तने भूय: कुड मचीकरत्किल रमा लोकत्रये कीर्त्तये ॥ २ ॥ श्रीकुभोद्भवयां बुधिर्नियमित: कि वा सुधा दीधितेर्निक्षेप स्त्रिदशैरशोषण भिया किवाप्सरा सुदर । प्राप्तु पौर पुरध्रि वृंद मभुजद्भूमी तल मानसं चित्र रामशर प्रहार भयतोब्धिर्वेह कडायते ॥ ३ ॥ यस्मिन्नीर विहारि कोक मिथुन क्रीडासमुन्मीलिते शीताशा वितरेतरेण नितरा विश्लेष मासाद्य वा । तापे नैव तनौ विभर्त्य विरत सोपान भित्ति स्फुरत् स्वीयागे प्रतिबिब सगम वशादूरेपि तीरे चरत् ॥ ४ ॥ पानीय हार विहार सुदर सुदरी

वदन निज प्रतिबिब भूत मितीह निर्मल धीर नीरगमबुज। आदातु मुद्यत पाणिना जलदोलनेन गत श्रमा वितनोति कानन कुंभ पूरणमत्र विस्मय विभ्रमा ॥ ५ ।' रसाल तरु मंजुल पिक विनोद नादोत्कलं क्वचित् कनक केतकोद्र पराग पिंगाचल। सशीकर सुशीतल सुरभि वृंद मंदानिल मदीय मति निर्मल जयति वीर भूमी तल ॥ ६ ॥ यदिय तट भूतल हसित कुंद पुष्पोज्वल क्वचिद्विकच मालती कुसुम लोल भृंगेच्चल। क्वचित् शरलसारणी तरल नीरता पेशलं स्तुवति सुरयोषित: किमुत नंदना दप्यल ॥ ७ ॥ एतद्भित्ति तटालयेषु रुचिरोत्कीर्णैः सुरीणा गणै: क्रीडो पागत पौरयौवत युगोपातै रवतै रपि। तत्तादृक्प्रतिबिबितै रुपलसन्नागांगना संगिभिर्मन्ये कुंडमिद रमा विरचित लोकत्रया दद्भुत ॥ ८ ॥ यद्वारुण प्रतिष्ठा समये समुपेत विबुध वृंदस्य। कनक-दुकूल विवरण विदधाति रमेति लोलुपति सुरा. ॥ ६ ॥ यावच्छेष शिर'सुशेखरपद भूभृतधात्र्या मये मेरुर्मेरु गिरेरुपर्युपरितो ब्रह्मादि लोकत्रय। धत्ते यावदमुत्र वा दिनमणि माणिक्य नैराजन तावच्चारुतर रमा विरचितं कुंड चिर नंदतु ॥ १० ॥

श्री रमा वर्णनं

उन्मीलद्गुण रत्नरोहण मही प्रौढप्रभालंकृता सौदर्यामृत वाहिनी मधुसुहृत्साम्राज्य सर्वस्वभू.। सौराष्ट्रेश्वर यादवान्वयमणे: श्रीमंडलीक प्रभो राज्ञी चारु रमावती वितनुते संगीतमानदद ॥ १ ॥ कुंभब्रह्म सुमीरित क्रममगा दुच्छिन्नता यत्त्वितौ तत्पोद्वृत्य गिरीश भक्ति परमा रम्या रमा भारती। सगीत भरतादि गोत्र विधिना ब्रह्मैक तानोपमा मदानंद विधायक विलसति प्रोल्हासयति परम् ॥ २ ॥ नादा नंद मयी वरोन्नतकरा लीलोल्लसद्वल्लकी रागा रक्त गिरीश्वर स्वरकला शर्मोर्मि-रम्यो ज्वला। लीला दोलित राजहंस गमना सद्भोगि भर्त्तुः सुता पद्मा मोदित मानसा विजयते वागीश्वरी श्रीरमा ॥ ३ ॥ सजाता जलधे विवेक विधुरा धीरेष्वबद्धादरा चापल्याऽभिरता प्रमोद मयते या पंकजातस्थिते:। विद्वत् कुंभ नृपोद्भवा गुण गणा पूर्णा प्रवीणा नदी धैर्य प्रीति मतीति तां विजयते श्रेयो चित श्रीरमा ॥ ४ ॥ राज द्रैवत भूधरा तररत श्रीकांतमाराधयत् कातानंदित मानसा यदनिशं राधेव

चावत्यत'। मेरौ कु भकृते महीप तनय श्रीमडलीक प्रिया श्रीदामोदर मदिर व्यरचयत् कैलास शैलोज्वल ॥ ५ ॥ श्रीरस्तु सूत्रधार रामा। अथ श्रीमहाराज श्रीमडलीक प्रबध.। इदोरनिदित कुल बहुबाहुजात वशेषु यस्य बसतेरतुल बभूव। श्रीमंडलेद्र गिरि रैवतवा-धिवासो दामोदरो भवतु व सुचिर विभूत्यै ॥ १ ॥ श्रीमडलीक दर्शन परितुष्ट मना महेश्वर सुकवि:। श्रीमेदपाट बसतिगुणनिधिमेन यथा मति स्तौति ॥ २ ॥ आश्लिष्ट सुर विटपी संप्रति चितामणिर्मया कलित.। लब्ध' सुवर्ण शिखरी मिलिते त्वयि मडलाधीश ॥ ३ ॥ सुर विटपि विटप विशाल भुजदलकलित विपुल महाफलं। कवि चित्त चितामणि महागुण जाल जन्म महीतल। अनवरत सुर सरिद्मलत-मजल लुलित सुर शिखरि प्रभं कलयामि मडल राज महमिह तोष मेमि हिम प्रभ ॥ ४ ॥ परि कलित पुरुहूतो धन नाथो नयन गोचरो रचित.। साक्षात् कृतो रतीशस्त्वयि मिलिते मडलाधीश ॥ ५ ॥ पुरुहूतमिव गुरु मत्र यत्रित मगल मडित। धननाथमिव धन दानं तोषित चद्रमौलिमख-डित। रतिरमणमिव वर युवति कृतनुति महत विषम शरैर्युत परि-चित्य मडल राज मह मिह गोद्मगममनुव्रतं ॥ ६ ॥ अकुरिता शर्मलता कोरकिता चित चपक व्रतति:। उल्लसिता तनु नलिनी मिलिते त्वयि मडलाधीश ॥ ७ ॥ कलधौत विवरण तरल करजल जनित शर्म सदंकुर जनचित्त चपक कुसुम सभव मधुर तर मधु बंधुर। गणनैक मणि विस्फुरण पुलकित विपुल तनु नलिनी दल अनुभूय मडल राज मिदमपि भवति हृदय मनाकुल ॥ ८ ॥ कर्पूर नयन युगे वपुषि सुधा रश्मि परिषेक.। हृदये परमानदस्त्वयि मिलिते मंडलाधीश ॥ ९ ॥ घन सार सारसभाभि मार्दवलोचन हिमनिर्भरे सकल प्लुतवपुरद्य हिमहिम धाम धामनि निर्भरे। मम मनसि परमानद सपदुदारतर मभि बर्द्धते नरनाथ मवति विलोकिते सति मंडलेश शुचिस्मिते ॥ १० ॥ सुर तरु रद्य नरेश गेहदश मम कलयति। सुरगिरि रिति यदुराज राजमान संकलयति। सुरपति रद्यमिति मति रुदेति। संप्रति नर नायक परिरिति नयनानुरक्ति रुदयति। दृढसायक अनुपमतम महिम महीप सुतमंडल सकल कला। अष्ट भूति भवमवधि नवनिधि सनिधि रधिकलमा ॥*

* अत्र अतिम पक्तिः पठनाशक्यत्वात्परित्यक्ता।

गोविंद देवजी के मंदिर की प्रशस्ति ।

"सम्वत ३४ श्री शकबध अकबरशाह राज्ये श्रीकुर्मकुल श्रीपृथीराजाधि । राजवश महाराज श्रीभगवंतदास सुत श्रीमहाराजाधिराज श्रीमानसिहदेव श्रीवृन्दावन जोग पीठस्थानकरा श्रीगोविन्ददेव को ।"

इस के प्रारभ होने का यह सवत् जानना चाहिए ।

"श्रीवृन्दाविपिने शिवादिदिविषद्वन्दावलीवन्दिते . . . . श्री गोविन्द .. ष्णक्सदाराजते ॥ १ ॥ श्रीमानर्कवरोयदा भुवमयात्सर्वातदैवाधुनासर्व' सौख्यम.. गणौ. स्वंधर्ममुच्चैर्भजन् । श्रीगोविन्द पदंतदेतद्दयिते वासायसद्वै ष्णवालम्भल...तस्मै सदै वा० पः ॥ २ ॥ तस्मिस्तस्यसदान्वितक्षितिपति. श्रीमानसिहाभिध' पृथ्वीराज बिराज .. धे श्चन्द्रमाः । भूभृदभारहमल्लजात भगवद्दासात्मजोमन्दिर कुर्वन्निन्दिरयाबलादचलया ॥ ३ ॥ ...स्तथाविधमहाराजाधिराजाप्यसौ येनैवारि दिगनेन विजयीध्वस्त भ्रमः क्रीडति सश्रीमान० सिह नवायुद्धे यस्य नियत्य दिव्य पितृयाः कीर्त्तिध्रजत्वगताः ॥ ४ ॥ यः क० धिपजातिरेष विजयीश्री मानसिहोनृपः .सदा विजत ... दास सुधीः । श्रीगोविन्दपदारविन्द ..स्तनमन्दिर समदान् कुर्व्वन्तुदयममत्रतूर्ण . पू .. ॥ ५ ॥ श्रीमानसिहाद्भुतम ॥ ६ ॥ .. इन्द्रप्रस्थनिवासि षुगुरुर्गोविन्ददासाभिधः । ...भवदाविष्य दखिल श्रीवैष्णवानासुख श्रीकर्ता हरिणासदानि जदयाया० याविनि.. ॥ ७ ॥ श्रीग्रसेनः कृती, तौद्वौश्रीयुतमानसिहनृपति प्रस्थायितौनन्द ताम् । किम्वाग्गनद्ववनीय प्रतिपदसौख्यगम हद्विन्दतु ॥ ८ ॥ मुनिवेदर्तुचन्द्राह्न १६४७ सम्वन्मन्दिर सम्भवे ॥६॥ श्रीमद्रूपसनातननामानौतौभजेतज ॥ १० ॥"

इन पद्यो का अविकल न होने से अर्थ लिखना हम उचित नहीं समझते । केवल एक दो बात स्मरण रखने के योग्य हैं ।

१ म. अकबर का सस्कृत नाम "अर्कवर" है, प्रायः भाषा-रसिक और सस्कृत-रसिक लोगों के उपयोगी है । २ य. मानसिह की वंशपरम्परा यह है, राजा भारहमल्ल (वा भारामल्ल) राजा भागवतदास

वा भगवंतदास राजा मानसिंह । ३ य श्रीरूपगोस्वामी और श्री सनातन गोस्वामी की प्रशसा जैसी आज काल है वैसी तीन सौ बरस पहिले भी थी लोग आधुनिक कीर्त्ति कल्पना न समझे ।

इस लिपि के निकट ही जगमोहन के द्वार के ठीक सामने भूमि पर एक पत्थर की चट्टान मे यह सफल सबधी लिपि है "राणा श्री अमर सिह जी सुत श्री बागजी सुत श्री सबलसिहजी की जात्रा सफल सम्वत् सतरै सै अगरोतरामंगसेर सुद ७ सो मे लखत प्रोहेत जी जबारा-दास पधारो सम्वत् १७७८ ।

पाँच छोटे छोटे शिखर के दक्षिण, उत्तर मे दो मन्दिर, दक्षिण मन्दिर की शिखर कुछ फूटी है और मदिर का द्वार दो किष्कु ऊँचा है । सीढी के योग से चढते हैं । भीतर एक तल घर में वृदादेवी (वा पातालदेवी) विराजती है । घुमाव की बारह पक्की सीढी उतर कर नीचे दर्शन करना होता है । देवी की मूर्त्ति श्वेतवर (संगमरमर) पाषाण की अष्टभुजी एव सिहवाहिनी ११ इञ्च ऊँची और ६ इञ्च चौडी है । पास ही एक श्वेतवर की छोटीसी चौकी पर श्रीराधिका जी के चरणचिन्ह है । चौकी के तट पर यह पद्य लिखा है ।

तप्तकाञ्चनगौराङ्गि राधेवृन्दावनेश्वरि ।
वृषभानुसुतेदेवि प्रणमामिहरिप्रिये ॥

एक मोरी जिस का निकास बाहर की ओर उत्तर दिशा मे है उस के ऊपर यह प्रशस्ति है ।

"सम्वत ३४ श्रीशकबन्ध अकबर महाराज श्री कर्म कुल श्री पृथी-राजाधिराज वंश श्री महाराज श्रीभगवन्तदास सुत श्रीमहाराजाधिराज श्रीमानसिहदेव श्रीवृंदावन जोग पीठ स्थान मदिर कराजो श्रीगोविद-देव को काम उपरि श्रीकल्याणदास आज्ञा कारि माणिकचद चोपड़० शिल्पकारि गोबिददास दीलवरिकारिगरद: गोरषदासवीभवलू ॥"

मदिर के चारो ओर सङ्कीर्ण कच्चे चौक मे कोई उत्तम स्थान नहीं है, केवल पूर्व द्वार की बाईं ओर कुछ थोड़ी फुलवारी है और पश्चिम द्वार की ओर अति निकट एक छत्री है। यह छत्री प्रथम नाट्य मदिर,

के सामने थी, परंतु अबकी जीर्णोद्धार में परिष्कार एवं संस्कार करके पश्चिम प्रांत मे एक चौतरे पर स्थापित कर दी गई। इस मे चरणचिन्ह शृङ्गवर के बने है और एक स्तंभ पर लिपि है। ज्ञात होता है कि इस मे किसी के अस्थि समूह सञ्चित थे, क्योंकि चरणचिन्ह का व्यवहार प्रायः ऐसे ही स्थान मे होता है। दूसरे राजाओ मे ऐसी रीति भी प्रचलित है पुण्य-स्थान मे अस्थि सञ्चय किया जाय।

"सम्वत् १६६३ वरषे कातिक बदि ५ शुभदिने हजरत श्री३ शाहजहाँ राज्ये राणा श्रीअमरसिह जी वो बेटो राजाश्रीभीम जी राणी श्रीरम्भावती चौखंडी सौराई छैजी "

बौद्धमत का श्लोक जो सारनाथ की धमेख मे मिला था।

७ ये धर्म्महेतु प्रभवाहेतुतेषा तथा गता ह्यवदत्
तेषाचयो निरोध एववादी महाश्रमणः।

बिहार जिले मे बहुतेरी प्राचीन बौध मूरतो पर यह श्लोक खुदा हुआ है, वरन् राजगृह के प्रसिद्ध जैन मदिर मे भी जो बस्ती मे है एक मूर्त्ति पर यही श्लोक खुदा है, और इसी कारण हम उस को प्राचीन बौधमती अनुमान करते हैं।

जेनरल कनिङ्गहाम साहिब ने जो दो हज़ार बरस के लगभग पुराने राजा वासुदेव की अथवा राजा वासुदेव के संवत् नब्बे मे बनवाई महावीर स्वामी की मूर्त्ति मथुरा मे पायी है उस पर ६० का अंक लिखा है। जेनरल साहिब ने जो उस मूर्ति पर से हर्फों का छापा लिया है उस के एक (पहले) टुकड़े मे (सिद्ध ओ नमो अरहत महावीरस्य... .. राजा वासुदेवस्य सवत्सरे ६०) लिखी है। अफसोस है कि हर्फों के घिस जाने के सबब इस से अधिक उस की इबारत पढ़ी ही नहीं जा सकती है।

जिला गया के प्रसिद्ध स्थान देवमंगा मे एक सूर्य्य का मदिर है उस पर यह श्लोक खुदा है। इस लेख से आश्चर्य होता है कि इतने दिनो का लेख वर्त्तमग्न हो।

शून्यव्योमनभोरसेदुकरभेहीने द्वितीयेयुगे ।
माघेवाणतिथौ शिते गुरुदिने, देवो दिनेशालुयं ॥
प्रारभेद्दृष्दाचयेरचयितु सौम्यादिलायाभवो ।
यस्या सीत्सनराधिपः प्रभुतया लोकोविशोकोभुवि ॥

अर्थ—दूसरे युग अर्थात् त्रेता युग के १२१६००० वर्ष बीतने पर माघ शुक्ल पचमी गुरुवार के दिन ऐलपुरूरवा जो बुध से इला मे उत्पन्न हुआ था उस ने पाषाणादिको से दिनेश अर्थात् सूर्य्य का मदिर बनाना प्रारभ किया था । जब यह राज्य करता था तब इस की प्रभुता से सब प्रजा भूमि मे सुखी थी ।

प्राचीन का सम्वत् निर्णय ।

माधवाचार्य्य लिखित किसी की टीका से राजावली ग्रथ से उद्धृत।

यह राजावली ग्रंथ किसी ज्योतिषी ने स० १८१६ मे बनाया है। इस मे सवत्सर, प्रतिपदा के विधान और कालादिक का अनेक निर्णय किया है और फिर कलियुग के राजाओ का और अन्य युग के राजाओ का नाम 'राजाधिराज माधवाचार्य्य टीकायामुक्त' कह के उस ने माधवाचार्य्य के किसी ग्रथ की टीका से उद्धृत किया है। यह सवत् और नामादिक प्राचीन इतिहास के उपयोगी जान कर यहाँ प्रकाश किये जाते हैं ।

सत्ययुग मे—कृष्णातीर मे अमरेश्वरलिग, पुष्करतीर्थ, बौद्धपत्तन-पीठ । राज-कृतसज्ञ कृतपुत्र कृतदेव त्यागी मेन, मुचकुन्द, भैरवनद, अंधक, हिरण्यकशिपु, प्रह्लाद, विरोचन, बलि, वाणासुर, गमासुर, कपिलभद्र, निर्घोषा, मान्धाता, वेणु । कश्यप, सूर्य्य, मनु, महामनु, तक्षक, अनुरञ्जन, विश्वावसु, विमना, प्रद्युम्न, धनञ्जय, महीदास, यौवनाश्व, मान्धाता, मुचकुन्द, पुरूरवा, बलि, सुकान्ति, वीर ।

त्रेता मे—नैमिषारण्य तीर्थ, सोमेश्वर लिङ्ग, जालधर पीठ । राजा-कद्रू, पुरूरवा, प्रौषध, वेराय, नैषध, त्रिशृङ्ग, मरीचि, इक्षु, मनु, दिलीप, रघु, त्रिशकु, हरिश्चद्र, रोहिताश्व, धुधुमार, जन्हु, सगर, भगीरथ, वेणु, वत्स, भूपाल, अज, अतिथि, नल, नील, नाभ, पुंडरीक, क्षेमक, शतधन्वा, शतानीक, पारिजातक, दलनाभ, पुष्पसेन, अजपाल, दशरथ, श्रीराम, लवकुश, अङ्गस्वामी, अग्निवर्ण ।

द्वापर मे—कुरुक्षेत्र तीर्थ, केदारेश्वलिग, अवती पत्तन । राजा—भर्तृहरि, पृथु, अनुविरक्त, अव्यक्त, फेन, इंद्र, ब्रह्मा, अत्रि, सोम, बुध, धनुर्जय, शतनु, गव्य, गवाक्ष, असमञ्जस, निर्घोष, प्रजापति, अङ्कुर, उपवीर, अनुसधि, ज्येष्ठभरत, कनिष्ठभरत, धर्मध्वज, शातनु, पांडु, नरवाहन, क्षेमक, ययाति, क्षान्त, चित्र, पार्थ, अर्जुन, अभिमन्यु, परीक्षित, जन्मेजय ।

कलियुग मे—गङ्गा तीर्थ, कालीदेवता, प्रतिष्ठानपुरनगर । कल्कि-अवतार इस ने अलग तीन चाल पर यहाँ लिखा है और उन के परस्पर जन्मदिन, पिता माता के सब अलग अलग है । कलियुग के आरभ से ३०४४ वर्ष के भीतर युधिष्ठिर, परीक्षित, जन्मेजय, वत्सराज, क्षेमसिह, सोमसिह, राणकण्य, अबुसेन, रामभद्र, भरतसिह, पठाणसिह, विक्रम-सिह, नरसिह, आदित्यसिह, ब्रह्मसिह, बसुधासिह, हर्षसेन, भर्तृहरि । ३०४४ मे विक्रम का राज्य, ३१७६ मे शालिवाहन का राज्य, फिर सूर्य्य-सेन, शक्तिसिह, खड्गसेन, सुखसिह, मम्मलसेन, मुञ्ज, भरत, श्रीपाल, जयानद, रामचद्र, छत्रचंद्र, अनूप सिंह, तुम्बरपाल, ननश्रहाण, रणवादी, शालपाल, कीर्त्तिपाल, अनङ्गपाल, विशालाक्ष, सोमदेव, बलदेव, नागदेव, कीर्त्तिदेव, पृथ्वीपति इतने प्रसिद्ध राजा हुए । फिर म्लेच्छो का राज्य आरभ हुआ । सिकदरशाह ने विश्वेश्वर का अपराध किया । इस के पीछे मुसलमानो का वर्णन है ।

फिर कालनिर्णय यो किया है—व्यासादिक का काल ५१५४ वर्ष कलियुग लगने के पूर्व । श्री कृष्णावतार द्वापर की संध्या प्रारभ, कलियुग के पूर्व क्योकि कलि का काल होते भी उस ने प्राबल्य नहीं पाया था । क्षेमक तक युधिष्ठिर का वश, सुमित्र तक इक्ष्वाकु का वश

और रिपुञ्जय तक जरासध का वश एक सहस्र वर्ष कलियुग बीते समाप्त हो चुका था। फिर १३८ वर्ष प्रद्योतनो का राज्य गत कलि ११३८ वर्ष। शिशुनाग वश का राज्य ३६२ वर्ष ग० क० १५०० वर्ष। फिर शुद्ध क्षत्रियो का राज्य छूटकर नदादिको का राज्य हुआ। नदा का राज्य १३७ वर्ष ग० क० ११३७ वष। फिर कण्ववश के राजा उन का राज्य ५५७ वर्ष ग० क० २१६४ वर्ष। फिर आध्रराजा का ४५६ वर्ष ग० क० २६५० वर्ष। फिर सात आभीर और दस गर्दभिल राजो का राज्य ३६४ वर्ष ग० क० ३०४४ वर्ष। फिर विक्रमो का राज्य १३५ वर्ष ग० क० ३१२६ वर्ष। अत के विक्रम को शालिवाहन ने मारा, फिर शालिवाहन वश ने १५५ वर्ष राज्य किया। शेष पुत्र के वशने १३६, शक्तिकुमार के वश ने ११४, शूद्रक ने ६५ और इ दुकिरीटी ने ४८। सब ४३७ वर्ष हुए। फिर ३३ वर्ष तोमर, ३४ वर्ष चितामणि, ३० वर्ष राम और ३६ वर्ष हेमाद्रि राजा ने राज्य किया। सब १३३ वर्ष हुए। तब शक ५७० था। उसी के पीछे तुरुष्कलोगो का प्रवेश होने लगा। फिर भारतवश के खडराज हुए। फिर चालुक्य वश ने ४४४ वर्ष, पल्लोमदत्त ५५ वर्ष, गौड़राज २०, भिल्लराज ५० वर्ष राज्य तब शाके १००६ वर्ष कलि ४१८५। फिर यादवराजे २२७ वर्ष तब शक १२३३ वर्ष। इस वश के देवगिरि के अतिम राजा रामदेव को शक १२१७ मे अलाउद्दीन ने जीत कर राज्य फेर दिया, रामदेव ने ५६ वर्ष और राज्य किया फिर तुरको का राज्य ३३४ वर्ष हुआ।

महाराष्ट्र देश का इतिहास

स० १६३२

श्री हरिश्चद्र चद्रिका खड २–४
सन् १८७५–६ में प्रथमबार
प्रकाशित

महाराष्ट्र देश का इतिहास

महाराष्ट्र देश का शृंखलाबद्ध इतिहास नहीं मिलता। शालिवाहन राजा वहाँ के पुराने राजों मे गिना जाता है। इसने शाका चलाया है और यह भी प्रसिद्ध है कि इसने किसी विक्रम को मारा था। इस की राजधानी प्रतिष्ठान थी, जिसे अब पैठण कहते है। देवगिरि का राज्य मुसल्मानो के आगमन तक स्वाधीन था और रामदेव वहाँ का आखिरी स्वतत्र राजा हुआ। तेरहवे शतक मे मुसल्मानो ने देवगिरि (देवगढ) विजय कर के उस का नाम दौलताबाद रक्खा। सन् १३५० ई० के लगभग दिल्ली के बादशाह के जफर खाँ नामक सूबेदार ने दक्षिण मे एक मुसल्मानी स्वतत्र राज्य स्थापित किया और वह पहिले एक ब्राह्मण का सेवक था, इस से अपना पद ब्राह्मण रक्खा था। इस वश* ने पहिले गुलबर्गा मे, फिर बिदर मे, अदाज डेढ़ सौ बरस राज किया। सन् १५०० के लगभग इस राज की पाँच शाखा हो गई थीं, जिनमे गोलकुडा, बीजापुर और अहमदनगर वाले विशेष बली थे। इस वश के राज मे सन् १३९६ मे बारह बरस का दक्षिण मे एक बड़ा भारी अकाल पडा था। हिदुओ मे उस समय कोकण मे सिरका नाम का केवल एक स्वाधीन सरदार था, बाकी सब लोग इन के अधीन थे।

*यह बहमनी वश कहलाता था। (स०)

श्री हरिश्चन्द्र चन्द्रिका खंड ३–४
सन् १८७५–६ में प्रथमबार
प्रकाशित

महाराष्ट्र देश का इतिहास

महाराष्ट्र देश का शृंखलाबद्ध इतिहास नहीं मिलता। शालिवाहन राजा वहाँ के पुराने राजो मे गिना जाता है। इसने शाका चलाया है और यह भी प्रसिद्ध है कि इसने किसी विक्रम को मारा था। इस की राजधानी प्रतिष्ठान थी, जिसे अब पैठण कहते है। देवगिरि का राज्य मुसलमानो के आगमन तक स्वाधीन था और रामदेव वहाँ का आखिरी स्वतत्र राजा हुआ। तेरहवे शतक मे मुसलमानो ने देवगिरि (देवगढ) विजय कर के उस का नाम दौलताबाद रक्खा। सन् १३५० ई० के लगभग दिल्ली के बादशाह के जफर खाँ नामक सूबेदार ने दक्षिण मे एक मुसलमानी स्वतत्र राज्य स्थापित किया और वह पहिले एक ब्राह्मण का सेवक था, इस से अपना पद ब्राह्मण रक्खा था। इस वश* ने पहिले गुलबर्गा मे, फिर बिदर मे, अदाज डेढ सौ बरस राज किया। सन् १५०० के लगभग इस राज की पाँच शाखा हो गई थीं, जिनमे गोलकुडा, बीजापुर और अहमदनगर वाले विशेष बली थे। इस वश के राज मे सन् १३९६ मे बारह बरस का दक्षिण मे एक बड़ा भारी अकाल पडा था। हिदुओ मे उस समय कोकण मे सिरका नाम का केवल एक स्वाधीन सरदार था, बाकी सब लोग इन के अधीन थे।

*यह बहमनी वश कहलाता था। (स०)

बीजापुर के पुरदर और दूमरे दूसरे कई किले अपने अधिकार मे कर के उस पर सतोष न कर के दिल्ली के बादशाही देशो मे भी लूट कर इसने अपना बल, सेना और धन बढ़ाया।

मालव नाम की सूर जाति के लोग इस की सेना मे बहुत थे और सन् १६४८ ई० मे बीजापुर के बादशाह से इस के कल्याण की सूबेदारी लिया, परतु जब बादशाह ने उसका बल बढते देखा तो सन् १६५६ मे अपने अफजल खाँ नामक सरदार को उस से लड़ने को भेजा, पर शिवाजी ने धोखा दे कर इस सरदार को मार डाला।

सन् १६६४ ई० मे शिवाजी का बाप मर गया और तब से उस ने अपना पद राजा रख कर अपने नाम की एक टकसाल जारी किया।

यह पहले राजगढ और फिर रायगढ के किले मे रहता था। उस ने अपने बहुत से किले बनाये थे, जिन मे राजगढ और प्रतापगढ ये दो मुख्य थे।

सन् १६५६ ई० मे सामराज पंत को शिवाजी ने पेशवा नियत किया।

बीजापुर का बादशाह तो शिवाजी को दमन करने मे समर्थ न हुआ, औरगजेब ने राजा जसवत सिह को बहुत सी फौज दे कर शिवा जी को जीतने को भेजा, पर शिवाजी ने बादशाह के आधीन रहना स्वीकार कर के राजा से मेल कर लिया।* और सन् १६६६ मे आप भी दिल्ली गया, पर वहाँ उस का यथेष्ट आदर न हुआ, इस से उस ने बादशाह को कटु वचन कहा, जिस से थोड़े दिन तक कैद मे रह कर फिर अपने बेटे समेत दक्खिन भाग गया। कुछ दिन पीछे औरगजेब ने उस को राजा का खिताब दिया और उसी अधिकार से उस ने दक्खिन मे सन् १६७० मे चौथ और सरदेशमुखी नाम के दो कर स्थापन किये। सन् १६६५ मे इस ने पानी के राह से मालाबार

* जयपुराधीश महाराज जयसिह के आने पर यह अधीनता स्वीकार की गई थी। (स०)

ब्राह्मणीराज्य नाश होने के समय सन् १४९६ ई० मे वास्कोडिगामा ने पुर्तगाल लोगो के साथ कालीकट मे प्रथम प्रवेश किया और सन् १५१० मे गोआ उन लोगो के आधीन हो गया। बीजापुर के बादशाह आदल-शाही और गोलकुडे के कुतुबशाही और अहमदनगर के निज़ामशाही कहलाते थे। सन् १६२८ मे अहमदनगर की बादशाहत दिल्ली के अधि-कार मे हो गई और गोलकुडा और बीजापुर भी सन् १६८७ ई० मे दिल्ली मे मिल गए।

महाराष्ट्री का राजस्थापन करनेवाला शिवा जी सन् १६२७ ई० मे उत्पन्न हुआ।

उस के पूर्वजो का नाम भोसला था, जो लोग दौलताबाद के पास बेरूल गॉव मे रहते थे।

शिवाजी का दादा मालोजी भोसला अपने वंश मे पहिला प्रसिद्ध मनुष्य हुआ और उस ने अपने बेटे शहाजी❀ का विवाह अहमदनगर के बादशाह के दशहजारी सरदार जादोराव की बेटी से किया और पूना सूबा बादशाह से जागीर मे पाया और शिवनेरी और चाकण दोनो किलो का सरदार भी नियत हुआ।

अहमदनगर की बादशाहत बिगडने पर शहाजी दिल्ली मे शाहजहॉ के पास गया और वहॉ से अपनी जागीर कायम रखने की सनद ले आया, पर थोड़े ही दिन पीछे किसी वैमनस्य से दिल्ली का अधिकार छोड कर वह बीजापुर के बादशाह से जा मिला और अपने राज्य मे करनाटक के बहुत से गॉव मिला लिये।

शिवाजी शिवनेरी किले मे जनमा और तब उस का बाप कर-नाटक मे रहता था, इस से उस ने छोटेपन में पूना प्रांत मे दादोजी कोणदेव से शिक्षा पाई थी। छोटेहीपन से इस में वीरता के चिन्ह और लडाई के उत्साह प्रगट थे।

उन्नीस बरस की अवस्था मे तोरन का किला जीत लिया और दादोजी कोणदेव के मरने पर पूना के ज़िले का सब काम अपने हाथ ले लिया।

❀ शाहजी नाम था। (स०)

बीजापुर के पुरदर और दूमरे दूसरे कई किले अपने अधिकार मे कर के उस पर सतोष न कर के दिल्ली के बादशाही देशो मे भी लूट कर इसने अपना बल, सेना और धन बढाया।

मालव नाम की सूर जाति के लोग इस की सेना मे बहुत थे और सन् १६४८ ई० मे बीजापुर के बादशाह से इस के कल्याण की सूबेदारी लिया, परतु जब बादशाह ने उसका बल बढते देखा तो सन् १६५६ मे अपने अफजल खॉ नामक सरदार को उस से लड़ने को भेजा, पर शिवाजी ने धोखा दे कर इस सरदार को मार डाला।

सन् १६६४ ई० मे शिवाजी का बाप मर गया और तब से उस ने अपना पद राजा रख कर अपने नाम की एक टकसाल जारी किया।

यह पहले राजगढ और फिर रायगढ के किले मे रहता था। उस ने अपने बहुत से किले बनाये थे, जिन मे राजगढ और प्रतापगढ़ ये दो मुख्य थे।

सन् १६५६ ई० मे सामराज पंत को शिवाजी ने पेशवा नियत किया।

बीजापुर का बादशाह तो शिवाजी को दमन करने मे समर्थ न हुआ, औरगजेब ने राजा जसवत सिह को बहुत सी फोज दे कर शिवा जी को जीतने को भेजा, पर शिवाजी ने बादशाह के आधीन रहना स्वीकार कर के राजा से मेल कर लिया।* और सन् १६६६ मे आप भी दिल्ली गया, पर वहॉ उस का यथेष्ट आदर न हुआ, इस से उस ने बादशाह को कटु वचन कहा, जिस से थोड़े दिन तक कैद मे रह कर फिर अपने बेटे समेत दक्खिन भाग गया। कुछ दिन पीछे औरगजेब ने उस को राजा का खिताब दिया और उसी अधिकार से उस ने दक्खिन मे सन् १६७० मे चौथ और सरदेशमुखी नाम के दो कर स्थापन किये। सन् १६६५ मे इस ने पानी के राह से मालाबार

* जयपुराधीश महाराज जयसिंह के आने पर यह अधीनता स्वीकार की गई थी। (स०)

पर चढाई की और दो बेर सूरत लूटा। जब यह दूसरे बेर सूरत लूटने जाता था तब १५००० फौज इसके साथ थी और राह मे हुबली नामक शहर लूटने से बहुत सा धन इस के हाथ आया और फिर तो वह यहाँ तक बलवान हो गया था कि जो अपने भाई बेङ्को जी से बाप की जागीर बँटवाने और बीजापुर का इलाका लूटने को करनाटक की तरफ गया था तो इस के साथ ४००० पैदल और ३०००० सवार थे।

सामराज पत से पेशवाई ले कर मोरोपत पिंजले को उस स्थान पर नियत किया और प्रतापराव गूजर इस का मुख्य सेनापति था, जिस के मरने पर हबीर राव मोहिता उसी काम पर हुआ।

सन् १६७६ मे रामगढ मे शिवाजी का विधिपूर्वक राज्याभिषेक हुआ और तब इसने आठ अपने मुख्य प्रधान रखे थे। पेशवापत, अमात्य, पतसचिव, मत्री, सेनापति, सुमत, न्यायाधीश और पडितराव, यही आठ पद उस ने नियुक्त किये थे और अपने जीते हुए देशो का काम आकाजी सोनदेव के अधिकार मे दिया।

जिस समय सब कोकन और पूना का इलाका और करनाटक और दूसरे देशो मे भी कुछ पृथ्वी इस के आधीन थी उस समय सन् १६८० ई० मे सभाजी और राजाराम नाम के दो पुत्र छोड़ कर तिरपन वर्ष की अवस्था मे यह परलोक सिधारा।

शिवाजी के मरने के पीछे तेईस वर्ष की अवस्था मे सभाजी गद्दी पर बैठा, पर यह ऐसा क्रूर और दुर्व्यसनी था कि इस से सब लोग दुखी थे। इस ने अपने छोटे भाई राजाराम की मा को मार डाला और सब पुराने कारबारियो को निकाल कर कलूसा* नामक कनौजिया ब्राह्मण को सब राजकाज सौप दिया। इस की दुष्टता से इस के पिता का सब प्रबध बिगड़ गया और सब सर्दार इस के अशुभचितक हो गये और यहाँ तक कि सन् १८८६ ई० मे जब यह सगमेश्वर की ओर शिकार खेलने गया था तो इस को मुगलो ने पकड कर औरगजेब की आज्ञा से कलूसा ब्राह्मण समेत तुलापुर मे मार डाला।

* ठीक नाम कलश है। (स०)

इस का पुत्र शिवाजी जिस को साहू जी भी कहते है, औरंगजेब की कैद मे था, इस से इस का सौतेला भाई राजाराम गद्दी पर बैठा। इस ने सितारा मे अपनी राजधानी स्थापन किया और पत प्रतिनिधि नाम का एक नया पद नियुक्त किया और बड़े भाई के बिगाडे हुए सब प्रबधो को नए सिरे से सॅवारा। यह १७०० ई० मे मरा और फिर आठ वर्ष तक इस की स्त्री ताराबाई ने अपने पुत्र शिवाजी को गद्दी पर बिठा कर उस के नाम से राज्य का काम चलाया।

इन लोगो के समय मे औरंगजेब ने महाराष्ट्रो को बहुत बिगाडना चाहा, परतु कुछ फल न हुआ, यहॉ तक कि वह सन् १७०७ मे आप ही मर गया। जब सभाजी का पुत्र शिवाजी औरंगजेब के पास रहता था तब औरंगजेब इस के दादा को लुटेरा शिवाजी और उस को साहू शिवाजी कहता था, इसी से दूसरे शिवाजी का नाम साहूराजा हुआ। सन् १७०८ ई० मे जब साहू औरंगजेब* की कैद से छूट कर आया तब सर्दारो ने उसे सितारे की गद्दी पर बिठाया, और तब उस की चाची ताराबाई ने अपने पुत्र शिवाजी को ले कर कोलापुर का एक अलग स्वतंत्र राज स्थापन किया।

जब साहू राजा १७ वर्ष तक कैद मे था तब औरंगजेब की बेटी उस पर और उस की मा पर बड़ी मेहरबान थी। इसी से औरंगजेब ने अपने यहॉ के दो बड़े बड़े मरहठे सरदारो की बेटी उसे ब्याह दी थी और उसे बहुत सी जागीर भी दी थी। जब साहू राजा दिल्ली से सितारे आता था तब एक स्त्री ने अपना दूध पीनेवाला बालक उस के पैर पर रख दिया था, जिस के वश मे अब अकलकोट के राजा है। साहू राजा का स्वभाव विषयी था, इसी से उस ने अपना सब काम धनाजी राव यादव को सौप रक्खा था और उसने आवाजी पुरदरे और बालाजी विश्वनाथ नाम के दो मनुष्य अपने नीचे रक्खे थे। धना जी

---

* सन् १७०७ ई० मे औरंगजेब की मृत्यु हो गई थी और उसके पुत्र बहादुरशाह ने मराठों में फूट डालने को इसे छोड़ दिया। (स०)

के मरने पर सन् १७१४ ई० मे बाला जी विश्वनाथ पेशवा हुआ और महाराष्ट्र के इतिहास मे इस का नाम सब से प्रसिद्ध है।

साहू राजा बयालीस वर्ष राज कर के छाछठ वर्ष की अवस्था मे सन् १७४९ ई० मे मर गया और इस के पीछे सितारे का राज्य पेशवा के अधिकार मे रहा। यह मरते समय लिख गया था कि ताराबाई के पोते राजाराम* को गोद ले कर हमारी गद्दी पर बिठा कर राज काज पेशवा करैं।

राजाराम सन् १७४९ ई० मे नाम मात्र का राजा हो कर सन् १७७० तक राज्य करके अपुत्र मरा। फिर शिवाजी के भाजे के वश का एक पुरुष दत्तक लेकर साहू महाराज के नाम से गद्दी पर बिठाया, जा सन् १८०८ ई० में मरा और उस के पीछे उस का पुत्र प्रताप सिंह गद्दी पर बैठा। इस को सन् १८१८ मे सर्कार अँगरेज बहादुर ने पेशवा के राज्य से बहुत मुल्क दिया, पर सन् १८४९ में इस पर दोषारोप होने से अँगरेजों ने इसे निकाल कर इसके छोटे भाई शाहाजी को गद्दी पर बिठाया, जो सन् १८४८ ई० मे निर्वंश मर कर इस वश का अतिम राजा हुआ और उसका सारा राज्य सर्कारी राज्य मे मिल गया।

दूसरा भाग।

बालाजी विश्वनाथ ने पेशवा होकर सैयदो की सहायता से दिल्ली के परतंत्र बादशाह से अपने स्वामी का गया हुआ सब राज्य फेर लिया और छ वर्ष पेशवाई करके सन् १७२० मे सासवड़ गॉव मे मर गया।† उसी साल मे हैदराबाद के नवाबो का मूल पुरुष निजामुलमुल्क नर्मदा के इस पार आकर बादशाही सेना से लड़ाई कर रहा था और अपना अधिकार बहुत बढ़ा लिया था।

---

* ताराबाई के पौत्र का नाम रामराजा था, भूल से राजाराम लिख गया है। (स०)

† १ अप्रैल सन् १७२० ई० को मृत्यु। (स०)

साहू राजा ने बालाजी विश्वनाथ के बडे पुत्र बाजीराव को पेशवाई का अधिकार दिया। यह मनुष्य शूर और युद्ध मे बड़ा कुशल था और उस का छोटा भाई चिमनाजी आप्पा भी बडा बुद्धिमान् और वीर था और अपने बडे भाई की राज्य और लड़ाई के कामो मे बडी सहायता करता था। निजामुलमुल्क से इस ने तीन लडाई बड़ी भारी भारी जीती और गुजरात, मालवा इत्यादि अनेक देशो पर अपना इख्तियार कर लिया और अपनी सेना ले कर सारे हिंदुस्थान को लूटता और जीतता फिरता था। सेंधिया, हुल्कर और गाइकवाड ने इसी के समय उत्कर्ष पाया, पर सेंधिया के पुरुषा पहले से बादशाही फौज के सारदारो मे थे। वरच कहते है कि औरगजेब ने इन्हीं पुरुषो मे से किसी की बेटी साहूराजा को ब्याही थी। नागपुर वालो ने भी इसी के समय राज पाया। चिमनाजी आप्पा ने पोर्तुगीज लोगो से साष्टीवेट* का इलाका बडी बहादुरी से छीन लिया था। बाजीराव सन् १७४० मे मरा और उस का बड़ा पुत्र बालाजी उर्फ नाना साहब पेशवा हुआ। इस का एक छोटा भाई रघुनाथ राव नाम का था। इस ने पूना को अपनी राजधानी बनाया। इस के छोटे भाई के अधिकार मे राज्य का सब काम था। यद्यपि नाना साहब राज्य के कामो मे बड़ा चतुर था पर कपटी और बड़ा आलसी मनुष्य था, पर उस के दोनो भाई अपने काम मे ऐसे सावधान थे कि उस की बात मे कुछ फरक न पड़ने पाया।

सदाशिव राव भाऊ ने रामचद्र बाबा शेणवी को साथ लेकर महाराष्ट्री राज्य का फिर से नया और पक्का प्रबध किया। महाराष्ट्रो का बल उस समय पूरा जमा हुआ था और हिंदुस्तान मे ये लोग चारो ओर चढ़ाइयाॅ करते फिरते थे। दिल्ली का बादशाह तो मानो इन की कठपुतली था। नाना साहब से नागपुर के सरदार राघोजी भोसला से कुछ वैमनस्य हो गया था, पर साहू राजा ने बीच मे पड़ कर बिहार, अयोध्या और बगाल का मरहटी अधिकार भोसला से छोड़वा कर आपस का द्वेष मिटा दिया।

* सालसेट। (स०)

सन् १७४८ ई० मे एक सौ चार वर्ष का होकर निजामुल्मुल्क मर गया। उस के पीछे बारह वर्ष तक उसका राज्य अव्यवस्थित रहा, फिर उस के पुत्रो मे से निजामअली नाम के एक मनुष्य ने वह राज्य पाया। रघुनाथ राव ने अटक से कटक तक हिंदुस्तान को दो बेर जीता, पर वहाँ का रुपया वसूल करना हुल्कर और सेंधिया के अधिकार मे करके आप फिर आया।

इसी अवसर मे अहमदशाह अफगानो की बड़ी भारी फौज लेकर हिंदुस्तान में मराठों को जीतने के लिये आया। तब सदाशिव राव भाऊ और पेशवा का बड़ा लड़का विश्वास राव ये दोनों सेंधिया, हुल्कर, गाइकवाड और और और सर्दारों के साथ डेढ़ लाख पैदल, पचपन हजार सवार और दो सौ तोप की फौज से दिल्ली की ओर चले और सन् १७६० ई० मे जब मरहटों ने दिल्ली जीती थी तब से इन की बहुत सी फोज दिल्ली मे भी थी सो वह फौज भी इन लोगो के साथ मिल गई, पर दो महीने पीछे इन के फौज मे अनाज का ऐसा टोटा पडा कि मरहटो से सिवा लड़ने के और कुछ न बन पड़ा। यह बड़ी लडाई पानीपत के मैदान मे सन् १७६१ ई० के जनवरी महीने की सातवीं तारीख को हुई। भाऊ निजामअली के जीतने से ऐसा गर्वित हो रहा था कि इस लड़ाई को वह बडी असावधानी से लड़ा। जब उस ने सुना कि विश्वास राव बहुत जखमी हो गया है तब हाथी पर से उतर पडा और फिर उस का पता न लगा। जनको जी सेंधिया और इब्राहीम खाँ गारदी भी मारे गये और दूसरे भी अनेक बड़े बडे सरदार मारे गये, और मरहटो की ऐसी भारी हार हुई कि सारे दक्खिन मे सियापा पड़ गया। और नाना साहब को तो इस हार से ऐसी ग्लानि और दुःख हुआ कि थोड़े ही दिन पीछे परलोक सिधारे। इस मनुष्य के समय मे जैसी पहिले महाराष्ट्रों की वृद्धि हुई थी वैसाही एक साथ क्षय भी हो गया। सन् १७६१ मे बालाजी बाजीराव उर्फ नाना साहेब के मरने पीछे उन का पुत्र पहिला माधवराव गद्दी पर बैठा। यह स्वभाव का न्यायी सूर धीर और दयालु था। मराठी राज से बेगार की चाल इस ने एक दम उठा दी थी और

गरीबो के पालने से इस का चित्त बहुत ही बहलता था। नाना फडनवीस नामक प्रसिद्ध मनुष्य इस का मुख्य वजीर था और मराठी राज्य की आमदनी उस के समय सात करोड रुपया थी। इसी के काल मे हैदरअली ने मैसूर के राज की नेव दी थी। इस ने राघोबा दादा को कैद कर के पूने भेज दिया और आप न्याय और धर्म से ग्यारह बरस राज कर के अट्ठाईस बरस की अवस्था मे क्षय रोग से मरा। इस के मरने के पीछे इस के भाई नारायण राव को गद्दी पर बैठाया, पर आठ ही महीने पीछे रघुनाथ राव ने उस को एक सूबेदार से मरवा डाला और आप गद्दी पर बैठा। इस से सब कारबारी इतने नाराज थे कि जब नारायण राव की स्त्री गगाबाई (जो विधवा होने के समय गर्भवती थी) पुत्र जनी तो सवाई माधवराव के नाम से उस को राजा बना के उस के नाम की मुनादी फिरवा दी और नाना फड़नवीस सब काम काज करने लगा। राघोबा ने अँगरेजो से इस शर्त पर सहायता चाही कि साष्टीवेट, बसई गॉव और गुजरात के कुछ इलाके अँगरेज सरकार को दिये जायॅ, पर पोर्तुगीज और बादशाह के कलह से अँगरेजो ने आप ही वह बेट ले लिया और फिर कलकत्ते के गवर्नर के लिखे अनुसार नाना फड़नवीस ने साष्टीवेट अँगरेजो को लिख दिया और कोपर गॉव मे राघोबा को कुछ महीना कर के रख दिया। राघोबा दादा को बाजीराव, चिमना आप्पा और अमृतराव तीन पुत्र थे परतु अमृतराव दत्तक थे। राघोबा का कई मनोरथ पूरा नहीं हुआ और सन् १७८४ मे मर गया। नाना फड़नवीस से महाजी सेंधिया से कुछ लाग थी, इस से महाजी उस के ताबे कभी नहीं हुआ और सदा कुछ उत्पात करता रहा। नाना की फौज के हरिपत फडके और परशुराम पत पट्टवर्द्धन ये दो बड़े सरदार थे। सन् १७९५ मे निज़ाम अली से महाराष्ट्र लोगो से एक लड़ाई, जिस मे मरहटे जीते और अँगरेजो से भी तीन बरस तक कुछ कलह रही, पर फिर मेल हो गया। सन् १७९६ मे नाना फड़नवीस के वश मे रहने के दुःख से माधव राव गिर के मर गया और राघोबा का बडा बेटा दूसरा बाजीराव पेशवा हुआ, पर इस से भी नाना फड़नवीस से खपपट चली ही गई। बाजीराव ने दौलतराव सेंधिया को उभारा और उस ने छल बल कर के नाना

फडनवीस को नगर के किले मे कैद कर लिया, पर बाजीराव को उस के कैद से छुडा कर फिर से दीवान बनाना पडा, क्योंकि ऐसा चतुर मनुष्य उस काल मे उस को दूसरा मिलना कठिन था। नाना फडनवीस सन् १८०० मे मर गया और मराठो राज्य की लक्ष्मी और बल अपने साथ लेता गया। राज पर बैठने के पहिले बाजीराव ने दौलतराव से करार किया था कि हम पेशवा होगे तो तुम को दो करोड़ रुपया देंगे, पर जब इतना रुपया आप न दे सका तो दौलतराव के साथ पूना लूटा। सन् १८०२ मे जब दौलतराव कहीं दौरा करने गया था तब यशवन्त राव हुल्कर ने पूना पर चढाई किया और पेशवा और सेंधिया दोनो की सैना को हरा कर पूने को खूब लूटा। बाजीराव इस समय भाग कर अँगरेजो की शरण गया और उन से बसई मे यह बात ठहराई कि सर्कारी ८००० फौज पूने मे रहै और बाजीराव को शत्रुओं से बचावै और उस का सब खर्च बाजीराव दे। अँगरेजी फौज पहुँच जाने के पूर्व ही हुल्कर पूना छोड के चला गया और बाजीराव फिर से पेशवा हुआ। बाजीराव ऊपर से तो अँगरेजो से मेल रखता था पर भीतर से बडाही बैर रखता था और दूसरे राजो को बहकाने सिवा आप भी छिपी छिपी फौज भरती करता जाता था। सन् १८१५ मे गगाधर शास्त्री पट्टवर्द्धन जो गाइकवाड का वकील हो कर सर्कार अँगरेज की सलाह से बाजीराव के दरबार मे गया था, उस को बाजीराव ने त्र्यबक डेंगला नाम के एक अपने मुँहलगे हुये सरदार से मरवा डाला, जो सर्कार के और बाजीराव के बैर का मुख्य कारण हुआ और सर्कार ने उस त्र्यबक को सन् १८१८ मे पकड कर चुनार के किले मे कैद किया। सर्कारी फौज इस समय गवर्नर-जेनरल की आज्ञा से पिंडारो को शमन करती फिरती थी कि इसी बीच मे बाजीराव ने भी किसी बहाने से सर्कार से लड़ाई करनी आरभ कर दी और बापू गोखला को सेनापति नियत किया, पर अत मे हार कर सन् १८१८ ई० की ३ जून को मालकम साहेब के शरण मे जाकर आठ लाख रुपया साल लेकर बिट्ठूर मे रहना अगीकार किया। और इसी बीच मे अष्ट गाँव पर छापा मार के सितारा के राजा को पकड लिया और इसी लड़ाई में बापू मारा गया। जब बाजीराव भागा फिरता था, उन्हीं

दिनो मे भीमा के किनारे कारै गॉव मे मरहठो की फौज से और सर्कारी फौज से एक बड़ा घोर युद्ध हुआ, जिस मे सर्कारी २०० सिपाही और बीस अँगरेज मारे गये, पर इन लोगों ने बहादुरी से उनको आगे न बढ़ने दिया। सर्कार की ओर से यहाँ जयसूचक एक कीर्त्तिस्तंभ बना है। सर्कार ने महाराष्ट्र देश का राज अपने हाथ मे लेकर एलफिस्टन साहेब को वहाँ का प्रबंध सौंपा और पूर्वोक्त साहब ने महाराष्ट्रो की परपरा के मान और रीति का पालन कर के किसी की जागीर किसी के साथ बंदोबस्त कर के वहाँ की प्रजा को ऐसा सतुष्ट किया कि वे लोग अब तक उन को स्मरण करते है।

दिल्ली दरबार दर्पण

दोहा

जयति राजराजेश्वरी जय युवराज कुमार ।
जय नृप प्रतिनिधि कवि लिटन जय दिल्ली दरबार ॥
स्नेह भरन तम हरन दोउ प्रजन करन उँजियार ।
भयो देहली दीप सो यह देहली दरबार ॥

स० १९३४

सन् १८७७ ई० में प्रथमबार श्री हरिश्चंद्र
चंद्रिका की जनवरी संख्या के साथ
परिशिष्ट रूप में प्रकाशित

दिल्ली दरबार दर्पण

सब राजाओं की मुलाकातों का हाल अलग अलग लिखना आवश्यक नहीं, क्योंकि सब के साथ वही मामूली बाते हुईं। सब बड़े बड़े शासनाधिकारी राजाओं को एक एक रेशमी झंडा और सोने का तगमा मिला। झंडे अत्यंत सुंदर थे। पीतल के चमकीले मोटे मोटे डंडों पर राजराजेश्वरी का एक मुकुट बना था और एक एक पटरी लगी थी जिस पर झंडा पाने वाले राजा का नाम लिखा था और फरहरे पर जो डंडे से लटकता था स्पष्ट रीति पर उनके शस्त्र आदि के चिह्न बने हुए थे। झंडा और तगमा देने के समय श्रीयुत वाइसराय ने हरएक राजा से ये वाक्य कहे :—

"मैं श्रीमती महारानी की तरफ से यह झंडा खास आप के लिये देता हूँ, जो उन के हिंदुस्तान की राजराजेश्वरी की पदवी लेने का यादगार रहेगा। श्रीमती को भरोसा है कि जब कभी यह झंडा खुलेगा आप को उसे देखते ही केवल इसी बात का ध्यान न होगा कि इंगलिस्तान के राज्य के साथ आप के खैरखाह राजसी घराने का कैसा दृढ़ संबंध है वरन् यह भी कि सरकार की यह बड़ी भारी इच्छा है कि आप के कुल को प्रतापी, प्रारब्धी और अचल देखे। मैं श्रीमती महारानी हिंदुस्तान की राजराजेश्वरी की आज्ञानुसार आप को यह तगमा

भी पहनाता हूँ । ईश्वर करे आप इसे बहुत दिन तक पहिने और आप के पीछे यह आप के कुल मे बहुत दिन तक रह कर इस शुभ दिन की याद दिलावे जो इस पर छपा है ।"

शेष राजाओ को उन के पद के अनुसार सोने या चॉदी के केवल तगमे ही मिले । किलात के खॉ को भी झडा नहीं मिला, पर उन्हे एक हाथी, जिस पर ४००० की लागत का हौदा था, जड़ाऊ गहने, घडी, कारचोबी कपडे, कमखाब के थान वगैरह सब मिला कर २५००० की चीजे तुहफे मे मिलीं । यह बात किसी दूसरे के लिये नहीं हुई थी । इस के सिवाय जो सरदार उन के साथ आए थे उन्हे भी किश्तियो मे लगा कर दस हजार रुपये की चीजे दी गई । प्राय लोगो को इस बात के जानने का उत्साह होगा कि खॉ का रूप और वस्त्र कैसा था । निस्सन्देह जो कपड़ा खॉ पहने थे वह उन के साथियो से बहुत अच्छा था तो भी उन की या उन के किसी साथी की शोभा उन मुगलो से बढ कर न थी जो बाज़ार मे मेवा लिये घूमा करते है । हॉ, कुछ फर्क था तो इतना था कि लबी गझिन दाढी के कारण खॉ साहिब का चिहरा बडा भयानक लगता था । इन्हे झडा न मिलने का कारण यह समझना चाहिये कि यह बिल्कुल स्वतत्र है । इन्हें आने और जाने के समय श्रीयुत वाइसराय गलीचे के किनारे तक पहुँचा गए थे, पर बैठने के लिये इन्हे भी वाइसराय के चबूतरे के नीचे वहीं कुर्सी मिली थी जो और राजाओ को । खॉ साहिब के मिजाज मे रूखापन बहुत है । एक प्रतिष्ठित बगाली इन के डेरे पर मुलाकात के लिये गए थे । खॉ ने पूछा, क्यो आए हो ? बाबू साहिब ने कहा, आप की मुलाकात को । इस पर खॉ बोले कि अच्छा, आप हम को देख चुके और हम आप को, अब जाइये ।

बहुत से छोटे छोटे राजाओ की बोलचाल का ढग भी, जिस समय वे वाइसराय से मिलने आए थे, सक्षेप के साथ लिखने के योग्य है । कोई तो दूर ही से हाथ जोड़े आए, और दो एक ऐसे थे कि जब एडि-कॉग के बदन झुका कर इशारा करने पर भी उन्होने सलाम न किया तो एडिकॉग ने पीठ पकड़ कर उन्हे धीरे से झुका दिया । कोई बैठ कर उठना जानते ही न थे, यहॉ तक कि एडिकॉग को "उठो" कहना पड़ता

था। कोई झंडा, तगमा, सलामी और खिताब पाने पर भी एक शब्द धन्यवाद का नही बोल सके और कोई बिचारे इन मे से दो ही एक पदार्थ पा कर ऐसे प्रसन्न हुए कि श्रीयुत वाइसराय पर अपनी जान और माल निछावर करने को तैयार थे। सब से बढ कर बुद्धिमान हमे एक महात्मा देख पड़े जिन से वाइसराय ने कहा कि आपका नगर तो तीर्थ गिना जाता है, पर हम आशा करते है कि आप इस समय दिल्ली को भी तीर्थ ही के समान पाते है। इस के जवाब मे वह बेधड़क बोल उठे कि यह जगह तो सब तीर्थो से बढ़ कर है, जहाॅ आप हमारे "खुदा" मौजूद है। नवाब लुहारू की भी अगरेजी मे बात चीत सुन कर ऐसे बहुत कम लाग होगे जिन्हे हसी न आई हो। नवाब साहिब बोलते तो बड़े धड़ाके स थे, पर उसा के साथ कायदे और मुहावरे के भी खूब हाथ पाॅव तोड़ते थे। कितने वाक्य ऐसे थे जिन के कुछ अर्थ ही नहा हो सकते, पर नवाब साहिब को अपना अगरेजी का ऐसा कुछ विश्वास था कि अपने मुॅह से केवल अपने ही को नहीं वरन् अपने दोनो लड़का का भी अगरेजी, अरबी, ज्योतिष, गणित आ.द ईश्वर जाने कितनी विद्याओ का पडित बखान गए। नवाब साहिब ने कहा कि हम ने और रईसो की तरह अपना उमर खेल कूद मे नहीं गवाई वरन् लड़कपन हा से विद्या के उपार्जन मे चित्त लगाया और पूरे पडित और कवि हुए। इस के सिवाय नवाब साहिब न बहुत से राजभक्ति के वाक्य भा कहे। वाइसराय ने उत्तर दिया कि हम आप की ॲगरेजी विद्या पर इतना मुबारकबाद नहीं देते जितना ॲगरेजो के समान आप का चित्त हाने के लिये। फिर नवाब साहिब ने कहा कि मैने इस भारी अवसर के वर्णन मे अरबी और फारसी का एक पद्य ग्रथ बनाया है जिसे मै चाहता हूॅ कि किसी समय श्रीयुत को सुनाऊॅ। श्रीयुत ने जवाब दिया कि मुझे भी कविता का बडा अनुराग है और मै आप सा एक भाई-कवि (Brother-poet) देख कर बहुत प्रसन्न हुआ, और आप की कविता सुनने के लिये कोई अवकाश का समय अवश्य निकालूॅगा।

२६ तारीख का सब के अत मे महारानी तंजौर वाइसराय से मुलाकात का आई। ये तास का सब वस्त्र पहने थीं और मुॅह पर

भी तास का नकाब पडा हुआ था। इस के सिवाय उन के हाथ पॉव दस्ताने और मोजे से ऐसे ढके थे कि सब के जी मे उन्हें देखने की इच्छा ही रह गई। महारानी के साथ मे उन के पति राजा सखाराम साहिब और दो लड़को के सिवाय उन की अनुवादक मिसेज फर्थ भी थीं। महारानी ने पहले आकर वाइसराय से हाथ मिलाया और अपनी कुर्सी पर बैठ गई। श्रीयुत वाइसराय ने उन के दिल्ली आने पर अपनी प्रसन्नता प्रगट की और पूछा कि आप को इतनी भारी यात्रा मे अधिक कष्ट तो नहीं हुआ? महारानी अपनी भाषा की बोलचाल मे बेगम भूपाल की तरह चतुर न थीं, इस लिये जियादा बातचीत मिसेज फर्थ से हुई, जिन्हे श्रीयुत ने प्रसन्न हो कर "मनभावनी अनुवादक" कहा। वाइसराय की किसी बात के उत्तर मे एक बार महारानी के मुँह से "यस" निकल गया, जिस पर श्रीयुत ने बडा हर्ष प्रगट किया कि महारानी अँगरेजी भी बोल सकती हैं, पर अनुवादक मेम साहिब ने कहा कि वे अँगरेजी मे दो चार शब्द से अधिक नहीं जानतीं।

इस वर्णन के अंत में यह लिखना अवश्य है कि श्रीयुत वाइसराय लोगों से इतनी मनोहर रीति पर बातचीत करते थे जिस से सब मगन हो जाते थे और ऐसा समझते थे कि वाइसराय ने हमारा सबसे बढ़ कर आदर सत्कार किया। भेट होने के समय श्रीयुत ने हर एक से कहा कि आप से दोस्ती कर के हम अत्यत प्रसन्न हुए और तगमा पहिनाने के समय भी बडे स्नेह से उन की पीठ पर हाथ रख कर बात की।

१ जनवरी को दरबार का महोत्सव हुआ।

यह दरबार, जो हिंदुस्तान के इतिहास मे सदा प्रसिद्ध रहेगा, एक बडे भारी मैदान में नगर से पॉच मील पर हुआ था। बीच मे श्रीयुत वाइसराय का षट्कोण चबूतरा था, जिसकी गुबदनुमा छत पर लाल कपड़ा चढ़ा और सुनहला रुपहला तथा शीशे का काम बना था। कगुरे के ऊपर कलसे की जगह श्रीमती राजराजेश्वरी का सुनहला मुकुट लगा था। इस चबूतरे पर श्रीयुत अपने राजसिहासन मे सुशोभित हुए थे। उन के बगल मे एक कुर्सी पर लेडी साहिब बैठी थी और ठीक पीछे खवास लोग हाथो मे चॅवर लिये और श्रीयुत के ऊपर कारचोबी छत्र लगाए खड़े थे। वाइसराय के सिहासन के दोनो तरफ दो पेज (दामन

बरदार), जिन मे एक श्रीयुत महाराज जबू का अत्यत सुंदर सब से छोटा राजकुमार और दूसरा कर्नल बर्न का पुत्र था, खड़े थे और उन के दहने बाएं और पीछे मुसाहिब और सेक्रेटरी लोग अपने अपने स्थानो पर खड़े थे। बाइसराय के इस चबूतरे के ठीक सामने कुछ दूर पर उस से नीचा एक अर्द्धचद्राकार चबूतरा था, जिस पर शासनाधिकारी राजा लोग और उन के मुसाहिब, मदरास और बबई के गवरनर, पजाब, बगाल और पश्चिमोत्तर देश के लेफटिनेट गवरनर, और हिदुस्तान के कमाडरइनचीफ अपने अपने अधिकारियो समेत सुशोभित थे। इस चबूतरे की छत बहुत सुदर नीले रग के साटन की थी, जिस के आगे लहरियादार छज्जा बहुत सजीला लगा था। लहरिये के बीच बीच मे सुनहले काम के चॉद तारे बने थे। राजाओ की कुर्सियॉ भी नीली साटन से मढी थीं और हर एक के सामने वे झडे गडे थे जो उन्हे वाइसराय ने दिये थे और पीछे अधिकारियो की कुर्सियॉ लगी थीं, जिन पर भी नीली साटन चढी थी। हर एक राजा के साथ एक एक पोलिटिकल अफसर भी था। इन के सिवाय गवर्नमेंट के भारी भारी अधिकारी भी यहीं बैठे थे। राजा लोग अपने अपने प्रातो के अनुसार बैठाए गए थे, जिस से ऊपर नीचे बैठने का बखेडा बिलकुल निकल गया था। सब मिला कर तिरसठ शासनाधिकारी राजाओं को इस चबूतरे पर जगह मिली थी, जिनके नाम नीचे लिखे है :—

महाराज अजयगढ, बडौदा, बिजावर, भरतपुर, चरखारी, दतिया, ग्वालियर, इदौर, जयपुर, जबू, जोधपुर, करौली, किशुनगढ, पन्ना, मैसूर, रीवॉ, उर्छा, महाराना उदयपुर, महाराव राजा अलवर, बूदी, महाराज राना झलावर, राना धौलपुर, राजा बिलासपुर, बमरा, बिरोदा, चबा, छतरपुर, देवास, धार, फरीदकोट, जींद, खरोद, कूचबिहार, मडी, नाभा, नाहन, राजपीपला, रतलाम, समथर, सुकेत, टिहरी, राव जिगनी, टोरी, नवाब टोक, पटौदी, मलेरकोटला, लुहारू, जूनागढ, जौरा, दुलाना, बहावलपुर, जागीरदार अलीपुरा, बेगम भूपाल, निजाम हैदराबाद, सरदार कलसिया, ठाकुर साहिब भावनगर, मुर्वी, पिपलोदा, जागीरदार पालदेव, मीर खैरपुर, महत कोदका, नदगॉव और जाम नवानगर।

वाइसराय के सिंहासन के पीछे, परंतु राजसी चबूतरे की अपेक्षा उस से अधिक पास, धनुषखंड के आकार की दो श्रेणियाँ चबूतरों की ओर बनी थीं जो दस भागों में बाँट दी गई थीं। इन पर आगे की तरफ थोड़ी सी कुर्सियाँ और पीछे सीढ़ीनुमा बेंचें लगी थीं, जिन पर नीला कपड़ा मढ़ा था। यहाँ ऐसे राजाओं को जिन्हें शासन का अधिकार नहीं है और दूसरे सरदारों, रईसों समाचारपत्रों के संपादकों और यूरोपियन तथा हिंदुस्तानी अधिकारियों को, जो गवर्नमेंट के नेवते में आये थे या जिन्हें तमाशा देखने के लिये टिकट मिले थे, बैठने की जगह दी गई थी। ये २००० के अनुमान होंगे। किलात के खाँ, गोआ के गवरनर जेनरल, विदेशी राजदूत, बाहरी राज्यों के प्रतिनिधि समाज और अन्यदेश संबंधी कांसल लोगों की कुर्सियाँ भी श्रीयुत वाइसराय के पीछे सरदारों और रईसों की चौकियों के आगे लगी थीं।

दरबार की जगह के दक्खिन तरफ १५००० से ज्यादा सरकारी फौज हथियार बाँधे लैस खड़ी थी और उत्तर तरफ राजा लोगों की सजी पलटनें भाँति भाँति की वरदी पहने और चित्र विचित्र शस्त्र धारण किये परा बाँधे खड़ी थीं। इन सब की शोभा देखने से काम रखती थी। इस के सिवाय राजा लोगों के हाथियों के परे जिन पर सुनहली अमारियाँ कसी थीं और कारचोबी झूलें पड़ी थीं, तोपों की कतार, सवारों की नंगी तलवारों और भालों की चमक, फरहरों का उड़ना, और दो लाख के अनुमान तमाशा देखने वालों की भीड़ जो मैदान में डटी थी, ऐसा समा दिखलाती थी जिसे देख जो जहाँ था वहीं हक्का बक्का हो खड़ा रह जाता था। वाइसराय के सिंहासन के दोनों तरफ हाइलैन्डर लोगों का गार्ड ऑव ऑनर और बाजेवाले थे, और शासनाधिकारी राजाओं के चबूतरे पर जाने के जो रास्ते बाहर की तरफ थे उन के दोनों ओर भी गार्ड ऑव ऑनर खड़े थे। पौने बारह बजे तक सब दरबारी लोग अपनी अपनी जगहों पर आ गए थे। ठीक बारह बजे श्रीयुत वाइसराय की सवारी पहुँची और धनुष खंड आकार के चबूतरों की श्रेणियों के पास एक छोटे से खंभे के दरवाजे पर ठहरी। सवारी पहुँचते ही बिलकुल फौज ने शस्त्रों से सलामी उतारी पर तोपें नहीं छोड़ी गईं। खंभे में श्रीयुत ने जाकर स्टार ऑव इंडिया के परम प्रति-

ष्ठित पद के ग्रांड मास्टर का वस्त्र धारण किया। यहाँ से श्रीयुत राजसी छत्र के तले अपने राजसिंहासन की ओर बढ़े। श्री लेडी लिटन श्रीयुत के साथ थीं और दोनों दामनबरदार बालक, जिन का हाल ऊपर लिखा गया है, पीछे दो तरफ से दामन उठाए हुए थे। श्रीयुत के चलते ही बंदीजन (हेरल्ड लोगों) ने अपनी तुरहियाँ एक साथ बहुत मधुर रीति पर बजाईं और फौजी बाजे से ग्रांड मार्च बजने लगा। जब श्रीयुत राजसिंहासनवाले मनोहर चबूतरे पर चढने लगे तो ग्रांडमार्च का बाजा बंद हो गया और नैशनल ऐन्थेम अर्थात् (गौड सेव दि कीन—ईश्वर महारानी को चिरजीवी रक्खे) का बाजा बजने लगा और गार्ड्स ऑव ऑनर ने प्रतिष्ठा के लिये अपने शस्त्र झुका दिये। ज्योंही श्रीयुत राजसिंहासन पर सुशोभित हुए, बाजे बंद हो गए और सब राजा महाराजा, जो वाइसराय के आने के समय खड़े हो गए थे, बैठ गए। इस के पीछे श्रीयुत ने मुख्य बंदी (चीफ हेरल्ड) को आज्ञा की कि श्रीमती महारानी के राजराजेश्वरी की पदवी लेने के विषय में अंगरेजी में राजाज्ञापत्र पढ़ो। यह आज्ञा होते ही बंदीजनों ने, जो दो पाँती में राज्यसिंहासन के चबूतरे के नीचे खड़े थे, तुरही बजाई और उस के बंद होने पर मुख्य बंदी ने नीचे की सीढी पर खड़े होकर बड़े ऊंचे स्वर से राजाज्ञापत्र पढ़ा, जिस का उल्था यह है :—

महारानी विक्टोरिया

ऐसी अवस्था में कि हाल में पार्लियामेंट की जो सभा हुई उन में एक ऐक्ट पास हुआ है, जिस के द्वारा परम कृपालु महारानी को यह अधिकार मिला है कि यूनाइटेड किंगडम और उस के अधीन देशों की राजसंबंधी पदवियों और प्रशस्तियों में श्रीमती जो कुछ चाहें बढ़ा लें और इस ऐक्ट में यह भी वर्णन है कि ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंड के एक में मिल जाने के लिये जो नियम बने थे उन के अनुसार भी यह अधिकार मिला था कि यूनाइटेड किंगडम और उस के अधीन देशों की राजसंबंधी पदवी और प्रशस्ति इस संयोग के पीछे वही होगी जो श्रीमती ऐसे राजाज्ञापत्र के द्वारा प्रकाश करेंगी, जिस पर राज की मुहर छपी रहे। और इस ऐक्ट में यह भी वर्णन है कि ऊपर लिखे

हुए नियम और उस राजाज्ञापत्र के अनुसार जो १ जनवरी सन् १८०१ को राजसी मुहर होने के पीछे प्रकाश किया गया, हम ने यह पदवी ली "विक्टोरिया ईश्वर की कृपा से ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंड के संयुक्त राज की महारानी स्वधर्म रक्षिणी," और इस ऐक्ट मे यह भी वर्णन है कि उस नियम के अनुसार, जो हिंदुस्तान के उत्तम शासन के हेतु बनाया गया था, हिंदुस्तान के राज का अधिकार, जो उस समय तक हमारी ओर से ईस्ट इंडिया कंपनी को सपुर्द था, अब हमारे निज अधिकार मे आ गया और हमारे नाम से उस का शासन होगा। इस नये अधिकार की कि हम कोई विशेष पदवी ले और इन सब वर्णनो के अनंतर इस ऐक्ट मे यह नियम सिद्ध किया गया है कि ऊपर लिखी हुई बात के स्मरण निमित्त कि हम ने अपने मुहर किये हुए राजाज्ञापत्र के द्वारा हिंदुस्तान के शासन का अधिकार अपने हाथ मे ले लिया, हम को यह योग्यता होगी कि यूनाइटेड किंगडम और उस के आधीन देशो की राजसंबंधी पदवियो और प्रशस्तियो मे जो कुछ उचित समझे बढा ले। इस लिये अब हम अपने प्रीवी काउंसिल की संमति से योग्य समझ कर यह प्रचलित और प्रकाशित करते है कि आगे को, जहाँ सुगमता के साथ हो सके, सब अवसरो मे और संपूर्ण राजपत्रो पर जिन मे हमारी पदवियाँ और प्रशस्तियाँ लिखी जाती है, सिवाय सनद, कमिशन, अधिकारदायक पत्र दानपत्र, आज्ञापत्र, नियोगपत्र, और इसी प्रकार के दूसरे पत्रो के, जिन का प्रचार यूनाइटेड किंगडम के बाहर नहीं है, यूनाइटेड किंगडम और उस के अधीन देशो की राजसंबंधी पदवियो मे नीचे लिखा हुआ मिला दिया जाय, अर्थात् लैटिन भाषा मे "इंडिई एम्परेट्रिक्स" [हिंदुस्तान की राजराजेश्वरी] और अँगरेजी भाषा मे "एम्प्रेस ऑव इंडिया"। और हमारी यह इच्छा और प्रसन्नता है कि उन राजसंबंधी पत्रो मे जिन का वर्णन ऊपर हुआ है यह यह नई पदवी न लिखी जाय। और हमारी यह भी इच्छा और प्रसन्नता है कि सोने चाँदी और ताँबे के सब सिक्के, जो आज कल यूनाइटेड किंगडम मे प्रचलित है और नीतिविरुद्ध नहीं गिने जाते और इसी प्रकार तथा आकार के दूसरे सिक्के जो हमारी आज्ञा से अब छापे जायँगे, हमारी नई पदवी लेने से भी नीतिविरुद्ध

न समझे जायंगे, और जो सिक्के यूनाइटेड किंगडम के अधीन देशों में छापे जायगे और जिन का वर्णन राजाज्ञापत्र में उन जगहों के नियमित और प्रचलित द्रव्य करके किया गया है और जिन पर हमारी संपूर्ण पदवियां या प्रशस्तियां या उन का कोई भाग रहे, और वे सिक्के जो राजाज्ञापत्र के अनुसार अब छापे और चलाए जायगे इस नई पदवी के बिना भी उस देश के नियमित और प्रचलित द्रव्य समझे जायगे, जब तक कि इस विषय में हमारी कोई दूसरी प्रसन्नता न प्रगट की जायगी।

हमारी विंडसर की कचहरी से २८ अप्रैल को एक हजार आठ सौ छिहत्तर के सन् में हमारे राज के उनतालीसवें बरस में प्रसिद्ध किया गया।

ईश्वर महारानी को चिरजीव रक्खे!

जब चीफ हेरल्ड राजाज्ञापत्र को अंगरेजी में पढ चुका तो हेरल्ड लोगों ने फिर तुरही बजाई। इस के पीछे फॉरेन सेक्रेटरी ने उर्दू में तर्जुमा पढा। इस के समाप्त होते ही बादशाही झंडा खड़ा किया गया और तोपखाने से, जो दरबार के मैदान में मौजूद था, १०१ तोपों की सलामी हुई। चौंतीस चौंतीस सलामी होने के बाद बंदूकों की बाढ़ दगीं और जब १०१ सलामियां तोपों से हो चुकीं तब फिर बाढ़ छूटी और नैशनल ऐन्थेम का बाजा बजने लगा।

इसके अनंतर श्रीयुत बाइसराय समाज को एड्रेस करने के अभिप्राय से खड़े हुए। श्रीयुत वाइसराय के खड़े होते ही सामने के चबूतरे पर जितने बड़े बड़े राजा लोग और गवर्नर आदि अधिकारी थे खड़े हो गए पर श्रीयुत ने बड़े ही आदर के साथ दोनों हाथों से हिंदुस्तानी रीति पर कई बार सलाम करके सब से बैठ जाने का इशारा किया। यह काम श्रीयुत का, जिस से हम लोगों की छाती दूनी हो गई, पायोनीयर सरीखे अंगरेजी समाचार पत्रों के संपादकों को बहुत बुरा लगा, जिन की समझ में वाइसराय का हिंदुस्तानी तरह पर सलाम करना बड़े हेठाई और लज्जा की बात थी। खैर, यह तो इन अंगरेजी अखबारवालों की मामूली बातें हैं। श्रीयुत वाइसराय ने जो उत्तम ऐड्रेस पढ़ा उस का तर्जुमा हम नीचे लिखते हैं :—

सन् १८५८ ईसवी की १ नवबर को श्रीमती महारानी की ओर से एक इश्तिहार जारी हुआ था, जिस मे हिदुस्तान के रईसो और प्रजा को श्रीमती की कृपा का विश्वास कराया गया था, जिस को उस दिन से आज तक वे लोग राजसबधी बातो मे बडा अनमोल प्रमाण समझते है।

वे प्रतिज्ञा एक ऐसी महारानी की ओर से हुई थीं, जिन्होने आज तक अपनी बात को कभी नहीं तोड़ा, इस लिये हमे अपने मुँह से फिर उन का निश्चय कराना व्यर्थ है। १८ बरस की लगातार उन्नति ही उन को सत्य करती है और यह भारी समागम भी उन के पूरे उतरने का प्रत्यक्ष प्रमाण है। इस राज के रईस और प्रजा जो अपनी अपनी परपरा की प्रतिष्ठा निर्विघ्न भोगते रहे और जिन को उचित लाभो की उन्नति के यत्न मे सदा रक्षा होती रही उन के वास्ते सरकार की पिछले समय की उदारता और न्याय आगे के लिये पक्की जमानत हो गई है।

हम लोग इस समय श्रीमती महारानी के राजराजेश्वरी की पदवी लेने का समाचार प्रसिद्ध करने के लिये इकट्ठे हुए हैं, और यहॉ महारानी के प्रतिनिधि होने की योग्यता से मुझे अवश्य है कि श्रीमती के उस कृपायुक्त अभिप्राय को सब पर प्रगट करूँ जिस के कारण श्रीमती ने अपने परपरा की पदवी और प्रशस्ति मे एक पद और बढ़ाया।

पृथ्वी पर श्रीमती महारानी के अधिकार मे जितने देश है—जिन का विस्तार भूगोल के सातवे भाग से कम नहीं है, और जिन मे तीस करोड आदमी बसते है—उन मे से इस बडे और प्राचीन राज के समान श्रीमती किसी दूसरे देश पर कृपादृष्टि नहीं रखतीं।

सब जगह और सदा इगलिस्तान के बादशाहो की सेवा मे प्रवीण और परिश्रमी सेवक रहते आए है, परतु उन से बढ़ कर कोई पुरुषार्थी नहीं हुए, जिन की बुद्धि और वीरता से हिदुस्तान का राज सरकार के हाथ लगा और बराबर अधिकार मे बना रहा। इस कठिन काम मे जिस मे श्रीमती की अँगरेजी और देशी प्रजा दोनो ने मिलकर भली भॉति परिश्रम किया है, श्रीमती के बडे बडे स्नेही और सहायक राजाओ ने भी शुभचितकता के साथ सहायता दी है, जिन की

सेना ने लडाई की मिहनत और जीत मे श्रीमती की सेना का साथ दिया है, जिन की बुद्धिपूर्वक सत्यशीलता के कारण मेल के लाभ बने रहे और फैलते गए हैं, और जिन का यहाॅ आज वर्त्तमान होना, जो कि श्रीमती के राजराजेश्वरी की पदवी लेने का शुभ दिन है, इस बात का प्रमाण है कि वे श्रीमती के अधिकार की उत्तमता मे विश्वास रखते है और उन के राज मे एका बने रहने मे अपना भला समझते हैं।

श्रीमती महारानी इस राज को, जिसे उन के पुरखो ने प्राप्त किया और श्रीमती ने दृढ़ किया, एक बड़ा भारी पैतृक धन समझती है जो रक्षा करने और अपने वश के लिये सपूर्ण छोडने के योग्य है, और उस पर अधिकार रखने से अपने ऊपर यह कर्त्तव्य जानती है कि अपने बड़े अधिकार को इस देश की प्रजा की भलाई के लिये यहाॅ के रईसो के हक्को पर पूरा पूरा ध्यान रखकर काम मे लावे। इस लिये श्रीमती का यह राजसी अभिप्राय है कि अपनी पदवियो पर एक और ऐसी पदवी बढ़ावे, जो आगे सदा को हिंदुस्तान के सब रईसो और प्रजा के लिये इस बात का चिन्ह हो कि श्रीमती के और उन क लाभ एक है और महारानो की ओर राजभक्ति और शुभचितकता रखनी उन पर उचित है।

वे राजसी घरानो की श्रेणियाॅ जिन का अधिकार बदल देने और देश की उन्नति करने के लिये ईश्वर ने अॅगरेजी राज को यहाॅ जमाया, प्रायः अच्छे और बडे बादशाहो से खाली न थीं परंतु उन के उत्तराधिकारियो के राज्यप्रबध से उन के राज्य के देशो मे मेल न बना रह सका। सदा आपस मे झगडा होता रहा और अधेर मचा रहा। निर्बल लोग बली लोगो के शिकार थे और बलवान् अपने मद के। इस प्रकार आपस की काट मार और भीतरी झगड़ो के कारण जड़ से हिलकर और निर्जीव होकर तैमूरलग का भारी घराना अत को मिट्टी मे मिल गया, और उस के नाश होने का कारण यह था कि उस से पच्छिम के देशो की कुछ उन्नति न हो सकी।

आजकल ऐसी राजनीति के कारण जिस से सब जात और सब धर्म के लोगों की समान रक्षा होती है, श्रीमती की हर एक प्रजा अपना समय निर्विघ्न सुख से काट सकती है। सरकार के समभाव के कारण हर आदमी बिना किसी रोक टोक के अपने धर्म के नियमों और रीतों को बरत सकता है। राजराजेश्वरी का अधिकार लेने से श्रीमती का अभिप्राय किसी को मिटाने या दबाने का नहीं है वरन् रक्षा करने और अच्छी राह बतलाने का। सारे देश की शीघ्र उन्नति और उस के सब प्रांतों की दिन पर दिन वृद्धि होने से अँगरेजी राज के फल सब जगह प्रत्यक्ष देख पड़ते है।

हे अँगरेजी राज के कार्यकर्त्ता और सच्चे अधिकारी लोग—यह आप ही लोगो के लगातार परिश्रम का गुण है कि ऐसे ऐसे फल प्राप्त है, और सब के पहले आप ही लोगों पर मै इस समय श्रीमती की ओर से उनकी कृतज्ञता और विश्वास को प्रगट करता हूँ। आप लोगों ने इस भारी राज की भलाई के लिये उन प्रतिष्ठित लोगों से जो आप के पहले इन कामो पर नियत थे किसी प्रकार कम कष्ट नहीं उठाया है और आप लोग बराबर ऐसे साहस, परिश्रम और सचाई के साथ अपने तन, मन को अर्पण करके काम करते रहे जिस से बढ़कर कोई दृष्टांत इतिहासों मे न मिलेगा।

कीर्त्ति के द्वार सब के लिये नहीं खुले है परतु भलाई करने का अवसर सब किसी को जो उसकी खोज रखता हो मिल सकता है। यह बात प्रायः कोई गवर्नमेंट नहीं कर सकती कि अपने नौकरो के पदो को जल्द जल्द बढाती जाय, परतु मुझे विश्वास है कि अँगरेजी सरकार की नौकरी मे 'कर्त्तव्य का ध्यान' और 'स्वामी की सेवा मे तन, मन को अर्पण कर देना' ये दोनो बाते 'निज प्रतिष्ठा' और 'लाभ' की अपेक्षा सदा बढ़कर समझी जायँगी। यह बात सदा से होती आई है और होती रहेगी कि इस देश के प्रबध के बहुत से भारी भारी और लाभदायक काम प्रायः बड़े बडे प्रतिष्ठित अधिकारियो ने नहीं किये है वरन् जिले के उन अफसरो ने जिनकी धैर्यपूर्वक चतुराई और साहस पर सपूर्ण प्रबध का अच्छा उतरना सब प्रकार आधीन है।

श्रीमती की ओर से राजकाज संबंधी और सेना संबंधी अधिकारियो के विषय मे मै जितनी गुणग्राहकता और प्रशंसा प्रगट करूँ थोडी है क्योंकि ये तमाम हिंदुस्तान मे ऐसे सूक्ष्म और कठिन कामों को अत्यंत उत्तम रीति पर करते रहे है और करते है जिन से बढ़ कर सूक्ष्म और कठिन काम सरकार अधिक से अधिक विश्वासपात्र मनुष्य को नहीं सौंप सकता । हे राजकाज संबंधी और सेना संबंधी अधिकारियो,— जो कमसिनी मे इतने भारी जिम्मे के कामो पर मुकर्रर होकर बड़े परिश्रम चाहनेवाले नियमो पर तन, मन से चलते हो और जो निज पौरुष से उन जातियो क बीच राज्य प्रबंध के कठिन काम को करते हो जिन की भाषा, धर्म और रीते आप लोगो से भिन्न है—मै ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि अपने अपने कठिन कामो को दृढ़ परंतु कोमल रीति पर करने के समय आप को इस बात का भरोसा रहे कि जिस समय आप लोग अपने जाति को बडी कीर्त्ति को थामे हुए है और अपने धर्म के दयाशील आज्ञाओ का मानते है उसी के साथ आप इस देश के सब जाति और धर्म के लोगो पर उत्तम प्रबंध के अनमोल लाभो को फैलाते है ।

उस पश्चिम की सभ्यता के नियमो को बुद्धिमानी के साथ फैलाने के लिये, जिस से इस भारी राज का धन बराबर बढता गया, हिंदुस्तान पर केवल सरकारी अधिकारियो ही का एहसान नहीं है, वरन् यदि मै इस अवसर पर श्रीमती की उस यूरोपियन प्रजा को जो हिंदुस्तान मे रहती है पर सरकारी नौकर नहीं है, इस बात का विश्वास कराऊँ कि श्रीमती उन लोगो के केवल उस राजभक्ति ही की गुणग्राहकता नहीं करतीं जो वे लोग उनके और उनके सिंहासन के साथ रखते हैं किंतु उन लाभो को भी जानती और मानती है, जो उन लोगो के परिश्रम से हिंदुस्तान को प्राप्त होते है तो मै अपनी पूज्य स्वामिनी के विचारो को अच्छी तरह न वर्णन करने का दोषी ठहरूँगा ।

इस अभिप्राय से कि अपने राज के इस उत्तम भाग को प्रजा को सरकार की सेवा या निज की योग्यता के लिये गुणग्राहकता देखाने का विशेष अवसर मिले श्रीमती ने कृपापूर्वक केवल स्टार आफ

इडिया के परम प्रतिष्ठित पद वालो और आर्डर आफ बृटिश इडिया के अधिकारियो की सख्या ही मे थोडी सी बढती नहीं की है किंतु इसी हेतु एक बिल्कुल नया पद और नियत किया है जो "आर्डर आफ दि इडियन एम्पायर" कहलावेगा ।

हे हिंदुस्तान की सेना के अँगरेजी और देशी अफसर और सिपाहियो,—आप लोगो ने जो भारी भारी काम बहादुरी के साथ लड़ भिड कर सब अवसरो पर किये और इस प्रकार श्रीमती की सेना की युद्ध-कीर्त्ति को थामे रहे, उस का श्रीमती अभिमान के साथ स्मरण करती है। श्रीमती इस बात पर भरोसा रखकर कि आगे को भी सब अवसरो पर आप लोग उसी तरह मिल जुल कर अपने भारी कर्त्तव्य को सचाई के साथ पूरा करेंगे, अपने हिंदुस्तानी राज मे मेल और अमन चैन बनाए रखने के विश्वास का काम आप लोगो ही को सुपुर्द करती है ।

हे वालटियर सिपाहियो,—आप लोगो के राजभक्तिपूर्ण और सफल यत्न जो इस विषय मे हुए है कि यदि प्रयोजन पडे तो आप सरकार की नियत सेना के साथ मिलकर सहायता करे इस शुभ अवसर पर हृदय से धन्यवाद पाने के योग्य है ।

हे इस देश के सरदार और रईस लोग,—जिन की राजभक्ति इस राजा के बल को पुष्ट करनेवाली है और जिन की उन्नति इस के प्रताप का कारण है, श्रीमती महारानी आप को यह विश्वास करके धन्यवाद देती है कि यदि इस राज के लाभो मे कोई विघ्न डाले या उन्हें किसी तरह का भय हो तो आप लोग उस की रक्षा के लिए तैयार हो जायगे । मै श्रीमती की ओर से और उन के नाम से दिल्ली आने के लिये आप लोगो का जी से स्वागत करता हूँ और इस बड़े अवसर पर आप लोगो के इकट्ठे होने को इगलिस्तान के राजसिहासन की ओर आप लोगो की उस राजभक्ति का प्रत्यक्ष प्रमाण गिनता हूँ जो श्रीमान् प्रिंस आफ वेल्स के इस देश मे आने के समय आप लोगो ने दृढ़ रीति पर प्रकट की थी। श्रीमती महारानी आप के स्वार्थ को अपना स्वार्थ समझती है, और अँगरेजी राज के साथ उस के कर देने वाले और स्नेही राजा लोगो

का जो शुभ सयोग से सबध है उस के विश्वास को दृढ करने और उसके मेल जोल को अचल करने ही के अभिप्राय से श्रीमती ने अनुग्रह करके वह राजसी पदवी ली है जिसे आज हम लोग प्रसिद्ध करते है।

हे हिंदुस्तान की राज राजेश्वरी के देसी प्रजा लोग,—इस राज की वर्त्तमान दशा और उस के नित्य के लाभ के लिये अवश्य है कि उस के प्रबधको जॉचने और सुधारने का मुख्य अधिकार ऐसे अँगरेजी अफसरो को सुपुर्द किया जाय जिन्हो ने राज काज के उन तत्त्वो को भली भॉति सीखा है जिन का बरताव राज राजेश्वरी के अधिकार स्थिर रहने के लिये अवश्य है। इन्हीं राजनीति जानने वाले लोगो के उत्तम प्रयत्नो से हिंदुस्तान सभ्यता मे दिन दिन बढ़ता जाता है और यही उसके राज काज सबधी महत्व का हेतु और नित्य बढनेवाली शक्ति का गुप्त कारण है और इन्हीं लोगो के द्वारा पच्छिम देश का शिल्प, सभ्यता और विज्ञान, (जिन के कारण आज दिन यूरोप लडाई और मेल दोनो मे सब से चढ बढ कर है) बहुत दिनो तक पूरब के देशो मे वहॉ वालों के उपकार के लिये प्रचलित रहेगा।

परतु हे हिंदुस्तानी लोग ! आप चाहे जिस जाति या मत के हो यह निश्चय रखिये कि आप इस देश के प्रबध मे योग्यता के अनुसार अँगरेजो के साथ भली भॉति काम पाने के योग्य है, और ऐसा होना पूरा न्याय भी है, और इगलिस्तान तथा हिंदुस्तान के बड़े राजनीति जानने वाले लोग और महारानी की राजसी पार्लमेंट व्यवस्थापको ने बार बार इस बात को स्वीकार भी किया है। गवर्नमेंट ऑव इंडिया ने भी इस बात को अपने सम्मान और राजनीति के सब अभिप्रायो के लिये अनुकूल होने के कारण माना है। इसलिये गवर्नमेंट ऑव इडिया इन बरसो मे हिंदुस्तानियो की कारगुजारी के ढग मे, मुख्यकर बडे बड़े अधिकारियो के काम मे पूरी उन्नति देख कर सतोष प्रगट करती है।

इस बडे राज्य का प्रबध जिन लोगो के हाथ मे सौंपा गया है उन मे केवल बुद्धि ही के प्रबल होने की आवश्यकता नहीं है वरन् उत्तम आचरण और सामाजिक योग्यता की भी वैसी ही आवश्यकता है। इस लिये जो लोग कुल, पद और परपरा के अधिकार के कारण आप

लोगो मे स्वाभाविक ही उत्तम है उन्हें अपने को और अपने संतान को केवल उस शिक्षा के द्वारा योग्य करना अवश्यक है, जिससे कि वे श्रीमती महारानी अपनी राजराजेश्वरी की गवर्नमेंट की राजनीति के तत्वो को समझे और काम मे ला सकें और इस रीति से उन पदो के योग्य हो जिन के द्वार उन के लिये खुले है।

राजभक्ति, धर्म, अपक्षपात, सत्य और साहस देश संबधी मुख्य धर्म है उनका सहज रीति पर बरताव करना आप लोगों के लिये बहुत आवश्यक है, और तब श्रीमती की गवर्नमेंट राज के प्रबध मे आप लोगो की सहायता बडे आनंद से अगीकार करेगी, क्योकि पृथ्वी के जिन जिन भागो मे सरकार का राज है वहाँ गवर्नमेंट अपनी सेना के बल पर उतना भरोसा नहीं करती जितना कि अपनी सतुष्ट और एकजी प्रजा की सहायता पर जो अपने राजा के वर्त्तमान रहने ही मे अपना नित्य मगल समझकर सिंहासन के चारो ओर जी से सहायता करने के लिये इकट्ठे हो जाते है।

श्रीमती महारानी निबल राज्यो को जीतने या आसपास की रियासतो को मिला लेने से हिंदुस्तान के राज की उन्नति नहीं समझतीं वरन् इस बात मे कि इस कोमल और न्याययुक्त राजशासन को निरुपद्रव बराबर चलाने मे इस देश की प्रजा क्रम से चतुराई और बुद्धिमानी के साथ भागी हो। जो हो उनका स्नेह और कर्त्तव्य केवल अपने ही राज से नहीं है वरन् श्रीमती शुद्ध चित्त से यह भी इच्छा रखती हैं कि जो राजा लोग इस बडे राज की सीमा पर है और महारानी के प्रताप की छाया मे रहकर बहुत दिनो से स्वाधीनता का सुख भोगते आते है उन से निष्कपट भाव और मित्रता को दृढ़ रक्खे। परतु यदि इस राज के अमन चैन मे किसी प्रकार के बाहरी उपद्रव की शका होगी तो श्रीमती हिंदुस्तान की राजराजेश्वरी अपने पैतृक राज की रक्षा करना खूब जानती है। यदि कोई विदेशी शत्रु हिंदुस्तान के इस महाराज्य पर चढ़ाई करे तो मानो उस ने पूरब क सब राजाओ से शत्रुता की, और उस दशा मे श्रीमती को अपने राज के अपार बल, अपने स्नेही और कर देने वाले राजाओ की वीरता और राजभक्ति और अपनी

प्रजा के स्नेह और शुभचितकता के कारण इस बात की भरपूर शक्ति है कि उसे परास्त करके दड दे ।

इस अवसर पर उन पूरब के राजाओ के प्रतिनिधियो का वर्त्तमान होना जिन्होने दूर दूर देशो से श्रीमती को इस शुभ समारभ के लिये बधाई दी है, गवर्नमेंट ऑव इ डिया के मेल के अभिप्राय, और आस पास के राजाओ के साथ उस के मित्र का स्पष्ट प्रमाण है । मै चाहता हूँ कि श्रीमती की हिंदुस्तानी गवर्नमेंट की तरफ से श्रीयुत खानकिलात और उन राजदूतो को जो इस अवसर पर श्रीमती के स्नेही राजाओ के प्रतिनिधि होकर दूर दूर से अँगरेजी राज मे आए है और अपने प्रतिष्ठित पाहुने पर श्रीयुत गवरनर जेनरल गोआ और बाहरी कासलो का स्वागत करूँ ।

हे हिंदुस्तान के रईस और प्रजा लोग,—मै आनद के साथ आप लोगो को वह कृपापूर्वक सदेसा जो श्रीमती महारानी आप लोगो की राजराजेश्वरी ने आज आप लोगो को अपने राजसी और राजेश्वरीय नाम से भेजा है सुनाता हूँ। जो वाक्य श्रीमती के यहाँ से आज सबेरे तार के द्वारा मेरे पास पहुँचे है, ये है :—

"हम, विक्टोरिया, ईश्वर की कृपा से, सयुक्त राज (ग्रेट ब्रिटेन औ आयरलैड) की महारानी, हिंदुस्तान की राजराजेश्वरी, अपने वाइसराय के द्वारा अपने सब राज काज संबधी और सेना संबंधी अधिकारियो, रईसो, सरदारो और प्रजा को, जो इस समय दिल्ली मे इकट्ठे है, अपना राजसी और राजराजेश्वरीय आशीर्वाद भेजते हैं और उस भारी कृपा और पूर्ण स्नेह का विश्वास कराते है जो हम अपने हिंदुस्तान के महाराज्य की प्रजा की ओर रखते है। हम को यह देख कर जी से प्रसन्नता हुई कि हमारे प्यारे पुत्र का इन लोगो ने कैसा कुछ आदर सत्कार किया, और अपने कुल और सिहासन की ओर उन की राजभक्ति और स्नेह के इस प्रमाण से हमारे जी पर बहुत असर हुआ । हमे भरोसा है कि इस शुभ अवसर का यह फल होगा कि हमारे और हमारी प्रजा के बीच स्नेह और दृढ होगा, और सब छोटे बडे को इस बात का निश्चय हो जायगा कि

हमारे राज मे उन लोगो को स्वतंत्रता, धर्म और न्याय प्राप्त है और हमारे राज का अभिप्राय और इच्छा सदा यही है कि उन के सुख की वृद्धि, सौभाग्य की अधिकता, और कल्याण की उन्नति होती रहे।"

मुझे विश्वास है कि आप लोग इन कृपामय वाक्यो की गुणग्राहकता करेगे।

ईश्वर विक्टोरिया संयुक्त राज की महारानी और हिंदुस्तान की राजराजेश्वरी की रक्षा करे।

इस ऐड्रेस के समाप्त होते ही नैशनल एन्थेम का बाजा बजने लगा और सेना ने तीन बार हुर्रे शब्द की आनदध्वनि की। दरबार के लोगो ने भी परम उत्साह से खडे होकर हुर्रे शब्द और हथेलियो की आनदध्वनि करके अपने जी का उमग प्रगट किया। महाराज सेधिया, निजाम की ओर से सर सालारजग, राजपुताना के महाराजो की तरफ से महाराज जयपुर, बेगम भूपाल, महाराज कश्मीर और दूसरे सरदारो ने खडे होकर एक दूसरे को बधाई दी और अपनी राजभक्ति प्रगट की। इस के अनंतर श्रीयुत वाइसराय ने आज्ञा की कि दरबार हो चुका और अपनी चार घोडे की गाडी पर चढकर अपने खेमे को रवाने हुए।

श्रीमती महारानी के राजराजेश्वरी की पदवी लेने के उत्सव मे गवरन्मेट ऑव इडिया ने हिंदुस्तान के रईसो और साधारण लोगो पर जो अनेक अनुग्रह किये है उन्हें हम सक्षेप के साथ नीचे लिखते है।

सलामी

जबू, ग्वालियर, इदौर, उदयपुर ओर त्रावणकोर के महाराजो की सलामी उनकी जिदगी भर के लिये १६ के बदले २१ तोप की हो गई और महाराज जयपुर की १७ से बढ़ कर २१।

जोधपुर और रीवॉ के महाराजो के लिये उनकी जिदगी भर को १७ से बढकर १६ तोप की सलामी हो गई।

किशुनगढ और उर्छा के महाराजो की सलामी उनके जीवन समय के लिये १५ तोप के बदले १७ हो गई, और नवाब टोक की ११

से बढ कर १७। भूपाल की बेगम के पति और हैदराबाद के शम्सुल उमरा नामी दूसरे मंत्री की सलामी नए सिर से १७तोप की नियत हुई।

नवाब रामपुर की सलामी उमर के लिये १३ से १५ तोप हुई, और भाव नगर के ठाकुर, नवा नगर के जाम, जूनागढ के नवाब और काठियावाड के राजा की ११ से बढकर १५। आरकट के शहजादे और बेगम भूपाल की सबंधिनी कुदसिया बेगम को १५ तोप की सलामी नए सिर से मुकर्रर हुई।

महाराज पन्ना, राजा जींद और राजा नाभा की ११ से १३ तोप की सलामी जिंदगी भर के लिये हो गई और महारानी तंजौर और महाराज बर्दवान को नए सिर से १३ तोप की सलामी मिली।

मकला के नकीब और शिवहर के जमादार को १२ तोप की सलामी उमर भर के लिए मिली।

मलेरकोटला के नवाब की सलामी जिंदगी भर के लिये ६ से ११ हो गई, और मुरवी के ठाकुर साहिब और टिहरी के राजा के लिये नए सिर से ११ तोप की सलामी कायम हुई।

नीचे लिखी हुई जगहो के राजाओं, सरदारों या ठाकुरो के जीवन समय के लिये नए सिर से नौ नौ तोप की सलामी मिली—

धरमपुर, ध्रोल, बलरामपुर, बसडा, बिरोदा, गोदाल, जजीरा, खरींद, किलचीपुर, लिमडी, मैहर, पलिटाना, राजकोट, सुकेतरा (के सुल्तान), सुचीन, बादवान और बकानेर।

यहाँ यह भी लिखना आवश्यक है कि १ जनवरी सन् १८७७ से श्रीमती राजराजेश्वरी की आज्ञानुसार उनकी सलामी १०१ तोप की और राजसी झंडे तथा हिंदुस्तान के गवर्नर-जेनरल की ३१ तोप की नियत हुई।

नीचे लिखे हुए राजा और अधिकारी लोग "काउंसिलर ऑव दि एम्प्रेस" (राजराजेश्वरी के सलाहकार) नियत हुए :—

जीवन समय तक।

महाराज कश्मीर, श्रीरणवीरसिंह जी० सी० एस० आई०।
„ बूँदी, श्रीरामसिंह जी० सी० एस० आई०।

महाराज ग्वालियर, श्रीजयाजीराव सेंधिया जी० सी० एस० आई० ।

,, इंदौर, श्रीतुकाजीराव हुल्कर जी० सी० एस० आई० ।

,, जयपुर, श्रीरामसिंह जी० सी० एस० आई० ।

,, ट्रावनकोर, श्रीरामवर्मा जी० सी० एस० आई० ।

,, जींद, श्रीरघुबीर सिंह जी० सी० एस० आई० ।

,, नवाब रामपुर, कलबअलीखाँ जी० सी० एस० आई० ।

पद का अधिकार रहने तक

श्रीयुत् रिचार्ड साटाजिनेट कैम्बेल जी० सी० एस० आई० ड्यूक ऑव बकिंहैम ऐन्ड शान्डॉस, मद्रास के गवरनर ।

सर फिलिप उडहाउस जी० सी० एस० आई०, के० सी० बी०, बम्बई के गवरनर ।

सर एफ० हेन्स के० सी० बी०, हिंदुस्तान के कमांडरिनचीफ ।

सर रिचर्ड टेम्पल के० सी० एस० आई० बंगाल के लेफ्टेनेन्ट गवरनर ।

सर जॉर्ज कूपर सी० बी० पश्चिमोत्तर देश के लेफ्टेनेन्ट गवरनर ।

सर राबर्ड डेवीस के० सी० एस० आई०, पंजाब के लेफ्टेनेन्ट गवरनर ।

सर जॉन स्ट्रैची के० सी० एस० आई० गवरनर जेनरल की कांउसिल के मेंबर ।

सर हेनरी नार्मन के० सी० बी० गवरनर-जेनरल की कांउसिल के मेंबर ।

आनरेबल ए० हॉबहाउस क्यू० सी०, गवरनर-जेनरल की कांउसिल के मेंबर ।

सर ए० क्लार्क के० सी० एम० जी०, सी० बी०, गवरनर-जेनरल की कांउसिल के मेंबर ।

आनरेबल ई० बेली सी० एस, आई०, गवरनर जेनरल की कांउसिल के मेंबर ।

सर ए० आरबुथनाट के० सी० एस० आई०, गवरनर-जेनरल की कांउसिल के मेंबर ।

नीचे लिखे हुए राजाओं को प्रथम श्रेणी के स्टार ऑव इंडिया (जी० सी० एस० आई०) की पदवी मिली :—

श्रीयुत् महाराज रामसिंह, बूँदी ।

„ महाराज ईश्वरीप्रसादनारायण सिंह, बनारस ।

„ महाराज जसवन्त सिंह, भरतपुर ।

„ प्रिंस अजीमजाह बहादुर, आर्कट ।

इन लोगों को दूसरी श्रेणी के स्टार ऑव इंडिया (के० सी० एस० आई०) की पदवी मिली :—

श्रीशिवाजी छत्रपति, राजा कोल्हापुर ।

राजा आनंदराव पंवार, धारवाले ।

श्रीमानसिंहजी, राजा ध्रांगध्रा ।

श्रीविभवजी, जाम नवानगर ।

आर० जे० मैकडोनल्ड, श्रीमती के ईस्ट इंडीज की जहाजी फौजों के कमांडरिनचीफ ।

सर जॉर्ज कूपर सी० बी० पश्चिमोत्तर देश के लेफ्टेनेन्ट गवरनर ।

जेम्स स्टीवन साहिब, गवरनर जेनरल की काउंसिल के पहले मेंबर ।

आर्थर हाबहाउस साहिब, गवरनर-जेनरल की काउंसिल के मेंबर ।

ई० सी० बेली साहिब सी० एस० आई० गवरनर जेनरल की काउंसिल के मेंबर ।

तीसरे दरजे के स्टार ऑव इंडिया [सी० एस० आई०] की पदवी २५ आदमियों को मिली, जिन में मथुरा के सेठ गोविंद दास, कश्मीर के दीवान ज्वाला सहाय, और त्रावणकोर के दीवान शशिया शास्त्री को भी गिनना चाहिये । नीचे लिखे हुए राजाओं को उनके नाम के सामने लिखी हुई पदवियाँ मिलीं ।

महाराज गाइकवाड बड़ोदा—"फरजंदे खास दौलते इंगलिशिया" (अँगरेजी सरकार के मुख्य बेटे)

महाराज ग्वालियर—"हिसामुस्सलतनत" [राज्य की तलवार]

महाराज कश्मीर—"इन्द्रमहेन्द्र बहादुर सिपरेसल्तनत" (राज्य की ढाल)

महाराज अजयगढ—"सवाई"

महाराज बिजावर—"सवाई"

महाराज चरखारी—"सिपहदारुल्मुल्क" (देश के सेनापति)

महाराज दतिया—"लोकेन्द्र"

नीचे लिखे हुए सरदारो और रईसो को "महाराज" की पदवी अपनी जिन्दगी भर के लिये मिली :—

आनंदराव पॅवार, धार के राजा।

छत्र सिह, समथर के राजा बहादुर।

धनुर्जय नारायणभज देव, किलाक्योंझार के राजा, उडीसा।

देव्या सिह देव, पुरी के राजा, उड़ीसा।

जगदेन्द्रनाथ राय, [राजा नाटौर के घराने की बडी औलाद]

राजा ज्योतींद्र मोहन ठाकुर।

कृष्णचद्र, मोरभज वाले, उडीसा।

महीपत सिह, पटना।

आनरेबल राजा नरेद्रकृष्ण, कलकत्ता।

राजा कृष्ण सिह, सुसॉग के राजा।

राजा रामनाथ ठाकुर, कलकत्ता।

नीचे लिखी हुई रानियो को उनके जीवन समय के लिये "महारानी" की पदवी मिली :—

रानी हरसुंदरी देव्या, सिरसौल, बर्दवान।

रानी हींगन कुमारी, पैदरा, मानभूम।

रानी सुरतसुंदरी देव्या, राजशाही।

राजा सर दिनकरराव के० सी० एस० आई० को "राजा मुशीरेखास बहादुर" [राजा मुख्य सलाहकार बहादुर] की पदवी उनकी ज़िदगी के लिये मिली।

नीचे लिखे हुए सरदारो और रईसो को उनकी जिदगी के लिये "राजा बहादुर" की पदवी मिली :—

रघुबीरदयाल सिंह, बिरोदा के राजा।
खड्गसिंह, सुरीला के राजा।
उदितप्रतापदेव, खरोद के राजा।
राजा बिशेशर मालिया, सिरसौल, बर्द्वान।
राजा हरिबल्लभसिंह, बिहार।
राजा हरनाथ चौधरी, दुबलहट्टी, राजशाही।
राजा मंगलसिंह, भिनाई, अजमेर।
राजा रामरंजन चक्रवर्त्ती, बीरभूम।

—*—

नीचे लिखे हुए मनुष्यों को उन के जीवन समय के लिये "राजा" की पदवी मिली :—

बाबू अजीत सिंह, तरौल, प्रतापगढ़।
बाबा बलवंत राव, जबलपुर।
बलवंत सिंह, गंगवाना।
डमरू कुमार वेंकटिया नयुदू, जमींदार कलाहस्थी, उत्तर आरकट।
देवा सिंह, राजगढ़।
दिगंबर मित्र, कलकत्ता।
राव गंगाधरराम राव जमींदार पितापुर, गोदावरी प्रांत।
राव छत्रसिंह, जमींदार, कन्याधना।
हरिश्चंद्र चौधरी, मैमनसिंह।
कमलकृष्ण, कलकत्ता।
राय बहादुर क्षेत्रमोहनसिंह, दीनाजपुर।
कुँअर हरनरायण सिंह, हाथरस।
कुँअर लछमन सिंह, डिप्टी कलेक्टर, बुलंदशहर।
सर टी० माधवराव के० सी० एस० आई०, बड़ोदा के दीवान।
ठाकुर माधव सिंह, अजमेर।
प्रताप सिंह, अजमेर।
रामनरायन सिंह, मुंगेर।

इन सरदारों को उनके नाम के सामने लिखे हुए खिताब खान-दानी मिले —

महाराज सर जयमंगलसिंह बहादुर के० सी० एस० आई० गिद्धौर, मुंगेर—"महाराज बहादुर"।

धर्मजीत सिंह देव, सरदार उदैपुर, छोटानागपुर महाल—"राजा उदयपुर"।

नवाब ख्वाजा अबदुलग़नी, ढाका—"नवाब"

दीवान गयासुद्दीनअली खॉ सज्जादानशीन, अजमेर, को उन की ज़िंदगी भर के लिये "शेखुलमशायख़" का खिताब मिला और सरदार अतरसिंह बहादुर, भदौर, को "मलाजुल उलमा उलफीजला" का।

इस के सिवाय एक को "दीवान बहादुर" की, एक को "दीवान" की और १३ को "ऑनररी असिस्टेंट कमिशनर" की पदवी दी गई।

दो यूरोपियन महाशयों को फारिन डिपार्टमेंट के आनरेरी असिस्टेंट सेक्रेटरी का और ऑनरेरी असिस्टेंट प्राइवेट सेक्रेटरी का पद भी अलग अलग दिया गया।

सेना के कितने अधिकारों के साथ भी "सरदार बहादुर" और "बहादुर" की पदवियॉ लगा दी गई, ओर सब छोटे छोटे अधिकारियों, जहाजी नौकरों, सेना के सिपाहियों ओर गोरों को एक एक दिन की तनख्वाह इनाम मिली और दूसरी रिआयतें भी इन के साथ की गईं। इस के सिवाय नेटिव कमीशंड आफिसर लोगों की तनखाह भी कुछ बढा दी गई है।

रहीमखॉ खॉ बहादुर, असिस्टेंट सर्जन लाहौर को "ऑनरेरी सर्जन" की पदवी मिली।

श्रीयुत रणवीर सिंह जी० सी० एस० आई० महाराज जम्बू और कश्मीर, और श्रीयुत जयाजीराव सेंधिया जी० सी० एस० आई० महाराज ग्वालियर को सेना के जेनरल [जरनैल] का पद प्रतिष्ठा की रीति पर श्रीमतीराजराजेश्वरी की ओर से दिया गया।

—()—

राजालोगों के सलामी की शोधी हुई नई फिहरिस्त।

—❀—

राज की सलामी

२१

गाइकवाड़ बड़ोदा, निजाम हैदराबाद और महाराज मैसूर।

१६

महाराना मेवाड, खान किलात, बेगम भूपाल, महाराज जम्बू, इंदौर, ग्वालियर, ट्रैवकोर और कोल्हापुर।

१७

बहावलपुर के नवाब, बूँदी के महाराव राजा, कोटा के महराव, कोचीन के राजा, कच्छ के राव और भरतपुर, बीकानेर, जैपुर, करौली, जोधपुर पटियाला और रीवाँ के महाराजा।

१५

धार, दतिया, ईडर, कृष्णगढ, शिकम और उर्छा के महाराजा, देवास के छोटे बड़े राजा, प्रतापगढ के राजा, अलवर के महाराव राजा, राना धौलपुर, डूँगरपुर और जैसलमेर के महा रावल, झाला-वार के महाराज राना, खैरपुर के खाँ और सिरोही के राव।

१३

महाराजा बनारस, जावरा और रामपुर के नवाब, कोच बिहार, रतलाम और त्रिपुरा के राजा।

११

चबा, छतरपुर, ध्रांगध्रा, फरीदकोट, झबुआ, जींद, कहलूर, कपूर-थला, मडी, नाभा नरसिहगढ, राजपिपला, सीतामऊ, सिलहना, सिरमौर और सुकेत के राजे। बावनी, कम्बे, जूनागढ़, राधनपुर, राज-गढ़ और टोक के नवाब। अजयगढ, बिजावर, चरखारी, पन्ना और समथर के महाराजे, बाँसवारा के महारावल, भावनगर के ठाकुर, नवा नगर के जाम, पालनपुर के दीवान और पोर बंदर के राना।

६

अली राजपुर, बड़वानी और लुनवारा के राना, बैरिया, छोटा उदयपुर, नागोद और सोंठ के राजा, वालाशिनोर के बाबी, फुलदी और लहज के सुलतान तथा सावतवाडी के देसाई और मालेर कोटला के नवाब ।

—०—

शारीरक सलामी ।

२१

महाराज दिलीप सिंह, महाराज जयाजी राव सेंधिया, महाराज तुकोजी राव होल्कर, महाराना सज्जनसिंह जी उदयपुर, महाराज रामसिंह सवाई जयपुर, महाराज रणवीर सिंह कश्मीर, महाराज श्रीरामवर्मा ट्र्यावेंकोर ।

१६

मुरशिदाबाद के नवाब निजाम, महाराज जसवंत सिंह जोधपुर, महाराज सर जंग बहादुर वजीर नैपाल, महाराज रघुराज सिंह रीवाँ ।

१७

बेगम भूपाल के पति, हैदराबाद के सालारजंग और शमसुलउम्रा, महाराज पृथ्वी सिंह कृष्णगढ़, महाराज महेंद्रप्रताप सिंह उर्छा और नवाब इब्राहीम खाँ टोंक ।

१५

आर्कट के प्रिंस अजीमजाह, ठाकुर तख्तसिंह जी भावनगर, कुदसिया बेगम भूपाल, राजा मानसिंह ध्रांगध्रा, नवाब महाबत खाँ जूनागढ़, जाम श्रीविभव जी नवानगर, नवाब कलबअली खाँ रामपुर ।

१३

महाराज महताबचंद बर्दवान, महाराज जींद, महाराज पन्ना, महाराज विजयनगरम्, राजा नाभा और रानी विजय महिम्नी मुक्ताबाई तंजौर ।

१२

उमर बिन सल्लह बिन मुहम्मद नकीब मकला, औध बिन उमर जमादार शहरा।

११

नवाब मालेर कोटला, ठाकुर मोरवी और राजा टेहरी।

९

महारावल बाँसवाड़ा, महाराजा बलरामपुर, महारावल धरमपुर, ध्रोल गोंदल, लिमडी, पालीटाना, राजकोट और बाद्वान के ठाकुर, जंजीरा के और सुचीन के नवाब, खरोड़, बकनीर बिरोदा और मैहर के राजे और सुलतान सकोतरा तथा किलिचीपुर के राव।

विदित रहे कि महाराज नैपाल, सुल्तान मसकत, सुलतान जजीबार और अमीर काबुल की सलामी भी २१ है।

उदयपुरोदय

[अर्थात् मेवाड़ का पुरावृत्त-संग्रह]

सं० १६३४

उदयपुरोदय

—❀—

पहिला अध्याय

मेवाड का शुद्ध नाम मेद्पाट है और यहाँ के महाराज की सज्ञा सीसौधिया है। कहते है कि इन के वश मे कोई राजा बडे धार्मिक थे। एक समय वैद्यो ने छल से औषध मे मद्य मिला कर उन को पिला दिया, क्योंकि जिस रोग मे वे ग्रस्त थे उस की औषधि मद्य ही के साथ दी जाती थी। शरीर स्वच्छ होने पर जब उन्हों ने जाना कि हम ने मद्य पीया था, तो उसके प्रायश्चित्त के हेतु गलता हुआ सीसा पीकर प्राण त्याग किया। तभी से सीसौधिया इस वश की संज्ञा हुई। यही वश भारतखड मे सब से प्राचीन और सब से माननीय है। इसी वश मे महात्मा माधाता, सगर, दिलीप, भगीरथ, हरिश्चद्र, रघु आदि बड़े बडे राजा हुए है और इसी वंश मे भगवान् श्रीरामचंद्र ने अवतार लिया है। इसी वश के चरित्र मे कालिदास, भवभूति, वरच व्यास, बाल्मीकि ने भी वह ग्रथ बनाए है जो अब तक भारतवर्ष के साहित्य के रत्नभूत है। हिदुस्तान मे यही वश ऐसा बचा है जिस मे लोग सत्ययुग से लेकर अब तक बराबर राज्यसिहासन पर अचल छत्र के नीचे बैठते आए। उदयपुरवाले ही ऐसे है जिन्होने और और

विलायत के बादशाहों की बेटी ली, पर अपनी बेटी मुसलमान को न दी *।

आज हम उसी बडे पराक्रमशाली प्राचीन वश का इतिहास लिखने बैठे है। इसमे हमारे मुख्य सहायक ग्रंथ टॉड साहिब का राजस्थान, उदयपुर के वंशचरित्र के भाषाग्रथ और प्राचीन ताम्रपत्र है। जैसे ससार के सब राजो के इतिहास प्रारभ मे अनेक आश्चर्य घटना पूरित होते है वैसे ही इस के भी प्रारभ मे अनेक आश्चर्य इतिहास है। उन से कोई इस के ऐतिहासिक इतिवृत्ति मे सदेह न करे, क्योंकि प्रायः प्राचीन इतिवृत्त अनेक अद्भुत घटना पूर्ण होते है और इतिहासवेत्ता लोग उन्हीं चमत्कृत इतिहासो का सारासार निस्सार पूर्वक सारा निर्णय बुद्धि वल से कर लेते हैं।

राजस्थान मे मेवाड़ और जैसलमेर का राज्य सब से प्राचीन है। आठ सौ बरस से भारतवर्ष मे विदेशियो का राज्य प्रारभ हुआ, तब से अनेक राज्य बिगड़े और बने पर यह ज्यो का त्यो है। गज़नी के बादशाह लोग सिधु नदी का गभीर जल पार कर के हिदुस्तान मे आए। उस समय जहाँ मेवाड़ के राज्य का सिहासन था वहीं अब भी है। बहुत से राजा लोग उस राज्य के चारो ओर, बहुत से वहाँ से और कहीं जा बसे, पर इन के महल अब भी वहीं खड़े है जहाँ पहले खड़े थे। सतयुग से आज तक इसी वंश के सब पुरुष सिहासन ही पर मरे।

---

* कहते हैं कि जब औरंगजेब ने उदयपुर घेर लिया था तब राना साहब शिकार खेलते थे और उन को बादशाह की दो बेगम फौज से बिछुडी जगल में भटकती हुई मिलीं, जिन को राना ने अपनी बहिन कह के पुकारा और रक्षा-पूर्वक लाकर उन को औरगजेब को सौप दिया। मुसलमान तवारीख लिखने-वालों ने अपनी क्षति इसी बहाने पूरी की और कहा कि उदयपुरवालों ने बेटी नहीं दी, तो क्या हुआ, बादशाह बेगम को अपनी बहिन बनाया तो सही। वरच इसी हेतु उस दिन से उन बेगमो को उदयपुरी बेगम लिखा गया। भाषाग्र थों मे इन बेगमों के नाम रगी चगी बेगम लिखे है।

भगवान रामचंद्र के ज्येष्ठ पुत्र लव ने अपने राज्य-समय मे लवपुर अर्थात् लाहौर बसाया था और सुमित्रायु नामक राजा लव से पचपन पीढ़ी पीछे हुआ। पुराणो मे लिखा है कि सुमित्र ने कलियुग मे राज्य किया और बहुत से प्रमाणो से मालूम होता है कि ये विक्रमादित्य के कुछ पहले वर्त्तमान थे। इन के पीछे कनकसेन तक राजाओ का ठीक वृत्तात नहीं मिलता। जहाँ तक नाम मिले है उसमे पहला महारथ, उस का पुत्र अतरीक्ष, उस का अचलसेन और उस का पुत्र राजा कनकसेन हुआ। राजा कनकसेन ही सौराष्ट्र देश मे आये, परंतु इस का नहीं पता लगता कि उन्हो ने लाहौर किस हेतु से छोडा और किस पथ से सौराष्ट्र पहुँचे। यहाँ आकर इन्हो ने किसी पवाँर वश के राज का अधिकार जीत कर सन् १४४ मे वीर नगर नामक नगर सस्थापन किया। कनक-सेन को महामदनसेन, उनको शोणादित्य और उनको विजय भूप हुआ। इस ने जहाँ अब धोल का नगर है वहाँ पर विजयपुर नामक नगर सस्थापन किया और जहाँ अब सिहोर है तहाँ विदर्भ नगर बनाया। और बल्लभीपुर नामक एक बड़ा नगर बसा कर उसे अपनी राजधानी बनाया। अब धोल नगर से पाँच कोस उत्तर-पश्चिम बालभी नामक जो गाँव है वहीं इस प्रसिद्ध बल्लभीपुर का अवशेष है। शत्रुञ्जय-माहात्म्य नामक जैन ग्रथ मे भी इस नगर की बड़ी शोभा लिखी है मेवाड के राजा लोग बल्लभीपुर से आए हैं यह प्रवाद बहुत दिन से था, पर कोई इस का पक्का प्रमाण नहीं था। अब उदयपुर के राज्य मे एक टूटे शिवा-लय मे एक प्राचीन खोदा हुआ पत्थर मिला है, उस से यह सदेह मिट गया, क्योकि उस मे लिखा है कि जिन महात्माओ का ऊपर वर्णन हुआ उस की साक्षी बल्लभीपुर के प्राचीर है। राणा राजसिह के समय के बने हुये एक ग्रथ मे भी लिखा है कि सौराष्ट्र देश पर बरबरो ने चढ़ाई करके बालकानाथ को पराजय किया।

इस बल्लभीपुर के विप्लव मे सब लोग नष्ट हो गये और केवल एक प्रमार की दुहिता मात्र बची। बल्लभीपुर शिलादित्य के समय मे नाश हुआ। विजयभूप के पद्मादित्य, उन के शिवादित्य, उन के हरादित्य, उन के सुयशादित्य, उन के सोमादित्य, उन के शिलादित्य।

शिलादित्य वा शीलादित्य तक एक प्रकार का क्रम लिख आए है। अब आगे नामो मे और उन के समय मे कितना गडबड़ और उस के ठीक निर्णय मे कितनी विपत्ति है यह दिखाते है। आर्यमत के अनुसार चार युग मे काल बॉटा गया है। इसमे ब्रह्मा की उत्पत्ति से सत्ययुग माना जाता है। अब अनेक पुराणो से और प्रसिद्ध विद्वानो के मत से प्रारभ से काल लिखते है।

पुराण के मत से इक्ष्वाकु को २१८५००० बर्ष हुए। जोन्स के मत से ६८७७ और विलफर्ड के मत से ४५७८, टॉड के मत से ४०७७, वेएटली के मत से ३४०५।

श्री रामचंद्र का समय पुराण० ८६८६७६ वर्ष, जोन्स० ३६०६, विलफर्ड० ३२३७, वेएटली० २८२७, टॉड० ४०००।

महाराज युधिष्ठिर का समय पुराण० ४६७६, वेटली २४५३, और जोन्स-टाड ३३०७ और विलफर्ड के मत से श्री रामचद्र का और युधिष्ठिर का समय एक है, विल्सन के मत से ३३०७।

सुमित्र का समय पुराण० ३६७७, जोन्स २६०६, विलफर्ड २५७७, वेटली १६६६, विल्सन० २८०२, ब्रह्मावालो के मत से २४७७।

शिशुनाग का समय पुराण० ३८३६, जोन्स० २७४७, विलफर्ड० २४७७, बिल्सन० २६५४, ब्रह्मावाले० २४७७।

नद का समय पुराण० ३४७७, जोन्स० २५७६, विल्सन० २२६२, ब्रह्मावाले० २२८१।

चंद्रगुप्त का समय पुराण० ३३७६, जोन्स० २४७७, विलफर्ड० २२२७, विल्सन० २१६२, टॉड० २१६७, ब्रह्मावाले० २२६६।

अशोक का समय पुराण० ३३४७, जोन्स० २५१७, विल्सन० २१२७, ब्रह्मावाले० २२०७।

जोन्स प्रिसिप साहब के मत से परशुराम जी को ३०५३ वर्ष हुए और वेटली साहब के मत से वाल्मीकि रामायण बने केवल १५८६ वर्ष हुए।

कलियुग का प्रारभ पुलोम के समय तक भागवत के मत से ३७३४, ब्रह्माण्डपुराण के मत से ३६५२, वायुपुराण के मत से ३६०६, जैनो के

मत से २६५५ और चीन और ब्रह्मा के मत से २५६८ वर्ष से है। अँगरेजी विद्वानों के पुराणों के अनुसार इस समय तक पुलोम का समय जोड कर एक सम्मति है कि कलियुग बीते ५००० वर्ष लगभग हुए, परतु इस मत को वे सत्य नहीं मानते, क्योंकि फिर आप ही लिखते हैं कि स्वायभु मनु को हुए ५८८३ वर्ष और वैवस्वतमनु का ४८२७ वर्ष हुए।

युधिष्ठिर के ३०४४ संवत् बीते विक्रम का सवत् चला और विक्रम के १३५ वर्ष पीछे शालिवाहन का शाका चला।

ऊपर जो कालनिर्णय में विद्वानों के परस्पर विरुद्ध मत वर्णन किए गए इस से यह बात प्रसिद्ध होगी कि प्राचीन समय निर्णय करना कितना दुरुह्य है, इस के आगे जो ब्रह्मा से लेकर सुमित्र पर्यंत नामावली दी जाती है उसके मध्यगत काल का निर्णय न कर के सुमित्र के समय से जो हमारे मत के अनुसार २००० वर्ष बीते हुआ है काल का निर्णय प्रारभ करेंगे।

ब्रह्मा, मरीचि, कश्यप, विवस्वान, श्राद्धदेव, इक्ष्वाकु, विकुक्षी १ पुरजय, काकुस्थ, २ अनेनास, ३ पृथु, ४ विश्वगश्व, ५ अर्द, भाद्रआर्द, युवनाश्व, ६ श्रवस्थ, वृहदश्व, ७ कुवलयाश्व, दृढाश्व, हर्यश्व, निकुभ, ८ सकटाश्व, ९ प्रसेनजित्, युवनाश्व, १० माधाता, पुरुकुत्स, चित्रिशदश्व, अनारण्य, पृषदश्व, हयश्व, ११ बसुमान, १२ त्रिधन्वा, १३ त्रयारण्य, त्रिशकु, हरिश्चद्र, रोहिताश्व, हारीत, १४ चुचु, विजय, १५ रुरुक, वृक, १६ बाहु, सगर, असमजस, अशुमान्,

१ नामातर काकुस्थ। २–३ ना० अनपृथु। ४ ना० विश्वगधि। ५ ना० चद्र। ६ ना० स्वसव या श्रव। ७ ना० धुधुमार। ८ सकटाश्व के पीछे वरुणाश्व और कृशाश्व दो नाम और मिलते हैं। ९ ना० सेनजित। १० ना० सुबधु इन को चक्रवर्ती लिखा है। ११ ना० महेण या अरुण। १२ ना० त्रिविघन १३ ना० सत्यव्रत। १४ ना० चप, किसी पुस्तक में चप के पीछे सुदेव तब विजय लिखा है। १५ ना० भरुक। १६ ना० बाहुक। १७ ऋतुपर्णा के पीछे किसी पुस्तक मे नल, तब सार्वकाम लिखा है। १८ ना० आमक। १९ ना० मूलक। २० दशरथ, और इलिबिथ दो के बदले किसी पुस्तक मे ऐडाविड एक ही नाम लिखा है। २१ ना० खरभग। २२ कुश के

दिलीप, भगीरथ, श्रुत, नाभाग, अंबरीष, सिंधुद्वीप, अयुताश्व, १७ ऋतुपर्ण, सर्वकाम, सुदास, कल्माषपाद, १८ असमक, १९ हरिकवच, २० दशरथ, इलिवथ, विश्वासह, २१ खट्वॉग, दीर्घबाहु, रघु, अज, दशरथ, श्रीराम, २२ कुश, अतिथि, निषध, नल, नाभ, पुंडरीक, क्षेमधन्वा, २३ द्वारिक, अहीनज, कुरुपरिपात्र, २५ दल, २६ छल, उक्थ, २७ बज्रनाभि, २८ शखनाभि, २९ व्युथिताभि, ३० विश्वासह, हिरण्यनाभि, ३१ पुष्प, ३२ ध्रुवसधि, ३३ अपवर्म, शीघ्र, ३४ मरु, प्रसव श्रुत, ३५ सुसध, आमर्ष, ३६ महाश्व, वृहद्वाल, वृहद्शान, उरुक्षेप, वत्स, वत्सव्यूह प्रतिव्योम, ३७ देवकर, सहदेव, ३८ वृहदश्व, ३९ भानुरत्न, सुप्रतीक, मरुदेव, सुनक्षत्र ४० ।

केशीनर, ४१ अंतरीक्ष, ४२ सुवर्ण, अमित्रजित्, वृहद्राज, ४३ धर्म ४४ कृतजय, ४५ रणजय, सजय, शाक्य, ४६ क्रोधदान, शाक्य सिंह, ४७ अतुल, प्रसेनजित, क्षुद्रक, कुंदक, ४८ सुरथ, सुमित्र ।

समय से अनेक ग्रथकार द्वापर की प्रवृत्ति मानते हैं (इन्हीं कुश का एक पुत्र कूर्म नामक था जिस से कछवाहे लोग अपनी वशावली मानते है ।) २३ ना० देवानीक । २४ ना० अहीनग । २६ ना० बल । २५ ना० रणच्छल । २७ बज्रनाभि के पीछे कोई अर्क तब शखनाभि को लिखता है । २८ ना० सगण । २९ ना० विधृत । ३० ना० विशित्राश्व । ३१ ना० पुष्य । ३२ ध्रुवसधि और अपवर्म के बीच मेंकोई सुदर्शन नामक और एक राजा मानता है । ३३ ना० अग्निवर्म । ३४ ना० मनु । ३५ ना० सधि । ३६ ना० अवस्तान, इसी महाश्व के पीछे विश्वबाहु, प्रसेनजित और तक्षक नामक तीन राजा वृहद्वाल के पहले अनेक ग्रथकार मानते हैं और कहते हैं, कलियुग का प्रारभ इसी समय से हुआ । ३७ प्रतिव्योम और देवकर के बीच मे कोई भानु को भी जोडते हैं । इसी देवकर का नामातर दिवाकर है । ३८ सहदेव, तब बीर, तब वृहदश्व, यह किसी का मत है । ३९ ना० भानुमत वा भानुमान, ग्रथकारों का मत है कि ईरान का जो प्रसिद्ध बहमन नामक राजा हुआ था वह यही भानुमान है । इस के और सुप्रतीक के बीच मे कोई प्रतिशोश्व नामक राजा मानते हैं । ४० ना० पुष्कर । ४१ ना० रेख । ४२ ना० सुतपा । ४३ ना० बाढि । ४४ कोई ग्रथकार कहते हैं कि यही कृतजय प्रथम सौराष्ट्र में आया । ४५ ना० जयरान । ४६ ना०

महाराज जैसिंह के ग्रंथ के अनुसार सुमित्र के पीछे महारितु, अतरित, अचलसेन, कनकसेन, महामदनसेन, सुदत वा प्रथम सोगादित्य, (विजयसेन वा अजयसेन वा विजयादित्य) पद्मादित्य, शिवादित्य, हरादित्य, सूर्यादित्य, शिलादित्य, ग्रहादित्य, नागादित्य, भागादित्य, देवादित्य, आशादित्य, कालभोज वा भोजादित्य, द्वितीय ग्रहादित्य और बापा। सुमित्र से महाऋतु तक चार नाम नहीं मिलते और इस क्रम से श्रीरामचंद्र से बापा अस्सी पीढी मे है। तक्षक से ले कर के बाहुमान वा भानुमान तक आठ राजाओ का नाम कई वशावली मे नही मिलता। अनेक ग्रथकारो का मत है कि इसी तक्षक के समय से ईरान, तूरान, तुरकिस्तान इत्यादि देशो मे इसका वश राज करता था और तुरकिस्तान का प्राचीन नाम तक्षकस्थान बतलाते है और यूनान मे जो अर्तक्षर्क नामक राजा हुआ है वह भी इसी तक्षक का नामातर मानते है।

राजा जयसिह का मत है, कनकसेन के समय मे अर्थात् सन् १४४ मे सौराष्ट्र देश मे इस वश का राज हुआ और वही लिखते है कि विजय वा अजयसेन का नामातर नौशेरवाँ था। इस ने विजयपुर वा विराटगढ बसाया और सन् ३१९ मे वल्लभीशक स्थापन किया। उन्हीं का मत है कि शिलादित्य को यवनो ने जीता और सौराष्ट्र से यह राज छिन्न भिन्न हो गया और इसका पुत्र केशव वा गोप वा ग्रहादित्य भाडेर के जगल मे रहा और उस के पुत्र नागादित्य के समय से इस वश का गोत्र गहलौत कहलाया और फिर आशादित्य ने मेवाड़ मे अपने वश की पहली राजधानी आशापुर और आहार बसाया और इस के पीछे बापा ने सन् ७१४ मे चित्तौड़ का राज्य पाया, दूसरे ग्रहादित्य का नाम द्वितीय नागादित्य भी लिखा है।

शुद्धोधन इसी का पुत्र प्रसिद्ध शाक्यसिंह है, जो भादो सुदी ५ को जन्मा था, और बौद्ध और जैन के नाम से जिस का मत ससार की एक तिहाई मे व्याप्त है। ४७ ना० लागल वा सिंघल वा रातुल। ४८ ना० सुरत वा सुराष्ट्र, कहते है कि इसी के नाम से सौराष्ट्र देश बसा है।

बापा तक नाम का क्रम हम पूर्व मे लिख आए है, परतु प्राचीन ताम्रपत्रों से ले कर यदि वशावली लिखी जाय, तो सेनापति वा भट्टारक तथा धरासेन, द्रोणसिंह (प्रथम), ध्रुवसेन, धरापति, गृहसेन, श्रीधर-सेन (प्रथम), शिलादित्य (प्रथम), चारुग्रह वा खडग्रह (द्वितीय) श्रीधरसेन (द्वितीय), ध्रुवसेन (तृतीय), श्रीधरसेन (तृतीय), शिला-दित्य (इस के पीछे तीन नाम छूट गए है), शिलादित्य (तृतीय) और (चतुर्थ) शिलादित्य ।

टॉड साहब की वशावली और वल्लभीपुर की वशावली मे कितना अतर है यह ऊपर के नामो से प्रगट होगा । पादरी अंडरसन साहब ने दो नए ताम्रपत्र पढ कर इस वशावली को शोधा है और वे कहते है कि इस में जहाँ जहाँ श्रीधरसेन लिखा है वह सब नाम धरासेन है और शिलादित्य का नाम क्रमादित्य वा विक्रमादित्य है और इन्हीं को धर्मादित्य भी कहते है* । और वशावली के प्रथम पुरुष को सेनापति वा भट्टारक वा धर्मादित्य भी लिखा है । दोनो वशावली मे वल्लभीपुर का अतिम राजा शिलादित्य है और इन दोनो के सवत् भी पास पास मिलते है । पारसी इतिहासवेत्ताओ के मत से इसी शिलादित्य का पुत्र ग्रह वा ग्रहादित्य, जिस ने ग्रहलोत वा ममोधिया गोत्र चलाया, नौशेरवॉ का रक्षित पुत्र था, परतु महाराज जैसिंह ने राजा अजयसेन का ही नामातर नौशेरवॉ लिखा है । पारसी इतिहासवेत्ताओ के मत से नौशेरवॉ के पुत्र नोशीजाद (हमारे यहॉ का नागादित्य) और यजदि-जिर्द की बेटी माहबानू, जो इन्हीं राजाओ मे से किसी को ब्याही थी, इस वश के मूल पुरुष है । विलफर्ड साहब के मत से वल्लभीशक के स्थापनकर्ता अजयसेन वा दूसरी वशावली के अनुसार धरासेन को ही पुराणो मे शूद्रक वा शूरक लिखा है, जिस ने ३२९० वर्ष कलियुग बीते सन् १९१ वा २९१ मे प्रथम विक्रमादित्य के नाम से राज्य किया था ।† मेजर वॉटसन के मत से सेनापति भट्टारक के सौराष्ट्र जीतने के दो वर्ष

* Bomb. Jour. VLIII P. 216

† as Ras VL IX pp. 135 230.

पीछे प्रसिद्ध स्कन्दगुप्त मरा ।* इस से गुप्त सवत के आस ही पास बल्लभी सवत् भी है और इस विषय के उन्होने अनेक प्रमाण भी दिए है । इस बल्लभी संवत के निर्णय मे इतिहासवेत्ता विद्वानो के बड़े बड़े झगड़े हैं, जिस से कई दरजन कागज़ के बड़े ताव रँग गए हैं । लोग सिद्धात करते है कि गुप्तवश जब प्रबल था तब बल्लभीवश के लोग उसके वश के अनुगत थे, यहाँ तक कि भट्टारक सेनापति गुप्त वश बिगड़ने के पीछे स्वाधीन हुआ और अपने दूसरे बेटे द्रोणसिंह का महाराज किया । पाँच छः ताम्रपत्र इस वश के जो मिले है उन के परस्पर नामो मे बडा फरक है, जैसा गुहसेन धरासेन शिलादित्य धरासेन शिलादित्य वा गुहसेन के दो पुत्र शिलादित्य और खड़्ग्रह, खड़्ग्रह के दो पुत्र धरासेन और ध्रुवसेन वा शिलादित्य के देरभट्ट, उनके शिलादित्य खड़्ग्रह और ध्रुवसेन और शिलादित्य के बाद फिर शिलादित्य ।

इन नामो के परस्पर अत्यत ही विरुद्ध होने से कोई निश्चित वंशावली नहीं बन सकती, अतएव इन झगड़ो को छोड़ कर राजा कनकसेन के समय से हम ने पूर्व वृत्तात प्रारभ किया । कारण यह कि जब एक बड़ा वंश राज्य करता है तो उस की शाखा प्रशाखा आस पास छोटे छोटे राज्य निर्माण कर के राज करती हैं । इस मे क्या आश्चर्य है कि ताम्रपत्रो में ऐसे ही अनेक श्रेणियो की वंशावली का वर्णन हो जो वास्तव मे सब बल्लभी वश से सबध रखती हैं । ऐसा ही मान लेने से पूर्वोक्त समय और वश निर्णय की असमजसता, जटिलता, घनता, असबद्धता और विरोधिता दूर होगी ।

सुमित्र से लेकर शिलादित्य तक एक प्रकार का निर्णय ऊपर हो चुका और इस से निश्चय हुआ कि महाराज सुमित्र कलियुग के अत मे हुए थे और बल्लभीपुर का नाश भए दो हज़ार वर्ष के लगभग हुए । कहा है कि बल्लभीपुर मे सूर्यकुड नामक एक तीर्थ था । युद्ध के समय शिलादित्य के आवाहन करने से इस कुड मे से सूर्य के रथ का सात सिर का घोड़ा निकलता था और इस अश्व के रथ पर बैठने से फिर

* In Ant. VL III P. XXXIII.

शिलादित्य को कोई जीत नहीं सकता था। और यह भी कथित है कि सूर्य की दी हुई शिलादित्य के पास एक ऐसी शिला थी जिसको दिखा देने से वा स्पर्श करा देने से शत्रुओ का नाश हो जाता था। और इसी वास्ते इनका नाम शिलादित्य था। इन के किसी शत्रु ने इन्हीं के किसी निज भेदिये की सम्मति से उस पवित्र कुड को गोरक्त द्वारा अशुद्ध कर दिया, जिस से बल्लभीपुर के नाश के समय राजा के बारबार आवाह्न करने से भी वह अश्व नहीं निकला और राजा सपरिवार युद्ध मे निहत हुआ और वल्लभीपुर नाश हुआ। जैनग्रथो के अनुसार सवत् २८५ मे बल्लभीपुर नाश हुआ और श्री महाराणा उदयपुर के राज्य कृत सग्रह के अनुसार राजा शिलादित्य का नाम सलादित्य था और बल्लभीपुर का नाम विजयपुर।

अँगरेजी विद्वानो का मत है कि नगरावरोधकारी शत्रुदल ने हिदुओ को दु:ख देने के हेतु गोरक्त से बल्लभीपुर के जल कुडो को अशुद्ध कर दिया होगा, जिससे हिदू लोग घबडा कर एक साथ लड़ने को निकल खड़े हुए होगे। अलाउद्दीन बादशाह ने गागरौन देश के खीची राजाओ से यही छल किदा था। बल्लभीपुर के शत्रुओ का यही छल मानो इस कथा का मूल है।

बल्लभीपुर को किस असभ्य जाति ने नाश किया इस का निर्णय भली भॉति नही होता। प्राचीन पारस निवासी लोग वृष को पवित्र समझते थे और सूर्य के सामने उसको बलिदान भी करते थे। इस से निश्चय होता है कि ये लोग पारसी तो नहीं थे। प्राचीन ग्र थो मे पाया जाता है कि ख्रिष्टीय दूसरी शताब्दी मे सिधु नद के किनारे पारद वा पार्थियन लोगो का एक बडा राज्य था। विष्णुपुराण मे लिखा है कि सूर्यवशी सगर राजा ने म्लेच्छो को चिह्न विशेष देकर भारतवर्ष से निकाल दिया था, जिस मे यवन सर्व शिरोमुडित केश, अर्द्ध शिर-मुडित, पारद मुक्त केश और पन्हव वा पल्हव श्मश्रुधारी बनाए गए थे। उसी काल मे श्वेत वर्ण की एक हूण जाति भी सिधु के किनारे राज्य करती थी। हूण जाति नामक प्राचीन असभ्य मनुष्यो का लेख पुराणो और यूरप के इतिवृत्तो मे भी पाया जाता है। सभा-

वना होती है कि इन्हीं दो जातियों में से किसी ने वल्लभीपुर नष्ट किया होगा। पारद और हूण दो जातियों का आदिनिवास शाकद्वीप है। महाभारत में शाकद्वीपी और पूर्वोक्त हूणादिकों को इसी प्रकार यवन लिखा है। पुराणों में इन सबों को एक प्रकार का क्षत्री लिखा है। ये सब असभ्य जाति शाकद्वीप से किस काल में यहाँ आए इसका पता नहीं लगता। वेण्टली साहब का मत है कि शाकद्वीप इंगलैंड का नामांतर है। विशेष आश्चर्य का विषय यह है कि ये सब शाकद्वीपी काल पाके आर्य जाति में मिल गए, यहाँ तक कि ब्राह्मण और क्षत्रियों में भी शाकद्वीपी वर्त्तमान हैं।

यह निश्चय हुआ कि इन्हीं म्लेच्छ जाति के लोगों में से किसी जाति ने वल्लभीपुर नाश किया। साँदोराई से जो वंशपत्रिका मिली है उसमें लिखा है कि वल्लभीपुर नाश होने के पीछे वहाँ के लोग मारवाड़ में आकर साँदोरावालों और नादोर नगर बसा कर रहने लगे और फिर गाजनी नामक एक नगर का और भी उल्लेख है। एक कवि अपने ग्रंथ में लिखता है "असभ्यों ने गाजनी हस्तगत किया, शिलादित्य का घर जनशून्य हुआ और जो वीर लोग उस की रक्षा को निकले वे मारे गए"।

हिंदू सूर्य के वंश का यहाँ चौथा दिवस अवसान हुआ। प्रथम दिवस इक्ष्वाकु से श्री रामचंद्र तक अयोध्या में बीता, दूसरा दिन लव से सुमित्र तक अन्य राजधानियों में, तीसरा सुमित्र से विजयभूप तक अँधेरे मेघों से छिपा हुआ कहाँ बीता न जान पड़ा और यह चौथा दिन आज वल्लभीपुर में शिलादित्य के अस्त होने से समाप्त हुआ। पाँचवें दिन का इतिहास बहुत स्पष्ट है, जो गुह और बाप्पा के विचित्र चित्रों से चित्रित होकर दूसरे अध्याय में वर्णन होगा।

इति उदयपुरोदय प्रथम अध्याय

दूसरा अध्याय

वल्लभी वश की रात्रि का अवसान हुआ। उदयपुर के इतिहास की यहाँ से शृंखला बँधी। पूर्व मे लिख आए है कि वल्लभीपुर को यवनो ने घेरा और राजा शिलादित्य ने सकुटुंब सपरिवार वीरो की गति पाया। अब और सीमंतिनीगण राजा की सहगामिनी हुई, किंतु रानी पुष्पवती (वा कमलावती) मात्र जीवित रही।

रानी पुष्पवती चद्रावती नगर (साप्रत आबूनगर) के राजा की दुहिता थीं। वल्लभीपुर के आक्रमण के पूर्व ही यह रानी गर्भवती होकर अपने पिता के राज मे जगदबा (आशाम्बिका) के दर्शन को गई थी और वहाँ से लौटती समय मार्ग मे अपने प्राणवल्लभ और वल्लभीपुर का विनाश सुना और उसी समय अपना प्राण देना चाहा। परतु बीरनगर की एक ब्राह्मणी लक्ष्मणावती जो रानी के साथ थी उसके समझाने से प्रसव काल तक प्राण धारण का मनोरथ कर के मालिया प्रदेश के एक पर्वत की गुहा मे कालयापन करना निश्चय किया। इसी गुहा मे गुहा का जन्म हुआ और रानी ने सद्यःजात सतान उस ब्राह्मणी को देकर आप अग्नि-प्रवेश किया। मरती समय रानी ब्राह्मणी को समझा गई थी कि इस पुत्र को ब्राह्मणोचित शिक्षा देकर क्षत्रिय कन्या से व्याह देना।

लक्ष्मणावती ब्राह्मणी उस बालक का लालन पालन करने लगी और द्वेषियो के भय से भाडेरगढ और पराशर वन मे क्रम से रही। गुहा मे जन्म होने के कारण बालक का नाम भी गुहा (ग्रहादित्य वा केशवादित्य) रक्खा। गुहा की प्रकृति दिन दिन अति उत्कट होने लगी और बहुत से वनवासी बालको को इन्होने अपना अनुगामी बना लिया। इसी वृत्तात पर उस देश मे यह कहावत अब भी प्रचलित है कि सूर्य की किरण को कौन छिपा सकता है।

मेवाड़ की दक्षिण सीमा पर ईदर के राज्य पर उस समय भीलो का अधिकार था और उस समय के भीलो के राजा का नाम मंडलिका

था। प्रतिपालक शांतिशील ब्राह्मणों के साथ गुहा का जी नहीं मिलता था। इस से सम स्वभाव उग्र प्रकृति वाले भीलों से अपनी उद्दंड प्रचंड प्रकृति की एकता देखकर गुहा इन्हीं लोगों के साथ वन वन घूमते थे और काल-क्रम से भीलों के ऐसे स्नेहपात्र हो गए कि सबन पर्वत ईदर प्रदेश भीलों ने इनको समर्पण कर दिया। अबुलफजल और भट्ट गण गुहा के भील-राजप्राप्ति का वर्णन यों करते है। एक दिन खेल मे भील बालक लोग एक बालक को राजा बनाना चाहते थे और सब ने एक वाक्य हो कर गुहा ही को राजा बनाना स्वीकार किया। एक भील के बालक ने चट से अपनी उँगली काट के ताजे लहू से गुहा के सिर मे राजतिलक लगाया। यह खेल का व्यापार पीछे कार्यत. सत्य हो गया, क्योंकि भील-राजा मडलिका ने यह समाचार सुन कर प्रसन्न हो कर ईदर का राज्य गुहा को दे दिया। कहते है कि गुहा ने व्यथ भीलराज मंडलिका को पीछे से मार डाला। गुहा के नाम के अनुसार उन के वश के लोग गोहिलोट (गहिलौत वा गिहलौट) कहलाए। टॉड साहब कहते है कि गहिलौट ग्राहिलोत का अपभ्रंश है।

गुहा (केशवादित्य) के पुत्र नागादित्य हुए। इन्हीं ने पराशर वन मे नागह्रद नामक एक बड़ा ह्रद बनवाया। इन्ही के नाम के कारण लक्ष्मणावती ब्राह्मणी के संतान वा वह वन और तालाब सब नागदहा के नाम से प्रसिद्ध है और सिसौधियो को भी नागदहा कहते हैं। नागादित्य के भोगादित्य। इन्हो ने कुटिला नदी पर पक्का घाट बनाया और इंद्र सरोवर नामक तालाब का जीर्णोद्धार किया। पूर्वोक्त तड़ाग इन के नाम से अब तक भोडेला कहलाता है। इन के पुत्र देवादित्य, जिन्हो ने देलवाड़ा ग्राम निर्माण किया और उन के आशादित्य जिन्हो ने अहाड़पुर नगर बसा कर अपनी राजधानी बनाया। यह अहाड़पुर अब राणा लोगो का समाधिस्थल है। कहते है कि अहाडपुर मे जो गंगोद्भव तीर्थ है वह इसी राजा का निर्माण किया है और इन्हीं की भक्ति से उस मे गंगा जी का आविर्भाव हुआ था। उस प्रांत मे इस तीर्थ का बड़ा माहात्म्य है। यह तीर्थ उदयपुर से एक कोस पूर्व की ओर है। आशादित्य के पुत्र कालभोजादित्य और उन के

पुत्र ग्रहादित्य (वा द्वितीय नागादित्य)। घासा गाँव इन्हीं के नाम से प्रसिद्ध है। गुहा राजा से लेकर नागादित्य पर्यंत छ (टॉड साहब के मत से सात) राजाओं ने इसी पर्वत भूमि का राज्य किया, पर इन मे से कोई अत्यत प्रसिद्ध न था, किंतु नागादित्य का पुत्र बाप्पा बड़ा प्रसिद्ध और नामी मनुष्य हुआ, वरच उदयपुर के राज का इसे मूलस्तंभ कहैं तो अयोग्य न होगा। बापा का वर्णन उदयपुर से जो लिख कर आया है उसे हम यहाँ पर अविकल प्रकाश करते है। "ग्रहादित्य के बाष्प नामक पुत्र हुआ। कहते है कि बाष्प नदी गण के अवतार थे। यह कथा सविस्तर वायु पुराणातर्गत एकलिंग-माहात्म्य मे लिखी है। जब राजा ग्रहादित्य के एक शत्रु जजावल नाम राजा ने घासा नगर को आन आवर्तन किया वहाँ राजा ग्रहादित्य बड़े पराक्रम के साथ मारे गए और घासा मे जजावल का अधिकार हो गया तब आपत्ति-काल अवलोकन कर प्रमरवशोद्भव ग्रहादित्य की राज्ञी ने अपने पुत्र बाष्प को शिशुता के भय से निज पुरोहित वशिष्ट के गृह मे गोपन कर विहित रहना स्वीकार किया। बहुत समय व्यतीत होने पीछे बाष्प ने वशिष्ठ की गो-चारन का नियम लिया। लिखा है कि उस गो निकर मे एक कामधेनु नाम धेनु थी, सो जब बाष्प गो-चारन को जाते वहाँ उक्त गाय एक वेणु-चय मे प्रवेश करती। वहाँ एक स्फटिक का लिंग था उस पर अपने स्तनो से दुग्ध श्रवती। इस वास्ते गुरुपत्नी ने एक दिन बाष्प को उपालभ दिया कि इस धेनु के स्तनो मे दुग्ध नही सो कहाँ जाता है। द्वितीय दिवस बाष्प ने उस गाय को दृष्टि से विहित न होने दिया। वह सुरभी तो शिव लिंग पर पूर्वोक्त दुग्ध श्रवने लगी अरु बाष्प ने इस चरित्र को देख साक्षी बनाने को हारीत नामा ऋषि, ज्यो भृगी गण का अवतार लिखा है वहाँ तपस्या करते हुये, को देख बाष्प ने निमत्रण कर वह चरित्र दिखाया। जब भृगी गण ने कहा कि हे बाष्प, इस श्रीमदेकलिंगेश्वर के दर्शनार्थ तो मै यहाँ ऐसा कठिन तप करता था अरु तू भी इन्हीं का सेवक नदीगण का अशावतार है, तब बाष्प को भी स्वरूप-ज्ञान हुआ। फिर श्रीशकर की स्तुति कर वर पाय हारीत ऋषि तो कैलास सिधारे और बाष्प ने राज्य की अपेक्षा करी। इससे उन को

शकर ने वरदान दिया कि तेरा शरीर अभिन्न और महत्तर होगा और तुझे इस भर्तृहरि के पर्वत मे खनन करने से बहुत द्रव्य मिलेगा, जिससे सेना एकत्र कर अरु चित्तौड का राज्य अपने अधिकार मे कीजियो और आज से तुम्हारे नाम पर रावल पद प्रख्यात रहैगा। यह लिग प्रादुर्भाव विक्रमार्क गताब्द २६० वैशाख कृष्ण १ को हुआ था, सो उक्त महीने की इसी तिथि को अब भी प्रादुर्भावोत्सव प्रति वर्ष होता है। फिर रावल वाष्प ने इष्टाज्ञा ले द्रव्य निष्कासन कर महत्तर सेना बनाय चित्तौड़ के राजा मानमोरी को जय किया और उसी दुर्ग को अपनी राजधानी बनाया। इस महिपाल ने समस्त भारतवर्ष को विजय किया।"

वापा के विषय मे ऐसे ही अनेक आश्चर्य्य उपाख्यान मिलते हैं। पृथ्वी पर जितने बडे बडे राजवश हैं उन मे ऐसे कोई भी न होगे जो कवि जनो की विचित्र कल्पना से अलंकृत न हो, क्योकि उस समय मे उन के विषय मे विविध दैवी कल्पनाओ का आरोप ही मानो उन के प्राचीनता और गुरुत्व का मूल था। रोम राज्य के स्थापनकर्त्ता रमूलस देवता के पुत्र थे और बाघिन का दूध पी कर पले थे। ग्रीस राज्य के हर्क्यूलिस और इगलैड राज्य के आरथर राजाओ के दैत्यो से युद्ध इत्यादि अनेक अमानुष कर्म प्रसिद्ध है। जगद्विजयी सिकदर की दो सींग थीं। औफार के अफरासियाब ने जब देव सदृश अनेक कर्म किए, तो हिदुस्तान के बडे बड़े उदयपुर, नैपाल, सितारा, कोल्हापुर, ईजानगर, डूँगरपुर, प्रतापगढ़ और अलीराजपुर इत्यादि राजवशो के मूलपुरुष वापा के विषय मे विचित्र बातै लिखी हो तो कौन आश्चर्य की बात है। वापा सैकड़ो राजकुल के आदि पुरुष, लोकातीत, सभ्रमभाजन और चिरजीवी, फिर उन के चरित्र अलौकिक घटनाओ से क्यो न सघटित हो।

वापा बाल्यकाल से गोचारण करते थे, यह पूर्व मे कह आए है। कहते है कि शरत्काल मे गोचारण के हेतु वन मे गमन करके वापा ने एक साथ छ सौ कुमारियो का पाणिग्रहण किया। उस देश मे शरद ऋतु मे बालक और बालिका गन बाहर जा कर झूला झूलते है। इसी

रीति के अनुसार नागेंद्रनगर के सोलखी राजा की क्वारी कन्या अपनी अनेक सखियो के साथ झूलने को आई थी, किंतु उन के पास डोरी नहीं थी कि वह झूला बाँधे। वापा को देखकर उन सबो ने इन से डोरी माँगी। इन्हो ने कहा पहिले व्याह खेल खेलो तो डोरी दे। बालिका लोगो के हिसाब सभी खेल एक से थे, इस से इन लोगो ने पहिले व्याह खेल ही खेलना आरंभ किया। राजकुमारी और वापा की गाँठ जोड़ कर गीत गाकर दोनो की सबने सात फेरी किया। कुछ दिन पीछे जब राजकुमारी का व्याह ठहरा तब एक वरपक्ष ज्योतिषी ने हाथ देख कर कहा कि इस का तो व्याह हो चुका है। कुमारी का पिता यह सुन के बहुत ही घबड़ाया और इसकी खाज करने लगा। वापा के साथी गोपाल गण यह चरित्र जानते थे, परंतु वापा ने इसके प्रगट करने की उन से शपथ ली थी। यह शपथ भी विचित्र प्रकार की थी। एक गड़हे के निकट वापा ने अपने सब संगियो को बैठाया और हाथ मे एक एक छोटा पत्थर देकर कहा कि तुम लोग शपथ करा कि "तुमारा भला बुरा कोई हाल किसी से न कहैंगे, तुमको छोड के न जायँगे, और जहाँ जो कुछ सुनैंगे सब आ कर तुम से कहैंगे। यदि इस मे कोई बात टालैं, तो हमारे और पुरुषा के धर्म कर्म इस ढेले की भाँति धोबी के गड़हे मे पड़ें"। बापा के संगियो ने यही कह कह के ढेला गड़हे मे फेंका और उस के अनुसार वापा का विवाह करना उन के संगियो ने प्रकाश न किया। किंतु छ सौ सरला कुमारियो पर जो बात विदित है, वह कभी छिप सकती है? धीरे धीरे यह विवाह खेल की कथा राजा के कान तक पहुँची। वापा को तीन वर्ष की अवस्था से भाडीर दुर्ग * से लाकर

* वापा भाडीर दुर्ग में भीलों के हाथ से पले थे। जिस भील ने वापा को पाला वह जदुवशी था। उस प्रदेश में भीलों की दो जाति हैं। एक उजले अर्थात् शुद्ध भील वंश के दूसरे संकर भील। यह संकर भील राजपूतों से मिल कर उत्पन्न हुए हैं और पँवार, चौहान, रघुवंशी, जदुवशी इत्यादि राजपूतों की जाति के नाम उन की जाति के भी होते हैं। यह भाडीर दुर्ग मेवाड़ मे जारोल नगर से आठ कोस दक्षिण-पश्चिम है।

ब्राह्मणों ने इसी नागेंद्र नगर * के समीप निविड़ पराशर कानन में त्रिकूट पर्वत के नीचे अपने घर में रक्खा था, इस से बापा उसी सोलखी राजा के प्रजा थे। राजा ने यह समाचार सुन लिया, यह जान कर बापा नागेंद्र नगर छोड़ कर पर्वतों में छिप रहे और उसी समय से उन का सौभाग्य संचार होने लगा। किंतु इन छ सौ कुमारियों का फिर पाणिग्रहण न हुआ और बापा ही के गले पड़ीं। इसी कारण सैकड़ों राजा जमींदार सरदार सिपाही क्षत्री अपने को बापा † की संतान बतलाते है।

नागेंद्र नगर से चलने के समय में दो भील बाप्पा के सहगामी हुए थे। इन में एक उद्री प्रदेशवासी और इस का नाम बालव, अपर ‡ अगुणापानोर नामक स्थान-निवासी, इस का नाम देव। इन दोनों भीलों का नाम बाप्पा के नाम के साथ चिरस्मरणीय हो रहा है। चित्तौर के सिंहासन पर अभिषिक्त होने के समय बालव ने स्वीय करांगुलि कर्त्तन कर के सद्यो शोणित से बाप्पा के ललाट में राजतिलक प्रदान किया था। तदनुसार अद्यावधि पर्यंत बाप्पा वंशीय राजगण के सिंहासनारोहण के दिवस इन्हीं दो भीलों के संतान गण आ कर अभिषेक विधि संपादन करते है। अगुणा प्रदेश के

* नागेंद्र नगर का नाम नागदहा प्रसिद्ध है। यह उदयपुर से पाँच कोस उत्तर की ओर है। यहाँ से टॉड साहब ने अनेक प्राचीन लिपि संग्रह किया था। इन सबों में एक पत्थर ईसवी नवम शतक का है जिस में राजाओं की उपाधि (गोहिलोट) लिखी है।

† बाप्पा दुलार में लड़के को कहते है। एक प्राचीन ग्रंथ में बापा का नाम शिलाधीश लिखा है, किंतु प्रसिद्ध नाम इन का बापा ही है।

‡ टॉड साहब कहते हैं, भारतवर्ष के मध्य अगुनापनोर प्रदेश अद्यावधि प्राकृतिक स्वाधीन अवस्था में है। अगुना एक सहस्र ग्राम में विभक्त। तत्रस्थ भीलगण जातीय जनैक प्रधान के आधीन में निर्विघ्नता से बास करते हैं। इस प्रधान की उपाधि भी राणा है, पर किसी राज के साथ इन लोगों का विशेष कोई सस्त्रव नहीं। विग्रह उपस्थित होने से अगुना का राणा धनुःशर पाँच सहस्र जन एकत्र कर सकता है। आगुनापनोर मेवार राजा के दक्षिण-पश्चिम प्रांत में अवस्थित है।

भील स्वीय शोणित से राजललाट मे तिलकार्पण और राजकीय बाहु धारण कर के सिहासन मे अधिष्ठित कराते है। उ द्री प्रदेश का भील तावत् काल दण्डायमान हो कर राजतिलक का उपकरण * द्रव्य का पात्र लिये रहता है। जो प्रथा पुरुषानुक्रम से इस प्रकार से प्रतिपालित होती चली आती है, उस का मूल किस प्रकार से उत्पन्न हुआ था यह अनुसधान कर के ज्ञात होने से अत करण कैसा विपुल आनद रस से आप्लुत हो जाता है।

मेवार के राज्याभिषेक के समुदय प्राचीन नियम रक्षा करने मे विपुल अर्थ का व्यय होता है इसी कारण उसका अनेक अग परित्यक्त हो गया है। राणा जगतसिह के पश्चात् और किसी का अभिषेक पूर्व-वत् समारोह के साथ सपन्न नहीं हुआ। उन के अभिषेक मे नब्बे लक्ष रुपया व्यय हुआ था। मेवार के अति समृद्ध समय मे समग्र भारतवर्ष की आय ९० लक्ष रुपया थी।

नगेद्र नगर से वाप्पा के जाने का कारण पहिले वर्णित हुआ है, वह सपूर्ण सगत है, परतु भट्ट कविगण के ग्र थ मे उन के प्रस्थान का अन्य प्रकार का विवरण दृष्ट होता है। उन लोगो ने कविजन सुलभ कल्पना-प्रभाव से दैव घटना का आरोप कर के उस की विलक्षण शोभा सपादन किया है। काल्पनिक विवरण से अलंकृत न हो ऐसा सभ्रात वश भारतवर्ष मे अतीव दुर्लभ है, सुतरा हम भी भट्टगण वर्णित वाप्पा के सौभाग्यसचार का विवरण निम्न मे प्रकटित करते हैं—

पहले कह आये हैं कि वाप्पा ब्राह्मणगण का गोचारण करते थे। † उन की पालित एक गऊ के स्तन मे ब्राह्मणगण ने उपर्य्युपरि कियद्दिवस

* राजटीका का प्रधान और प्राचीन उपकरण जल सयुक्त तदुल चूर्ण राजस्थान की चलित भाषा मे उस राजटीका का नाम "खुशकी" काल क्रम से सुगधि मिला हुआ चूर्ण तदुपकरण मध्य परिगणित हो गया है।

† सूर्यवशियों मे ब्राह्मण की गोचारण करना प्राचीन प्रथा है। रघुवश में दिलीप का इतिहास देखो।

तक दुग्ध नहीं पाया, इस से सन्देह किया कि वाप्पा इस गऊ को दोहन कर के दुग्ध पान कर लेते हैं। वाप्पा इस अपवाद से अति क्रुद्ध हुए, किंतु गऊ के स्तन में स्वरूपतः दुग्ध न देख कर ब्राह्मणगण के सन्देह को अमूलक न कह सके। पश्चात् स्वयं अनुसंधान कर के देखा कि यह गऊ प्रत्यह एक पर्वत गुहा में जाया करती थी और वहाँ से प्रत्यागमन करने से उस के स्तन पय शून्य हो जाते हैं। वाप्पा ने गऊ का अनुसरण कर के एक दिन गुहा में प्रवेश किया और देखा कि उस वेतसवन में एक योगी ध्यानावस्था में उपविष्ट हैं। उन के सम्मुख में एक शिवलिंग है और उसी शिवलिंग के मस्तक पर पयस्विनी का धवल पयोधर प्रचुर परिमाण से परिवर्षित होता है।

पूर्वकाल के योगी ऋषिगण भिन्न यह प्राकृतिक और पवित्र देवस्थली इति पूर्व में और किसी को दृष्टिगोचर नहीं हुई थी। वाप्पा ने जिन योगी का ध्यान अवस्था में दर्शन किया था उन का नाम हारीत।* जन समागम से जोगी का ध्यान भंग हुआ, वाप्पा का परिचय जिज्ञासा करने से वाप्पा ने आत्म वृत्तांत जहाँ तक अवगत थे सब निवेदन किया। योगी के आशीर्वाद ग्रहणांतर उस दिन गृह में प्रत्यागत भए। अतः पर वाप्पा प्रत्यह एक बार योगी के निकट गमन कर के उन का पादप्रक्षालन, पानार्थ पय प्रदान और शिवप्रीति काम होकर धतूरा, अर्क प्रभृति शिव-प्रिय वन पुष्प समूह चयन किया करते। सेवा से तुष्ट होकर योगीवर ने उन को क्रम क्रम से नीति शास्त्र में शिक्षित और शैव मंत्र से दीक्षित किया और स्वकर से उन के कंठ में पवित्र यज्ञसूत्र समर्पण पूर्वक "एकलिंग को देवान" यह उपाधि प्रदान किया।

---

* हारीत के वंशीय ब्राह्मण लोग अद्यावधि एकलिंग के पूजक पद में प्रतिष्ठित हैं। टॉड साहब के समकालीन पुरोहित हारीत से षष्टाधिक षष्ठितम पुरुष थे उन के निकट में राणा के मध्यवर्त्तिता से शिवपुराण प्राप्त हो कर टॉड साहब ने इंग्लैंड के रॉयल एशियाटिक सोसाइटी (Royal Asiatic Society) समाज को प्रदान किया था।

तत्पश्चात् वाप्पा का यह क्रम था कि नित्यप्रति योगी का दर्शन करना और तत्कथित मत्र का अनुष्ठान करना। काल पाकर भगवती पार्वती ने मत्र-प्रभाव से वाप्पा को दर्शन दिया और राज्यादिक के वरप्रदान पूर्वक दिव्य शस्त्र से वाप्पा को सुसज्जित किया।

कियत् कालानतर ध्यान से योगी ने अपने परमधाम जाने का समय निकट जान कर वाप्पा को तद्वृत्तात विदित कर बोले "कल तुम अति प्रत्यूष मे उपस्थित होना?" वाप्पा निद्रा के वशीभूत होकर आदेशानुरूप प्रत्यूष मे उपस्थित हो नहीं सके और बिलब कर के जब वहाॅ गए तो देखा कि हारीत ने आकाशपथ मे कियद् दूर तक आरोहण किया है। उन का विद्युत-निभ विमान उज्ज्वलाग अप्सरागण वहन करती हैं। हारीत ने विमान गति स्थगित कर के वाप्पा को निकटस्थ होने का आदेश किया। उस विमान तक पहुॅचने के उद्यम से वाप्पा का कलेवर तत्क्षणात् २० हाथ दीर्घ हो गया। किंतु तथापि उन को गुरुदेव का रथ प्राप्त नहीं हुआ। तब योगी ने उन को मुख व्यादान करने को कहा। तदनुसार वाप्पा ने वदन व्यादित किया। कथित है योगीश्वर ने उन के मुख विवर मे उगाल परित्याग किया था।* वाप्पा ने उससे घृणा करके इस निष्ठीवन का पदतल मे निक्षेप किया और इसी अपराध से उनको अमरत्वलाभ नहीं हुआ। केवल उनका शरीर अस्त्र शस्त्र से अभेद्य हो गया। हारीत अदृश्य हुए। वाप्पा ने इस प्रकार सदेवानुगृहीत होकर और अपने को चित्तौर के मौरी राजवंश का दौहित्र जानकर और आलस्य मे कालक्षेप करना युक्ति सगत अनुमान नहीं किया। अब गोचारण से उनको अत्यत घृणा हुई और उन्होने कतिपय सहचर समभिव्यवहार मे लेकर अरण्यवास परित्याग करके लोकालय मे गमन किया। मार्ग मे † नाहर मगरा नामक पर्वत मे विख्यात

---

* कथित है मुसलमानधर्मप्रचारक महम्मद ने स्वीय प्रिय दौहित्र हसन के बदन मे ऐसाही निष्ठीवन परित्याग किया था। क्या आश्चर्य्य है जो मुसल्मान लोगों ने यह कथा भारतवर्ष के इसी उपाख्यान से ली है।

† मेवार के राजधानी उदयपुर के पूर्व भाग में प्रवेश करने को रास्ते में कोस के अदर नाहरमगरा पर्वत अवस्थित है। इस पर्वत मे राजा और तत्पारि-

'गोरखनाथ' ऋषि के साथ उनका साक्षात् हुआ था। गोरक्ष ने उन को और द्विधार तीक्ष्ण करवाल* प्रदान किया था। मन्त्रपूत कर के चलाने से उस तीक्ष्ण कृपाण के आघात से पर्वत भी विदीर्ण हो जाता था। वाप्पा ने उसी के प्रताप से चित्तौर का सिंहासन प्राप्त किया था। भट्ट कविगण के ग्रंथ मे वाप्पा के नागेंद्र नगर से प्रस्थान का यह विवरण प्राप्त होता है और इस विवरण मे मेवार निवासी लोगो का प्रगाढ़ विश्वास भी है।

मालव के भूतपूर्व अधिपति प्रमारवंशीय तत्काल मे भारत वर्ष के सार्वभौम थे। इस वंश की एक शाखा का नाम मोरी। मोरी वंशियो का इस समय मे चित्तौर पर अधिकार था, किंतु चित्तौर तत्काल प्रधान राजपाट था या नहीं यह निश्चित नहीं। विविध अट्टालिका और दुर्ग प्रभृति मे इस वंश के राजत्व काल की खोदित लिपि विद्यमान है, उससे ज्ञात होता है कि मौरी राजागण उस समय मे विलक्षण पराक्रमशाली थे।

वाप्पा जब चित्तौर मे उपस्थित हुए तत्काल मे मोरीवंशीय मान राजा सिंहासनारूढ़ थे। चित्तौर के राजवंश के साथ उन का संबंध था। † सुतरां विशेष समादर से राजा ने उन का सामंत पद मे अभिषिक्त करके तदुचित भूमि-वृत्ति प्रदान किया। चित्तौर के सरदार गण सैनिक नियम भोग करते थे ‡। वे लोग समुचित सम्मानभाव से इति

षद्वर्ग मृगया काल मे उपवेशन करते थे। उन लोगों के बैठने के स्थान सब अद्यापि असंस्कृत और जीर्ण अवस्था में पतित हैं।

* कथित है वह करवाल अद्यावधि विद्यमान है। राणा प्रति वत्सर में निरूपित दिवस मे उस की पूजा करते है।

† वाप्पा की माता प्रमारवंशीया थी। सुतरां वर्त्तमान प्रमार के सहित मामा भागिनेय का संबंध था।

‡ सैनिक नियम (Feudal System) इस नियमानुसार से भुक्त भूमि के कर के परिवर्तन मे प्रत्येक सरदार को अपने अपने वृत्ति भूमि के परिमाणानुरूप नियमित संख्या की सेना ले कर विग्रह समय मे विपक्ष के साथ संग्राम करना होता है। प्राचीनकाल मे वृहत् वृहत् राज्य भूमि संक्रांत यह नियम प्रचलित था।

पूर्व में मान राजा के ऊपर विरक्त हो रहे थे। एक आगंतुक बाप्पा के ऊपर उन के समधिक अनुराग संदर्शन से वे लोग और भी सातिशय इर्षान्वित हुए। इसी समय में चित्तोर राज विदेशीय शत्रु-कर्तृक आक्रांत होने से सर्दार लोग युद्धार्थ आहूत हुए, परंतु उन लोगों ने युद्धोद्योग नहीं किया। अधिकंतु सैनिक नियमानुसार भुक्त भूमि का पट्टा प्रभृति दूर निक्षेप करके साहंकार वाक्य बोले कि राजा अपने प्रियतर सरदार को युद्धार्थ नियोग करें।

बाप्पा ने यह सुन कर उपस्थित युद्ध का भार ग्रहण करके चित्तौर से यात्रा किया। सरदार गण यद्यपि भूमि वृत्ति-वंचित हुए थे तथापि लज्जावशतः बाप्पा के अनुगामी हुए। समर में विपक्ष गण ने पराजित होकर पलायन किया। बाप्पा ने सरदार गण के साथ चित्तौर में प्रत्यागत न होकर स्वीय पैत्रिक राजधानी गाजनी नगर में गमन किया। सलीम नामक जनैक असभ्य उस काल में गाजनी के सिंहासन पर था। बाप्पा ने सलीम को दूरीभूत करके वहाँ का सिंहासन जनैक चौर वंशीय राजपूत को दिया और आप पूर्वोक्त असंतुष्ट सरदार गण के साथ चित्तौर प्रत्यागमन किया। कथित है कि बाप्पा ने इस समय सलीम की कन्या का पाणिग्रहण किया था। जातरोष सरदार गण ने चित्तौर राजा के साथ वैरनिर्यातन में कृतसंकल्प होकर सब ने एक वाक्य होकर नगर परित्याग करके अन्यत्र गमन किया। राजा ने उन लोगों के साथ संधि करने के मानस से बारंबार दूत प्रेरण किया, किंतु किसी प्रकार सरदार गण का कोप शांत नहीं हुआ। उन लोगों ने कहा, "हम लोगों ने राजा का नमक खाया है, इस से एक वत्सर काल मात्र प्रतीक्षा करेंगे। अनंतर उन को व्यवहार के विहित प्रतिशोध देने में त्रुटि न करेंगे।" बाप्पा के वीरत्व और उदार प्रकृति के वशवर्

राजा और सरदारगण के मध्य और सरदार और तदधीन साधारण प्रजावर्ग के मध्य पूर्वोक्त मूल नियम के आनुषंगिक अन्यान्य नियम समुदय पृथक् पृथक् रूप से व्यवसित करते थे। राजस्थान के सैनिक नियम का विवरण इत. पर पृथक् एक खंड में सविस्तार से प्रवर्तित होगा।

होकर सरदार गण ने उन को चित्तौर का अधिपति करने का अभिप्राय प्रकाश किया। वाप्पा ने सरदार गण के सहायता से चित्तौर नगर आक्रमण करके अधिकार कर लिया। भट्ट कविगण ने लिखा है "वाप्पा मोर राजा के निकट से चित्तौर ले कर स्वय उन के 'मौर' (अर्थात् मुकुट सुरूप) हुए।" चित्तौरप्राप्ति के पश्चात् सर्व सम्मति से वाप्पा ने 'हिंदूसूर्य' 'राजगुरु' और 'चक्कवै' यह तीन उपाधि धारण किया था। शेषोक्त उपाधि का अर्थ सार्वभौम।

वाप्पा के अनेक पुत्र हुए थे। उन मे किसी किसी ने स्वीय वश के प्राचीन स्थान सौराष्ट्र राज्य मे गमन किया। आईन अकबरी ग्रथ मे लिखा है कि अकबर सम्राट् के समय मे इस वश के पचास सहस्र पराक्रात सरदार सौराष्ट्र देश मे वास करते थे। वाप्पा के अपर पॉच पुत्र ने मारवाड देश मे गमन किया था। गोहिल-वाल नामक स्थान मे गोहिल वशीय भी वाप्पा की सतान है। परतु वे लोग अपने वश का मूल विवरण आप भूल गए है। इति पूर्व मे उन लोगो ने क्षीर * प्रदेश मे आ कर वास किया था। और अब पूर्व काल के पूर्व पुरुषगण के नाम वा वश का अन्य कोई विवरण वह लोग नहीं बतला सकते। घटनाक्रम से उन लोगो ने बालभी ग्राम मे वास भी किया, किंतु यह नहीं जाना कि यही स्थान उन लोगो की पैत्रिक भूमि है। यह लोग अब अरब गण के सहवास से वाणिज्य कर के जीविका निर्वाह करते है।

वाप्पा के चरम काल का विवरण सर्वापेक्षा आश्चर्य है। कथित है परिणत वसय मे उन्होने स्वीय राजसतान गण को परित्याग कर के खुरासान राज्य मे गमन किया था और तद्देश अधिकार कर के म्लेच्छ वशीय अनेक रमणी का पाणिग्रहण किया था। इन सब रमणी के गर्भ से बहुसंख्यक सतान समुत्पन्न हुए थे।

सुना जाता है कि एक शत वर्ष की अवस्था मे वाप्पा ने शरीर त्याग किया। देलवारा प्रदेश के सर्दार के निकट एक ग्रथ है, उस मे

* मारवाड प्रदेश के दक्षिण-पश्चिम प्रान्त में लूणी नदी के निकट क्षीर भूमि है।

लिखा है कि वाप्पा ने इस्पहान, कदहार, कश्मीर, इराक, तूरान और काफरिस्तान प्रभृति देश अधिकार करके तत् समुदय देशीया कामिनियो का पाणिपीडन किया था। उन म्लेच्छ महिला के गर्भ से उनको १३० पुत्र जन्मे थे। उन लोगो की साधारण उपाधि "नौशीरा पठान है"। उन सब पुत्रो मे से प्रत्येक ने अपने अपने मातृनामानुयायी नाम से एक एक वश विस्तार किया है। वाप्पा के हिदू सतान की सख्या भी अल्प नहीं। हिदू महिला गण के गर्भ मे उन्हो ने ६८ पुत्र उत्पादन किया था। उन लोगो की उपाधि "अग्नि उपासी सूर्यवशी" है। उक्त ग्रथ मे लिखा है, वाप्पा ने चरम काल मे सन्योस आश्रम अवलब कर के सुमेरु शिखर ❀ मूल मे अवस्थिति किया था। उन का प्राण त्याग नहीं हुआ है, जीवदशा मे ही इस स्थान मे उन की समाधि क्रिया सपन्न हुई थी। अन्यान्य प्रवाद मे कथित है कि वाप्पा की अंत्येष्टि क्रिया सबध मे उन के हिदू और म्लेच्छ प्रजागण के मध्य तुमुल कलह उपस्थित हुआ है। हिदू लोग उन का शरीर अग्निदग्ध और म्लेच्छ लोग मिट्टी मे प्रोत्थित करने की कहते थे। उभय दल ने इस विषय का विवाद करते करते शव का आवरण खोल कर देखा शव नहीं है तत् परिवर्त्तन मे कतिपय प्रफुल्ल शतदल विराजमान है। उन लोगो ने वह सब कमल ले

❀ कोई कोई कहते हैं हिदू ग्रथानुसार पृथ्वी के उत्तर केंद्र का नाम सुमेरु। किसी किसी ग्रथ मे सुमेरु तद्रूप अर्थ मे व्यवहृत हुआ है, परतु पुराण के वर्णन से अनुमान होता है कि किसी विशेष पर्वत का नाम सुमेरु है। जम्बू द्वीप के मध्य इलावृत वर्ष मे "कनकाचल सुमेरु विराजमान है, इसके दक्षिण में हिमवान, हेमकूट और निषध पर्वत, उत्तर नील और श्वेत पवत।" चद्रवश का आदि पुरुष इला स्त्री रूप में जहाँ "आवृत्ति" हुए थे, उस का नाम इलावृत्त वर्ष। "सुमेरु के दक्षिण प्रथमत भारतवर्ष"। इस से अनुमान होता है कि मध्य एशिया का नाम इलावृत्तवर्ष। अनुसधान करने से सुमेरु आविष्कृत हो कर पौराणिक भूगोल वृत्तात का अधिकाश परिष्कृत हो सकता है। केवल नाम परिवर्त्तन होकर इतना गडबडा हुआ। कोई कोई कहते है कि पेशावर और जलालाबाद के मध्यस्थल मे प्रायः चौदह सौ हस्त उच्च मारकोह नाम अति अनुवर जो एक पर्वत है वही हिदू पुराण का सुमेरु है।

कर ह्रद मे रोपन कर दिया था। पारस्य देश के नौशेरवाँ की और काशी के प्रसिद्ध भगवद्भक्त कबीर की अन्त्येष्टि क्रिया का प्रवाद भी ठीक ऐसा ही है।

मेवाड़ के राजवश के प्रधान पुरुष वाप्पा का यह सक्षेपक इतिहास प्रकटित किया गया। प्राचीन कालीन अन्यान्य राजपुरुय की भाँति वाप्पा की कहानी भी सत्यमिथ्या से मिलित है। किंतु इस विचार को छोडकर चित्तौर के सिंहासन मे सूर्यवशी राजगण ने दीर्घ कालावधि जो आधिपत्य किया था, उस आधिपत्य का वाप्पा ही से प्रारंभ है इस कारण गिह्लोट गण का चित्तौर का राजत्व कितने दिन का है यह निरूपण करने को वाप्पा का जन्मकाल का निरूपण करना अत्यत आवश्यक है। वल्लभीपुर २०५ सवत् शिलादित्य के समय मे विनष्ट हुआ था। शिलादित्य से वाप्पा दशम पुरुष, परतु आश्चर्य का विषय यह है कि उदयपुर के राजभवन की वशपत्रिका मे वाप्पा का जन्म-काल १६१ संवत् मे लिखा है। विशेषत: चित्तौर की एक खोदित लिपि से प्रकाश हुआ था कि ७७० सवत् मे चित्तौर नगर मोरी वशीय मान राजा के अधिकार मे था। इसी मान राजा के समय मे असभ्य गण ने चित्तौर नगर आक्रमण किया था। उन लोगो का पराभव कर के उस के पश्चात् वाप्पा ने पचदश वर्ष की अवस्था मे चित्तौर का सिहासन प्राप्त किया था। इस कारण ईदृश विवरण से वाप्पा का जन्मकाल १६१ सवत् किसी प्रकार स्वीकृत नहीं हो सकता। परतु उदयपुर के राजवश के कुलाचार्य भट्ट गण पूर्वोक्त समुदय घटना स्वीकार कर के भी कहते है कि वाप्पा ने १६१ सवत् मे जन्म ग्रहण किया था। टॉड साहब ने अनेक अनुसधान कर के अवशेष मे सौराष्ट्र देश मे सोमनाथ के मदिर की एक खोदित लिपि से जाना था कि वल्लभी सवत् नाम का एक और भी सवत् प्रचलित था। वह सवत् विक्रमादित्य के सवत् से ३७५ बरस के पश्चात प्रारभ हुआ था, २०५ वल्लभी संवत् मे वल्लभीपुर विनष्ट हुआ था, सुतरा विक्रमादित्य के सवतानुसार उस के विनाश का काल ५८० हुआ। जिस प्रणाली से टॉड साहब ने चित्तौर के मान राजा का राजत्व, वल्लभीपुर का विनाश और कुलाचार्य गण लिखित वाप्पा के जन्मसमय का परस्पर समन्वय

साधन किया है वह विलक्षण बुद्धि व्यजक है, परतु जटिल और नीरस है इस कारण सविस्तर से इस स्थान मे प्रगटित नहीं किया। उस की मीमासा का स्थूलतात्पर्य यह कि वल्लभीपुर विनाश के १६० बरस पश्चात् विक्रमादित्य के ७६६ सवत् मे बाप्पा ने जन्म ग्रहण किया था। कुलाचार्य गण ने भ्रम वशत इस १६० सख्या को विक्रमादित्य का सवत् कर के लिखा है। तत् पश्चात् पचदश वर्ष की अवस्था मे बाप्पा चित्तौर राज्य मे अभिषिक्त हुए थे। सुतरा ७८४ सवत् उन का चित्तौर प्राप्तकाल निरूपित हुआ। उस समय से सार्द्ध एकादश वत्सरावधि बाप्पा के वशीय साठ राजा गण ने क्रमान्वय से चित्तौर के सिहासन पर उपवेशन किया है।

यद्यपि भट्ट गण के ग्रथानुयायी बाप्पा के जन्मकाल की प्राचीनत्व रक्षा नही हुई, परतु जो समय टॉड साहब ने निरूपित किया है वह भी नितात आधुनिक नहीं है। तदनुसार प्रकाश होता है कि बाप्पा फरासी राजा के करोली भिजिया वशीय राज गण के और मुसल्मान साम्राज्य के वलीद खलीफा के समकालवर्ती थे।

आइतपुर * नगर से मेवाडवशीय और एक खोदित लिपि सगृहीत हुई थी। वह लिपि १०२४ सवत् समय की है। तत्कालीन चित्तौर के सिहासन मे बाप्पा के वंशीय शक्ति कुमार राजा प्रतिष्ठित थे। उस लिपि मे शक्ति कुमार के चतुर्दश पुरुष के मध्य एक जन शील नाम से अभिहित हुए है। राजभवन की वशावली अपेक्षा तल्लिपि मे यही एक मात्र अतिरिक्त नाम लक्षित होता है, तद्भिन्न विषय मे समता है। इगलैड के प्रसिद्ध कवि ह्यूम ने कहा है "यद्यपि कविगण सूक्ष्म सत्य के तादृश अनुरागी नहीं, और यदिच वह इतिवृत्त का रूपातर कर देते है, तो भी उन लोगो की अत्युक्ति के मूल मे सत्य की सत्वालक्षित होती है"। हमे वर्णित विषय मे ह्यूम की एतदुक्तिका सारत्व प्रतीयमान होता है। जन समागम शून्य स्वापद पूर्ण आइतपुर के

* आइतपुर—सूर्य्यपुर। आदित्य शब्द का अपभ्रश आइत। आइत शब्द का सकीर्ण रूप एत, यथा एतवार आदित्यवार।

कानन मे जो सब नाम बिलुप्त हो जाते और उन सब नामो के कभी किसी के कर्णगोचर होने की सभावना नही थी, किंतु भट्ट कविगण की वर्णना प्रभा मे मेवाड राजवश के प्राचीन काल के वह सब नाम चिरस्मरणीय हो रहे है।

इस १०२४ सवत् समय मे वलीद खलीफा के सेनापति महम्मद बिन कासिम ने भारतवर्ष मे आकर सिंधु देश जय किया था। इस के पहिले मोरी वंशीय मानराजा के समय जिस असभ्य राजा ने चित्तौर नगर आक्रमण किया था और वाप्पा कर्तृक जो पराजित हुआ था, वह अनुमान होता है कि यही बिन कासिम है।

वाप्पा और शक्ति कुमार के मध्यवर्त्ती नौ राजा ने चित्तौर मे राजत्व किया था। उस समय से दो शत वर्ष के मध्य मे नौ जन राजा का राजत्व असभव नहीं। तदनुसार मेवाड़ के इतिवृत्त का निम्नोक्त चार प्रधान काल निरूपित हुआ। प्रथम, कनकसेन का काल १४४। द्वितीय, शिलादित्य और वल्लभीपुर विनाश का काल ५२४। तृतीय, वाप्पा के चित्तौर प्राप्ति का काल खृष्टाब्द ७२८। चतुर्थ, शक्तिकुमार का राजत्व काल खृष्टाब्द १०६८।

—❀—

तृतीय अध्याय

वाप्पा और समर सिह के मध्यवर्त्ती राजगण, वाप्पा का वश, अरब जाति के भारतवर्ष-आक्रमण का विवरण, मुसलमानगण से जिन सब राजाओ ने चित्तौर नगर रक्षा किया था उन लोगो की तालिका।

७८४ सवत् मे वाप्पा को चित्तौर सिहासन प्राप्त हुआ था। मेवाड़ के इतिवृत्त मे तत्परवर्त्ती प्रधान समय समर सिह का राजत्व काल—सवत् १२४६। अतएव वाप्पा के ईरान राज्य-गमन के समय ८२० सवत् से समर सिह के समय पयत भट्टगण के ग्रथानुसार मेवाड़ राज्य का

वृत्तात सप्रति प्रकटित होता है। समर सिह का राजत्व काल केवल मेवाड़ के इतिवृत्ति का प्रधान काल नहीं, स्वरूपतः समुदय हिंदू जाति के पक्ष मे एक प्रधान समय है। उनके राजत्व समय मे भारतवर्ष का राज-किरीट हिंदू के सिर से अपनीत हो कर तातारी मुसलमान के सिर मे आरोपित हुआ था। वाप्पा के समर सिह के मध्य चार शताब्दी काल का व्यवधान है। इस काल के मध्य मे चित्तौर के सिहासन पर अष्टादश राजाओ ने उपवेशन किया था। यदिच उन लोगो का राजत्व का विशेष विवरण प्राप्त नहीं होता, तौ भी नितांत नीरव मे तत्तावत् काल उल्लघन करना उचित नहीं। उन सब राजाकी लोहितवर्ण पताका सुवर्णमयी प्रतिमा से शोभमान चित्तौर के सौध शिखर पर उड्डीयमान थी और तन्मध्य मे अनेक का नाम उन लोगो के राज्यस्थ शैल शरीर मे लोह लेखनी की लिपि योग से अद्यावधि विद्यमान है।

इस के पहिले आइतपुर की जिस खोदित लिपि का उल्लेख किया है, उस से वाप्पा और समर सिह के मध्यवर्ती शक्तिकुमार राजा का राजत्व काल सवत् १०२४ निरूपित हुआ। जैन ग्रथ से ज्ञात होता है कि शक्तिकुमार के चार पुरुष पूर्ववर्ती उल्लत नाम राजा ६२२ सवत् मे चित्तौर के सिहासनारूढ हुए थे। ७६४ खृष्टाब्द मे वाप्पा ने ईरान देश मे गमन किया। ११६३ खृष्टाब्द मे समर सिह के समय मे हिंदू राजत्व का अवसान हुआ। इस उभय घटना के मध्यवर्ती समय मे मेवाड़ राज्य और एक बार मुसलमान गण से आक्रात होने का विवरण राजवश के ग्रथ मे प्राप्त होता है। तत्काल खुमान नामक एक राजा चित्तौर के सिहासनस्थ थे। उनके राजत्व-काल मे ८१२ से ८३६ खृष्टाब्द के अतर्गत किसी समय मे मुसलमानो ने चित्तौर नगर आक्रमण किया था। खुमान रासा नामक ग्रथ मे तत् आक्रमण सक्रात वृत्तांत सविस्तार निवृत्त हुआ। मेवाड़ राज्य के पद्य विरचित इतिहास ग्रथ-समूह के मध्य खुमानरासा सर्वापेक्षा पुरातन है।

टॉड साहब कहते है भारतवर्ष का एतत् समय का इहिवृत्त नितांत तमसाच्छन्न है। इस कारण खुमानरासा प्रभृति हिंदू ग्रथ से तत् सबध

में जो कुछ आलोक लाभ हो सकता है वह परित्याग करना उचित नहीं। भारतवर्ष में एतत् काल मे जो सब ऐतिहासिक विवरण सत्य कह कर प्रसिद्ध हैं सो हिंदू ग्रथ मे लिखित विवरण अपेक्षा अधिक असंगत वा परिच्छिन्न नहीं। जो हो, तदुभय एकत्रित रहने से भावि कालीन इतिवृत्तप्रणेता उस मे से अनेक उपकरण लाभ कर सकेंगे। इस कारण (मुसलमान साम्राज्य के आरभ से गजनगर राज्य सस्थापन पर्यंत) भारतवर्ष मे अरब जाति के समागम का संक्षिप्त विवरण इस अध्याय मे सन्निविष्ट किया जायगा। परतु अरब समागम का सविस्तार विवरण-विशिष्ट कोई ग्रथ नहीं मिलता, यह बड़े सोच की बात है। अलमकीन नामक ग्रंथकार ने खलीफा गण के इतिवृत्त में भारतवर्ष का प्रायः उल्लेख नहीं किया है। अबुल्फजल के ग्रथ मे अनेक विषय का सविशेष विवरण प्राप्त होता है और वह ग्रंथ भी विश्वास के योग्य है। फरिश्ता ग्रथ मे इस विषय का एक पृथक् अध्याय है, परतु उस का अनुवाद यथोचित मत से निष्पन्न नहीं हुआ है *। अब

* टॉड साहब ने फिरिश्ता के अनुवाद में जो सब विषय परित्याग किया है तन्मध्य में अफगान जाति की उत्पत्ति का विवरण अतीव प्रयोजनीय है। मुसलमान गण के साथ हिजरी ६२ अब्द में जिस काल में अफगान जाति का प्रथम आगमन हुआ तब वे लोग सुलेमान पर्वत के निकटस्थ प्रदेश मे बास करते थे। फिरिश्ता ने जिस ग्रथ के ऊपर निर्भर कर के अफगान का विवरण लिखा है वह यह है "अफगान लोग कायर जाति के लोग फिर उस उपाधिकारी राजगण के आधीन वास करते थे। उन लोगों में बहुतों ने मूसा की प्रतिष्ठित नूतन धर्म-व्यवस्था अवलबन किया था। जिन लोगों ने पूर्व की पौत्तलिकता त्याग नहीं किया वे लोग हिंदुस्तान से भाग कर कोह सुलेमान के निकटवर्ती देश में वास करते थे। सिंधु देश से आगत बिन कासिम के साथ उन लोगों का समागम हुआ था। हिजरी १४३ अब्द मे उन लोगों ने किरमान और पेशावर प्रदेश और तत् सीमावती समुदय स्थान अधिकार किया था।" कोहिस्थान का भूगोल वृत्तात, रोहिला शब्द की व्युत्पत्ति और अन्यान्य प्रयोजनीय विषय टॉड साहब ने स्वीय अनुवाद मे परित्याग किया है।

पहिले वाप्पा के वशीय राजगण का वृत्तात विवरित किया जाता है, पश्चात् यथायोग्य स्थान मे मुसलमान गण का भारतवर्ष सक्रांत इतिवृत्त प्रकटित होगा।

गिहलोट वश की चतुर्विंशति शाखा। तन्मध्य अनेक शाखा वाप्पा से समुत्पन्न। चित्तौर-अधिकार के पश्चात् वाप्पा ने सौराष्ट्र देश मे गमन कर बद्र द्वीप के यूसुफगुल * नाम राजा की कन्या से विवाह किया। बद्र द्वीप निवासी व्यानमाता नामक एक देवी की उपासना करते थे। वाप्पा ने इस देवी की प्रतिमा और स्वीय बनिता सह चित्तौर मे प्रत्यागमन किया था। गिहलोट वशीय अद्यावधि व्यानमाता की उपासना करते है। वाप्पा ने इस देवी का जिस मदिर मे प्रतिष्ठित किया था, वह आज तक चित्तौर मे विद्यमान है, तद्भिन्न तत्रत्य अन्यान्य अनेक अट्टालिका वाप्पा कर्तृक विनिर्मित है, यह भी प्रवाद प्रचलित है। यूसुफगुल के कन्या के गर्भ मे वाप्पा को एक पुत्र जन्मा था, उस का नाम अपराजित। द्वारका नगरी के निकटवर्ती कालवायो नगर के प्रमार वशीव जनैक राजा की कन्या से भी वाप्पा ने विवाह किया था। उस रमणी के गर्भ मे इस के पहिले वाप्पा को और एक आसिल नामक पुत्र जन्मा था, यदिच आसिल ज्येष्ठ तथापि अपराजित चित्तौर मे जन्मे थे, इस कारण उन्हो ने वहाँ का राज प्राप्त किया। आसिल सौराष्ट्र देश के किसी एक राज्य मे राजा हुए थे †। उन

---

* कथित है, समुद्र मे बदर द्वीप और स्थल में चायाल नामक स्थान यूसफगुल राजा के अधिकार में था। यूसफ़गुल चौर वशीय राजपूत, अनल परम का सस्थापनकर्त्ता रेणु राज अनुमान होता है। इसी यूसफगुल का वृत्तात कुमारपालचरित नामक ग्रथ मे लिखा है। रेणुराज के पूर्व पुरुष बदर द्वीप के अधिपति थे। बदर द्वीप आज कल पोर्त्तुगीस जाति के अधिकार में है। इसका आधुनिक नाम डिऔ है। यह नाम पोर्त्तुगीस जाति प्रदत्त है।

† आसिला के नामानुसार एक किला का आसिला नाम रक्खा था, यह वशपत्रिका से ज्ञात होता है। सग्रामदेव नामक जनैक राजा के निकट से कुब्रायत (काबे) नगर अधिकार करने के अभिलाष मे आसिल के पुत्र विजयपाल

की सतान परपरा से वहॉ विपुल वश विस्तार हुआ था। इस वश की उपाधि आसिला गिहलोट है।

समर में निहत हुए थे। विजय की इसी आकस्मिक मृत्यु घटना के पहिले तद-गर्भस्थ पुत्र अकाल में भूमिष्ठ हुआ था, उस पुत्र का नाम सेतु। टॉड साहब कहते हैं अस्वाभाविक मृत्यु-प्राप्त व्यक्तिगण भूतयोनि प्राप्त होते हैं। हिंदूगण का यह सस्कार है और स्त्री भूत का हिदुस्तानी नाम चुरइल, सेतु की माता के अस्वाभाविक मृत्यु वशतः सेतु का वश काचोराइल नाम से प्रसिद्ध हुआ। आसिल से द्वादशतम अधस्तन पुरुष बीजा गिरनार के राजा श्रृगार देव के भाजे थे और मातुल के निकट से इन्होंने सालन स्थान प्राप्त किया था। सुराट का राजा जयसिंह देव के साथ समर में बीजा निहत हुए थे। फिरिश्ता ग्रथ में जो देवी सालिमा वश का उल्लेख है, अनुमान होता रहा है देवी और चोरइल, इन दो नाम के समता से तन्नाम की उत्पत्ति हुई है।

खत्रियों की उत्पत्ति

स० १६३५

श्री हरिश्चंद्र मैगजीन सन् १८७३ पृ० १७-१९ तथा पृ० ६० पर पूर्व भाग और शेष भाग श्री हरिश्चंद्र चंद्रिका सन् १८७८ की नवंबर की ख० ६ सं० में छपा। पुस्तकाकार खड्गविलास प्रेस बाँकीपुर से सन् १८८३ में प्रकाशित।

खत्रियों की उत्पत्ति

—❀—

मेरी बहुत दिन से इच्छा थी कि इस जाति का पुरावृत्त सग्रह करूँ परतु मुझे इस मे कोई सहायक न मिला और जिन जिन मित्रो ने मुझ मे पुरावृत्त देने कहा था वे इस विषय मे असमर्थ हो गए और इसी मे मेरा भी उत्साह बहुत दिनो तक मद पडा रहा। परतु मेरे परम मित्र ने इस विषय मे मुझे फिर उत्साहित किया और कुछ मुझे ऐसी सहायता भी मिल गई कि मै फिर से इस जाति के समाचार अन्वेषण मे उत्सुक हुआ।

लाहोर निवासी श्रीपडित राधाकृष्णजी ने इस विषय मे मुझे बडी सहायता दी और वैसी ही कुछ सहायता श्री मुशी बुधसिह के मिहिर प्रकाश और श्रीयुत शेरिंग साहब के जातिसग्रह से मिली।

इस समय मे प्राय: बहुत जाति के लोग अपनी अपनी उन्नति दर्शन मे प्रवृत्त हुए है जैसा दूसर (जिन के वैश्यत्व मे भी संदेह है क्योकि उनके यहॉ फिर से कन्या का पति होता है) अपने को कहते हैं कि हम ब्राह्मण हैं, कायस्थ (जो शूद्रधर्म कमलाकर की रीति से सकर शूद्र है) कहते है कि हम क्षत्रिय है और जाट लोगो मे भी मेरे मित्र बेसवॉ के राजा श्री ठाकुर गिरिप्रसाद सिह ने निश्चय किया है कि वे क्षत्रिय है तो इस दशा मे इस आर्य जाति का पुरावृत्त होना भी अवश्य है, जो मुख्य आर्य जाति के निवास-स्थल पंजाब और पश्चिमोत्तर देश मे फैली हुई है और जिस मे सर्वदा से अच्छे लोग होते आए है।

हमारे पूर्वोक्त आर्य शब्द के दो बेर के प्रयोग से कोई यह शका न करे कि देश के पक्षपात से मैने यह आग्रह से आदर का शब्द रक्खा है क्योकि आर्य जाति के निवास का मुख्य यही देश है और यहीं से आर्य जाति के लोग सारे भारतवर्ष मे फैले हैं, यह अगरेजी हिंदुस्तान के इतिहासो के पाठ से स्पष्ट हो जायगा। हमारे एक मित्र से इस बात का मुझ से बडा विवाद उपस्थित हुआ था। वह कहते थे कि पजाब देश अपवित्र है क्योकि महाभारत मे कर्ण पर्व के आरभ मे शल्य राजा से कर्ण ने पजाब देश की बडी निंदा की है और वहाँ के बहुत बुरे आचरण दिखाये है परतु वह निंदा निंदा की भाँति गृहीत नहीं होती क्योंकि पश्चिम मे गुजराती या मध्य देश के वासियो की भाँति सोला पामरा का प्रचार नहीं है और न ऊपर से वे लोग स्वच्छ रहते है परतु यह मै निस्सदेह कह सकता हूँ कि यहाँ के काले चित्तवाले मनुष्यो से उनका चित्त कहीं उजला है। इसके अतिरिक्त कर्ण शल्य का शत्रु है इससे शत्रु की की हुई निंदा निंदा नहीं कहाती। हाँ, इस बात का हम पूर्ण रूप से प्रमाण देते है कि भारतवर्ष मे पहिले पहिले आर्य लोग केवल पजाब से लेकर प्रयाग तक बसते थे। श्रीमान जॉन म्योर साहब ने लाहौर के चीफ पडित पडित राधाकृष्ण को जो पत्र लिखा है उसमे मुक्त कठ से उन्हों ने स्थापन किया है कि जहाँ तक मैने प्राचीन वेदादिक पुस्तके पढी, उनसे मुझे पूरा निश्चय है कि आर्य लोग पहले इन्हीं देशो मे बसते थे। ऋग्वेद सहिता, दशम मडल, ७५ सू० ५ ऋक् 'इम मे गगे यमुने सरस्वती शुतुद्रि स्तोम सचता परुष्ण्या आसिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये श्रृणुह्यासुषोमया।' ६ मडल सू० ४५ ऋ० ३१ 'अधिवृवुः पर्णाना वर्षिष्ठे मूर्धन्नस्थात् उरुकक्षो न गाग्य.।' १० मड० सू० ७५ ऋ. और ५ म ५२ सू. ऋ. १७ 'सप्तमे सप्तशाकिन एकमेकाशता ददु. यमुनायामश्रुतमुद्राधागव्य मृधे निराधो अशव्या मृधेः'। मड ३ सू० ३३ ऋ० १ 'प्रपवताना-मुशर्ती उपस्था दश्वे इव विषिते हासमाने गावेव शुभ्रे मातरारिहाणे विपाट् छुतुद्री पयसा जवेते।' ३ मड २३ सू० ४ ऋ० 'नित्वादधेवरे आपृथिव्या इलायास्पदे सुदिनत्वे अन्हाम् दृषद्वत्यां मानुष आपयाया सरस्वत्या रेवदग्ने दिदीहि।' ६ मंड ६१ सू० ऋ० २ 'इयशुष्मेभिवि-

सखाइवारुजत् सानुगिरीणा तविषेभिरूर्म्मिभिः पारावतघ्नीमवसे सुवृक्तिभिः सरस्वतीमाविवासेमधीतिभिः” इत्यादि श्रुतियो मे गङ्गा, यमुना, व्यास, सतलज, सरस्वती इत्यादि नदियो की महिमा कही है और ऋग्वेद मे पहले और दूसरे मण्डल मे कई ऋचाओ मे सरस्वती की महिमा कही है। यास्क ने अपने निरुक्त मे इन ऋचाओ के अर्थ मे विश्वामित्र ऋषि के सतलज और व्यास के मुहाने पर यज्ञ करने का और इन नदियो के स्तुति करने का प्रकरण लिखा है *। और कीकट देश तथा अन्य प्रदेश और इत्यादि प्रदेश और गोमती इत्यादि नदियो के जो कहीं श्रुतियो मे नाम आ गये है वे परस्पर विरुद्ध होने के कारण तादृश प्रमाणभूत नहीं होते। इस से इस बात को हम पूर्ण रूप से प्रमाणित कर चुके कि आर्य लोगो के निवास का स्थान पंजाब से लेकर यमुना के किनारे तक के देश हैं तो इससे वहाँ के प्राचीन निवासियो को यदि हम परम आर्य कहे तो क्या हानि है।

अब इस बात का झगड़ा रहा कि ये कौन वर्ण है ? तो हम साधारण रूप से कहते है कि ये क्षत्री है। क्षत्री से खत्री कैसे हुए इस मे बड़ा विवाद है। बहुत लोगो का तो यह सिद्धांत है कि पंजाब के लोग क्ष उच्चारण नहीं कर सकते, इससे ये क्षत्री से खत्री कहलाये। कोई कहते है कि जब परशुराम जी ने निःक्षत्र किया तब पंजाब देश मे कई बालक खत्री कहकर बचा लिये गये थे। वे ब्राह्मण, वैश्य और शूद्रो के घरो मे पले थे और अब उन्हीं से खत्री, अराड़े, भाटिये इत्यादि अनेक उपजाति बन गईं और उनके आचरण भी अपने अपने पालको के अनुसार अलग अलग हो गये। तीसरे कहते है कि क्षत्री और खत्री से भेद राजा चंद्रगुप्त के समय से हुआ क्योंकि चंद्रगुप्त शूद्री के पेट से था और जब उसने चाणक्य ब्राह्मण के बल से नंदो को मारा और भारतवर्ष का राजा हुआ तो सब क्षत्रियो से उसने रोटी और बेटी का व्यवहार खोलना चाहा तब से बहुत से क्षत्री अलग होकर

* मनु ने भी इन्हीं को पुण्य देश कहा है “सरस्वती दृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तर”, “कुरुक्षेत्र च मत्स्याश्च पाचालाः शूरसेनकाः”।

हिमालय की नीची श्रेणी मे जा छिपे और जब उसने क्षत्रियो का सहार करना आरभ किया तब से ये सब क्षत्री खत्रियों के नाम से बनिये बन कर बच गये। कोई कहते हैं कि ये लोग हैं तो क्षत्री पर कलजुग के प्रभाव से वैश्य हो गये है क्योंकि कलजुग के प्रकरण मे लिखा है कि "वैश्य वृत्यातु राजान."। कोई ऐसा भी निश्चय करते है कि किसी समय सारे भारतवर्ष मे जैनो का मत फैल गया था ? तब सब वर्ण के लोग जैन हो गये थे, विशेष करके वैश्य और क्षत्री। उन मे से जो क्षत्रा आबू के पहाड पर ब्राह्मणो ने सस्कार देकर बनाये वे तो क्षत्री हुए और उन लोगो से सैकडों वर्ष पीछे जो क्षत्री जैन धर्म छोड़ कर हिदू हुए वे खत्री कहाये और क्षत्रियो के पक्ति से न मिले। गुरु गोविद सिंह ने अपने ग्रथ नाटक के दूसरे तीसरे चौथे पॉचवे अध्याय मे लिखा है कि "सब खत्री मात्र सूर्यवशी है। रामजी के दो पुत्र लव और कुश ने मद्र देश के राजा की कन्या मे विवाह किया और उसी प्रांत मे दोनो ने दो नगर बसाये। कुश ने कसूर, लव ने लाहौर। उन दोनो के वश में कई सौ वर्ष लोग राज्य करते चले आये। एक समय मे कुशवश मे कालकेतु नामा राजा हुआ और लव वश मे कालराय। इन दो राजाओ के समय मे दोनो वंशो से आपुस मे बडा विराध उत्पन्न हुआ। कालकेतु राजा बलवान था, उसने सब लववंशी क्षत्रियो को उस प्रांत से निकाल दिया। राजा कालराय भागकर सनौड देश मे गया और वहाँ के राजा की बेटी से विवाह किया और उससे जो पुत्र हुआ उस का नाम सोढ़ीराय रक्खा। उस सोढीराय के वश के क्षत्री सोढी कहाये। कुछ काल बीते जब सोढियो ने कुश वशवालो को जीता तो कुश वंश के भाग कर काशी मे चले आये और वे लोग यहाँ रह कर वेद पढने लगे और उन मे प्रायः बडे बडे पडित हुए। बहुत दिनो पीछे जब सोढियो ने सुना कि हमारे दूसरे भाई लोग काशी मे वेद पढकर पडित हुए है तो उनको काशी से बुलाया और वेद सुनकर अपना सब राज्य उन लोगो को दे दिया, जिनकी वेद पढ़ने से वेदी संज्ञा हो गई थी। काल के बल से इन दोनो वंश के राज्य नष्ट हो गए और वेदियो के पास केवल बीस गाँव रह गये और उन्हीं वेदियो के वश मे सवत

१५२६ मे कालू चोणे के घर बाबा नानक का जन्म हुआ और सोढ़ियो के वश मे गुरु गोविद सिह हुए"। गुरु नानक साहब अपने ग्रंथ साहब मे जहाँ चारो वर्णों का नाम लिखते हैं वहाँ ब्राह्मण, खत्री, वैश्य, शूद्र लिखते है।

कोई कहते है कि बाबर के पहिले की किसी पुस्तक मे खत्री का शब्द नहीं मिलता। इससे निश्चय होता है कि बाबर ने जिन क्षत्रियो को अपने सेना मे नौकर रक्खा था उनका नाम खत्री रक्खा।

परतु कोई कहते है कि पजाब मे नाग भाषा का बहुत प्रचार था और अब भी पजाबी भाषा मे उनके बहुत शब्द मिलते है और क्षत्री खत्री की नाग भाषा है।

ऊपर के लेख से हम सिद्ध कर चुके कि खत्री क्षत्रिय हैं और उस मे लोगो के जो अनेक विकल्प है, वे भी लिखे गए परंतु हम कोई विकल्प नहीं करते क्योकि नीचे लिखे हुए वाक्य पुराणोपपुराण सारसंग्रह मे दशावतार प्रकरण मे परशुराम जी के दिग्विजय मे मिले है, जिन से इनका क्षत्रिय होना स्पष्ट है, यथा—

यदा श्रीमत्परशुरामो गतो दिग्विजयेच्छया ॥
सकलाभूस्तदाजाता पूर्णं मोदान्विता यत. ॥ २४ ॥
दुष्टसहारकृद्धीमान् दुष्टभाराकुला रसा।
पर्यटन् सकला पृथ्वीं जयन् बाहुबलेन च ॥ २५ ॥
गतः पचनदान्देशान्यद्राज्ञा क्रूरसगर।
कृत परशुरामेण महाविक्रमशालिना ॥ २६ ॥
एकाकिनापि तद्राज्ञः सैन्य सर्व विनाशित।
कतिचिद् द्रुवुर्वीरा हतास्तु बहवोऽभवन् ॥ २७ ॥
असृङ्मेदवती भूमि शुशुभे रणमडले।
धुनी लोहितपकाढ्या बभूवातिभयकरा ॥ २८ ॥
धूलि' सैन्यस्य यस्या सा मग्ना पकीबभूव ह।
जन्यभूमिगता यत्र वीराणा मृतमस्तकाः ॥ २९ ॥
कमलाभा वहन्ती या कल्लोलैरावृताप्यभूत्।
राजान संनिहत्यासौ रामस्तत्र तराः पदे ॥ ३० ॥

श्रान्तोऽतिष्ठत् क्षण यावद्रिपुनार्यः समागताः ।
अन्वेषयन्त्य' संग्रामभूभ्यां स्वीयान् पतीन् मृतान् ॥ ३१ ॥
आक्रोशन्त्योभिधेयेन पुत्रवृत्तगृहादिना ।
विलपन्, योमुहुर्दुःखाद्धातयन्त्य उर स्थल ॥ ३२ ॥
लक्ष्मीविलास नामैको वैश्यस्तावत्समागत ।
करुणापूर्ण हृदयो दृष्ट्वा तासा हि दुर्गतिम् ॥ ३३ ॥
पत्युर्नाश महद्दुःख ज्ञात्वा ता' शीलशालिनीः ।
दानशौण्डोधनाढ्यश्च मद्बुध्या ता सुदुःखिताः ॥ ३४ ॥
बालाननाथान् मत्वा ऽनोवनयत् स्वगृह प्रति ।
सान्त्वयित्वा विवेकेन परेण परमाः सती. ॥३५॥
लालन पालन तेषा पोषण तत्स्त्रियामुत ।
बालाना क्षत्रवर्यानामकरात् स्नेहभावतः ॥३६॥
एवमेव ततो रणभूम्याः काश्चित् स्त्रियो हृता ।
दुष्टैः काश्चिद्विड्निभैश्च दयालुभिरुपाहृता. ॥३७'।
लक्ष्मीविलास सज्ञन विशा ते बालका यदा ।
व्रतबधार्हता प्राप्ता समकार्युपनायन ॥३८॥
स्वधर्माचरणे चैव विशा ते सुनियोजिता' ।
एवमेवापरे बाला स्त्रियो येन सुरक्षिता ॥३९॥
पोषिताः स्वीयदत्तान अन्नेनैव तथैव ते ।
मत्वा तमेव चाचार ववर्तुस्तेन सन्मुदा ॥४०॥
इमे लक्ष्मीविलासेन रक्षिता क्षत्रवंशजाः ।
शुद्धा. सदाचारयुक्ता बभू वुर्भाग्यशालिनः ॥४१॥
येषा कलियुगेपामे चत्वारो वशजा स्मृताः ।
अग्नि. सोमश्च सूर्य्यश्च नाग एते चतुर्विधाः ॥४२॥
अद्यापि भूमौ वर्तते चतुस्सन्तानवर्द्धकाः ।
दानशूराः सदाचारा भाग्यवतः सुविक्रमाः ॥४३॥

अर्थ—जब परशुराम जी दिग्विजय करने निकले तब सब पृथ्वी आनदपूर्ण हो गई क्योकि दुष्टो के भार से पृथ्वी व्याकुल हुई थी और इन्होने दुष्टो का सहार किया। सब पृथ्वी पर घूमते और बाहुबल से

जय करते हुए पचनद देशो मे गए और वहाँ के राजा से बड़ा सग्राम किया। यद्यपि भगवान अकेले थे तथापि वहाँ के राजा की सब सेना मार डाली—इत्यादि।

उन हत वीरो की स्त्रियाँ और बालको को लक्ष्मीविलास नामक वैश्य ले गया और धर्मपूर्वक रक्षण किया और उनके पुत्रो का लालन पालन और यज्ञोपवीतादि सस्कार किया। इसी भाँति उन मृत वीरो की स्त्रियाँ और बालक ब्राह्मण वा शूद्रादि जिन वर्णों के घर गए उनके ऐसे ही आचरण हुए और लक्ष्मीविसास का पालित क्षत्रियो का समूह जो अग्नि, सूर्य, चद्रमा और नागवश का था, क्षत्रियसस्कार पाकर भी वैश्यधर्म मे निष्ठ हुआ इत्यादि।

इनका विशेष वर्णन भविष्य पुराण के पूर्वार्द्ध मे जो लिखा है उस से और भी निश्चय होता है कि सब क्षत्रिय है। इन श्लोको की सस्कृत ऐसी ही सहज है कि अर्थ लिखने की आवश्यकता नहीं। सिद्धांत यह है कि वैश्यो की वा दूसरी वृत्ति करनेवाले क्षत्रिय जो पजाब देश मे हैं वे क्षत्रिय ही हैं किंतु परशुराम जी के समय से वहाँ के क्षत्रियो का युद्ध सस्कार छूट गया है और ऐसे लोगो की एक पृथक जाति, खत्री, रोडे, भाटिये इत्यादि हो गई है। इस विषय के दोनो अध्याय यहाँ प्रकाशित किए जाते हैं।

सूतउवाच

एवं बहुविधे देशे स हत्वा क्षत्रियर्षभान्।
गतो पञ्चनदे देवो क्षत्रियान्वयसूदनः ॥१॥
तत्र प्राप्तान् महाशूरान् क्षत्रियान् रणदुर्मदान्।
युयुधेऽतिबलो रामः साक्षान्नारायणांशजः ॥२॥
जनन्या जनितो लोके कः शूरोयस्तु पार्थिवान्।
पाञ्चालान् जयते युद्धे विना नारायणं स्वय ॥३॥
सर्व्वान् हत्वा महाराजान् क्षत्रियान् सद्विजोत्तमः।
रुरुधे पङ्कजवने यथा मत्त द्विपाधिपः ॥४॥
एवं हत्वा रणे शूरान् तरुणान् रणदुर्म्मदान्।
प्रवृत्तो वृद्धबालेषु हन्तु क्रोधाकुलेक्षण. ॥५॥

हाहाकारो महानासीत्तत्र क्षत्रिय पर्य्यये ।
नार्य्यो वृद्धाश्च बालाश्च मुमुहुर्भयविह्वला ॥६॥
हतेषु तेषु शूरेषु बालवृद्धेषु च क्रमात् ।
अनाथाश्चाभवन् सर्व्वाः क्षत्रियाण्यो हतान्वयाः ॥ ७ ॥
तत्र कश्चिन् महावैश्यः सुधर्म्मा नामकः प्रभु. ।
आसीन् नागान्वये जातः क्षत्रियाणा प्रियकरः ॥ ८ ॥
हतेषु सर्वबालेषु व्याकुलाश्रुकुलेक्षण. ।
चतु.पञ्चावशेषेषूपायसमकरोत्तदा ॥ ६ ॥
नीत्वा स बालान् तान् सर्व्वान् स्वप्रियायै प्रदत्तवान् ।
तस्य भार्य्या महाप्राज्ञी सुशीला नाम नामतः ॥
वात्सल्यमकरोत्तेषु यथा स्वोदरजे भृश ॥ १० ॥
यदा निवर्तितो देवो नि.क्षत्रीकृत्य पार्थिवान् ।
ऊचुस्तस्मै समागत्य तद्वृत्त पिशुनास्तदा ॥ ११ ॥
अस्ति कश्चिन् महावैश्यो क्षत्रियाणा प्रियकरः ।
रक्षितास्तेन बालास्ते क्षत्रियाणा नरोत्तम ॥ १२ ॥
तच्छ्रुत्वा स द्विजो धावन्नुश्वसन्नुरगो यथा ।
उद्यम्य परशु तत्र गतः क्रोधाकुलेन्द्रियः ॥ १३ ॥
त दृष्ट्वा स महान् वैश्यः प्राप्त कालानलोपम ।
दुर्निवार मनुष्येभ्यो भक्त्या बुध्याप्यपूजयत् ॥ १४ ॥
सारस्वतास्तु ये विप्राः क्षत्रियाणा पुरोहिताः ।
तेपि तत्रागमन् सर्व्वे यजमानहितेप्सवः ॥ १५ ॥
ऊचुः प्राञ्जलयो विप्राः प्रणामानतकन्धराः ।
वैश्यः सुधर्म्मा तत्पत्नी भार्गव भर्गविक्रम ॥ १६ ॥

सर्व्वे ऊचुः

नमो नमस्ते श्रितविग्रहाय । नमो नमस्ते हृत विग्रहाय ।
नमो नमस्ते कृत विग्रहाय । नमो नमस्ते धृत प्रग्रहाय ।
नमस्ते पूर्णकामाय दुष्ट'बामाय ते नमः ।
नमो रामाभिरामाय रूपश्यामाय ते नम. ॥ १८ ॥
क्षात्रद्रुमकुठाराय चाकूपाराय ते नमः ।
नमस्तेऽकृतदाराय चाकूपाराय ते नमः ॥ १६ ॥

नमो नमस्ते सर्व्वायार्चितशर्व्वाय ते नमः ।
हृतराजन्य गर्व्वाया पूर्व्वखर्व्वाय ते नमः ॥ २० ॥
मीन कच्छप वाराह नृसिंह वटु रूपिणे ।
कृत लीलावताराय विष्णवे प्रभविष्णवे ॥ २१ ॥
रेणुका-गर्भरत्नाय च्यवनानन्ददायिने ।
भार्गवान्वय जाताय नमो रामाय विष्णवे ॥ २२ ॥
नमः परशुहस्ताय खड्गिने चक्रिणे नमः ।
गदिने शार्ङ्गिणे नित्य शौरिणे ते नमोनमः ॥ २३ ॥
नमस्तेऽद्भुतविप्राय धराभारापहारिणे ।
शरणागतपालाय श्रीरामाय नमोनमः ॥ २४ ॥

इति श्री भविष्यपुराणे पूर्वखण्डे वर्णाचारनिर्णये चत्वारिंशोध्यायः ॥

सूतउवाच—इत्थं स्तुतं स भगवान् उवाच श्लक्ष्णया गिरा ।
वरं व्रणीध्व भद्रं वो मा भैष्ट विगतज्वराः ॥ १ ॥
सारस्वता ऊचुः—नाशिता भवता देव राजन्या भूरिविक्रमाः ।
सन्ति तेषान्दयासिन्धो बाला दीनास्त्रियस्तथा ॥ २ ॥
तेभ्योऽभयं वयं त्वत्तो देव वाञ्छामहे सदा ।
सुधर्म्माउवाच—मया संरक्षिता ये तु मामकीं वृत्तिमाश्रिताः ॥ ३ ॥
त्यक्तक्षत्रियधर्म्मास्ते सम्भविष्यन्ति बालकाः ।
वैश्यस्तु भवताऽवध्यः सदा त्वत्पादसेवकः ।
अनुकम्प्यो दयासिन्धो दीनोऽहं बन्धु वर्जितः ॥ ४ ॥
परशुरामउवाच—अत्राऽगतोहं नाशार्थं तेषामेव न संशयः ।
किन्तु तत् स्तवनात्प्रीतो विरक्तोहं वधात्प्रति ॥ ५ ॥
मत्प्रसादाद्भविष्यन्ति बाला विटधर्म्ममाश्रिताः ।
लक्ष्मीवन्तः प्रजावन्तो नानाशास्त्रविचक्षणाः ॥ ६ ॥
पण्यवीथीषु चतुरा राजसेवाविधायिनः ।
पुरुषाश्च स्त्रियः सर्व्वा सुभगाः कूलमाश्रिताः ॥ ७ ॥
यूयं सारस्वता विप्राः प्रतिगृह्णन्तु बालकान् ।
कुर्व्वन्तु चापि सर्व्वेषां संस्कारं क्षत्रियोचितम् ॥ ८ ॥

सूतउवाच—इति सस्थाप्य भगवान् प्रजावीज प्रजापतिः।
जगाम तपसे शैल गौतमाचलमुत्तम ॥ ९ ॥
तत प्रभृति ते सर्वे क्षत्रिया द्विजपालिता।
त्यक्तक्षत्रियधर्म्माणो वणिग्वृत्त समाश्रिता ॥१०॥
ते सूर्य्य शशि वशीया अग्निवशसमुद्भवाः।
उत्तमाः क्षत्रिया. ख्याताः इतरे मध्यमा. स्मृताः ॥११॥
भोठ भिल्ल निवारादि महिषावत क्रोटका।
दैत्यवंश समुत्पन्नाः क्षत्रियास्तेपि विश्रुता ॥१२॥
टिक्कसेल इति ख्याता प्रेतवशोद्भवाः श्रुता।
उन्नाइवशसंभूतातेस्तु कायस्थ पूर्वजाः ॥१३॥
विसेना बर वाराश्च अवखास्तवखासतथा।
अङ्गाश्चामर गौडाद्या सूतवंशसमुद्भवाः ॥१४॥
कङ्कान कनवाराश्च मोरभजास्तु वैश्यका.।
सेगराख्या सोनगृहावत्सा ब्राह्मणवशजा ॥१५॥
भरा भद्रा भार्गवाश्च मुण्डिता नाकुलन्धरा।
एवमन्येपि बहुशो क्षत्रियत्व समाश्रिता. ॥१६॥
नागवशोद्भवा दिव्या क्षत्रियास्समुदाहृताः।
ब्रह्मवशोद्भवाश्चान्ये तथाऽरुद्वशसम्भवाः ॥१७॥
एतेषु भविता ह्येको महात्मा विगतज्वरः।
उदासीनः कुलगुरु. कलौ सार्द्धे चतुर्गते ॥१८॥
इत्येतत् कथित तात क्षत्रियाणा विनाशनं।
पालन चापि मद्रेषु किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥१९॥
इति पूर्व्वभविष्ये एकचत्वारिंशोध्यायः।

खत्री के उत्पत्ति विषय मे मेरे मित्र पडित चण्डीप्रसाद जी वर्णन करते हैं कि जब परशुराम श्री दशरथ जी के समय मे क्षत्रियो को मारते थे तौ वे सब खत्री कहि के बचि गये। तब से वे खत्री कहलाए अद्यावधि उसी नाम से प्रकट हैं। कोई कहते हैं कि (ख) आकाशनिवासी (त्रि) तीन ऋषियो के सन्तान हैं अतएव खत्री शब्द से प्रसिद्ध हैं। और जो परशुराम जी को शिरोनमन पूर्वक प्रणाम करि बद्धाजलि हो गए तब तो परशुराम जी ने प्रसन्न होकर कहा, धन्य हौ तुम निर्भय रहो

क्योंकि तुम अरुट् हो अर्थात् क्रोध बिना हो सोई अब अरोड़ा कहलाते हैं। और मेरे मित्र पडित गोकुलचद्र जी के पास एक पुस्तक थी। तिस मे लिखा है कि लव जी के वश मे एक राजा थे तिन्ह के दो स्त्री थीं। जो कि छोटी थीं वह राजा को परम प्यारी थी जो दूसरी बड़ी थी उस में कुछ रुचि कम थी एक एक पुत्र दोनो मे प्रकट भये। छोटी स्त्री ने स्वामी से कहा कि राज्य मेरे पुत्र को देवो। राजा ने न माना। अंत मे मत्रीको भी उस राणी ने स्ववशवर्ति करि के कहवाया कि छोटे को राज्य देना चाहिए। मत्रियो ने कहा कि राजन्! एक को समस्त धन दे दो। एक को केवल राज्य दे दो। सुनि के राजा ने बडे पुत्र को समस्त धन दे दिया। छोटे पुत्र को स्वकीय राज्य दे दिया। छोटे पुत्र ने राज्य पाय के बडे भ्राता से कहा कि तुम मेरे देश ते निकल जाओ, तब तो वह तिलाचार होकर मूलत्राण नगर अर्थात् मुलतान के पास मे चला आया। और उस के और और जातियो के मित्र जो थे वे भी चलि आये तब तो उसने कहा कि हम सब एक जाति कहलावै और एक अपने नाम पर ग्राम बसावैं जहाँ हमारी जाति सब सुखपूर्वक निवास करे। इस सलाह को सबने माना तब उस राजकुमार ने सब को कहा कि हम सब रुट् (कोप) कभी करैं नहीं आपस मे अतएव अरुट् हमारा नाम हुआ। सब ने प्रसन्न होकर माना। परच जो जो पुरुष आये थे उनके नाम से अरुट् मे भी कई जाति हो गई सो सब इस पंचनद देश मे विस्तृत हैं। उसी समय उस राजकुमार ने उक्त नगर के निकट मे एक अरुट् कोट नाम ग्राम बनवाय कर निवास किया जिस को आज कल आरोड़कोट कहते हैं। वह ग्राम अरोड़ो का पूर्व निवास भूमि है। आज कल भी कई एक पुरुष उसी स्थान मे जाय के विवाहादि करि आते हैं, जिन्हो को इस देश मे कन्या नहीं मिलती हैं। अब देश प्रभाव से उस देश के लोक आचार से हीन होते है दूसरे गदहा को अनेक ही पुरुष रखते हैं उसपर निःसक सवार भी हो जाते है अतएव नीच गिने जाते है नहीं तो जाति मे अच्छे हैं। जो लघु राजकुमार क्षत्री था उस को इस पाचाल देश के लोगो ने खत्री शब्द से प्रसिद्ध किया क्योंकि जो श्री गुरु अगद जी ने गुरुमुखी अक्षर बनाये उसमे केवल मूर्द्धन्य खकार है और (क्ष) अक्षर नहीं है अतएव

देश बोली से सब खत्री कहलाने लगे । सोई रीति अद्यावधि चली आती है। इत्यादि प्रकार से प्रसिद्ध है। जो आकाश निवासी ३ ऋषि हैं उनका नाम १ आकष २ पद्माख्य ३ खर्त्रिश इत्यादि सुदर्शन संहिता में लिखा है। खर्त्रिश की सन्तान खत्री कहलाते हैं। यह आख्यायिका उक्त संहिता के द्वादश अध्याय मे विदित है। इत्यलम्बहुना ।

(शालिग्रामदास)

आज कल बहुधा लोग श्रेष्ठ वर्ण बनने के अधिकारी हुये है उनमे एक खत्री भी हैं। ये लोग अपने को क्षत्री कहते हैं इस बात को मै भी मानता हूँ कि इनके आद्य पुरुष क्षत्री थे। क्योंकि जो जो कहानियॉ इस विषय मे सुनी गई हैं उन से स्पष्ट मालूम होता है कि ये लोग क्षत्री वंश मे है।

लोग कहते है कि खत्री हयहो वंश के वंश मे है। सहस्रार्जुन से और परशुराम से जब युद्ध ठनी तो परशुराम ने उस वंश के क्षत्रियों को मार डाला और यह प्रतिज्ञा किया कि इस वंश के क्षत्री को निर्वंश कर डालेंगे। यह प्रतिज्ञा सुनकर उस वंश के दूषण कुलकलंक कई एक कायर यह कह कर बच गये कि हम बनियों के बालक हैं। और जब परशुराम जी चले गये तो ये जाकर हयहोवंशियों से कहने लगे कि भाई हम लोग विपत्ति मे ऐसा कहकर बच गये। यह सुनकर उन सबो ने बहुत प्रकार से धिक्कार दिया और कहा कि रे चांडाल तुम सबों ने यह क्या किया अपनी जननी को कलंक लगाया। हाय! तुम सब क्षत्री कुल मे कलंक पैदा हुए। जाओ यहॉ से भागो दूर हटो न तो अभी शिर काट लेंगे क्या तुम सब हम लोगो के तुल्य हो सकते हो? अपने वंश के लोगों की रक्षा क्या करोगे अपने बाप के माथे पाप चढ़ाये अब हम लोग तुम लोगो के साथ कोई व्यवहार न रक्खेंगे तुम लोगो ने अपने माता पिता को कैसा कलंक लगाया। यह सुनकर ये सब अपनी श्री गवांकर वहॉ से आके वैश्यो से कहा कि भाई तुम लोग अपनी जाति अर्थात् वैश्य हम लोगो को बनाओ। कारण हम लोग बनियां के बालक कहकर बच गये हैं और अपनी सारी व्यवस्था कह गये। बनियांओं

ने भी इस बात को अस्वीकार किया अर्थात् कहा कि आज विपत्ति पड़ने पर तुम लोग बनिया के बालक कहकर बच गये कल विपत्ति पड़ने पर शूद्र के बालक कहोगे इस से हम लोग तुम लोग को वैश्य अर्थात् बनिया न बनावेंगे इस बात को सुनकर ये लोग बड़े बिपद् में पड़े और आपस मे सलाह कर के न क्षत्री न वैश्य एक विचित्र जाति खत्री बन गये।

कोई कोई कहते हैं कि खात नामक राजपूत के वश मे एक वेश्या से इन लोगो की उत्पत्ति है और कोई २ कहते है कि नहीं ये लोग बढई के वश मे है अर्थात् बढई को खाति कहते है। काल प्रभाव से कुछ द्रव्य पाकर वैश्यो के गिनती मे हो गये। जो हो कोई ऐसा भी कहते है कि खेचर नामक राजपूत के वश मे खत्री है। कोई कहते हैं कि ये लोग क्षत्री हुई नहीं है क्योंकि परशुरामजी से जो लोग अभय पाये हैं वे लोग वैश्य क्षत्री है जो वैश्यवारे मे रहते हैं। और खत्रियो की दास की पदवी अब तक प्रचलित है इस से ये लोग शूद्र हैं परन्तु बडे अफसोस की बात है कि जिनका बाप दास उनके बेटा अपने को क्षत्री लिखते हैं। ठीक है "श्यार सुत सेर होत निधन कुबेर होत दीनन को फेर होत मेरु होत माटि को"। कोई कहते है कि यदि इन के मूल पुरुष क्षत्री थे तो भी ये अब क्षत्री नहीं हो सकते कारण खानपान बैठब उठब सब क्षत्रियो से न्यारी है और मूल्य पुरुष तो पैठान के भी क्षत्री हैं क्योकि प्राथियन से पैठान शब्द बना है और बेणु वंश के कोल भील खेरो आदि हैं तो क्या अब ये क्षत्री हो सकते कदापि नहीं। कोई कहते हैं कि चीनी लवण आदि का व्यापार करने से ब्राह्मण शूद्र हो जाता है तो क्षत्री होकर लवणादि बेचे तो क्या रहा। इसी भाँति से लोग अनेक प्रकार से खत्रियो की उत्पत्ति वा वर्णनिर्णय बतलाते है परतु मैं इन बातो को छोड़ कर नृपवंशावली से पता देता हूँ कि ये लोग क्षत्री के वश मे हैं।

दोहा—एक समय बसुधा भई, कामधेनु को रूप।
पुलक गात रोमांच युत, झारि दियो तन कूप ॥ १ ॥
तेहि रोमाच के मूल ते, प्रगटेउ छत्री खानि।
ताको निज निज नाम सभ, विधिवत कहो बखान ॥ २ ॥

जादव वैश निशेन नृप, खत्रि खाति बिजवान।
अगरवार सुरवार भौ, पचगोतिया नृप जान ॥ ३ ॥
महीदहार कठिहार पुनि, धाकर और सिरमौर।
लकरिहार जनवास पुनि, बड़ गुजर मड़िऔर ॥ ४ ॥
भदवरिया प्रगटे बहुरि, काश्यप और सोमवश।
मडवलिया गाड़ सहित, पाछिल भौ अवतंश ॥ ५ ॥
कठहरिया उत्पन्न भौ, मलन हांस करिहार।
पोड पुडर बुदेल पुनि, गौरवार भिलवार ॥ ६ ॥
हाडा भए नरवनी, छत्री अति रणधीर।
षड्ग दान वर्णन करी, विरदावलि अति वीर ॥ ७ ॥
सोनकी और जगार भौ, बहुरि तरेढ गरेर।
ठकुराई सांवत कहो, खीची और धधेर ॥ ८ ॥
पुनि भौ प्रगट खिड़ोगिया, छत्री नृपति कुलीन।
किनवार सिंघल नृप, कुलपालक अघहीन ॥ ९ ॥
पुनि प्रगटेउ महरौठ नृप, कामधेनु ते जानि।
करचोलिया छत्री भएउ, एहि प्रकार सभ खानि ॥ १० ॥
नागवशी छत्री भए, गडवरिया सकसेल।
जाति वश कुल उत्तम, पुनि प्रगटेउ रकसेल ॥ ११ ॥
अनटैया अगरेढ नृप, कुश भौ नाम निहार।
अपर वश कहँ लगि कहौं, भए धेनु औतार ॥ १२ ॥

[शिवराम सिंह]

बूँदी का राजवंश

दोहा

चार वेद प्रिय चार पद चारहु जुग परमान।
जयति चतुर्भुज जासु जग बिदित बस चौहान॥
बूँदी राज प्रसिद्ध अति राजपुताना देस।
जहँ के भारत में प्रगट हाड़ा नाम नरेस॥
यह तिनकी बसावली क्षत्रिन हित सानद।
लिखी अतिहि सक्षेप में ग्रथन सो हरिचद॥

सं० १९३६

[सन् १८८२ ई० में बोधोदय प्रेस,
बाँकीपुर से प्रथमबार प्रकाशित]

बूँदी का राजवंश

बूँदी का राजवश चौहान क्षत्रियो से है। इस वश का मूल पुरुष अन्हल चौहान प्रसिद्ध है। भट्ट लोगो के मत से चौहान का शुद्ध नाम चतुर्भुज है। अन्हल अनल शब्द का अपभ्रश है, क्योकि अनल अग्नि को कहते है और आबू के पहाड पर जो चार क्षत्री वश उत्पन्न किए गए वे अग्नि से उत्पन्न किए गए थे। जेम्स प्रिंसिप साहब को सदेह है कि पार्थिअन❀ (पार्थिव ?) Parthian Dynasty से यह वश निकला है। उन्हींके मत के अनुसार ईसामसीह से ७०० वर्ष पूर्व अनल ने गढमडला मे राज स्थापन किया। अनल के पीछे सुवाच और फिर मल्लन हुआ (जिसने मल्लनी वश चलाया ?) फिर गलन सूर हुआ। यहाँ तक कि ईस्वी सन् १४५ मे (विराट का स० २०२) अजयपाल ने अजमेर बसा कर राज किया। इसके पूर्व ८०० बरस और पीछे ५०० बरस ठीक ठीक नामावली नहीं मिलती। विल्फर्ड साहब के मत के अनुसार सन् ५०० ई० के अत तक सामतदेव, महादेव, अजयसिह [अजयपाल ?], वीरसिह, विदुसूर और वैरी विहड इन राजाओ के नाम क्रम से मिलते हैं। यदि अजय-

❀ और पठान शब्द भी इसी से निकला हुआ मालूम होता है, क्योंकि जो हिंदुस्तान के पास के क्षत्रियधर्म्मा मुसल्मान हैं वे ही पठान कहलाते है।

पाल से मिला कर यह क्रम माना जाय तो वैरिबिहड तक एक प्रकार का क्रम मिलैगा, किंतु दोलाराय [दुर्ल्लभराय ?] जिस से सन् ६८४ इस्वी मे मुसल्मानों ने अजमेर छीना उस के पूर्व दो सौ बरस के लगभग कौन राजे हुए इस का पता नहीं। दोलाराय के पीछे माणिक्य राय (सन् ६६५ ई०) हुआ, जिसने साँभर का शहर बसाया और साँभरी गोत स्थापन किया। फिर महासिह, चद्रगुप्त [?], प्रतापसिह, मोहनसिह, सेतराय, नागहस्त, लोहधार, बीरसिह [?], बिबुधसिह और चद्रराय के नाम क्रम से मिलते हैं। Bombay Government Selection Vol. III. P 193 टॉड साहब लिखते हैं कि भट्ट लोगो ने दूसरे ग्यारह नाम यहाँ पर लिखे है। परतु प्रिंसिप साहब के क्रम से दोलाराय के पीछे हरिहर राय [टॉड साहब के मत से हर्षराय] सन् ७७४ ई० मे हुआ और इस ने सुबुक्तगीं को लड़ाई मे हराया, फिर बली अगराय (बेलनदेव Tod) हुआ जो सुल्तान महमूद के अजमेर के युद्ध मे मारा गया। उस के पीछे प्रथमराय और उस को अगराज (अमिल्लदेव) हुआ। अमिल्लदेव के विशालदेव राजा हुआ। (विल्फर्ड १०१६ ई०, लिपि १०३१ से १०६५ ई० तक टॉड साहब के मत मे चद के रायसे अनुसार सवत् ६२१ मे और फीरोज की एक लिपि से (१२२० सवत्) फिर सिरगदेव [सारगदेव वा श्रीरगदेव], अन्हदेव [जिस ने अजमेर मे अन्ह सागर खुदवाया], हिसपाल [हंसपाल], जयसिंह तारीख फिरिश्ता का जयपाल [जो प्रिंसिप साहब के मत से सन् ६७७ ईस्वी मे हुआ], सोमेश्वर [जिसने दिल्ली के राजा अनगपाल की बेटी से व्याह किया], पृथीराय [लाहौर का जिसे शहाबुद्दीन ने कत्ल किया ११७६], रायनसी (रायनृसिंह जो ११६२ मे दिल्ली के युद्ध मे मारा गया) विजयराज और उसके पाछे लकुनसी (लक्ष्मण सिह) हुआ, जिसकी सत्ताईसवीं पीढी मे वर्त्तमान समय के नीमरान के राजा है।

अब टॉड साहब का मत है कि हाडालोगो का वश माणिक्य देव की शाखा मे वा विशाल देव के पुत्र अनुराज से यह वश चला है। प्रिंसिप साहब अनुराज ही से हाडा लोगो की वशावली लिखते हैं। किंतु बूँदी के भट्ट सगृहीत ग्रथो मे और तरह

से इस वश की उत्पत्ति लिखी है। ये लिखते है* "वशिष्ठ जी ने आबू पहाड़ पर यज्ञ किया। उस से चार उत्तम पुरुष उत्पन्न हुए, उन मे से चतुभुज जी (चौहान वा चहुमान) से १५६ पीढ़ी मे भोमचद्र राजा हुआ। उस का पुत्र भानुराज राक्षसो (यवनो) की लड़ाई मे मारा गया। तब आशापुरा देवी ने कृपा कर के भानुराज की अस्थि एकत्र कर के जिला दिया और तब से भानुराज का नाम अस्थिपाल हुआ। अस्थिपाल के पीछे क्रम से पृथ्वीपाल, सेनपाल, शत्रुशल्य, दामोदर, नृसिह, हरिवश, हरियश, सदाशिव, रामदास, रामचद्र, भागचंद्र, रूपचंद्र, मडन जी (जिस ने दक्षिण मे माडलगढ़ बसाया), आत्माराम, आनदराम, राव हमीर, राव सुमेर, राव सरदार, राव जोधराज, राव रत्न जी, राव कोल्हण जी, राव आशपाल, राव विजयपाल और

* अग्नि कुल की उत्पत्ति पुराणों में इस तरह लिखी है। जब परशुराम जी के मारे क्षत्रिय कुल का नाश हो गया तब उन्हों ने पृथ्वी की रक्षा के हेतु चिंता कर के आबू पर्वत पर ऋषियों से इस विषय का परामर्श कर के सब के साथ क्षीरसागर पर जा कर भगवान की स्तुति किया। आज्ञा हुई कि चार कुल उत्पन्न करो। फिर ऋषियों के साथ ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और इद्र आबू पहाड़ पर आये और वहाँ यज्ञ किया। इद्र ने पहले अपनी शक्ति से घास का पुतला बना कर कुड मे डाला जिस से मार मार कहता हुआ भाला लिए हुए एक पुरुष निकला, जिस को ऋषियों ने प्रमार नाम देकर धार और उज्जैन का देश दिया। उसी भाँति ब्रह्मा ने वेद और खड्ग लिए हुए एक पुरुष उत्पन्न किया, एक चुलुक (चुल्लू) जल से जी उठने से इस का नाम चालुक्य हुआ और अन्हलपुर इस की राजधानी हुई। रुद्र ने तीसरा क्षत्री गगाजल से उत्पन्न किया, यह धनुष लिए काला और कुरूप था, इस से इस का नाम परिहार रख कर पर्वतों और बनों की रक्षा इस को दी। अत में विष्णु ने चार भुजा का एक मनुष्य चतुर्भुज नामक उत्पन्न किया। इस की राजधानी अकावती (गढ़ मडल) हुई। इन्हीं चार पुरुषों से क्रम से पँवार, सोलखी, परिहार और चौहान वश हुए।

प्राचीन काल मे चौहान लोगों का सामवेद, पच प्रवर, मधु (मध्य ?) शाखा वत्सगोत्र, विष्णु (श्रीकृष्ण) वश होने से सोमवश, अम्बिका देवी, अर्बुद अचलेश्वर शिव, भृगुलक्षण विष्णु और कालभैरव क्षेत्रपाल थे।

राव बगदेव जी हुए।" राव बगदेव से भट्टी की और प्रिंसिप साहब की वंशावली एक है। प्रिंसिप साहब के मत से अनुराज ने आसी वा हाँसी का राज किया। उस के पीछे इष्टपाल वा इष्ठपाल (शायद अस्थिपाल यही है) ने १०२४ ई० मे असीरगढ मे राज किया। उस का चण्डकर्ण वा कर्णचंद्र, उस का लोकपाल और उस का हम्मीर हुआ। इस हम्मीर का पृथ्वीराज रायसे मे भी जिक्र है और पृथ्वीराज ही के युद्ध मे यह ११९३ ई० मे मारा गया। हम्मीर के पीछे क्रम से कालकर्ण, महामग्द (महामत्त), राव बच (राव वत्स) और रामचंद्र हुए। रावचंद्र का परिवार शहाबुद्दीन ने सन् १२९८ मे मारा। केवल एक पुत्र रायसी बच गया, जो चित्तौर मे पाला गया और जिसने भैंसरोर मे राज स्थापन किया। रायन्सी के कोलन राय हुए, जिसने मध्य-देश मे प्रमारो का राज्य किया और उनके बगदेव हुए, जो हुन के राजा हुए और मैनाल लोगों पर प्रभुत्व किया। राव बगदेव से वंश परंपरा में और भेद नहीं है, केवल समर सिंह के पुत्र हर राज (हाराराज, जिस से हाडा वंश चला) प्रिंसिप साहब वंशावली मे विशेष मानते हैं। बूँदीवालो के मत से बगदेव ने (सन् १३४१ ई० मे) बंबावदा मे राज किया और इन के पुत्र राव देव सिंह ने बूँदी मे राज स्थापन किया और अपने पुत्र देव सिंह (संवत् १२९८) को बूँदी राज देकर चले गए। यही राव देव लोधी लोगो के दरबार मे बुलाए गए, जो प्रिंसिप साहब के मत से अपने पुत्र हरराज को राज दे कर चले गए। बूँदी परंपरा में हरराज का नाम नहीं है, इस से संभव होता है कि हरराज और समरसिंह दोनो राव देव के पुत्र है। हरराज ने कुछ दिन राज किया, फिर समरसिंह ने भीलो को जीता था। समरसिंह के पीछे क्रम से ये राजा हुए। राव रनपालसिंह (नापा जी) संवत् १३३२, राव हम्मीर (हामाजी वा हामूजी) सं० १३४३, राव बरसिंह वा वीरसिंह स० १३९३, राव बैरीशल्य वा बैरी-साल वा बीरूजी स० १४५० (P. 4190. A. D. G.), राव सुभाडदेव वा बाँदा जी सं० १४९०, इनके समय मे बडा काल पडा (ई० १४८७) और समरकदी अमरकदी नामक दो भाइयो ने इन को राज से उतार कर बारह बरस राज्य किया, राव नारायण दास ने पिता का राज्य

अपने चचा लोगो से लिया। राव सूरजमल ने सवत् १५८४ (1533 A. D) मे भट्ट लोगो के मत से महाराना रत्न सिह जी का वध किया, किंतु जेम्स प्रिंसिप साहब के मत से महाराना ने इन्हें मारा। इस से सभव होता है कि इन दोनो राजाओ मे ऐसा घोर बैर हुआ कि दोनो मृत्यु के परस्पर कारण हुए। राव राजा सुरतान जी स० १५८८ [1537 A. D.], यह पागल थे, इस से पचो ने इन को राव से अलग कर के नारायणदास के पुत्र अर्जुनराव को राजा किया। इन के बहुत थोड़े ही समय राज के पीछे चित्तौर की लडाई मे मारे जाने से राजावली मे इन की गिनती नहीं हुई। राव राजा सुरजन जी सं० १६११ [1560 A. D.], इन्हो ने महाराजाधिराज अकबर से काशी और चुनार पाया और काशी मे राजमदिर बसाया। राव राजा भोज स० १६४२, इनके समय से कोटा और बूँदी का राज अलग हुआ। राव रतन जी स० १६६४ (T. 1613 A D), इनके पुत्र कुँवर माधवसिह ने जहाँगीर से कोटा पाया और कुअर गोपीनाथ युवराज हुए। कुँअर गोपीनाथ भी [स० १६७१] युवराजत्व के समय ही मे शांत हुए, इस से उन के पुत्र रावराजा शत्रुशाल राव रत्न जी के गोद बैठे (स० १६८८) और माधव सिह कोटा के राजा हुए। यह राजा शत्रुशाल [प्रसिद्ध छत्रसाल] बडा वीर हुआ है, जिस ने कुलवर्गा जीता और उज्जैन की प्रसिद्ध लड़ाई मे १२ राजाओ के साथ मारा गया, * राव राजा भावसिह स० १७१५ (1658 A. D) इन्हो ने औरंगजेब से औरगाबाद की सूबेदारी पाया। राव राजा अनरुद्धसिह स० १७३८ (P. 1681 A. D.), ये भावसिह क छोटे भाई के पौत्र थ। राव राजा

*दारासाहि औरग जुरे हैं दोऊ दिल्ली दल एकै गए भाजि एक रहे रूँधि चाल में।
भयो घोर युद्ध उद्ध माच्यो अति दुद जहाँ कैसहु प्रकार प्रान बचत न काल में ॥
हाथी ते उतरि हाडा जूझ्यो लोह लगर दै एती लाज का मै जेती लाज छत्रसाल में।
तन तरवारन में मन परमेश्वर में प्रन स्वामि कारज मै माथो हर माल में ॥

बुधसिंह * सं० १७५२ (P. 1710 A D.), इन्होंने बहादुरशाह की सहायता की थी, किंतु जयपुरवालों ने इन्हें राज्यच्युत कर दिया। महाराव राजा उमेदसिंह स० १८०१ (1744 A. D.), होलकर की सहायता से बूँदी फेर लिया (1747) और फिर विरक्त हो कर राज छोड कर चले गए। अजीत सिंह स० १८२७ (1771), महाराव राजा विष्णुसिंह स० १८३०। इन्होंने स० १८७४ मे सर्कार से अहदनामा किया। महाराव राजा रामसिंह, ये वर्त्तमान बूँदी के महाराव हैं। सवत् १८७८ मे सावन कृष्णा ११ को इन्होंने राज पाया और पूस सुदी ३ सं० १८६६ को इनका जन्म है। ये महाराज बडे धर्मनिष्ठ और सस्कृत के अनुरागी हैं। सर्कार से इस राज्य की सलामी १७ तोप की नियत की गई है और महाराव राजा श्री रामसिह जी को जी० सी०

---

* शिवसिंहसरोज में लिखा है, बुद्धराव (सवत् १७५५)—

ये महाराज बूँदी के राजा जयसिंह सवाई आमेरवाले के बहनोई थे। बहादुरशाह बादशाह ने इन का बडा मान किया। इस बादशाह के यहाँ दूसरे की ऐसी इज्जत न थी। जब सय्यद बारहा ने बादशाह को बेदखल कर आप ही बादशाही नक्कारा बजाते हुए गली कूचों में निकलने लगा तब तो इस शूरवीर से कब रहा जाता था। सय्यदों का मुँह तरवारों की धार से फेर दिया और तमाम उमर बादशाह के यहाँ रहा। कविता इनकी बहुत ही अपूर्व है और कवि लोगों का बडा मान दान देनेवाला था।

कीनो तुम मान मै कियो है कब मान अब कीजै सनमान अपमान कीनो कब मैं।
प्यारी हँसि बोलु और बोलै कैसे बुद्धराज हँसि हँसि बोलु हँसि बोलि हौ जू अब मै॥
हग करि सौहैं कोरि सौहै करि जानत हैं अब करि सौहैं अनसौहैं कीने कब मै।
लीजै भरि अक जहाँ आये भरि अक हौ न काहू भरि अक उर अक देखे अब मैं॥१॥

ऐसी ना करी है काहू आज लौं अनैसी जैसो सैयद करी है ये कलक काहि चढैंगे।
दूजे को नगाड़े बाजै दिल्ली मे दिलीश आगे हम सुनि भागै तौ कविंद कहाँ पढैंगे॥
कहै राव बुद्ध हमै करने हैं युद्ध स्वामि धर्म में प्रसुद्ध जेह जान जस मढैंगे।
हाडा कहवाय कहा हारि करि कढै ताते झारि शमशेर आजु रारि करि कढैंगे॥२॥

आई० और "काउन्सेलर आफ दी इम्प्रेस" (राजराजेश्वरी के सलाह-कार) की उपाधि दिल्ली के दरबार मे (1877 A. D.) मिली।❀

कोटा की शाखा।

राव माधोसिंह सन् १५७९ ई०
राव मुकुद सिंह सन् १६३० ई०
राव जगतसिंह सन् १६५७ ई०
राव किशवर (किशोर) सिंह सन् १६६९ ई०
राव रामसिंह सन् १६८५ ई०
राव भीमसिंह सन् १७०७ ई०
महाराव अर्जुनसिंह सन् १७१९ ई०
महाराव दुर्जनशाल (निस्संतान)
महाराव अजीतसिंह (विष्णुसिंह के पोते)
महाराज छत्रसाल
महाराज गुमानसिंह सन् १७६५ (अपने भाई छत्रसाल की गद्दी पर बैठे) जालिमसिंह इनके फौजदार थे।
महाराव उमेदसिंह सन् १७७० ई०
महाराव किशोरसिंह सन् १८१९ ई०
महाराव उम्मेदसिंह सन् १८८९ ई० (सं०)

❀ सन् १८८९ ई० मे महाराव राजा रघुवीर सिंह गद्दी पर बैठे। इनका जन्म सन् १८६८ ई० में हुआ था। (स०)

काश्मीर कुसुम

अथवा

राजतरंगिणी-कमल

‘कोऽन्य कालमतिक्रांत नेतुं प्रत्यक्षता क्षम· ।
कवीन् प्रजापतीस्त्यक्त्वा रम्यनिर्माणशालिन ’ ॥
‘भुजतरुवन छाया येषा निषेव्य महौजसा ।
जलधिरसनामेदिन्यासीदसावकुतोभया ॥
स्मृतिमपि न ते यान्ति क्ष्मापा विना यदनुग्रह ।
प्रकृतिमहते कुर्मस्तस्मै नम कविकर्मणे’ ॥

स० १९३९

सन् १८८४ ई० में द मेडिकल हॉल
प्रेस से मुद्रित तथा मल्लिकचद्र
एड को० काशी से प्रथम
बार प्रकाशित

DEDICATION.

—❀—

हे सौभाग्य काश्मीर,

केवल ग्रथकर्त्ता ही से नहीं इस ग्रथ से भी तुम से अनेक संबंध हैं। तुम कुसुम जाति हौ, यह ग्रथ भी। काश्मीर के क्षेत्र से दर्शको का मन प्रसन्न होता है, तुम्हारे दर्शन से हमारा। कश्मीर इस पृथ्वी का स्वर्ग है, तुम हमारे हेतु इस पृथ्वी मे स्वर्ग हौ। यह ग्रथ राजतरगिणी कमल है, तुम वर्ण से राजतरगिणी कमला ही नहीं हमारी आशाराज-तरंगिणी मे कमल हो। तरगिणी गण की रानी भोगवती भागीरथी है, तुम हमारी हृदयपातालवाहिनी राजतरंगिणी हौ। कश्मीर भू स्वर्णमयी नीलमणि-प्रभवा है, तुम भी इन्हीं अनेक संबंधो से समझो या केवल हमारे हृदय सबंध से यह ग्रंथ तुम को समर्पित है।

भूमिका

भारतवर्ष के निर्मल आकाश मे इतिहासचंद्रमा का दर्शन नहीं होता, क्योंकि भारतवर्ष की प्राचीन विद्याओ के साथ इतिहास का भी लोप हो गया। कुछ तो पूर्व समय मे शृखलाबद्ध इतिहास लिखने की चाल ही न थी और जो कुछ बचा बचाया था वह भी कराल काल के गाल मे चला गया। जैनो ने वैदिको के ग्रथ नाश किये और वैदिको ने जैनो के। एक राजधानी मे एक वश राज्य करता था। जब दूसरे वश ने उसको जीता तो पहले वश की सपूर्ण वंशावली के ग्रथ जला दिए। कवियो ने अपने अन्नदाता की झूठी प्रशंसा की, कहानी जोड़ लीं और उन के जो शत्रु थे उनकी सब कीर्ति लोप कर दीं। यह सब तो था ही, अत मे मुसल्मानो ने आकर जो कुछ बचे बचाये ग्रथ थे जला दिए। चलिए छुट्टी हुई। ऐसी काली घटा छाई कि भारतवर्ष के कीर्तिचद्रमा का प्रकाश ही छिप गया। हरिश्चन्द्र, राम, युधिष्ठिर ऐसे महानुभावो की कीर्ति का प्रकाश अति उत्कट था इसी से घनपटल को वेध कर अब तक हम लोगो के अँधेरे हृदय को आलोक पहुँचाता है। किंतु ब्रह्मा से ले कर आज तक और जितने बड़े बड़े राजा या वीर या पंडित या महानुभाव हुए किसी का समाचार ठीक ठीक नहीं मिलता। पुराणादिको मे नाम मिलता है तो समय नहीं मिलता।

ऐसे अँधेरे मे काश्मीर के राजाओ के इतिहास का एक तारा जो हम लोगो को दिखलाई पड़ता है इसी को हम कई सूर्य से बढकर समझते हैं। सिद्धात यह कि भारतवर्ष मे यही एक देश है, जिसका इतिहास शृखलाबद्ध देखने में आता है और यही कारण है कि इस इतिहास पर हमारा ऐसा आदर और आग्रह है।

कश्मीर के इतिहास मे कल्हण कवि की राजतरगिणी ही मुख्य है। यद्यपि कल्हण के पहले सुव्रत, क्षेमेंद्र, हेलाराज, नीलमुनि, पद्ममिहिर और श्री छविल्लभट्ट आदि ग्रथकार हुए है, किंतु किसी के ग्रथ अब नहीं मिलते। कल्हण ने लिखा है कि हेलाराज ने बारह हजार ग्रंथ

कश्मीर के राजाओ के वर्णन के एकत्र किए थे। नीलमुनि ने इस इतिहास मे एक बड़ा सा पुराण ही बनाया था। किंतु हाय! अब वे ग्रथ कहीं नहीं मिलते। * कश्मीर के बचे बचाये जितने ग्रथ थे सब दुष्टो ने जला दिए। आर्य्यों की मदिर मूर्ति आदि मे कारीगरी कीर्तिस्तभादिको के लेख और पुस्तको का इन दुष्टो के हाथ से समूल नाश हो गया। परशुराम जी ने राजाओ का शरीरमात्र नाश किया, किंतु इन्हो ने देह, बल, विद्या, धन, प्राण की कौन कहै कीर्ति का भी नाश कर दिया।

कल्हण ने जयसिह के काल मे सन् ११४८ ई० मे राजतरगिणी बनाई। यह कश्मीर के अमात्य चपक का पुत्र था और इसी कारण से इस को इस ग्रथ के बनाने मे बहुत सा विषय सहज ही मे मिला था।

इस के पीछे जोनराज ने १४१२ मे राजावली बना कर कल्हण से लेकर अपने काल तक के राजओं का उस मे वर्णन किया। फिर उसके शिष्य श्री वरराज ने १४७७ मे एक ग्रथ और बनाया। अकबर के समय मे प्राज्यभट्ट ने इस इतिहास का चतुर्थ खड लिखा। इस प्रकार चार खडो मे यह कश्मीर का इतिहास सस्कृत मे श्लोकबद्ध विद्यमान है।

महाराज रणजीत सिह के काल मे जान मैकफेयर नामक एक यूरोपीय विद्वान ने कश्मीर से पहले पहल इस ग्रथ का सग्रह किया। विल्सन साहब ने एशियाटिक रिसर्चेज्ञ मे इस के प्रथम छ सर्ग का अनुवाद भी किया था।

इसी राजतरगिणी ही से यह इतिहास मैं ने लिखा है। इस मे केवल राजाओ के समय और बड़ी बड़ी घटनाओ का वर्णन है। आशा है कि कोई इस को सविस्तर भी निर्माण कर के प्रकाश करैगा।

राजतरगिणी छोड़ कर और और भी कई ग्रथो और लेखो से इस मे सग्रह किया है। यथा आइने अकबरी,..... का फारसी इतिहास,

* नीलमुनि का नीलमत पुराण अब मिल गया है। (स०)

एशियाटिक सोसाइटी के पत्र, विल्सन, विल्फर्ड, प्रिंसिप, कनिंगहम, टॉड, विलिअम्स, गोशेन और ट्रायर आदि के लेख, बाबू जोगेशचन्द्रदत्त की अंगरेजी तवारीख, दीवान कृपाराम जी की फारसी तवारीख आदि।

बहुतों का मत है कि कश्मीर शब्द कश्यपमेरु का अपभ्रंश है। पहले पहल कश्यप मुनि ने अपने तपोबल से इस प्रदेश का पानी सुखा कर इस को बसाया था। इन के पीछे गोनर्द तक अर्थात् कलियुग के प्रारंभ तक राजाओं का कुछ पता नहीं है। गोनर्द से ही राजाओं का नाम शृंखलाबद्ध मिलता है। मुसल्मान लेखकों ने इस के पूर्व के भी कई नाम लिखे हैं, किंतु वे सब ऐसे अशुद्ध और प्रति शब्द में खाँ उपाधि विशिष्ट हैं कि उन नामों पर श्रद्धा नहीं होती।

गोनर्द से लेकर सहदेव तक पूर्व में सैंतीस सौ बरस के लगभग डेढ़ सौ हिंदू राजाओं ने कश्मीर भोगा, फिर पूरे पाँच सौ बरस मुसल्मानों ने इस का उत्पीडन किया। (बीच में बागी हो कर यद्यपि राजा सुखजीवन ने ८ बरस राज्य किया था पर उसकी कोई गिनती नहीं) फिर नाममात्र को कश्मीर दुर्रानी राज्यभुक्त होकर आज चौसठ बरस से फिर हिंदुओं के अधिकार में आया है। अब ईश्वर सर्वदा इस को उपद्रवों से बचावै। एवमस्तु।

कश्मीर की संक्षिप्त वंशपरंपरा

कश्मीर के वर्त्तमान महाराज की संक्षिप्त वंशपरंपरा यों है। ये लोग कछवाहे क्षत्री हैं। जैपुर प्रांत से सूर्यदेव नामक एक राजकुमार ने आकर जंबू मे राज्य का आरंभ किया। उस के वंश मे भुजदेव, अवतारदेव, यशदेव, कृपालुदेव, चक्रदेव, विजयदेव, नृसिंहदेव, अर्जुनदेव और जयदेव ये क्रम से हुए। जयदेव का पुत्र मालदेव बड़ा बली और पराक्रमी हुआ। इस ने हँसी हँसी मे पचास मन के जो पत्थर उठाए हैं वह उस की अचल कीर्त्ति बन कर अब भी जंबू मे पड़े हैं। उस के पीछे हंबीरदेव, अजेय्यदेव, वीरदेव, घोड़ादेव, कर्पूरदेव और सुमहल्लदेव क्रम से राजा हुए। सुमहल्ल के पुत्र संग्रामदेव ने फिर बड़ा नाम किया। आलमगीर इन की वीरता से ऐसा प्रसन्न हुआ कि महाराजगी का पद छत्र चॅवर सब कुछ दिया। ये दक्षिण की लड़ाई मे मारे गए। इन के पुत्र हरिदेव ने और उनके पुत्र गजसिंह ने राज को बहुत ही बसाया। सब प्रकार के नियम बाँधे और महल बनवाए। गजसिंह के पुत्र ध्रुवदेव ने बहुत दिन तक ऐश्वर्यपूर्वक राज्य किया। ध्रुवदेव के रणजीतदेव और सूरतसिंह पुत्र थे। रणजीतदेव को व्रजराजदेव और उन को निज परंपरासंपूर्णकारी संपूर्णदेव हुए। संपूर्णदेव को संतति न होने के कारण रणजीतदेव के दूसरे पुत्र दलेलसिंह के पुत्र जैतसिंह ने राज्य पाया। महाराज रणजीतसिंह लाहोरवाले के प्रताप के समय मे

जैतसिह को पिनशिन मिली और जबू का राज्य लाहोर मे मिल गया। जैतसिह के पुत्र रघुबीरदेव के पुत्र पौत्र अब अबाले मे है और सर्कार ॲगरेज़ से पिनशिन पाते हैं। ध्रुवदेव के दूसरे पुत्र सूरतसिह को जोरावर सिह और मियाँ मोटासिह दो पुत्र थे। मियाँ मोटा को विभूतिसिह और उन को एक पुत्र व्रजदेव है, जिन को वर्त्तमान महाराज जबू ने कैद कर रक्खा है। जोरावरसिह को किशोरसिह और उन को तीन पुत्र हुए, गुलाबसिह, सुचेतसिह और ध्यानसिह। महाराज गुलाबसिह ने महाराजाधिराज रणजीतसिह से जबू का राज्य फिर पाया। सुचेतसिह का वश नहीं रहा। राजा ध्यानसिंह को हीरा-सिह, जवाहरसिह और मोतीसिह हुए, जिन मे राजा मोतीसिह का वश है। महाराज गुलाबसिह के उद्धवसिह, रणधीरसिह और रणवीरसिह तीन पुत्र हुए। प्रथम दोनो नौनिहालसिंह और राजा हीरासिह के साथ क्रम से मर गए, इस से महाराज रणवीरसिह वर्त्तमान जबू और कश्मीर के महाराज ने राज्य पाया। इन के एक वैमात्रेय भाई मिया हट्टूसिह हैं, जिन को महाराज ने कैद कर रक्खा था, पर सुनते हैं कि आज कल वह कैद से निकल कर नैपाल प्रात में चले गए है। सन् १८६१ मे महाराज को जी० सी० एस० आई० का पद सरकार ने दिया और १८६२ में दत्ताक लेने का आज्ञापत्र भी दिया। इन को २१ तोप की सलामी है। दिल्ली दरबार मे इन को और भी अनेक आदर-सूचक पद मिले हैं। ये सस्कृत विद्या और धर्म के अनुरागी है। इन को तीन पुत्र हैं यथा युवराज प्रतापसिह, कुमार रामसिह और कुमार अमरसिह*।

* वर्त्तमान महाराज के परिषदवर्ग भी उत्तम हैं। इन के एक बड़े शुभ-चिंतक पडित रामकृष्ण जी को कई वर्ष हुए लोगों ने षड्चक्र कर के राज्य से अलग कर दिया था और अब उन के पुत्र पडित रघुनाथ जी काशी में रहते हैं। महाराज के अमात्य दीवान ज्वाला सहाय के पौत्र दीवान कृपाराम के पुत्र अनतराम जी हैं, जो ॲगरेजी फारसी आदि पढ़े और सुचतुर हैं। बाबू नीलाम्बर मुकुर्जी, पडित गणेशचौबे प्रभृति और भी कई चतुर लोग राज्यकार्य में दक्ष हैं।

राजतरंगिणी की समालोचना

जिस महाग्रथ के कारण हम लोग आज दिन कश्मीर का इतिहास प्रत्यक्ष करते है उसके विषय मे भी कुछ कहना यहाँ बहुत आवश्यक है। इस ग्र थ को कल्हण कवि ने शाके एक हजार सत्तर १०७० मे बनाया था। उस समय तीसरे गोनर्द से तेईस सौ तीस बरस बीत चुके थे। इस ग्र थ की सस्कृत क्लिष्ट और एक विचित्र शैली की है। कवि के स्वभाव का जहाँ तक परिचय मिला है ऐसा जाना जाता है कि वह उद्धत और अभिमानी था, किंतु साथ ही यह भी है कि उस की गवेषणा अत्यत गभीर थी। नीलपुराण छोड कर ग्यारह प्राचीन ग्र थ इस ने इतिहास के देखे थे। केवल इन्ही ग्र थो के भरोसे इस ने यह ग्र थ नहीं बनाया वरच आजकल के पुरातत्ववेत्ता (Antiquarian) की भाँति प्राचीन राजाओ के शासनपत्र, दानपत्र तथा शिवालय आदि की लिपि भी इसने देखी थी। (प्रथम तरग १५ श्लोक देखो) यह मंत्री का पुत्र था, इस से संभव है कि इन वस्तुओ को देखने मे इसको इतना परिश्रम न पड़ा होगा जितना यदि कोई साधारण कवि बनाता तो उसको पड़ता। इस ग्रंथ मे आठ हजार श्लोक हैं। साढ़े छ सौ बरस कलियुग बीते कौरव-पांडवो का युद्ध हुआ था, यह बात इसी ने प्रचलित की है। जरासध के युद्ध मे कश्मीर का पहला राजा गोनर्द मारा गया। यहाँ से कथा का आरभ है *। इसी आदि गोनर्द के पुत्र को श्रीकृष्ण

* इस ग्रथकर्त्ता के पिता श्रीयुत कविवर गिरिधरदास जी ने अपने जरासध-वध नामक महाकाव्य मे जरासध की सैना मे कश्मीर के आदि गोनर्द के वर्णन में कई एक छद लिखा है वह भी प्रकाश किया जाता है। (३ सर्ग ४० छद)

चलेउ भूप गोनर्द वर्दवाहन समान बल,
सग लिये बहु मर्द सर्द लखि होत अपर दल।
फेंटा सीस लपेटा गल मुकुता की माला,
सिर केसर को पुड्र धरे पचरंग दुसाला।
रथ चारु जराऊ सोहतो रूप सबन मन मोहतो,
कश्मीर भूप भरि रिसि लसी मथुरापुर दिसि जोहतो॥

(६ सर्ग २५ छद)

का नाम द्वितीय गोनर्द हुआ, जो महाभारत के युद्ध मे मारा गया। इसी से स्पष्ट है कि पूर्वोक्त तीनो राजा जवानी ही मे मरे, क्योकि एक पाडवो के काल मे तीनो का वर्णन आया है। इन लोगो के अनेक काल पीछे अशोक राजा जैनी हुआ। इसी ने श्रीनगर बसाया। इस के पीछे जलौकराजा प्रतापी हुआ, जिसने कान्यकुब्जादि देश जीता। यह शैव था। (भारतवर्ष मे मूर्तिपूजा और शैव वैष्णवादि मत बहुत ही थोडे काल से चले है यह कहने वाले महात्मागण इस प्रसग को आँख खोल कर पढ़े) (१ त० ११३ श्लो०)। फिर हुष्क, जुष्क और कनिष्क ये तीन विदेशी (Bactro-Indian tribe) राजा हुए। इनके समय मे शाक्य सिह को हुए डेढ सौ बरस हुए थे। (१ त० १७२ श्लोक) इससे स्पष्ट होता है कि राजतरगिणी के हिसाब से शाक्यसिह को हुए पचीस सौ बरस हुए। इसी समय मे नागार्जुन नामक सिद्ध भी हुआ। इनके पीछे अभिमन्यु के समय मे चंद्राचार्य ने व्याकरण के महाभाष्य का प्रचार किया और एक दूसरे चद्रदेव ने बौद्धो को जीता। कुछ काल पीछे मिहिरकुल नामक एक राजा हुआ। इस के समय की एक घटना विचारने के योग्य है। वह यह कि इस की रानी सिहल का बना रेशमी कपडा पहने थी। उस पर वहाँ के राजा के पैर की सोनहली छाप थी। इस पर कश्मीर के राजा ने बडा क्रोध किया और लका जीतने चला। तब लकावालो ने 'यमुषदेव' नामक सूर्य के बिब के छापे का कपडा दे कर उस से मेल किया। (१ त० ३०० श्लोक) इस से स्पष्ट होता है कि चाँदी सोने से कपडा छापना लका मे तभी से प्रचलित था। अद्यापि दक्षिण हैदराबाद मे (लका के समीप) छापा अच्छा होता है। उस समय तक भट्टि (Bhatti), दारद (Dardareans) और गाधार (Kandharians) ब्राह्मण हाते थे।

फिर तुज़ीन नामक राजा के समय मे चद्रक कवि ने नाटक बनाया। (२ त० १६ श्लो०) इस के समय मे एक बात और आश्चर्य की लिखी है कि एक समय बड़ा काल पड़ा था तो परमेश्वर ने कबूतर बरसाये थे। (२ त० ५१ श्लो०) और हर्ष नामक एक कोई और राजा उस काल मे हुआ था। इस राजा के कुछ काल पीछे सधिमान राजा की कथा भी बड़ी आश्चर्य की लिखी है कि वह सूली दिया गया था

और फिर जी गया इत्यादि। विक्रमादित्य के मरने के थोडे ही समय पीछे ●वरसेन राजा ने नाव का पुल बाँधा और वह ललाट मे त्रिशूल की भाँति तिलक देता था (३ त० ३५६ और ३६७ श्लो०)।

जयापीड़ राजा का समय फिर ध्यान देने के योग्य है, क्योकि इस के समय मे कई पडित हुए है, जिनमे शंकु नामक कवि ने मम्म और उत्पल की लडाई मे भुवनाभ्युदय नामक काव्य बनाया था। (४ त० २५ श्लो०) इसी समय मे वामन नामक वैयाकरण पंडित हुआ है जिस की कारिका प्रसिद्ध है। (४ त० ४८७ से ४६४ श्लो० तक) इसी वामन का बोपदेव ने खडन किया है। (बोपदेव महाग्राहग्रस्तो वामने कुजरः) इस से बोपदेव जयापीड़ के समय (७५ ई०) के पीछे हुए है यह सिद्ध होता है। जयापीड़ ने द्वारका फिर से बसा कर मदिर बनवाए। (४ त० ५६० श्लो०) और उस समय नेपाल का राजा अरमुड़ि था (४ त० ५२६ श्लो०)।

राजा शकरवर्मा का समय भी दृष्टि देने योग्य है। इस के पास ३०० हाथी, लाख घोड़े और नौ लाख प्यादे थे। उस समय गुजरात मे 'खानाल खान' का जोर था। दरद और तुरुष्क देश के राजा भारत मे बड़ा उपद्रव मचाए हुए थे। लल्लियशाह खानालखान का सर्दार था (५ त० १५३ से १६०श्लो० तक)। इस ग्रथ मे मुसल्मानो का वर्णन पहले यहीं आया है। इस से स्पष्ट होता है कि ईस्वी नवीं शताब्दी के अंत तक जो मुसल्मान चढ़ाई करते थे वे गुजरात की राह से करते थे, उत्तर पच्छिम की राह नहीं खुली थी। इस तरग मे कायस्थो की बड़ी निंदा की है (४ त० ६२५ श्लो० से और ५ त० १७६ श्लो० आदि)।

चतुर्थ और पचम तरग मे कई बात और दृष्टि देने के योग्य है। जैसे ताँबे की 'दीनार' पर राजाओ का नाम खुदा रहना। (४ त० ६२० श्ला०) जहाँ पथिक टिके उस स्थान का नाम गज (४ त० ५६२ श्लो०)। रुपयो की हुडिका (हुडी) का प्रचार। (५ त० १५६ श्लो०) मेष के ताजे चमड़े पर खडे होकर तलवार ढाल हाथ मे लेकर शपथ खाना इत्यादि (५ त० ३३० श्लो०)। इसी तरंग मे गानेवालो का नाम

डोम लिखा है। (५ त० ३५८ श्लो०) यह दीनार, गज, हुडी और डोम शब्द अब तक भाषा मे प्रचलित है, वरच मीरहसन ने भी 'डोमनपना' लिखा है। जैसा इस काल मे रडी और इन की बुढ़िया तथा भँडुओ के समझने की और साधारण लोग जिस मे न समझै * ऐसी एक भाषा प्रचलित है, वैसी ही उस काल मे भी थी। गानेवाले को हेलू गॉव दिया गया, इस की उस काल की भाषा हुई 'रगस्सहल्लुदिराणा' (५ त० ४०२ श्लो०)।

षष्ठ तरग मे दिद्दारानी का उपद्रव और बहुत से राजाओ के नाम के पूर्व मे शाहि पद ध्यान देने के योग्य है।

सप्तम तरग (५३ श्लो०) मे हम्मीर नाम का एक राजा तुग के समय मे और (१६० श्लो० , अनत के समय मे भोज का राजा होना लिखा है। मान के हेतु लोगो को ठाकुर की पदवी दी जाती थी। (७ त० २६ श्लो०) तुरुष्क देश से सोने का मुलम्मा करने की विद्या हर्ष के समय मे आई। (७ त० ५३ श्लो०) इसी के काल मे खस लोगो ने पहले पहल बदूक का युद्ध किया। (७ त० ६८४ श्लो०) कलिंजर के राजा, राजा उदय सिंह आदि कई राजाओं के प्रसंग से (१३०० श्लो० के आसपास) नाम आए हैं। युद्ध हारने के समय क्षत्रानियाँ राजपुताने की भॉति यहॉ भी जल जाती थीं। (७ त० १५०० श्लो०)

अष्टम तरंग मे भी कायस्थो की बहुत निंदा की है। (८ त० ८६ श्लो० आदि) कैदियो को भॉग से रग कर कपड़ा पहनाते थे। (८ त० ६३ श्लो०) कल्याण के हेतु लोग भीष्मस्तवराज, गजेद्रमोक्ष, दुर्गापाठ आदि का पाठ करते थे (८ त० १०६ श्लो०) टकसाल का नाम टकशाला। (८ त० १५२ श्लो०) उस समय मे भी राजाओ को इस

* वर्त्तमान काल मे रडियों की भाषा का कुछ उदाहरण दिखाते हैं। नगर की वारबधूगण की सकेत भाषा यथा—लूरा पुरुष, लूरी-रडी, चीसा-अच्छा बीला बुरा, भीमटा रुपया आदि। ग्राम्य रडियों की भाषा यथा-सेरुआ-पुरुष, सेरुइ-स्त्री, कनेरी-रुपया, सेमिल-अच्छा है और छौलिआयल्यः अर्थात् रुपया सब ठग लो।

बात का आग्रह होता था कि उन्हीं के नाम के सिक्के का प्रचार विशेष हो। इस समय (बारहवीं शताब्दी के मध्य मे) कालिंजर का राजा कल्ह था। (८ त० २०५ श्लो०) हर्ष का सिर काट कर लोगो ने भाले पर चढाया, किंतु इस के पहिले किसी राजा के सिर काटने की चाल नहीं थी। हर्ष का व्याख्यान इस तरंग मे अवश्य पढ़ने के योग्य है, जिस से शृंगार, वीर आदि रसो का हृदय मे उदय हो कर अंत मे वैराग्य आता है।

राजतरंगिणी मे राम लक्ष्मण की मूर्त्ति का पृथ्वी के भीतर से निकलना इस बात का प्रमाण है कि मूर्त्तिपूजा यहाँ बहुत दिन से प्रचलित है।

इस मे देवी, देवता, भूत, प्रेत और नागो की अनेक प्रकार की आश्चर्य कथा हैं जिन को ग्रंथ बढने के भय से यहाँ नहीं लिखा। और भी वृक्ष, शस्त्र, औषधि और मणि आदिको के अनेक प्रकार के वर्णन हैं। कोई महात्मा इस का पूरा अनुवाद करेंगे तो साधारण पाठको को इस का पूर्ण आनंद मिलैगा।

इस मे एक मणि का वर्णन बड़ा आश्चर्यजनक है। एक बेर राजा नदी पार होना चाहता था किंतु कोई सामान उस समय नहीं था। एक सिद्ध मनुष्य ने जल मे एक मणि फेंक दी, उस से जल हट गया और सैना पार उतर गई। फिर दूसरी मणि के बल से इस मणि को उठा लिया। एक कहानी ऐसी और भी प्रसिद्ध है कि किसी राजा की अँगूठी पानी मे गिर पड़ी। राजा को उस अमूल्य रत्न का बड़ा शोच हुआ। यह देखकर मंत्री ने अपनी अंगूठी डोरे मे बाँधकर पानी मे डाली। मंत्री के अँगूठी के रत्न मे ऐसी शक्ति थी कि अन्य रत्नो को वह खींच लेती थी, इस से राजा की अँगूठी मिल गई।

—❀—

हर्षदेव।

हर्षदेव के विषय मे यद्यपि राजतरंगिणी मे कुछ विशेष नहीं लिखा है किंतु इस राजा का नाम भारतवर्ष मे बहुत प्रसिद्ध है और एक इस

बात की प्रसीद्धि पर कि रत्नावली इत्यादि काव्यग्रथ उसके समय मे बने थे। इस राजा पर मेरी विशेष दृष्टि पडी। इस का समय विक्रम और कालिदास के समय के बहुत पीछे स्पष्ट होने से इस बात की मुझ को बडी चिंता हुई कि वह कौन पुण्यात्मा श्री हर्ष है, धावक ने जिस की कीर्ति आचद्रार्क स्थिर रक्खी है। वह श्री हर्ष निश्चय मम्मट, कालिदासादि के पूर्व और वत्सराज के पश्चात् हुआ है। वशावलियो मे खोजने से कई हर्ष मिले। यथा मालवा के राजाओ मे एक हर्षमेघ १६१ ई० पू० हुआ है। यह युद्ध मे मारा गया और कोई विशेष कथा इसकी नहीं है। छतरपुर मे एक लिपि मे श्री हर्ष नाम का एक राजा बिहल का पुत्र यशोधर्मदेव का पिता लिखा है। और यह लिपि श्री हर्ष के प्रपौत्र की स० १०१६ की है। एक श्री हर्ष नैपाल का राजा ३६३१ ई० पू० हुआ है। एक विक्रमादित्य जिस का दूसरा नाम हर्ष था मातृगुप्त के समय मे हुआ। शक १००० मे एक विक्रम और इस के कुछ ही पूर्व कान्यकुब्ज मे एक हर्ष नामक राजा हुआ। कालिदास और श्री हर्ष कवि भी इसी काल मे थे। जैन लोगो ने लिखा है कि वाराणसी के जयतीचद नामक राजा के दरबार में श्री हर्ष कवि था। (१०८६ शक) यह जैनो का भ्रम है। और हर्षों को छोड़ कर कान्यकुब्ज के हर्ष को यदि धावक कवि का स्वामी मानें तभी कुछ लड़ सब बातो की मिलेगी। जैसा रत्नावली मे जिस वत्सराज का चरित है वह कलियुग के प्रारभ मे उरुक्षेप का पुत्र वत्स था। शुनकवश का प्रथम राजा एक प्रद्योत हुआ है। [३००० ई० पू०] सभव है कि इसी प्रद्योत की बेटी वत्स को ब्याही हो। धावक ने एक उदयन का भी वर्णन किया है। वह पाडवो के वश की अतावस्था मे हुआ था। यह सब अति प्राचीन है। इस से ३६३१ ई० पू० के नैपाल-वाले श्रीहर्ष के हेतु धावक ने काव्य बनाया है, यह नहीं हो सकता। कन्नौज मे जो श्रीहर्ष नामक राजा था, जिस की सभा मे श्रीहर्ष नामक कवि का पिता रहता था वही श्री हर्ष धावक का स्वामी था। छतरपुर की लिपि का काल १०१६ है। चार पुश्त पहले यह काल ८५० सवत् मे जा पड़ेगा। यशोविग्रह के पहले कदाचित् राजविप्लव हुआ हो और श्री हर्ष से यशोविग्रह तक दो एक राजे और हो गए हो तो

आश्चर्य नहीं। प्रशस्ति के 'क्ष्मापालमाला सुदिवगतासु' इस पद से ऐसा झलकता भी है। यशोविग्रह से लेकर जयचंद तक नामो मे जितनी प्रशस्ति मिली हैं उन मे बड़ा ही अंतर है। जो ताम्रपत्र मैंने देखा है उस का क्रम यह है—यशोविग्रह, महीचंद, चंद्रदेव, मदनपाल, गोविंद्र और जयचंद्र। जैनो ने इसी जयचंद्र को जयतीचंद्र लिखा है और काशी का राजा लिखने का हेतु यह है कि 'तीर्थानि काशीकुशिकोत्तरकौशलेन्द्रस्थानीयकानि परिपालयताभिगम्य' इस पद से स्पष्ट है कि काशी भी उस समय कन्नौजवालो के अधिकार में थी, इसी से काशी का राजा लिखा। और जयचंद्र के प्रपितामह या उस के भी पिता के काल मे जो श्रीहर्ष कवि था उस को जयचंद्र के काल मे लिख दिया। छतरपुर की लिपि मे जो श्रीहर्ष राजा का पुत्र यशोधर्म वा वर्म लिखा है, वही यशोविग्रह मान लिया जाय और जयचंद्र उस के बड़े पुत्र का वंश और छतरपुर की लिपि वाले छोटे पुत्र के वंश मे हैं, ऐसा मान लीजिए तो विरोध मिट जायगा। चंद्रदेव ने 'श्रीमद्गाधिपुराधिराज्यमखिलं दोर्विक्रमेणार्जितम्' इस पर से कान्यकुब्ज का राज्य अपने बल से पाया यह भी झलकता है। इस से यह भी संभव है कि श्रीहर्ष का राज्य कन्नौज मे शेष न रहा हो और चंद्रदेव ने नए सिरे से राज्य किया हो। यशोविग्रह के वंश की कई शाखा है इस का प्रमाण प्रशस्तियो के भिन्न भिन्न नामो ही से है। इस से ऐसा निश्चय होता है कि संवत् ९०० के लगभग जो श्रीहर्ष नामक कान्यकुब्ज का राजा था, उसी के हेतु रत्नावली आदि ग्रंथ बने हैं *। कालिदास, विक्रम, भोज सब इस काल के सौ बरस के आस पास पीछे उत्पन्न हुए हैं और इसी से कालिदास ने मालविकाग्निमित्र मे धावक का परिचय दिया है। कल्हण कवि ने जो राजतरंगिणी मे कालिदास या इस श्रीहर्ष का नाम नहीं दिया उस का कारण यही है कल्हण का स्वभाव असहिष्णु था और कालिदास से कश्मीर के राजा भीमगुप्त से (जो ९७५ ई० के काल मे राज्य करता था) महा वैर था, इस से उस ने कालिदास का या उस के

* पूर्व में तुजीन के काल में एक हर्ष हुआ है यह लिख भी आए हैं।

स्वामी विक्रम का नाम नहीं लिखा। कल्हण प्राय: सभी राजाओ की कुछ कुछ निदा कर देता है, जैसा इसी हषदेव की, जिस की और स्थानो मे बडी स्तुति है, कल्हण ने निदा की है। और ग्रथकारो के मत मे श्रीहर्ष बडा न्यायपरायण स्वय महा कवि अति उदार था। पुकार सुनने के हेतु महल की भित्तियो पर घटियॉ लटकती थीं। रात दिन गुणियो से घिरा रहता था और अत मे ससार को असार जानकर त्यागी हो गया। कल्हण से हर्षराज से द्वेष का यह कारण है कि इस के स्वामी जयसिह का बाप सुस्सल हर्ष के पोते भिक्षाचर को मार कर राज्य पर बैठा था।

राजसख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्य काल	विशेष बर्णन
१	आदि गोनर्द	६८८॥	०	०	१४००ई० पूर्व	३५।६	२४४८ ईस्वी पूर्व, जरासध के युद्ध में बलदेव जी ने मारा, प्रिसिप के मत से १०४५ ई० पू०, नामातर गोनद वा अगद, फारसीवालो के मत से राज्य १७ बरस, मुसल्मानों का नाम आदि गद ।
२	दामोदर	७२४	०	०	०	३०	गधार देश के स्वयवर मे श्री कृष्ण ने इस को मारा और इस की यशोवती रानी को जो सगर्भा थी राज्य पर बैठाया ।
३	बालगोनर्द*	७५४	०	०	०		श्री कृष्ण ने आप आकर राज पर बैठाया महाभारत के युद्ध मे विद्यमान था ।
३८	पैंतीस राजे*	१४६४	०	०	०	७१०*	इनके नाम कर्म कुछ भी विदित नही मुसल्मानों के मत से ये पैंतीस नहीं सैंतीस थे और पाडव वश में थे ।
३९	लव	१४९९	०	०	५७०	३।८	लोलूर बसाया. नामातर बाललव. मुसल्मानों का लू, लोलूर मे बीस लाख अस्सी हजार मनुष्यों की बस्ती थी. १७०९ ई० पू० ।

इस चक्र में राजाओं के नाम पर जहाँ ❀ ऐसा चिन्ह दिया है वहाँ समझना चाहिए कि पूर्व वश समाप्त होकर आगे से नया वश चला ।

* तीसरे से अडतीसवें राजा तक का राज्यकाल (स०)

४०	कुशेशय	१५०१।८	०	०	०	६०	नामांतर कुश. १६६४ ई० पू० मुसल्मानों का किशन ।
४१	खगेंद्र	१५६२।८	०	०	०	३०।६	१६६० ई० पू० मुसल्मानों के मत से काकापुर और कथ नामक नगर बसाए । मुसल्मानों का गुलकन्द ।
४२	सुरेंद्र*	१५६३।२	०	०	०	३५।७	मुसल्मानों का सुदर । १६०० ई० पू० ईरान से माचास्प नामक हकीम को बुलवाया, ईरान के बादशाह बहमन को जीता । निस्सतान मरा । मुसल्मानों के मत से इस की बेटी बहमन को ब्याही थी ।
४३	गोधर	१६२८।६	०	०	०	६०	१५७३ ई० पू०
४४	सुवर्ण	१६८८।६	०	०	०	६	स्वर्णनदी नाम की नदी पहाड खोद कर लाया । मुसल्मानों का बसरन ।
४५	जनक	१६९४।६	०	०	०	७१	१४७७ ई० पू० ।
४६	शचीनर	१७६५।६	०	०	०	६२	मुसल्मानों का सजीनरायन । १४७१ ई० पू० ।
४७	अशोक	१८२७।६	०	०	०	३०	१३९४ ई० पू० यह शचीनर का भतीजा था । श्रीनगर इसी ने बसाया और जैन मत का प्रचार किया । मुसलमानों ने इस को शुकराज वा शकुनी का बेटा लिखा है । उस काल में श्रीनगर में छः लाख मनुष्य थे ।
४८	जलौक	१८५७।६	०	०	०	२५	जाति विभाग किया, सप्त प्रकृति स्थापन किया । नन्दि-पुराण सुना । इसी को और ग्रथकारों ने पटने के अशोक का पोता लिखा है । यवनराजा यूथिदेयुस को हराया । अन्तिओकस के साथ सुलहनामा किया । बडा प्रतापी था । १३३२ ई० पूर्व मुसल्मानों का चकवक ।
४९	दामोदरद्वितीय*	१८८२।६	०	०	०	६०	१३०२ ई० पू० शैवमत का प्रचार हुआ ।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
५२	हुष्क, जुष्क और कनिष्क*	१६४२।६	०	०	०	३५	१२७७ ई० पू० ये तीनो तुर्क (किवा तातार) थे किंतु बौद्ध थे। शाक्यसिंह को १५० बरस हुए थे। नागार्जुन सिद्ध इन्ही के समय में हुआ और बौद्धमत को फैलाया।
५३	अभिमन्यु	१६७७।६	०	०	०	३५	मुसल्मानों का अभिगुन वा अभिचलन। १२१७ ई० पू० विल्फर्ड के मत से ४२३ ई० पू० प्रिंसिप के मत से से ७३ ई० पू० बौद्धों का उपद्रव हुआ, हिम बहुत पडा, चद्रदेव ब्राह्मण ने बौद्धों को जीता, नीलपुराण सुना, महाभाष्य का प्रचार हुआ।
५४	गोनर्द (३)	२०१२।६	११८२ई० पूर्व	५३।३ई० सन	११८२ई० पूर्व	४५।६	प्रिंसिप के मत से १०८ ई० पू०, मुसल्मानों ने इसका नाम कृष्ण लिखा है। विल्फर्ड के मत से ३८८ ई० पू० नागपूजा चलाया।
५५	विभीषण	२०५८।३	११४७	६१।६	११४७	३०।६	विल्फर्ड के मत से ३७० ई० पू०। मुसल्मानों के मत से पखनपति नाम राज्यकाल ५३। ६। ७।
५६	इद्रजित्	२०८८।६	१०६३।६	७३।१	१०६६	३०।६	वि० ३५२। मुसल्मान लेखकों ने इन्द्रजित रावण इन-दोनों का राज्य ३६ वर्ष लिखा हैं।
५७	रावण	२११६।३	१०५८	७३।१	१०६०।६	३५	वि. ३३४ मुसल्मानों ने इसके बेटे बरवाल का नाम और लिखा है और उसका राज्य भी ३५ बरस लिखा है।

५८	विभीषण (२)	२१५४।३	१०२८	८०।८	१०३०।६	३६।६	वि. ३१६. मुसल्मानों ने लिखा है कि यह त्यागी था। इसका नाम पखनपत था। यह आजाद राजा का बेटा और बडा कवि था। पहले इसका ज्येष्ठ पुत्र इद्रायन गद्दी पर बैठा किंतु उसके दुष्कर्मों से दुखी होकर लोगों ने उसे मार डाला और इसको गद्दी पर बैठाया।
५९	किन्नर	२१६४	६६२।६	८६।२	६६३	६०	वि २६८, नामांतर नर, बौद्ध था, मुसल्मानों ने इसको बडा क्रूर लिखा है और लिखा है कि दो वर्ष मात्र राज्य किया फिर राज्य कुछ दिन शून्य रहा।
६०	सिद्ध	२२५४	६५२।६	६६।२	६५३।३	३०।६	वि २८०, मुसल्मानों ने लिखा है कि धाय इसको छिपाये हुए थी।
६१	उपल	२२८४।६	८६२।६	११४।२	८६३।३	३७।७	वि २६२, आईनेअकबरी मे इसका नाम आदित्य वल्लभ लिखा है नामांतर उत्पलाक्ष, मुसल्मानों का गुरुदत्त वा पलाशन. यह आँख का कजा था।
६२	हिरण्य	२३२२।१	८६२।३	१२१।६	८६२।६	६०	वि. २४४, नामांतर हिरण्याक्ष, मुसल्मानो का तिरन्य।
६३	हिरण्यकुल	२३८२।१	८२४।८	१११२	८२५।२	६०	वि. २२६, मुसल्मानो का हिरणकुल।
६४	बसुकुल	२४४२।१	७६४।८	१४६।२	७६५।२	७०	वि. २१८, आईने अकबरी का एविशाक, बडा विषयी था।
६५	मिहिरकुल	२५१२।१	७०४।८	१६३।८	७०५।२	३६	वि.२००, ट्रायर के मतसे नाम मुकुल, लकापर चढाई की, बडा क्रूर था, दारद, गाधारों और भाटियों का प्राबल्य हुआ, पहाड तोड कर हाथियों से ढोके हटाकर नदी निकलवाई। लका में राजा का पैर छपा कपडा होता था। यह ऐसा क्रूर था कि एक बेर हाथी का पहाड पर से गिरना उसको अच्छा मालूम हुआ इस से सौ हाथी पहाड पर से गिरवा दिए। बहुत सी स्त्रियों को भी इसने मार डाला।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिंहम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
६६	बक	२५४८।१	६३१।८	१७४।८	६३५।२	३०	वि. १८२, मुसल्मानों का जग। इस को एक स्त्री ने बलि दे दिया।
६७	क्षितिनंदन	२५७८।१	५७१।८	१८७।८	५७२।२	५२	वि. १६४, क्षितिनद वा नदन. मुसल्मानों का आनद-कात इसका बेटा कतानद, उस को वसुनद हुआ।
६८	वसुनद	२६३०।१	५४१।८	१९५।२	५४२।२	६०	वि. १४६, आईने अकबरी का विस्तद कामशास्त्र बनाया।
६९	नर (२)	२६९०।१	४८४।६	२०८।२	४९०	६०	वि १२८, नामातर बर, आईने अकबरी का निर।
७०	अक्ष	२७५०।१	४२६।६	२२३।२	४३०	६०	वि १००, आईने अकबरी का अज। मुसल्मान इतिहास-लेखकों ने इसका नाम लिखा ही नही है।
७१	गोपादित्य	२८१०।१	३६६।६	२३८।२	३७०	५७	वि ८२ ई० पू० आईने अकबरी का कुलवती, मुसल्मानों का कोमानद, वैदिक धर्म की उन्नति की।
७२	गोकर्ण	२८६७।१	३०६।६	२५३।२	३१०	३६।३	वि ६४ ई० पू० आ० अ० का करन।
७३	नरेंद्रादित्य	२९०३।४	२५१।७	२६६।११	२५३	३४	वि. ४ ई० पू० आ० अ० का नरेंद्रावत, मुसल्मानों का नरानद, नामातर खिंखिल।
७४	अधयुधिष्ठिर *	२९३७।४	२१५।४	२७९	२१६।६	३२	वि २८ ई० पू० अधसज्ञा कमती सूझने से हुई, विषयी था। अत में राज्य छोड कर भाग गया।

७५	प्रतापादित्य	२६६६।४	१६७।३	२८७।६	१६८।६	३२	वि १० ई० पू० किसी विक्रमादित्य का नातेदार था। मुसल्मानों के मत से नाम बरतपात है और मालवा से वहाँ जाकर राजा हुआ।
७६	जलौक (२)	३००१।४	१३५।३	३०३।६	१३६।६	२६	वि. २२ ई० सन् आ० अ० का जगुह।
७७	तुजीन*	३०२७।४	१०३।३	३१६।६	१०४।६	८	वि ५४ ई० मुसल्मानों ने इसका नाम शनीचर और इस की रानी का नाभ दक्षिणा लिखा है। नामातर वजीर। बडा भारी काल पडा, खजाना सब गरीबों को बॉट दिया। आकाश से लोगो के घर में कबूतर गिरे. बडा धर्मात्मा था। चद्रक कवि ने नाटक काव्य बनाए।
७८	विजय	३०३५।४	६७।३	३३८।६	६६।६	३७	वि ६० ई० नामातर वेजिरी, मुसल्मानो का विजयमल्ल।
७९	जयेंद्र	३०७२।४	५६।३	३४१।६	६०।६	४७	वि. ६८ ई० नामातर चद्र, मुसलमानों का विजयेंद्र।
८०	सधिमान*	३११६।४	२२।३	३६६	२३।६	३४	नामातर आर्यराज, जयेंद्र का मत्री था। इसके विषय मे यह विचित्र बात प्रसिद्ध है कि फाँसी पडकर मर कर फिर जिया था। मुहम्मद अजीम ने अपने फारसी इतिहास मे लिखा है कि जिस समय सधिमान शूली पर मर गया, उसी काल मे राजा भी मर गया। तब प्रजा लोगों ने सधिमान मत्री के पुत्र अरिराय को राज पर बैठाया और इस भाँति सधिमान के कपाल का लिखा पूरा हुआ। अरिराय विरागी हो कर जगल में चला गया। फिर युधिष्ठिर का पोता गोपाल राजा, जो बडा ही सुदर था, राजा हुआ. अपने ससुर खता के बादशाह की मदद से काश्मीर का राजा हुआ था और सूरत तक जीता।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
८१	मेघवाहन	३१५३।४	२४।६ ई० सन्	३८३	२३।३ ई० सन्	३०	गाधार (कदहार) का था, वहाँ के राजा गोपादित्य ने इसे पाला था। बौद्धों को बसाया।
८२	श्रेष्ठसेन	३१८३।४	५८।६	४००	५७।६	३०।२	मुसल्मानों के अनुसार खता के बादशाह की बेटी इसको व्याही थी। इसने प्रत्यक्ष पशु से घृणा करके पिष्ट की चाल चलाई। रुपये को दीनार कहते थे, आईने अकबरी का मेगदहन।
८३	हिरण्य*(२)	३२१३।६	८८।६	४१५	८७।३	४।६	तोरमान कुमार का प्रतिद्वद्वी था। मुसलमानों ने लिखा है कि इसका भाई पुरवाहन इसका मत्री था।
८४	मातृगुप्त	३२१८।३	११७।११	४३०	११८।५	६०	विक्रमादित्य ने उज्जैन से भेजा। जाति का ब्राह्मण था। इस विक्रमादित्य का नाम हर्ष था। उस काल में लोग ललाट मे त्रिशूल की मुद्रा देते थे। किंतु कालिदास वाला विक्रम नहीं है।
८५	प्रवरसेन	३२७८।३	१२३।८	४३२।६	१२२।२	३६	यह प्राचीन वश का था। शिलादित्य नामक गुजरात के राजा से लडा। मुसलमानो के अनुसार पुरवाहन का बेटा था। श्रीनगर फिर से बसाया। मुसल्मानों ने शिलादित्य को विक्रमादित्य का बेटा लिखा है।

८६	युधिष्ठिर (२)	३३१७।३	१८३।८	४६४	१८५।२	०।८।१३	मुसल्मान लेखकों से यहाँ बडा भेद है। वे लिखते हैं प्रवरसेन का बेटा चद्रश्री, उसने ७३ वर्ष ३ महीना राज्य किया, उस का बेटा लद्मण, राज्यकाल ३ बरस उस का बेटा जयादित्य।
८७	नरेंद्रादित्य	३३१७।११।१३	२०४।११	४८३	२२४।५	३००*	इसी का नामातर कोई लद्मण मानते हैं वा नद्रावत। इस का राज्यकाल ग्र थ मे तीन सौ वर्ष लिखने से अनुमान होता है कि इसके पीछे के कुछ राजाओं के नाम छूट गए हैं। चोलराज की बेटी ब्याही। मुसल्मानों ने लिखा है कि महात्मा मुहम्मद इसी के समय मे उत्पन्न हुए थे और इस को राज्य करते जब २५८ वर्ष बीते थे तब वह मक्के से मदीने गए अर्थात् सन् हिजरी आरभ हुआ।
८८	रणादित्य	३६१७।११।१३	२१७।११	४९०	२३७।५	४२	
८९	विक्रमादित्य	३६५९।११।१३	५१७।११	५५६।५	५३७।५	३७	
९०	बालादित्य*	३६९६।११।१३	५५९।११	५७६।६	५७९।५	३६	गोनर्दवश का अतिम राजा, मुसल्मानो का जयानद। मुसल्मान लेखकों ने लिखा है कि उपलास नामक एक बडा पडित इसके समय मे हुआ। इस के पास पच्चीस हजार खासे के घोड़े और तीन लाख सवार और रात को प्रकाश करने वाले लाल थे। मुसल्मानों के अनुसार पहले इसका बेटा चद्रानद, फिर उसका भाई रवाजीत, फिर उस से छोटा अलतादित गद्दी पर बैठा।
९१	दुर्लभवर्धन	३७३२।११।१३	५९७।६	५९४।६	६१५।५	५०	नामातर प्रज्ञादित्य। कर्कोटक वंश का। यजदिर्जिद (Yezdejerd) का समकालीन।

* नरेंद्रादित्य तथा रणादित्य के बीच के राजाओं के नाम अप्राप्त हैं और सबका सम्मिलित राज्यकाल तीन सौ वर्ष दिया है। (स०)

राजसख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङहम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
६२	प्रतापादित्य (२)	३७८२।११।१३	६३३।३	६३०।६	६५१।५	८।८	नामातर दुर्लभक ।
६३	चन्द्रापीड	३७६१।७।१३	६८३।३	६८०।६	७०१।५	४।०।२४	नामानर चद्रानद । बहुत धार्मिक था । इस के समय में भी क्षमाविक्रम नाम का कोई राजा था ।
६४	तारापीड	३७९५।८।७	६९१।११	६८९।२	७१०।१	२६।७।११	मुमलमानों का खराजीत ।
६५	ललितादित्य	३८२१।३।१८	६९५।११	६९३।२	७१४।१	१।०।१५	चमार की एक झोपडी मदिर मे पडती थी । वह नही देता था । राजा ने स्वय उसको राजी किया । कन्नौज के यशोवर्म से लडा । खता और खतन तथा बुखारा गुजरात, तिब्बत,बगाल तक जीता । बडा प्रतापी था । पृथ्वी में से राम लक्ष्मण की मूर्ति मिली,उनकी प्रतिष्ठा की । सनद और सुलहनामा लिखने की चाल थी । शाहि शब्द सर्दारवाचक था । भवभूति महाकवि इसी के समय में था । इस समय मे देवताओ के भीतर द्रव्य भी रहता था । राजा लोग जैन मतवालों का भी आदर करते थे ।
६६	कुवलयापीड	३८२३।४।३	७३२।७	७२९।९	७५०।८	७	मुसल्मानों से गुलाम बेचने की चाल सीखी । मुसल्मानों ने ललितादित्य का बेटा रमा वा रणानद, उस का पुत्र सगरानद या शकानद राजा हुआ, यह क्रम लिखा है

							और इस के पीछे ललितादित्य का छोटा लडका प्रहस्त गद्दी पर बैठा। ३१ वर्ष इन तीनों ने राज्य किया। इस के पीछे विजयानद ४ वर्ष राजा रहा, फिर ३ वर्ष सगरानद का बेटा रतिकाम राजा रहा और फिर २ वर्ष असदानद राजा हुआ। करकोटक वंश का यह अंतिम राजा था। इस वंश मे २००० वर्ष ५ महीना २० दिन राज्य रहा और जब यह वंश समाप्त हुआ तब हिजरी सन् २०६ था।
९७	वज्रादित्य*	३८३०।४ ३	७३३।७	७३०।६	७५१।८	४।१	
९८	पृथिव्यापीड	३८३४।५।३	७४०।७	७३७।११	७५८ ८	०।०७	
९९	संग्रामापीड	३८३४।५।१०	७४४।८	७४१ ११	७६२।१०	३	
१००	जज*	३८३७।५।१०	७५१।८	७४८।११	७६६।१०	३१	जज जयापीड का साला था। जब जयापीड परदेश गया तब वह राज्य पर बैठ गया।
१०१	जयापीड	३८६८।५।१०	७५४।८	७५१।११	७७२।१०	१२	गौरदेश के जयत राजा की बेटी ब्याही। गुजरात के राजा भीमसेन को जीता। विद्या का प्रचार किया। (८४१) महाभाष्य की पुस्तक मँगाई। क्षीर और उद्भट पंडित तथा मनोरथ, शखदत्त, चटक, सधिमान और वामन इत्यादि इस की सभा के कवि थे। द्वारका नगर बसाया और मूर्ति स्थापना की। ताँबे के दीनार अपने नाम के चलाए। उस समय नैपाल का राजा अरमूडि था। शंभुकवि ने भुवनाभ्युदय नामक काव्य मम्म और उत्पल की लडाई का बनाया। इस का नामांतर विजयादित्य था। लोग गजों मे टिकते थे।
१०२	ललितापीड	३८८०।५।१०	७८५।८	७८२।११	८०३।१०	७	

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिंहम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
१०३	सग्रामा-पीड (२)	३८८७।५।१०	७६७।८	७६४।११	८१५।१०	१२	नामांतर पृथिव्यापीड ।
१०४	वृहस्पति*	३८६६।५।१०	८०४।८	८०१।११	८२२।१०	३६	नामांतर चिप्पटजय । वेश्यापुत्र था । इसके पॉच भाइयों ने इस के नाम से राज चलाया ।
१०५	अजितापीड	३६३५।५।१०	८१६।८	८१३।११	८३४।१०	३	इन्हीं लोगों ने राज्य पर बैठाया ।
१०६	अनगापीड	३६३८।५।१०	८५२।८	८४६।११	८७०।१०	३१	
१०७	उत्पालपीड*	३६६६।५।१०	८५५।८	८५२।११	८७३।१०	२७	कर्कोटकवश का अंतिम राजा ।
१०८	आदित्यवर्मा	३६६६।५।१०	८५७।८	८५४।११	८७५।१०	१८	नामांतर अवंतिवर्मा । बडा काल पडा । बहुत से इतिहासवेत्ताओं का निश्चय है कि जालधर के यादव राजाओं से इस का वश निकला है । मुसल्मानों ने लिखा है कि यह सखतवर्मा (शक्तिवर्मा) का पुत्र था और अपने रिश्तेदार शिववर्मा मत्री की सहायता से गद्दी पर बैठा । इस का राज्य अट्ठाईस बरस तीन महीना तीन दिन ।
१०९	शकरवर्मा	४०१४।५।१०	८८६।८	८८३।१२	९०४।११	२	गुर्ज्जर और भोज से लडा । बडा उद्धत था । नामांतर श्रीवर्मा या शिववर्मा । मु० राज्यकाल १७ बरस ७ महीना १६ दिन ।

११०	गोपालवर्मा	४०१६।५।१०	६०४।८	६०१।१०	६२२।६	०।०।२०	जवानी में मारा गया। इस का मत्री प्रभाकरदेव बडा लोभी था। इसने अपने जामाता लकुज को शाहराज की पदवी देकर बड़े पद पर पहुँचाया किंतु यही पीछे से राजा मत्री दोनों की मृत्यु का कारण हुआ।
१११	सकटवर्मा*	४०१६।६।०	६०६।८	६०३।१०	६२४।६	२	वर्मवश का अतिम राजा। मुसल्मानों के मत के अनुसार यह गोपालवर्मा का वास्तविक भाई नहीं था, मुँहबोला भाई था।
११२	सुगधारानी	४०१८।६	६०६।६	६०३।१०	६२४।६	१०	पार्थ को राज्य पर बैठाया। शकरवर्मा की स्त्री थी।
११३	पार्थ	४०२८।६	६०८।८	६०५।१०	६२६।६	८	तातारी और एकाग जाति ने उपद्रव किया। निर्जितवर्मा का पुत्र था।
११४	निर्जितवर्मा	४०३६।६	६२४।६	६२०।१०	६४१।६	१४	पगु था।
११५	चक्रवर्मा	४०५०।६	६२५।६	६२१।१०	६४२।६	१	जातियुद्ध हुआ, राजचक्र मे बडा गडबड हुआ।
११६	सूरवर्मा या शूरवर्मा	४०५१।६	६२६।६	६२१।१०	६५२।६	५	मुसल्मानों का शिववर्मा।
११७	पार्थवर्मा	४०५६।६	६२७।६	६२२।१०	६५३।६	०	फिर से गद्दी पर बैठा।
११८	चक्रवर्मा	४०५६।६	६२८।६	६३३।४	६५४।३	०	फिर से बैठा।
११९	शकरवर्धन	४०५६।६	६३९।३	६३३।१०	६५४ ८	०	राजतरगिणी मे इस का नाम नही है। मुसल्मानों ने इस का नाम शकर दास लिखा है और लिखा है कि यह बडा ही क्रूर था।
१२०	चक्रवर्मा	४०५६।६	६३९।७	६३५।४	६५६।३	२	तीसरी बेर गद्दी पर बैठा।
१२१	उन्मत्तवर्मा	४०५८।६	६३९।११	६३६।८	६५७।७	१	अवतिवर्मा नामातर।
१२२	शूरवर्मा(२)*	४०५९।६	६४१।११	६३८।१०	६५९।८	६	
१२३	यशस्करदेव (तथा वर्णाद)	४०६८।६	६४२	६३९	६६०	०।६।०	इस के पीछे वर्णाट ने ६ दिन राज्य किया। प्रभाकरदेव का पुत्र था। बडा ही उत्तम राजा हुआ है। अत में

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
							फकीर हो गया। कहते है कि मम्मट इस समय में था। मुसल्मान लेखकों ने लिखा है कि सग्रामदेव का लडका अमान था। इस को इसकी मा ने मार डाला उस का पुत्र एक बरस राज कर के दादी के डर से फकीर हो गया। फिर तृभुवनगुप्त और बहमन (भीमगुप्त) गद्दी पर बैठे पर इन की दादी ने इन को मार डाला। फिर विग्रहदेव राजा हुआ। यह दिद्दा का भतीजा था। इस को भी नृसिहराय नामक दिद्दा के साधक वज़ीर ने मार डाला।
१२५	सग्रामदेव*	४०६६	०	६४८	६६६	१|४|०	पर्वगुप्त ने मार डाला।
१२६	पर्वगुप्त	४०७०|४	६५१	६४८	६६६	४|६	सुरेश्वरी क्षेत्र मे मारा गया।
१२७	क्षेमगुप्त	४०७४|१०	६५२	६५०	६७१	१३|१०	बौद्धों के बहुत से बिहार तोड डाले। किसी के मत से आठ बरस।
१२८	अभिमन्युगुप्त	४०८८|८	६६१	६५८	६७६	११|१	
१२९	नदिगुप्त	४०८६|६	६७५	६७२	६६३	४	इस की दादी दिद्दारानी ने इस को मार डाला।
१३०	त्रिभुवनगुप्त	४०६४|६	६७६	६७३	६६४	५	तथा।
१३२	भीमगुप्त	४०६६|६	६७८	६७५	६६६	२३	भुवाचार्य और पिचुल पडित इस की सभा में थे।

							कालिदास तथा श्रीहर्षादि कवि और एक विक्रम भी इसी के समय मे थे। अर्थात् इस समय से हर्ष के राज्यारंभ तक कवियों के उदय का काल था।
१३३ १३४	दिद्दा संग्रामदेव	४१२२।६ ४१४६।६	६८२ १००६।६	६८० १००३।६	१००१ १०२४,७	२४ ५२।४।७	पूर्वोक्त तीनो को मार कर राज पर बैठी। इस के काल मे हम्मीर नामक तुर्क ने चढाई की और हार पाई।
१३५	हरिराज और अनंतदेव	४१६६।१।७	०	१०२८	१०३२	८।१	सोमदेव ने बृहत्कथा मे अनंत का पिता संग्रामदेव लिखा। हरि ने २२ दिन मात्र राज्य किया था, फिर अनंत राजा हुआ। अनंत ने फौज के लोगो को एक बेर ६२ करोड काश्मीरी रुपया बाँटा था।
१३६	कलश	४२०७।२।७	०	१०८०	१०५४	०।०।२३	मुसल्मानो का गुलशन। बिल्हण ने अपने विक्रमांक चरित मे इस की बडी स्तुति लिखी है। इस की माता का नाम सुभटा और मामा का नाम लोहराखण्डल क्षितपति था। ये लोग वैष्णव उदार और पंडित थे।
१३८	उत्कर्ष और हर्ष*	४२०७।३	०	१०८८	१०६२	२०।४।२	बिल्हण ने इन का एक भाई विजयमल्ल नामक और लिखा है। सोमदेव ने बृहत्कथा इसी के समय मे बनाई। और लेखकों के मत से इस ने १२ वर्ष राज्य किया था। चालुक्य वंश मे एक विक्रम उस समय भी था। और लेखकों का मत है कि यह पिता पुत्र भाई सब एक काल मे जुदा जुदा राज्य बाँटकर करते थे। मुसल्मानों ने लिखा है कि १२०० मशालें नित्य इस की सभा मे बलती थी और बडा ही न्यायी था।
१३९	उदयन विक्रम*	४२१७।७,२	०	११००	१०६२	०	हर्ष से राज्य पाया। नामांतर उद्दाम विक्रम वा उच्चल। मुसल्मानो का वाजिल।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिंहम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
१४०	शखराज	४२१७।७।२	०	११००	१०५२	०।१।२०	उच्चल को मार कर राज पर बैठा । नामांतर रड्ड । इस को उच्चल के भाई सुस्सल ने मार डाला । मुसल्मानों ने इसका नाम द्वैन लिखा है ।
१४१	सल्ह	४२१७।८।२२	०	१११०	१००२।०	१६	इन राजाओं के समय में बड़ी लड़ाई हुई । मुसल्मानों ने इस का नाम असस और इस के भाई का नाम एजिल लिखा है ।
१४२	सुसल्ह	४२३३।८।२२	०	११११	१०७२	०।६।०	मल्लदेव का छोटा बेटा उच्चल का भाई ।
१४३	भिक्षाचर*	४२३४।२।२२	०	११२७	१०८८	२२	
१४४	जयसिंहदेव	४२५६।२।२२	०	११२७	१०८८	६।६	मुसल्मानो का जैनक । मुसल्मानो ने इस के राज्य का अंत ५३५ हिजरी में लिखा है । राजतरंगिणी बनी । शाके १०७० मे यहाँ तक पूरा हिसाब करने से गत कलि ईसवी हिजरी संवत् शाका सब दश पंद्रह बरस के हेर फेर मे ठीक हो जाते हैं ।
१४५	परमान	४२६५।८।२२	०	११४९	१११०	७	
१४६	वन्दिदेव	४२७२।८।२२	०	११५९	१११९	६	
१४७	वोप्यदेव	४२८१।८।२२	०	११६६	११२६	२५	

१४८	जस्सदेव	४३०६।८।२२	०	११७५	११३५	१४	वोप्यदेव का भाई था, खत्री था, किसी के मत से १८ बरस।
१४९	जगदेव	४३२०।८।२२	०	११९३	११७३	२३	
१५०	राजदेव	४३४३।८।२२	०	१२०८	११९७	१६	
१५१	संग्रामदेव	४३५९।८।२२	०	१२३१	११९०	२२।१	
१५२	रामदेव	४३८०।९।२२	०	१२४७	१२०६	३।६।२	
१५३	लक्ष्मणदेव*	४३८४।३।२४	०	१२६८	१२२७	१४।४	
१५४	सिंहदेव *	४३९८।७।२४	०	१२८१	१२६१	१९	
१५५	सिंहदेव*(२)	४४१७।७।२४	०	१२९२	१२७०	३।२	
१५६	श्रीरिंछण *	४४२०।९।२४	०	१३१८	१२९४	१६।१	ट्रायर के मत से नाम उदयदेव, भोटवश का।
१५७	कोटारानी	४४३६।१०।२४	०	१३३४	२२९४	३।५।०	रिंछन सुलतान के काल में द्वितीय कालस्वरूप दुल्लच नामक मुगल ने (जो न मुसल्मान था न हिंदू) कश्मीर में प्रवेश करके वहाँ के नगर, मदिर, अट्टालिका, बगीचा सब निर्मूल कर दिया और मनुष्यों को घास की भाँति काट कर देश उजाड कर दिया। मानों आर्यों का राज्य नाश होता है यह समझ कर ईश्वर ने कश्मीर की प्राचीन शोभा ही शेष नहीं रक्खी। फिर कोटारानी के साथ उसके पालित दास शाहमीर ने विश्वासघात और कृतघ्नता करके अपने को राजा बनाया और कोटा से विवाह करने को बिचारी को तग किया। पहले कोटा भागी किंतु पकड आने पर ब्याह करना स्वीकार किया। ब्याह की मह-

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	टृायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
							फिल सजी गई। जब दुलहिन शृगार करके निकाह पढाने आई, साथ मे कटार छिपाकर लाई। ठीक विवाह के समय कटार पेट में मारकर मर गई। अत समय कहा 'ले विश्वासघातक जिस शरीर को तू चाहता है यह तेरे सामने है !!! हिदुओं का राज्य इसी के साथ समाप्त हुआ। कुछ कम चार हजार बरस आर्य लोगों ने कश्मीर का भोग किया।
१५८	शाहमीर	४४४१।०।२४	०	१३३४।६।१०	०	३।११	नामांतर शमसुद्दीन।
१५९	जमशैद	४४४२।११।२४		१३३७।५		१२	
१६०	अलाउद्दीन	४४५४।११।२४		१३३९।४		१८	
१६१	शहाबुद्दीन	४४७२।११।२४		१३५२।०।२३		१६	
१६२	कुतुबुद्दीन	४४८८।११।२४		१३७०।०।२३		२४	
१६३	सिकंदर	४५१२।११।२४		१३८६।०।२३		७	तैमूर का आना। यह ऐसा कट्टर मुसलमान था कि केवल कश्मीर के प्राचीन मदिर ही नहीं तोड़े, अपने सारे कश्मीर मडल में सस्कृत के जितने ग्रथ मिले सब को दीवार की नेव में डाल दिया !!! हा! आज वे ग्रथ होते तो न जाने क्या क्या बात हमलोग जानते।

१६४	अलीशाह	४५१६।११।२४	०	१४१०।०।२३	०	५०	फकीर हो कर मक्के चला गया। कोई कहता है कि जैनुलाबदीन की कैद में मरा।
१६५	जैनुलाबदीन	४५६६।११।२४		१४१७।०।२३		२	नामातर बड्डशाह वा शाही खाँ। पचाइत की अदालत (Local Self-Government) जारी किया।
१६६	हैदरशाह	४५७१।११।२४		१४६७।०।२३		१२	बडा विषयी था। दीवार के नीचे दब कर मर गया।
१६७	हसन	४५८३।११।२४		१४६६।०।२३		२	बडा विषयी था।
१६८	मुहम्मद	४५८५।११।१४		१४८१।०।२८		११	
१६९	फतहशाह	४५९६।११।१४		१४८३।७।२८		३१	
१७०	मुहम्मद(२बेर)	४६२७।११।२४		१४९१।७।२८		२२	
१७१	फतह (२बेर)	४६४९।११।२४		१५१३।५।७		१	
१७२	मुहम्मद(३बेर)	४६५०।११।२४		१५१४।५।७		३	
१७३	फतह (३बेर)	४६५३।११।२४		१५१७।५।७		३	
१७४	मुहम्मद(४बेर)	४६५६।११।२४		१५२०।५।७		७	
१७५	नाजुकशाह	४६६४		१५२७।५।७		३	
१७६	मुहम्मद(५बेर)	४६६७		१५३०।५।७		७	
१७७	नाजुकशाह(२बेर)	४६७४		१५३७,५।७		४	शम्सुद्दीन, इस्माइलशाह, इबराहीमशाह, हबीबशाह, अलीशाह और गाज़ीशाह इतने बादशाहों के नाम यहाँ भिन्न भिन्न तवारीखों मे और मिलते हैं।
१७८	मिरज़ाहैदर	४६७८		१५४१।५।७		०	शीओं को बडी दुर्दशा से मारा। नाजुकशाह के नाम से राज्य करता रहा।
१७९	हुमायूँ	४६७८		०		११	बीच मे हुमायूँ के समय से उस के मरने तक कामराँ का काश्मीर में आना और उपद्रव करना और अनेक उपद्रवों में २५ या ३० वर्ष काल नष्ट हुआ।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
१८०	गाज़ीशाह	४६८९				६	मुसल्मानों के मत से नौ बरस, राजावली में ६ वर्ष। और लोगों का राज्य स्फुट रहा ऐसा लिखा है।
१८१	हुसैनशाह	४६९५				९	
१८२	अलीखाँ आदिल-शाह	४७०४				१	
१८३	युसुफ़शाह *	४७०५				१	
१८४	सैयदमुबारकखाँ	४७०६				०।२	
१८५	लोहरशाह	४७०६				३	राजावली मे लोहर के पुत्र याकूब का राज्य एक वर्ष लिखा है।
१८६	युसुफ़शाह (२ बेर)	४७०९				१	
१८७	याकूबशाह	४७१०				०	राजा भगवानदास से लड कर अपने नाम का सिक्का जारी किया।
१८८	हुसैनशाह *	४७१०				०	
१८९	शमसी चक*	४७११				१९	
१९०	अकबर	४७३०				२२	१५८३ में अकबर ने कश्मीर लिया। इस प्रसिद्ध और बुद्धिमान बादशाह की कहानी संसार मे प्रसिद्ध है।

१९१	जहाँगीर	४७५२			२२	सन् १६०५ में तख्त पर बैठा, १६२७ ई० में मरा।
१९२	शाहजहाँ	४७७४			३१	१६२८ में तख्त पर बैठा, १६५६ में औरंगजेब ने कैद किया। १६६४ में मरा।
१९३	औरंगजेब	४८०५			४८	१७०७ में मरा।
१९४	मुअज़्ज़मबहादुर शाह शाहआलम	४८३६			५	औरंगजेब के पीछे मुसल्मानों का राज्य शिथिल हो गया इस से कई बादशाह हुए। सब नाम यथाक्रम लिए जाँय तो पहले आज़िम, फिर मुअज्जम, जहाँदारशाह फर्रुखसियर, रफीउल्दरजात, रफीउल्दौलत, निकोसियर, मुहम्मदशाह, इबराहीमशाह, अहमदशाह, आलमगीर-सानी, शाहजहाँ, शाहआलम, बेदारबख्त, अकबरसानी और बहादुरशाह ये नाम होंगे।
१९५	जहाँदारशाह	४८३७			१	
१९६	फ़र्रुखसियर	४८४३			६	
१९७	मुहम्मदशाह*	४८६३			२०	१७१९ में तख्त पर बैठा।*
१९८	नादिरशाह*	४८७८			१५†	सन् ११५१ हिजरी में नादिरशाह का खुतबा कश्मीर में पढ़ा गया। किंतु नादिर के मरने पर कश्मीर फिर कुछ दिन गड़बड़ में रहा। ११६१ हिजरी में अहमद शाह के वजीर असमतुद्दीन खाँ ने चढ़ाई की थी पर हार गया।
१९९	अहमदशाह*	४८७९			१	११६६ हिजरी में पूरी तरह कश्मीर अहमद के अधिकार में आया।

* सन् १७३९ ई० में नादिरशाह आया था इसी से बीस वर्ष दिया गया है, यद्यपि मुहम्मदशाह सन् १७४८ ई० तक दिल्ली का सम्राट था।

† नादिरशाह सन् १७४७ ई० में मर गया था अतः उसका राज्यकाल पद्रह वर्ष है पर यह अहमदशाह के आरंभ तक का है। (स०)

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिंहम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
२००	राजासुखजीवन*	४८८७				८	इसने बागी होकर आठ वर्ष चार महीने राज्य किया।
२०१	अहमदशाह (२बेर)	४८९६				६	११७५ हिजरी में फिर अहमदशाह की सेना ने जीता। महानद पंडित और कैलाश पंडित नामक इसके दीवानों ने प्रबंध किया। ११७९ में बड़ी बड़ी लड़ाई हुई।
२०२	तैमूरशाह*	४९२०				२०	११८४ में गद्दी पर बैठा। ३ महीने बड़ा भूकंप हुआ। पहले वजीर ने बड़ा उपद्रव किया, बहुत से लोग जल में डुबा दिये। तब पंडित दिलाराम नामक बड़ा बुद्धिमान यहाँ का सूबा हुआ। यह बड़ा बुद्धिमान था। अंत में पहले वज़ीर के बेटे को फिर सूबेदारी मिली और इस ने भी बाप की भाँति महा अनर्थ किया।
२०३	ज़माँशाह	४९४६				२६	१२०८ हिजरी में गद्दी पर बैठा। दीवान नंदराम कश्मीर का सूबेदार हुआ।
२०४	सुलतानमहमूद					०,	इन दोनों के काल का विशेष वृत्त नहीं ज्ञात हुआ।

							जमाँशाह के २६ वर्ष में इन दोनों का भी समय समझना चाहिये।*
२०५	शाहशुजा *					०	महाराज रणजीतसिंह ने कोहनूर हीरा इसी से लिया था।
२०६	महाराजरणजीत सिंह	४९४६				२१	१२३४ हिजरी अर्थात् १८१८ ईस्वी १८७५ सवत् में कश्मीर जीना। कश्मीर जीतने की तारीख। बोलो जी वाह गुरूजी का खालसा, बोलोजी वाह गुरूजी की फतेह।
२०७	महाराजखड्ग सिंह	४९४७				१|४	१८९६ सवत् में महाराजा रणजीतसिंह मरे और ये राज पर बैठे।
२०८	कुँअरनौनिहाल सिंह	४९४७				०|०|१	ये अपने पिता की क्रिया करके आये उसी समय पत्थर के नीचे दबकर मर गये।
२०९	महाराजशेरसिंह	४९५०				३	इनको सिंधावालों ने मार डाला।
२१०	महाराजदलीप सिंह	४९५२				२	बालक अवस्था में नाममात्र को राजा थे। अब विलायत मे पेनशिन पाते हैं।
२११	राजराजेश्वरी विक्टोरिया *	४९५२				०|०|७	सन् १८४६ ईस्वी संवत् १९०२ मे सर्कार ने पजाब जीता। सात दिन मात्र कश्मीर सर्कार के अधिकार में रहा।
२१२	महाराजगुलाब सिंह	४९६३				११	१८४६ ईस्वी के १६ मार्च को सर्कार से कश्मीर इन्होंने

* तैमूरशाह (सन् १७७३-९३), जमाँशाह (सन् १७९३-१८०० ई०) और सन् १८१८ ई० में रणजीतसिंह के कश्मीर विजय करने तक महमूद, दोस्त महम्मद और शुजा का समय है। (स०)

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिंहम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन
							पाया ।❀
२१३	महाराजरणवीर सिंह †	४६७०					संवत् १९१४ में महाराज गुलाबसिंह के मरने पर ये राजा हुए अब कश्मीर का रकबा २५००० और आमदनी ५०००० समझी जाती है।

❀ सन् १८३९ ई० मे रणजीत सिंह की मृत्यु हुई और सात वर्ष बाद गुलाब सिंह राजा हुए। (स०)

† महाराज रणवीर सिंह ने सन् १८५७ से १८८५ तक तथा महाराज प्रतापसिंह ने सन् १९२५ ई० तक राज्य किया। वर्तमान नरेश महाराज हरीसिंह बहादुर हैं। गतकलि वर्ष देने मे कहीं कहीं अशुद्धि हुई है क्योंकि वर्तमान गतकलि वर्ष ५०४७ है। (स०)

बादशाहदर्पण

अर्थात्

[हिन्दुस्तान के मुसल्मान बादशाहों के समय और जन्म
आदिक मुख्य बातों के वर्णन का चक्र]

सं० १९४१

प्रथम वार सन् १८८४ ई० में द मेडिकल हॉल प्रेस में कार्टो साइज़ में छपा। उसी वर्ष के अगस्त में शुभचिंतक पत्र में समालोचना निकली।

भूमिका

रामायण मे भगवान् बाल्मीकिजी ने कहा है जो वस्तु हुई हैं नाश होंगी, जो खड़ी हैं गिरैंगी, जो मिले हैं बिछुड़ैंगे, और जो जीते हैं अवश्य मरैंगे। सच है इस जगत की गति पहिए की आर की भाँति है। जो आर अभी ऊपर थी नीचे गई और जो नीचे थी ऊपर हो गई। आधीरात को सूर्य का वह प्रचंड तेज कहाँ है जो दोपहर को था ? दिन को ठढी किरनो से जी हरा करने वाला चद्रमा कहाँ है ? संसार की यही गति है। जो भारतवर्ष किसी समय में सारी पृथ्वी का मुकुटमणि था, जिस की आन सारा ससार मानता था और जो विद्या वीरता और लक्ष्मी का एक मात्र विश्राम था वह आज हीन दीन हो रहा है—यह भी काल का एक चरित्र है।

जब से यहाँ का स्वाधीनता सूर्य अस्त हुआ उस के पूर्व समय का उत्तम शृंखलाबद्ध कोई इतिहास नहीं है। मुसल्मान लेखको ने जो इतिहास लिखे भी हैं उनमे आर्यकीर्त्ति का लोप कर दिया है। आशा है कि कोई माई का लाल ऐसा भी होगा जो बहुत सा परिश्रम स्वीकार कर के एक बेर अपने 'बाप दादो' का पूरा इतिहास लिख कर उन की कीर्त्ति चिरस्थायी करैगा।

इस ग्रथ में तो केवल उन्हीं लोगों का चरित्र है जिन्होने हम लोगो को गुलाम बनाना आरभ किया। इस मे उन मस्त हाथियो के छोटे छोटे चित्र हैं जिन्हो ने भारत के लहलहाते हुए कमलवन को उजाड़ कर पैर से कुचल कर छिन्न भिन्न कर दिया। मुहम्मद, महमूद, अलाउद्दीन, अकबर और औरगज़ेब आदि इन मे मुख्य हैं।

प्यारे भोले भाले हिंदू भाइयो ! अकबर का नाम सुन कर आप लोग चौंकिए मत। यह ऐसा बुद्धिमान शत्रु था कि उस की बुद्धि बल से आज तक आप लोग उस को मित्र समझते हैं। किंतु ऐसा है नहीं। उस की नीति (Policy) अँगरेजो की भाँति गूढ थी। मूर्ख औरगज़ेब

उस को समझा नहीं, नहीं तो आज दिन हिंदुस्तान मुसल्मान होता। हिंदू-मुसल्मान मे खाना पीना व्याह शादी कभी चल गई होती। अँगरेजो को भी जो बात नहीं सूझी वह इस को सूझी थी।

यद्यपि उस उर्दू शैर के अनुसार 'बागबॉ आया गुलिस्तॉ मे कि सैयाद आया। जो कोई आया मेरी जान को जल्लाद आया।' क्या मुसल्मान क्या अँगरेज भारतवर्ष को सभी ने जीता, किंतु इन मे उनमे तब भी बड़ा प्रभेद है। मुसल्मानो के काल मे शत सहस्र बड़े बड़े दोष थे किंतु दो गुण थे। प्रथम तो यह कि उन सबोने अपना घर यहीं बनाया था इस से यहॉ की लक्ष्मी यहीं रहती थी। दूसरे बीच बीच में जब कोई आग्रही मुसल्मान बादशाह उत्पन्न होते थे तो हिंदुओ का रक्त भी उष्ण हो जाता था इस से वीरता का संस्कार शेष चला आता था। किसी ने सच कहा कि मुसल्मानी राज्य हैजे का रोग है और अँगरेजी क्षयी का। इन की शासनप्रणाली मे हम लागो का धन और वीरता निःशेष होती जाती है। बीच मे जाति-पक्षपात, मुसल्मानो पर विशेष दृष्टि आदि देख कर लोगो का जी और भी उदास होता है। यद्यपि लिबरल दल से हमलोगो ने बहुत सी आशा बॉध रक्खी है पर वह आशा ऐसी है जैसे रोग असाध्य हो जाने पर विषवटी की आशा। जो कुछ हो, मुसल्मानो की भॉति इन्हो ने हमारी ऑख के सामने हमारी देवमूर्त्तियॉ नहीं तोड़ीं और स्त्रियो को बलात्कार से छीन नहीं लिया, न घास की भॉंति सिर काटे गए और न जबरदस्ती मुँह मे थूक कर मुसल्मान किए गये। अभागे भारत को यही बहुत है। विशेषकर अँगरेजो से हम लोगो को जैसी शुभ शिक्षा मिली है उस के हम इन के ऋणी है। भारत कृतघ्न नहीं है। यह सदा मुक्तकठ से स्वीकार करैगा कि अँगरेजो ने मुसल्मानो के कठिन दंड से हमको छुड़ाया और यद्यपि अनेक प्रकार से हमारा धन ले गए किंतु पेट भरने को भीख मॉगने की विद्या भी सिखा गए।

मेरे प्रमातामह राय गिरधरलाल साहब, जो यावनी विद्या के बड़े भारी पंडित और काशीस्थ दिल्ली के शहजादो के मुख्य दीवान थे, उन की इच्छा से दिल्ली के प्रसिद्ध विद्वान सैयद अहमद ने एक ऐसा चक्र

बनाया था, जिस मे तैमूर से लेकर शाहआलम तक सब बादशाहो के नाम आदि लिखे थे। उस फारसी ग्रथ से इस मे बहुत सी बाते ली गई हैं, इस कारण तैमूर के पूर्व के बादशाहो का वर्णन इतना पूरा नहीं है जितना तैमूर के पीछे है। फिर मेरे मातामह राय खिरोधरलाल ने बहादुरशाह के काल के आरभ तक शेष वृत्त संग्रह किया। और और बाते और स्थानो से एकत्र की गई हैं। इस मे परपरागत बहुत से बादशाहो के नाम हैं जो और इतिहासों मे नहीं मिलते।

यद्यपि इस से कुछ विशेष उपकार नहीं है किंतु हम लोगो का इस से बहुत सा कौतूहल शात होगा जब हमलोग इस मे बादशाहो की माता आदि के नाम जो अन्य इतिहासो मे नही है, पढेगे।

नंबर	नाम बादशाहों का	बाप का नाम	जाति	राज्य पाने का समय	अवस्था	मरनेका समय	मृत्यु का कारण	विवरण
१	कुतुबुद्दीन ऐबक	०	गोरी बादशाहों का दास	१२०६	बूढा होकर मरा	१२१०	घोड़े से गिर कर	पहले शहाबुद्दीन मुहम्मदगोरी का गुलाम था । सन् ११९३ में जब पृथ्वीराज से दिल्ली ली तब मुहम्मद इसी को यहाँ का राज दे गया । यही गुलाम हिंदुओ की गुलामी का मूल है । (सन् १२०६ मे मुहम्मद मरा । स०)
२	आरामशाह	कुतुबुद्दीन	०	१२१०	नहीं मालूम	०	०	साल भर तख्त पर नहीं रहा कि शमसुद्दीन अलतिमश ने उतार दिया ।
३	शमशुद्दीन अलतिमश	०	०	१२१०	०	१२३६	स्वाभाविक	बहुत देश जीते । चंगेजखाँ इसी के काल मे आया ।
४	रुकनुद्दीन फीरोजशाह	शमसुद्दीन अलतिमश	०	१२३६	०	०	०	सातही महीने तख्त पर रहा । बडा विषयी और निकम्मा था ।
५	रजिया बेगम	तथा	०	१२३६	०	१२३९	मारी गई	बडी सावधान थी । हबशी गुलाम पर विशेष कृपा करने के कारण लोगोंने मार डाला ।
६	मुईजुद्दीन बहराम	तथा	०	१२३९	०	१२४१	कैद में मरा	बडा मूर्ख था ।
७	अलाउद्दीन मसऊद	फीरोज़शाह	०	१२४१	०	१२४६	मारा गया	

८	नासिरुद्दीन महमूद	अलतिमश	०	१२४६	बूढा होकर मरा	१२६६	स्वाभाविक	बहुत अच्छे स्वभाव का था।
९	गयासुद्दीन बलबन	०	०	१२६६	८० वर्ष	१२८८	०	महमूद का बहनोई था।
१०	मुईजुद्दीन कैकुबाद*	कुराखाँ (बलबन का बेटा	०	१२८६	२० वर्ष	१२८८	मारा गया	मूर्ख था।
११	जलालुद्दीन फीरोज-खिलजी	०	खिलजी पठान	१२८८	बूढा	१२९५	तथा	सीधा था।
१२	अलाउद्दीन	जलालुद्दीन का भतीजा	तथा	१२९५	अधेड	१३१६	स्वाभाविक	बडा दुष्ट था। पहले अपने बूढे चाचा को मरवाया फिर अनेक पाप किए। चित्तौर, रणथम्भौर, प्रथम विश्वनाथ का मन्दिरादि इसी चाडाल ने तोडा। बडा ही क्रूर और उपद्रवी था।
१३	कुतुबुद्दीन मुबारक-शाह †	अलाउद्दीन	तथा	१३१६	०	१३२१	हिंदू गुलाम के हाथ मारा गया	बाप की भाँति गोत्रहता और क्रूर था। विशेषता यह थी कि आप विषयी और नीच भी थे। इसके पीछे चार महीने इसके गुलाम खुसरो खाँ ने सिक्का चलाया।
१४	गयासुद्दीन	०	तुगलक	१३२१	०	१३२५	काठकेमकानके नीचेदबकरमरा	अच्छा था।

* प्रथम दस सुलतान् दास वंश के थे। (स०)

† यहाँ तक खिलजी वंश दिल्ली का सुलतान रहा। (स०)

मुसल्मान-राज्यत्व का संक्षिप्त इतिहास

—✽—

सन् ५७० मे महम्मद का जन्म हुआ। ४० वर्ष की अवस्था मे उन्हो ने मुसल्मान धर्म का प्रचार किया। सन् ६३२ मे इनकी मृत्यु हुई। इन के उत्तराधिकारियो मे वलीद खलीफा ने अपने भतीजा कासिम को ६००० फौज के साथ सिधु देश जय करने को भेजा। सिधु का राजा दाहिर युद्ध मे मारा गया और इस की दो बेटियो के कौशल से कासिम को भी वलीद ने मार डाला।

सन् ८१२ मे मामू ने हिंदुस्तान पर फिर चढ़ाई किया किंतु चित्तौर के राजा खुमान ने २४ बेर युद्ध कर के उस को भगा दिया।

बुखारा के पॉचवे बादशाह अब्दुल्मालिक का अलप्तगीन नामक एक गुलाम था जो मालिक के मरने पर बादशाह हुआ। सुबुक्तगीन इस का एक दास था। स्वामीपुत्र के मरने पर यही खुरासान का राजा हुआ और गजनी को अपनी राजधानी बनाया। सन् ६७० मे इसने हिंदुस्थान पर चढाई किया और लाहौर के राजा जैपाल को जीता। सन् ६६६ मे उस के मरने के पीछे अपने भाई को कैद कर के सुलतान महमूद बादशाह हुआ। सन् १००१ मे महमूद ने हिंदुस्थान पर चढ़ाई किया और अपने पुराने शत्रु जैपाल को कैद कर लिया। सन् १००४ मे भटनेर के राजा को जीतने को महमूद की दूसरी चढाई हुई। मुलतान

के गवर्नर अबुल्फतह लोदी को जीतने को वह तीसरी बेर हिंदुस्तान मे आया (१००५ ई०)। चौथी चढ़ाई उस ने जयपाल के पुत्र आनद-पाल के जीतने को की। आनदपाल भी असख्य हिंदू सैन्य ले कर उस से भिड़ा, किंतु ठीक युद्ध के समय उस के हाथी के बिचलने से वह लड़ाई भी महमूद जीता और नगरकोट लूट कर भारतवर्ष की अनत लक्ष्मी ले गया। इसमे २० मन तो केवल जवाहिर था (१००८ ई०)। अबुल्फतह के बागी होने से मुलतान पर उस की पाँचवीं चढाई हुई (१०१०)। छठीं बेर उस ने थानेश्वर लूटा (सन् १०११)। सातवीं और आठवीं चढाई इस ने सन् १०१३ और १०१४ मे कश्मीर पर किया, किंतु वहाँ के राजा सग्रामदेव ने इस को हटा दिया। नवीं बार यह सन् १०१७ मे बड़ी धूम से कन्नौज पर चढ़ा, किंतु कन्नौज के राजा के दासत्व स्वीकार करने से मथुरा नाश करता हुआ लौट गया। १० वी चढाई इस की सन् १०२२ मे कालिंजर पर हुई और उसी बरस ११ वी चढ़ाई इस की फिर लाहौर पर हुई। १२ वी बेर गुजरात पर चढ़ाई कर के सन् १०२४ मे सोमनाथ का प्रसिद्ध मदिर तोड़ा। इस के पीछे वह हिंदुस्तान मे नहीं आया और सन् १०३० मे मर गया। इस के वंश वालो का हिंदुस्तान मे केवल पजाब पर कुछ अधिकार रहा।

गज़नी राज्य निर्बल होने पर जगतदाहक अलाउद्दीन गोरी ने गज़नी के अंतिम राजा बहराम को मार कर अपने को बादशाह बनाया और कुछ दिन पीछे उस के भतीजे शहाबुद्दीन महम्मद गोरी ने बहराम के पोते को मार कर गज़नी के राज्य का नाम भी शेष नही रक्खा। यही महम्मद हिंदुस्थान में मुसल्मानो के राज्य का मूल है। इस ने सन् ११७६ से लेकर १६ बरस तक कई बेर हिंदुस्थान पर चढ़ाई किया किंतु कुछ फल नही हुआ। कन्नौज के राजा जयचद के बहकाने से इस ने सन् ११९१ मे दिल्ली के चौहान राजा पृथ्वीराज पर बड़ी धूम से चढ़ाई किया था, किंतु तरौरी नामक स्थान मे घोर युद्ध के पीछे पृथ्वीराज से हारकर वह अपने देश को लौट गया। सन् ११९३ में यह बड़ी धूम और कौशल से फिर दिल्ली पर चढ़ा। हिंदुओ की सैना भी बड़ी धूम से इस के मुकाबिले को बाहर निकली। चित्तौर के समर सिंह इस सेना के सेनापति थे। युद्ध के डेरे पड़ने पर सुलह की बातचीत होने

लगी। शहाबुद्दीन ने कहा हम ने अपने भाई को सब वृत्तांत लिखा है, उत्तर आने तक लड़ाई बंद रहै। हिंदू सेना इस बात पर विश्वास कर के शिथिल हो गई थी कि धोखा देकर एकाएक शहाबुद्दीन ने लड़ाई आरंभ की। बहुत से हिंदू वीर मारे गए। समरसिंह भी वीर गति को गए। पृथ्वीराज और उन के कवि चंद को कैद कर के गज़नी भेज दिया। कहते हैं कि शब्दभेदी बान से अंधे होने की अवस्था में एक दिन पृथ्वीराज ने शहाबुद्दीन के भाई गयासुद्दीन का प्राण विनाश किया और उसी समय पूर्व संकेतानुसार चंद्र कवि ने उन को मारा और उन्हों ने चंद * को। भारतवर्ष से हिंदुओं के स्वाधीनता का सूर्य सदा के हेतु अस्त हो गया। पीछे शहाबुद्दीन ने कन्नौज का राज भी ले लिया और बनारस को भी ध्वंस किया।

भाई के मरने पर शहाबुद्दीन सन् १२०२ में पूरा बादशाह हुआ, किंतु आठ बरस भी राज्य करने नहीं पाया था कि बदमाशों के हाथ से (१२१०) मारा गया। उस समय हिंदुस्तान उस के दास कुतुबुद्दीन ऐबक के हाथ में था क्योंकि इसी को वह यहाँ का प्रबंध सौंप गया था। यों भारतवर्ष के राजेश्वरों का राज्य एक दास के अधीन हुआ।

कुतुबुद्दीन ऐबक को शहाबुद्दीन के भतीजे महमूद गोरी ने बादशाह का खिताब भेज दिया और तब से हिंदुस्तान का राज्य निष्कंटक इस के अधिकार में आया। चार बरस राज्य कर के यह मर गया। इस का पुत्र आरामशाह साल भर भी राज्य करने न पाया था कि इस के बहनोई शम्सुद्दीन ने जो पहिले एक गुलाम था इस को सिंहासन से उतार मुकुट अपने सिर पर रक्खा। इस के समय में बंगाला, मुलतान, कच्छ, सिंधु, कन्नौज, विहार, मालवा और ग्वालियर तक दिल्ली के राज्य में मिल चुका था। इस के मरने के पीछे इस का बेटा रुकुनुद्दीन फीरोज बादशाह हुआ किंतु यह ऐसा नष्ट था कि इस को उतार कर लोगों ने इस की बहिन रजिया बेगम को बादशाह बनाया। साढ़े तीन बरस

* चंद की उक्ति='अब की चढी कमान को जानै फिरि कब चढै।
जिनि चुक्कै चौहान इक्कै मारय इक्क सर॥'

राज्य कर के बलवाइयो के हाथ से यह मारी गई। इस का भाई मुइजुद्दीन बहराम दो बरस दो महीना बादशाह रहा फिर लोगा ने इस को कैद कर के इस के भतीजे अलाउद्दीन मसऊद को बादशाह बनाया। किंतु चार बरस बाद यह भी मारा गया और इस का चाचा नसीरुद्दीन महमूद बादशाह हुआ। अल्तिमश का दास और दामाद बलबन इस के समय मे मंत्री था और इस ने नरवर और चंदेरी का किला तथा गजनी का राज्य जय किया था। सन् १२६६ मे नसीर के मरने पर बलबन बादशाह हुआ और बीस बरस राज्य कर के ८० बरस की अवस्था मे मर गया। इसका पोता कैकुबाद राजा हुआ किंतु यह ऐसा विषयी था कि दो बरस भी राज्य न करने पाया कि लोगो ने इस को मार डाला और दिल्ली का राज्य गुलामो के वश से निकल कर खिलजियो के हाथ मे आया।

पजाब से आकर सत्तर वर्ष की अवस्था मे जलालुद्दीन खिलजी तख्त पर बैठा। मालवा और उज्जैन उस के समय मे विजय हुए। इस के भतीजे अलाउद्दीन ने सन् १२९४ मे देवगढ भी जीत लिया। किंतु दुष्ट अलाउद्दीन ने इस विजय के पीछे ही अपने वृद्ध चाचा को प्रयाग मे मिलने के समय कटवा दिया और आप बादशाह हुआ। (१२९५) बादशाह होते ही इस ने जलालुद्दीन के दो लड़के और उस के पक्षपाती कई सर्दारो को कत्ल किया और फिर बड़ी निर्दयता से गुजरात जीता। अनेक प्रकार के दुखदाई कर प्रचलित किए। १३०० मे रणथम्मौर का प्रसिद्ध किला एक बरस की लड़ाई मे टूटा और शरणागतवत्सल परम वीर हम्मीर * राजा सकुटुब वीरो की गति को गया। १३०३ मे इस ने चित्तौर पर चढ़ाई की। राजा रतन-

* मीर मुहम्मदशाह मगोल नामक एक सर्दार पर अपनी एक उपपत्नी से व्यभिचार के सदेह से अलाउद्दीन ने क्रोध करके उस के बध की आज्ञा दी थी। वह हम्मीर की शरण गया। बादशाह ने हम्मीर से मगोल को माँगा किंतु धीर वीर हम्मीर ने अपने शरणागत को नहीं दिया इसी पर अलाउद्दीन चढ दौडा। राजा हम्मीर के विषय में यह दोहा 'जगतप्रसिद्ध है, सिह सुवन सुपुरुष बयन, कदलि फलै इक सार। तिरिया तेल हमीर हठ चढै न दूजी बार॥

सेन से प्रथम मित्रता दिखला कर फिर विश्वासघात कर के उन को बंदी किया किंतु रानी पद्मावती अपनी बुद्धि और वीरता से राजा को छुड़ा ले गई। फिर तो क्षत्रियों ने जीवनाशा छोड़ कर बड़ा युद्ध किया और सब के सब वीरगति को गए। क्षत्रानियाँ सब चिता पर बैठ कर भस्म हो गईं। १३०६ में देवगढ़ के राजा के कर न देने से फिर से उस पर चढ़ाई हुई और किला तोड़ा। १३१० में कर्णाटक में द्वारसमुद्र के राजा बल्लालदेव को और तैलंग के राजा लद्धर को जीता। १३११ में विद्रोह के कारण एक दिन में इस ने अपने पंद्रह हजार मुगल सिपाही कटवा दिए। यह अति उग्र अभिमानी और निष्ठुर था। इस के मृत्यु के वर्ष १३१६ में देवगढ़ के राजा के जामाता राजा हरपाल ने देवगढ़ और गुजरात को जीत कर स्वतंत्र कर दिया। इस के मरने पर मलिक काफूर नामक एक इस के गुलाम ने जिसे इस ने सर्दार बनाया था इस के दो बड़े बेटों को अंधा कर दिया और तीसरे मुबारक को अंधा करते समय आप ही मारा गया। कुतुबुद्दीन मुबारक ने बादशाह हो कर (१३१७) अपने छोटे भाई को अंधा किया और बहुत से सर्दारों को मार डाला। यह अति विषयी और मूर्ख था। इस के एक हिंदू गुलाम ने, जिस का मुसल्मान होने पर खुसरो नाम हुआ था, १३१९ में मलाबार जीता और १३२० में मुबारक को सकुटुंब काटकर आप राज पर बैठा। दिल्ली में चार महीने तक इस का सिक्का चलता रहा। इस के समय में हिंदुओं ने मुसल्मान सर्दारों की स्त्रियों को दासी और वेश्या बनाया, मसजिदों में मूरतें बिठा दीं और कुरान की चौकी बना कर उस पर बैठते थे। यह उपद्रव सुनकर पंजाब का सूबेदार गाजी खाँ सेना लेकर दिल्ली में आया और खुसरो को मार कर आप बादशाह बना।

गाजी खाँ ने बादशाह होकर अपना नाम गियासुद्दीन तुगलक रखा (१३२१)। इस का बाप बलबन का गुलाम था। बीदर और वारंगल जीता। तुगलकाबाद का किला बनाया। तिरहुत जीत कर जब लौटा, तो नगर के बाहर इस के बेटे जूना ने एक काठ का नाच-घर जो इस के लौटने के आनंद में बनाया था उस के नीचे दब कर मर गया। (१३२५) जूनाखाँ ने गद्दी पर बैठ कर अपना नाम मुहम्मद

तुगलक रक्खा। (१३२५) इसका प्रकृत नाम फखरुद्दीन अलगखाँ था। पहिले यह बड़ा बुद्धिमान और बडा दानी था। हजार दर का महल बनाया। मुगलो से सुलह किया और दक्षिण मे अपना अधिकार फैलाया। पर पीछे से ऐसे काम किये कि लोग उसे पागल समझने लगे। हुकुम दिया कि दिल्ली की प्रजा मात्र दिल्ली छोड कर देवगढ मे रहै, जिसको दक्षिण मे दौलताबाद नाम से बसाया था। इस का फल यह हुआ कि देवगढ तो न बसा किंतु दिल्ली उजड़ गई। अत मे फिर दिल्ली लौट आया। फारस और खुरासान जीतने के लिये तीन लाख सतरह हजार सवार इकट्ठे किए। इन मे से एक लाख को चीन लेने के लिए भेजा। ये सब के सब हिमालय मे नष्ट हो गये, कोई न बचा। बहुत से कर प्रचलित किए। लोग शहर छोड कर जगलो मे भाग गये पर वहाँ भी पीछा न छोडा और जानवरो की भाँति उन लोगो का शिकार किया गया। कागज का सिक्का चलाया। बडा भारी दुर्भिक्ष पड़ा। लाखो मनुष्य मरे। चारो ओर विद्रोह हो गया। बगाल और तैलग स्वाधीन हो गये। मालवा, पजाब और गुजरातवाले विद्रोही हो गये। कर्णाटक मे विजयपुर नाम का एक नया राज्य हो गया। हुसैन बामनी ने मध्यप्रदेश मे एक नया राज्य बनाया। अत मे विद्रोह शान्ति के लिए स्वय सब जगह घूमा किंतु मालवा और पजाब छोड़ कर कहीं शात न हुआ, रास्ते मे सिधु के पास ठट्ठा मे इसकी मृत्यु हुई (१३५१)। मुहम्मद का भाई फीरोजशाह बादशाह हुआ (१३५१)। इस ने स्थान स्थान पर हम्माम, चिकित्सालय, सराय, पुल, तालाब, पाठशाले और सुदर महल बनवाए थे। कर्नाल से हाँसी हिसार तक जमुनाजी नहर निकाली। इस ने अपने को अति वृद्ध समझकर नसीरुद्दीन को राज्य दिया किंतु इस के दो बरस पीछे नसीरुद्दीन के दो भाइयो ने बलवा करके इस को निकाल दिया और फीरोज शाह के पोते गियासुद्दीन को तख्त पर बैठाया। १३८६ मे नब्बे बरस की अवस्था मे फीरोज मरा और उसके पाँच ही महीने बाद १३८६ मे इन्हीं बलवाइयो ने गियासुद्दीन को भी मार डाला और उस के भाई अबूबकर को बादशाह किया। अबूबकर साल भर भी राज्य नहीं करने पाया था कि नसीरुद्दीन उस को जीत कर आप बादशाह बन बैठा। चार बरस

राज्य करके यह मर गया और इस का बडा बेटा हुमायूँ अपने को सिकदर शाह प्रसिद्ध करके बादशाह हुआ। यह केवल ४५ दिन जीआ और इस के पीछे इस का छोटा भाई महमूद तुगलक बादशाह हुआ (११६४)। इस की अवस्था छोटी होने के कारण राज्य मे चारो ओर अप्रबध हो गया और गुजरात, मालवा और खानदेश के सूबे स्वतत्र हो गये और वजीर बिगड कर जौनपुर का स्वतत्र राजा बन बैठा। इसी समय अमीर तैमूरलग जो कि परमेश्वर की मानो मूर्त्तिमयी सहार शक्ति थी बहुत से तातारियो को लेकर हिंदुस्तान मे आया (१३६८)। यह लँगडा था। इस के नाम तैमूर साहबकिराँ और गोरकाँ थे और जगद्दाहक चगेज खाँ के वश मे था। पजाब के रास्ते मे भटनेर इत्यादि जितने नगर या गाँव मिले उनको प्रलय की तरह लूटता और जलाता हुआ दिल्ली को भी खूब लूटा और जलाया। लाख मनुष्य जो रास्ते मे पकड़ गये थे कतल किये गये। १५ बरस से छोटे लड़के गुलामी के लिए नहीं मारे गये। महमूद गुजरात मे भाग गया और तैमूर के नाम का खुतबा पढ़ा गया। सन् १३६६ मे मेरट लूटता हुआ यह अपने देश चला गया। महमूद फिर आया और छ बरस राज्य करके मर गया। और दौलत खाँ लोदी ने पद्रह महीने तक राज्य किया। तैमूर के सूबेदार खिज्र खाँ सैयद ने इस से राज्य छीन लिया। सैयद अहमद ने अपने जामेजम नामक चक्र मे नसीरुद्दीन आदि दो तीन बादशाह और लिखे हैं जो और तवारीखो मे नहीं हैं। १४१४ से १४२१ तक खिज्र खाँ बादशाह रहा और उस के मरने पर उस का बेटा मुबारकशाह बादशाह हुआ। १४३६ मे उस के मत्री अब्दुल सैयद और सदानद खत्री ने उस को मार कर उस के भतीजे मुहम्मद को बादशाह बनाया। १४४४ ई० मे इसके मरने पर इस का बेटा अलाउद्दीन बादशाह हुआ। उस समय की बादशाहत नाम मात्र को था। १४५० ई० मे बहलूल लोदी ने पजाब से आकर तख्त छीन लिया और अलाउद्दीन बदायूँ चला गया।

बहलूल के बादशाह होने से पजाब दिल्ली मे मिल गया। जौनपुर-वालो से छब्बीस बरस तक लडकर उस ने वह बादशाहत भी दिल्ली मे मिला ली। १४८८ मे इस के मरने पर इस का बेटा सिकदर बादशाह हुआ। इसने हिंदुओ को अनेक कष्ट दिए। तीर्थ बद कर दिए।

पोर्चुगीज लोग पहले पहल इसी के काल मे यहाँ आए। १५१६ मे इस के मरने पर इसका बेटा इबराहीम बादशाह हुआ। यह ऐसा नीच और दुष्ट और अभिमानी था कि सब सूबेदार इस से फिर गए। पंजाब का सूबेदार सिकदर लोदी जो इस का गोती था इस से ऐसा दुखी हुआ कि इस ने काबुल के बादशाह बाबर जो तैमूर से छठी पुश्त मे था उस को अपनी सहायता को बुलाया। बाबर ने आते ही पहले सिकंदर ही का राज नाश किया, फिर १५१६ मे पानीपत के प्रसिद्ध युद्ध मे इबराहीम को जीत कर आप हिदस्तान का बादशाह हुआ।

बाबर ने बडी सावधानी से राज्य करना आरभ किया। दिल्ली के अधीनस्थ जो सूबे फिर गये थे सब जीते गए। १५२७ मे मेवाड़ के राजा सग्राम सिंह ने बहुत से देश जीत लिए थे, इस से कई बेर इन मे घोर सग्राम हुआ, १४२८ मे चदेरी का किला टूटा। सब राजपूत बडी वीरता से खेत रहे। इसी साल राणा सग्राम सिंह ने रंतभँवर का किला ले लिया। १५२६ मे बिहार, लाहौर, बगाल आदि मे अफगानो को बाबर ने पराजित किया। १५३० सन् मे २६ दिसम्बर को बाबर की मृत्यु हुई। कहते है हुमायूँ बहुत बीमार हो गया था। बाबर ने इस बात का इतना सोच किया कि आप ही बीमार होकर मर गया। बाबर मे कई गुण सराहने के योग्य थे। हुमायूँ ने राज्य पर बैठ कर अपने तीनो भाई कामरान्, हिदाल और अस्करी को यथाक्रम काबुल, सभल और मेवात का देश दिया। पहले जौनपुर का विद्रोह निवारण करके फिर वह गुजरात पर चढा और वहाँ के बादशाह बहादुर शाह को बडी बहादुरी से जीत लिया। १५३७ मे शेरशाह ने बगाला जीत लिया और जब इधर हुमायूँ शेरशाह से लडने को आया तो बहादुर शाह फिर स्वतत्र हो गया। शेरशाह पहले बाबर का एक सेनाध्यक्ष था। हुमायूँ ने पहले तो चुनार शेरशाह से जीता, किंतु पीछे शेरशाह ने विश्वासघात करके रोहतासगढ के राजा को मार कर उस के किले मे अपना परिवार रख कर हुमायूँ पर एकबारगी ऐसा धावा किया कि बनारस और कन्नौज तक जीत लिया। १५३६ मे फिर एक बेर शेरशाह ने हुमायूँ का पीछा किया और गगा मे कूद कर हुमायूँ ने अपने को बचाया। सन् चालीस मे फिर हुमायूँ शेरशाह से हारा और गगा मे

तैर कर किसी तरह फिर बच गया। दिल्ली पहुँच कर अपना परिवार लेकर वह लाहौर गया, किंतु वहाँ भी शेरशाह ने पीछा न छोडा, इस से वह सिंध होता हुआ राजपुताने मे आया। यहीं इसी आपत्ति के समय अमरकोट मे १५४२ मे अकबर का जन्म हुआ। डेढ बरस अमरकोट के राजा के आश्रय मे रह कर हुमायूँ ईरान मे चला गया और वहाँ के बादशाह की सहायता से वहीं रहने लगा।

शेरशाह ने (१५४०) हुमायूँ के अधीनस्थ सब राज्य अधिकार करके रायसेन, माड़वार और मालवा जीता। (१५४५) चित्तौर जीतने का दृढ संकल्प कर के मार्ग मे कालिंजर का किला घेरे हुए पडा था कि रात को मेगजीन मे आग लगने से झुलस कर प्राण त्याग किया। यह बड़ा धीर और बुद्धिमान् था। घोड़े का डॉक, राजस्वकर, सराय, तहसीलदार आदि कई नियम उस ने उत्तम बाँधे थे। बंगाल से मुलतान तक एक राजमार्ग इस ने बनवाया था। इस के मरने पर इस का छोटा बेटा जलालखाँ सलीमशाह सूर नाम रख कर बादशाह हुआ। १५५३ मे इस के मरने पर इस के बेटे फीरोजशाह को मार कर इस का साला मुहम्मदशाह अदली बादशाह हुआ। राज्य का सब भार हेमू नामक एक बनिये के ऊपर छोड़ कर आप अति विषय मे प्रवृत्त हुआ। चारो ओर बलवा हो गया। इसी वंश के इबराहीम सूर ने दिल्ली, आगरा, सिकंदर सूर ने पंजाब और महम्मद सूर ने बंगाला जीत लिया। हुमायूँ, जो हिंदुस्तान जीतने का अवसर देख ही रहा था, इस समय को अनुकूल समझ कर पंद्रह हजार सवार ले कर सिंध उतर कर हिंदुस्तान में आया और (१५५५) पंजाब जीतता हुआ दिल्ली मे पहुँच कर फिर से भारतवर्ष के सिंहासन पर बैठा। जितने देश अधिकार से निकल गए थे सब जीते गए। किंतु मृत्यु ने उस को राज भोगने न दिया और एक दिन संध्या को महल की सीढी पर से पैर फिसल कर गिरने से (१५५६) परलोक सिधारा।

इस की मृत्यु पर इस का पुत्र जगद्विख्यात अबुलमुजफ्फर जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर शाह साढ़े तेरह बरस की अवस्था मे

बादशाह हुआ। बैरम खाँ खानखानाँ राज्य का प्रबंध करता था। बदखशाँ के बादशाह सुलेमान शाह ने काबुल दखल कर लिया है, यह सुन कर बैरम अकबर को ले कर पजाब के मार्ग से काबुल गया। इधर हैमूँ * बनिया ने तीस हजार सैन्य ले कर दिल्ली और आगरा जीत लिया और पजाब की ओर अकबर के जीतने को आगे बढ़ा। बैरम खाँ ने यह सुन कर शीघ्र ही दिल्ली को बाग मोड़ी और पानीपत मे हैमूँ से घोर युद्ध हुआ, जिस मे हैमूँ मारा गया और बैरम की जीत हुई। इस जय से बैरम को इतना गर्व हो गया कि वह अकबर को तुच्छ समझने लगा। परिणामदर्शी अकबर उस की यह चाल देखकर बहाने से निकल कर दिल्ली चला आया और वहाँ (१५६०) यह इश्तिहार जारी किया की सल्तनत का सब काम उस ने अपने हाथ मे ले लिया है। बैरम इस बात से खिसिया कर बागी हुआ, किंतु बादशाही फोज से हार कर बादशाह की शरण मे आया। अकबर ने उस के सब अपराध क्षमा किए और भारी पिनशन नियत कर दी। किंतु बैरम को उसी वर्ष मक्का जाती समय मार्ग मे एक पठान ने मार डाला। इसी बैरम का पुत्र अबदुलरहीम खाँ खानखानाँ सस्कृत और हिंदी भाषा का पडा पडित और कवि हुआ है। यों अट्ठारह बरस की अवस्था मे अकबर इतने बड़े राज्य का स्वतत्र कर्त्ता हुआ। इस ने अपनी परपारगामिनी बुद्धि से यह बात सोच लिया कि बिना हिंदुओ का जी हाथ मे लिए उस की राज्यश्री स्थिर नहीं रह सकती। इस ने हिंदू मुसलमान दोनो को बडे बडे काम दिए। जोधपुर और जयपुर के राजाओ की बेटियो से ब्याह किया। मत का आग्रह छोड दिया। यहाँ तक कि कई हिदुओ के तोड़े हुए मदिर इस ने फिर से बनवा दिए। लखनऊ, जौनपुर, ग्वालियर, अजमेर इत्यादि इस के राज्य के आरभ ही मे इस के आधीन हो गए थे। १५६१ मे मालवा भी, जो अब तक राजा बाजबहादुर के अधिकार

* इस का वास्तव में बसन्तराय नाम था। कई तवारीखों में इस की जाति दूसर लिखी है। किंतु अगरवालों के भाट इस को अगरवाला कहते हैं।

में था, इस के सेनापति ने जीत लिया। राजा के पहले ही पकड़ जाने पर उस की रानी दुर्गावती बडी शूरता से लडी।* दो बेर बादशाही फौज को इस ने भगा दिया, किंतु तीसरी लडाई मे जब हार गई तो आत्मघात कर के मर गई। इस पवित्र स्त्री का चरित्र अब तक बुंदेलखंड मे गाया जाता है। अकबर ने बाजबहादुर को अपना निज मुसाहिब बना कर अपने पास रक्खा। १५६८ मे अकबर ने चित्तौर का किला घेरा। राणा उदयसिह पहाडो मे चले गए, किंतु उन के परम प्रसिद्ध वीर जयमल्ल नामक सेनाध्यक्ष ने दुर्ग की बडी सावधानी से रक्षा किया। एक रात जयमल्ल किले के बुर्जों की मरम्मत करा रहा था कि अकबर ने दूरबीन से देख कर गोली का ऐसा निशाना मारा कि जयमल्ल गिर पड़ा। इस सैनाध्यक्ष के मरने से क्षत्री लोग ऐसे उदास हुए कि सब बाहर निकल आए। स्त्रियॉ चिता पर जल गई और पुरुष मात्र लड़कर वीर गति को गए। उस युद्ध मे जितने क्षत्री मारे गए उन सबका जनेऊ अकबर ने तौलवाया तो साढ़े चौहत्तर मन हुआ। इसी से चिट्ठियों पर ७४॥ लिखते है, अर्थात् जिस के नाम की चिट्ठी है उस के सिवा और कोई खोले तो चित्तौर तोडने का पाप हो। यद्यपि चित्तौर का किला टूटा किंतु वह बहुत दिनो तक बादशाही अधिकार मे नहीं रहा। राणा उदय सिंह के पुत्र राणा प्रतापसिह सदा सर्वदा लडभिड कर बादशाही सेना का नाश किया करते थे। जहॉ बरसात आई और नदी नालो से बाहर आने का मार्ग बंद हुआ कि वह क्षत्रियों को ले कर उतरे और बादशाही फौज को काटा। मानसिह का तिरस्कार करने से अकबर की आज्ञा से १५७६ मे जहॉगीर और महाबत खॉ के साथ बडी सैना लेकर मानसिह ने राणा पर चढ़ाई की। प्रताप सिह ने हल्दीघाट नामक स्थान पर बड़ा भारी युद्ध किया, जिसमे बाईस हजार राजपूत मारे गए। इस पर भी राणा ने हार नहीं माना और सदा लडते रहे। अपने बाप के नाम से

* रानी दुर्गावती क्षत्राणी तथा गढा माडल की अधीश्वरी थी। इससे मालवा से कोई संपर्क न था और इस पर सन् १५६४ ई० मे चढाई हुई थी। (स०)

उययपुर का नगर भी बसाया और बहुत सा देश भी जीत लिया। १५७३ मे गुजरात, ७६ मे बगाला और विहार, ८६ मे काश्मीर, ६२ मे सिध और ६५ मे दक्खिन के सब राज्य अकबर ने जीत लिए। अहमद नगर के युद्ध मे [१६००] चॉद सुल्ताना नामक वहॉ के बादशाह की चाची ने बडी शूरता प्रकाश की थी। इसी समय युवराज सलीम बागी हो गया और इलाहाबाद आदि अपने अधिकार मे कर लिया। किंतु अकबर जब दक्खिन से लौटा तो जहॉगीर इस के पास हाजिर हुआ। अकबर ने अपराध क्षमा करके बगाला और बिहार इस को दिया। १५८३ मे युसुफजाइयो की लडाई मे अकबर के प्रिय सभासद महाराज बीरबल मारे जा चुके थे और अबुलफजल को जहॉगीर के विद्रोह के समय उरछा के राजा ने मार डाला था, तथा उस का दूसरा लड़का मुराद भी अति मद्यपान करके मर चुका था। अब (१६०५) मे अकबर को उस के तीसरे लड़के दानियाल को भी अति मद्यपान से मर जाने का समाचार पहुचा। इतने प्रियवर्ग के मर जाने से इस का चित्त ऐसा दुखी हुआ कि बीमार हो कर ६३ वर्ष की अवस्था मे आगरे मे अकबर ने इस असार संसार को त्याग किया।

अकबर अति बुद्धिमान और परिणामदर्शी था। आलस्य तो इस को छू नहीं गया था। प्रथमावस्था मे तो कुछ भोजन पानादि का व्यसन भी था किंतु अवस्था बढने पर यह बडा ही सावधान हो गया था। बरस मे तीन महीना मास नहीं खाता था। आदित्यवार को मास की दुकानें बद रहती थीं। जिजिया नामक कर और प्रत्यक्ष गोहिंसा उस ने उठा दिया था। कर का भी बदोबस्त अच्छा किया था। महाराज टोडर मल्ल (टन्नन खत्री), अबुलफजल, खानखानॉ, मानसिंह, तानसेन, गग, जगन्नाथ पडितराज और महाराज बीरबल आदि सब प्रकार के चुने हुए मनुष्य इस की सभा मे थे। काग़ज, हुडी, बही आदि का नियम इन्हीं टोडर मल्ल का बॉधा हुआ है। विधवाविवाह के प्रचार मे भी इस ने उद्योग किया था और तीर्थों का कर भी छूट गया था। भूमि की उत्पत्ति से तृतीयांश लिया जाता था और पद्रह सूबो मे राज बटा हुआ था।

अकबर के मरने पर सलीम नूरुद्दीन जहाँगीर के नाम से सिंहासन पर बैठा। इस ने बहुत से कर जो अकबर के समय भी बच गए थे बंद कर दिये। नाक कान काटने की सजा, बादशाही फौज का जमींदार या प्रजा से रसद लेना और अफीम और मद्य का प्रचार इस ने बंद कर दिया। महल में एक सोने की जंजीर लटकाई थी कि किसी दीन दुखी की पुकार जो कोई राजपुरुष न सुनै तो वह जंजीर हिला दे। जंजीर की घंटी के शब्द पर वह आप बाहर निकल आता था और न्याय करता था। किंतु १६०६ में जब उसका लड़का खुसरो पंजाब में बाग़ी हो गया था तब जहाँगीर ने उसके सात सौ साथियों को बड़ी निर्दयता से उस के आँख के सामने मरवा डाला। १८१० से चार बरस तक मलिक अंबर और अहमद से लड़ाई होती रही। १६१४ में खुर्रम (शाहजहाँ) के साथ एक बड़ी सेना इस ने उदयपुर जीतने को भेजी थी, किंतु राजा ने मेल कर लिया। १६११ में जहाँगीर ने नूरजहाँ से ब्याह किया। नूरजहाँ का पिता गियासबेग ईरान का एक धनी था किंतु विपत्ति पड़ने से वह व्यापार को हिंदुस्तान आता था। मार्ग में नूरजहाँ का जन्म हुआ। गियास यहाँ आ कर अकबर के दरबार में भरती हो गया था। उसी समय से जहाँगीर की नूरजहाँ पर दृष्टि थी, किंतु अकबर के डर के मारे कुछ कर न सका और शेर अफगन नामक एक पठान अमीर के साथ जिसे अकबर ने बंगाला और बिहार में जागीर दी थी, नूरजहाँ का ब्याह हो गया था। बादशाह होते ही जहाँगीर ने बंगाले के सूबेदार को नूरजहाँ को किसी प्रकार भेज देने को लिखा। शेर अफगन बड़ी वीरता से मारा गया और नूरजहाँ बादशाह के पास भेज दी गई। चार बरस तक जहाँगीर ने इस की सुश्रुषा करके इस के साथ विवाह किया। फिर तो नूरजहाँ ही सारी बादशाहत करती थी, जहाँगीर नाम मात्र को बादशाह था। यह स्त्री चतुर भी अतिशय थी। १६२१ में जहाँगीर का बड़ा बेटा खुसरो मर गया। परवेज़ मूर्ख था, इस से जहाँगीर ने खुर्रम शाहजहाँ को ही अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहा। किंतु नूरजहाँ की बेटी जहाँगीर के चौथे पुत्र शहरयार को ब्याही थी, इससे नूरजहाँ ने उसी को बादशाह बनाने की इच्छा से जहाँगीर का

मन शाहजहाँ से फेर दिया। पिता का मन फिरा देख शाहजहाँ बागी हो गया। दक्षिण मे और बगाले मे यह बराबर लडता रहा और बादशाही फौज इस का पीछा किए फिरती थी। अत मे एक अर्जी भेजकर बाप से इस ने अपराध की क्षमा चाही और अपने दो लड़को को दर्बार मे भेज कर आप दक्षिण की सूबेदारी पर चला गया। नूरजहाँ ने एक बेर बगाले के सूबेदार प्रसिद्ध वीर महाबतखाँ को हिसाब देने को बुला भेजा। महाबतखाँ इस आज्ञा से शंकित होकर आया सही, किंतु पाँच हज़ार चुने हुए राजपूत अपने साथ लाया। इस समय जहाँगीर काबुल जाता था। ज्योंहीं झेलम पार इस की सेना उतर चुकी थी कि महाबत खाँ ने बादशाह और बेगम को घेर कर अपने अधिकार मे कर लिया। किंतु नूरजहाँ की चालाकी से कुछ दिन पीछे (१६२६) जहाँगीर महाबतखाँ के अधिकार से निकल आया। १६२७ मे कश्मीर मे जहाँगीर ऐसा रोगग्रस्त हुआ कि लाहौर मे आकर साठ बरस की अवस्था मे मर गया। आसफखाँ नामक नूरजहाँ के भाई ने जिस के हाथ मे सारा राज्यचक्र था खुसरो के बेटे दावरबख़्श को नाममात्र बादशाह कर के आप काम काज करने लगा और शाहजहाँ को दक्खिन से बुला भेजा। शाहजहाँ के पहुँचने पर आसफखाँ ने दावरबख़्श को मार डाला। कहते है कि चौदह महीने यह नाम मात्र को बादशाह था। इग्लिस्तान के बादशाह जेम्स (१) का एलची सर टामस रो जहाँगीर की सभा मे आया था।

शाहजहाँ १६२८ मे बड़ी धूम धाम से दिल्ली के तख़्त पर बैठा। डेढ़ करोड़ रुपया उसी दिन व्यय हुआ था। महाबतखाँ और आसफखाँ इस के मुख्य मत्री थे। दिल्ली फिर से बसाई गई। सात करोड़ दस लाख रुपया लगाकर तख्तेताऊस (मोर का सिंहासन) बनवाया। आगरे मे ताजगज नामक प्रसिद्ध स्थान इसी बादशाह का बनवाया है। नूरजहाँ जहाँगीर के पीछे २० बरस जीती रही और शाहजहाँ पच्चीस लाख रुपया साल इस को देता था। शाहजहाँ ने जैसा राज भोगा और सुख किया और हिंदुस्तान की बादशाहत को चमकाया, पहले कभी ऐसा किसी और ने नहीं किया था। बत्तीस

करोड़ साल इस की आमदनी थी। प्रति वर्ष सालगिरह मे डेढ करोड़ व्यय होता था। मकानो मे सोना और हीरा जडा जाता था। इस पर भी मरने के समय यह बयालीस करोड रुपया नक्द छोड़ गया था। १६३२ मे कदहार के ईरानी सूबेदार अलीमर्दानखाँ के शाहजहाँ से मिल-जाने से कदहार फिर हिदुस्तान के राज्य मे मिल गया था, किंतु इक्कीस बरस पीछे ईरानियो ने फिर जीत लिया। १६४६ मे बुखारा भी बाद-शाह ने जीता। १६४७ मे कई बरस की लड़ाई के पीछे दक्षिण मे भी शाति स्थापन हुई और अबदुल्ला शाह गोलकुडे के बादशाह से सधि हो गई। इसी सधि मे कोहनूर नामक प्रसिद्ध हीरा बादशाह के हाथ लगा। शाहजहाँ को चार पुत्र थे। दाराशिकोह, शुजा, औरगजेब और मुराद। दाराशिकोह बड़ा बुद्धिमान, नम्र और उदार था, किंतु औरगजेब इस के विरुद्ध दीर्घदर्शी और महा छली था। शुजा वीर था, परंतु अव्यवस्थित था और मुराद चित्त का बड़ा दुर्बल था। १६५७ मे शाहजहाँ बहुत ही अस्वस्थ हो गया। दारा के हाथ मे राज का शासन था। औरगजेब ने इस अवसर को उत्तम समझ कर मुराद को बहकाया कि बेदीन दारा से बादशाहत तुम ले लो, हम तुम्हारी सहायता करेंगे और तुम को तख्त पर बैठा कर मक्के चले जायँगे। मुराद दारा से लड़ने चला। औरगजेब भी आगे बढ कर उस से मिल गया। १६६२ मे बगाल से शाहशुजा भी फौज ले कर चढ़ा, किंतु सुलैमान शिकोह (दाराशिकोह के बेटे) से बनारस के पास लडाई मे हार कर फिर बंगाले चला गया। मुराद और औरगजेब इधर यशवत सिह को जीतते हुए आगरे से एक मंजिल श्यामगढ़ मे आ पहुँचे। दारा एक लाख सवार लेकर इन से युद्ध करने को निकला। राजा रामसिह, राजा रूपसिह, छत्रसाल आदि कई क्षत्री राजे उसकी सहा-यता को आए थे और बड़ी वीरता से मारे गए। परमेश्वर को मुस-ल्मानो का राज्य स्थिर नहीं रखना था इस से हाथी बिचलने से दारा की फौज भाग गई और औरगजेब ने आगरे मे प्रवेश कर के विश्वास-घातकता से मुराद को कैद कर के १६५८ मे अपने को बादशाह बनाया। अत मे एक दिन मुराद को भी मरवा डाला और सुलैमानशिकोह को भी, जो कश्मीर से पकड़ आया था, मरवा डाला। शुजा लड़ाई हार

कर अराकान भागा और वहीं सवश मारा गया। दारा ने सिंध की राह से अजमेर आकर बीस हजार सैना एकत्र कर के औरंगजेब पर चढाई किया, किंतु युद्ध मे हार गया और औरंगजेब ने बडी निर्दयता से उस को मरवा डाला। उस के पुत्र सिपहरशिकोह को ग्वालियर के किले मे कैद किया और फिर बहुत से शाहजादों को, जिन का बादशाह से दूर का भी संबध था कटवा डाला। कहते हैं कि दाराशिकोह बादशाह होता तो लोग अकबर को भी भूल जाते। इस के पीछे शाहजहाँ सात बरस जिया था।

औरंगजेब के राज्य के आरंभ ही से मुसल्मानी बादशाहत का वास्तविक ह्रास समझना चाहिए। जिजिया का कर फिर से जारी हुआ। हिंदुओं के मेले और त्योहार बंद किए। तीर्थ और देवमंदिर ध्वंस किए गए। इसी से 'तीन पुश्त की कमाई' स्वरूप हिंदुओं की जो दिल्ली के बादशाहों से प्रीति थी वह नाश हो गई। इधर दक्षिण मे महाराष्ट्रों का उदय हुआ। शिवाजी नामक एक वीर पुरुष ने, जो यादवराव का नाती और मालोजी का पुत्र था, दक्षिण मे अपनी स्वतंत्रता का डंका बजाया। पहले विजयपुर के राज मे लूटपाट कर के अपनी सामर्थ्य बढ़ा कर १६६२ मे बादशाही देशों को लूटना आरंभ किया। बादशाही सैनाध्यक्ष शाइस्ताखाँ ने इन के विरुद्ध आ कर पूने मे अपना अधिकार कर लिया। किंतु असम साहसी शिवाजी केवल पच्चीस मनुष्य साथ ले कर एक रात उस के डेरे मे घुस गए और शाइस्ता बिचारे प्राण ले कर भागे। शिवाजी ने अबकी पूने से ले कर गुजरात तक अपना प्रताप बढाया और तंजौर और मंदराज जीत कर १६६४ मे अपने को राजा प्रसिद्ध किया। औरंगजेब शिवाजी के इस साहस से बहुत ही खिसिया गया और जयसिंह के साथ बहुत सी सैना उसे जीतने को भेजी। राजा जयसिंह और शिवाजी से संधि हो गई और उस से मरहठे दक्षिण मे बादशाही मालगुजारी की चौथ लेने लगे। १६६५ मे शिवाजी दिल्ली आए और औरंगजेब ने जब उन को नजरबंद कर लिया तो कुछ दिन पीछे बडी सावधानी से वह दिल्ली से निकल गए। १६६७ मे औरंगजेब ने शिवाजी को राजा की पदवी भेज दी और बीजापुर

और गोलकुंडा के बादशाहो से लड़ने को इन को कहला भेजा। शिवाजी इन दोनो बादशाहो से लड़े और अत मे जब सधि हुई तो अपने राज्य का शिवाजी ने सुप्रबध किया। १६६६ मे शिवाजी का प्रभुत्व दक्षिण मे स्थिर हो गया था, इस से औरगजेब ने क्रोध करके महावत खाँ को बड़ी सैना के साथ उन को दमन करने को भेजा, किंतु (१६७०) शिवाजी ने उन को परास्त कर दिया। इसी समय सत्तनामी और सिख नामक दो दल हिंदुओ के और औरगजेब के विरुद्ध खड़े हुए। १३५८ मे जोधपुर के राजा यशवत सिंह के सिधुपार मारे जाने पर उन की स्त्री और पुत्र को निरपराध औरगजेब ने कैद करना चाहा। यद्यपि दुर्गादास नामक सैनापति की शूरता से लडके तो कैद नहीं हुए, किंतु बादशाह की इस बेईमानी से राजपुताना मात्र विरुद्ध हो गया। उदयपुर के राणा राजसिह, जयपुर के रामसिह और सभी राजाओ ने बादशाह के विरुद्ध शस्त्र धारण किया। इधर दुर्गादास ने औरगजेब के लडके अकबर को बहका कर बागी कर दिया और सत्तर हजार सैना लेकर अजमेर मे बादशाही सेना से बड़ा युद्ध किया। १६८० मे बिरार, खानदेश, विल्लोर, मैसूर आदि देश मे अपना अधिकार, यश और प्रताप विस्तार कर के शिवाजी मर गए। शिवाजी का पुत्र शभुजी राजा हुआ और बादशाह के पुत्र मुअज्जम को जीत कर बहुत देश लूटा, किंतु एक युद्ध मे बादशाही सैना से घिर कर पकड़ा गया और औरगजेब ने उस का मरवा डाला। इधर बीस बरस के रगड़े झगड़े के पीछे गोलकुडा और बीजापुर भी औरगजेब ने जीत लिया। यद्यपि इस जीत से औरगजेब का गर्व बढ़ गया, किंतु साथ ही उस का आयुष्य और प्रताप घट गया। दक्षिण की लड़ाई के मारे खजाना खाली हो गया। हिंदुओ का जी अति खट्टा हो गया। अत मे १७०७ मे ८६ वर्ष की अवस्था मे औरगजेब मर गया और मुगलो का सौभाग्य भी उसी के साथ कब्र मे समाहित हुआ।

औरगजेब के तीन लडको मे से आजम और मुअज्जम दोनो ही बादशाह बन बैठे, किंतु आजम लड़ाई मे मारा गया और कामबख्श भी दक्खिन मे मारा गया, इस से मुअज्जम ही बहादुर शाह के नाम से बादशाह हुआ। इस ने उदयपुर, महाराष्ट्र आदि प्रबल राजो से

संधि की। सिक्खो ने इस के समय मे भी बड़ा उपद्रव किया। बहादुर शाह पॉच बरस राज कर के मर गया। इस के पीछे सभी बादशाह बनने लगे और बहुत सा रुधिर बहने के पीछे (१७१२) जहॉदार शाह बादशाह हुआ। यह भी साल भर नहीं रहा कि इस का भतीजा फर्रुखसियर इस को सपरिवार मार कर आप बादशाह हो गया (१७१३)। इस के समय मे भाई बदा नामक सिख बडी धर्म-वीरता से मारा गया। १७१६ मे सैयद अब्दुल्ला और सैयद हुसेन, जो इस के मुख्य सहायक थे, इस से बिगड गय और फर्रुखसियर मारा गया। सैयदो ने रफीउल्दरजात और रफीउलशान को सिंहासन पर बैठाया, किंतु वे चार चार महीने मे मर गये। जहॉदार और फर्रुख-सियर ने इतने शाहजादे मार डाले थे कि सैयदो ने बडी कठिनता से रौशनअखतर नामक एक शहजादे को खोज कर कैद से निकाला और मुहम्मद शाह के नाम से बादशाह बनाया। [१७१३] विद्रोह चारो ओर फैल गया। १७२० मे मालवा और १७२५ मे हैदराबाद स्वतंत्र हो गए। सैयद लोग इस के पूर्व ही मारे जा चुके थे। इधर भरतपुर मे जाटो ने नया राज्य स्थापन कर के लूटपाट आरभ कर दी। इधर प्रताप शाली बाजीराव पेशवा ने दिल्ली के द्वार तक जीत कर चबल के दक्षिण का सब देश अपने अधिकार मे मिला लिया। (१७३७) इस के सर्दारो मे से हुल्कर ने इंदौर, सेन्धिया ने ग्वालियर, गायकवाड़ ने बड़ौदा और भोसला ने नागपुर राज्य स्थापन किया। इसी समय ईश्वर के क्रोध का एक पंचम अवतार ईरान का बादशाह नादिरशाह हिंदुस्तान मे आया। करनाल मे मुहम्मदशाह ने इस से मुकाबला किया, किंतु जब हार गया तो नादिरशाह के पास हाजिर हुआ। नादिर ने इस का बड़ा शिष्टाचार किया। दोनो बादशाह साथ ही दिल्ली आए। उस समय दिल्ली ऐसे निकम्मे और लुच्चे लोगो से भरी हुई थी कि दूसरे ही दिन लोगो ने यह गप्प उड़ा दी कि नादिरशाह मारा गया। बद-माशो ने उस के मनुष्यो को काटना आरभ कर दिया। इस बात पर नादिर ने ऐसा क्रोध किया कि सारी दिल्ली को काट देने का हुकुम दिया। डेढ़ पहर तक शाक की भाति लाख मनुष्यो के ऊपर काटे गये। अत को महम्मदशाह रोता हुआ उस के सामने गया, तब नादिरशाह

ने आज्ञा दिया कि काटना बंद हो जाय। उस की आज्ञा ऐसी मानी जाती थी कि उस के प्रचार होते ही यदि किसी ने किसी के शरीर में आधी तलवार गड़ाई थी तो वहीं से उठा ली—दिल्ली को यों उजाड़ कर के अट्ठावन दिन वहाँ रह कर सत्तर करोड़ का माल साथ लेकर नादिर अपने मुल्क को लौट गया (१२७६)। कुछ दिन पीछे उसके देशवालों ने नादिरशाह को मार डाला और अहमदशाह नामक उस का एक सैन्याध्यक्ष कंदहार, बलख़, सिंध और कश्मीर का बादशाह बन बैठा। लाहौर लेते हुए (१७४७) हिंदुस्थान में भी उस ने प्रवेश करना चाहा, किंतु मुहम्मद शाह का पुत्र अहमद शाह ने सरहिंद में युद्ध कर के उस को पीछे हटा दिया। इस के पूर्व (१७३०) बाजीराव मर गए थे, किंतु उन के पुत्र बालाजी राव ने मालवा ले लिया था। १७४८ में मुहम्मद शाह मर गया। यह अति रागरंगप्रिय और विषयी था। इस का पुत्र अहमद शाह बादशाह हुआ। इस के समय में रुहेलों ने बड़ा उपद्रव उठाया था किंतु मरहट्टों ने इनका दमन किया। १७५४ में गाजिउद्दीन ने अहमद शाह को अंधा और कैद कर के जहाँदारशाह के एक लड़के को तख्त पर बैठाया और आलमगीर सानी उसका नाम रक्खा। गाजिउद्दीन ने अहमदशाह दुर्रानी के पंजाब के सूबेदार की माँ को कैद कर लिया था। इस बात से अहमदशाह ने ऐसा क्रोध किया कि बड़ी भारी सैना लेकर सीधा दिल्ली पर चढ़ दौड़ा। गाजिउद्दीन बड़ी दीनता से उस के पास हाजिर हुआ, किंतु वह बिना कुछ लिए कब जाता था। (१७४५) बल्लभगढ़ और मथुरा लूटी और काटी गई। दिल्ली और लखनऊ के लोगों से भी रुपया वसूल किया गया। अंत में नजीबुद्दौला को दिल्ली का प्रधान मंत्री बना कर अपने देश को लौट गया। गाजिउद्दीन ने मरहट्टों से सहायता चाही और पेशवा का भाई रघुनाथ राव दिल्ली पर चढ़ आया। नजीबुद्दौला भाग गया और गाजिउद्दीन फिर वज़ीर हुआ। इधर मरहट्टों ने अहमदशाह दुर्रानी के लड़के तैमूर को पंजाब से निकाल कर वह देश भी अधिकार में कर लिया अर्थात् अब मरहठे सारे भारतवर्ष के अधिकारी हो गए। इसी समय में गाजिउद्दीन ने बादशाह को मार डाला और आप दिल्ली छोड़ कर भाग गया। अहमदशाह दुर्रानी इस बात से ऐसा क्रोधित

हुआ कि बहुत बडी सेना ले कर फिर हिदुस्तान मे आया। पेशवा ने यह सुन कर अपने भतीजे सदाशिवराव भाऊ के साथ तीन लाख सेना और अपने पुत्र विश्वास राव को उस से युद्ध करने को भेजा। मरहट्टो ने पहले दिल्ली को लूटा, फिर पानीपति के पास डेरा डाला। पहले कुछ सुलह की बातचीत हुई थी, किंतु अत को ६ जनवरी १७६१ को दोनो दल मे घोर युद्ध हुआ, जिस मे दो लाख से ऊपर मरहट्टे मारे गए और अहमदशाह की जय हुई। इस हार से मरहट्टो का उत्साह, बल, प्रताप, सभी नष्ट हो गए और साथ ही मुगलो का राज्य भी अस्त हो गया। शुजाउद्दौला ने आलमगीर के बेटे अलीगौहर को शाहआलम के नाम से बादशाह बनाया (१७६१)। यह दस बरस तक तो पहले नजीबुद्दौला के डर से इलाहाबाद मे पडा रहा, फिर उस के मरने पर मरहट्टो की सहायता से दिल्ली मे गया। थोड़े ही दिन पीछे गुलाम-कादिर नामक नजीबुद्दौला के पोते ने दिल्ली लूट कर बादशाह को पृथ्वी पर पटक कर छाती पर चढ़ कर कटार से आँख निकाल ली और हाथ बाँध कर वहीं छोड दिया। महादजी सेधिया यह सुन कर दिल्ली मे आया और गुलामकादिर को पकड कर बडी दुर्दशा से मारा और अधे शाहआलम को फिर से तख्त पर बैठाया। चारो ओर उपद्रव था। १८०३ मे लार्ड लेक ने अँगरेजी सेना ले कर दिल्ली को मरहट्टो के हाथ से लिया और शाहआलम को पिन्शन नियत कर दी। शाहआलम को अकबर सानी और उस को बहादुरशाह हुए। ये लोग साढ़े सोलह लाख की जागीर और पिनशन भोगते रहे। अत को वह भी न रही। यो मुसल्मानो का प्रतापसूर्य आठ सौ बरस तप कर अस्ताचल को गया।

कनकपात्र रत नगजटित, फेकत जौन उगार।
तिन की आजु समाधि पर, मूतत स्वान सियार ॥
जे सूरज सो बढ़ि तपे, गरजे सिह समान।
भुज बल बिक्रम पारि निज, जीत्यो सकल जहान ॥
तिन की आजु समाधि पै, बैठ्यो पूछत काक।
'को' हौ तुम अब 'का' भए, 'कहाँ' गए करि साक ॥

॥ इति ॥

ग्रंथ का उपष्टम्भक

—❀—

अकबर ने काश्मीर मे हिंदुओ के हेतु एक मदिर का जीर्णोद्धार कराया था, क्योकि उस को मुसलमान लोग तोड़ डाला करते थे। और उस पर उस की एक आज्ञा भी खुदी हुई है, जो यहाँ प्रकाशित होती है। इस से लोग उसका चित्त देखे।

किताबए अबुलफजल बरलौह सग कलीसाए कश्मीर कि बमूजिब हुक्म अकबर तामीर याफ्त: बूद व ऑरा औरगजेब आलमगीर गाजी मिस्मार साख्त। इलाही बहर कुजा कि मीनिगरम् जूयाये तवानद व बहर ज़ुबान कि मीशनूम गायाये तवानद। शैर—

कुफ्रो इस्लाम दर रहश पोयाँ। वहद: लाशरीक वलह् गोयाँ॥

अगर मस्जिदस्त बयाद तो नार॰ कुदूस मीज़नद व अगर कलीसास्ता बशौक ता नाकूस मीजुंबानद। शैर—

गहे मुहतक़िफ दैरम व गहे साकिने मस्जिद।
यानी कि तुरा मीतलबम् खान:, बखान:॥

गर्चे खासान तरा बकुफ्रो इस्लाम कारे न पस ईं हर दोरा दरपर्द: इसरार तो बारी न:। शैर—

कुफ्र काफिर रा व दीन दीनदार रा। जर्र: दर्दे दिल अत्तार रा॥

ईं खान: कि बनीयत तालीफ कुलूब मूहिदान हिंदुस्तान खसूसा माबूद परस्ताँ अर्सए कश्मीर तामीर याफ्त:। शैर—

बफर्माने खदीवे तख्तो अफसर। चिरागे आफरीनश शाह् अकबर॥

हरखान: खराब कि नज़र बर सिद्क न. अदाख्त: ईं खान: रा खराब साज़द बायद कि नखस्त मोबिद खुद रा बर अदाजद गर्चे नज़र बर्दिल अस्त बाहम साख्तनीस्त व अगर चश्म बर आबो गिलस्त हम. अदाख्तनीस्त। शैर—

खुदावदा चु दारी कार दादी।
मदारे कार बर नीयत निहादी॥

तुई बर बारगाहे नीयत आगाह।
ब पेशे शाह दादी नीयते शाह॥

हे परमेश्वर ! जिस स्थान को देखता हूँ वहाँ सब तेरे ही खोज मे हैं और जिस से सुनता हूँ तेरी ही बात करते है। धर्माधर्म सब तेरे ही मार्ग मे चलते है और एक ब्रह्माद्वैत ही का भाषण करते हैं। यदि तेरे वदना के स्थान है तो वहाँ तेरे पवित्र नाम की शब्दध्वनि करते हैं और यदि देवस्थान है तो वहाँ सब तेरे ही अभिलाषा मे शखनाद करते है। कभी मै मूर्तिमदिर की परिक्रमा करता हूँ और कभी तेरे वदनालय मे रहता हूँ, अर्थात् तुझी को घर घर ढूँढता हूँ। यद्यपि जो लोग तुझ मे ही लवलीन हो रहे हैं, उन्हें इस द्वैतता से कुछ प्रयोजन नहीं और इन दोनो को तेरे अतर भेद मे गम्य नहीं। मूर्तिपूजको को मूर्तिपूजा और वदनावालो को वदना किसी प्रकार चित्तरोग की शाति है।

यह मदिर भारतवर्ष के ब्राह्मद्वैतवादियो के विशेष कर काश्मीर प्रात के प्रिय मूर्तिपूजको के चित्त तोषार्थ सिहासन और मुकुट के स्वामी साम्राज्य के मणिद्वीप महाराजाधिराज अकबर की आज्ञा से बनाया गया। जो सत्यानाशी सत्य पर दृष्टि न रखकर इस घर को गिरावेगा वह मानो अपने इष्ट का मदिर ढहावेगा। यदि ईश्वर से सच्चे चित्त से सबध है तो सब मत के स्थानो को बनाना चाहिये और मिट्टी पत्थर पर दृष्टि है तो सब को गिराना चाहिये।

हे ईश्वर ! तू सब कर्मो के तत्व का समझनेवाला है और कर्मों की मूल मति है और तू ही हमलोगो की अतर मति को जानता है और तू ही ने राजा को राजा योग्य मति दी है।

किंतु इस आज्ञापत्र पर दुष्ट औरगजेब ने कुछ ध्यान न दिया और अपनी आज्ञा से इसे तोडवा दिया।

औरगजेब ने एक आज्ञा सन् १०६९ हिजरी मे ऐसी प्रचलित की थी कि बनारस मे न कोई मदिर तोडे जाय, न हिदुओ को दुख दे। १०६८ मे विश्वनाथ का मदिर उसने तुड़वाया था, उस के साल भर पीछे न जाने क्या दया आपके चित्त मे आई कि यह आज्ञा प्रचलित की गई, किंतु यह आज्ञा उस की किसी विशेष युक्ति से शून्य नहीं थी,

और यह आज्ञा कार्य मे परिणित भी नहीं हुई, क्योकि १०७७ मे इसी काशी मे कृत्तवासेश्वर का मदिर इसी की आज्ञा से तोड़ा गया था। वहाँ जो मस्जिद है उस का लेख भी यहाँ प्रकाशित होता है, इसी से उस के चित्त की कुटिलता स्पष्ट होगी। मदिर न तोड़नेवाला असली आज्ञापत्र काशी मे महादेव नामक एक ब्राह्मण के पास अद्यापि विद्यमान है।

———

बिस्मिल्ला अल्रहमान अल्रहीम

तुगरा बादशाह

मुहर बादशाह

खुदा

लायकुल एनाय: व अल् मरहम: अबुल्हसन बइल्तफात शाहान: उम्मीद्वार बूद. बिदानद कि चूँ बमुकतूजाय मराहिम जाती व मकारिम जबली हमगी हिम्मत वाला नहिम्मत व तमामी नीयत हक तबीयत मा-बर-रिफाहियत जम्हूर व इतजाम अहवाल तबकात खवास व अवाम मसरूफस्त व अज् रूये शरअ शरीफ न मिल्लत मनीफ मुकर्रर चुनीं अस्त कि दैरहाए देरीन बरअदाख्त: न शवद व बुतकद:-हाए ताज: बिना नयाबद व दरीं अय्याम मादलत इतजाम बगरज अशरफ अकदस अर्फा आला रसीद कि बाज मर्दुम अज राह अनफ व तादी बहनूद सकन' कस्ब: बनारस व बर्खे अमकन: दीगर कि बनिवाहे आँ वाक अस्त व जमाअ: बिरहमनान सदन: आँ महाल कि सदानत बुतखान: हाय कदीम आँजा व आँहा ताल्लुक दारद मुजाहिम व मोतरिज मीशवद व मीख्वाहद कि एशाँरा अज सदानत आँ कि अज मुद्दत मदीद ब आँहा मुतअल्लिक अस्त बाज दारद व ईं

मआनी बाएस परेशानी व तफरक हाल ईं गरोह मी गर्दद लिहाजा हुक्म वाला सादिर मीशवद् कि बाद अज वरूद ईं मनशूर लामअल-नूर मुकर्रर कुनद कि मन बाद अहदे बवजूह बेहिसाब तआरुज व तशवीश बअहवाल बिरहमनान व दीगर हनूद मुतवतनः आँ महाल नरसानद ता आँ हा बदस्तूर एय्याम पेशीं बजा व मुकाम खुद बूदः बजमैयत खातिर बदुआए बकाए दौलत दाद अबद मुद्दत अजल बुनि-याद कयाम नुमायद दरीं बाब ताकीद दानद। बतारीख १५ शहर जमादिउस्सानियः सन् १०६६ हिजरी नविश्तः शुद.

शाहजादा सुलतानमुहम्मद मुहर

सुलतान

बरिसालए नवाब कुदसी अलकाब नौ बादः बर सितान खिलाफत गुर्जी समरः शजरः रफअत चिराग दूदमान अबहत फरोग खानदान शौकत कुर॰ नासिरः दौलत व इकबाल तरह नामिया हशमत व इजलाल गिरामी नसब समीउल् मकान अल ममदूह बलसानुल् बाद वातुहर शाहजाद नामदार कामगार वालातबार मुहम्मद सुलतान बहादुर।

यह आज्ञापत्र शाहजादे मुहम्मद सुल्तान बहादुर के नाम है। इस का आशय यह है—'कुरान मे लिखा है कि पुराने मदिर को नहीं गिराना और नए नहीं बनाने देना। ऐसा सुना गया है कि बनारस के ब्राह्मणो को लोग दुख देते है, इस हेतु यह आज्ञा दी जाती है कि आगे से कोई हिदुओ के स्थानो को न छेडे और ब्राह्मणो को निर्विघ्न पाठ पूजा करने दे (इत्यादि) १५ जमादिउस्सानी १०६६।

इस के पीछे का कृत्तवासेश्वर की मस्जिद पर का लेख।

ज हुक्मे शाह सुलताने शरीअत। दलीले जहद बुर्हाने तरीकत॥
शहाबे आसमाने सरफराजी। मुहम्मदशाह आलमगीर गाजी॥
सरे अस्नाम बुतखानः शिकस्तः। जहूरे मस्जिदे दिलख्वाह गश्तः॥
(१०७७)

ब इस्तसवाब नूरुल्लाह मुफ्ती । गुलामे दरगहे पीराने चिश्ती ॥
सनाए खानः जीनत अस्त पैदा । जे दौलतखाना तारीखश हुवेदा ॥

(१०७७ हि०)

अर्थ—मुसल्मानी धर्म के स्वामी (इत्यादि) औरंगजेब बादशाह की आज्ञा से देवमंदिर के देवताओं के सिर तोड़ कर यह मस्जिद बनाई गई (इत्यादि) १०७७ हिजरी ।

कालचक्र

अर्थात्

संसार में जो बड़ी बड़ी घटना हुई हैं उन का समय निर्णय

सं० १६४१

ॐ कालात्मने भगवते श्री कृष्णाय नमः

भूमिका

हाय ! इस 'कालचक्र' को पूरा करके छपाने की भी नौबत न पहुँची कि पूज्यपाद भारतेंदु जी आप ही कालचक्र के कराल गाल मे जा फँसे ! अस्तु भगवदिच्छा, अब कोई वश नहीं ।

यह उन का परिश्रम आप लोगो की सेवा मे भेंट किया जाता है, यदि इस से आप लोगो को कुछ भी सहायता मिलेगी तो सब परिश्रम सुफल हो जायगा ।

बनारस
वैशाख कृष्ण १ सं० १९४९

सेवक
श्री राधाकृष्ण दास

ॐ कालात्मने श्रीकृष्णाय नम

कालचक्र

[ईसवी के पूर्व का काल]

घटना	समय	विशेष
सृष्टि का प्रारभ	१९७२९४७१०१	आर्य लोगो के मत से ।
सत्ययुग का प्रारभ	३८९११०१	आर्य लोगो के मत से ।
त्रेतायुग का प्रारभ	२१६३१०१	आर्य लोगो के मत से ।
द्वापरयुग का प्रारभ	८६७१०१	आर्य लोगो के मत से ।
कलियुग का प्रारभ	३१०१	ज्योतिष के मत से
”	१८५७	भागवत ”
”	१७७५	ब्रह्माण्ड पुराण ”
”	१७२९	वायुपुराण ”
”	१०७८०	बौद्ध लोग ”
इक्ष्वाकु का जन्म और प्रथम बुद्ध	२१८३१०२	पौराणिक मत से
” ”	५०००	जोस ”
” ”	२७००	विल्फर्ड ”
” ”	१५२८	बेटली ”

घटना	समय	बिशेष
इक्ष्वाकु जन्म, प्रथम बुद्ध	२२००	टॉड ”
” ”	३५००	जोस ने स्थानांतर मे माना है।
श्रीराम .	८६७१०२	पौराणिक मत से
” ...	२०२६	जोस ”
” ...	१३६०	विल्फर्ड ”
” .	९५०	बेटली के मत से
” .	११००	टॉड ”
युधिष्ठिर	३१०२	पौराणिक मत से
” .	५७६	बेटली ”
”	१४३०	विल्फर्ड ”
” .	१३९१	डेविस ”
” .	११८०	जोस और कोलब्रुक ”
महाभारत का युद्ध...	१३६७	बिल्सन के मत से
कश्मीर राज्य-स्थापन	३७१४	
परीक्षित	३१०१	
श्री विष्णु स्वामी	३०००	
श्री निंबार्क स्वामी	३०००	
जनमेजय	१३००	
सुमित्र और प्रद्योत	२१००	पौराणिक मत से
” .	१०२९	जोस ”
” ...	७००	विल्फर्ड ”
” ..	११९	बेटली ”
” ..	९१५	विल्सन ”
” ..	६००	बर्मावाले ”
स्वायंभुवमनु ..	४००६	
जयगुप्त ने नैपाल राज्य की स्थापना की	२५९५	

घटना	समय	विशेष
सृष्टि का प्रारभ	४००४	हिबरू धर्म पुस्तक के मत से
,, ...	५८७२	अन्य विद्वानो के मत से
,, ...	४५००	समारतिन मत से
,, ...	४७१०	जूलियन मत से
आदम की उत्पत्ति	४००४	
कायन की उत्पत्ति	४००३	
नूह का प्रलय	२३४८	
चीन राज-स्थापन	२२०७	
मिश्र राज्य-स्थापन	२१८८	
इब्राहीम का जन्म	१९९६	
हिंदुस्तान से एथिओपियन लोगो का मिश्र मे जाना	१६१५	
मूसा की उत्पत्ति	१५७१	
यूनान की सभ्यता	१५००	
यूरोप मे पहले पहल जहाज़ चलना	१४८५	
शाक्य सिह	१०२७ ई० पू०	चीनियो के अनुसार
,,	९६२ ई० पू०	तिब्बत के अनुसार
दाऊद का काल	१०३४	
रुस्तम हिंदुस्तान मे आकर कन्नौज में शिवराजवश स्थापन किया	१०२७ ई० पू०	फरिश्ता
सुलेमान का उदय	९९२	
क्वीन सेमीरैमिस अर्थात् शमीरामा देवी	८१०	तृतीय बलबश की स्त्री कहते हैं कि यह भारत-वर्ष मे आई थी।
शिशु नाग	१९६२	पौराणिक मत से

घटना	समय	विशेष
शिशु नाग	८७०	जोन्स ,,
तिब्बत राज्यारंभ	६६२ ई० पू०	तिब्बत के अनुसार
विलायत में चाँदी तथा सोने का सिक्का बनना	८६४	
मालवा का राज्य चला (धनंजयस)	८४०	
विलायत में चंद्रग्रहण गिना जाना	७२१	किसी के मत से इसी साल गौतम का जन्म
शिशुनाग	७७७	
वलीद के काल में मुसल्मानों ने भारतवर्ष में उपद्रव मचाया	७११	
अन्हल चौहान	७००	
शंकर ने गौड (लखनौती नगर) बसाया	७३१ ई० पू०	
चौहान (राज्यस्थापन, अन्हल चौहान)	७०० ई० पू०	दिल्ली अजमेर का राज्य इस वंश में अब निमरान के राजा हैं।
चीनी और तातारियों में बड़ी लड़ाई	६३६	
नंद ...	१६००	पौराणिक मत से
,,	६६६	जोन्स ,,
महावीर स्वामी (जैनों के)	६२६	
भारतवर्ष से विजयराज ने लंका में जाकर जीतकर राज स्थापन किये	५४३ ई० पू०	

घटना	समय	विशेष
ब्रह्माराज्य स्थापन	६६१ ई० पू०	
विलायत मे गानविद्या का नियमित रूप से चलना	६००	
चद्रगुप्त	१५०२	पौराणिक मत से
„ .	६००	जोन्स „
गौतम (बौद्ध मत का प्रचार)	६०८ ई० पू०	बर्मा वालो के मत से
रोम नगर मे पहिले पहले मद्ु मशुमारी	५६६	
नौशेरवाँ की सेना हिदुस्तान मे आई।	५३०	
एथीन्सनगर मे पहले पहल दुःखात नाटक खेला जाना	५३५	
पयथागोरस मिश्र मे आया	५३४	
अशोक .	१४७०	पौराणिक मत से
„ .	५४०	जोन्स „
अरस्तू का अत और सुकरात का उदय	४६८	
नद .	४१५	नवीन विद्वानो के मत से।
दहलू ने दिल्ली बसाई	४७१ ई० पू०	
सिकदर का जन्म	३५६	
चद्रबीज (मगध का अतिम राजा)	४५२	पौराणिक मत से
„	३००	जोन्स „
चंद्रगुप्त ..	३१५ ई० पू०	
अशोक ..	३३० ई० पू०	

घटना	समय	विशेष
सिकंदर ...	३३४	
सिकंदर ने हिंदुस्तान पर चढ़ाई की	३३१ ई० पू०	
दूसरे अरस्तू जुकरात, बुकरात आदि का उदय	३३०	
सिकंदर का भारतवर्ष मे आगमन	३३७	
सिकंदर की मृत्यु	३२३	
कहकहा दीवाल का बनना	३००	
बली .	६०८ ई० पू०	पौराणिक मत से
" ..	१४६	जोन्स "
जैसलमेर मे यादवों का राज्य-स्थापन	१५० ई० पू०	
विक्रमादित्य	५६ ई० पू०	
ईसवी सन् से पूर्व या ईसवी सन् मे।		
विक्रमादित्य गद्दी पर बैठा	५७	
कैसर का उदय	५०	
ईसा मसी फॉसी पड़े	३३ ई०	
रोमवालो ने लडननगर बनवाया	५० ई०	
सौराष्ट्र मे वल्लभी वंश	१ ई०	
मनीपुर राज्यारंभ (पाखबा)	३५ ई०	
फारस राज्य स्थापन (अर्द शेर)	२२६ ई०	

घटना		समय	विशेष
आमेर राज्य-स्थापन (नल-नरवर गढ़)		२६४ ई०	
कर्णाट राज्यस्थापन		३०० ई०	
यूनान और एशिया मे महाभूकप हुआ १५० नगर नष्ट हो गये		३५८	
राठौर राज्य कन्नौज मे स्थापन (यवनाश्व)		३००	
भोज		४८३ ई०	
मुहम्मद	.	५६४ ई० जन्म ५६६ ई० मृत्यु ६५३ ई०	
भारतवर्ष से यूरप मे रेशम गया		५५१ ई०	
एलोमार्चिश	..	६४८ Poulomeon of Chinese	
अबूबकर	..	६३२ ई०	
उमर	...	६३४	
उसमान	..	६४४	
अली	...	६५६	
हुसेन	.	६६१	
करबला का युद्ध	..	६८१	
मुहम्मद का मदीने पलायन हिजरी सन् का स्थापन		६२२	
मुसल्मानो ने इसकदरिया का प्रसिद्ध पुस्तकालय जला दिया जिस मे केवल पुस्तको की अग्नि से महीनो सब काम हुआ. हा !		६४०	

घटना	समय	विशेष
सोमनाथ का टूटना	१०२४	
यूरप मे कागज गूदर से बना	१०००	
क्रूसेड का प्रसिद्ध धर्म-युद्ध तीन लाख कुस्तानों ने आरभ किया	१०६६	
हारावती (हाडा) राज्य-स्थापन	१०२४ ई० अब कोटा बूँदी	
बंगाल राज्य-स्थापन (भूपाल)	१०००	
विजय नगर राज्य-स्थापन (नद) विद्यानगर	१०३४	
पृथ्वीराज ...	११६२ ई०	
मुहम्मद गोरी ..	११६३	
श्री रामानुज	११३७	
श्री शकराचार्य	११२२	
शहाबुद्दीन की पहली चढाई	११६१	
पृथ्वीराज की हार, भारत की स्वाधीनता का अत	११६३	
युक्लिड इ गलैंड मे गई	११३०	
पुस्तक बेचने की चाल इगलैंड मे चली	११००	
इगलैंड मे कर मे रुपया लेना चला अब तक अन्न आदि लिया जाता था	११३६	
वेकटगिरि राज्यस्थापन (पाटलमारि बेताल)	११४०	

घटना	समय	विशेष
गया उद्धार के हेतु उदयपुर के नौ राजाओं का वीरगति पाना	१२०० ई०	
रणथम्भौर का हम्मीर	१२६६ ई०	
चंगेजखाँ ...	१२०६	
हलाकू ...	१२५६	
कुतुबुद्दीन ऐबक	१२०६	
चंगेज खाँ का भारत में उपद्रव	१२१२	
रजिया बेगम स्त्री-बादशाह हुई	१२३६	
दक्षिण पर मुसल्मानों की पहली चढ़ाई	१२६४	
हलाकू ने तातार राज्य स्थापन किया	१२५६	
बंगाले में (लखनौती गौड़) मुसल्मान राज्यारंभ (बखतियार खिलजी)	१२०३	इन लोगों ने अकबर के समय तक राज्य किया
इंगलैंड में जिआग्रफी गई	१२१०	
प्रसिद्ध मैगनाचार्टा पर हस्ताक्षर हुए और पार्लियामेंट इंगलैंड में चली	१२१५	२५ जून
कंपनी बनाकर व्यापार करने की चाल चली	१२३२	
इंगलैंड में प्रतिष्ठित लोगों को इस्कायर कहने की चाल चली।	१२४४	

घटना	समय	विशेष
वहाँ राजकवि का पद प्रतिष्ठित हुआ	१२५१	
वहाँ पहले पहल सोने का सिक्का बना	१२५७	
राठौरों का जोधपुर में बसना	१२१०	
बारबुक्कराज विजयपुर का राजा, माधवाचार्य	१३३४ ई०	
तैमूर .	१३६३	
श्रीमध्व .	१३००	
जौनपुर की शाही स्थित हुई (ख्वाजा जहाँ)	१३६४	सन् १४७६ में यह राज बगाले के मुसल्मानी राज्य मे मिल गया।
गुजरात राज-नाश	१३०६	अलाउद्दीन मुहम्मद शाह ने जीता।
कुलबर्गा की बहमनी बादशाहत का आरभ	१३४७	
यूरप मे चाँदी के बरतन चिमचे चले और अलजेबरा आया।	१३००	
वहीं हुंडी की चाल चली।	१३०७	
गोटा किनारी चला (यूरप मे)	१३२०	
छठे चार्ल्स फरासीस के बादशाह के वास्ते ताश का खेल बना	१३९१	

घटना	समय	विशेष
मालवा राज्य-ध्वस	१३३० ई०	मुसलमानी राज्य में मिल गया।
गुरु नानक	१४१६	
गुरु अङ्गद	१४३०	
बीजापुर की बादशाहत का आरभ	१४८६	
इगलैंड मे बारूद बनी	१४१८	
काठ के टाइप से यूरोप मे पहले पहल छापना चला	१४३०	
वहाँ शीशा बनाना चला	१४५७	
वहाँ तौल नियत हुई	१४५२	
वास्कोडिगामा का हिंदुस्तान खोजने को चलना	१४६७	
कोलम्बस के साथियो द्वारा अमेरिका का प्रादुर्भाव	१४६६	
बीकानेर राज्य-स्थापन (बीका)	१४५८	
आसाम राज्यारभ	१४००	
मैसूर राज्य-स्थापन (बट्टावाडियार)	१४६०	
साँगा राणा का बाबर को जीतना।	१५०८	
राणा प्रताप सिह अकबर का घोर युद्ध।	१५८३	
गुरु अमरदास	१५५२	

घटना	समय	विशेष
गुरु रामदास	१५७४	
गुरु अर्जुन	१५८१	
श्रीवल्लभाचार्य	१५३५	
श्री कृष्ण चैतन्य	१५४२	
श्री हितहरिवंशजी	१५८२	
बाबर का दिल्ली राज्य पर बैठना	१५२६	
सक्के ने चमडे का सिक्का चलाया	१५३६	
गोलकुंडा की बादशाही का आरंभ	१५१२	
डिफेंडर आफ दी फेथ का पद हेनरी (७) को दिया गया जो अब भी महारानी को है।	१५२१	Defender of the faith
प्रोटेस्टेट मत स्थापन	१५२६	
एंगलैंड मे डाकखानो की सृष्टि	१५३१	
वहाँ के लोगो ने सूई बनाना सीखा।	१५४५	
मेरी स्काटलैंड की रानी का सिर काटा गया।	१५८७	एलिजबेथ ने व्यर्थ यह पाप किया। एलिजबेथ बडी पापासक्त थी किंतु प्रकट मे धार्मिक बनी थी।
इंगलिश मर्क्यूरी नामक प्रथम समाचारपत्र चला	१५८८	English Mercury
कवि शेक्सपीयर का उदय	१५६५	
शिवाजी	१६४७ ई०	

घटना	समय	विशेष
गुरु हरिगोविद	१६०६	
गुरु हरिराय	१६६४	
गुरु हरिकृष्ण	१६६१	
गुरु तेगबहादुर	१६६४	
गुरु गोविदसिह	१६७५	
व्यास जी	१६१२	
अकबर का मरना	१६०५	
शिवा जी का जन्म	१६२७	
ईस्ट इडिया कपनी स्थापित हुई	१६००	
मदरास मे अगरेज जमे	१६२०	
तथा बबई मे	१६६१	
बंदा साहब	१७०८	
लका का राज्य अगरेजो ने लिया	१७६८	
हैदराबाद का राज्य आसफ-जाह ने स्थापन किया	१७१७	
बाजीराव का अत	१७१८ ई०	
लखनऊ राज्यारम्भ	१७००	
पानीपत मे भाऊ की हार	१७५६	
शाह आलम को गुलाम कादिर ने अधा किया	१७८८	
सिहल (लका) का अतिम राजा श्रीविक्रमराजसिह	१७६८ ई०	अगरेजो ने लिया
सर न्यूटन जोत्सी	१७००	

घटना	समय	विशेष
इगलिस्तान मे सूत की कल तथा फारस मे प्रथम बैल्यून	१७३०	
कलकत्ता अगरेजो ने स्वाधीन किया	१७५६	
बकसर की सिराजुद्दौला की लडाई	१७६४	
यह बात जानी गई कि जल दो वायु मिलकर बनता है	१७८१	
अमेरिका स्वतत्र हुआ, सवा अरब रुपया, पचास हजार प्राणी और कई टापू गवॉ कर अगरेज शात हुए	१८७२	
विद्युत्शक्ति प्रचारक बेनजामिन फ्रैंकलिन मरा	१७६०	
नेपोलियन बोनापार्ट	उदय १७६४ अस्त १८२१	
वारन हेस्टिग्स–जिस ने राजा चेतसिंह से महा अन्याय पूर्वक बनारस का राज्य छीना था, सात लाख रुपया पार्लियामेट मे व्यय कर के सात बरस मे उन लोगो की दृष्टि मे दोष मुक्त हुआ।	१७६५	किंतु न्यायकर्त्ता परमेश्वर के सामने से दोष मुक्त कब हो सकता है ?

घटना	समय	विशेष
फरासीस मे अगरेजो को अति दु खित जान कर दयालु आर्यो ने केवल बंगदेश से पद्-रह लाख और अन्य २ देश मे से कराड़ो रुपया भेजा।	१७६८	इलबर्टबिल विद्वेषी इस को पढ़ कर भी हमलोगो से कृतघ्नता करने मे न चूकेगे ?
टीपू हारा, अगरेजों ने श्रीरगपट्टन लिया।	१७६६	
हैदराबाद मे निजाम राज्य-स्थापन (आस-फजाह)	१७१७	
बनारस मे सरकार का राज्य	१७६३	राजा चेतसिह को निकाल दिया १७८१
वजीर अली का उपद्रव	१७६८	
मथुरा मे कत्लेआम	१७५८	
नादिरशाही	१७३६ ई०	
कलकत्ता सर्कार ने लिया	१७५८	
पलासी की लड़ाई	१७६३	
विजयनगर (विद्या-नगर) राज्य-नाश	१७५६	राजा त्रिमल्ल राव को सुलतान ख़ॉ ने राज्य से उतारा।
पेशवा राज्यारभ (बाला जी)	१७४०	
नागपुर राज्यारभ (रघु जी)	१७३४	भोसले

घटना	समय	विशेष
सेंधिया राज्यारभ (रानू जी)	१७२४	
हुलकर राज्यारंभ (मल्हार राव)	१७ ४	
गाइकवाड राज्यारभ (दामाजी)	१७२०	
महाराज रणजीतसिह	१८०५	
लखनऊ मे बादशाही पद गाजीउद्दीन	१८१४	
लखनऊ का नाश	१८४७	
लार्ड लेक ने दिल्ली ली	१८०३	
तार की खबर का प्रचार	१८००	
इन्जिन से नाव चलाना चला	१८१२	
शाहशुजा से महाराज रणजीत सिह ने कोह-नूर हीरा लिया ।	१८१४	
महारानी विक्टोरिया का जन्म	१८१६ मई २०	
लार्ड बेंटिक ने सती होना बद किया ।	१८२६	
अमेरिका से पहले पहल जहाज मे बरफ भर के कलकत्ते में आया ।	१८३३	
अगरेजी राज्य के सब टापू मे लौंडी गुलाम स्वतत्र कर दिए गए।	१८३४	

घटना	समय	विशेष
महारानी विक्टोरिया राज्य पर बैठी	१८३७ २० जून	उस समय अगरेजी राज्य की आमदनी साढ़े छियालिस करोड़ थी।
महारानी विक्टोरिया का विवाह। दोस्तमहम्मद का पकड़ा जाना। रेल का नियमित रूप से चलना	१८४१ फर्वरी १०	
प्रिंस आफ वेल्स का जन्म	१८४१	
प्रिंसेस आफ वेल्स का जन्म	१८४४	
हिंदुस्तान मे बलवा	१८५७	
महारानी का ईस्ट इडिया कपनी से राज्य अपने हाथ मे लेना	१८५८	
ड्यूक आफ एडिन्बरा का भारतवर्ष मे आना	१८७० ई०	
प्रिन्स आफ वेल्स का शुभागमन	१८७५ ई०	
स्वामी दयानद का उदय	१८७०	
महारानी का इम्प्रेस आफ इंडिया का पद धारण करना	१८७७	
हिंदी मे प्रथम नाटक (नहुष नाटक)	१८५६	
तथा द्वितीय—(शकुंतला)	१८६३	

घटना	समय	विशेष
तथा तृतीय (विद्यासुदर)	१८७१	
हिदी नए चाल मे ढली	१८७३	
हिंदी का प्रथम समाचार पत्र (सुधाकर)	१८५०	
तीर्थों का कर छूटा	१८३७	
बनारस मे पसेरी का उपद्रव	१८४२	
काशी में दो महीने का महा भूकप	१८३७	
पीपे मे आग लगी	१८५०	
लाट मैरो की हिदू मुसल्मान की लडाई	१८०६	
पेशवा राज्यात बाजीराव	१८१८	
नागपुरराज्यात (मूडाजी)	१८१८	
इलबर्ट बिल और आर्यो मे ऐक्य का बीज	१८८३	
गवर्नरजेनरल वारेन हेष्टिंग्स	१७७४—१७८५ ई०	
मैकफर्सन ब्यारोनेट	१७८६—१७८६ ई०	
कॉर्नवालिस ...	१७८६—१७६३ ई०	
सर जान शोर ..	१७६३—१७६८ ई०	
एलुरेड क्लार्क ..	१७६८—१७६८ ई०	
वेल्सली ...	१७६८—१८०५ ई०	
मार्क्विस कॉर्नवालिस	१८०५—१८०५ ई०	
बार्लो ...	१८०५—१८०७ ई०	
मिन्टो ...	१८०७—१८१३ ई०	
हेस्टिंग्स ...	१८१३—१८२३ ई०	

घटना		समय	विशेष
जान एडम	..	१८२३—१८२३ ई०	
एमहर्स्ट	..	१८२३—१८२८ ई०	
बेली	...	१८२८—१८२८ ई०	
बेन्टिक	...	१८२८—१८३५ ई०*	
मेटकाफ	...	१८३५—१८३६ ई०	
ऑकलैंड	..	१८३६—१८४२ ई०	
एलेनबरा		१८४२—१८४४ ई०	
हार्डिंग्ज	..	१८४४—१८४८ ई०	
डलहौसी	..	१८४८—१८५६ ई०	
कैनिंग	...	१८५६—१८६२ ई०†	
एलगिन	..	१८६२—१८६३ ई०	
राबर्ट नेपियर	...	१८६३—१८६३ ई०	
विलियम डेनिसन		१८६३—१८६४ ई०	
लारेन्स	...	१८६४—१८६६ ई०	
मेयो	..	१८६६—१८७२ ई०	
स्ट्राची	...	१८७२—१८७२ ई०	
मार्चिस्टून (लॉर्ड नेपियर ऑव)		१८७२—१८७२ ई०	
नॉर्थब्रुक	...	१८७२—१८७६ ई०	
लिटन	...	१८७६—१८८० ई०	
रिपन	...	१८८०—१८८४ ई०‡	

* अब तक ये पदाधिकारी गवर्नर जेनरल ऑव बंगाल कहलाते थे पर इन्हीं के समय से गवर्नर जेनरल ऑव इंडिया कहे जाने लगे। (स०)

† सन् १८५८ ई० से क्वीन विक्टोरिया के घोषणापत्र से ये पदाधिकारी वाइसराय भी कहे जाने लगे। (स०)

‡ इसके अनंतर के बड़े लाटों की सूची इस प्रकार है—

डफरिन	१८८४—१८८८ ई०
लैन्सडाउन	१८८८—१८९४ ई०
एल्गिन	१८९४—१८९९ ई०

घटना	समय	विशेष
ब्राह्म मत का प्रचार .	१८२७ ई०	
पहिली पुस्तक छपी .	१४५७ ई०	
एशियाटिक सोसाइटी स्थापन	१७४८ ई०	
काबुल युद्ध .	१८४२ ई०	
भारत मे प्रथम ईस्ट इडियन रेल का खुलना	१८५४ ई०	
महाराज जगबहादुर की मृत्यु	१८७७ ई०	
मिस्टर ग्लैडस्टन का जन्म	१८०६ ई०	
गारी बाल्डी का जन्म	१८०७ ई०	
" मृत्यु ..	१८८२ ई०	
बुद्ध का जन्म .	५५० ई० पू०	

कर्जन	१८६६–१६०४ ई०
एम्टहिल	१६०४–१६०४ ई०
कर्जन	१६०४–१६०५ ई०
मिंटो	१६०५–१६१० ई०
हार्डिग	१६१०–१६१६ ई०
केम्सफोर्ड	१६१६–१६२१ ई०
रीडिग	१६२१–१६२६ ई०
अर्विन	१६२६–१६३१ ई०
विलिंगडन	१६३१–१६३६ ई०
लिनलिथगो	१६३६–१६४३ ई०
वावेल	१६४३–१३४६ ई०
माउटबेटन .	१६४६–

१५ अगस्त सन् १६४७ को भारत को स्वतत्रता अग-भग के साथ मिली।

घटना	समय	विशेष
कुष्ट की बीमारी भारतवर्ष में देखी गयी	१३००ई०पू०	डाक्टर राजेन्द्रलालमित्र लिखते हैं कि कुष्ट की बीमारी ऐत्रे ऋषि के समय मे प्रथम भारतवर्ष मे दिखाई दी जिसे आज ३२ सौ वर्ष हुए होगे।

—(-:o:-)—

जयपुर राजवंश

नाम	राज्यारम्भ सन्	मृत्यु सन्
पृथ्वी सिह	१५०३	१५२८ ई०
भारमल्ल	१५२८	१५७४ ई०
भगवानदास	१५७४	१५९० ई०
मानसिह	१५९०	१६१५ ई०
भावसिह	१६१५	१६२१ ई०
जयसिह	१६२२	१६६७ ई०
रामसिंह	१६६७	१६९९ ई०
जयसिह	१७००	१७४४ ई०
ईश्वरीसिह	१७४४	१७५१ ई०
माधोसिह	१७५१	१७७८ ई०
प्रतापसिंह	१७७९	१८०३ ई०
जगतसिह	१८०३	१८१९ ई०
रामसिंह	१८३५	१८८० ई०
माधोसिह	१८८०	०

✻ मानसिंह वर्तमान नरेश हैं। यह सूची अधूरी है, बीच बीच में भी नाम छूट गए हैं। मृत्यु के कारण भारतेंदु जी इसे ठीक नहीं कर सके। (स०)

भरतपुर के राजाओं का नाम।

नंबर	नाम रईस	गद्दी नशीनी का सवत्	देहान्त सवत्	मुद्दत हुकूमत
१	बदनसिंह	सवत् १७७६ चैत सुदी १	सवत् १८१२ ज्येष्ठ सुदी १०	३३ बरस, २ माह, १० दिन।
२	सूरजमल	सवत् १८१२ ज्येष्ठ सुदी १२	सवत् १८२० पौष कृष्ण १२	८ साल, छ. माह, १५ दिन।
३	जवाहिरसिंह	सवत् १८२० पौष कृष्ण १३	सवत् १८२५ श्रावण सुदी १५	४ साल, ७ माह, १७ दिन।
४	रत्नसिंह	सवत् १८२५ भाद्रपद कृष्ण १	सवत् १८२६ चैत्र सुदी ५	७ माह, २० दिन
५	केसरीसिंह	सवत् १८२६ चैत्र सुदी ६	सवत् १८३४ चैत्र कृष्ण १५	७ साल, ११ माह, २४ दिन।
६	रणजीतसिंह	सवत् १८३४ चैत्र सुदी १	सवत् १८६२ मृगशिर सुदी १५	२७ साल, ८ माह, १५ दिन।
७	रणधीरसिंह	सवत् १८६२ पौष कृष्ण १	सवत् १८८० आश्विन सुदी ४	१७ साल, ६ माह, १६ दिन।
८	बलदेवसिंह	सवत् १८८० आश्विन सुदी ५	सवत् १८८१ फागुन सुदी ११	१ साल, ४ माह, १६ दिन।
९	दुर्जनशाल	सवत् १८८१ चैत्र कृष्ण ६	सवत् १८८२ पौष सुदी १० *	६ माह, १७ दिन।
१०	बलवन्तसिंह	सवत् १८८२ पौष सुदी ११	सवत् १९०६ फाल्गुन सुदी १०	२७ साल, २ माह, २ दिन।
११	महाराज जसवतसिंह	सवत् १९१० आषाढ कृष्ण २	सवत् १९४२ तक मौजूद	३२ साल जारी।

—❀—

* यह गद्दी से भारत-सरकार द्वारा उतारे गए थे और यह मिती मृत्यु की न होकर गद्दी से हटाए जाने की है। (स०)

रामायण का समय

सं० १६४१

रामायण का समय

(रामायण बनने के समय की कौन कौन बातें विचार करने के योग्य है)

पुराने समय की बातो को जब सोचिये और विचार कीजिये तो उन का ठीक ठीक पता एक ही बेर नहीं लगता। जितने नये नये ग्रथ देखते जाइए उतनी ही नई नई बातें प्रकट होती जाती हैं। इस विद्या के विषय मे बुद्धिमानो के आज कल दो मत है। एक तो वह जो बिना अच्छी तरह सोचे विचारे, पुराने अग्रेजी विद्वानो की चाल पर चलते है और उसी के अनुसार लिखते पढते भी है और दूसरे वे लोग जिन को किसी बात का हठ नहीं है, जो बाते नई जाहिर होती गई उन को मानते गये। दूसरा मत बहुत दुरुस्त और ठीक तो है, पर पहिला मत माननेवालो को ऐटिक्वेरियन (Antiquarian) बनने का बड़ा सुभीता रहता है। दो चार एसी बँधी बाते हैं जिन्हे कहने ही से वे ऐटिक्वेरियन हो जाते है। जो मूर्त्तियाँ मिलै वह जैनो की हैं, हिदू लोग तातार से वा और कहीं पच्छिम से आये होगे, आगे यहाँ मूर्त्तिपूजा नहीं होती थी इत्यादि कई बातै बहुत मामूली हैं, जिन के कहने ही से आदमी ऐटिक्वेरियन हो सकता है। जा कुछ हो इस बात को लेकर हम इस समय हुज्जत नहीं करते, हम सिर्फ यहाँ वाल्मीकीय रामायण

मे से ऐसी थोड़ी सी बाते चुन कर दिखाते हैं जो बहुत से विद्वानो की जानकारी मे आज तक नहीं आई है।

रामायण बनने का समय बहुत पुराना है, यह सब मानते हैं। इस से उस मे जो बातै मिलती है वे उस जमाने मे हिंदुस्तान मे बरती जाती थीं, यह निश्चय हुआ। इस से यहाँ वे ही बातें दिखाई जाती है जो वास्तव मे पुरानी हैं पर अब तक नई मानी जाती है और विदेशी लोग जिन को अपनी कहकर अभिमान करते है।

रामायण कैसा सुदर ग्रथ है और इस की कविता कैसी सहज और मीठी है, इसे जिन लोगो ने इस की सैर की है वे अच्छी तरह जानते है, कहने की आवश्यकता नहीं। और इस मे धर्मनीति कैसी चाल पर कही है, इस से हम यहाँ पर और बातो को छोड कर केवल वही बातै दिखाना चाहते है जो प्राचीन विद्या (ऐटीकेटी) से सबध रखती है।

बालकांड—अयोध्या के वर्णन मे किले की छत पर यत्र रखना लिखा है। यंत्र का अर्थ कल है * इस से यह स्पष्ट होता है कि उस जमाने मे किले की बचावट के हेतु किसी तरह की कल अवश्य काम मे लाई जाती थी, चाहे वे तोप हो या और किसी तरह की चीज़ (या यत्र से दूरबीन मतलब हो)।

---

* यत्र उस को कहते हैं जिस से कुछ चलाया जाय। श्रीगीता जी में लिखा है "ईश्वर. सर्व्वभूताना हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति। भ्रामयन् सर्व्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया"। ईश्वर प्राणियो के हृदय मे रहता है और वह भूत मात्र को जो (मानो) कल पर बैठे है माया से घुमाता है। तो इस से स्पष्ट होता है कि यंत्र से इस श्लोक में किसी ऐसी चीज से मतलब है जो चरखे की तरह घूमती जाय। कल शब्द भी हिंदी है, "कत गतौ" से बना हो वा "कल प्रेरणे" से निकला होगा (कवि-कल्पद्रुम कोष देखो) दोनों अर्थ से उस चीज को कहैंगे जो आप चलै वा दूसरे को चलावै।

शतघ्नी * यह उस चीज को कहते है जिस से सैकडो आदमी एक साथ मारे जा सकें। कोषो मे इस शब्द के अर्थ यह दिये हैं कि शतघ्नी उस प्रकार की कल का नाम है जिस से पत्थर और लोहे के टुकडे छूट कर बहुत से आदमियो के प्राण लेते है और इसी का दूसरा नाम वृश्चि-काली है। (सर राजा राधाकान्त देव का शब्दकल्पद्रुम देखो।) इस से मालूम होता है कि उस समय मे तोप या ठीक उसी प्रकार का कोई दूसरा शस्त्र अवश्य था।

अयोध्या के वर्णन मे उस की गलियो मे जैन फकीरो का फिरना

---

* शतघ्नी को भी यन्त्र करके लिखा है। शतघ्नी कौन चीज है इसका निश्चय नहीं होता। तीन चीज में इस का सदेह हो सकता है, एक तोप, दूसरे मतवाले, तीसरे जम्हीरे में। इस के वर्णन मे जो जो लक्षण लिखे हैं उन से तोप का तो ठीक सदेह होता है, पर यह मुझे अब तक कहीं नहीं मिला कि ये शतघ्नियाँ आग के बल से चलाई जाती थीं, इसीसे उनके तोप होने में कुछ संदेह हो सकता है। मतवाले से शतघ्नी के लक्षण कुछ नहीं मिलते, क्योंकि मतवाले तो पहाडों वा किलों पर से कोल्हू की तरह लुढकाये जाते हैं और इस के लक्षणों से मालूम होता है कि शतघ्नी वह वस्तु है जिस से पत्थर छूटैं। जहमीरा वा जम्हीरा एक चीज है, उस से पत्थर छूट छूट कर दुश्मन की जान लेते हैं (हिदुस्तान की तवारीख में मुहम्मद कासिम की लडाई देखो)। इस से शतघ्नी के लक्षण बहुत मिलते हैं। पर रामायण में लिखा है कि लोहे की शतघ्नी होती थीं और फिर सुदरकाड में टूटे हुए वृक्षों की उपमा शतघ्नी की दी है। इससे फिर सदेद होता है कि हो न हो यह तोप ही हो। रामायण के सिवा और पुराणों में भी किले पर शतघ्नी लिखा है ? (मत्स्य-पुराण में राज्यधर्म वर्णन में) दुर्गयन्त्राः प्रकर्त्तव्याः नाना प्रहरणान्विताः। सहस्रघातिनो राजस्तैस्तुरक्षाविधीयते ॥ १ ॥ दुर्गञ्च परिखोपेतं वप्राट्टालसयुत। शतघ्नी यत्र मुख्यैश्च शतशश्च समावृत ॥ २ ॥ इस मे ऊपर के श्लोकों में शतघ्नी के बदले सहस्रघाती शब्द है (यहाँ शत और सहस्र शब्दों से मुराद अनगिनत से है)। तोप की भाँति सुरग उडाना भी यहाँ के लोग अति प्राचीन काल से जानते हैं। आदि पर्व का ३७८ श्लोक देखो। सुरंग शब्द ही भारत में लिखा है।

लिखा है, इस से प्रकट है कि रामायण के बनने से पहिले जैनियो का मत था।

जिस समय राजा दशरथ ने अश्वमेध यज्ञ किया उस समय का वर्णन है कि रानी कौशिल्या ने अपने हाथ से घोड़े को तलवार से काटा। इस बात से प्रगट होता है कि आगे की स्त्रियो को इतनी शिक्षा दी जाती थी कि वह शस्त्रविद्या मे भी अति निपुणता रखती थीं।

अभी एशियाटिक सोसाइटी के जरनल मे पडित प्राणनाथ एम० ए० ने इस का खडन किया है कि वराहमिहर के काल मे श्रीकृष्ण की पूजा ईश्वर समझ के नहीं करते थे और बराहमिहर के श्लोको ही से श्रीकृष्ण की पूजा और देवतापन का सबूत भी दिया है। और भी बहुत से विद्वान इस बात मे झगडा करते हैं। और योरोप के विद्वानो मे बहुतो का यह मत है कि श्रीकृष्ण की पूजा चले थोडे ही दिन हुए, पर ४० वे सर्ग के दूसरे श्लोक मे नारायण के वास्ते दूसरा शब्द वासुदेव लिखा है और फिर पचीसवे श्लोक मे कपिलदेव जी को वासुदेव का अवतार लिखा है, इस से स्पष्ट प्रगट है कि उस काल से श्रीकृष्ण को लोग नारायण कर के जानते और मानते है। *

अयोध्याकाण्ड—२० वे सर्ग के २६ श्लोको मे रानी कैकेयी ने राम जी को वन जाते समय आज्ञा दिया कि मुनियो की तरह तुम भी माँस न खाना, केवल कदमूल पर अपनी गुजरान करना। इस से प्रकट है कि उस समय मुनि लोग माँस नहीं खाते थे †।

३० वे सर्ग के ३७ श्लोक मे गोलोक का वर्णन है। प्रायः नये विद्वानो का मत है कि गोलोक इत्यादि पुराणो के बनने के समय के पीछे निकाले गए है और इसी से सब पुराणो मे इन का वर्णन नहीं

* भारत के भी आदि पर्व का २४७ से २५३ श्लोक तक और २४२७ से २४३२ श्लोक तक देखो, श्रीकृष्ण को परब्रह्म लिखा है। और भी भारत मे सभी स्थानों में है, उदाहरण के हेतु एक पर्व मात्र लिखा।

† यहाँ माँस से बिना यज्ञ के माँस से मुराद होगी।

मिलता। किंतु इस वर्णन से यह बात बहुत स्पष्ट हो गई कि गोलोक का होना हिंदू लोग उस काल से मानते हैं जब कि रामायण बनी। *

३२ वे सर्ग मे तैत्तिरीय शाखा और कठकलाप शाखा का नाम है। इस से प्रकट होता है कि वेद उस काल तक बहुत से हिस्सों में बॅट चुके थे।

रामजी ने वन जाने की राह इस तरह बयान की गई है। अयोध्या से चल कर तमसा अर्थात् टौस नदी के पार उतरे। फिर वेदश्रुति, † गोमती, स्यदिका ‡ और गगा पार हाते हुए प्रयाग आये और वहाँ से चित्रकूट (जोकि रामायण के अनुसार १० कोस है) § गए। यह बिल्कुल सफर उन्हो ने पॉच दिन मे किया। और सुमत उन को पहुँचा कर शृगवेरपुर अर्थात् सिंगरामऊ से दो दिन मे अयोध्या पहुँचा। पहली बात से प्रकट हुआ कि पुराने जमाने के कोस बडे होते थे। और दूसरी बात से विदित हुआ कि सडक उस समय मे भी बनाई जाती थी, नहीं तो इतनी दूर की यात्रा का पॉच दिन मे तै करना कठिन था।

भरत जी जब अपने नाना के पास से, जो कि कैकय अर्थात् गक्कर देश का राजा था, आने लगे तो उस ने कई बहुत बड़े और बलवान कुत्ते दिये और तेज़ दौड़नेवाले गदहो (खच्चर) के रथ पर उन को बिदा किया। वे सिधु और पजाब होते हुए इक्षुमती को पार कर अयोध्या आये। इस से दो बात प्रकट हुई, एक तो यह कि उस काल मे कैकय

---

* वेद मे ब्रह्म के धाम के वर्णन में लिखा है कि वहाँ अनेक सींगों की गऊ हैं।

† वेदसा नाम की एक छोटी नदी गोमती मे मिलती है, शायद उसी का नाम वेदश्रुति लिखा है।

‡ जिस को अब सई कहते है।

§ यह बड़े सदेह की बात है, अब जो चित्रकूट माना जाता है वह प्रयाग से तीन चार मजिल है पर यहॉ दस कोस लिखा है। इस दस कोस से यह आशय है कि वहाँ से उस पर्वत की श्रेणी (लाइन) आरंभ होती है, पर जहाँ डेरा किया था वह स्थान दूर होगा।

देश मे गदहे और कुत्ते अच्छे होते थे, दूसरे यह कि वहाँ की हिदुस्तान से राह सिंधु देकर थी।

७१ वे सर्ग मे मूर्त्तियो का वर्णन है, इस से दयानद सरस्वती इत्यादि का यह कहना कि रामायण मे कहीं मूर्त्तिपूजन का नाम नहीं है अप्रमाण होता है।

इसी स्थान मे निषाद का लडाई की नौकाओ के तैयार करने का वर्णन है, जिस से यह बात प्रमाणित होती है कि उस काल के लोग स्थल की भाँति पानी पर भी लड़ सकते थे। *

दक्षिण के लोगो की सिर मे फूल गूँधने की बडी प्रशंसा लिखी है। इस से यह बात झलकती है कि उत्तर के देश मे फूल गूँधने का विशेष रिवाज नहीं था।

१०८ सर्ग मे जावालि मुनि ने चार्वाक का मत वर्णन किया है। और फिर १०९ सर्ग मे बुध का नाम और उन के मत का वर्णन है। इस से प्रगट है कि ये दोनो वेद के विरुद्ध मत उस समय मे भी हिदुस्तान मे फैले हुये थे। अभी हम ऊपर बालकाण्ड मे जैनियो के उस काल मे रहने का जिक्र कर चुके हैं तो अब ये सब बातै रामायण के बनने के समय, बुध के जन्म का और बौद्ध और जैन मत अलग होने के समय की विवेचना मे कितनी हलचल डालेगी प्रगट है।

आरण्यकांड—चौथे सर्ग के २२३ श्लोक मे लिखा है कि असुरो की यह पुरानी चाल है कि वे अपने मुर्दे गाड़ते है। इस से प्रगट है कि वेद के विरुद्ध मत माननेवालो मे यह रीति सदा से चली आती है।

किष्किंधाकांड—१३ वे सर्ग के १६ श्लोक मे कलम अर्थात् जोधरी के खेत का बयान है, और कोष मे "लेखनी कलमित्यपि" लिखा है। इस वाक्य से प्रगट होता है कि कलम लिखने की चीज़ का नाम सस्कृत मे भी है और वह और चीजो के साथ जोधरी का भी होता था, और इसी से यह भी साफ हो जाता है कि सिवा ताड़ के पत्र के कागज़ पर भी आगे के लोग लिखते थे, क्योकि ताड़ पर मिटने के डर से सिर्फ

* सर्ग ८४ श्लोक ७-८। (स०)

लोहे की कलम से लिखा जा सकता है जैसा कि अब तक बंगाले और ओड़ीसे में रिवाज है। *

६२ वे सर्ग के ३ श्लोक मे पुराणों का वर्णन है, जिस से नई तबीयत और नई तलाश (लाइट) के लोगो का यह कहना कि पुराण सब बहुत नए है कहाँ तक ठीक है, आप लोगो पर आप से आप विदित होगा।

इस काड मे और बातो की भाँति यह भी ध्यान करने के योग्य है कि रामजी ने बालि से मनु के २ श्लोक कहे हैं और यह भी कहा है कि मनु भी इस को प्रमाण मानते है। इस से प्रगट हुआ कि मनु की सहिता उस काल मे भी बड़ी प्रामाणिक और प्रतिष्ठित समझी जाती थी। †

सुंदरकांड—तीसरे सर्ग के १८ श्लोक मे किले के शस्त्रालय (सिलहगाह) के वर्णन मे लिखा है कि जिस तरह से स्त्री गहनो से सजी रहती है वैसे ही बुर्ज यत्रो से सजे हुए थे। इस से स्पष्ट प्रगट होता है कि तोप या और किसी प्रकार का ऐसा हथियार जिस से कि दूर से गोले की भाँति कोई वस्तु छूट कर जान ले उस समय मे अवश्य था।

चौथे सर्ग के १८ श्लोक मे फिर किले पर शतघ्नी रखने का वर्णन है।

५ वे सर्ग के पहिले श्लोक मे लिखा है कि चद्रमा सूर्य्य के प्रकाश से चमकता है। इस से स्पष्ट प्रकट हो सकता है कि उस समय मे ज्योतिषविद्या की बड़ी उन्नति थी।

६ वे सर्ग के १३ श्लोक मे लिखा है कि पुष्पक-विमान के चारो ओर सोने के हुडार बने थे और खाने पीने की सब वस्तु उस मे रक्खी रहा करती थीं और वह बहुत से लोगो को बिठला कर एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाता था। इस से सोचा जाता है कि यह विमान निस्संदेह कोई बेलून की भाँति की वस्तु होगी और हुडार उस मे पहचान के हेतु लगाये गये होगे।

---

* इस विषय के लिये "सज्जनविलास" देखो।

† भारत में भी कई स्थान पर मनु का नाम है। उदाहरण के हेतु आदि पर्व का १७२२ श्लोक देखो।

६ वे सर्ग के २५ और २६ श्लोको मे वर्णन है कि लका मे जो गलीचे बिछे थे उन मे घर, नदी, जगल इत्यादि बने हुये थे। अब यदि विलायत का कोई गलीचा आता है, जिस मे मकान, उद्यान इत्यादि बने रहते हैं तो देख कर हम लोग कैसा आश्चर्य्य करते हैं। कैसे सोच की बात है कि हम लोग नहीं जानते कि हमारे हिंदुस्तान मे भी इस प्रकार की चीजै पहिले बनती थीं। यहीं पर जब हनुमान जी ने रावण के मदिरो को जा कर देखा है तो उस मे भोजन के अनेक प्रकार के धातुओ के, मणियो के और कॉच के पात्रो को भी देखा है। चिमचा, कॉटा आदि भी उस समय होता था और बड़ी शोभा से खाना-चुना जाता था। और भी अँगरेजी चाल के पात्र और गहने भुवनेश्वर के मदिर मे भी बहुत प्राचीन काल के बने हैं। बाबू राजेद्र लाल मित्र का उर्डीसा प्रथम भाग देखो।

इसी स्थान मे अशोक-वन मे जानकी जी के शिशिपा के दरख्त के नीचे रहने का वर्णन है।

हिंदुस्तान के बहुत से पडितो का निश्चय है कि शिशिपा शीशम वृक्ष को कहते है। किंतु हमारी बुद्धि में शिशिपा सीताफल अर्थात् शरीफे के वृक्ष को कहते हैं। इस के दो बड़े भारी सबूत है। प्रथम तो यह कि यदि जानकी जी से शरीफे से कुछ सबध नहीं तो सारा हिंदुस्तान उस को सीताफल क्यो कहता है। दूसरे यह कि महाभारत के आदि पर्व मे राजा जन्मेजय की सर्पयज्ञ की कथा मे एक श्लोक है जिस का अर्थ यह है कि आस्तिक की दोहाई सुन कर जो साप न जायगा उस का सिर शिंश वृक्ष के फल की तरह सौ टुकडे हो जायगा *। शिश और शिंशपा दोनो एकही वृक्ष के नाम हैं, यह कोषोसे और नामो के सबंध से स्पष्ट है। शीशम के वृक्ष मे ऐसा कोई फल नहीं होता जिस मे बहुत से टुकड़े हो। और शरीफे का फल ठीक ऐसाही होता है जैसा श्लोक मे लिखा है। इस से लोग निश्चय करै कि सीता जी शरीफे ही के वृक्ष के नीचे थीं।——

* आस्तीक वचन श्रुत्वा यः सर्पो न निवर्त्तते।
शताधाभिद्यतेमूर्ध्ना शिंशिवृक्ष फल यथा॥

१८ वे सर्ग के १२ श्लोक मे गुलाब पाश का वर्णन है। इसलिए हमारे भाई लोग यह न समझे कि यह निधि हम को मुसल्मानो से मिली है, यह हिदुस्तान ही की पुरानी वस्तु है।

३० वे सर्ग के १८–१६ श्लोक मे लिखा है कि ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य प्राय: सस्कृत बोलते थे, किंतु जब छोटे लोगो से बात करते थे तो यह सस्कृत से नीच भाषा मे बोलते थे। इस से बहुत लोगो का यह कहना कि सस्कृत कभी बोली ही नहीं जाती थी खडित होता है। हॉ, इस मे कोई सदेह नहीं, सब से इस को काम मे नहीं लाते थे।

६४ वे सर्ग के २४ श्लोक मे लिखा है कि हनुमान जी राक्षसो के सिर इस तरह से तोड़ तोड कर फेकते थे जैसे यत्र से ढेले छूटै। इस से ऊपर जहॉ हम यत्रो का वर्णन कर आए है उस से लोग समझे कि वह निस्सदेह कोई ऐसी वस्तु थी, जिस से गोली या ककड-पत्थर छोडे जाते थे।

लंकाकांड—(३ सर्ग १२ श्लोक) (३ सर्ग १३ श्लोक) (३ सर्ग १६ श्लोक) (३ सर्ग १७ श्लोक) (४ सर्ग २३ श्लोक) (२१ सर्ग श्लोक अत का) (३६ सर्ग २६ श्लोक) (६० सर्ग ५४ श्लोक) (६१ सर्ग ३२ श्लोक) (७६ सर्ग ६८ श्लोक) (८६ सर्ग २२ श्लोक)। इन श्लोको मे यंत्र और शतघ्नी का वर्णन है।

यत्र और शतघ्नी ये रामायण मे किस किस प्रकार से वर्णन की गई है यह ऊपर के श्लोको के देखने से प्रगट होगा। इन दोनो के विषय मे हमे कुछ विशेष कहना नहीं है, क्योंकि हमारे पाठको पर आप से आप यह प्रगट होगा कि यत्र और शतघ्नी का कोई रूप रामायण से हम ठीक नहीं कर सकते।

पत्थर ढोने की कल किसी चाल की बाल्मीकि जी के समय मे अवश्य रही होगी और किवाड़ भी किसी चाल के कल से बद किये जाते होगे।

यंत्र बहुत ऊँचे ऊँचे भी होते थे, जैसा कि कुंभकर्ण की उपमा मे कहा गया है। शतघ्नी फौलाद की बनती थी और वृक्षो की तरह लबी होती थी और केवल किले ही पर नहीं रहती थी परतु लड़ाई मे भी

लाई जाती थी। इन बातो से हमारा यह कहना तो ठीक ज्ञात होता है कि आगे कल * अवश्य थी पर शतघ्नी किस चाल का हथियार था यह हम नहीं कह सकते। †

११३ सर्ग ४२ श्लोक मे राजा भोज के बेटे के नाम से जो सिह और रीछ की कहानी प्रसिद्ध है वह ठीक ठीक यहाॅ कही गई है।

(११० सर्ग २७ श्लोक) रामजी से ब्रह्मा ने कहा कि सीता लक्ष्मी है और आप कृष्ण है। (इस से हमारा बासुदेव शब्द वाला पहिला प्रमाण और भी दृढ़ होता है। ‡

(१२७ सर्ग ३ श्लोक) पुराणो का वर्णन है।

(१२८ सर्ग) जब राजा लोग राज पर बैठते थे तब नजर खिलअत इत्यादि आगे भी ली और दी जाती थीं। इसी सर्ग मे लिखा है कि रामायण वाल्मीकि जी ने जो पहिले से बनाया है वह जो सुनता है सो सब पापो से छूट जाता है। इस मे (पुराकृत) पद से जैसे मनु का शास्त्र भृगु ने एकत्र किया है वैसे ही वाल्मीकिजी की कविता भी किसी ने एकत्र किया है, यह सदेह होता है। इसी सर्ग के १२० श्लोक मे लिखा है कि जो रामायण लिखते है उनको भी पुण्य होता है। इस से उस काल मे पोथियाॅ लिखी जाती थीं, यह भी स्पष्ट है।

---

* महाभारत की टीका मे युद्ध मे नीलकठ चतुर्धर ने यत्र का अर्थ अग्नि यत्र लिखा है, पर राजा राधाकात ने अग्नियत्र और अग्नयस्त्र इन दोनों शब्दों का अर्थ बदूक किया है ("कामान बदूक इति भाषा") और दारुयत्र का अर्थ कल लिखा है। महाभारत मे एक जगह लिखा है "यत्रस्यगुण दोषौ न विचार्यौं मधुसूदन। अह यत्रो भवान् यंत्री न मे दोषो न मे गुणः।

† विजय रक्षित ग्रथ में लिखा है "अयः कटक सछन्ना शतघ्नी महती शिला' अर्थात् लोहे के काँटों से छिपाई हुई शिला का नाम शतघ्नी है। मेदिनीकोष में करज भी इस का नाम है।

‡ पाणिनि के सूत्रों मे वासुदेव आदि शब्द मिले हैं। इस विषय का विस्तार हमारे प्रबध 'वैष्णवता और भारतवर्ष' मे देखो।

उत्तरकांड—उत्तरकांड मे बहुत सी बातें अपूर्व और कहने सुनने के योग्य हैं पर अंग्रेज विद्वानो ने उस के बनाने का काल रामायण से पीछे माना है, इस से हमारा उन बातो के लिखने का उत्साह जाता रहा तब भी जो बाते विशेष दृष्टि देने के योग्य हैं यहाँ लिखी जाती हैं।

(३१ सर्ग श्लोक ४२।४३) रावण शिव जी की पूजा करता था,* इस से दयानद स्वामी का यह कहना कि रामायण मे मूर्त्तिपूजा नहीं है, खडित होता है। हाँ, यदि वे भी कह दे कि यह काड क्षेपक है या नया बना है तो इस का उत्तर नहीं।

(५३ सर्ग श्लोक २०, २१, २२) श्रीकृष्णावतार का वर्णन है। † विदित हो कि तीसरे सर्ग के १२ श्लोक मे भी एक जगह विष्णु का नाम गोविद कहा है "गोविद कर निस्मृता" और गोविद श्रीकृष्ण का नाम तब पडा है जब गोवर्द्धन उठाया है, यह विष्णुपुराणादिक से सिद्ध है, यथा "गोविद इतिचाभ्यधात्" तो इस से भी हमारी बालकांड वाली युक्ति सिद्ध हुई।

(६४ सर्ग श्लोक ८) छन्दोविदः पुराणज्ञान् इस वाक्य मे पुराणो का वर्णन किया है। पुराणज्ञैश्च महात्मभिः इत्यादि वाक्यो मे और भी कई स्थानो पर पुराणो का वर्णन है और पुराणो की अनेक कथा भी इस कांड मे मिलती हैं। इस से यह निश्चय होता है कि उत्तरकाड के बनने के पहले पुराण सब बन चुके थे।

पुराणो के विषय की बहुत सी शकाएँ काल क्रम से मिट गईं। जिन पुराणो को विलायती विद्वानो ने चार पाँच सौ बरस का बना

---

* यत्रयत्रस्मयातीह रावणोराक्षसेश्वरः। जाम्बूनदमयं लिङ्गं तत्र तत्रस्मनीयते ॥४२॥
वालुका वेदि मध्येतुतल्लिङ्गस्थाप्य रावणः। अर्चयामासगन्धैश्चपुष्पैश्चामृतगन्धिभिः ॥४३॥

† उत्पत्स्यतेहिलोकेऽस्मिन् यदूना कीर्तिवर्द्धनः।
वासुदेव इति ख्यातो विष्णुःपुरुषविग्रहः ॥ २० ॥
स ते मोक्षयिता शापात् राजस्तस्माद्भविष्यसि।
कृता च तेन कालेन निष्कृतिस्ते भविष्यति ॥ २१ ॥
भारावतरणार्थंहि नरनारायणावुभौ। उत्पत्स्येते महावीर्यौकलौयुगउपस्थिते॥२२॥

बतलाया था उन की सात सात सौ बरस की प्राचीन पुस्तकें मिलीं। लोग भागवत ही को बोपदेव का बनाया कहते थे, किंतु चन्द के रायसे मे भागवत का वर्णन मिलने से और प्राचीन पुस्तको से यह सब बातें खडित हो गईं।

उत्तरकांड से मालूम होता है कि अयोध्या, काशी और प्रयाग ये तीनो राज्य उस समय अलग थे और उस समय हिंदुस्तान मे तीन सौ राज्य अलग अलग थे।

इसी काड के चौरान्नबे सर्ग मे यह लिखा है कि उत्तरकांड भार्गव ऋषि ने बनाया है। यह भी एक आश्चर्य्य की बात है। इस वाक्य से तो अँगरेज़ी विद्वानो का सदेह सिद्ध होता है।

॥ इति ॥

एक श्लोकी रामायणम्।

आदौ रामतपोवनादिगमन हत्वा मृग काञ्चनम्,
वैदेहीहरणं जटायुमरण सुग्रीवसभाषणम्।
वालीनिग्रहणं समुद्रतरणं लङ्कापुरीदाहनम्,
पश्चाद्रावणकुम्भकर्णहननम् एतद्धि रामायणम्॥

पंच पवित्रात्मा

अर्थात्

मुसलमानी मत के मूलाचार्य महात्मा मुहम्मद, आदरणीय
अली, बीबी फ़ातिमा, इमाम हसन

और

इमाम हुसैन की संक्षिप्त जीवनी

स० १९४१

सन् १८८४ ई० मे विक्टोरिया प्रेस
काशी से छपा । सस्करण
नही दिया है अत
प्रथम ही होगा ।

पंच पवित्रात्मा

—:※:—

१—महात्मा मुहम्मद

जिस समय अरब देशवाले बहुदेवोपासना के घोर अंधकार में फँस रहे थे उस समय महात्मा मुहम्मद ने जन्म ले कर उन को एकेश्वर-वाद का सदुपदेश दिया। अरब के पश्चिम ईसामसीह का भक्तिपथ प्रकाश पा चुका था, किंतु वह मत अरब, फारस इत्यादि देशो मे प्रबल नहीं था और न अरब ऐसे कट्टर देश मे महात्मा मुहम्मद के अतिरिक्त और किसी का काम था कि वहाँ कोई नया मत प्रकाश करता। उस काल के अरब के लोग मूर्ख, स्वार्थतत्पर, निर्दय और वन्यपशुओं की भाँति कट्टर थे। यद्यपि उनमे से अनेक अपने को इब्राहीम के वंश का बतलाते और मूर्ति-पूजा बुरी जानते, किंतु समाजपरवश होकर सब बहुदेवोपासक बने हुए थे। इसी घोर समय मे मक्के से मुहम्मद-चंद्र उदय हुआ और एक ईश्वर का पथ परिष्कार रूप से सबको दिखलाई देने लगा।

महात्मा मुहम्मद इब्राहीम के वंश मे इस क्रम से हैं:—इब्राहीम, इस्माईल, कबजार, हमल, सलमा, अलहौसा, अलीसा, ऊद, आद, अदनान, साद, नजार, मजर, अलपास, बदरका, खरीमा, किनाना, नगफर, मलिक, फहर, गालिब, लवी, काब, मिरह, कलाव, फजी,

अबदूमनाफ, हाशिम, अब्दुल् मतलब, अब्दुल्लाह और इनके अबुल् कासिम मुहम्मद।

अब्दुल्मतलब के अनेक पुत्र थे, जैसा हमजा, अब्बास, अबूतालिब, अबुल्हब, अईदाक। कोई कोई हारिस, हजब, हकूम, जरार जुबैर, कासमे असगर, अबदुलकाबा और मकूम को भी कुछ विरोध से अब्दुल् मतलब का पुत्र मानते है। इन मे अबदुल्लाह और अबूतालिब एक माँ से है। अबूतालिब के तीन पुत्र अकील, जाफर और अली। यह अली महात्मा मुहम्मद के मुसलमानी सत्य मत प्रचार करने के मुख्य सहायक और रात दिन के इनके दुख-सुख के साथी थे और यह अली जब महात्मा मुहम्मद ने दूतत्व का दावा किया तो पहिले पहल मुसल्मान हुए।

महात्मा मुहम्मद की माँ का नाम आमिना है, जो अबदूमनाफ के दूसरे बेटे वहब की बेटी हैं और आदरणीय अली की माँ का नाम फातमा है, जो असद की बेटी है और यह असद हाशिम के पुत्र हैं। इस से मुहम्मद और अली पितृकुल और मातृकुल दोनो रीति से हाशिमी हैं।

महात्मा मुहम्मद १२ वीं रबीउल्औवल सन् ५६६ ईस्वी को मक्का मे पैदा हुए।

महात्मा मुहम्मद के पिता के इन के जन्म से पूर्व (एक लेखक के मत से इन के जन्म के दो वर्ष पीछे) मर जाने से उन के दादा इन का लालन पालन करते थे। अरब के उस समय की असभ्य रीति के अनुसार कोई दाई अनाथ लडके को दूध नहीं पिलाती थी और इस मे वहाँ की स्त्रियाँ अमगल समझती थीं, किंतु अलीमा नामक* एक स्त्री ने इन को दूध पिलाना स्वीकार किया। इस दाई का बालक ऐसा हिए लग गया कि एक दिन अलीमा ने आकर महात्मा मुहम्मद की माता अमीना से कहा कि मक्के मे सक्रामक रोग बहुत से होते है इस से इस बालक को मै अपने साथ जगल मे ले जाऊगी। उन की माँ ने आज्ञा दे दी और साढ़े चार बरस तक महात्मा मुहम्मद अलीमा के साथ बन

* An Ethiopian Female Slave.

मे रहे। परतु इनके दैवी चमत्कार से कुछ शंका करके दाई फिर इनको इन की माता के पास छोड गई। इन की छ बरस की अवस्था मे इन की माता अमीना का भी परलोक हुआ और आठ वरस की अवस्था मे इन के दादा अब्दुल् मतलब भी मर गए। तब से इन के सहोदर पितृव्य अबूतालिब पर इन के लालन पालन का भार रहा। अबूतालिब महात्मा मुहम्मद के बारह और पितृव्यो मे इन के पिता के सहोदर भ्राता थे। हाशिम महात्मा मुहम्मद के परदादा का नाम था और यह मनुष्य ऐसा प्रसिद्ध हुआ कि उस के समय से उस के वश का नाम हाशिमी पडा। यहाँ तक कि मक्का और मदीने का हाकिम अब भी "हाशिमियो के राजा" के पद से पुकारा जाता है। अब्दुल् मतलब महात्मा मुहम्मद को बहुत चाहते थे और नाम भी उन्हीं का रक्खा हुआ था। इस हेतु मरती समय अबूतालिब को बुला कर महात्मा की बाँह पकड़ा कर उन के पालन के विषय मे बहुत कुछ कह सुन दिया था। अबूतालिब ने पिता की शिक्षा अनुसार महात्मा मुहम्मद के साथ बहुत अच्छा बरताव किया और इन को देश और समय के अनुसार शिक्षा दिया और व्यापार भी सिखलाया।

उन्हो ने किस रीति-मत से विद्या शिक्षा किया था इस का कोई प्रमाण नहीं मिला। पचीस बरस की अवस्था तक पशु-चारण के कार्य मे नियुक्त थे। चालीस बरस की अवस्था मे उन का धर्म भाव स्फूर्ति पाया। ईश्वर निराकार है और एक अद्वितीय है, उनकी उपासना बिना परित्राण नहीं है। यह महासत्य अरब के बहुदेवोपासक आचार-भ्रष्ट दुर्दांत लोगो मे वह प्रचार करने का आदिष्ट हुए। तेतालिस बरस की अवस्था के समय मे अग्निमय उत्साह और अटल विश्वास से प्रचार मे प्रवृत्त हुए। "रौजतुः शोहदा" नामक मुहम्मदीय धर्म ग्र थ मे उन की उक्ति कह कर ऐसा उल्लिखित है। "हमारे प्रति इस समय ईश्वर का यह आदेश है कि निशा जागरण कर के दीन हीन लोगो की अवस्था हमारे निकट निवेदन करो, आलस्य-शय्या मे जो लोग निद्रित है उन लोगो के बदले तुम जागते रहो, सुख-गृह मे आनद विह्वल लोगो के लिए अश्रुवर्षण करो।" पैगबर महम्मद जब ईश्वर का स्पष्ट आदेश लाभ करके ज्वलत उत्साह के साथ पौत्तलिकता के और

पापाचार के विरुद्ध खडे हुए और "ईश्वर एक मात्र अद्वितीय है" यह सत्य स्थान स्थान मे गंभीरनाद से घोषणा करने लगे, उस समय वह अकेले थे। एक मनुष्य ने भी उन को सम विश्वासी रूप से परिचित होकर उन के उस कार्य मे सहानुभूति दान नहीं किया। किंतु उन्हो ने किसी की मुखापेक्षा नहीं किया, किसी का अणु मात्र भय नहीं किया, बुद्धि-विचार-तर्क की तृसीमा मे भी नहीं गये, प्रभु का आदेश पालन करना ही उन का दृढ व्रत था। जब वह ईश्वर के आदेश से "ला इलाह इल्लिल्लाह" (ईश्वर एक मात्र अद्वितीय है) इस सत्य प्रचार मे प्रवृत्त हुए, तब सब अरबी लोग, उन के कई एक पितृव्य और समस्त ज्ञाति सबधी निज अवलबित धर्म के विरुद्ध वाक्य सुन कर भयानक क्रोधाध हुए और उन के स्वदेशीय और आत्मीय गण "महम्मद मिथ्यावादी और ऐन्द्रजालिक है' इत्यादि उक्ति कहके उनके प्रति और सबो का मन विरक्त और अविश्वस्त करने लगे। स्वजन सबधियो के द्वारा क्लेश अपमान प्रहार यत्रणा आदि उन को जितनी सह्य करनी पड़ती थीं उतनी दूसरे किसी महापुरुष को नहीं सहनी पडी। विपरीत लोगो के प्रस्तराघात से उन का शरीर क्षत विक्षत हुआ था। किसी के प्रस्तराघात से उन का दा दाँत भग्न और ओठ विदीर्ण तथा ललाट और बाहु आहत हुआ था। किसी शत्रु ने उन को आक्रमण कर के उन का मुखमडल ककड़मय मृत्तिका मे घर्षण किया था, उस से मुँह क्षत विक्षत और शोणिताक्त हुआ था। एक दिन किसी ने उन के गले मे फॉसी लगा कर स्वॉसरोध कर के उन को बध करने का उपक्रम किया था। एक दिन किसी ने उन का गला लक्ष्य कर के करवालाघात किया था, तब गह्वर मे छिपकर उन्होने अपने प्राण की रक्षा किया था। कई बार उन की जीवनाशा कुछ भी नहीं थी। एक दिन उन के पितृव्य और जातिवर्ग उन को बध करने को कृत सकल्प हुए थे। उन की प्रियतमा दुहिता फातिमा ने जान कर रोते रोते उन से निवेदन किया। उस मे धर्म्मवीर विश्वासी महम्मद अकुतोभय भाव से बोले कि वत्से! मत रो, हम को कोई बध नहीं कर सकेगा, हम उपासनारूप अस्त्र धारण करेंगे, विश्वास वर्म से आवृत होंगे। जब हजरत महम्मद को प्रहार-क्षत-कलेवर और निःसहाय देख कर उन के पितृव्य

हमजा महाक्रोध से अबुलहब और अबूजोहल प्रभृति मुहम्मद के परम शत्रु पितृव्य और दूसरे दूसरे ज्ञाति संबंधियों को प्रहार करने जाते थे, उस समय वह बोले, "जिन ने हम को सत्यधर्म प्रचार के हेतु मनुष्य मंडली में प्रेरण किया है, उस सत्य परमेश्वर के नाम पर शपथ कर के हम कहते हैं, यदि तुम सुतीक्ष्ण करवाल के द्वारा नीच बहुदेवोपासक लोगों को निहत करो और उसी भाव से हमारी सहायता करने को अग्रसर हो तो तुम अपने को शोणित में कलंकित कर के पुण्यमय सत्य परमेश्वर से दूर जा पड़ोगे। ईश्वर के एकत्व में और हम उन के प्रेरित हैं, इस सत्य का विश्वास जब तक न करोगे तब तक तुम को युद्ध-विवाद में कोई फल नहीं होगा। पितृव्य, यदि तुम वात्सल्यरूप औषध हम को प्रदान करना चाहते हो, और हमारे आहत हृदय में आरोग्य का औषध लेपन करना चाहते हो, तो "ला इलाह इल्लिल्लाह महम्मद रसूलल्लाह" (ईश्वर एकमात्र अद्वितीय और मुहम्मद उस का प्रेरित है) यह वाक्य उच्चारण करो। यह सुन कर हमजा विश्वासी होकर कलमा उच्चारण पूर्वक एक ईश्वर के धर्म में दीक्षित हुए। तीन बरस शत्रु मंडली से अवरुद्ध होकर हजरत महम्मद को महा क्लेश से एक गिरिगुहा में कालयापन करना पड़ा था। इस बीच में बहुत से मनुष्यों ने उन के साथ उस उन्नत विश्वास में योग दिया था और उन के निकट एक ईश्वर के धर्म में दीक्षित हुए थे। ईश्वर की आज्ञापालन के लिए वह दस बरस मक्का नगर में अपरिसीम क्लेश और अत्याचार सहन कर के पीछे मदीना नगर में चले गए। वहीं शत्रुगण से आक्रांत होकर उन लोगों के अनुरोध से और आवाहन से युद्ध करने को बाध्य हुए। वह विपन्न अत्याचारित होकर कभी तनिक भी भीत और संकुचित नहीं हुए थे। जितनी बाधा और विघ्न उपस्थित होता था उतना ही अधिक उत्साहानल से प्रज्वलित हो उठते थे। सब विघ्न अतिक्रम कर के अटल विश्वास से वह ईश्वरादेश पालन व्रत में दृढ़ व्रती थे। वह ईश्वर और मनुष्य के प्रभु-भृत्य का संबंध अपने जीवन में विशेष भाँति प्रदर्शन करा गए हैं। वह स्वामी-आदेश शिरोधार्य कर के स्वर्गीय तेज और अलौकिक प्रभाव से कोटि कोटि मनुष्य को अँधेरे से ज्योति में लाए। लक्ष लक्ष जन का सांसारिक बल एक विश्वास के बल से चूर्ण कर के

सहज सौदर्य्य से पूर्ण और सतोगुणी तेज से देदीप्यमान था। कभी इन्होने सिंगार न किया। सांसारिक सुख की ओर यौवनावस्था मे भी इन्हो ने तृणमात्र चित्त न दिया। मर्म की विमल ज्योति और ईश्वरीय प्रताप इन के चेहरे से प्रगट था। धर्मसाधन और कठिन वैराग्य व्रतपालन ही मे इनको आनद मिलता था और अनशनादिक नियम ही इन का व्यसन था। इन के समस्त चरित्र मे से दो एक दृष्टांत रूप यहाँ पर लिखे जाते हैं।

महात्मा मुहम्मद के चचेरे भाई और परम सहायक आदरणीय अली से इन का विवाह हुआ और सुप्रसिद्ध हसन-हुसैन इन के दो पुत्र थे।

एक बेर कुरेशवशीय अनेक सभ्रातजन महात्मा मुहम्मद के पास आए और बोले कि यद्यपि हमारा आप का धर्म सबध नहीं है पर हम आप एक ही वश के और एक ही स्थान के है, इस से हम लोगो की इच्छा है कि हम लोगो के यहाँ जो अमुक आप के सबधी का अमुक से विवाह होनेवाला है उस कार्य को आप की पुत्री फातिमा चल कर अपने हाथ से सपादन करै। महात्मा मुहम्मद ने अच्छा कह कर बिदा किया और फातिमा के निकट आ कर कहने लगे—वत्से! लोगो से सद्भाव तथा शत्रुओ का उत्पीड़न सहन करना और शत्रुतारूपी विप को कृतज्ञता-रूपी सुधा भाव से पान ही हमारा धर्म है। आज अरब के अनेक मान्य लोगो ने अपने विवाह मे तुम को बुलाया है। यह हमारी इच्छा है कि तुम वहाँ जाओ, परतु तुम्हारी क्या अनुमति है हम जानना चाहते है। फातिमा ने कहा—ईश्वर और ईश्वर के भेजे हुए आचार्य की आज्ञा कौन उल्लघन कर सकता है? हम तो आप की आज्ञाधीना दासी है, इस से हमारी सामर्थ्य नहीं कि आप की आज्ञा टाले। हम विवाह सभा मे जायगे, परतु शोच यह है कि हम कौन सा वस्त्र पहन के जायँगे। वहाँ और स्त्री लोग महामूल्य वस्त्राभरणादिक धारण कर के आवेगी और हमारी फटी चद्दर देख कर वे लोग हमारा और आप का उपहास करेगी। अबूजुहल की बहिन आनवा की स्त्री और शवा की बेटी इत्यादि अनेक अरब की स्त्री कैसी असभ्यचारिणी और मदप्रकृति है यह आप भली भाँति जानते है और

हमालन की बेटी आप के चलने की राह मे कॉटा बिछा आती थी तथा अबूसफिनान की स्त्री को आप की निदा के सिवा कोई काम ही नहीं है, यह भी आप को अविदित नहीं। सब उस सभा मे उपस्थित रहेंगी और रूम और मिश्र के बहुमूल्य अलकार धारण कर के मणिपीठ के ऊचे आसन पर बड़े गर्व से बैठेगी। उस सभा मे आप की कन्य को एक मैली फटी पुरानी चद्दर ओढ़ कर जाना होगा। हम को देख कर वे सब कहेंगी कि इस कन्या को क्या हुआ। इस की माता की अतुल सपत्ति क्या हो गई जो इस वेश से यहाँ आई है। पिता! इन लोगो को धर्मज्ञान और अतरचक्षु नहीं है, केवल जगत् के वाह्याडबर मे भूली है, इस से हम को देख कर वह आप की निदा करेगी और केवल हमारे कारण आप का अपमान होगा।

फातिमा पिता से यह कहती थीं और उन के नेत्रों से जल बहता था। महात्मा महम्मद ने उत्तर दिया—बेटी! तुम किंचितमात्र भी सोच मत करो। हमारे पास उत्तम वस्त्राभरण और धन तो निस्सदेह कुछ भी नहीं है, परतु निश्चय रक्खो कि जो आज लाल पीले वस्त्र पहन कर अलकार के उद्यान मे फूली फूली दिखाई पड़ती हैं वे अपने दुष्कर्मों से कल तृण से भी तुच्छ हो कर नर्क की अग्नि मे जलेगी। हम लोगो का वस्त्र और शोभा वैराग्य है। महात्मा महम्मद और भी कुछ कहना चाहते थे कि फातिका ने कहा—पिता! क्षमा कीजिए अब विलब करने का कुछ प्रयोजन नहीं, आपकी आज्ञा हम को सर्वथा शिरोधार्य है।

यह कह कर बीबी फातिमा घर से निकलीं * और उस विवाह सभा की ओर अकेली चलीं परतु लिखा है कि ईश्वर के अनुग्रह से उन के अग पर दिव्य अमूल्य वस्त्राभरण सज्जित हो गये। कुरेशवश मे और अरब की स्त्री लोग अभिभान से फातिमा की मार्ग की परीक्षा कर

* हमारे पुराणों मे भी लिखा है कि सती जब उदास हो कर दक्ष के यज्ञ मे बिना सिगार किये ही चलीं तो मार्ग मे कुबेर ने उनको उत्तम उत्तम वस्त्राभूषण पहिना दिया। वैसे ही अनुमान होता है कि अपने आचार्य महात्मा मुहम्मद की बेटी को वस्त्रहीन देख कर उन के किसी धनिक सेवक ने अमूल्य वस्त्राभूषण से उन को सजा दिया।

थीं और कहती थीं कि आज हम लोगो की सभा मे महात्मा महम्मद की बेटी फटा कपड़ा पहन कर आवेगी और हम लोगो के उत्तम वस्त्राभूषण देख के आज वह भली भाँति लज्जित होगी। इतने मे विद्युल्लता की भाँति साम्हने से फातिमा की शोभा चमकी और विवाह मडप मे इन के आते ही एक प्रकाश हो गया। फातिमा ने नम्र भाव से सब स्त्रियो को यथायोग्य अभिवादन किया, परतु वे सब स्त्रियाँ ऐसी हतबुद्धि और धैर्यरहित हो गई कि सलाम का उत्तर न दे सकीं। फातिमा का मुखचद्र देख कर अभिमानिनी स्त्रियो के हृदय-कमल मुरझा गये और आँखो मे चकचौधा छा गई। सब की सब घबड़ा कर उठ खड़ी हुई और आपस मे कहने लगीं कि यह किस महाराज की कन्या और किस राजकुमार की स्त्री है। एक ने कहा, यह देवकन्या है। दूसरी बाली नहो, कोई तारा टूट कर गिरा है। कोई बाली सूर्य्य की ज्योति है। किसी ने कहा, नहीं नहीं, आकाश से चंद्रमा उतरा है। परतु जिस के चित्त मे धर्मवासना थी उन्हो ने कहा कि यह ईश्वरीय ज्योति है। यह अनेक अनुमान तो लोगो ने किये, परतु यह सदेह सब को रहा कि कोई होय पर यह यहाँ क्यो आई है? अत मे जब लोगो ने पहचाना कि यह बीबी फातिमा है तो सब को अत्यंत लज्जा और आश्चर्य हुआ। सबसे ऊँचे आसन पर उनको लोगो ने बैठाया और आप सब सिर झुका कर उनके आस पास बैठ गई। कई उनमे से हाथ जोड़कर बोलीं—हे महापुरुष महम्मद की कन्या! हम लोगो ने आप को बड़ा कष्ट दिया, हम लोगो के कारण जो आप के नित्य कर्म मे व्यवधान पड़ा हो उसे क्षमा कीजिये और हमारे योग्य जो कार्य हो आज्ञा कीजिये। हम लोगो को जैसा आदेश हो वैसा भोजन और शरबत आप के वास्ते सिद्ध करे। बीबी फातिमा ने विनयपूर्वक उत्तर दिया—भोजन और शरबत से हमारा सतोष नहीं, हमारा और हमारे पितृदेव का विषय मे विराग सहज स्वभाव है। अनशन व्रत हम लोगो को सुस्वादु भोजन के बदले अत्यत प्रिय है। हमारा और हमारे पिता का संतोष ईश्वर की प्रसन्नता है। तुम लोग देवी, देवता, भूत, प्रेत इत्यादि की पूजा और पाखड छोड़ कर सत्य धर्म के प्रकाश मे आओ, एक परमेश्वर की भक्ति करो, परस्पर बैर का त्याग और

आपस मे प्रीति करो। अनेक स्त्रियाँ फातिमा का यह अतुल प्रभाव देख कर उसी समय मुसलमान हुईं और जिन्हो ने उन का धर्म नहीं ग्रहण किया उन्हो ने भी उन का बड़ा आदर किया।

किसी विशेष रोग के कारण इन की मृत्यु नहीं हुई। पितृवियोग का शोक ही इन की मृत्यु का मुख्य कारण है। कहते हैं कि महात्मा महम्मद की मृत्यु के पीछे फातिमा शोक से अत्यत विह्वल रहीं। किसी भाँति भी इन को बोध नहीं होता था, रात दिन रोती थीं और बारबार मूर्च्छित हो जाती थीं। एक दिन उन्हो ने कुछ स्वप्न देखा और मृत्यु के हेतु प्रस्तुत हो कर अपने प्रिय स्वामी आदरणीय अली को बुला कर कहा "कल पितृदेव को स्वप्न मे देखा है जैसे वह चारो ओर नेत्र फैला कर किसी के मार्ग की प्रतीक्षा कर रहे है। हम ने कहा, पिता! तुम्हारे विच्छेद से हमारा हृदय विदग्ध और शरीर अत्यत जीर्ण हो रहा है। उन्हो ने उत्तर दिया, पुत्री! हम भी तो मार्ग ही देख रहे हैं। फिर हम ने ऊँचे स्वर से कहा-पिता! आप किस का मार्ग देख रहे है? तब उन्हो ने कहा—कि तुम्हारा मार्ग देख रहे है। पुत्री फातमा! हमारा तुम्हारा वियोग बहुत दिन रहा, इस से तुम्हारे बिना अब हमारे प्राण व्याकुल है। तुम्हारे शरीर त्याग का समय उपस्थित है, अब तुम अपनी आत्मा को शरीर सपर्क शून्य करो। इस निकृष्ट सकीर्ण जगत् का परित्याग कर के उस प्रसारित उन्नत देदीप्यमान आनदमय जगत् मे गृहस्थापन करो। ससाररूपी क्लेश-कारागार से छुट कर नित्य सुखमय परलोक-उद्यान की ओर यात्रा करो। फातिमा! जब तक तुम न आओगी तब तक हम नहीं जायँगे। हम ने कहा—पिता! हम भी तुम्हारी दर्शनार्थी हैं, तुम्हारी सहवास संपत्ति लाभ करे यही हमारी भी आकाक्षा है। इस पर उन्हो ने कहा—तो फिर बिलंब मत करो, कल ही हमारे पास आओ। इस के पीछे हमारी नींद खुली, अब उस उन्नत लोक मे जाने के लिये हमारा हृदय व्याकुल है। हम को निश्चय है कि आज साँझ या पहर रात तक हम इस लोक का त्याग करेंगे। हमारे पीछे तुम अत्यत शोकाकुल रहोगे, इससे जिस मे हमारे संतान भूखे न रहे हम आज रोटी कर के रख देते हैं और पुत्र-कन्या का वस्त्र भी धो देते है। हमारे पीछे यह कौन करेगा इस

हेतु हम आप ही इन कामों से छुट्टी कर रखते हैं। हमारे अभाव मे हमारे पुत्रो को कौन प्यार करेगा? हमारी इच्छा थी कि आज इन का सिर सँवारे, परतु हम को सदेह है कि कल कोई उन के मुँह की धूल भी न झारेगा"।

अली यह सुन अत्यत शोकाकुल हो कर रोने लगे और कहा कि फातिमा! तुम्हारे पिता के वियोग से हृदय मे जो क्षत है वह अब तक पूरा नहीं हुआ और उन महात्मा के चरणदर्शन बिना जो शोक है वह किसी प्रकार से नहीं जाता। इस पर तुम्हारा वियोग भी उपस्थित हुआ। यह आघात पर आघात और विपत्ति पर विपत्ति पडी। फातिमा ने कहा—अली! उस विपत्ति मे धैर्य किया है और इस मे भी करो, इस क्षण मे मुहूर्त्त भर भी हमसे अलग मत रहो, हमारे श्वासवायु अवसान का समय निकट है; नित्यधाम मे हम तुम फिर मिलेंगे यह प्रतिज्ञा रही।

बीबी फातिमा यह कहती थीं और हसन-हुसेन के मुख की ओर देख कर दीर्घश्वास के साथ अश्रुवर्षण करती जाती थीं। माता की यह बात सुन कर हसन-हुसेन भी रोने लगे। फातिमा ने कहा—प्यारे बच्चो! थोड़ी देर के वास्ते तुम लोग मातामह के समाधि-उद्यान मे जाओ और हमारे हेतु प्रार्थना करो। वे लोग माता के आज्ञानुसार चले गये। फातिमा तब बिछौने पर लेट गईं और अली से कहा, प्रिय तुम पास बैठो। बिदा का समय उपस्थित है। अली बैठे और शोक से रोने लगे। तब फातिमा ने आसमा नाम की दासी को बुला कर कहा कि अन्न प्रस्तुत रक्खो, हमारे प्यारे हसन-हुसैन आ कर भोजन करेंगे। जब वे घर आवैं तब उन लोगो को अमुक स्थान पर बैठाना और भोजन कराना। उन को हमारे निकट मत आने देना, क्योंकि हमारी अवस्था देख कर वे घबडायेंगे। आसमा ने वैसा ही किया। इधर फातिमा ने अली से कहा—हमारा सिर तुम अपनी गोद मे ले बैठो, अब जीवन मे केवल कुछ ही क्षण बाकी है। अली ने कहा—फातिमा! तुम्हारी ऐसी बाते हम नहीं सुन सकते। फातिमा ने उत्तर दिया—अली! पथ खुला है, हम प्रस्थान करेहींगे और मन अत्यत शोकाकुल है और

तुम से कुछ कहना भी अवश्य है। हमारी बात सुनो और हमारे वियोग का शर्बत वाध्य होकर पान करो। अली फातिमा का सिर गोद मे लेकर बैठे। फातिमा ने नेत्र खोलकर अली की ओर देखा, उस समय अली के नेत्रो से आँसू के बूँद फातिमा के मुख पर टपकते थे। अली को रोते देखकर फातिमा ने कहा—हे नाथ ! यह रोने का समय नहीं है, अवकाश बहुत थोडा है। अंतिम कथा सुन लो। अली ने कहा—कहो क्या कहती हो ? फातिमा ने कहा—हमे चार बात कहनी है, पहली यह कि हम तुम्हारे साथ बहुत दिन तक रहे। यदि हमसे कोई अपराध हुआ हो तो क्षमा करो। अली रोने लगे और बोले—कभी तुम ने आज तक कोई ऐसी बात ही नहीं किया जो हमारे प्रतिकूल हो। प्यारी तुम तो सर्वदा हमारी मनोरंजनी रही, भूल कर भी तुम ने हम को कोई कष्ट नहीं दिया, तुम ने सब आपत्ति अपने ऊपर सहन किया, परंतु हम को दुख न दिया, तुम उपकारिणी थीं, अपकारिणी नहीं। तुम को हम ने कोमल पुष्पमाला की भाँति अपने हृदय पर धारण किया कंटक की भाँति नहीं। बोलो, और बोलो और कौन बात है ? फातिमा ने कहा, दूसरे यह कि हमारे प्यारे हसन-हुसैन की रक्षा करना। जिस लाड़ प्यार और राव चाव से हम ने उन को पाला है उस में कुछ न्यूनता न हो, उन की सब अभिलाषा पूरी करना। तीसरे यह कि हमारे शव को रात्रि को भूमिशायी करना, क्योंकि जीवन दशा में जैसे पर पुरुष की दृष्टि हमारे शरीर पर नहीं पड़ी है वैसा ही पीछे भी हो। चौथे हमारी समाधि पर कभी कभी आ जाना। इतने में हसन-हुसेन भी आ गए और माता की यह अवस्था देखकर बहुत रोने लगे। फातिमा ने किसी प्रकार समझा कर फिर बाहर भेजा और दासी को बुला कर बीबी फातिमा * ने स्नान किया और एक धौत वस्त्र परिधान कर के एक निर्जन गृह मे दक्षिण पार्श्व से शयन कर के ईश्वर का स्मरण करने लगीं। इसी अवस्था मे उन्होंने परलोक गमन किया।

---

* इफ़नाम अरबी में बच्चे को दूध से छुडाने को कहते हैं। इन का फातिमा नाम इसी हेतु पडा था कि छोटेपनही में इन की मृत्यु हुई थी।

आदरणीय अली की मृत्यु का समाचार

परम धार्मिक सुप्रसिद्ध अली मुसलमान धर्म के प्रवर्त्तक हज़रत महम्मद के जामाता और शीआ सप्रदाय के पहिले इमाम (आचार्य) थे। हज़रत महम्मद के लोकातर गमन पीछे मुसलमान धर्म की स्थिति और उन्नति अली के ही ऊपर निर्भर थी। जैसे भक्तिभाजन ईसा को उन के शिष्य जूडा ने विशति मुद्रा के लोभ से शत्रुहस्त मे समपण कर के वध किया था वैसे ही इब्नमुलजम नामक एक व्यक्ति ने एक दुश्चारिणी नारी के प्रलोभन मे उस की कुमंत्रणा से स्वीय धर्माचार्य अली को स्वयं करवालाघात से निहत किया। यह उस से भी भयकर व्यापार है। इब्नमुलज़म के भाव चरित्र की चचलता देख कर पहिले ही उस के ऊपर अली का सदेह हुआ था। एक दिन इब्नमुलज़म ने अली को एक उत्कृष्ट सामग्री उपहार दी थी। अली उस उपहार के प्रति अनादर प्रदर्शन कर के बोले कि हम तुम्हारे इस उपढौकन ग्रहण मे नहीं प्रस्तुत हैं, तुम परिणाम मे हम को जो उपढौकन प्रदान करोगे उस के लिए हम विशेष चितित है। इस के कुछ दिन पीछे अली शिष्यमडली के साथ कूफा नगर मे उपस्थित हुए। वहाँ इब्नमुलज़म ने कुत्तामा नाम की एक दुश्चरित्रा विधवा युवती के सौंदर्य से मुग्ध होकर उस से परिणय-अभिलाषा प्रगट की। कुत्तामा ने उसे प्रलोभन जाल मे आबद्ध कर के कहा-हमारे तीन पण है सो पूर्ण करने से हम तुम्हारे साथ व्याह मे सम्मत हैं। एक सहस्र दिरहम (ताम्रमुद्रा विशेष), एक जन सुगायिका सुदरी दासी और मुहम्मद के जामाता अली का वध-साधन। यह सुन कर इब्नमुलज़म बोला—पहिले दोनो पण कठिन नहीं हैं वह संसाधन कर सकेंगे, किंतु तीसरा पण गुरुतर है इस के संसाधन मे हम अक्षम है। कुत्तामा बोली—शेषोक्तपण ही सब मे प्रधान है, अली हमारे पितृकुल का शत्रु है, उस का प्राणसहार बिना किए कोई भाँति विवाह नहीं हो सकता है। दुरात्मा इब्नमुलज़म उसका सुदृढ़ पण देखकर उस मे भी सम्मत हुआ एव विषाक्त तीक्ष्ण करवाल के द्वारा गुरु की हत्या करने का सुयोग देखने लगा। एक दिन निशीथ समय मे अली कूफा की जामा मस्जिद के दरवाजे पर खड़े होकर नमाज मे

प्रवृत्त हैं, उस समय सुयोग समझ कर अतर्कित भाव मे उस ने अली के सिर मे एक आघात किया। अली आघात पाकर चिल्लाकर भूतल-शायी हुए। शोणित-स्रोत से मस्जिद प्लावित हो गई। उन के आहत मस्तक से मस्तिष्क उद्भिन्न हो कर गिरा। दुरात्मा इब्न मुलज़म उसी क्षण धृत हो कर बंदी हुआ। पीछे उस ने दुष्कर्म का समुचित प्रतिफल भोग किया। अली ने दो दिवस विष की विषम यंत्रणा भोग कर के बंधुवर्ग को शोकसागर मे मग्न कर के परलोक गमन किया। मृत्युकाल में स्वीय प्रियतम पुत्र हसन को यह अनुमति दिया कि हमारा देह निशीथ समय मे किसी निभृत स्थान मे निहित करना, वही कार्य मे परिणत हुआ। जब हसन पितृदेह भूमि निहित कर के लौटते थे उस समय एक व्यक्ति के रोने का शब्द सुन पडा। वह क्रंदन को लक्ष्य कर के वहाँ उपस्थित हुए, देखा कि एक दरिद्र अंध वृद्ध आकुल हो कर रो रहा है। हसन ने रोने का कारण पूछा, तो वह बोला कि प्रति दिन रात को एक महापुरुष आकर हम को आहार देते थे और सुमिष्ट वचन से परितोष करते थे। आज तीन दिन से वह नहीं आते हैं और वह मधुर वचन नहीं सुनने पाते हैं, हम अनाहार हैं। हसन ने पूछा—उन का नाम क्या है? अंधा बोला-उन्हो ने हम को अपना परिचय नहीं दिया। परिचय पूछने से वह कहते थे, हमारे परिचय से तुम्हारा कोई प्रयोजन नहीं है, तुम हमारी सेवा ग्रहण करो। उन का कंठस्वर ऐसा था, वह अल्ला अल्ला की सदा ध्वनि करते थे। हसन अंधे की बात से जान गए कि वह महापुरुष उन के पिता थे। तब अश्रुपात कर के बोले कि आज वह महात्मा परलोक सिधारे हैं। अभी उन की अंत्येष्टि क्रिया समाधान कर के हम चले आते हैं। वृद्ध यह सुन कर शोक से मूर्च्छित हो गिर पडा। पीछे रोते रोते बोला–तुम लोग हम को अनुग्रह कर के उन की पवित्र समाधि भूमि मे ले चलो। हसन हाथ पकड़ कर वृद्ध को वहाँ ले गए। वृद्ध ने वहाँ शोक और अनाहार से प्राण त्याग किया।

एक दिन किसी विपथगामी ईश्वरविरोधी व्यक्ति ने परम प्रेमिक अली से पूछा था कि हे ज्ञानवान् अली! गृह और उच्च प्रासाद शिखर पर भी ईश्वर तुम्हारे रक्षक हैं, यह तुम स्वीकार करते हो? अली बोले

"हाँ, शैशव में, यौवन में, सर्वक्षण सर्वस्थान में वह हमारे प्राण के रक्षक हैं।" यह बात सुन कर वह बोला "तुम अपने को, इस अट्टालिका पर से गिरा कर ईश्वर तुम को रक्षा करते हैं, इस विश्वास की पूर्णता प्रदर्शन करो, तब तुम्हारे विश्वास का हम विश्वास करेंगे और तुम्हारी ईश्वरनिष्ठा प्रमाण युक्त होगी।" तब अली बोले "चुप रहो और चले जाओ और स्पर्द्धा कर के जीवन को कलंकित मत करो। मनुष्य का क्या साध्य है कि ईश्वर को परीक्षा में बुलावै। केवल उन को परीक्षा करने का अधिकार है। वह प्रति मुहूर्त्त में मनुष्य के निकट परीक्षा उपस्थित करते हैं। वह हम लोगों के पास हैं। हमलोग क्या हैं वह प्रकाश कर देते हैं। अंतर में हम लोग किस भाँति धर्मभाव रखते हैं, वह दिखला देते हैं। कौन मनुष्य ईश्वर को ऐसी बात कह सकता है कि यह सब पाप अपराध कर के हम ने तुम्हारी परीक्षा किया। हे ईश्वर! देखें, तुम्हारी कितनी सहिष्णुता है! हा! ऐसा कहने का किस को अधिकार है? तुम्हारी बुद्धि अत्यंत दुष्ट हुई है। तुम्हारी यह उक्ति सब पापों से बढ कर है। जो यह सुविशाल नभोमंडल का रचयिता है उस की तुम परीक्षा करने क्या जानो? तुम अपना शुभाशुभ तो जानते ही नहीं हो। पहिले अपनी परीक्षा करो, पीछे दूसरे की परीक्षा करना। पथप्रदर्शक अग्रगामी गुरु की जो शिष्य परीक्षा करता है वह मूर्ख है। जिस को तुम ने परीक्षक किया है, हे अविश्वासी, यदि उन्हीं की धर्ममार्ग में तुम परीक्षा करो, तो तुम्हारी दुःसाहसिकता और मूर्खता प्रकाश होगी। तुम ईश्वर की क्या परीक्षा करोगे? धूलिकणिका क्या पर्वत की परीक्षा कर सकती है? मनुष्य अपने बुद्धिगत अनुमान से तुला यंत्र प्रस्तुत कर के ईश्वर को उस में स्थापन करने जाता है, किंतु ईश्वर बुद्धि के अनायत्त है, उन के द्वारा बुद्धि-निर्मित परिमाण यंत्र चूर्ण हो जाता है। ईश्वर की परीक्षा करना और उन को आयत्त करना एक ही है। तुम एतादृश महाराज को आयत्त करने की चेष्टा मत करो, चित्रित वस्तु किस प्रकार से चित्रकार की परीक्षा करेगा। उन के असीम ज्ञान में जो सब चित्र विद्यमान हैं उन के पास परिदृश्यमान विश्वचित्र क्या पदार्थ है? जब परीक्षा ग्रहण की कुबुद्धि के द्वारा तुम आक्रांत होते हो, तब जानना तुम को संहार करने के लिए दुर्भाग्य उपस्थित

हुआ है। अकस्मात् ईश्वर से ऐसी कुबुद्धि उपस्थित हो तो भूमिष्ठ प्रणत होना। भूमि को शोकाश्रुस्रोत से अभिषिक्त करना और कहना, हे ईश्वर! इस कुचिंता से हमारी रक्षा करो। तब परम परीक्षक ईश्वर तुम को रक्षा करेंगे।"

इमाम हसन और इमाम हुसैन

महात्मा मुहम्मद के जन्म का समाचार पूर्व मे लिखा जा चुका है। इन को अठारह संतति हुई, किंतु वंश किसी के आगे नहीं चला, केवल बीबी फातिमा को वंश हुआ। यह बीबी फातिमा आदरणीय अली से व्याही थीं। जब तक यह जीती थीं और विवाह आदरणीय अली ने नहीं किया केवल इन्हीं को अली मान कर इन्हीं के मुखपंकज के अली बने रहे। बीबी फातिमा को पाँच सन्तति हुईं, तीन पुत्र हसन, हुसैन और मुहसिन, और जैनब और उम्म कुलसुम यह दो बेटियाँ थीं। इन मे मुहसिन छोटेपन ही मे मर गए। अली ने बीबी फातिमा के मरने के पीछे उमुलनबीन से विवाह किया। उस से चार पुत्र अब्बास, जाफर, उसमान और अब्दुल्लाह उत्पन्न हुए, जो चारो अपने भाई इमाम हुसैन के साथ करबला मे वीर गति को गए। इन मे से अब्बास की संतति चली। तीसरी स्त्री कैसी, उस से अब्दुल्लाह और अबूबकर, यह दोनो भी करबला मे मारे गए। चौथी स्त्री इसमानित से मुहम्मद और यहिया दो पुत्र हुए। इन चारो को संतति नहीं है। पाँचवीं स्त्री सहबाई से उमर और रकिया, जिनमे से उमर की संतति है। छठवीं स्त्री अम्मामा। इसको मुहम्मद मध्यम नामक पुत्र हुआ, किंतु आगे सन्तति नहीं। सातवीं स्त्री इन की खूला है, जिनके पुत्र बड़े मुहम्मद हुए, जिनका वंश वर्त्तमान है। आदरणीय अली को इन बेटो के सिवा चौदह बेटियाँ भी हुईं। इन सब से इमाम हसन, इमाम हुसैन, अब्बास, मुहम्मद और उमर का वंश है, जिन मे इमाम हसन और इमाम हुसेन की संतति सैयद कहलाती है और शेष तीनो की साहबजादों के नाम से पुकारी जाती है। किंतु शीया लोगो मे अनेक इमाम हसन के वंश को भी सैयद नही कहते है और कहते है कि ठीक सैयद केवल इमाम जैनुलआबदीन (इमाम हुसेन के मध्यम पुत्र) का

वश है। आदरणीय अली सब के पहिले मुसल्मान हुए और दाहिनी भुजा की भाँति महात्मा मुहम्मद के सदा सहायक रहे। इन्हीं अली के पुत्र इमाम हुसैन थे, जिनका दुष्टो ने करबला मे बध किया, जिस का हम क्रम से वर्णन करते है।

महात्मा मुहम्मद के (६३२ ई०) मृत्यु के पीछे अबूबकर (६३२ ई०) खलीफा हुए और उन के पीछे उमर (६३४ ई०)। इस मे कुछ सन्देह नहीं कि महात्मा मुहम्मद के पीछे उन के सब शिष्यो को धन और देश और शासन के लोभ ने ऐसा घेर लिया था कि सब धर्म को भूल गए थे। केवल आड़ के वास्ते धर्म था। यद्यपि उपद्रव तो मुहम्मद महात्मा की मृत्यु के साथ ही हुआ, किंतु तीसरे खलीफा (महन्त) के काल से उपद्रव बढ गया। यह हम पक्षपात छोड कर कह सकते हैं कि ऐसे घोर समय मे आदरणीय अली ने बड़ा संतोष प्रकाश किया था। शाम (Asia minor) के लोग इन सब उपद्रवो की जड थे। उन मे भी कूफा के सन् ६५६ मे इन उपद्रवियो ने उसमान महत का व्यर्थ बध किया और आदरणीय अली को खलीफा बनाया। यही समय मुहर्रम के अन्याय की जड़ है। उसमान खलीफा के समय मे महात्मा मुहम्मद ने निज शिष्यो मे एक मनुष्य मुआविया (जो इन का गोत्रज भी था) नामक शाम और मिस्र आदि देशो मे गवर्नर था। जब अली खलीफा हुए तो इस मुआविया ने चाहा कि उनको जय करके आप खलीफा हो। यहाँ तक कि अनेक युद्धो मे मुसलमानो पर अपना अधिकार जमाता गया। सन् ६६१ मे पाँच बरस खलीफा रह कर अली एक दुष्ट के हाथ से मारे गये। इन के पीछे इन के बडे पुत्र और महात्मा मुहम्मद के नाती इमाम हसन खलीफा हुए, किंतु मुआविया ने इन को भी अपने राज्य-लोभ से भाँति २ का कष्ट देना आरंभ किया। उस समय के लोग ऐसे क्रूर, लोभी और दुष्ट थे कि धर्म छोड कर लोभ से बहुत मुआविया से मिल गए और अपने परमाचार्य की एक मात्र संतति हसन-हुसैन को दु ख देने लगे। इमाम हसन यहाँ तक दु.खी हुए कि चार लाख साल पिशन पर निराश हो कर खिलाफत से बाज आए। कुछ ऊपर छ महीने मात्र ये खलीफा थे। किंतु इस पिशन के देने मे भी मुआविया बड़ी देर और हुज्जत करता रहा। यहाँ तक कि

सन् ४६ हिजरी (६७० ई०) में मुआविया के पुत्र यजीद ने इमाम हसन को एक दुष्ट स्त्री जादा के द्वारा उनको विष दिलवाया। कहते हैं कि दो बेर पहिले भी इस दुष्टा स्त्री ने इस लोभ से कि वह यजीद की स्त्री होगी इमाम को विष दिया था. किंतु तीसरी बार का विष ऐसा था कि उसमें प्राण न बच सके और इस असार संसार को छोड़ गए। पन्द्रह पुत्र और आठ कन्या इन को हुई थीं। अब लोग इन दुष्टों के धर्म को देखें कि साक्षात् परमाचार्य ईश्वर-प्रिय 'वरंच ईश्वर-तुल्य', अपने गुरु की संतति और गुरु-पुत्र और स्वयं भी गुरु उस को इन लोगों ने कैसे आनंद में वध किया।

इमाम हसन के मरने के पीछे यजीद बहुत प्रसन्न हुआ और अपने राज्य को निष्कंटक समझने लगा। अब केवल इन लोगों की दृष्टि में इमाम हुसैन बचे जो कि रात दिन खटकते थे, क्योंकि धर्मी और श्रद्धालु लोग इन के पक्षपाती थे। मुआविया और उस के साथी लोग अब इस सोच में हुए कि किसी प्रकार इन को भी समाप्त करो तो निर्द्वंद राज्य हो जाय। सन् ४६ के अंत में मुआविया मर गया और यजीद नारकी मुसलमानों का महंत हुआ। यह मद्यप परस्त्री-गामी और बेईमान था, इसी हेतु इस के महंत होने से अनेक लोगों ने अप्रसन्नता प्रकट की। मक्के और मदीने में सभ्य और अनेक प्राचीन लोग उस के धर्म शासन से फिर गए और अनेक लोग नगर छोड़ छोड़ कर दूर जा बसे। इमाम हुसैन का तो मानो वह शत्रु ही था। मदीना के हाकिम को लिख भेजा कि या तो इमाम हुसैन हमारा शिष्यत्व स्वीकार करें या उन का सिर काट लो। मदीने के हाकिम ने यह वृत्त इमाम हुसैन से कहा और उन पर अधिकार जमाने को नाना प्रकार की उपाधि करने लगा। यह बिचारे दुखी हो कर अपने नाना और माँ की समाधि पर बिदा होने गए और रो रो कर कहने लगे कि नाना तुम्हारे धर्म के लोग निरपराध हुसैन को कष्ट देते हैं, हसन को विष दे कर मार चुके पर अभी इन को संताप नहीं हुआ। तुम्हारे एक मात्र पुत्र और उत्तराधिकारी दीन हुसैन को महंतों का पद त्याग करने पर भी यह लोग नहीं जीता छोड़ा चाहते। इसी प्रकार अनेक विलाप कर के अपनी माँ और भाई की समाधि पर से भी बिदा हुए

और अपनी सपत्नी नानियो और सबधियों से विदा हो कर मक्के की ओर चले। इसी समय कूफा के लोगो ने इमाम को एक पत्र लिखा। उस मे उन लोगो ने लिखा कि "हम लोग यजीद मद्यप के धर्मशासन से निकल चुके है, आप यहाँ आइए, आप ही वास्तव मे हमारे गुरु है, हम लोग आप के चरण के शरण मे रहैगे और प्राण पर्यंत आप से अलग न होगे। इस बात की हम शपथ करते है।" इस पत्र पर कूफा के हजारो मनुष्यों के हस्ताक्षर थे। इस पत्र को पाकर इमाम ने कूफा जाना चाहा। उन के बधुओ ने उन से बहुत कहा कि कूफे के लोग झूठे होते है, आप उन का विश्वास न कीजिए। पर उन के ईश्वर की शपथ खाने पर विश्वास कर के इमाम ने किसी का कहना न सुना और अपने मक्का की यात्रा की समय अपने चचेरे भाई मुसलिम को कूफियो के पास भेजा कि उन को मक्का से लौटती समय इमाम के कूफा आने का सम्बाद पहिले से दे। इनको इधर भेज कर आप बदना के हेतु मक्के चले। मुसलिम जब कूफे मे पहुँचे तो इन का वहाँ के लोगो ने बड़ा शिष्टाचार किया और इमाम हुसैन के गुरुत्व को सब ने स्वीकार किया। यह देख कर इन्होने इमाम को पत्र लिखा कि आप निश्शक कूफा आइए; यहाँ के लोग सब आप के दासानुदास है और तीस हज्जार आदमियो ने आप को गुरु माना है। इस पत्र के विश्वास पर इमाम हुसैन कूफे की ओर और भी निश्चित हो कर चले और बाधवो का वाक्य स्वीकार न किया। किंतु शोच की बात है कि बिचारे मुसलिम वहाँ मारे जा चुके थे। कारण यह हुआ कि यज़ीद ने जब सुना कि कूफा मे मुसलिम इमाम हुसैन का आचार्यत्व चला रहे है तो उस ने वहाँ के हाकिम को बदल दिया और उबैदुल्लाह जियाद नदन को हाकिम बनाया और आज्ञा भेजा कि हुसैन को बकरे की भाँति जिबह करो और मुसलिम को तो जाते ही मार डालो। जब ज़ियाद-पुत्र शाम का हाकिम हुआ तो मुसलिम के पकड़ने की फिक्र में हुआ। पहिले तो कूफे के लोग मुसलिम के साथ उस के मकान पर चढ गए, परतु जब उसने उन लोगो को धमकाया और लालच दिया तो एक एक कर के सब मुसलिम का साथ छोड़ कर चले गए और मुसलिम बिचारे भाग कर एक घर मे जा छिपे। परतु लोगो ने

उन को वहाँ भी जाने न दिया और पकड़ लाए और इब्ने जियाद की आज्ञा से उन का सिर काटा गया और उन का साथी हानी भी मारा गया, वरंच उन के दो लड़कों को भी मार डाला। महात्मा मुसलिम मरने के समय यही कहते थे कि मुझे अपने मरने का कष्ट नहीं, क्योंकि सत्य मार्ग स्थापन में मेरे प्राण जाते हैं। मुझे शोच यही है कि मेरे पत्र के विश्वास पर इन कृतघ्नी और विश्वासघाती कूफा वालों के विश्वास पर इमाम हुसेन यहाँ चले आवैंगे और उन महापुरुष के साथ भी ये कापुरुष कुपुरुष यही व्यवहार करेंगे और आचार्य मुहम्मद की संतान को निरपराध ये लोग वध कर डालैंगे। हाय! उन के भाई मुसलिम कूफे में यों अनाथ की भाँति मारे गये, यह हुसैन को नहीं मालूम था और वे मंजिल मंजिल इधर ही बढ़े आते थे यहाँ तक कि जब शाम के हाते के भीतर पहुँच चुके तब उन्होंने मुसलिम का मरना सुना। उस समय आपने अपने साथ के लोगों से कहा कि भाई अब तुम सब लोग अपने देश लौट जाओ, हम तो प्राण देने जाते हैं। उस समय वे सब लोग, जो अरब से साथ आए थे, प्राण के भय से अपने सच्चे स्वामी को छोड़ कर चले गये। यहाँ तक कि हज़ारों की जमात में केवल बहत्तर मनुष्य साथ रह गए। जब इन लोगों के साथ इमाम सरलफ नामक स्थान पर पहुँचे तो हुर नामी उबेदुल्लाह का सेनापति दो हज़ार सिपाहियों के साथ मिला और वह इन लोगों को घेर कर शाम की तरफ बढ़ता हुआ ले चला। इस समय इमाम ने फिर सब लोगों को जाने को कहा, परंतु अब तो वे लोग साथ थे जो सच्चे बंधु थे। ऐसे कठिन समय में कौन साथ छोड़ कर जा सकता था। इसी समय शाम से और भी फौजें आने लगीं। इमाम ने उन लोगों को बहुत समझाया और कहा कि हम यज़ीद के राज्य के बाहर चले जायँ, किंतु किसी ने उन की बात न सुनी। जब इमाम का डेरा करबला नामक स्थान में पड़ा था, उस समय शिमर नामक इब्ने जियाद के सेनापति ने फुरात नहर का पानी भी इन पर बंद कर दिया। एक तो गरमी के दिन, दूसरे सफर की गरमी और उस पर यह आपत्ति कि पानी बंद। शिमर और उमर इस लश्कर में मुख्य थे। यदि इन में से किसी को भी कभी दया और धर्म सूझता भी, लोभ उसे हटा देता।

कहते हैं कि यजीद हिमदानी ने साद से जाकर इमाम के वास्ते पानी माँगा और कहा कि क्या तुम को ईश्वर को मुँह नहीं दिखलाना है जो अपने गुरुपुत्र का निरपराध वध करते हो? इस के उत्तर मे उस दुष्ट ने कहा कि हम रै* की हाकिमी को धर्म से अच्छी समझते है। अत मे उबैदुल्लाह ने सादपुत्र को आज्ञा लिखा कि क्यो इतनी देर करते हो? या तो हुसैन का सिर लाओ या उन को यजीद के मत में लाओ। इस आज्ञा के अनुसार (सन् ६१ हिजरी के) ६ वीं मुहर्रम की सध्या को अट्ठाईस हज़ार सैना से उमर ने इमाम का लशकर घेर लिया। इमाम उस समय सध्या की वंदना मे थे। उठ कर सेना से कहा कि रात भर की मुझे और फुरसत दो। उमर ने इस बात को माना। इमाम ने साथ के लोगो से कहा कि अब अच्छा है चले जाओ और मेरे पीछे प्राण मत दो। परतु किसी ने न माना और सब मरने को उद्यत हुए। रात भर सब लोग ईश्वर की स्तुति करते रहे। सबेरे इमाम ने स्त्रियो को धैर्य और सतोष का उपदेश दिया और आप ईश्वर का स्मरण करते हुए सब हथियार बाँध कर अपने साथियो के साथ मरने को निकले। इन के साथ जितने लोग मारे गए उन की सख्या बहत्तर है। इन मे बत्तीस सवार और चालीस पैदल थे। सरदारो मे मुसलिम बिन उनका जरगामः, वहब उन्स, मालिक, हुज्जाज, जहीर, असदी, आमिर, उम्मग, उमरान, शाईब यमर, शूदब और हबीब इब्ने मजाहिर (एक वृद्ध मनुष्य) थे और इमाम के नातेदारो मे इनकी बहिन ज़ैनब के दो लड़के मुहम्मद और ऊन, और तीन मुसलिम के भाई, पाँच इमाम हुसैन के विमात्र भाई अब्बास, उसमान, मुहम्मद अब्दुल्लाह और जाफर और तीन पुत्र इमाम हसन के अब्दुल्लाह, जैद और कासिम (किसी के मत से पाँच अबूबकर और उमर भी) और एक पुत्र इमाम हुसैन के अली अकबर (अठारह बरस के) इतने मनुष्य थे। युद्ध होने के पूर्व इमाम एक ऊँट पर बैठ कर सैना के सामने आए और मृदु और गभीर स्वर से बोले कि हमने किसी की स्त्री छीनी या किसी का धन हरण

* एक स्थान। (स०)

किया या कोई और बात धर्म विरुद्ध की ? किस बात पर तुम लोग हम को निरपराध बध करते हो ? इस का उत्तर किसी ने न दिया, तब इमाम यह कह कर उस ऊँट पर से उतरे कि हम ने ससार मे तुम से हुज्जत समाप्त कर ली, अब ईश्वर के यहाँ हमारा तुम्हारा झगडा है और घोडे पर सवार हुए। युद्ध आरभ हुआ और बड़ी वीरता से इन के साथी सब मारे गए। अत मे इमाम अपने एक छोटे बच्चे को, जो प्यास से व्याकुल हो रहा था, उन लोगो के सामने लाए और कहा कि इस नौ महीने के बच्चे पर दया कर के केवल इस के पीने को तो पानी दो। इस के उत्तर मे उन दुष्टो में से एक ने ऐसा तीर मारा कि वह बच्चा वहीं मर गया। और फिर चारो ओर से घेर कर हजारो वार लोगो ने किए, यहाँ तक कि वे घोडे पर से गिरे। उस समय किसी ने उन का सिर काटा, किसी ने मरे पर भाला मारा, किसी ने हाथ की उँगली नोची। इस पर भी इन लोगो को सतोष न हुआ और उन लोगो के मरे शरीर पर घोडे दौडाए। हाय ! इतने बडे मनुष्य की यह गति ! भूख प्यास से दुखी और दीन मनुष्य को निरपराध बाल बच्चे समेत स्त्रियो के सामने मारना इन्हीं लोगो का काम है, उस पर भी गुरु-पुत्र को।

नं०	नाम	बाप का नाम	मा का नाम	जन्म का समय	अवस्था
१	मुहम्मद	अब्दुल्लाह	अमीना	१२ रबीउलऔवल ५२ हिजरी के पूर्व	६३
२	फ़ातिमा	मुहम्मद	खदीजा	६०४ ईसवी	२८
३	अली	अबूतालिब	फ़ातिमा (असद की बेटी)	५६६ ईसवी ११ रजब मक्के में	६२
४	हसन	अली	फ़ातिमा	१५ शाबान सन् २ हिजरी ६२५ ई०	४५॥
५	हुसैन	अली	फ़ातिमा	५ शाबान सन् ४ हिजरी ६२६ ई०	५१ वर्ष ५ महीना ५ दिन
६	अबूबकर	अबीक़हाफ़	उमउल् खैर	५७१ ईसवी	६३

मृत्यु का समय	सन्तति	गाड़े जाने का स्थान	विशेष विवरण
१२ रबीउल्-औ० ६३२ ईसवी ११ हिजरी	४ पुत्र, ४ कन्या	मदीना	बहु देववादी भूतपिशाचोपासी अरब जाति में इन्हीं ने एकेश्वर वाद स्थापन कर के मुसलमानी मत चलाया; ग्यारह विवाह किए बुद्धि आश्चर्य कौशल सम्पन्न थी। किसी के मत में १४ विवाह १८ संतति।
११ हिजरी	३ पुत्र, २ कन्या	मदीना	महात्मा मुहम्मद की एक मात्र वंश रखने वाली प्यारी कन्या थी। स्वभाव बहुत नम्र और दयालु था।
४० हिजरी १६ रमजान	१७ पुत्र वा १६, १७ कन्या	कूफा० नजफ ठीक नहीं मालूम	सुन्नियों के चौथे खलीफ़ा। शीआओं के पहले इमाम। पाँच बरस तीन महीना खिलाफ़त किया। माता और पिता दोनों संबंध में यह म० मुहम्मद के बहुत पास थे अर्थात् चचेरे और मौसेरे भाई थे। यह सैयदों के वंशकर्त्ता और फकीरों के मूल गुरु हैं। नौ विवाह किए थे।
१ रबीउल् औवल ६६ हिजरी ६७० ईसवी	१६ पुत्र, ८ कन्या	मदीना	सुन्नियों के पाँचवें खलीफ़ा तथा शीआओं के दूसरे इमाम थे। छ महीना खिलाफत किया। विष से शहीद हुए। पाँच पुत्रों का वंश है।
१० मुहर्रम ६१ हिजरी ६८३ई०	६ पुत्र, ८ कन्या	करबला	शीआओं के तीसरे इमाम। करबला के प्रसिद्ध युद्ध में शहीद हुए।
१३ हिजरी ६३४ ई०	३ पुत्र, २ कन्या	मदीना	सुन्नियों के पहले खलीफा थे। महात्मा मुहम्मद के पीछे दो बरस तीन महीना खलीफा रहे। महात्मा मुहम्मद की छोटी स्त्री आयशा के पिता थे। चार स्त्री थीं और मुसलमानी धर्म फैलाने को इन्होंने बहुत सा द्रव्य व्यय किया था।

नं०	नाम	बाप का नाम	मा का नाम	जन्म का समय	अवस्था
७	उमर	खिताब	खतमा	५८२ ईसवी	६३
८	उसमान	अफ़ान	अरदी	५७५ ईसवी	८२
९	इमाम जैनुलाब-दीन	इमाम हुसेन	शहरबानू (नौशेरवाँ से पाँचवीं)	३६ हिजरी	५८
१०	इमाम बाकर	हुसैन के पुत्र अली	उसम (अबदुल्ल-हई इमन की बेटी)	५८ हिजरी	६३
११	इमाम जाफ़र सादिक	बाकर	उम्मे फरदा (अबूबकर की पोती	८० वा ८३ हिजरी	६७
१२	इमाम मूसा काज़िम	जाफ़र	हमीरा	१२८ हिजरी	४५ या ५५
१३	अलीरजा	मूसा काजिम	तकीम	१५३ हिजरी	४६
१४	अबूजाफ़र नकी	अली	रहीना	१९५ हिजरी	२५
१५	अबुलहसन असकरी तकी	नक़ा	समाना	२१४ हिजरी	४०
१६	अबूमहम्मद	असकरी	सौसन	२३२ हिजरी	२८

मृत्यु का समय	सन्तति	गाड़े जाने का स्थान	विशेष विवरण
२३ हिजरी ४४ ई०	६ पुत्र, ३ कन्या	मदीना	दूसरे खलीफा थे, १० बरस आठ महीने खलीफा रहे। शहीद हुए, ६ पत्नी और दो उप-पत्नी थीं।
३५ या ३४ हिजरी ६५२ ई०	३ पुत्र, ४ कन्या	मदीना	तीसरे खलीफा थे। १२ बरस खलीफा रहे। इन को महात्मा मुहम्मद की दो बेटियाँ व्याही थीं किंतु उन को संतति नहीं थीं। आठ स्त्री थीं। पूर्वोक्त तीनों खलीफा की संतति शेख कहलाती हैं।
६४ हिजरी	६ पुत्र, ८ कन्या	मदीना	शीआ लोग केवल इन्हीं की संतति को सैयद मानते हैं।
११८ वा ११७ हिजरी	११ पुत्र, ४ कन्या	मदीना	
१४८ हिजरी	६ पुत्र, ३ कन्या	मदीना	
१८३	२ पुत्र, १ कन्या	बुगदाद	शीआ कहते हैं कि सुन्नियों के उपद्रव से अरब छोड़ कर चले गये। किंतु सुन्नी कहते हैं कि उस काल के खलीफा बुगदाद में रहते थे इससे आदर के हेतु इन को भी वहीं बुलाकर बसाया। ये बड़े भारी वंशकर्त्ता हुए हैं।
२०३	८ पुत्र, २२ कन्या	बुगदाद	शीआ मत का विशेष प्रचार किया। किंतु सुन्नी लोग कहते हैं कि ये लोग भी सब सुन्नी थे।
२२०	५ पुत्र, १ कन्या	बुगदाद	
२५४	२ पुत्र, २ कन्या	सरमनराय	
२६०	२ पुत्र, १ कन्या	सरमनराय	

नं०	नाम	बाप का नाम	मा का नाम	जन्म का समय	अवस्था
१७	अबुल्कासिम मिहदी	अबूमुहजकी	नरगिस	२५५ हिजरी	०
१८	इमाम अबूहनीफ़	साबित		८०	७७
१९	इमाममालिक	उन्स	उमउलमुहसिन (इमामहसन के परपोते की बेटी)	९५	८४
२०	इमाम शाफ़ई	इदरीस		१५०	५४
२१	इमाम जुमल	मुहम्मद		१६५	७६
२२	इनाम ग़ौस आज़म	अबासालिह (इमामहुसेन के वंश में)	फातिमा उम-उलखैर (इमाम हसन के वंश में)	४७०	९१

मृत्यु का समय	सन्तति	गाड़े जाने का स्थान	विशेष विवरण
२६७	१ पुत्र	बुगदाद	शीआओं के मत से ६ वर्ष की अवस्था में पर्वतगुहा में चले गए फिर प्रलय के समय निकलेंगे। सुन्नियों के मत से अभी जन्म ही नहीं हुआ, प्रलय में पैदा होंगे।
१५०	०	मदीना	
१७६	०	मिस्र	नं० १८ से २१ तक ये सुन्नी मतके चार इमाम हैं, शीआ इन को नहीं मानते। ये चारो पृथक मत के प्रवर्त्तक हैं यथा हानिफी, मालिकी, शाफेई और जम्बूली।
२०४	०	बुगदाद	अकबर के वंश के बादशाह हानिफी थे। दत्तात्रेय की भाँति अबूहनीफा ने अनेक गुरु किये थे, जिनमें इमामजाफर भी थे।
२४२	०	बुगदाद	सुन्नियों में इन्हीं चारों की चार मुख्य मत शाखा हैं। ये क्रम से एक के दूसरे शिष्य भी थे।
५६१	०	बुगदाद	सुन्नियों में ये एक प्रसिद्ध इमाम हुए हैं, हसनी-हुसैन सैयद थे और बड़े भारी विद्वान और सिद्ध थे। शीआ लोग इनको नहीं मानते हैं वरंच सैयद भी नहीं कहते।

कार्तिक नैमित्तिक कृत्य

'तत्कर्महरितोषंयत्साविद्यातन्मतिर्यया'

सं० १६२६

सं० १६२९, सन् १८७२ ई० में
प्रथम बार बनारस लाइट
प्रेस में छपी ।

भूमिका।

मेरे प्यारे मित्र—यद्यपि तुम्हारे प्रेम मार्ग मे यावत् कर्ममात्र निष्फल हैं तथापि तुम्हारे मिलने के साधन रूप कर्म तो कर्त्तव्य ही हैं, इसी आशय से यह विधि लिखी गई है। इसको देखकर कई पडित रुष्ट होगे पर यह तो समझैं कि पडितो के हेतु तो सस्कृत पुस्तके बनी ही हैं, यह तो केवल उन्हीं के आनदार्थ है जो श्रद्धावान हैं परतु सस्कृत ग्रथो को नहीं देखते। इसमे श्री रामार्चन चद्रिका, निर्णय सिधु, धर्म-सिधु, जयसिंह-कल्पद्रुम, भगवद्भक्तिविलास और कार्तिक महात्म्यादिक ग्रथो का सारांश लिखा है। जो हो, तुम इससे प्रसन्न हो, यही इसका फल है। अतएव प्यारे! यह तुम्हारे चरणो मे समर्पित है अगीकार करो।

तुम्हारा रसिक

हरिश्चंद्र

कार्तिक नैमित्तिक कृत्य

* श्री राधादामोदरायनम *

दोहा

जेहि लहि फिर कछु लहन की आस न चित मे होय।
जयति पवित्री जग करन प्रेम-बरन यह दोय॥ १॥

छप्पय

जदपि पान करि परम अमृतमय प्रेम भरयौ रस।
जड़ उनमत्त समान होइ बिचरत गत कलमस॥
सकल कर्म को जाल सिथिल किय परम प्रीति सो।
रह्यौ न कछु कर्त्तव्य शेष कुल वेद रीति सो॥
पै जानि भागवत धर्म एहि सूझत सो पथ जेहि लहत।
लखि दीन जीव ससार के परम कृपा गहि कछु कहत॥

कार्त्तिक-धर्म यहाॅ क्यो विधान करते है? इस हेतु से कि सब धर्मो मे भगवद्धर्म मुख्य है और यही श्रीमुख से भी कहा है—

"मन्मनाभवमद्भक्तो मद्याजीमान्नमस्कुरु मावेवैष्यसिकौन्तेय"
इत्यादि॥

विशेषतः कलियुग मे भगवद्धर्म ही की नित्यता है, यह भी निश्चय है।

यथा हेमाद्रौ श्री भागवद्वाक्यम्

कलौ सभाजयन्त्यार्य्या गुणज्ञास्सारभागिनः।
यत्र सङ्कीर्त्तनेनैव सर्व्वं स्वार्थोभिलभ्यते ॥

अनेक निबन्धेषु महाभारते

कलौ कलिमलध्वंसं सर्वपापहर हरिम्।
येऽर्च्चयन्ति नरानित्य तेपिवद्या यथा हरिः ॥

मदन पारिजाते योगि याज्ञवल्क्य

विष्णुर्ब्रह्माचरुद्रश्च विष्णुर्देवो जनार्द्दन।
तस्मात्पूज्यतमनान्यमहमन्ये जनार्द्दनात् ॥ इत्यादि

और इसमे विशेषता यह है कि एक श्री भगवान के पूजन मे सबका पूजन आ जाता है—यथा श्री मद्भागवते–

यथा तरोर्मूलनिषेचनेन तृप्यन्ति तत्स्कन्दभुजोपशाखा:।
प्राणोपहाराच्च तथेन्द्रियाणां तथैव सर्व्वार्हणमच्युतेज्या ॥

और इस भगवद्धर्म के सब अधिकारी है, यह श्री मुख से गाया है—स्त्रियोवैश्यास्तथा शूद्रास्तेपियान्ति पराङ्गतिम्। ऐसा ही परम भक्त श्री प्रह्लाद जी ने भी कहा है—

नाल ऋषित्व द्विजत्व देवत्व वाऽसुरात्मजा:।
प्रीणनाय मुकुन्दस्य न धन न बहुज्ञता ॥ इत्यादि

इससे सर्वसाधारण को और अनेक धर्मों को छोड़कर केवल भगवद्धर्म मुख्य हुआ तो भगवद्धर्मों मे परम पुनीत कार्तिक व्रतादि यहाँ दिखाते है।

कार्तिक सब मासो मे पवित्र है और उसकी नित्य क्रिया क्या है यह कार्तिक कर्म विधि नामक निबध मे लिख चुके है। यहाँ वे धर्म लिखे जाते हैं जो नैमित्तिक हैं और जैसे कार्तिक स्नान आश्विन शुद्धा ११ से आरभ होता है, इससे नैमित्तिक कृत्य भी उसी दिन से लिखते हैं।

अथ आश्विन शुद्धा, ११—इसी एकादशी से कार्तिक के सब व्रत आरम्भ करना। इस एकादशी का नाम पापाङ्कुशा है। इसमें भगवान की पद्मनाभ नाम से पूजा करै।

अथ आश्विन शुद्ध १५—यदि एकादशी से कार्तिक स्नान न आरम्भ किया हो तो इस दिन से करना। इस पूर्णिमा मे दो कर्म हैं—प्रथम रासोत्सव, द्वितीय कोजागर व्रत।

रासोत्सव जिस दिन सायंकाल मे पूर्ण चन्द्र हो उस दिन करना क्योंकि, "कलाहीने शशाङ्के तु न कुर्य्याच्छारदोत्सवम्" इस वाक्य मे हीन चद्र का निषेध है और भगवान को श्वेत वस्त्र, श्वेताभरण, श्वेत नैवेद्य समर्पण करना और चॉदनी मे शृगार सहित बैठाकर रामलीला के भजन गाना। इस दिन श्री मद्भागवत की रासपचाध्यायी का पाठ बहुत पुण्य देने वाला है और किसी ग्रथकार ने यह भी लिखा है कि रात्रि को चद्रमा की चॉदनी मे सूई मे डोरा पिरोना और कुछ अक्षर पढना, इससे नेत्र की जोति बढती है।

कोजागर व्रत जिस दिन आधीरात को पूर्णिमा हो, उस दिन करना। सॉझ मे लक्ष्मी और इद्र का स्थापन करके पूजा करना और नारियल का जल लक्ष्मी को भोग लगाकर पीना। आधीरात के समय लक्ष्मी जी यह कहती हुई निकलती है कि जो जागता मिलेगा और जूआ खेलता होगा, मै उसे धन दूंगी। कमल पर बैठी हुई लक्ष्मी का ध्यान करना और 'ॐ लक्ष्म्यैनम' इस मत्र से सब पूजा करके इस मत्र से पुष्पाजलि देना।

नमस्ते सर्व्व देवाना वरदासि हरिप्रिये।
यागतिस्त्वत्प्रपन्नाना सामेभूयात्त्वदर्च्चनात्॥

इद्र को भी चार दॉत के श्वेत हाथी पर बैठे ध्यान करके 'इंद्राय-नम' इस मत्र से पूजा करके पुष्पाजलि इस मत्र से देना।

विचित्रैरावतस्थाय भास्वत्कुलिशपाणये।
पौलोम्यालिगिताङ्गाय सहस्राक्षायतेनम.॥

इसी पुनवासी को बडे पुत्र की आरती और तिलक करना और रात को जागरण करना।

अथ कार्तिक कृष्णा ४—इस चतुर्थी को कर्क चतुर्थी का व्रत है। इसी चतुर्थी मे रानियों सहित राजा दशरथ की पूजा करना।

अथ कार्तिक कृष्णा ८—इस अष्टमी का नाम राधाष्टमी है। यह अष्टमी अरुणोदय व्यापिनी लेना और अरुणोदय की समय न मिले तो सूर्योदय-व्यापिनी मानना। इस अष्टमी को श्री राधाकुड मे स्नान करना और श्री राधिका का पूजन करना। इस दिन श्री राधा सहस्रनाम पाठ का बड़ा पुण्य लिखा है। इस दिन पुत्रवती स्त्री को गो-पूजन का, दाम्पत्य और शिव पूजन का विधान भी कोई ग्रथकार लिखते हैं।

अथ कार्तिक कृष्णा ११—इस एकादशी का नाम रमा है। इसमे व्रत और जागरण और श्री राधादामोदर का पूजन करना और रात्रि को दीपदान करना।

कार्तिक कृष्णा १२—इसको वत्स-द्वादशी कहते हैं। यह द्वादशी सायकाल व्यापिनी मानना और इसमे नक्त व्रत करना। ब्रह्मचर्य से रहना और उडद का भोजन करना, पृथ्वी पर सोना, साँझ की समय गऊ की पूजा करना। वह गऊ सीधी और दूध देने वाली हो और उसका बच्चा भी उसी रग का हो। सब पूजा करके तामे के अरघे मे इस मत्र से अर्घ देना।

क्षीरोदार्णवसभूते सुरासुरनमस्कृते।
सर्वदेवमयेमातर्गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तुते॥

फिर इस मत्र से गाग्रास देना।

सर्व्वदेवमयेदेवि सर्वदेवैरलकृते।
मातर्ममाभिलषित सफल कुरु नन्दिनि।

इसी दिन गऊ का घी, दूध, दही और मठा तथा तेल का और कढ़ाई का किया भोजन न करना। इस द्वादशी से पाँच दिन तक साँझ पीछे देवता, ब्राह्मण, गऊ, अपने से बड़े मनुष्य, मातादिक अपने से बडी स्त्री, हाथी और घोड़े की आरती करना और साँझ को दीये बालना। उत्तर मुख नत्र वा विशेष दीए बाल कर शुभाशुभ विचारना। दीया बालने का मत्र।

सूर्य्यांशसम्भवादीपा अधकार विनाशका. ।
त्रिकाले मा दीपयन्तु दिशन्तुच शुभाशुभम् ॥

अथ कार्तिक कृष्णा १३—इस दिन सॉझ को यम का दीया द्वार के बाहर देना । मत्र—

मृत्युनापाशदडाभ्यां कालेनश्यामयासह ।
त्रयोदश्यादीपदानात् सूर्यजः प्रीयतां मम ॥

इसी तेरस के दिन गो-व्रत भी होता है।

अथ कार्तिक कृष्णा १४—इस चतुर्दशी मे जो मगलवार पडे तो श्री महादेव जो का व्रत और पूजा करना। यह चतुर्दशी स्नानवाले चद्रोदय व्यापिनी माने और सर्वसाधारण इसमे अवश्य स्नान करे, क्योकि जो इसमे तेल लगाके सिर मल के नहीं नहाते उनको बड़ा दोष होता है। स्नान की समय खेत की हल से निकाली मिट्टी, चिचिडा, भटकटैया और तुम्बी तीन बेर अपने ऊपर से फिरावै और स्नान करके तिलक करके तब नित्य का कार्तिक स्नान करै। चिचिड़ा घुमाने का मत्र—

सीतालोष्ट समायुक्त सकटकदलान्वित ।
हरपापमपामार्ग भ्राम्यमाणः पुनः पुनः ॥

नित्य स्नान करके यम तर्पण करे। यह तर्पण जिसका पिता जीता हो वह भी करे। मत्र—

यमायनमः, धर्मराजायनमः, मृत्यवेनमः, अंतकायनमः, वैवस्वतायनमः, कालायनमः, सर्वभूतक्षयायनमः, औदुम्बरायनमः, दध्नायनमः, नीलायनमः, परमेष्ठिनेनमः, वृकोदरायनमः, चित्रायनमः, चित्रगुप्तायनमः।

इस मत्र से तीन तीन अजली जल तिल समेत दे। इस चतुर्दशी से प्रतिपदा तक महाराज बलि का राज रहता है, इससे इन तीनो दिन घर स्वच्छ रक्खे, दीए बालै, उज्वल वस्त्र पहिने और गीतादिक से चित्त प्रसन्न रक्खे। रात को चौमुखा दीया, नर्क के नाम का, इस मत्र से निकाले।

दत्तो दीप चतुर्दश्या नरकप्रीतये मुदा ।
चतुर्वर्त्तिसमायुक्त सर्वपापापनुत्तये ॥

पीछे हाथ मे जलती लकड़ी वा पलीता लेकर पित्रों को मार्ग दिखावे। मत्र—

अग्निदग्धाश्चयेजीवा येप्यदग्धा. कुले मम।
उज्वलज्योतिषादग्धास्तेयातु परमागतिम्॥
यमलोकम्परित्यज्य आगता ये महालये।
उज्वलज्योतिषावर्त्म प्रपश्यन्तु व्रजन्तु ते॥

इसी रात्रि का कोई काली-पूजन भी करते है और हनुमान जी का जन्मोत्सव भी इसी रात्रि को होना है और इसी रात्रि मे वीरो का पूजन, कुमारी-पूजन और तत्रोक्त मत्रों की सिद्धि भी होती है पर यह अधिकारी-परत्व है। सतोगुनी भक्तो को तो परम भागवत हनुमान जी का ही पूजन ग्राह्य है। हनुमान जी को तुलसी दल पर श्री राम नाम लिखकर चढाना और लड्डू भोग रखकर रामायण का पाठ वा और कुछ रामचरित्र सुनना।

मत्र—यत्र यत्र रघुनाथकीर्त्तन तत्र तत्र कृत मस्तकाजलिम्।
वाष्पवारि परिपूरित लोचन मारुतिन्नमतराक्षसान्तकम्॥

इस चतुर्दशी को नक्तव्रत करना वा उडद के पत्तो के शाक का फल विशेष है। जो इस चतुर्दशी को मगलवार पड़े तो चित्राव्रत और शिव-पूजन करना।

अथ कार्तिक कृष्णा ३०—यह दीपावली अमावस्या है, इसमे दिन को व्रत करना। साँझ को भगवान के मदिर मे दीपदान करना और दीए के वृक्ष बनाना और अनेक प्रकार के भोग समर्पण करके हटरी मे बैठाना। साँझ का अपना घर सब स्वच्छ करके यथाशक्ति उसकी शोभा करना। सड़को को राजा आज्ञा देकर स्वच्छ करावै और तोरणादिक सड़क के बाहर लगाना, दूकान पर वस्तु रखना और घर मे सब स्थानो पर दीया बाल के लक्ष्मी और बलि का पूजन करना, लक्ष्मी को खोए का लड्डू भोग लगाना और इस मत्र से दीपदान करना।

त्व ज्योतिः श्री रविश्चन्द्रो विद्युत्सौवर्ण तारकाः।
सर्वेषां ज्योतिषाज्योतिर्दीपज्योतिर्नमोस्तुते॥

रात को राज मार्ग मे, स्मशान मे, नदी के वा तडाग के तटो पर, मंदिरो मे शिखरो मे, गलियो मे और दुर्गम स्थानो मे राजा दिया बालने की आज्ञा दे। सब लोग शृगार करके, सुगध लगा के, पान खाते बाहर निकले और मित्रो से सबावियो से मिले। वारागना और नटनर्तकादिक नृत्य-गीत करें। राजा (यदि हिंदू हो) इस बात की डौंडी पिटवा दे कि आज महाराज बलि का राज्य है, कोई दुखी न हो, सब अपना मनमाना करै। जीवहिंसा, सुरापान, अगम्यागमन, चोरी और विश्वासघात ये पॉच पाप छोड़कर छूई हुई वस्तु का भोजन, वारागनासेवन, द्यूत और सब जाति के सग बैठना यह सब राजा बलि के राज मे पाप नहीं है।

गोप लोग गऊ का शृगार करै और सब लोग गऊ को भोजन दे। मल्ल लोग मल्ल युद्ध करे। घाड़े वाले घोडा नचावै। रात को राजा नगर के बाहर निकले और बालको को एकत्र करके उनका खेल देखे और उनको खिलौना मिठाई दे। सब लोग बाजे बजावै और आनंद की बाते करै। रात को स्त्रियो के वा ब्राह्मणो वा स्नेहियो के सग जूआ खेले। इसमे पूर्व पूर्व मुख्य है। आधी रात को जब पुरुष सोने लगे तब स्त्रियॉ सूप और डौंड़ी पीटती हुई दरिद्रा को घर से बाहर निकाले। इस दिन भी अभ्यग की विधि है।

अथ कार्तिक शुद्धा १– इसमे श्री गोवर्द्धन-पूजन, बलि-पूजा, दीपोत्सव, गोक्रीडा, मार्गपालीबधन, वृश्चिकाकर्षण, नया वस्त्र पहिरना, उत्सव जूआ खेलना, मगल मालिका और स्त्रियो की आरती करना ये मुख्य कर्म है। इसमे प्रथम श्री गोवर्धन-पूजन है। यह उत्सव अवश्य माननीय है क्योकि इसके हेतु श्री मुख वाक्य है।

एतन्ममतन्तात क्रियता यदि रोचते।
अय गोब्राह्मणादीनाम्मह्यञ्च दयितोमखः ॥

इसमे प्रेम-मार्ग मे वा और अन्य मार्ग मे जैसी जिसकी रीति हो वह पूजन करे। अब साधारण लोगो के हेतु यह रीति लिखी जाती है। जहॉ साक्षात श्री गोवर्द्धन पर्वत है वहॉ तो उन्हीं की और जहॉ गोवर्द्धन नहीं है वहॉ गऊ के गोबर का पर्वत बनाना, उत्तर मुख

रखना और एक कदरा बनाना। वहाँ भगवान की मूर्ति रखकर षोडशोपचार पूजन करना और अन्नकूट भोग लगाना। जहाँ गिरिराज की शिला हो वहाँ तो गिरिराज की शिला कदरा मे रखकर पूजन करना। जहाँ शिला न हो वहाँ शालिग्राम वा छोटे श्री ठाकुर जी की मूरत रखकर पूजा करनी और गऊ गोप की भी पूजा करनी। पहिले भगवान की पूजा करनी, उसके मत्र—

वलिराज्ञो द्वारपाल भवानद्यभवप्रभो।
निज वाक्यर्थनार्थाय मगोवर्द्धन गोपते॥
गोपालमूर्त्ते विश्वेश शक्रोत्सव विभेदक।
गोवर्द्धनकृतच्छत्र पूजामे हरगोपते।
देवे वर्षति यज्ञविप्लवरुषा वर्षाश्मपर्षानिलै.।
सीदत्पालपशुस्त्रियात्मशरणा दृष्ट्वानुकम्प्युत्स्मयन्।
उत्पाट्यैक करेणशैकमवलो लीलोच्छिलीध्र यथा।
विभ्रद्गोष्टमपान्महेन्द्रमदभित् प्रोयान्नइन्द्रोगवा॥

इति भगवत्-प्रार्थना मत्र।

गोवर्द्धनधराधार गोकुलत्राणकारक।
विष्णुबाहुकृतच्छाय गवाकोटि प्रदोभव॥
एषोऽव जानतेमर्त्यान् कामरूपी वनौकसः।
हतह्यस्मै नमस्यामः शर्म्मणे आत्मनोगवाम्॥
हतायमद्रिरबला हरिदासवर्य्यो।
यद्रामकृष्णचरणस्पर्श प्रमोद :॥
मानतनोति सहगोगणयोस्तयोर्यत्॥
पानीयसूयवसुकन्दरकन्द मूलै.॥

इति गिरिराज-प्रार्थना मत्रः।

या लक्ष्मीर्लोकपालानां धेनुरूपेण संस्थिता।
घृत वहतियज्ञार्थे ममपापव्यपोहतु॥
अग्रतस्सन्तुमेगावो गावोमेसन्तु पृष्ठतः।
गावोमेहृदयेसन्तु गवाम्मध्येवसाम्यहम्॥

इति गो प्रार्थना मंत्रौ।

अहोभाग्यमहोभाग्य नन्दगोप व्रजौकसाम् ।
यन्मित्रम्परमानन्द पूर्णब्रह्मसनातन ॥
आसामहोचरणरेणुजुषामहस्या
वृन्दावनेकिमपि गुल्मलतौषधीना ।
यादुस्त्यजम्वजन आर्य्यपथविहाय
भेजुर्मुकुन्दपदवीं श्रुतिभिर्विमृज्ञां ॥
यावैश्रियार्चितमजादिभिरामकामैः
योगेश्वरैरपियदात्म निरासगोष्ठ्या ।
कृष्णस्य तद्भगवतश्चरणारविन्दे
न्यस्त स्तनेषुविजहु. परिरभ्यतापं ॥
बन्दे नन्द व्रजस्त्रीणा पादरेणूमभीक्ष्णशः ।
यासांहरिकथोद्गीत पुनातिभुवनत्रयम् ॥
इति गोप-गोपी-प्रार्थना मन्त्राः

धन्येयमद्यधारणी तृणवीरुधस्त्वत्
पादास्पृशो द्रुमलता करजाभिमृष्टाः ।
नद्योद्रयः खगमृगास्मदयावलोकैः
गाप्योतरेण भुजयोरपियत्स्पृहाश्रीः ॥
इति व्रजप्रार्थना मंत्रः

इन मंत्रों से गोवर्द्धन-पूजन करके अन्नकूट भोग भगवान को समर्पण करके नमस्कार करना । इति ।

इस प्रकार गोवर्द्धन-पूजा करके महाराज बलि की पूजा करे । घर के एक कोने में महाराज बलि की और रानी बिध्यावलि की मूर्ति पॉच रग से लिखे । जीभ, ओठ, हथेली, तलवा और ऑख के कोने लाल रग से, बाल काले रंग से और सब अग पीले रग से, कपड़े श्वेत रंग से और आयुधादिक नीले रग से लिखे । दो भुजा बनावे और राजाओं के सब चिन्ह बनाकर अक्षत और षोडशोपचार से पूजा करे । मंत्र—

बलिराजनमस्तुभ्य विरोचनसुतप्रभो ।
भविष्येन्द्र सुराराते पूजेय प्रतिगृह्यतां ॥

का पूजन करना। 'यमायनमः' इस मंत्र से षोडशोपचार पूजन करके इन मंत्रों से पुष्पांजलि देना।

यमायनमः, निहन्त्रेनमः, पितृराजायनमः, धर्मराजायनमः, वैवस्वतायनमः, दंडधरायनमः, कालायनमः, भूताधिपायनमः, दत्तानुसारिणेनमः, कृत्तानुसारिणेनमः।

इन नाम मंत्रों से पूजा करके अर्घ देना, उसका मंत्र—

> एह्येहिमार्तंडजपाशहस्त यमांतकालोकधरामरेश।
> भ्रातृद्वितीयाकृतदेवपूजां गृहाणचार्घ्यंभगवन्नमस्ते॥

अथ कार्तिक शुद्धा ४—इस दिन शेषादिक महानागों की पूजा करना।

अथ कार्तिक शुद्धा ५—इस दिन जया व्रत करना, विष्णु की जया सहित पूजा करना, श्वेत वर्ण द्विभुज जया का ध्यान करके विष्णु और जया की प्रत्यग-पूजा करके बाँस के पात्र में सप्तधान दान करना और "येन बद्धो बली राजा" इस मंत्र से रक्षाबंधन करना।

अथ कार्तिक शुद्धा ६—जो मंगलवार हो तो अग्नि का पूजन करके ब्राह्मण भोजन कराना।

अथ कार्तिक शुद्धा ७—इस दिन कार्त्तवीर्य्य की पूजा करके उनका दीप-दान करना।

अथ कार्तिक शुद्धा ८—इस दिन गऊ का पूजन, गोग्रास दान करना और इसी में शाक व्रत है। नक्तव्रत करना, शाक खाना और शाक ही ब्राह्मण को देना।

अथ कार्तिक शुद्धा ९—इस दिन श्री वृंदावन की परिक्रमा करना। यह नवमी द्वापर की युगादि भी है। इसमें कुष्मांड दान करना और जगद्धात्री का पूजन करना। तुलसी के विवाह का उत्सव इसी दिन से आरंभ होता है। जो तुलसी विवाह करे वह तीन दिन का व्रत करे। यद्यपि धात्री-पूजन कार्तिक में नित्य ही है तथापि जो और दिन न किया हो तो इस दिन करे। 'ॐ धात्र्यैनमः' इस मंत्र से षोड़शोपचार पूजा करे और आठ दीए आठ ओर बाल कर यह मंत्र पढ़े—

इमेदीपा मयादत्ता प्रदीप्ताघृतपूरिता ।
धात्रिदेवि नमस्तुभ्यमतश्शान्तिम्प्रयच्छमे ॥

फिर भोगादिक समर्पण करके इन मंत्रों से पुष्पांजलि चढावै—

धात्रिदेवि नमस्तुभ्य सर्व्वपापक्षयकरि ।
पुत्रान्देहि महाप्राज्ञे यशोदेहिबलञ्चमे ॥
प्रज्ञामेधाञ्चसौभाग्य विष्णुभक्तिञ्चशाश्वतीम् ।
निरोगकुरुमानित्यं निष्पापंकुरु सर्वदा ।
सर्वज्ञकुरुमादेवि धनवतन्तथा कुरु ।
सम्वत्सरकृत पाप दूरी कुरुममाक्षये ॥

फिर इस मंत्र से सूत्र लपेटकर फेरी करे ।

दामोदरनिवासायै धात्र्यैदेव्यैनमोनम. ।
सूत्रेणानेनबध्नामि सर्वदेवनिवासिनीम् ॥

फिर इन मंत्र से फूल चढावे । धात्र्यैनमः, शान्त्यनमः, कान्त्यै०, मेधायै०, प्रकृत्यै०, विष्णुपत्न्यै०, महालक्ष्म्यै०, रमायै०, कमलायै०, इन्दिरायै, लोकमात्रे०, कल्याण्यै०, कमनीयायै०, सावित्र्यै०, जगद्धात्र्यै०, गायत्र्यै०, सुधृत्यै०, अव्यक्तायै०, विश्वरूपायै०, सुरूपायै०, अब्धिभवायैनमः इन मंत्रों से फूल चढ़ाना, धात्री के मूल में तर्पण करना ।

पितापितामहाश्चान्ये येऽपुत्रायेप्य गोत्रिणः ।
तेपिबन्तु मयादत्त धात्रीमूलेऽक्षयम्पय. ॥

आब्रह्मस्तम्ब पर्य्यन्तमित्यादि से फिर तर्पण करे । यह तर्पण सव्य ही से करे ।

धात्री के नीचे दामोदर भगवान की पूजा करे, चित्रान्न, चित्रवस्त्र समर्पे, ब्राह्मणों का जोड़ा खिलावे, भगवान की षोडशोपचार पूजा करके इस मंत्र से अर्घ दे ।

अर्घ्यं गृहाण भगवन् सर्वकामप्रदोभव ।
अक्षय्यासततिर्मेस्तु दामोदर नमोस्तुते ॥ इत्यादि

अथ कार्तिक शुद्धा १०—इस दसमी को सार्वभौम व्रत होता है ।

अथ कार्तिक शुद्धा ११—इस एकादशी का नाम प्रबोधिनी है । इस दिन भगवान सो कर उठते हैं, इससे यह परम मंगल दिन है । इस दिन

जिस समय मुहूर्त अच्छा हो उस समय भगवान को जगाना। पहिले नीचे पृथ्वी मे अनेक रगो से मगल-मडप, सथिया, चक्र इत्यादिक बना कर उसपर चौसठ ऊख का चार खभा बनाकर खडा करना, उसके नीचे भगवान को बिठाना और फिर घंटा शख बजाते हुए इन मत्रो से जगाना।

ब्रह्मेन्द्ररुद्राग्नि कुवेरसूर्य सोमादिभिर्वन्दित वन्दनीय।
बुद्धथस्वदेवेश जगन्निवास मत्रप्रसादेनसुखेनदेव॥
इय च द्वादशी देव प्रबोधार्थंतुनिर्मिता।
त्वयैवसर्वलोकाना हितार्थं शेषशायिना॥
उत्तिष्ठोत्तिष्ठगोविन्दत्यजनिद्राम्जगत्पते।
त्वयिसुप्तेजगत्सुप्तमुत्थितेउत्थित जगत्।
उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविन्द उत्तिष्ठगरुडध्वज।
उत्तिष्ठपुण्डरीकाक्ष त्रैलोक्ये मङ्गलकुरु॥

तथाच जो निकुंज के परम रस के अधिकारी हो वह इस मंत्र से जगावें।

विगता रजनी नाथ प्रमदानां सुखप्रदा।
उदेत्ययदिनमणिर्वियोगी जनवचकः॥
प्राणनाथ जगन्नाथ गोपीनाथ कृपानिधे।
चिरसुप्तोसिजागृष्व सुरतश्रम कर्षितः॥
ललितावाद्यतेवीणां विशाषा नृत्यतेगणे।
गायन्ति गोपिकास्सर्वास्तावकनिर्म्मलयशः॥
वयस्या द्वारि सम्प्राप्ताः क्रीडार्थंतवमानद॥
हय्यंगवीनहग्ता सा त्वा यशोदाऽभि वाञ्छति।
वियुक्ताश्चक्रवाकिन्य' पक्षिणो कुर्व्वते रवम्।
वाति वायुस्सुखस्पर्शो दीपोय मन्दतागतः॥
उत्तिष्ठोत्तिष्ठ प्राणेश उत्तिष्ठोतिष्ठ वल्लभ।
मुखन्दर्शय मे नाथ वियोग शमयप्रिय।
त्वयि सुप्ते जगन्नाथ जगत्सुप्तम्भवेदिदम्।
उत्थिते चेष्टते सर्व्वमुत्तिष्ठोतिष्ठ माधव॥

इन मंत्रो से जगा के पचामृत स्नान कराना और चदनादिक से उद्वर्त्तन करके शीत के नए वस्त्र समर्पण करके पुष्पादिको से पूजन करना। मत्र—

गतामेवा वियच्चैव निर्म्मल निर्म्मलादिशः।
शारदानिच पुष्पाणि गृहाण मम केशव ॥

इस भाँति पुष्प, गध, अक्षत, धूप. दीप, नैवेद्य, ताबूल, फलादिक अर्पण करके आरती करके इन मत्रो से स्तुति करना।

योऽविद्ययाऽनुपहतोपिदशार्द्ध वृत्या
निद्रामुवाह जठरीकृतलोकयात्र:।
अन्तर्जलेहि कशिपुस्पर्शानुकूलाम्
भीमोर्मिमालिनि जनस्य सुख विवृण्वन्॥
सोमावदभ्र करुणो भगवान् विवृद्ध
प्रेमस्मितेन नयनाम्बुरुह विजृम्भन्।
उत्थाय विश्वविजयायचनोविषादम
माध्व्यागिराऽपनयतात्पुरुष. पुराणम्॥
यन्नाभिपद्मभवनादज आविरासीत्
लोकत्रयोपकरणो यदनुग्रहेण।
तस्मै नमस्त उदरस्थ भवाय योग
निद्राऽवसान विकसन्नलिनेक्षणाय॥

प्रार्थना करके दडवत प्रदक्षिणा करके कार्तिक के सब व्रत भगवान के सामने समाप्त करे। इस दिन श्री ठाकुर जी को रथ पर बिठा कर नगर में घुमाने का महापुण्य है। भगवान को रथ पर बैठा कर मगल-पाठ वेदपाठ बाजा शख घटा बजाते हुए नगर मे घुमावे और जहाँ जहाँ रथ जाय वहाँ वहाँ लोग पूजा करे। मत्र—

यद्रोषविभ्रम विवृत्तकटाक्षपात
सभ्रान्त नक्र मकरो भयगीर्ण घोषः।
सिन्धुश्शिरस्यर्हण (परि) गृह्य रूपी
पादारविन्दमुपगम्य बभाष एतत्।
नत्वावयं जड़धियोरुवि दाम एतत्॥

कूटस्थमादिपुरुष जगतामधीश।
यत्सत्वतस्सुरगणा रजस. प्रजेशा
अन्येय भूतपतय स्सभवात् गुणेशः ॥
कामम्प्रयाहि जहि विश्रवसोवमेह
त्रैलोक्य रावणमवाप्नुहि वीर पत्नीम्।
वध्नीहि सेतुमिहिते यशसो वितत्यै
गायन्ति दिग्विजयिनो यमुपेत्य भूपाः ॥
स्वस्त्यतु विश्वस्य खल' प्रसीदताम्
ध्यायन्तु भूतानि शिवम्मिथोपिवा।
मनश्चभद्रम्भजता दधोक्षजे
आवेश्य तान्नो मतिरप्य हैतुकी ॥

पुक्तश्शैव्यादिवा हैर्मरकतसुगणत्किङ्किणीजालमाला
रत्नोघैर्मौक्तिकानामविरलमणिभिस्सम्भृतैश्चैवहारैः ॥
हेमैः कुम्भैः पताका शिवतर रुचिभिर्भूषितः केतु मुख्यैः।
छत्रैर्ब्रह्मेशवन्धो दुरित हरहरेः पातु जैत्रो रथोव ॥
वक्त्र नीलोत्पलरुचि लसत् कुण्डलाभ्या सुमृष्टम्।
चन्द्राकार रचित तिलक चन्दने नाक्षतैश्च ॥
गत्यां लीला जनसुखकरीं प्रेक्षणेनामृतौघम्
पद्मावास सृततमुरसा धारयन् पातु विष्णु ॥

मोदन्ता सुजनास्त्वनिन्दितधियस्त्यक्ताखिलोपद्रवाः।
स्वस्थास्सुस्थिरबुद्धयः प्रतिहता मित्रारमन्तां सुखम् ॥
रे दैत्यागिरिगह्वराणि गहनान्याशु व्रजध्व भयात्।
दैत्यारिर्भगवान यन्नरहरि यान समारोहति ॥
पलायध्वम्पलायध्व रेरे दनुज दानवाः।
सरक्षणाय लोकाना रथारूढ़ो नृकेशरी ॥

इन मत्रो को पढते और भगवान का चरित्र गाते हुए रथ को घुमावे। रथ के खींचने का, रथ के सग चलने का, रथ पर बैठे भगवान् के दर्शन करने का, तथाच पूजा करने का अनन्त माहात्म्य है। विस्तार भय से यहाँ नहीं लिखा। इसी दिन तुलसी जी का विवाह भी है।

तुलसी-विवाह की विधि विशेष और ग्रंथो मे लिखी है, देख लो। संक्षेप से यहाँ लिखते हैं। तुलसी अपने हाथ से घर वा बगीचे मे लगाना, जब तीन महीने का वृक्ष हो तब उसका पूजन आरंभ करना और फिर शुभ मुहूर्त्त देखकर विवाह करना। मंडप, कलश-स्थापन, वेदी इत्यादि सब विवाह की भाँति बनाकर नवग्रह, मख, मातृका-पूजन नांदी श्राद्ध करके दान करना। जो लग्न कोई अच्छी मिले तो उस लग्न मे, नहीं तो गोधूली मे विवाह करना। अंतरपट करके "वासश्रुतः" इस मंत्र से वस्त्र पहिराना। "यदावध्ने" इस मंत्र से कंकण बाँधना और मंगलाष्टक पाठ करके अंतरपट हटाकर "मयासम्वर्द्धिता यथाशक्त्य-लंकृतामिमातुलसीं देवीं दामोदराय वराय तुभ्यमहं सम्प्रददे" यह संकल्प करके जल भगवान के सामने छोडना और तुलसी को भगवान से छुला देना। उस समय यह मंत्र पढवाना "कोदात्कस्माअदात" इत्यादि। फिर होम करना "पंचत्वनो अग्ने इत्यादि" मंत्र से नव आहुति देकर फिर होम इन मंत्रो से करना। पहिले द्वादशाक्षर से फिर वासुदेवायनमः स्वाहा, नारायणाय०, माधवाय०, गोविन्दाय०, विष्णवे०, मधुसूदनाय०, त्रिविक्रमाय०, वामनाय०, श्रीधराय०, हृषीकेषाय०, पद्मनाभाय०, दामोदराय०, उपेन्द्राय०, वासुदेवाय०, अनिरुद्धाय०, अच्युताय० अनन्ताय०, गदिने०, चक्रिणे०, विष्वक्सेनाय०, वैकुंठाय०, जनार्दनाय०, मुकुन्दाय०, अधोक्षजायनमः स्वाहा इन मंत्रो से होम करके दक्षिणा, भूयसी-दक्षिणा, आचार्य-दक्षिणा, शय्यादानादिक करके इस मंत्र से प्रार्थना करना।

त्वन्देवि मेग्रतो भूया तुलसी देवि पार्श्वतः।
देवित्व पृष्ठतो भूयास्त्वद्दानात् मोक्षमाप्नुयाम्॥

विवाह के समय स्त्रियाँ गीत गावे।

इति तुलसी विवाह।

इस एकादशी को व्रत करके रात को जागरण करना। इस रात को जागरण का, दीपदान का बडा पुण्य है। जो इस एकादशी को सोमवार और उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र हो तो बड़ी फलदात्री हो। इसी

दिन से भीष्म पचक का व्रत करना। १०८ द्वादशाक्षर मत्र जप करके भगवान को पचामृत स्नान कराके 'ॐ विष्णवेनमः' इस मत्र से १०८ आहुति देकर वृत करना, पृथ्वी पर सोना, भीष्म तर्पण करना। पहिले दिन तुलसी से चरण पूजन करके गोबर प्राशन करना, दूसरे दिन विल्व-पत्र से जाँघ की पूजा करके गोमूत्र प्राशन करना, तीसरे दिन भँगरैया से नाभि-पूजन करके दूध प्राशन करना, चौथे दिन कनैल से कधा पूजन करके दही प्राशन करना, पाँचए दिन की विधि पूर्णमासी की विधि मे देखो। इसी दिन मत्स्य भगवान को घडे पर रख के स्वर्ण की मूर्ति बनाकर पूजा करना भी किसी का मत है। पूजा करके इस मत्र से घड़ा दान कर देना।

जगद्योनिर्जगद्रूपो जगदादिरनादिमान्।
जगदाघो जगद्बीजो प्रीयता मे जनार्द्दन ॥

अथ कार्त्तिक शुद्धा १२—यह मन्वतरादि है। इसमे दीपदान, प्रातः समय नीराजनादिक करना।

अथ कार्त्तिक शुद्धा १४—इसका नाम चतुर्दशी है। यह परम पुण्य दिन है। इसमे स्नान-दानादिक करना। इसी चतुदशी में ब्रह्मकूर्चक वृत और पाषाण होते हैं। इसमे विश्वेश्वर का दर्शन और पूजन होता है। इसमे रात को जागरण करना और कार्त्तिक का उद्यापन करना।

अथ कार्त्तिक शुद्धा १५—यह बडी पवित्र तिथि है। इसमे जो विशाखा के सूर्य्य और कृत्तिका के चद्रमा हो तो पद्मक नामक बड़ा पवित्र योग हो। इसमे पुष्कर-स्नान वा श्री यमुना-स्नान वा श्रीगगा-स्नान करके गोदान करना। इसमे जो भरणी, कृत्तिका वा रोहिणी नक्षत्र हो तो बड़ा फल है। इसी पूर्णिमा मे मत्स्य जयन्ती मत्स्य भगवान का पूजन-करके दानादिक करना। इसी मे साँझ को त्रिपुरोत्सव करना। साँझ को इस मंत्र से दीपदान करना—कीटाः पतगाः मशकाश्च वृक्षा. जले स्थले ये विचरन्ति जीवा। दृष्ट्वा प्रदीप नव जन्म भागिनो भवन्तु नित्य श्वपचाश्च विप्रा ॥

इस पूर्णिमा को कार्त्तिकेय का दर्शन करना। यह मन्वादि भी है।

इसमें नक्तव्रत वा उपवास करना। साँझ को कृत्तिका का पूजन करना-मंत्र-शिवायैनमः, सम्भूत्यैनमः, प्रीत्यैनमः, सतत्यैनमः, अनुसूयायैनमः, क्षमायैनमः, कार्तिकेयायनमः, खड्गिनेनमः, वरुणायनमः, हुताशनायनमः। इन मंत्रों से कृत्तिका और कार्तिकेय का पूजन करना। पूजा करके क्षीरसागर दान करना। चौबीस अंगुल का क्षीरसमुद्र बना कर गऊ का दूध भर कर सोने की मछली और मोती की आँख बनाकर दान करना। जो एकादशी को व्रत न समाप्त किया हो तो कार्तिक व्रत इस मंत्र से समाप्त करना।

इदं व्रतं मयादेव कृतं प्रीत्यै तव प्रभो।
न्यूनं सम्पूर्णतां यातु त्वत् प्रसादाज्जनार्दन॥

इसी पूर्णिमा में नील वृषभ दान करना और इसी में संतान व्रत, राशि व्रत और मनोर्थ पूर्णिमा व्रत होता है। इसी पूर्णिमा में चातुर्मास के व्रत समाप्त करना। उस व्रत के दान लिखते हैं। नक्त व्रत में दो वस्त्र दान करना। एकान्तर उपवास में गऊ। भू-शयन में शय्या। एक बेर खाने में गऊ देना। जो अन्न छोड़ा, हो तो वह सोने का बनाकर देना। कृच्छ्र किया हो तो दो गऊ देना। शाकाहार किया हो वा दूध छोड़ा हो वा दूध पीता हो वा और कोई गोरस छोड़ा हो तो गऊ देना। ब्रह्मचर्य लिया हो तो सोना देना। पान छोड़ा हो तो दो वस्त्र देना। मौन लिया हो तो घी का घड़ा, दो वस्त्र और घंटा देना। जो नित्य रंग से मंदिर में स्वस्तिकादिक बनाते हो तो गऊ और सोने का कमल देना। दीपदान में दीए और दो वस्त्र देना। गऊग्रास देते हो तो गऊ और बैल देना। पृथ्वी पर भोजन करता हो तो काँसे की थाली और गऊ देना। सौ फेरी देते हों तो वस्त्र। अभ्यंग छोड़ा हो तो तेल का घड़ा। केश न बनवाया हो तो मधु, चीनी, सोना। गुड़ छोड़ा हो तो ताम्र का पात्र और गुड़ और सोना देना। ऐसे ही जिस वस्तु को छोड़ा हो वह स्वर्ण समेत देना। जो लाख तुलसी चढ़ाया हो तो उद्यापन करना। साँझ को इस मंत्र से दीपदान करना।

नमः पितृभ्यः प्रेतेभ्यो नमो धर्माय विष्णवे।
नमो याम्याय रुद्राय कान्ताय पतयेनमः॥

इस मत्र से दीपदान करना। यह पूर्णिमा परम फलदात्री है। इसमें कुछ सुकृत हो सो करना। भीष्म पंचक का व्रत इसी दिन समाप्त करके कालपुरुष का दान करना, होम करना। यह तिथि श्री राधिकाजी को बहुत प्यारी है, इससे वैष्णवो को इस तिथि मे श्री राधासहस्रनाम-पाठ, श्री राधिका-मत्रजप और श्री राधिका-पूजन करना। इसी पूर्णिमा को गोलोक मे श्री ठाकुर जी ने श्री राधिकाजी का पूजन किया था और उस समय श्री महादेव जी ने ऐसा गान किया कि श्रीराधिकाजी सहित भगवान द्रव हो गए। इससे इसी पौर्णमासी को गगाजी का जन्म है, अतएव इस दिन गगा स्नान का बड़ा फल है और तुलसी का भी जन्म दिन यही है, यह देवी पुराण मे लिखा है, इससे इस तिथि मे तुलसी पूजन और भगवान को तुलसी समर्पण की मुख्यता है। विशेष कहाँ तक कहें, यह कार्तिक ऐसा पवित्र महीना है, इसमे स्नान, दान, जप, तप, व्रत, जागरण, दीपदान इत्यादि सब कर्म अक्षय होते है।

दोहा

प्राणनाथ-पद-रज सुमिरि धारि हृदय आनन्द।
परम प्रेमनिधि रसिक बर बिरची श्री हरिचन्द।
प्राणपियारे प्रेमनिधि प्रेमिन-जीवन-प्राण।
तिनके पद अरपन कियो यह कारतीक विधान॥

इति श्री

सं० १६२६

स० १६२६ में छपी कार्तिक नैमित्तिक
कृत्य के मुख पृष्ठ पर इसका उल्लेख
है अत इसके पहले की
रचना है।

श्रीराधाकृष्णाय नम

श्रीराधादामोदराय नम

कार्त्तिक-कर्म-विधि

—:०.—

जै जै श्री नँदनद श्रीराधारसबस रसिक।
दामोदर व्रजचद गोपीनाथ अनाथगति ॥ १ ॥
रासरसिक राधारमण मनमोहन घनश्याम।
कोटि कोटि मनमथ मथन सुदर सब सुखधाम ॥ २ ॥
बदौ कातिक मास दामोदर प्रिय पुण्यप्रद।
नासत यम की त्रास हिय हुलास कर अतिसुखद ॥ ३ ॥

श्लोकः

श्रीकृष्ण करुणाकर कविवर कान्तापति कामदं
गोपीना नयनोत्सव गुणनिधि गो गोपवृन्दप्रिय।
राधाराधितविग्रह रतिरत रामानुज रासग
मानार्थं मथुराधिप मनहरं मान्य मनोज्ञ भजे ॥१॥

इस ससार मे जन्म लेके मनुष्यो को भगवत्स्मरण और स्नान-दानादिक करना यही मुख्य धर्म है, क्योकि बडे बड़े पर्वो मे स्नान-पूजा-व्रत-दानादिक करने से पाप नाश होते है और मुक्ति मिलती है और

पर्व और व्रत इत्यादि तो अनेक हैं और नित्य ही स्नानादिक का बडा फल है परतु मार्गशीर्ष, कार्तिक, माघ, वैशाख सब महीनो मे उत्तम गिने जाते हैं तिस मे भी कार्तिक स्नान का फल विशेष है। यह बात सब शास्त्र मे प्रसिद्ध है कि कार्त्तिक के महीने मे काशी मे पचगगा-स्नान का बड़ा पुण्य है।

यथा काशीखडे

कार्त्तिकेमासि मे यात्रा यैं कृता भक्तितत्परैः।
बिंदुतीर्थे कृत स्नान तेषाम्मुक्तिर्न दूरतः॥ १ ॥
शत समास्तपस्तप्त्वा कृते यत्प्राप्यते फल।
तत्कार्त्तिके पचनदे सकृत्स्नानेन लभ्यते॥ २॥
कार्त्तिके बिंदुतीर्थे यो ब्रह्मचर्य्यपरायणः।
स्नानमर्धोदिते भानौ भानुजात्तस्य भी कुत॰॥ ३॥

यथा पाद्मे, भार्गवार्चनचन्द्रिकाया च

आश्विनस्य तु मासस्य या शुक्लैकादशी भवेत्।
कार्त्तिकस्य व्रतानीह तस्या वै प्रारभेत्सुधी॰॥ ४॥

यथा विष्णुरहस्ये

प्रारभ्यैकादशीं शुक्लामाश्विनस्य तु मानवः।
प्रातः स्नानम्प्रकुर्वीत यावत् कार्त्तिकभास्कर.॥ ५॥

यथा मदनपारिजाते विष्णुः, तथा नारदीये च

कार्त्तिक सकल मासं नित्यस्नायी जितेन्द्रियः।
जपन् हविष्यभुक् शान्तः सर्वपापै॰ प्रमुच्यते॥ ६॥

इन वाक्यो का साराश अर्थ यह है कि आश्विन शुक्ल एकादशी से आरभ करके जो कार्त्तिक मे जितेद्रिय होकर और व्रतादिक कर पंचगंगा मे प्रातः स्नान करता है वह मुक्तिभागी होता है और उसको यम-राज का भय नहीं रहता और भी इसका महाफल लिखते हैं।

तथा पुराणसारोद्धारे, नारदीये च

प्रयागे माघमासे तु सम्यक् स्नानस्य यत्फल।
तत्फल कार्त्तिके काश्यां पंचनद्या दिनेदिने॥ ७॥

कृते धर्म्मनद नाम त्रेतायां धूतपापकं ।
द्वापरे बिन्दुतीर्थं च कलौ पचनद स्मृतम् ॥ ८ ॥
अव्रतः कार्त्तिको येषा गतो मूढधियामिह ।
न तेषाम्पुण्यलेशोपि दुष्टाना शूकरात्मना ॥ ९ ॥

माघमहीने मे प्रयाग नहाने का जो फल है वह कार्त्तिक मे पचगंगा मे एक दिन स्नान से मिलता है । सत्ययुग मे धर्मनद, त्रेता मे धूतपापा, द्वापर मे बिदुसर, कलियुग मे पंचगगातीर्थ ही मुख्य है । जो लोग कार्त्तिक मे स्नान-व्रतादिक नहीं करते वे मूढबुद्धि हैं, उन्हें किसी पुण्य का फल नहीं होता ।

यथा पद्मपुराणे कार्त्तिकमाहात्म्ये सत्यभामा प्रति श्रीकृष्ण वाक्यम्

कार्त्तिके मासि ये नित्य तुलासंस्थे दिवाकरे ।
प्रातः स्नास्यन्ति ते मुक्ता' महापातकिनोपि वा ॥१०॥
स्नानं जागरण दीप तुलसीवनपालन ।
कार्त्तिके ये प्रकुर्वन्ति ते नरा विष्णुमूर्त्तय. ॥ ११ ॥
कार्त्तिकव्रतिना पुसां विष्णुवाक्यप्रणोदिताः ।
रक्षा कुर्वन्ति शक्राद्या. राजान किंकरा यथा ॥ १२ ॥
विष्णुप्रिय सकलकल्मपनाशनं यत्
सर्वत्र धर्म्मधनधान्यविवृद्धिकारि ।
ऊर्जव्रत सनियमं कुरुते मनुष्य'
कि तस्य तीर्थपरिशीलनसेवया च ॥ १३ ॥
ते धन्यास्ते सदापूज्यास्तेषा च कुलमेव च ।
विष्णुभक्तिपरा ये स्युः कार्त्तिकव्रतकादिभिः ॥ १४ ॥

तुला के सूर्य्य मे कार्त्तिक मे जो लोग प्रातः स्नान करते हैं वे महापातकी हो तो भी मुक्त होते हैं । स्नान, जागरण, दीपदान, तुलसीपूजन इत्यादिक जो लोग करते हैं वे सब विष्णु के स्वरूप हैं । कार्त्तिक के व्रती लोगो की इद्रादिक देवता ऐसी रक्षा करते हैं जैसे राजा की सेवक रक्षा करै क्योकि उन को श्रीविष्णुभगवान की यही आज्ञा है । विष्णु का प्यारा, कल्मश नाश करने वाला, और सब धर्म धान्य धन का

बढ़ाने वाला कार्त्तिक व्रत जो लोग करते हैं उन को तीर्थों मे घूमने से और उस की सेवा से क्या है अर्थात् वह सब कुछ कर चुके। वह और उन के कुल धन्य हैं और पूज्य हैं जो कार्त्तिक मे व्रतादिक से विष्णु की भक्ति करते हैं।

तथा सनत्कुमारसहिताया कार्त्तिकमाहात्म्ये

न कार्त्तिकसम धर्म्यमर्थ्यं नो कार्त्तिकात्पर ।
न कार्त्तिकसम काम्य मोक्षदान च कार्त्तिकात् ॥१५॥
तस्मात्सौरैश्च गाणेशै. शाक्तै शैवैश्च वैष्णवै ।
कर्त्तव्य कार्त्तिकस्नान सर्व्वपापापनुत्तये ॥१६॥
न कार्त्तिकसमो मासो न काशीसदृशी पुरी ।
न प्रयागसम तीर्थं न देव' केशवात् पुर' ॥१७॥
प्रसगाद्वा बलाद्वापि ज्ञात्वाऽज्ञात्वा कृततु यत् ।
स्नान कार्त्तिकमासस्य न पश्येद्यमयातना ॥१८॥
तावद्गर्ज्जन्ति पापानि ब्रह्महत्यादिकानि च ।
न कृत कार्त्तिके स्नानं यावज्जन्तुभिरादरात् ॥१९॥
तीर्थराजादितीर्थानि प्राप्ते कार्त्तिकमासके ।
स्नानार्थं पचगगातु समयाति न सशय ॥२०॥
दुर्लभा मानुषो देहो दुर्लभा काशिका पुरी ।
तत्रापि कार्तिके मासि पचगगं सुदुर्लभम् ॥२१॥

कार्त्तिक के समान न कोई धर्म है, न अर्थ है, न काम है, न मोक्ष है, न दान है। सब एक ही हैं इससे शैव, वैष्णव, शाक्त और गाणपत्य सब को कार्त्तिक स्नान करना चाहिए। काशी के समान कोई पुरी नहीं, प्रयाग के समान कोई तीर्थ नहीं, केशव के समान कोई देवता नहीं और कार्त्तिक के समान कोई महीना नहीं है। सग साथ से वा बल से, जाने वा बिना जाने भी जिसने कार्त्तिकस्नान किया है उस को यम का भय नहीं है। ब्रह्महत्यादिक पाप तभी तक गर्ज्जना करते हैं जब तक जीव ने कार्त्तिकस्नान नहीं किया। प्रयागादिक सब तीर्थ कार्त्तिक मे पचगगा स्नान को आते हैं। एक तो मनुष्य का देह

दुर्लभ है दूसरे काशी पुरी दुर्लभ है तिस मे भी कार्त्तिक महीने मे पचगगा तीर्थ अति दुर्लभ है ।

और भी इस का महिमा बहुत लिखा है ।

यथा पद्मपुराणे स्वर्गखडे तृतीयाध्याये
तथा नारदीये रुक्मागदोपाख्याने

प्रात' स्नान नरो यो वै कार्त्तिके श्रीहरप्रिये ।
करोति सर्व्वतीर्थेषु यत् स्नात्वा तत्फलं लभेत् ॥२२॥

सब तीर्थों मे स्नान करने का जो फल है वह कार्त्तिक मे प्रातः स्नान से मिलता है ।

तथा तत्रैव विशतितमेध्याये

श्रेष्ठ विष्णुव्रत विप्र तत्तुल्या न शतं मखा. ।
कृत्वा व्रत व्रजेत् स्वर्ग वैकुंठ कार्त्तिकव्रती ॥२३॥

श्रीविष्णु भगवान् का व्रत सब व्रतो मे उत्तम है, सौ यज्ञ भी उस के समान नहीं हैं, जो लोग इस कार्त्तिक का व्रत करते हैं वे व्रती लोग वैकुठ नामक स्वर्ग मे जाते हैं ।

तथा वायुपुराणे ।

यदीच्छेद्विपुलान् भोगान् चन्द्रसूर्य्यग्रहोपमान् ।
कार्त्तिक सकलम्प्राप्य प्रात.स्नायी भवेन्नरः ॥

कार्त्तिक का माहात्म्य सब शास्त्रो मे बहुत कहा है, कहाँ तक लिखै । इस कार्त्तिक मे एक व्रत और भी होता है, जिसका नाम मासोपवास है ।

यथा हेमाद्रौ विष्णुरहस्ये

व्रतमेतत्तु गृह्णीयाद्यावत्त्रिंशद्दिनानि तु ।
आश्विनस्यासितेपक्षे एकादश्यामुपोषितः ॥२४॥
वासुदेव समुद्दिश्य कार्त्तिके सकले नरः ।
मास चोपवसेद्यस्तु'स मुक्तिफलभाग् भवेत् ॥२५॥
कृत्वा मासोपवासं च विचार्य्य विधिवन्मुने ।
कुलाना शतमुद्धृत्य विष्णुलोक व्रजेन्नरः ॥ २६ ॥

यह कार्त्तिक का मासोपवास व्रत अत्यन्त पवित्र है। इस की विशेष विधि व्रतार्क मे लिखी है। कार्त्तिक का माहात्म्य सूचन कर के अब कुछ उस के नियम लिखे जाते हैं जिस मे विदित हो कि कार्त्तिक व्रत कब से करना और किस किस वस्तु का त्याग करना इत्यादि। कार्त्तिक स्नान आश्विन सुदी ११ एकादशी स प्रारंभ करना, इस के वाक्य ऊपर लिख आए हैं।

यथा स्कान्दे तथा ब्रह्मपुराणे च

वैष्णव वैष्णवाना यद्व्रतविष्णुपदप्रद।
आश्विनस्यासितेपक्षे एकादश्यां द्विजोत्तमै।
वैष्णवे कल्पनापूर्वम्प्रारम्भोस्य विधीयते ॥२७॥

विष्णुपद का देने वाला यह वैष्णवो का परम वैष्णव व्रत कुँवार सुदी एकादशी मे वैष्णव लोगो को कल्पनापूर्वक प्रारभ करना चाहिए तथा कार्त्तिक मे खाने पीने का सयम और ब्रह्मचर्य तो अवश्य ही करना चाहिए।

प्रमाण नारदीये

अव्रतेन क्षतेद्यस्तु मास दामोदरप्रिय।
तिर्य्यग्योनिमवाप्नोति नात्र कार्य्याविचारणा ॥२८॥

तथा काशीखंडे

ऊर्ज्जे यवान्नमश्नीयाद् देवान्नमथवा पुन:।
वृन्ताक शूरण चैव शूकशीर्षीश्च वर्जयेत् ॥२९॥

स्कान्दे

कार्त्तिके वर्ज्जयेत्तद्वद्द्विदल बहुबीजक।
माष मुद्ग मसूरॉश्च चणकॉश्च कुलत्थकान् ॥३०॥

कार्त्तिक का महीना जो लोग बिना व्रत के बिताते हैं वे पशु योनि पाते है। कार्त्तिक मे यव और पवित्र हविष्यान्न खाना और भटा, सूरन और सेम इत्यादि नहीं खाना। कार्त्तिक में द्विदल, बहुत बीया-वाली वस्तु, उड़द, मोट, मसुरी, चना और कुलथी इत्यादि खाना।

तथा नारदीये स्कान्दे च

कार्त्तिके वर्जयेत्तैल कार्त्तिके वर्जयेन्मधु ।
कार्त्तिके वर्जयेत्कास्य कार्त्तिके शुक्लसन्धित ॥३१॥

कार्त्तिक मे तेल, मधु, काम्यपात्र मे भोजन, बासी अन्न, और खारे शाक ये सब वर्जित हैं ।

कार्त्तिक के व्रत मे ब्रह्मचर्य्य और हविष्यभोजन ही मुख्य है जैसा कि ऊपर लिख आए हैं "जपन्हविष्यभुक् शान्त." । अब हविष्य मे कौन कौन वस्तु है सो लिखते हैं और कार्त्तिक मे किस किस वस्तु का त्याग है वह भी लिखते हैं ।

तथा सनत्कुमारसहिताया कार्त्तिकमाहात्म्ये

तथा पुराणसारोद्धारे च पुराणसमुच्चयेपि भविष्योक्ते
हैमतिक सिता स्विन्न धान्या मुद्गास्तिला यवा ॥
कलाय कगु नीवारा वास्तुक हिलमोचिका ।
षष्ठिका कालशाक च मूलक केमुकोत्तर ॥३२॥
कंद सैंधव सामुद्रो लवणो दधि सर्पिषी ।
पयानुद्धृतसार च पनसाम्रौ हरीतकी ॥३३॥
कदली लवली धात्री फलान्यगुडमैक्षव ।
पिप्पली जीरक चैव नागरगकतित्तणी ।
अतैलपक्क मुनयो हविष्यान्नम्प्रचक्षते ॥३४॥

तथा हेमाद्रौ छान्दोग्यपरिशिष्टेकात्यायन:

हविष्येषु यवा: मुख्यास्तदनु व्रीहय: स्मृता. ।
माषकोद्रवगौरादीन् सर्वाभावेपि वर्ज्जयेत् ॥३५॥

तत्रैव अग्निपुराणे

व्रीहि षष्टिक मुद्राश्च कलाया: सलिलम्पय: ।
श्यामाकाश्चैव नीवारा गोधूमाद्यावते हिया ॥३६॥

हविष्य मे इतनी वस्तु लेना । जाड़े का सपेद चावल, धान, मूँग, तिल, यव, मटर, कँगुनी, तिन्नी का चावल, बथुआ का शाक, हेला का शाक, कालिका का शाक, केमुका का शाक, साठी का चावल, सेंधा

नोन और समुद्र का नोन, दही, घी, बिना घी निकला दूध, कटहर, आम, हर्र, केला, हारफारेवर्डी, आँवला, चीनी मिश्री (गुड़बिना), पीपल, जीरा, नारंगी, इमली, तैल में न किया होय ऐसे अन्न को मुनि लोग हविष्य कहते हैं। हविष्य मे जव मुख्य है वा नहीं तो धान भी ग्राह्य है परतु उड़द, कोदो, सपेद गेहूँ तो कुछ अन्न न मिलता होय तौ भी नहीं लेना। धान, साठी का चावल, मूँग, कलाई, जल, दूध, साँवाँ, तिन्नी, लाल गेहूँ ये व्रत में लेना। भोजन करने की वस्तु लिख के अब न खाने वाली वस्तु लिखते हैं।

यथा सनत्कुमारसंहितायां कार्त्तिकमाहात्म्ये

सर्वथैव न भोक्तव्यमामिषान्नं तु कार्त्तिके।
तत्सर्वदा वर्जनीय कार्त्तिके तु विशेषतः ॥३७॥
दग्धमन्न द्विपक्व च मसूरान्न सवल्कल।
उद्दालका. पर्युषितमन्नमामिष उच्यते ॥ ३८ ॥
वृन्ताकानि पटोलानि तुम्बिका च कलिंगक।
बिम्बीफलानि वपुस फलशाकेषु चामिष ॥ ३९ ॥
दोरका तुलसी चिल्ली छत्राक पोत्र पत्रक।
चक्रवर्ती राजगिरिः पत्रशाकेषु चामिष ॥ ४० ॥
गजर रक्तमूल च पलाण्डुर्लशुन तथा।
सर्वदैवामिषाणि स्यु कार्तिके स्मरणा त्यजेत् ॥ ४१ ॥
परमासै स्वमासानि य पुष्णाति नराधम.।
परजन्मनि तस्यैव विष्ठाया जायते कृमि. ॥ ४२ ॥
बालान्मृगान पक्षिणोवा तथा बालफलानि च।
घातयन्ति दुरात्मानो जायन्ते मृतबालका' ॥ ४३ ॥
सर्वाण्येकत्रदानानि सर्वतीर्थान्यथैकतः।
सर्वव्रतान्येकतश्च ह्यहिसाकलया समा ॥ ४४ ॥
एव विचार्य्य भुञ्जीत स्वान्न विष्णुनिवेदितम्।

कार्त्तिक में मास और उस के समान जितनी वस्तु है वह सब सर्वथा न खाना। और यह मास तो सर्वदा वर्जनीय है परतु कार्त्तिक मे विशेष करके अर्थात् मास इत्यादिक बुरी वस्तु कभी नहीं खाना। जल अन्न,

दो बेर किया हुआ अन्न, मसूर, कुरथी, बासी अन्न ये सब भी मांस कहलाते हैं। भटा, परवल, तुम्बी फल, तरबूज, कुदुरू और ककड़ी, ये सब फल के शाक मे मास के तुल्य हैं। तुलसी, छाता शाक, पोई, चकोड़, राजगीरा ये सब पत्ते शाक में आमिष के तुल्य हैं। गाजर, लाल मूली, लहसुन, गोभी, प्याज इत्यादि मासवत् सर्वदा ही त्याग करना और कार्त्तिक मे तो इन का स्मरण भी नहीं करना। दूसरे जीवो के मास से जो पापी अपने मास को पुष्ट करता है अर्थात् जो लोग बल पुष्टता वा स्वाद के लोभ से किसी पशु पक्षी का मास खाते हैं वे मनुष्याधम दूसरे जन्म मे उसी जीव के (जिसका मास खाया है) विष्टा के कीडे होते हैं। छोटे पशुओं को, छोटे पक्षियों को जो मारते हैं, जो कच्चे फलों को तोडते हैं, वे लोग दूसरे जन्म मे मरे बालक होते है। सब व्रत और सब दान और सब तीर्थ का एकत्र फल और अहिंसा का फल बराबर है ऐसा विचार के सुदर प्रसादी अन्न ही भोजन करना, मासादिक सर्वथा नहीं खाना।

तथा पाद्मे कार्त्तिकमाहात्म्ये

परान्न परशय्या च परवाद परागना।
सदा च वर्ज्जयेत्प्राज्ञो कार्त्तिके तु विशेषत॰ ॥ ४५ ॥
वेद देव द्विजानां च गुरु गा व्रतिनान्तथा।
स्वराजोपहता निन्दा वर्ज्जयेत्कार्त्तिके व्रती ॥ ४६ ॥

दूसरो का अन्न, दूसरो की सेज, दूसरो की निंदा, दूसरो की स्त्री इनको सदा बचाना चाहिए, कार्त्तिक मे विशेष करके। वेद देव, तीनो वर्ण अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, गुरु, गऊ, व्रत करनेवाले जिन का राज्य अर्थात् सम्पदा नाश हो गई है इन लोगो की निंदा नहीं करना। इस का भावार्थ यह है कि कार्त्तिक मे जहाँ तक बन सकै दूसरो का अन्न नहीं खाना और दूसरो की शैया से बचना अर्थात् दूसरो की स्त्री से बचना, दूसरो की निंदा नहीं करना। अब इस काल मे लोग लोगो की निंदा बहुत करते है और दूसरो की निंदा करना महापाप है क्योंकि जो लोग दूसरो की निंदा करते है वे लोग जिन की निंदा करते है उन का सब पाप आप ले लेते है तथा दूसरो की स्त्री को कुदृष्टि से

देखना कार्त्तिक मे विशेष करके वर्जित है और अब कार्त्तिक मे बहुत स्त्रियों के नहाने जाने से कितने ही पुरुष भी सवेरा भया कि कार्त्तिक नहाने के बहाने उन का दर्शन करने जाया करते हैं उन लोगों को चाहिए कि इस वाक्य को कान खोल के सुनै।

कार्त्तिक के व्रत और उस के नेम लिख के अब कार्त्तिक स्नान की विधि और मत्रादिक लिखते है जिस का प्रमाण और विशेष विधि पुराणसारोद्धार, पुराणसमुच्चय, निर्णयसिधु, स्कदपुराणातर्गतकार्त्तिक-माहात्म्य, पद्मपुराणातर्गत कार्त्तिकमाहात्म्य, ब्रह्मपुराण आदिक ग्रथो मे लिखा है। विशेष करके इस का विस्तारपूर्व्वक विधान सनत्कुमार-सहिता के कार्त्तिक माहात्म्य मे है, जिस मे से आवश्यक कर्म यहाँ पर लिखे जाते हैं। प्रात: काल उठ के धर्म चिंतवन करके भगवान का ध्यान करना, जैसा सनत्कुमार-सहिता मे ध्यान लिखा है।

प्रात स्मरामि भवभीतिमहार्तिशान्त्यै
नारायण गरुडवाहनमब्जनाभ।
ग्राहाभिभूतवरवारणमुक्तिहेतु
चक्रायुध तरुणवारिजपत्रनेत्रम्॥ ४७॥
प्रातनमामि मनसा वचसा च मूर्ध्ना
पादारविंदयुगल परमस्य पुस।
नारायणस्य नरकार्णवतारकस्य
पारायणप्रवणविप्रपरायणस्य॥ ४८॥
प्रातर्भजामि भजतामभयकर त
प्राक् सर्व्वजन्मकृतपापभयापहत्यै।
योग्राहवक्त्रपतिताघ्रि गजेंद्रघार
शाकार्त्तिनाशनकरोधृतशखचक्र.॥ ४९॥
श्लोकत्रयमिदम्पुण्य प्रात: प्रात. पठेन्नर:।
लोकत्रयगुरुस्तस्मै दद्यादात्मपद हरि:॥ ५०॥

और भी जो कुछ हो सकै भगवान का स्मरण कर के अपने गुरु का ध्यान करना।

यथा गार्ग्यां

ज्ञानमुद्रापर ध्यायेत् श्रीगुरु स्वस्तिकामनं ।
ध्यात्वा कृष्ण पर ध्यायेत् भक्त एकाग्रमानम: ॥ ५१ ॥

किशोर कामल श्याम वशीवेत्रविभूषित ।
एव कृत्वा हरेर्ध्यान पुनर्गच्छेद्वहिस्थलम् ॥ ५२ ॥

पलथी मारे बैठे ज्ञानमुद्रा से उपदेश कर रहे हैं ऐसा अपने श्रीगुरु का ध्यान कर के फिर श्रीकृष्णचद्र का ध्यान करना । कोमल अग किशोर स्वरूप श्यामसुंदर वशी छडी धारण किए ऐसे श्री भगवान् का ध्यान करके फिर महादेव इत्यादिक देवता, गगादिक नदी, नारदादि ऋषि, पृथ्वी, सप्तसमुद्र, नवग्रह इत्यादिक का ध्यान करके, वैष्णवन का ध्यान करके अपना हाथ देखना वा दूब, ऐना, सोना, गऊ इत्यादिक मगल-वस्तुओ को देख लेना, जिस मे दुष्ट मुख दर्शन का दोष नाश हो जाय । फिर यह मत्र पढ़ के पृथ्वी पर पैर रखना—

समुद्रमेखले देवि पर्वतस्तनमडिते ।
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्य पादस्पर्शं क्षमस्व मे ॥ ५३ ॥

फिर मदिर मे जाकर के श्रीभगवान् को दंडवत करना । फिर नगर के बाहर शौच कर के पवित्र होना । नदी के, तालाब के वा कोई जला-शय के किनारे मल त्याग नहीं करना, इसका महादोष है, और भी अन्न के खेतखलिहान मे, देवालय में, राजमार्ग मे मलत्याग नहीं करना, इस का माघ-माहात्म्य मे बड़ा पाप लिखा है और जहाँ मल त्याग करना वहाँ तृण बिछाय के और मुख के आगे वस्त्र को आड़ करके सूर्य और चद्रमा की ओर मुख फेर कर के मल त्याग करना । ऐसे मल त्याग करके फिर मृत्तिकास्पर्श करके पवित्र होना, जिसकी विधि सब स्मृतियो और पुराणो मे लिखी है । "एका लिगे गुदे पच इत्यादि ।" यह वाक्य पृथक् पृथक् पुस्तको मे अनेक चाल से मिलता है और गिनती मे परस्पर विरोध पड़ता है, परतु यहाँ हम वही वाक्य लिखते हैं जो सनत्कुमारसहिता के कार्त्तिक-माहात्म्य मे है, क्योकि यहाँ प्रसग कार्त्तिक का है । यथा,

एकालिंगे गुदे सप्त दश वामकरे तथा ।
उभयो सप्त दातव्याः पादयोर्मृत्तिकाद्वयम् ॥५४॥

लिंग मे एक, गुदा मे सात, बाये हाथ मे दश, फिर दोनो हाथ मे सात, पैर मे दो दो बेर मिट्टी लगा के धोना। ब्रह्मचारी को इसकी दूनी, वानप्रस्थ को तिगुनी और यति को चौगुनी यह क्रम है। फिर

अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे ।
मृत्तिके हर मे पापं यन्मया दुष्कृत कृतम् ॥५५॥

इस मंत्र से शुद्ध मृत्तिका से हाथ पैर धो के फिर दतुवन करना।

यथा गार्ग्याम्

कंटकी चीर कार्पास निर्गुंडीब्रह्मवृत्तिका ।
वटै रंड विगन्धाढ्यान्न कुर्य्याद्दन्तधावनम् ॥ ५६ ॥

बबूल, बैर, कपास, निर्गुंडी, पलाश, बड़, रेंड, दुर्गंध के वृक्ष इसकी लकड़ी मे दतुवन नहीं करना तथा दतुवन करनेके समय यह मंत्र पढ़ना।

तत्रैव

आयुर्बलं यशो वर्च प्रजाः पशु वसूनि च ।
ब्रह्मप्रज्ञा च मेधा च त्वन्नो देहि वनस्पते ॥ ५७ ॥

फिर कुल्ला करना। उपवास, नवमी, छठ, श्राद्ध के दिन, अमावस, आदित्यवार, इतने दिन दतुवन नहीं करना। मिट्टी वा और किसी वस्तु से मुख शुद्ध कर लेना और बारह कुल्ला करने से मुख की शुद्धि हो जाती है। फिर श्रीगंगा स्नान करने जाना। उस समय चित्त एकाग्र करके जाना, मुख मे भगवान का यश गावते जाना। लोग श्रीगंगा स्नान करने जाते हैं उन को पैर पैर पर अश्वमेध और वाजपेययज्ञ का फल होता है।

यदुक्तं श्रीमद्भागवते पंचमस्कन्धे

यस्या स्नानार्थं चागच्छत पुंस पदेपदे ऽश्वमेधराजसूय
फलदुर्लभमिति ॥ ५८ ॥

ऐसे श्रीगंगा जी के स्नान को मन अति शुद्ध करके जाना, सो जाय के पहले श्रीगंगा जी के तट पर दीपदान करना और भी देवालय तुलसीवृक्ष के निकट दीपदान करना।

यथा सनत्कुमारसहिताया कार्त्तिकमाहात्म्ये

देवालये नदीतीरे राजमार्गे विशेषतः ।
निद्रास्थाने दीपदाता तस्य श्रीः सर्व्वतोमुखी ॥ ५६ ॥

फिर श्रीगंगा जी के निकट आय के बाल झाडना । प्रमाण स्मृति मे—

अशोधितेषु केशेषु स्नानं यः कुरुते नरः ।
सम्यक् पुण्यं न लभते तस्मात्केशाश्च शोधयेत् ॥ ६० ॥

फिर सकल्प करै "कार्त्तिकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुक वासरे अमुकगोत्रोत्पन्नो अमुकशर्म्माहं अचिन्त्यफल प्राप्तयर्थं श्रीगंगास्नान-महंकरिष्ये ।"

ऐसे सकल्प करके फिर प्रतिज्ञा करना इस मंत्र से—

कार्त्तिकेऽहं करिष्यामि प्रातः स्नानं जनार्दन ।
प्रीत्यर्थं तव देवेश दामोदर मया सह ॥ ६१ ॥

यह प्रतिज्ञा का मंत्र पढना (यह मंत्र सब कार्त्तिकमाहात्म्य मे लिखा है) फिर अर्घ्य इन मंत्रो से दीजिए ।

यथा स्कान्दे पाद्मे ब्राह्मे सनत्कुमारसहिताया च

नमः कमलनाभाय नमस्ते जलशायिने ।
नमस्तेऽस्तु हृषीकेश गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तुते ॥
नित्ये नैमित्तिके कृत्ये कार्त्तिके पापशोधने ।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं राधया सहितो हरे ॥ ६२ ॥
व्रतिनः कार्त्तिके मासि स्नातस्य विधिवन्मम ।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं दनुजेन्द्रनिषूदन ॥ ६३ ॥
दामोदर जगन्नाथ शंखचक्रगदाधर ।
राधाकान्त गृहाणार्घ्यं प्रसीद परमेश्वर ॥ ६४ ॥
द्रवरूपेण देवेश वर्त्तते गांगवारिषु ।
इदमर्घ्यं गृहाण त्वं स्वीकृत्य करुणां कुरु ॥ ६५ ॥

ऐसे अर्घ्य प्रदान करके फिर बाल मे आँवला तिल और तुलसी की मट्टी लगाना और जिस जिस दिन अवला तिल न लगाना हो उस दिन

केवल तुलसी की मट्टी लगाना। फिर श्रीगंगा जी की मृत्तिका का तिलक (अश्वक्रांते रथक्रांते) इस मंत्र से करके हाथ जोड के दंडवत् कर के प्रार्थना करना।

किरणा धूतपापा च पुण्यतोया सरस्वती।
गंगा च यमुना चैव पंचनद्यः पुनन्तु माम् ॥ ६६ ॥
अयोध्या मथुरा माया काशी कांची अवन्तिका।
पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः ॥६७॥
विष्णोराज्ञामनुप्राप्य कार्त्तिकव्रतकारिणः।
रक्षन्ति देवास्ते सर्व्वे मां पुनन्तु सदामवाः ॥६८॥
वेदमन्त्राः सबीजाश्च सरहस्यामखान्विताः।
कश्यपाद्याश्च मुनयो मां पुनन्तु सदैव्रते ॥६९॥
नमस्ते देवदेवेश शंखचक्रगदाधर।
देव देहि ममानुज्ञा युष्मत्तीर्थनिषेवणे ॥७०॥
नन्दिनीत्येष ते नाम देवेषु नलिनीतिच।
दक्षा पृथ्वी च विहगा विश्वनाथा शिवा सती ॥७१॥
विद्याधरी सुप्रसन्ना तथा लोकप्रसादिनी।
क्षेमावती जान्हवी च शान्ता शान्तिप्रदायिनी ॥७२॥
एतानि पुण्यनामानि स्नानकाले प्रकीर्तयेत्।
भवेत्सन्निहिता तत्र गंगा त्रिपथगामिनी ॥७३॥

फिर हाथ जोड़ के यह मंत्र पढिए।

स्वर्गारोहणसोपान स्त्वदीयमुदकं शिवे।
अतः स्पृशामि पादाभ्यामपराधं क्षमस्व मे ॥७४॥

ऐसे प्रार्थना करके मौन होय के स्नान करना, भगवान का नाम लेना। श्री गंगा जी के निकट कुल्ला नहीं करना। ऐसे स्नान करके सीढ़ी पर एक अर्घ्य देना।

मंत्र।

यन्मया दूषितं तोयं शारीरमलसम्भवैः।
तद्दोषपरिहारार्थं यक्ष्माणं तर्पयाम्यहम् ॥७५॥

फिर शुद्ध हो वस्त्र पहिन के संध्यादिक करना। स्कंद पुराण में लिखा

है कि श्रीगंगा जी में ये तेरह कर्म नहीं करना। शौच, कुल्ला, जूठा फेंकना, मल करना, तेल लगाना, निंदा, प्रतिग्रह, रति, दूसरे तीर्थ की इच्छा तथा दूसरे तीर्थ की प्रशंसा, वस्त्र धोना, उपद्रव, ये सब कर्म श्री-गंगा जी में नहीं करना। फिर श्री गंगाजल माथे पर छिड़क कर अघम-र्षण करना, फिर वस्त्राग आचमन करके शिखा बाँधना फिर तिलक करना बिना तिलक सन्ध्यादिक नहीं करना।

यथा पाद्मे

यज्ञो दानं तपो होमः स्वाध्यायः पितृतर्पणं।
भस्मीभवति तत्सर्व्वं ऊर्ध्वपुंड्रं विना कृतम् ॥७६॥

यज्ञ, दान, तप, होम, स्वाध्याय, पितृतर्पण इत्यादिक सब कर्म ऊर्ध्वपुंड्र किए बिना जो करते हैं उनका निष्फल होता है। ऊर्ध्वपुंड्र ही लगाना और तिलक न लगाना इस का सिद्धांत श्रीश्रीगिरिधरदेव चरण ने ऊर्ध्वपुंड्र मार्तंड में किया है। ऐसे ही सर्वदा तुलसी की माला धारण करना और जो सब दिन धारण न करते हो तो कार्त्तिक में अवश्य धारण करना।

यदुक्तं निर्णयसिन्धौ। अथ मालाधारणम्। तत्र

स्कान्दे द्वारकामाहात्म्ये

निवेद्य केशवे मालां तुलसीकाष्ठसंभवां।
वहते यो नरो भक्त्या तस्य नैवास्ति पातकम् ॥७७॥
नजह्यात्तुलसीमालां धात्रीमालां विशेषतः।
महापातक संहर्त्री सर्वकामार्थदायिनीम् ॥ ७८ ॥

विष्णुधर्म्मे

स्पृशेत्तु यानि लोमानि धात्रीमाला कलौ नृणां।
तावद्वर्ष सहस्राणि वैकुंठे वसतिर्भवेत् ॥ ७९ ॥
मालायुग्मं तु यो नित्यं धात्री तुलसिसम्भवां।
वहते कंठदेशे तु कल्पकोटिदिवं वसेत् ॥ ८० ॥

मंत्र

तुलसी काष्ठसम्भूते माले कृष्णजनप्रिये
बिभर्मि त्वामहं कंठे कुरु मां कृष्णवल्लभम् ॥ ८१ ॥

एव मम्प्रार्थ्य विधिवन्माला कृष्णगलेऽर्पितां ।
भारयेत् कार्त्तिके या वै स गच्छेत् वैष्णवम्पदम् ॥ ८१ ॥

निर्णयसिंधु ग्रंथ मे माला-धारण लिखते हैं । वहॉ स्कन्द-पुराण का यह वचन है कि तुलमी के काठ की माला भगवान की प्रसादी जो लोग भक्ति से पहनते हैं उनके एक पाप भी नहीं बचते । महापापो के दूर करनेवाली सब कामो के देनेवाली तुलसी की माला वा ऑवले की माला को कभी भी नहीं त्यागना । विष्णुधर्म्म मे । कलियुग मे ऑवले की माला से जितना रोऑ छू जाता है उतने हजार बरस उस मनुष्य को स्वर्गवास मिलता है । ऊपर जो मत्र लिखा है उस मे जो विधिपूर्वक माला सदा धारण करते हैं वा श्रीकृष्ण की प्रसादी माला जो लोग कार्त्तिक मे धारण करते हैं उनको वैष्णव पद मिलता है ।

इस रीति से तिलक माला धारण करके क्या करना चाहिये, सो लिखते है ।

यथा सनत्कुमारसहितायाम्

तत· सन्ध्यामुपासीन स्वसूत्रोक्तेन कर्मणा ।
तत कार्य्यो जपो देव्या यावत्सूर्य्योदयो भवेत् ॥ ८३ ॥

फिर अपने सूत्र के अनुसार सध्या करना, फिर जब तक सूर्य्योदय न होय तब तक गायत्री देवी का जप करना ।

निर्णयसिधु बनाने वाले ने यह निर्णय किया है कि कार्त्तिक के महीने मे बिना अरुणोदय भी सध्या करने का दोष नहीं है ।

मया कृत मूत्रपुरीषशौच स्नानच गडूषणमेहनच ।
वस्त्रस्यसत्तालनमेवदोषान् नमस्व गगे मम सुप्रसीद ॥ ८४ ॥

श्री गगा जी की प्रार्थना इस मन्त्र से करना । अब सूर्य्योदय पीछे जो करना चाहिए वह लिखते हैं ।

तत्रैव

विष्णोः सहस्रनामाद्यं सन्ध्यान्ते च पठेन्नरः ।
देवालये समागत्य पुनः पजनमारभेत् ॥ ८५ ॥

सध्या करके विष्णुसहस्र नाम इत्यादिक ग्रथो का पाठ करके फेर भगवान की पूजा को आरभ करना। तहॉ फूल से भगवान की पूजा करना इसका माहात्म्य लिखते है।

यथाभार्गवार्चनदीपिकाया नृसिहपुराणे

अगस्त्यकुसुमैर्देव यार्चयेच्च जनार्दन ।
दर्शनात्तस्य देवर्षे नरक नार्हते नर. ॥ ८६ ॥
विहाय सवपुष्पाणि मुनिपुष्पेण केशव ।
कार्त्तिके यो ऽर्चयेद्भक्त्या वाजपेयफलं लभेत् ॥ ८७ ॥

स्कान्दे

मालतीमालया विष्णु. केतक्या चैव पूजित ।
समा: सहस्र सुप्रीतो भवेत्स मधुसूदन' ॥ ८८ ॥

पृथ्वीचन्द्रोदये पाद्मे

कार्त्तिके नार्चिता यैस्तु कमलै कमलेक्षण. ।
जन्मकोटिषु विप्रेन्द्र न तेषा कमला गृहे ॥ ८९ ॥
कार्त्तिके केशवा पूजा येषा नाम्ना सुतै' कृता ।
ते निर्भर्त्स्य रवे: पुत्र वसति त्रिदिवे सदा ॥ ९० ॥
तुलसीदललक्षेण कार्त्तिके योर्चयेत् हरि ।
पत्रे पत्रे मुनिश्रेष्ठ मौक्तिक लभते फलम् ॥ ९१ ॥

अगस्त के फूल से जो भगवान की पूजा करते है उन के दर्शन से नरक नहीं मिलता। सब फूलो को छोड के कार्त्तिक मे जो अगस्त के फूल से भक्तिपूर्वक पजा करते हैं उन्हे वाजपेय का फल होता है। कार्त्तिक मे जिसने कमल से श्रीभगवान की पूजा नहीं किया उनके घर कोटि जन्म तक लक्ष्मी नहीं आती। जो कार्त्तिक मे भगवान के नाम से पूजा करते हैं वे लोग यम को अनादर दे के स्वर्ग मे रहते है। और जो लाग लाख तुलसी दल भगवान को अर्पण करते है वे एक एक पत्ते मे मोती समर्पण का फल पाते है वा एक एक पत्ते मे मुक्ति का फल पाते हैं।

मत्र

नमस्तुलसि कल्याणि गोविदचरणप्रिये ।
केशवार्थे विचिन्वामि वरदा भव शोभने ॥ ९२ ॥

ऊपर लिखे हुए मत्र से तुलसी तोड कर श्रीभगवान की पूजा करने का अकथनीय फल है । अब पजा करने की विधि लिखते हैं । वह पूजा दो प्रकार की है—जिसमे नियम नहीं और परमभावात्मिका उसका नाम सेवा और जिसमे नियम हो, चाहै नैमित्तिक होय, उसका नाम पूजा । इसके भेद और प्रकार आदि पुराण और गर्गसहिता मे और भी सप्रदाय के ग्र थो मे विस्तारपूर्वक लिखे है । अब हम इस स्थान पर पूजा करने की विधि लिखते हैं । श्रीभगवान की पूजा मे चित्त एकाग्र रखना, पहिले मदिर मे जा करके प्रभु को जगाना, फिर षोडशोपचार पूजा की सामग्री ले के पूजा आरंभ करना तहाँ पहिले आवाहन करना ।

मत्र

गोलोकधामाधिपते रमापते गोविन्ददामोदर दीनवत्सल ॥
राधापते माधव सात्वता पते सिहासनेस्मिन्मम सम्मुखोभव ॥६३॥

अथ आसनम्

श्रीपद्मरागस्फुरदूर्ध्वपृष्ठ महार्हवैदूर्य्यखचितपदाब्ज ।
वैकुंठवैकुठपते गृहाण पीत तडिद्भ्राजकवस्त्रयुक्तम् ॥ ६४ ॥

अथ पाद्यम्

परिस्थित निर्मलमेकपात्रे समागत विष्णुसरोवराद्धि ।
योगेश देवेश जगन्निवास गृहाण पाद्य प्रणमामि पादौ ॥ ६५ ॥

अथ अर्घ्यम्

नमस्ते देवदेवेश नमस्ते धरणीधर ।
नमस्ते कमलाकान्त अर्घ्यं नः प्रतिगृह्यताम् ॥ ६६ ॥

अथाचमनम्

कर्पूरवासित तोय मन्दाकिन्याःसमाहृत ।
आचम्यता जगन्नाथ मया दत्त हि भक्तितः ॥ ६७ ॥

अथ स्नानम्

काश्मीरपाटीरविमिश्रितेन स्वमच्छिकोशीरवताजलेन ।
स्नानं कुरु त्वं यदुनाथ देव गोविन्दगोपालक तीर्थपाद ॥ ६८ ॥

अथ मधुपर्कं

मध्यान्हचण्डार्कभवश्रमापह सिताङ्गसम्पर्कमनोहर परं ।
गृहाण विष्णो मधुपर्कमासन श्रीकृष्णपीताम्बरसात्वतापते ॥ ९९ ॥

अथ वस्त्रम्

विभोः सर्वतो प्रस्फुरन् प्रोज्वलत महत् स्वर्णसूत्राङ्कित दुर्लभ च ।
स्वतोनिर्म्मित पद्मकिंजल्कवर्णं गृहाणाम्बरं देव पीताम्बराख्यम् ॥१००॥

अथ भूषणम्

कनकरत्नमयं मयनिर्मित मदनरुक्तन सदन रुचा ॥
उर्षसि सर्वसुवर्णविभूषण सकललोकविभूषण गृह्यताम् ॥ १०१ ॥

अथ यज्ञोपवीतम्

सुवर्णाभमापीतवर्णं सुमंत्रैः वर प्रोक्षित वेदवन्निर्म्मित च ।
शुभ पंचकार्य्येषु नेमित्तिकेषु प्रभो यज्ञ यज्ञोपवीत गृहाण ॥ १०२ ॥

अथ गंधम्

सध्येन्दुशोभ बहुमंगल श्री काश्मीरपाटीरकषकपर्कं ।
स्वमडनं गधचयं गृहाण समस्तभूमंडलभारहानिन् ॥ १०३ ॥

अथ अक्षतम्

ब्रह्मावर्त्ते ब्रह्मणा पर्वमुक्त ब्राह्मैस्तोयैः सिंचितं विष्णुना च ।
रुद्रेण रौद्राक्षितो राक्षसेभ्यः साक्षाद्भूमावक्षत त्व गृहाण ॥ १०४ ॥

पुष्पम्

मदारसन्तानकपारिजात कल्पद्रुम श्रीहरिचंदनानां ।
गृहाणपुष्पाणि हरे तुलस्या मिश्राणि साक्षान्नवमंजरीभिः ॥ १०५ ॥

अथ धूपम्

लवगपाटीरज चूर्णमिश्र मनुष्य देवासुर सौख्यद च ।
सद्यः सुगन्धी कृतहर्म्यदेश द्वारावतीभूप गृहाण धूपम् ॥ १०६ ॥

अथ दीपम्

तमोहारिण ज्ञानमूर्त्तिं मनोज्ञं लसद्वर्त्तिकपूरयुक्तं गवाज्यं ।
जगन्नाथ देवेश ज्योतिस्वरूप स्फुरज्ज्योतिक दिव्यदीपं गृहाण ॥ १०८ ॥

अथ नैवेद्यम्

सर्व्वैं रसैर्वेदविधिव्यवस्थित रसै रसान्य च यशोमतीकृत ।
गृहाण नैवेद्यमिद स्वरोचिप गव्यामृत सुन्दरनन्दनन्दन ॥ १०८ ॥

अथ जलम्

गंगोत्तरीवेगबलात्समुद्धितं सुवर्णपात्रेण हिमांशुशीतलं ।
सुनिर्मलाभं ह्यमृतोपमं जलं गृहाण राधावर दीनवत्सल ॥ १०९ ॥

अथ आचमनम्

कंकोलजातीफलपुष्पवासितं परं गृहाणाचमनं दयानिधे ।
राधापते श्रीगिरिजापते प्रभो श्रियःपते सर्व्वपते च भूपते ॥ ११० ॥

अथ ताम्बूलम्

जातीफलैलासुरपुष्पयुक्तं यांविविपूगीफलपत्रवृन्दं ।
मुक्ताफलाखादिररोचनार्थं गृहाण ताम्बूलमिदं नृपेश ॥ १११ ॥

अथ दक्षिणा

नाकपालवसुपालमौलिभिः वन्दिताङ्घ्रियुगल प्रभो हरे ।
दक्षिणा परिगृहाण माधवयज्ञरूपप्रभु दक्षिणापते ॥ ११२ ॥

अथ प्रदक्षिणा

यानिकानिच पापानि जन्मान्तरकृतानि च ।
तानि सर्व्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिण पदेपदे ॥ ११३ ॥

अथ नीराजनम्

प्रस्फुरत्परमदीप्तमंगलं गोघृताक्तनवपंचवर्त्तिकं ।
आर्त्तिकं परिगृहाण चार्त्तिहन्पुण्यकीर्त्तिविशदीकृता वने ॥ ११४ ॥

अथ प्रार्थना

हरे मत्समः पातकी नास्ति भूमौ
तथा त्वत्समो नास्ति पापापहारी ॥
इति त्वां च मत्वा जगन्नाथ देव
यथेच्छा भवेत्ते तथा मा कुरु त्वम् ॥ ११५ ॥

अथ नमस्कारः

नमोस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्त्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे ।
सहस्रनाम्नेपुरुषायशाश्वतेसहस्रकोटीयुगधारिणेनमः ॥ ११६ ॥

इस प्रकार से भगवान की पूजा करके तब तुलसी पूजन करै। तुलसी पूजन की विधि लिखते हैं।

यथा सनत्कुमारसंहितायां कार्त्तिकमाहात्म्ये

तुलस्यां सर्व्वतीर्थानि तुलस्यां सर्व्वदेवताः।
कार्त्तिकेमासि तिष्ठन्ति नात्र कार्य्या विचारणा ॥ ११७ ॥

कार्त्तिक के महीने मे श्रीतुलसी जी मे सब देवता और सब तीर्थ निवास करते है।

तथा पद्मपुराणे कार्तिकमाहात्म्ये।

तुलसीकानन राजन् गृहं यस्यावतिष्ठते।
तद्गृहं तीर्थरूपंतु न यान्ति यमकिंकरा. ॥ ११८ ॥
रोपणात्पालनात्स्पर्शान्नृणाम्पापहरातथा।
तुलसी दहते पाप वाङ्मन कायसम्भवम् ॥ ११९ ॥

तुलसी का बन जिस घर मे रहता है उस तीर्थ रूप घर को यम के दूत नहीं देखते। वृक्ष लगाने से, पालने से, स्पर्श करने से, तुलसी जी कायिक वाचिक मानसिक तीनो पापो को दूर करती है।

तथा काशीखण्डे दूतान् प्रति यमवाक्यम्

तुलस्यलंकृता ये ये तुलसीनामजापकाः।
तुलसीवनपाला ये ते त्याज्या दूरतो भटाः ॥ १२० ॥

यमराज दूतो से आज्ञा करते हैं कि हे दूत लोग हमारी बात सुनो, जो तुलसी की कंठी पहिनते हैं, जो लोग तुलसी का नाम जपते हैं, जो लोग तुलसी के बन की रक्षा करते है उन को तुम लोग दूर ही से छोड़ देना।

तथा स्कन्दपुराणे कार्त्तिकमाहात्म्ये

तुलसीगन्धमादाय यत्र गच्छति मारुतः।
दिशा दश च ताः पूताः भूतग्राम चतुर्विधम् ॥ १२१ ॥

तुलसी जी की सुगंध लेकर जहाँ जहाँ वायु जाता है वहाँ वहाँ की दसो दिशा और वहाँ के चारो प्रकार के जीव पवित्र हो जाते हैं।

अब तुलसीपूजा के मंत्र लिखते हैं।

अथ ध्यानम्

ध्यायेच्च तुलसीं देवीं श्यामां कमललोचना।
प्रसन्नामलकल्हार वराभय चतुर्भुजाम् ॥ १२२ ॥

किरीटहारकेयूरकुण्डलादिविभूषितां ।
धवलांशुकसंयुक्तां पद्मासननिषेविताम् ॥ १२३ ॥

अथ आवाहनम्

देवि त्रैलोक्यजननि सर्वलोकैकपावनि ।
आगच्छ भगवत्यत्र प्रसीद श्रीहरिप्रिये ॥ १२४ ॥

अथासनन्

सर्वलोकमये देवि सर्वदा विष्णुवल्लभे ।
देवि स्वर्णमयं दिव्य गृहाणासनमव्ययम् ॥१२५॥

अथार्घ्यम्

सर्वदेवदलाकारे सर्वदेवनमस्कृते ।
दत्त पाद्य गृहाणेद तुलसि त्व प्रसीद मे ॥१२६॥

अथाचमनीयम्

सर्वलोकस्य रक्षार्थं सदा कल्याणकारिणी ।
गृहाण तुलसि प्रीत्या इदमाचमनीयकम् ॥१२७॥

अथ स्नानम्

गंगादिभ्यो नदीभ्यश्च समानीतमिद जल ।
स्नानार्थं तुलसीदेवि प्रीत्या तत् प्रतिगृह्यताम् ॥१२८॥

अथ वस्त्रम्

क्षीरोदमथनोद्भूते लक्ष्मी चद्रसहोदरे ।
गृह्यता परिधानार्थमिदं क्षौमाम्बर शुभे ॥१२९॥

अथ गन्धम्

श्रीगधकुकुम दिव्य कर्पूरागरुसंयुत ।
कल्पितं ते महादेवि प्रीत्यर्थं प्रतिगृह्यताम् ॥१३०॥

अथ पुष्पम्

नीलोत्पलसुकल्हारमालत्यादीनि शोभने ।
पद्मादि गधवत्शीते पुष्पाणि प्रतिगृह्यताम् ॥१३१॥

अथ धूपम्

धूप गृहाण देवेशि मनोहरि सुमगल ।
आज्यमिश्रतु तुलसि भक्त्या भीष्टदायिनि ॥१३२॥

अथ दीपम्

अज्ञानतिमिरान्धेभ्यो ज्ञानदीपप्रदायिनि ।
दत्त. तुलसि प्रीत्यर्थं दीपोय प्रतिगृह्यताम् ॥१३३॥

अथ नैवेद्यम्

नमस्ते जगनानाथे प्राणिना प्रियदर्शने ।
यथाशक्ति मया दत्त नैवेद्य देवि गृह्यताम् ॥१३४॥

अथ जलम

नमो भगवति श्रेष्ठे नारायणि जगन्मये ।
तुलसि त्वरया देवि पानीय प्रतिगृह्यताम् ॥१३५॥

अथ ताम्बूलम्

अमृतेऽमृतसम्भूते तुलस्यमृतरूपिणि ।
एलाकर्पूरसंयुक्त ताम्बूल प्रतिगृह्यताम् ॥१३६॥

अथ फलम्

इद फल मया देवि स्थापित पुरतस्तव ।
अनेन सफला वाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ॥१३७॥

अथ प्रदक्षिणा

दक्षिणे दक्षिणकरे त्वद्भक्तानाम्प्रियकरि ।
करोमि ते सदाभक्त्या विष्णुकान्ते प्रदक्षिणाम् ॥१३८॥

अथ नमस्कार, पुष्पाजलिः

नमोनमो जगद्धात्र्यै जगदाद्यै नमोनम. ।
नमोनमो जगद्भूत्यै नमस्ते परमेश्वरि ॥ १३९ ॥
नमस्तुलसि कल्याणि नमो विष्णुप्रिये शुभे ।
नमो मोक्षप्रदे देवि नम. सपत्प्रदायिनि ॥ १४० ॥
तुलसी पातु मा नित्य सर्व्वापद्भ्योपि सर्व्वदा ।
कीर्तिता वा स्मृता वापि या पावयति मानुषान् ॥ १४१ ॥
महाप्रसादजननि सर्व्वपापप्रणाशिनि ।
आधिव्याधिहरे देवि तुलसि त्वां नमाम्यहम् ॥ १४२ ॥
या दृष्टा निखिलाघसघशमनी स्पृष्टा वपुःपावनी ।
रोगाणामभिवन्दिता निरसनी सिक्तान्तकत्रासिनी ॥

प्रत्यासत्तिविधायिनी भगवतः कृष्णस्य सरोपिता ।
न्यस्ता तच्चरणे विमुक्तिफलदा तस्यै तुलस्यै नमः ॥ १४३ ॥

अथ प्रार्थना

प्रसीद मयि देवेशि कृपया परया सदा ।
अभीष्टफलसिद्ध्यर्थं कुरु मे माधवप्रियं ॥ १४४ ॥

इस रीति से नित्य तुलसी पूजन करना और तुलसी के पत्र से विष्णु का पूजन करना ।

यथा गारुडे

गवामयुतदानेन यत्फललभते स्वग ।
तुलसीपत्रमेकेन तत्फल कार्त्तिके स्मृतम् ॥ १४५ ॥

अयुत गोदान करने का जो फल है वह कार्त्तिक मे एक तुलसी पत्र चढ़ाने से मिलता है, यह आप श्रीमुख से आज्ञा करते हैं गरुडजी से ।

इस भाँति तुलसी पूजन कर के फिर आँवला की पूजा करना तथा कार्त्तिक मे आँवला की माला भी पहिरना ।

यथा स्कान्दे कार्त्तिक माहात्म्ये पुराणसारोद्धारे च ।

सर्व्वदेवमयी धात्री वासुदेवमन प्रिया ।
आरोपणीया सेव्या च पूजनीया सदा बुधै ॥ १४६ ॥
धात्रीफलविलिप्ताङ्गो धात्रीफलविभूषित ।
धात्रीफलकृताहारो नरो नारायणो भवेत् ॥ ४७ ॥
धात्रीछाया समाश्रित्य कुर्य्यान्छ्राद्धन्तयो मुने ।
मुक्तिं प्रयान्ति पितरः प्रसादात्तस्य वै हरेः ॥ १४८ ॥
कार्त्तिकेमासि विप्रेन्द्र धात्रीवृक्षोपशोभिते ।
वने दामोदर विष्णुश्चित्रान्नैस्तोषयेद्विभुम् ॥ १४९ ॥

श्रीवासुदेव के मन की प्यारी सब देव मयी धात्री पडित लोगों को सदा लगाना चाहिये, सेवा करना चाहिये और पूजना चाहिये । आँवला जिसने देह मे लगाया है वा उस की माला पहिनते हैं वा जो लोग आँवला का फल खाते हैं वे मनुष्य नारायण होते हैं । आँवले की छाया में जो श्राद्ध करता है भगवान की कृपा से उस के पितर स्वर्ग में

जाते हैं। कार्त्तिक के महीने मे आँवले के बगीचे मे भगवान दामोदर की चित्रान्न से पूजा करना इत्यादि बहुत माहात्म्य लिखा है। इस से नित्य आँवला का पूजन करना तथा आँवला के नीचे ब्राह्मण भोजन कराना। इस भाँति आँवला की पूजा कर के फेर श्रीमद्भागवत इत्यादिक भगवान की कथा सुनना और यथाशक्ति दान कर के ब्राह्मण भोजन कराना।

यथा सनत्कुमारसंहितायां कार्त्तिकमाहात्म्ये

नृत्यगानादिकार्य्येषु प्रहरं दिवसं नयेत्।
ततः पुराणश्रवणं यामार्द्धं सम्यगाचरेत्॥ १५०॥
सम्पूर्णं कार्त्तिकं यस्तु सपूज्यामलकीं शुभां।
राधादामोदरप्रीत्यै भोजयेच्चैव दम्पतीन्॥ १५१॥
पश्चात्स्वयं तु भुंजीत न श्रीस्तस्य क्षयं व्रजेत्।
कृत्वामाध्यान्हिककर्म्म भुंजीतद्विदलोज्झितम्॥ १५२॥
ब्रह्मांशकसमुद्भूते पलाशे यस्तु भोजनं।
कुर्य्यात्कार्त्तिकमासेसौ विष्णुलोकंप्रयास्यति॥ १५३॥

प्रहर दिन चढ़े तक भगवान के मंदिर मे नाचना गाना, फिर आधे पहर कथा सुनना, फिर आँवला के नीचे दंपती ब्राह्मण भोजन कराय के मध्यान्ह संध्या कर के ऊपर जिन वस्तुओं का निषेध लिखा है उन्हें छोड़ के महा प्रसादी अन्न भोजन करना। जो कार्त्तिक मे नित्य ऐसा करते हैं उन्हें लक्ष्मी त्याग नहीं करती। ब्रह्मा के अंश से उत्पन्न भया है ऐसे पलाश के पत्ते मे जो भोजन करते हैं वे लोग विष्णुलोक पाते हैं।

इस भाँति दिन का कर्म लिख के अब संध्या का कर्म लिखते हैं। रात्रिकर्म में तीन कर्म मुख्य हैं, एक तो आकाश दीपदान, दूसरा भगवन्मन्दिर वा श्री गंगा जी वा तुलसी के निकट दीपदान, तीसरा नामसंकीर्तन। अब तीनों का फल और विधि लिखते हैं।

यथा ब्रह्मांडे

विष्णुवेश्मनियोदद्यात्तुलायां नभदीपकं।
अग्निष्टोमसहस्रस्य फलमाप्नोति मानवः॥ १५४॥

यथा सनत्कुमारसहितायाम्

कार्त्तिकेमासि सम्प्राप्ते गगने स्वच्छतारके ।
रात्रौ लक्ष्मी समायाति द्रष्टुम्भवनकौतुकम् ॥१६०॥
यत्रयत्र च दीपान्सा पश्यत्यब्धिसमुद्भवा ।
तत्रतत्र रति कुर्य्यान्नान्धकारे कदाचन ॥१६१॥
देवालये नदीतीरे राजमार्गे विशेषतः ।
निद्रास्थाने दीपदाता तस्य श्री सर्व्वतोमुखी ॥१६२॥
कीचकंटकसकीर्ण विषमे दुर्गमस्थले ।
कुर्य्याद्यो दीपदानानि नरकं स न गच्छति ॥१६३॥

कार्त्तिक महीने की रात को जब स्वच्छ तारे निकले रहते हैं तब लक्ष्मी जी घर का कौतुक देखने को आती हैं, सो वह जहाँ जहाँ दिये बलते देखती हैं वहाँ प्रसन्न हो कर निवास करती हैं और जहाँ अधकार देखती हैं उस स्थान को त्याग करती हैं। देवता के मदिर मे, नदी के तीर पर, राजमार्ग मे विशेष कर के और निद्रा की जगह दीया बालनेवाले लोगा को लक्ष्मी जी सर्वतोमुख रहती हैं। कीच मे, काँटे की जगह मे, ऊची, नीची, सकरी दुर्गम जगह मे जो लोग दीपदान करते हैं वे नरक मे नहीं जाते।

इस मत्र से दीपदान करना

मन्त्रहीन क्रियाहीन जपहीन जनार्दन ।
व्रतसम्पूर्णता यातु कार्त्तिके दीपदानतः ॥१६३॥

और जो विद्यार्थी को पढ़ने के वास्ते तेल देते है उन्हे भी बड़ा पुण्य होता है।

तथा तत्रैव

यो वेदाभ्यासिने दद्याद्दीपार्थे तैलमुत्तम ।
कार्त्तिकेमासि सम्प्राप्ते समुक्तिफलभाग्भवेत् ॥१६५॥

जो कार्त्तिक मे पढनेवाले विद्यार्थी का दीये का तेल देते हैं वे मुक्तिफल पाते है।

और कार्त्तिक सुदी सप्तमी की कामना होय तो कार्तवीर्य के वास्ते दीपदान करना, यह सब कामना का पूर्ण करनेवाला है।

यथा प्रयागरत्नाकरे उड्डामरतत्रे च

ऊर्जे मासि सितेपक्षे सप्तम्याम्भानुवासरे ।
श्रवणर्क्षे व्यतीपाते विष्णोश्चक्रावतारिणः ।
दीपदान प्रकर्त्तव्य सर्व्वसौख्याविवृद्धये ॥ १६६ ॥

कार्त्तिक सुदी सप्तमी मगलवार श्रवण नक्षत्र व्यतीपात के दिन विष्णुचक्र के अवतार को दीपदान करना, इस से सब सौख्य बढते हैं। इस प्रकार से दीपदान करके पहर रात तक भगवान का गुण गान करना। जहॉ भक्त लोग कीर्तन करते हैं वहॉ श्रीभगवान आप निवास करते हैं।

यथा पाद्मे कार्त्तिकमाहात्म्ये

नाह वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च ।
मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद ॥ १६७ ॥

नारद जी से आप आज्ञा करते हैं कि नारद हम न तो बैकुंठ में रहते हैं और न जोगियो के हृदय मे रहते हैं, जहॉ हमारे भक्त गाते हैं हम वहीं बैठते हैं।

यह जो ऊपर लिख आए हैं ये कार्त्तिक के नित्य कर्म हैं। और भी कार्त्तिक की एकादशी से लेकर के पुनवासी तक के पॉच दिन को भीष्म-पचक कहते हैं इस मे इस मत्र से भीष्मतर्पण करना।

वैयाघ्रपदगोत्राय जल वीराय वर्म्मणे ।
सत्यव्रताय शुचये गाङ्गेयाय महात्मने ।
भीष्मायतद्ददाम्यर्घ्यं आबालब्रह्मचारिणे ॥ १६८ ॥

इस प्रकार पॉच दिन भीष्मपचक मे तर्पण और स्नान करना।

कार्त्तिक मे गर्गसहिता सुनने का बड़ा माहात्म्य है।

यथा—

य कार्त्तिकेमासि नृपश्रियायुतो शृणोतिशश्वन्मुनिगर्गसहिताम् ।
स चक्रवर्ती भविता न सशयो नरेन्द्रहस्तोद्धृतपादपादुकः ॥ १६९ ॥
मनोजवैः सिन्धुतुरङ्गमैर्नवैर्द्विपैश्च विन्ध्याचलसम्भवैः परैः ।
वैतालिकोद्गीतयशा महीतले निषेवितो वारवधूजनैस्सह ॥ १७० ॥

हे लक्ष्मीसयुक्त नृप, जो कार्त्तिक में गर्गमुनि की सहिता विधिपूर्वक सुनै तो वह ऐसा चक्रवर्ती होय कि राजा लोग उस की खडाऊँ उठावैं। हवा के वेग ऐसे सिंधी नए घोड़ो से और ऊँचे और विध्याचल की तराई के हाथियो से और पृथ्वी के वैतालिको के गीत रूपी अपने यश से और वारागनाओं से सदा सेवित रहै। इस प्रकार कार्त्तिक का नित्य कर्म करके पूर्णिमा को यह व्रत समाप्त करै, यथाशक्ति दान दे, ब्राह्मणों का जोड़ा भोजन करावै।

लोकानाम्पापरूपप्रबलतमतमोनाशनायाशु शक्त ।
हन्तुन्तीक्ष्णन्त्रितापम्पटुतरमनिश यः परन्दुःखहेतुः ॥
दातुं शक्त त्रिलोकैरसुलभममृतङ्कार्त्तिकङ्कर्म्मवैध ।
राकाज्योत्स्नास्वरूपम्बिलसतु जगति श्रीहरिश्चन्द्रचन्द्रात् ॥

दोहा

जै जै श्रीवल्लभ सदा, श्रीविट्ठल द्विजराज।
कृपा करत सब भय हरत, तारत पतित-समाज ॥१॥
नमो नमो कविमुकुटमणि, पितुपदकमल पुनीत।
जाकी कृपा अपार ते, समुझि परी यह रीत ॥२॥
जानि परम उपकार पुनि, देखि शास्त्र को पथ।
जगहित श्रीहरिचद किय, कातिक विधि को ग्रथ ॥३॥

॥ इति ॥

मार्गशीर्ष-महिमा

'मासानाम्मार्गशीर्षोहं'

श्रीमद्भगवद्वाक्यं

सं० १६३०

[सं० १९२६ में लिखी कार्त्तिक
कर्म विधि के बाद
लिखी गई ।]

मार्गशीर्ष महिमा

—()—

[श्लोक, प्राचीन]

नूतनजलधररुचये गोपवधूटीदुकूल चौराय ।
तस्मै कृष्णाय नमः ससार महारुहस्य बीजाय ॥

[श्लोक, नवीन]

व्रजजन-सुखकारी । गोपिका-वस्त्रहारी ॥
सकल भुवन भारी । नित्यलीलावतारी ॥
व्रजभुवि-परिचारी । गोप-नारी-विहारी ॥
दनुज-तनु-विदारी । पातुनश्चक्रधारी ॥

सोरठा—प्रातहि अगहन न्हात, तिन्ह गोपिन को चीर लै ।
तरु कदंब चढ़ि जात, चारि चोरि नित प्रातही ॥

दोहा—रासरसिक फल देन हित, तिनको करत विहार ।
ऐसे प्रभु के पद-कमल, बिनवत बारंबार ॥

सोरठा—पुनि बदौ सुखरास, भुक्ति मुक्ति पद सहजहीं ।
जगहित अगहन मास, कृष्ण रूप गोपिन सुखद ॥

विदित हो कि इस दास ने परोपकारार्थ जो कार्त्तिक कर्म विधि लिखी थी, उसे हमारे एक मित्र ने बहुत प्रसन्नतापूर्वक अंगीकार किया। इस हेतु ऐसी इच्छा हुई कि इसी भाँति मार्गशीर्ष की भी विधि लिखी जाय तो बहुत लोकोपकार होगा क्योंकि इस परम पवित्र मास का माहात्म्य बहुत कम लोग जानते हैं और यह अगहन महीना श्री भगवान का स्वरूप है जैसा आपने श्री मत् भगवतगीता और श्री मत् भागवत मे आज्ञा किया है। और व्रज की कुमारिकागण ने श्री भगवान के प्राप्ति के अर्थ इसी अगहन का स्नान किया था, जिससे उन्हें श्री कृष्ण मिले। इस अगहन का माहात्म्य स्कंदपुराण मे लिखा है, जिसमे से नित्य विधि अध्याय क्रम से लिखते हैं। ब्रह्मा भगवान से पूछते हैं कि आपने श्रीमद्‌गीता वा श्रीभागवत में आज्ञा किया है कि अगहन हमारा स्वरूप है, इस हेतु हम उसका माहात्म्य अच्छी भाँति सुना चाहते हैं।

श्री भगवानुवाच।

अन्यैर्धर्म्मादिभि कृत्वा गोपित मार्गशीर्षक।
मत् प्राप्तः कारणं मत्वा देवैः स्वर्गनिवासिभिः ॥

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि सब धर्मों करके मार्गशीर्ष को स्वर्गनिवासी देवताओं ने हमारे प्राप्ति का कारण जान के छिपाय दिया।

येकेचित्पुण्यकर्माणो ममभक्तिपरायणा.।
तेषामवश्य कर्तव्य मार्गशीर्षमघापह ॥

परंतु जो कोई पुण्य कर्मा हमारे भक्त होयॅ उनको हमारे स्वरूप अगहन मास का व्रत अवश्य करना चाहिए।

उषस्युत्थाय योमर्त्यः स्नानं विधिवदाचरेत्।
तुष्टोह तस्य यच्छामि आत्मानमपि पुत्रक ॥ ४ ॥

हे पुत्र, अगहन में जो चार घडी रात रहे उठ के नहाते हैं उनको हम अपनी आत्मा भी दे देते हैं॥

इत्यादि प्रथमाध्याये।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं।

अब स्नान की विधि लिखते हैं। बड़े सवेरे उठ के गुरु को नमस्कार करके हमारा ध्यान करै और सहस्रनाम इत्यादि पढ के, गॉव के बाहर मल त्याग करके, शौच से शुद्ध होके, आचमन करके, दतुवन करके स्नान करै। तुलसी जी के जड़ की मिट्टी और उनका पत्ता लेकर के मूल मत्र पढ़ के वा गायत्री पढ़ के शरीर मे लगाय के स्नान करे। स्नान की समय इन मत्रो से श्री गगाजी का आवाहन करै।

मत्र

विष्णुपादप्रसूतासि वैष्णवी विष्णु देवता।
त्राहि पापात्समस्तान्माजन्ममरणातिकात्॥
तिस्रः कोट्योर्ध कोटिश्चतीर्थाना वायुरब्रवीत्।
दिविभुव्यन्तरिक्षे च तानि ते सन्तु जान्हवि॥
नन्दिनीत्येव ते नाम देवेषु नलनीति च।
दक्षापृथ्वी च विहगाविश्वनाथाशिवासती॥
विद्याधरी सु प्रसन्ना तथा लोकप्रसादिनी।
क्षेमावती जान्हवी च शान्ताशान्तिप्रदायिनी॥
एतानि पुण्य नामानि स्नानकाले प्रकीर्तयेत्।
भवेत्सन्निहितातत्र गगा त्रिपथगामिनी॥

इन मंत्रो को पढ़ के फिर श्री गगा जी की मृत्तिका इस मत्र से सिर मे लगाना।

मत्र

अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे।
मृत्तिके हर मे पाप यन्मया दुष्कृतकृतं॥
उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना।
नमस्ते सर्व देवानांप्रभवारणि सुव्रते॥

इस मत्र से मृत्तिका शिर में लगाय के स्नान करै। स्नान करके जल मे वस्त्र न निचोड़े। फिर आचमन करके कपड़ा पहन के फिर आचमन करै। फिर सध्या तर्पण आरभ करै, तिसमे पहले उर्ध्वपुड्र धारण करके फिर सध्यादिक कर्म करै। इत्यादि द्वितीयाध्याये।

श्रीभगवान आज्ञा करते हैं कि तुलसी की मृत्तिका वा गोपीचदन वा प्रसादी कुकुम चदनादि से तिलक लगाने का बड़ा पुण्य है और गोपीचदन से शख चक्रादिक चिन्ह हृदय बाहुमूल इत्यादिक अगो मे धारण करना।

इत्यादि तृतीयाध्याये।

श्री भगवान कहते हैं कि तुलसी के काठ की माला जो धारण करते हैं वे चाहे भले हो चाहे बुरे हमारे ही होते हैं। तुलसी की काठ की वा ऑवले की माला जो लोग पहिनते हैं वे हमारे स्वरूप हैं। इस भाँति तिलक धारण करके, फिर सध्या करके, गुरु को भेट करके, साष्टाग दडवत करके, हमारी मानसी पूजा करके फिर विधि पूवक षोड़शोपचार पूजा करै।

इत्यादि चतुर्थाध्याये।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि जो लोग हमैं अगहन मे पचामृत से स्नान कराते हैं वे लोग कोटिन गोदान का फल पाते हैं। जो लोग शख से हमे स्नान कराते हैं वे जीवनमुक्त हैं। जिनके घर शख की पूजा होती है वे धन्य हैं।

इत्यादि पचमाध्याये।

आप कहते हैं कि जो लोग हमारे सामने घटा बजाते हैं उनकी पूजा का करोड़ गुना फल होता है क्योकि घटा पर गरुड जी रहते हैं और गरुड़ जी के पक्ष से सामवेद निकलता है, इससे जो पूजा की समय घटा बजाता है उसको बहुत फल होता है। जो लोग हमारी पूजा मे नृत्य गान इत्यादिक करते हैं वे लोग अपने पित्रो के सहित वैकुंठ पाते हैं। जो लोग हमै तुलसी के काठ का चंदन चढ़ाते है वे हमारे प्रिय होते हैं।

तुलसी दमनक मह्य दत्वा यस्सेवते पुनः।
मार्गशीर्षे सदा भक्तया सलभेद्वाञ्छित फल ॥ १ ॥

इत्यादि षष्ठाध्याये।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि जो लोग हमें अगहन मे कमल का फूल चढाते हैं वे लोग हमारे वल्लभ होते हैं। हमको बिना सुगंधि के फूल और कीड़े का चाटा फूल नहीं चढाना। सब फूलो मे जाती फूल का विशेष माहात्म्य है, इस हेतु आप आज्ञा करते हैं।

यथा—

सर्वासाम्पुष्पजातीना जातीपुष्पमिहोत्तम।
जातिपुष्पसहस्राणायच्छेन्माला सुशोभना॥
मह्ययोविधिवद्द्यात्तस्यपुण्यफलंशृणु।
कल्पकोटि सहस्राणी कल्पकोटिशतानि च॥
मत्पुरेवसते श्रीमान् ममतुल्य पराक्रम.॥
सर्वेषापत्र पुष्पाणा तुलसी मम वल्लभा।
अन्येषामपिदेवाना न निषिद्धाकदाचन॥ २॥

सब फूलो मे जातीफूल की विशेष महिमा है। हजार जाती फूल माला जो हमको समर्पण करता है वह हजार करोड़ कल्प और सौ करोड़ कल्प हमारे लोक मे हमारे तुल्य पराक्रम होकर वास करता है। और सब फूलो से तुलसी हमको बहुत प्यारी है दूसरे देवताओ की पूजा मे भी तुलसी निषिद्ध नहीं है।

इत्यादि सप्तमे।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि तुलसी हमको अत्यत प्रिय है।

यथा—

श्रीमत्तुलस्यार्चयते सकृद्धिमांपत्रै. सुगन्धैर्विमलैरखडितैः।
यत्तास्यपापघटसस्थित तदानिरीक्षयित्वा परिमाजयेद्यमः॥
तुलसीनयेषा ममपूजनार्थं मम्पादितैकादशिपुण्य वासरे।
धिग्यौवन जीवितमर्थ सतति तेषाम्मुखनेहचदृश्यते परैः॥

जो कोई श्री तुलसी से हमारी पूजा करता है और उसके विमल और बिना टूटे दल हमको समर्पण करता है उसके हृदय का पाप यमराज दूर कर देते हैं। जिन लोगो ने एकादशी के दिन हमारी तुलसी से पूजा नहीं किया उनके जीवन और काम और उनके संतान धिक्कार योग्य हैं और मुँह देखने के योग्य नहीं है।

अगहन के महीने मे दीपदान का बहुत फल है। यथा—

य· करोति सहोमासे कर्पूरेण च दीपक।
अश्वमेधमवाप्नोति कुलचैव समुद्धरेत ॥
घृतेन चाथतैलेन दीपयोऽज्वालयेन्नरः।
सहोमासे ममाग्रेतु तस्यपुण्यफल शृणु ॥
विहायसकलपाप सहस्रादित्यसन्निभः।
ज्योतिष्मता विमानेन ममलोके महीयते ॥

जो कोई अगहन मे कपूर का दीया बालता है उसको अश्वमेध का फल मिलता है और अपने कुल का उद्धार करता है। घी से अथवा तेल से जो लोग अगहन मे हमारे सामने दीया बालते हैं वे लोग सब पापों से छूट के हजार सूर्य समान ज्योति पाते है और बडे ज्योतिमान विमान पर बैठ के हमारे लोक जाते है।

इत्यादि अष्टमे।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि अगहन मे जो लोग हमारी प्रदक्षिणा करते हैं और जो हमें अष्टाग दडवत करते हैं वे लोग स्वर्ग मे निवास करते हैं। यथा

प्रदक्षिणा दडपात य· करोति सदामम।
सहोमासि विशेषेणह्याकलाम्बसतेदिवि ॥
पद्भ्याकराभ्याजानुभ्याउरसाशिरसातथा।
मनसा वचसा दृष्ट्या प्रणामोऽष्टङ्ग उच्यते ॥

जो लोग हमको दडवत और प्रदक्षिणा करते हैं वे लोग कल्प भर स्वर्ग मे निवास करते हैं। पैर से १। हाथ से २। जघा से ३। छाती से ४। शिर से ५। मन से ६। वचन से ७ और दृष्टि से ८। नमस्कार करने को अष्टांग दडवत कहते हैं अर्थात् आठो अंग झुकें और आठो अग से नमस्कार करे उसको साष्टांग दंडवत कहते हैं।

इत्यादि नवमे।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि एकादशी का व्रत और जागरण जो लोग करते हैं वे हमको अत्यंत प्रिय हैं और जागरण मे जो लोग दीपदान इत्यादि करते हैं वे हमारे परम प्यारे हो जाते हैं।

यथा—

य: पुन' कुरुते नृत्यं दीप गान च पूजन ।
न तन् क्रतुशतैः पुण्यव्रतैर्दानशतैरपि ॥

जो भक्त हमारे सामने नाचते है, दीपदान करते हैं, हमारा कीर्तन करते हैं, पूजा करते हैं उनके पुण्य के बराबर न सौ यज्ञ का पुण्य है और न सौ व्रत और दान का पुण्य है। इत्यादि द्वादशे।

अब कौन देवता की पूजा करना चाहिए सो आप आज्ञा करते हैं कि अगहन मे कीर्ति और केशव की पूजा करना चाहिए और सपत्नीक ब्राह्मणो का भोजन कराना चाहिए। यथा—

सहोमासे चवै देवी कीर्तियुक्तोहि केशव ।
तस्यपूजा प्रकर्तव्यायथापूर्वंप्रभाषिता ॥
ब्राह्मणं केशव कुर्य्यात्तत्पत्नीकीर्ति-सञ्ज्ञिका ।
दपती विधिवत्पूज्यौ वस्त्राभरणधेनुभि' ॥
दम्पत्यो. पूजनेवत्सपूजितोऽहसदारकं ।
तस्मादवश्य सम्पूज्यौ दम्पती मम तुष्टये ॥

अगहन के महीने मे कीर्ति देवी और केशव देवता की पूजा षोड़शोपचार से करना। ब्राह्मण को केशव मानना और ब्राह्मण पत्नी को कीर्ति समझ के वस्त्र गहना गऊ से दोनो की पूजा करना। दपती ब्राह्मण के पूजा से हमारी और लक्ष्मी दोनो की पूजा होती है, इस हेतु हमारे तुष्ट होने के अर्थ दपती की पूजा अवश्य करना।

इत्यादि चतुर्दशे।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि अगहन मे हमारे प्रिय कदब वृक्ष की पूजा अवश्य करना। यथा—

मार्ग शुक्ले प्रतिपदिकदम्बपूजयेत्तु य: ।
आयुरारोग्यमैश्वर्य्यं पुमान् प्राप्नोत्यसशय: ॥
मार्गशीर्षे सिताष्टम्यां भोजन च कदम्बके ।
सिक्थे सिक्थे च गोदान पुमान्प्राप्नोत्यसशय. ॥
एकादश्यावूतङ्कुर्य्यात् द्वादश्यामरुणोदये ।

कदम्बम् पूजयेद्भक्त्या साक्षाच्छ्रीकृष्णदर्शन ॥
अखंड दीपकङ्कुर्य्यान्नीपवृक्षे हरिप्रिये ।
सर्वान् कामानवाप्नोति वशीकरणमुत्तम ॥
मार्गशीर्षेत्रयोदश्यायोनीपम्पयसाऽर्चयेत् ।
बिन्दुनाबिन्दुनाचैव अश्वमेध फल लभेत् ॥
मार्गशीर्षेचतुर्दश्यान्दधिनार्नीपमर्चयेत् ।
इह सन्तान वृद्धिश्च परत्र परमपद ॥
मार्गशीर्ष्याम्पौर्णमास्याङ्गुञ्जाहारेणनीपकं ।
वेष्टयत्य्वनमालाभिः कृष्णस्तस्यवशोभवेत् ॥
इदंरहस्य गोपनीय पुत्र सर्व्वात्मनामम ॥

अगहन सुदी प्रतिपदा को जो कदम्ब की पूजा करते हैं वे आयुष्य, आरोग्य, ऐश्वर्य पाते हैं। अगहन सुदी अष्टमी को जो कदम्ब के नीचे भोजन करते कराते हैं वे एक एक ग्रास मे गोदान का फल पाते हैं। एकादशी का व्रत करके द्वादशी को सवेरे जो कदम्ब की पूजा करता है उसको साक्षात् श्रीकृष्ण का दर्शन होता है। जो कदम्ब के सन्मुख अखंड दीपदान करता है उसको सब कामो का फल होता है। यह हमारा वशीकरण है। अगहन की तेरस को जो कदम्ब को दूध चढ़ाते हैं, उनको एक एक बूद मे अश्वमेध का फल होता है। मार्गशीर्ष की चौदस को जो कदम्ब को दही चढाते हैं, उनको इस लोक में संतान और उस लोक मे परम पद मिलता है। अगहन सुदी पुनवासी को जो लोग कदम्ब को गुजा की माला और वनमाला समर्पण करते हैं, साक्षात् श्रीकृष्ण उनके वश मे हो जाते हैं।

अब इससे बढ के और क्या फल होगा कि थोड़े साधन में और साक्षात् श्रीकृष्ण वश हो जायँ। ऐसा कौन होगा जो इस छोटे साधन को बड़े फल की इच्छा से न करै। यह केवल श्री भगवान की कृपा है कि हम जीवो के हेतु उसने ऐसे छोटे छोटे साधन बनाए हैं। देखो कदंब को एक दिन गुजा का माला चढ़ाने से आप वश में हो जाते हैं, यह केवल उनकी दीन दयालुता है। अहो, ऐसा कौन मूर्ख होगा जो इस बात को जान के भी श्री कृष्ण को वश करने की इच्छा न करेगा।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि हे पुत्र इस रहस्य को आत्मा से अधिक गुप्त रखना।

इत्यादि षोड़शे।

यह स्कद पुराण के मार्गशीर्ष माहात्म्य का सारांश यहाँ पर लिखा गया है, जिससे सज्जनो को सतोष होगा।

अब अगहन मे किस दान की विशेष महिमा है सो लिखते हैं।

यथा—

तिलपात्र तुयोदद्यान्मार्गशीर्षे सकांचन।
कुलाना नरकस्थानां तिलसख्यासमुद्धरेत्॥

मार्गशीर्ष के महीने मे सोना समेत जो तिलपात्र दान करते हैं वे लोग जितने तिलदान करते हैं उतने कुलों का उद्धार करते हैं।

पुन. यथा—

स्वशक्त्याघृतपात्रं तु सहिरण्यं प्रदापयेत्।
यमलोकस्य पथान स्वप्नोऽपि न स पश्यति॥

जो लोग अपनी शक्ति के अनुसार सोना समेत घी का पात्र दान करते हैं वे लोग सपने मे भी नरक का रास्ता नहीं देखते। इत्यादि।

अगहन के महीने में कपड़ा और जूता दान करने का बड़ा पुण्य है और अगहन महीने में तुलसी के सामने ब्राह्मण को खीर खिलाने का महाफल है।

यथा—

तुलसीसन्निधौविप्रान् भोजयेद्यस्तुपायसैः।
एकेतुभोजितेमार्ग कोटिर्भवतिभोजिता॥

अगहन के महीने में तुलसी के सन्निधान जो लोग एक ब्राह्मण को खीर खिलाते हैं वे लोग कोटि ब्राह्मण भोजन का फल पाते हैं।

और भी अगहन मे पूजा की सामग्री और शालिग्राम दान करने की आज्ञा है।

यथा—

कुकुमह्यगरूचैवचदन गुग्गुल तथा।
पूजाद्रव्य तथा चान्य मार्गशीर्षेप्रयच्छति॥

विप्रायवेदविदुषे वैष्णवाय विशेषतः ।
सगच्छेन्मामकेलोके सयुत. कुल कोटिभिः ॥
शालिग्रामशिलारम्या मार्गशीर्षेद्विजातये ।
ददाति हेम सहितादिव्यवस्त्रैश्चवेष्टिना ॥
रत्नपूर्णाम्बसुमतीं मशैल वन काननां ।
दत्वायतफलमाप्नोतितेन तत् फलमाप्नुयात् ॥
शालिग्राम तथा चक्र शख घटा तथैव च ।
ददाति तस्य पुण्यस्य सख्याकर्तुंन्नशक्यते ॥

रोली अगर चदन गुगुल और भी पूजा की सामग्री जो लोग वेद-पाठी ब्राह्मणों को और विशेप करके वैष्णव को अगहन मे देते हैं, वे लोग अपने करोड़ कुल के सहित हमारे लोक मे जाते है। जो लोग अगहन मे शालिग्राम की रम्य शिला सोना और वस्त्र समेत ब्राह्मण को देता है वह रत्नपूर्ण पृथ्वी पहाड वन समेत दान करने का फल पाता है और शालिग्राम, गोमती चक्र, शख, घटा जो लोग देते हैं उनके पुण्य की सख्या नहीं कर सकते। इत्यादि

अगहन मे स्त्रियो को सोहाग पेटारी दान करना चाहिए।

यथा—

मासिमार्गशिरेतुस्त्री कुकुम मौक्तिकानि च ।
सिन्दूर कज्जल चापिहैमान्याभरणानिच ॥
सुगन्धीन्यपिवस्तूनि ताम्बूल रजिताम्बरं ।
प्रयच्छतिद्विजातिभ्यो तस्य पुण्यफल शृणु ॥
पतिव्रता पुत्रिणी च सुभगा जन्मजन्मनि ।
स्वप्नेपिभर्तृदु.खसानपश्यतिकदाचन ॥

अगहन मे रोली, मोती, सेंदुर, काजल, सोना गहना, चूड़ी, सुगध, पान, रँगी साड़ी, और भी ऐना, कघी, टिकुली इत्यादिक सोहाग की वस्तु जो स्त्रीदान करती है वह पतिव्रता होती हैं। उनके पुत्र जीते हैं, जन्म जन्म में भाग्यवान होती हैं और वह सपने मे भी पति का दुःख नहीं देखतीं। अब मार्गशीर्ष मे और अन्य देवताओं के जो व्रत हैं वह लिखते हैं।

अगहन बदी तीज को स्त्रियों को सौभाग्य सुंदरी का व्रत सौभाग्य का देनेवाला है। इसको विशेष विधि व्रतार्क आदि ग्रंथों में लिखी है। इत्यादि ।

मार्गशीर्ष कृष्णा ११ को उत्पन्ना एकादशी का व्रत है । मत्स्यपुराण में इसकी कथा है। अर्जुन ने श्रीकृष्ण से पूछा है और श्रीकृष्ण ने आज्ञा किया है कि इस एकादशी को एकादशी का जन्म है और यह बड़ी पुनीत एकादशी है।

इत्यादि मात्स्ये उत्पन्नाव्रत ।

इसी अगहन बदी ११ को वैतरणी व्रत होता है। इसमें गोपूजन और गोदान करना चाहिए । यह कथा भविष्योत्तर पुराण की हेमाद्रि ग्रंथ में लिखी है। राजा युधिष्ठिर ने भीष्म पितामह से पूछा है। उन्होंने उसका विधान और फल कहा है।

एकादशी तिथिः कृष्णामार्गशीर्षगतानृप ।
तामासाद्यनर. सम्यग्गृह्णीयान्नियमं शुचिः ॥
एकादशी तिथिः कृष्णानाम्ना वैतरणी शुभा ।
सात्रतेनमदाकार्य्या नक्तावाचोपवासिनी ॥
मध्यान्हेतुनरः स्नात्वा नित्यनिर्वर्तित क्रियाः ।
रात्रौ सुरभिमानीय कृष्णमेर्चेद्यथाविधि ॥

इत्यादि भविष्योत्तरे वैतरणीव्रतं

इसी एकादशी को कृष्णा एकादशी का व्रत होता है। यह व्रत वाराह पुराण में पृथ्वी ने श्री वाराह जी से पूछा है सो आपने आज्ञा किया है कि इस कृष्णा एकादशी को व्रत करना और तिलपात्र दान करना ।

समस्तपातकहर स्वर्गदसर्व्वकामद ।
न सम कृष्णद्वादश्या किञ्चिदस्तिपर भुवि ॥
मार्गशीर्षे कृष्णपक्षे दशम्यामेकभुक्नरः ।
एकादश्यामुपवसेत् कृष्णस्यार्चा समाचरेत् ॥
स्नात्वाच कृष्णैस्तु तिलैः प्रभाते दद्याच्चसम्यक् तिलयुक्त पात्र ।
नमोस्तुकृष्णाय पितुश्चमातु हत्वात्वघ प्रापयतोस्वगत्यै ॥

इत्यादि वाराह पुराणे कृष्णाव्रतं ।

अगहन बदी अमावस्या को गौरी तपोव्रत सौभाग्य बढ़ने के हेतु करना चाहिए। यह अंगिरा ने कहा है कि इस व्रत के करने से स्त्री को रूप-सौभाग्य मिलता है। यथा—

आदौमार्गशिरेमासिह्यमावस्यादिने शुभे।
गृह्णीयान्नियम तत्र दन्तधावन पूर्व्वकं॥

इस दिन सौभाग्य वस्तु दान करना और सुवासिनी को भोजन कराना चाहिए। इत्यादि अंगिरोक्त गौरीतपोव्रत।

इसी अगहन की अमावस्या को स्त्रियो को सौभाग्य वृद्धि के हेतु महाव्रत लिखा है। यह हेमाद्रि ग्रंथ में कालिकापुराण की कथा लिखी है। यथा—

ततोमार्गशिरेमासि प्रतिपद्य परेहनि।
उपवसेत् स्वगुरुम् पृछ्य महादेवस्मरेन्मुहुः॥
एवम्व्रत महच्चैव ब्रह्मघ्नेप्यघमर्षणं।
धनमायुप्रदन्नित्य रूप सौभाग्यदपर॥
इत्यादि कालिका पुराणे।

मार्गशीर्ष सुदी ५ को नाग की पूजा करना, यह बात हेमाद्रि ग्रंथ स्कंद पुराण में लिखी है। यथा—

शुक्लामार्गशिरे या चश्रावणेया च पचमी।
स्नानैर्दानैर्बहुफला नाग लोकप्रदायिनी॥
इत्यादि स्कान्दे नागपचमी।

अगहन सुदी ६ स्कद षष्ठी वा चम्पाषष्ठी है। इसमें सूर्य और स्कद की पूजा करना। इस मंत्र से कार्तिकेय की पूजा करना।

सेनाविदारकस्कद महासेन महाबल।
रुद्रोमागजषडवक्त्र गङ्गागर्भनमोस्तुमे॥

इत्यादि दिवोदासीये चम्पाषष्ठी।

अगहन सुदी ७ सूर्य तीर्थ में नहाना और सूर्य की पूजा करना और श्रीयमुनाजी में वा पंचगगा में स्नान करना, यह स्कद पुराण के मार्गशीर्ष माहात्म्य में लिखा है।

यथा—

मार्गशीर्षेतुयाशुक्ला सप्तमी भानुसयुता।
कर्तव्यासा प्रयत्नेन सूर्य्यपर्व शताधिका॥
तस्यादत्तंहुतजप्तं तपस्तप्तं कृतचयत्।
अक्षयतद्विजानीयाद्यमुनायान सशयः॥

इत्यादि स्कान्दे सूर्य सप्तमी

अगहन सुदी ११ मोक्षा एकादशी, हेमाद्रि ग्रथ मे भविष्योत्तर का वाक्य लिखा है। इसमे जागरण और दीपदान का फल विशेष है।

इत्यादि मोक्षाव्रत

अगहन सुदी १२ को मत्स्य पूजा करना। इस दिन मत्स्य भगवान का उत्सव है। यह बात स्कन्दपुराण के एकादशी माहात्म्य में लिखी है।

यथा—

ततः प्रभात समये कार्य्यं मत्स्योत्सवबुधैः। इत्यादि।

अगहन सुदी १४ को पिशाच मोचन तीर्थ पर श्राद्ध करना, यह त्रिस्थलीसेतु मे लिखा है। इसमे श्राद्ध से पित्रो का मोक्ष होता है।

इत्यादि निर्णयसिन्धौ पिशाचमोचने श्राद्ध।

अगहन सुदी १५ को दत्तात्रेय का जन्म है, यह बात स्कदपुराण के सह्याद्रि माहात्म्य में लिखी है। इससे दत्तात्रेय की पूजा और उनका दर्शन करना।

यथा—

मार्गशीर्षे तथा मासिदशमेह्नसुनिर्मले।
मार्गशीर्षे पौर्णमास्या मृगशीर्षयुते बुधे॥
जनयामास देदीप्यमान पुत्र सती शुभ।
तम्विष्णुमागत दृष्ट्वा अत्रिर्नामाकरोत्सवं॥
दत्तवान्स्वस्य पुत्रस्यदत्तात्रेयमितीश्वरम्।

इत्यादि स्कान्दे दत्तात्रेयजन्मोत्सवः।

इसी अगहन सुदी १५ को जो कुछ दान पुण्य स्नान बन पड़े करना उचित है। इस पूर्णिमा के समान कोई पर्व नहीं है, यह बात स्कंद-पुराण के मार्गशीष माहात्म्य में लिखी है।

यथा—

स्नान दान तथा पूजा पूर्णायान्नकरोति यः।
षष्टि वर्ष सहस्राणि रौरवे परिपच्यते ॥ १ ॥
गोदानभूमिदान च वस्त्रान्नादि च यद्भवेत्।
मार्गशीर्षे पौर्णमास्यादानेस्यादक्षय फल ॥

अगहन की पुनवासी को जो स्नानदानादिक नहीं करते वह साठ हजार बरस रौरव मे वास करते हैं।

अगहन सुदी १५ को जो कुछ दान करता है वह अक्षय होता है।

अगहन मे श्रीमद्भागवत सुनने का बड़ा माहात्म्य है। यथा मार्गशीर्ष माहात्म्ये।

श्रीमद्भागवत नामपुराण ब्रह्म सम्मित।
शृणुयाच्छ्रद्धया युक्तो ममसन्तोषकारण ॥
यावद्दिनानि हे पुत्रशास्त्र भागवत कलौ।
तावत्कुर्वन्ति पितरः स्वर्गेत्वमृत भोजन ॥
यत्र यत्र चतुर्वक्त्र श्रीमद्भागवत भवेत्।
गच्छामि तत्रतत्राह गौर्यथासुतवत्सला ॥

इत्यादि श्रीमद्भागवत माहात्म्य।

मार्गशीर्ष मे गोपी गोविंद तीर्थ की यात्रा और गोविंद नाम स्मरण यही करना चाहिए।

यथा वायु पुराणे लक्ष्मीसहितायां काशी माहात्म्ये।

गोपी गोविन्द तीर्थं तु गोपी गोविन्दसञ्ज्ञक।
तत्रमार्गशिरेमासिमहिमाबहु गीयते ॥

इति मार्गशीर्ष महिमा

———

मार्गशीर्ष महिमा

—(*)—

चतुर्वर्ग, मोक्षादिक पाने का बहुत सहज उपाय।

हम लोग माघ वैशाख कार्तिकादि नहाने को अति पवित्र जानकर स्नान दानादिक करते है परतु हम लोग नहीं जानते कि एक महीना इन सभो मे महा पुनीत और थोडे साधन मे बहुत फल का देनेवाला बच गया है और उसमे हम लोग कुछ स्नानदानादिक नहीं करते और जिसके प्रसिद्धि के वास्ते हम बड़े आनद से यह इश्तिहार देते हैं।

वह गोप्यमास जिसका माहात्म्य सब शास्त्रो मे बड़े आदर से कहा है वह मार्गशीर्ष अर्थात् अगहन का महीना है, जिसका गुन गान करने मे महात्मा लोग तृप्त नहीं होते और यह महीना सब महीनो का राजा और भगवान का स्वरूप है।

मासानाम्मार्गशीर्षोऽहं। श्री कुमारिका गनो ने इसी के स्नान से श्रीकृष्ण को पाया था और स्कद पुराण मे इसकी बड़ी स्तुति लिखी है। यथा स्कांदे ब्रह्माप्रति भगवद्वाक्यम्।

सर्वयज्ञेषु यत्पुण्य सर्वतीर्थेषुयत्फल।
सहसाप्नोतितत्सर्व्वं मार्गशीर्षे कृते सुत ॥१॥
यज्ञाध्ययनदानाद्यैस्सर्वतीर्थावगाहनैः।
सन्यासेन च योगेन नाहम्वश्योभवामिच ॥२॥

यह श्री भगवान ने श्रीमत् भागवत और श्री भगवत् गीता में श्री मुख से आज्ञा किया है कि सब महीने मे अगहन हमारा स्वरूप है। और स्कदपुराण मे भी ब्रह्मा से श्री भगवान फिर आज्ञा करते हैं। यथा—

स्नानेन दानेनच पूजनेन होमे विधाने तपआदितश्च।
वश्यो यथामार्गशिरेस्वमासि तथा न चान्येषुहिगर्भमुक्त ॥३॥
माघाच्छतगुण पुण्य वैशाखे मासि लभ्यते।
तस्मात् सहस्रगुणित तुलासस्थे दिवाकरे ॥४॥

तस्माच्च कोटि गुणित वृश्चिकस्थे दिवाकरे ।
मार्गशीर्षेऽधिक तस्मात्सर्व्वदा मम वल्लभ ॥५॥

आप कहते हैं कि हे गर्भमुक्त ब्रह्मा, हम स्नान, दान, पूजन, होम, विधान इत्यादिक से वश नहीं होते, हम मार्गशीर्ष-स्नान से वश होते हैं। माघ मे वैशाख का सौ गुना पुण्य है और वैशाख से हजार गुना पुण्य कार्तिक मे है और कार्तिक से करोड़ गुना पुण्य वृश्चिक के सूर्य में, और अगहन मे इससे भी अधिक पुण्य है। इस हेतु आप लोगो को इस अगहन के महीने मे जो कुछ बन सके स्नान, दान तुलसी-कदंब-पूजन करना चाहिए।

स्कंदपुराणे मार्गशीर्ष माहात्म्ये ।

मार्गशीर्षं न कुर्व्वन्ति ये नरा पाप मोहिताः ।
पाप रूपाहि ते ज्ञेया कलि काले विशेषत ॥
धन्यास्ते कृतिनो ज्ञेया ये यजन्ति जनार्द्दनम् ।
कर्मणा मनसा वाचा भक्तितश्च भजन्ति ये ॥ ७ ॥
मार्गशीर्षे महापुण्या मथुरा काशिका यथा ।
मथुरा स्नातु कामस्तु गच्छतस्तु पदे पदे ॥ ८ ॥
निराशानि व्रजत्येव पातकानि न सशयः ।
गोदान स्वर्णदान च वस्त्रान्नादि च यद्भवेत् ॥ ९ ॥
पौर्णमास्या सहोमासे दाने स्याद्दत्तम् यफलम् ।
सा पौर्णमासी लभ्येत गगाया यदि भाग्यतः ॥ १० ॥
स्नानादेव फलं तत्र यज्ञकोटिसम भवेत् ।
पूजयेत् संस्मरेद्यस्तु कदम्ब सर्वकामदम् ॥ ११ ॥
सर्व्वान्कामानवाप्नोति इहामुत्र न सशयः ।
कदम्ब मूलसभूतां मृद देहे विभर्त्ति यः ॥ १२ ॥
सर्वतीर्थादिक पुण्य लभते मानवो भुवि ।

जो पाप मोहित लोग मार्गशीर्ष स्नान नहीं करते उन्हें इस कलियुग मे विशेष करके पाप रूप जानना। वे सुकृती लोग धन्य हैं जो तन, मन, धन, वाणी और कर्म से श्री भगवान की सेवा करते हैं। अगहन के महीने मे मथुरा और काशीमें महाफल होता है। जो लोग मथुरा स्नान

करने जाते हैं, उनके पाप भाग जाते हैं। अगहन की पुनवासी को सब दान अक्षय होते हैं। और भाग्य से यह पुनवासी में जो श्री गगा स्नान बन जाय तो सैकड़ो करोड़ पुनवासी का फल मिले। जो अगहन मे कदम्ब की पूजा करते हैं उनके सब काम सिद्ध होते है। जो लोग कदब के जड की मिट्टी का तिलक करते हैं, उनको सब तीर्थ स्नान का फल मिलता है।

सब दिन स्नान न बनै तो पीछे के पॉच दिन हरिपचक मे अवश्य स्नान करें। यथा पाद्मे-स्कंदे च।

> हरिपंचक विख्यात सर्व्वा लोकेषु सिद्धिदम्।
> नारीणा च नरादीना सर्व्वदु ख निबर्हणम्॥

इस अगहन के महीने मे आप लोगों से जो कुछ बनै स्नान दानादिक कीजिए।

माघस्नान-विधि

सं० १६३०

माघ स्नान विधि

—:o—

भरित नेह नव नीर नित, बरसत सुरस अथोर।
जयति अपूरब घन कोऊ, लखि नाचत मन मोर ॥१॥

माघ-स्नान पस सुदी एकादशी वा पूनम से प्रारंभ करके माघ सुदी द्वादशी वा पूनम को समाप्त करना चाहिए। माघ में मूली नहीं खानी। नहाने की विधि के अनुसार स्नान करना।

माघ स्नान के मंत्र

दुःख दारिद्र्य नाशाय श्री विष्णोस्तोषणाय च।
प्रात स्नान करोम्यद्य माघे पापविनाशनम् ॥२॥
मकरस्थे रवौ माघे गोविन्दाच्युत माधव।
स्नानेनानेन मे देव यथोक्तफलदो भव ॥३॥

सूर्य को अर्घ देने का मंत्र

सवित्रे प्रसवित्रेच परन्धाम जले मम।
त्वत्तेजसा परिभ्रष्ट पाप यातु सहस्रधा ॥

माघ स्नान का समय ठीक सूर्य उदय होने के पीछे परन्तु किसी का मत है कि अरुणोदय मे नहाना। जो सारा माघ न नहाया जाय सकै तो तीन दिन नहाना। मकर सक्राति, रथसप्तमी और माघी पूनम ये तीन दिन। वा माघ बदी तेरस, चौदस, अमावस। वा माघ सुदी दसमी, एकादशी, द्वादशी वा सक्राति के पीछे तीन दिन। पर मुख्य तीन दिन तेरस से अमावस तक ही है। माघ नहाकर उसी समय आग नहीं तापना। तिल मे मीठा मिलाकर दान करना और उसी का होम करना, तिल से तर्पण करना, तिल देना और तिल खाना। अमला, तेल, लकड़ी, कम्मल, एक रत्ती सोना और कपडे तथा जूतो के जोडे ब्राह्मणो को देना। जब माघ स्नान समाप्त हो उस दिन घी तिल मीठा का होम कर इस मत्र से सूर्य्य की प्रार्थना करनी।

दिवाकर जगन्नाथ प्रभाकर नमोस्तुते।
परिपूर्णं कुरुष्वेह माघस्नानमपुं पते॥

माघ मे मकर सक्राति मे स्नान करके वस्त्र और तिल धेनु दान करना। माघ की अमावस्या को मौन स्नान करना। इस दिन जो सोमवार वा मगल हो तो पुण्य विशेष है। अमावस्या यदि रविवार को हो और उस दिन श्रवण वा अश्विनी वा धनिष्ठा वा आर्द्रा वा अश्लेषा वा मृगशिरा नक्षत्र हो तो भी बडा फल है। माघ बदी ४ को गणेशपूजन। माघ बदी १४ को यम तर्पण करना। माघ सुदी ४ को ढु ढिराज का व्रत और पूजन करना। माघ सुदी ५ श्री पचमी है, इस दिन कु द के फूल से लक्ष्मी की पूजा करनी और नए अकुर तथा नई बौर से कामदेव की पूजा करनी। माघ सुदी ७ रथसप्तमी है। इसमे अरुणोदय में स्नान का बड़ा पुण्य है। ऊख मे जल हिलाकर धतूरे के सात पत्ते सिर पर रखकर इन मत्रो से नहाना।

यद्यज्जन्मकृत पाप मया जन्मसुसप्तसु।
तन्मेरोगचशोकच माकरी हन्तु सप्तमी॥ १॥
एतज्जन्मकृत पापम् यच्च जन्मातरार्जितम्।
मनोवाक्कायज यच्च ज्ञाताज्ञातेच येपुनः॥ २॥
इतिसप्तविधपापम् स्नानान्मे सप्त सप्तिके।
सप्तव्याधि समायुक्तम् हर माकरिसप्तमि॥ ३॥

स्नान के समय कुसुम मिला बत्ता का दिया सिर पर ऊचा करके मत्र से जल में सूर्य को दे।

नमस्ते रुद्ररूपाय रसानाम्पतये नम ।
वरुणाय नमस्तेस्तु हरिवास नमोस्तुते ॥ ४ ॥

चदनसे अष्टदल लिखकर बीचमे प्रणव सहित शिव पार्वती लिखकर क्रम से इन नामो म कमल के पत्ता पर सूरज का पूजा करे। रवयेनम:, भानवेनम:, विवस्वतनम:, भास्करायनम, सवित्रेनम, अर्कायनम, सहस्रकिरणायनम। सोने के सूर्य तिल पात्र मे रख कर ब्राह्मण को दे और इस मत्र स सूर्य अर्घ्य दे।

सप्त सप्तिवहप्रीत सप्तलोकप्रदीपन ।
सप्तमी सहितो देव गृहाणार्घ्यं दिवाकर ॥ ५ ॥
जननी सर्वलोकाना सप्तमीसप्त सप्तिके ।
सप्तव्याहृतिकेदेवि नमस्ते सूर्यमडले ॥ ६ ॥

सोने का कनफूल वा सोने का दिया और सोने का न हो सकै तो तिल के आटे का बनाकर तामे के पात्र मे तिल गुड़ घी समेत लाल कपड़े मे समेट कर इस मत्र से दान करै।

आदित्यस्य प्रसादेन प्रातःस्नान फलेनच ।
दुष्टदौर्भाग्यदु:खघ्न मयादत्त तुनालकम्॥ ७ ॥

यही सप्तमी मन्वादि भी है। इसी सप्तमी को रथ दान का बड़ा फल है। माघ सुदी अष्टमी का तिल लेकर भीष्म तर्पण करना। मत्र—

भीष्मः शान्तनवो वीरस्सत्यवादी जितेन्द्रिय ।
आभिरद्भिरवाप्नोतु पुत्र पौत्रोचिताक्रियाम् ॥ ८ ॥
वैयाघ्रपद गोत्राय साकृत्यप्रवराय च ।
अपुत्राय ददाम्यतज्जलम्भीष्मायवर्म्मणे ॥ ९ ॥
वसूनामवताराय शन्तनारात्मजायच ।
अर्घ्यं ददामि भीष्माय आबालब्रह्मचारिणे ॥ १० ॥

यह तर्पण जिसका पिता जीता हो वह भी अपसव्य से करै। माघ सुदी द्वादशी का नाम भीम द्वादशी है। माघ की पूनम को स्नान का

बड़ा पुण्य है। जो मेष के शनैश्चर और गुरु चद्रमा सिंह के और सूर्य श्रवण नक्षत्र में हों तो महामाघी होती है। इति

प्रानपियारे प्रेमनिधि, प्रेमिन जीवन-प्रान।
तिनके पद अरपन कियो, माघ नहान विधान॥

द्वादश्यां पुराण निषेधः।

पाद्मे सप्ताह-माहात्म्ये कुमार नारद-सम्वाद.

नित्यायाञ्च कथायान्तु पुराणानाम्मुनीश्वर।
द्वादशीम्वर्जयेत् प्राज्ञस्सूत सूतक सम्भवात्॥ १॥
श्रीमद्भागवतस्यापि सप्ताहे नैत्यकेपिच।
न निषेधोस्ति देवर्षे प्राहुरेवम्पुराविद॥ २॥
श्री भागवत सप्ताहो महायज्ञ स्मृतोबुधैः।
आषाढ शुक्लद्वादश्याम्पारणाहनिपावति॥ ३॥
पूर्वार्द्धे यामवेलायाम्भावित्वात्कृष्णमायया।
मुग्धोदर्भकरो रामश्राहरल्लोमहर्षमिति॥

पौराणिकैर्ज्ञेयम्।

बृहन्नारदीय पुराण से संगृहीत

पुरुषोत्तममास–विधान

'तत्कर्महरितोषं यत् सा विद्या तन्मतिर्यया'

सं० १९३०

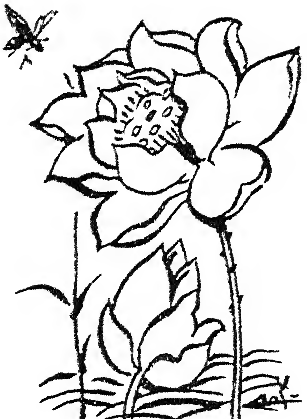

पुरुषोत्तममास विधान

—※—

मृगमद मुद्रित चारु कपोलम् । मृगमद मोचन लोचन लोलम् ॥
मृगमद मेचक सुन्दर रूपम् । नौमि हरि वृन्दावन भूपम् ॥१॥

दोहा ।

श्री पुरुषोत्तम-राधिका, चरण शरण रहु आय ।
कटि जैहैं भवभोग भय, रोग कुसोग बलाय ॥ १ ॥
जिन पुरुषोत्तम नाम सुभ, सहस कहे रचि गाय ।
सो पुरुषोत्तम बदन बपु, वल्लभ होहु सहाय ॥ २ ॥
पुरुषोत्तम पद जुग सुमिरि, धरि हिय परम अनंद ।
पुरुषोत्तम की विधि लिखी, पुरुषाधम हरिचंद ॥ ३ ॥

एक समय अनेक देवर्षि राजर्षि शिष्य प्रशिष्य समेत लोकोपकार-शील स्वयम् तीर्थरूप तीर्थपाद चरणारविन्द मधुव्रत तीर्थ यात्रा के मिस नैमिषक्षेत्र में एकत्र हुए और वहाँ महाभागवत सूत पौराणिक भी आए। सूतजी से ऋषियों ने इस असार संसार के पार जाने का उपाय और श्रीकृष्ण की लीला का प्रश्न किया। सूतजी बोले मैं अनेक तीर्थों मे भ्रमण करता हुआ श्रीगंगाजी के किनारे भगवान श्री शुकदेव जी के मुखारविंद से श्री मद्भागवत रूपी मधुर सुधारस का पान

करके आया हूँ, जो आज्ञा हो वह कथा आप लोगों को सुनाऊँ। ऋषियों ने कहा सहज उपाय से भगवत्-प्राप्ति का जो साधन हो वह कहिए। सूतजी बोले—एक दिन भगवान नारद जी चारों ओर घूमते हुए बद्रिकाश्रम में भगवान नारायण के पास गए और यही प्रश्न किया कि भगवन् कलियुग के जीवों को स्वल्प साधन में भगवान की प्राप्ति का उपाय कहिए। यह सुनकर भगवान नारायण ने पुरुषोत्तम मास का माहात्म्य कहा। पाडवों को वन में अत्यन्त क्लेशित देखकर उनका दुख से छूटने के हेतु भगवान् श्री कृष्णचद्र ने पुरुषोत्तम माहात्म्य सुनाया। सब मासों के एक एक देवता नियत है, इससे जब पहले मलमास पडा तब उसका कोई देवता नहीं था और इस कारण लोग उसकी निन्दा करते थे। मलमास इस बात से अत्यन्त दुखी होकर भगवान के पास गया और भगवान वैकुठनाथ उसको लेकर गोलोक मे गए। पूर्ण पर-ब्रह्म सच्चिदानन्द घन भगवान श्री कृष्णचद्र मलमास का दुख सुनकर बोले, मै पुरुषोत्तम तेरा स्वामी हूँ अतएव तेरा नाम आज से पुरुषोत्तम मास होगा और सब मासों से तेरा फल विशेष होगा। जो साधन लोग कार्तिकादि पुण्य मासों से अनेक वर्ष मे भी करके फल न पावेगे, वह पुरुषोत्तम मास मे थोडे साधन मे फल पावेगे।

भगवान श्री कृष्ण धर्मराज जी से कहते हैं कि पूर्व जन्म मे जब द्रौपदी मेधावी ऋषि की कन्या थी तब दुर्वासा ऋषि ने इसे पुरुषोत्तम मास का व्रत करने को कहा था परतु स्त्री-बुद्धि से इसने पुरुषोत्तम मास का अनादर किया और शिवजी का व्रत करके पाँच बेर पति माँगकर तुम पाँचो को पति पाया, परतु पुरुषोत्तम के अनादर से बारहवर्ष की विपत्ति भोगनी पड़ी। सो तीन महीने पीछे पुरुषोत्तम मास आनेवाला है, सो इसमें तुम लोग अवश्य व्रत करना।

भगवान श्रीकृष्णचद्र की आज्ञानुसार पाडवों ने पुरुषोत्तम मास का व्रत किया और विपत्ति से छूटकर भगवान की कृपा से उत्तरोत्तर अनेक शुभ फल पाया।

नारद जी से भगवान नारायण बोले—पूर्व काल मे सत्ययुग मे हैहय देश का राजा दृढधन्वा था। पुष्करावर्त्त नगर उसकी राजधानी थी

और विदर्भ नगर के राजा की कन्या गुणसुंदरी उसकी रानी थी। चारुमती कन्या और चित्रवाक्, चित्रबाहु, मणिमान और चित्रकुडल यह चार पुत्र थे। इस राजा का पुण्य प्रताप ऐश्वर्य सब महान् अखडित था। एक दिन राजा को अकस्मात् चिंता हुई कि किस पुण्य से हमको ऐसा अखड ऐश्वर्य मिला। इसी चिंता मे राजा शिकार खेलता हुआ एक मृग के पीछे गहन वन मे घुस गया और एक वृक्ष के नीचे थककर विश्राम करने लगा, तो वहाँ एक सुग्गे को यह पढते हुए सुना—

पाय जगत मे सकल सुख, करत न तत्व विचार।
असत विषय भूल्यो फिरत, किमि लहिहै भव पार॥ ३ ॥

सुग्गे को मनुष्य की बोली बोलते और परम तत्त्व के पूर्वोक्त वाक्य को पढ़ते सुनकर राजा को अत्यत आश्चर्य और मोह हुआ। यहाँ तक कि घर आकर काम काज छोडकर रात दिन उसी सुग्गे का वाक्य सोचने लगा। एक दिन भगवान वाल्मीकि इस राजा के घर पर आए और राजा ने बडी नम्रता से सुग्गे के वाक्य का आशय पूछा। वाल्मीकि जी ध्यान करके बोले—पूर्व जन्म मे आप ताम्रपर्णी के निकट सुदेव नामक ब्राह्मण थे। अपनी स्त्री गौतमी सहित पुत्र के हेतु आपने भगवान की बड़ी तपस्या किया। यद्यपि सुदेव के सात जन्म मे भी पुत्र नहीं लिखा था तथापि भगवान के वाक्य से गरुडजी ने सुदेव को पुत्र का वरदान दिया। सुदेव ने शुकदेव नामक सर्वगुण संपन्न पुत्र पाया परतु देवल ऋषि के कहे हुए फल के अनुसार बारह वर्ष की अवस्था में वह बावली मे डूब कर मर गया। सुदेव पुत्र शोक से अत्यत व्याकुल होकर रोने लगा और यहाँ तक कि सयोग से उस समय आया हुआ पुरुषोत्ताम मास उसने बिना अन्न जल के बिता दिया। इस व्रत से भगवान प्रसन्न होकर प्रगट हुए और कहा कि तुमने हठ करके पुत्र का वरदान लिया था, इससे धनुश्शर्मा ब्राह्मण की भाँति अत मे दुख पाया। अब तुम्हारा पुत्र जी जायगा और तुम बारह हजार वर्ष पुत्र सहित इस शरीर मे रहकर अत मे सुधन्वा नामक राजा होगे और चार पुत्र, एक कन्या और राज्य का अखड ऐश्वर्य पाओगे। सो उसी पुण्य से आपने यह राज्य और ऐश्वर्य पाया है।

वह सुग्गा आपका पूर्व जन्म का शुकदेव नामक पुत्र था, जो आप

को राज-काज में मग्न देखकर आपके हित के हेतु सुग्गे के रूप में आपको चितावनी का शुभ वाक्य सुना गया।

वाल्मीकि जी से अपने पूर्व जन्म का चरित्र और पुरुषोत्तम का विचित्र माहात्म्य सुनकर सुधन्वा ने उनसे पुरुषोत्तम मास की विधि पूछी। ऋषि बोले—पुरुषोत्तम मास में ब्राह्म मुहूर्त में उठकर शौच करके और दंत धावन करके तीर्थ में स्नान करे फिर गोपी चंदन का ऊर्ध्व पुंड्र और शैव हो तो त्रिपुण्ड्र तिलक लगाकर भुजापर शंख चक्र का चिह्न लगाकर संध्या करे। फिर पवित्र स्थान में चावल का अष्ट दल बनाकर उस पर सोने चाँदी तामे पीतल वा मिट्टी का कलश रक्खे, कलश में इन मंत्रों से जल भरे—

कलशस्य मुखे विष्णुः कंठे रुद्रः समाश्रितः।
मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः॥
कुक्षौतु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदस्सामवेदो ह्यथर्वणः।
अङ्गैस्तु सहिताः सर्वे कलशं हि समाश्रिताः॥
गंगा गोदावरी चैव कावेरी च सरस्वती।
आयान्तु मम शांत्यर्थम् दुरितक्षयकारकाः॥

इस मंत्र से कलश की प्रतिष्ठा करके, कलश का पूजन करके एक तंदुल पूर्णपात्र कलश के ऊपर रक्खे। उस पर पीला कपड़ा बिछा कर श्री राधिका सहित भगवान की सोने की मूर्त्ति स्थापन करके पुरुषोत्तम बीज और नीचे लिखे हुए मंत्रों से प्राणप्रतिष्ठा करे।

ॐ तद्विष्णोः परमम्पदं सदा पश्यन्ति सूरयः दिवीव चक्षुराततं स्वाहा

ॐ अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु अस्यै देवत्व सख्यायै स्वाहा

जो वेद मंत्र का अधिकार न हो तो श्री राधिका सहित पुरुषोत्तमाय नमः स्वाहा—इस मंत्र से प्राणप्रतिष्ठा करके नीचे लिखी हुई विधि से पूजा करे।

आगच्छ देव देवेश श्रीकृष्ण पुरुषोत्तम ।
राधया सहितश्चात्र गृहाण पूजन मम ॥ २ ॥

श्रीराधिका सहित पुरुषोत्तमायनम आवाहन समर्पयामि इत्यावाहन ।

नाना रत्नसमायुक्त कार्तस्वरविभूषित ।
आसन देव देवेश गृहाण पुरुषोत्तम ॥ २ ॥

श्री राधा० आसन०

गगादि सर्व तीर्थभ्यो मया प्रार्थनयाहृतं ।
तोयमेतत्सुखस्पर्शं पाद्यार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ ३ ॥

इति पाद्य

नदगोपगृहेजातो गोपिकानन्दहेतवे '
गृहाणार्घ्यं मया दत्त राधया सहितो हरे ॥ ४ ॥

इत्यर्घ्यं

गगाजल समानीत सुवर्णकलशस्थित ।
आचम्यता हृषीकेश पुराणपुरुषोत्तम ॥ ५ ॥

इत्याचमन

कार्य्यं मे सिद्धिमायातु पूजिते त्वयिधातरि ।
पञ्चामृतैर्मया नीतै राधिकासहितो हरे ॥ ६ ॥

इति स्नान

पयोदधिघृत गव्य माक्षिक शर्करा तथा ।
गृहाणेमानि द्रव्याणि राधिकानन्ददायक ॥ ७ ॥

इति पचामृत स्नान

योगेश्वराय देवाय गोवर्द्धनधराय च ।
यज्ञानापतये नाथ गोविन्दाय नमोनमः ॥ ८ ॥

गगाजल समम् शीत नन्दितीर्थसमुद्भवं ।
स्नान दत्त मया कृष्ण गृह्यता नन्दनन्दन ॥ ९ ॥

इति पुन. स्नान

त्व ज्योति सर्वदेवाना तेजसा तेज उत्तम ।
आत्म ज्योति. परधाम दीपोय प्रतिगृह्यता ॥ २२ ॥
इति दीप

नैवेद्य गृह्यता देव भक्ति मे ह्यचला कुरु ।
ईप्सित मे वर देहि परत्र च परागति ॥ २३ ॥
इति नवेद्य

मध्ये पानीय उत्तरापोशन ।
गगाजल समानीत सुवर्णकलशस्थित ।
आचम्यता हृषीकेश त्रैलोक्यव्याधिनाशन ॥ २४ ॥
इत्याचमन

इद फल मया देव स्थापित पुरतस्तव ।
तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ॥ २५ ॥
इति श्रीफल

गध कर्पूर सयुक्त कस्तूर्यादि सुवासित ।
करोद्वर्तनक देव गृहाण परमेश्वर ॥ २६ ॥
इति करोद्वर्तन

पूगीफल समायुक्त सकर्पूर मनोहर ।
भक्त्या दत्त मया देव ताबूल प्रतिगृह्यता ॥ २७ ॥
इति ताबूल

हिरण्यगर्भगर्भस्थ हेमबीज विभावसो. ।
अनन्त पुण्यफलद मत शाति प्रयच्छमे ॥ २८ ॥
इति दक्षिणा

शारदेदीवरश्याम त्रिभङ्गललिताकृति ।
नीराजयामि देवेश राधया सहित हरि ॥ २९ ॥
इति नीराजनम्

रक्षरक्ष जगन्नाथ रक्ष त्रैलोक्यनायक ।
भक्तानुग्रहकर्त्ता त्व गृहाणास्मत् प्रदक्षिणा ॥ ३० ॥
इति प्रदक्षिणा

यज्ञेश्वराय देवाय तथा यज्ञोद्भवाय च ।
यज्ञानापनयेनाथ गोविन्दाय नमोनम ॥ ३१ ॥
इति मंत्र पुष्पम्

विश्वेश्वराय विश्वाय तथा विशवोद्भवाय च ।
विश्वस्यपतये तुभ्य गोविन्दाय नमोनम ॥ ३२ ॥
इति नमस्कारान्

मत्रहीनेनि मन्त्रेण क्षमाप्य पुरुषोत्तमम ।
स्वाहांतैर्नाम मंत्रैश्च तिल होमो दिनेदिने ॥ ३३ ॥
इति

पूजन करके हविष्यान्न भोजन करे। मास, मद्य और मादक वस्तु, द्विदल, तैल पक्व बडी, उरद, मसूर इत्यादि वस्तु न खाय। भाव-दुष्ट, क्रिया-दुष्ट और शब्द-दुष्ट वस्तु का वर्जन करे। पराये का द्रोह, अन्न, स्त्री और धन से दूर रहे। बिना तीर्थ परदेश न जाय, निंदा न करे, जंभीरी नीबू, बासी अन्न, ब्राह्मण का बेचा हुआ रस, भूमि से उत्पन्न लवण, ताम्रपात्र मे रक्खा हुआ गव्य, चमडे के बर्तन का जल, ये सब मांस के तुल्य है। रजस्वला, म्लेच्छ, पतित, व्रात्य और देव-ब्राह्मण-द्रोही से पुरुषोत्तम मे सबध न रक्खे। इनका और कौवे का, सूतकवाले का छूआ हुआ अन्न और दो बेर पकाया हुआ तथा जला हुआ अन्न न खाय। प्याज, लहसुन, मोथा, छत्राक, गाजर, मूली, सिंगरी इत्यादि भी न खाय। प्रतिपदा से पूर्णिमा तक कूषमाड आदिक का वर्जन करे और जो वस्तु छोडै वह वस्तु ब्राह्मण को दान दे। केवल दूध पीकर वा घी पीकर फलाहार करके वा अयाचित खाकर उपवास, एक नक्त वा नक्त व्रत जो बन पडे और बिना कष्ट निबहै वह करे। शालिग्राम का पूजन करै, श्रीमद्भागवत सुने और सायकाल को दीपदान करे।

राजा दृढधन्वा ने वालमीकि ऋषि से दीपदान का माहात्म्य पूछा, इस पर वालमीकि जी ने कहा—प्राचीन काल मे सौभाग्य नगर मे एक चित्रभानु नाम राजा था और चद्रकला नामक उसकी रानी थी। यह राजा धन धान्य सब प्रकार से सुखी था। एक दिन इसके यहाँ अगस्त ऋषि आये और राजा ने अपने पूर्व जन्म का वृत्तात पूछा। मुनि ने

कहा—तुम बड़े दुष्ट मणिग्रीव नाम शूद्र थे और यह रानी तुम्हारी पतिव्रता स्त्री थी। कुकर्म में सब धन खोकर शिकार खेलकर अपनी जीविका करते थे। एक दिन घोर वन में मार्ग भूले हुए उग्रदेव नामक थके ब्राह्मण की तुम लोगों ने बड़ी सेवा किया और उनसे अपना दुःख निवेदन किया। इससे प्रसन्न होकर ऋषि ने पुरुषोत्तम मास में दीपदान करने का उपदेश किया और मणिग्रीव ने वन में इगुदी के तेल से दीपदान किया, जिससे भगवान ने प्रसन्न होकर तुमको वरदान दिया और इस जन्म में तुमको सब सुख मिले।

दीपदान का माहात्म्य सुनकर दृढधन्वा ने पुरुषोत्तम के उद्यापन की विधि पूछा। वाल्मीकि जी ने उत्तर दिया कि कृष्णपक्ष की चतुर्दशी वा नौमी वा अष्टमी को उद्यापन करना। तीस सपत्नीक ब्राह्मण को न्यौता देना और पचधान्य का सर्वतोभद्र बनाकर चारो दिशा में चार कलशो पर वासुदेव, सकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध का स्थापन करना। बीच में नित्य पूजित श्री राधिका सहित श्री पुरुषोत्तम का स्थापन करना। एक वैष्णव ब्राह्मण को आचार्य और चार ब्राह्मणो को जप की वरणी देकर चारो दिशा में दीपदान करके चतुर्व्यूह का जप करना और भगवान की पूजा करना। पचरत्न और फल से भगवान को भक्तिपूर्वक अर्घ्य देना।

अर्घ्य मत्र—

> देवदेव नमस्तुभ्यम्पुराणपुरुषोत्तम।
> गृहाणार्घ्यम्मयादत्त राधया सहितो हरे॥
> वन्दे नवघनश्याम द्विभुज मुरलीधरम्।
> पीताम्बरधर देव सराध पुरुषोत्तमम्॥

फिर तिल से श्री राधिका सहित पुरुषोत्तमायनमः स्वाहा इस मत्र से होम करना और तर्पण मार्जन के पीछे भगवान का नीराजन करना।

मत्र

> नीराजयामि देवेशमिन्दीवरदलच्छविम्।
> राधिकारमणप्रेम्णा कोटिकन्दर्प्पसुन्दरम्॥

फिर क्षण भर भगवान का ध्यान करना—

अन्तर्ज्योतिरनन्तरत्नरचिते सिंहासने संस्थितम् ।
वंशीनादविमोहित व्रजवधू वृंदावने सुन्दरम् ।।
ध्यायेद्राधिकया सकौस्तुभमणि प्रद्योतितारस्थलम् ।
राजद्रत्नकिरीटकुण्डलधर प्रत्यग्र पीताम्बरम् ॥

फिर पुष्पांजलि देना और प्रणाम करना । मंत्र—

नौमि नव्यघनश्याम पीतवाससमच्युतम् ।
श्रीवत्सभासितोरस्क राधिकासहितं हरिम् ॥

फिर ब्रह्मा को पूर्णपात्र दान करके गोदान करना और घृतपात्र, तिलपात्र, उमा महेश्वर, सोहागपिटारी, वस्त्र, पद इत्यादि दान करना और जो श्रीमद्भागवत् करे तो बड़ा ही पुण्य है । पुरुषोत्तम मास में श्री भागवत दान की समता अन्य दान नहीं कर सकते ।

और तीस कांसे की थाली में तीस तीस पूआ रखकर ब्राह्मणों को दान देना । और भी अन्न दानादि जो बन पड़े वह देना । अमावस्या की रात को जागरण करके सबेरे पूजा पीठ और सोने की मूर्त्ति दान देना । मंत्र—

श्रीकृष्ण जगदाधार जगदानन्ददायक ।
ऐहिकामुष्मिकान्कामान् निखिलान् पूरयाशु मे ।। १ ॥
मंत्रहीनम् क्रियाहीनम् विधिहीनम् जनार्दन ।
व्रत सम्पूर्णता यातु त्वत्प्रसादाद्दयानिधे ॥ २ ॥

फिर जो वस्तु का त्याग किया हो, उसका यथाक्रम दान करना । यथा—नक्त व्रत में भोजन, अयाचित में स्वर्णदान, धात्री स्नान में दधि, फल न खाया होय तो फल, तेल छोड़ा होय तो घी, घी छोड़ा होय तो दूध, अन्न छोड़ा होय तो अन्न, भूमि-शयन लिया होय तो सेज, पत्र भोजन किया होय तो घी-चीनी, मौन लिया होय तो घण्टा, तिल और सोना । क्षौर न बनवाया हो तो दर्पण, जूता छोड़ा होय तो जूता, नमक छोड़ा होय तो घी, गुड़, तेल और नमक, दीपदान का नेम लिया होय तो तॉबे का दिया और सोने की बत्ती और एकान्तर उपवास किया होय तो वस्त्र सहित आठ कुंभ दान करे। पुरुषोत्तम मास में एक अन्न भोजन करने का बड़ा पुण्य है ।

वाल्मीकि जी से पूर्व जन्म का वृत्तात और पुरुषोत्तम-माहात्म्य सुनकर राजा स्त्री सहित वन मे जाकर तपस्या करके अत मे गोलोक मे गया।

नारायण नारद जी से कहते हैं कि कदर्प नामक ब्राह्मण बडा पापी था, जन्म भर मे केवल एक वैश्य को पुरुषोत्तम की पूजा करते दर्शन किया था और कोई पुण्य नहीं किया था। इसी पाप से एक जन्म मे प्रेत और दूसरे मे वह बदर हुआ परंतु पुरुषोत्तम के पूजा के पुण्य से इन्द्रनिर्मित मृगतीर्थ पर उसका निवास हुआ और किसी समय पुरुषोत्तम मास मे एक बेर उसने दु:खित होकर तीन दिन तक कुछ न खाया, न पीया और उसी तीर्थ पर प्राण त्याग किया और पुरुषोत्तम के प्रभाव से अत मे गोलोक गया।

नारद जी के प्रश्न पर श्रीनारायण दिनचर्य्या कहते हैं।

प्रात काल की क्रिया समाप्त करके पचभूत देव पितृ बलि देकर अतिथि को भोजन कराकर दो वस्त्र से अकेले एक पात्र मे पूर्वा पर आचमन सयुक्त भोजन करना। भोजन के पीछे पान खाकर भगवान के ध्यानपूर्वक भक्तिशास्त्र का विचार करना। तीसरे पहर धर्माविरुद्ध व्यवहार करना। साँझ को तीर्थ पर देहशुद्धि पूर्वक सध्या करके दीपदान करके भगवान का स्मरण करके शयन करना।

इसके पीछे नारायण ने पतिव्रता के धर्म और पुरुषोत्तम की विशेष महिमा कहा। और विधान किया कि—मत्र—

गोवर्धनधरम् वन्दे गोपालम् गोपरूपिणम् ।
गोकुलोत्सवमीशानम् गोविन्दम् गोपिकाप्रियम् ॥ १ ॥

इस मत्र का पुरुषोत्तम मास मे बारंबार जप करना।

दोहा—श्री पुरुषोत्तम पद सुमिरि, धारि हृदय आनन्द।
यह पुरुषोत्तम विधि लिखी, कविवर श्री हरिचद ॥ १ ॥
प्रेम पियारे प्रेमनिधि, प्रेमिन-जीवन-प्रान।
तिनके पद अरपन कियो, यह मलमास-विधान ॥ २ ॥

इति श्री बृहन्नारदीय पुराण से सगृहीत पुरुषोत्तम
माहात्म्य समाप्त हुआ।

भक्तिसूत्र वैजयन्ती

अर्थात

श्रीशांडिल्य ऋषि के भक्ति के सौ सूत्रों पर

भाषा भाष्य

सं० १९३०

हरिश्चन्द्र मैगर्जीन ख० १ पृ० ५-८,
३०-२, ८३-४ तथा ९८-१०२ पर
सन् १८७४ ई० में मूल तथा
अर्थ सहित छपा ।

प्राणप्यारे!

देखो, आज वसत पचमी है, इस से बहुत लोग आम के मौर वा फूलों के गुच्छे लेकर तुमको मिलने आवैंगे तो मैं भी यह एक फूलो की वैजयन्ती माला बनाकर लाया हूं, अगीकार करो, वैजयन्ती माला बनाने का यह हेतु है कि वनमाला होगी तो होली के खेल मे अरुझैगी और इसके सिवाय इस वैजयन्ती से निश्चय करके ज्ञानादिक को जय करना है, पर प्यारे! बहुत सम्हल कर यह माला पहरना, टूट न जाय, क्योंकि सूत कच्चा है और कलियाँ ताजी और कोमल हैं, इससे कुम्हिलाने का भी भय है, जो हो, इस वसत पंचमी को त्यौहारी मुझे यही दो कि इस सत्यानाशी 'अह ब्रह्मवाद' को पूर्णरूप से नाश करके और भी सब बातो मे इस नव वसत में भारतवर्ष की सब आपत्तियो का बस अत करो और अपने भक्तो के चित्त मे प्रेम के नव पल्लव फिर से लहलहे करो, जो सदा एकरस रहै।

माघ शु० ५ स० १९३०
कार्शी

तुम्हारा हरिश्चन्द्र

भक्तिसूत्र वैजयन्ती

शाण्डिल्य–शतसूत्री भाषाभाष्य-सहित

ॐ नमश्शाण्डिल्याय तन्मतप्रवर्त्तकाचार्य्येभ्यः

श्रीवल्लभेभ्यश्च नम.

—❀—

जेहि लहि फिर कछु लहन की, आस न चित मे होय।
जयति जगत पावन करन, प्रेम बरन यह दोय॥

ॐ अथातो भक्तिजिज्ञासा ॥ १ ॥

जीवो को कर्म ज्ञानादिक अनेक साधनो से खिन्न होकर भी शाति न पाते देख कर भगवान् शाडिल्य ने भक्तिशास्त्र प्रकट करने की इच्छा से यह भक्ति के सौ सूत्र कहते हुए इस प्रेममार्ग को प्रवर्त्त किया। इस मे पहिले पूर्वोक्त सूत्र कहा। अब भक्ति की जिज्ञासा अर्थात् विचार आरभ करते है ॥ १ ॥ यद्यपि ज्ञान-कर्मादिको की भाँति भक्ति भी स्वसाध्य नहीं है तथापि जो भक्ति मार्ग पर प्रवर्त्त होते हैं उनको भगवान भक्ति देता है इस आशा से भक्ति-मीमासा आरभ करते हैं।

सा परानुरक्तिरीश्वरे ॥ २ ॥

जो भक्ति ईश्वर मे पूरे अनुराग को कहते हैं ॥ २ ॥ यहाँ परा शब्द कामनाओ की निवृत्ति के हेतु और अनुरक्ति शब्द हृदय के सच्चे प्रेम के अर्थ दिया है और ईश्वर शब्द माहात्म्य ज्ञान के हेतु है, जैसा श्रीगोपीजन को।

तत्संस्थस्यामृतत्वोपदेशात् ॥ ३ ॥

क्योंकि उसमे जो चित्त लगता है वह अमृत फल पाता है, यह महात्माओं ने कहा है ॥ ३ ॥

ज्ञानमितिचेन्न द्विषतोऽपि ज्ञानस्य तदसंस्थिते. ॥ ४ ॥

वह भक्ति ईश्वर विषयक ज्ञान मात्र है यह सदेह मत करो क्योंकि ज्ञान तो द्वेषियो को भी होता है पर उस ज्ञान से प्रीति नहीं होती ॥४॥ जैसे कोई किसी मनुष्य का जानता है कि वह अमुक है और उस को अमुक अधिकार है पर इतना जानने ही मे उस मनुष्य की उस मे प्रीति हो यह नियम नहीं।

तयोपक्षयाच्च ॥ ५ ॥

क्योंकि पूरी भक्ति से ज्ञान का क्षय होता है ॥ ५ ॥ जैसे श्रीगोपीजन को माहात्म्य ज्ञान पूर्ण था तथापि प्रियतम, कितव इत्यादि नाम से भगवान को पुकारती थीं। अथवा भक्ति से ज्ञान अर्थात् मुक्ति वासना क्षय हो जाती है। जैसा आपने श्रीमुख से कहा है कि यद्यपि मैं चारो प्रकार की मुक्ति देता हूँ तथापि मेरे भक्त मेरी सेवा छोड़ कर नहीं लेते।

द्वेषप्रतिपक्षभावाद्रसशब्दाच्च रागः ॥ ६ ॥

द्वेष से प्रतिकूल होने से और रस शब्द प्रतिपाद्य होने से उस भक्ति का नाम अनुराग है ॥ ६ ॥ क्योंकि स्नेह और विरोध दो वस्तु अलग हैं। और भी किसी के द्वेषी से विरोध वही करेगा जिसका उसमे पूर्ण अनुराग होगा और ज्ञान मे यह बात नहीं क्योंकि स्वरूपज्ञान द्वेषियो को भी होता ही है और रस परम आनद रूप है। वह रस जिसको पाकर मनुष्य आनदी होता है वह भक्ति स्वरूप ही है (इस कहने से पूजाविडवन को उपेक्षा किया)। चकार से अश्रुपात, रोमाच और वाणीस्तभादिक भक्ति का स्वरूप कहा।

न क्रियाकृत्यनपेक्षणाज्ज्ञानवत् ॥ ७ ॥

और वह भक्ति ज्ञान की भाँति कृपा करनेवाले के आधीन नहीं है ॥ ७ ॥ अर्थात् भक्ति अपने साधन की नहीं है केवल उसकी कृपा से मिलती है इस से भक्ति की बहुमूल्यता दिखाई।

अतएव फलानन्त्यम् ॥ ८ ॥

इसी से इस के फलो का अंत नहीं है ॥ ८ ॥ क्योंकि मनुष्य के सब साधन क्षीयमाण और ईश्वर की कृपा अक्षया है।

तद्वत प्रपत्तिशब्दाच्च नज्ञानमितरप्रपत्तिवत् ॥ ९ ॥

क्योंकि ज्ञान वालोको शरणागत है और विना ज्ञान भी इतर प्रपत्ति होती है ॥ ९ ॥ क्योंकि श्रीमुख से कहा है कि बहुत जन्मो के पीछे ज्ञानी मेरे शरण आता है तो इसमे ज्ञान का साधन भक्ति फलरूप है यह प्रगट किया और बिना ज्ञान भी भक्ति मिलती है इस से उसकी विशेषता दिखाई।

इति प्रथमाह्निक।

सा मुख्येतरापेक्षितत्वात् ॥ १० ॥

सो भक्ति मुख्य है क्योंकि इतर ज्ञान योगादिको मे भी इसकी अपेक्षा रहती है ॥ १० ॥ तो इस से कोरे ज्ञान से मोक्ष मिलता है इसका खडन किया, क्योंकि जब भक्ति की उसमें अपेक्षा रही तो वह स्वतः मुक्तिदाता न ठहरा इस से भक्ति ही मुख्य ठहरी।

प्रकरणाच्च ॥ ११ ॥

प्रकरण से भी ॥ ११ ॥ अर्थात् भक्ति अगी है और ज्ञानादिक अग हैं तो काम पूरा कोई अग विशेष नहीं कर सकता और अग अगी के आधीन है, इस से भक्ति ही अमृत देनेवाली है। ज्ञान उस का साधन मात्र है।

दर्शनफलमिति चेन्न, तेन व्यवधानात् ॥ १२ ॥

दर्शन मात्र फल रूप है यह नहीं, क्योंकि उस से व्यवधान है ॥१२॥ अर्थात् ज्ञान मात्र ही फल है यह नहीं है क्योंकि छांदोग्य श्रुति मे पहिले ज्ञानियो का नाम लेकर फिर कहा है कि वह अर्थात् भक्तिमान् स्वराड्

होता है तो पहिले ज्ञान को गौण करके भक्ति की मुख्यता वेद ने कही, इस से भक्ति ही परम साधन है।

दृष्टत्वाच्च ॥ १३ ॥

और ऐसा ही देखा भी जाता है ॥ १३ ॥ क्योंकि यदि किसी स्त्री पर कोई मनुष्य रीझकर प्रीत करैगा तो पहिले जब वह जानेगा कि यह स्त्री सुदर है तब प्रीति करैगा। प्रीति करके न जानेगा अर्थात् जानने का फल प्रीति है, प्रीति का फल जानना नहीं है। इससे अनेक मत जो ईश्वर-विषयक ज्ञान मात्र ही को परम पुरुषार्थ कहते है, इसका निराकरण किया।

अतएव तदभावाद्वल्लवीना ॥ १४ ॥

इसी से व्रज के श्रीगोपीजनो का विज्ञान के बिना भी मुक्ति पाना प्रत्यक्ष है ॥ १४ ॥ इस मत्र से भक्ति की परम श्रेष्ठता दिखलाई क्योकि श्रीगोपीजन को यद्यपि ब्रह्मविषयक कुछ भी ज्ञान न था तथापि जो गति केवल प्रेम से श्री गोपीजन को मिली सो किसी को न मिली।

भक्त्या जानातीति चेन्नाभिज्ञप्त्या साहाय्यात् ॥ १५ ॥

जो कहो भक्ति से ज्ञान होता है सो नहीं, क्योकि ज्ञान तो भक्ति का सहायक है ॥ १५ ॥ क्योंकि जब मनुष्य को ईश्वर-विषयक माहात्म्यज्ञान होगा तभी भक्ति मे प्रवृत्ति होगी।

प्रागुक्तंच ॥ १६ ॥

पहिले कहा भी है ॥ १६ ॥ अर्थात् श्री गीताजी मे अठारहवे अध्याय के चौवन श्लोक मे आप ने श्रीमुख से कहा है कि ब्रह्म भाव पाकर प्रसन्न आत्मा न कुछ सोचता है न कुछ कहता है, सब लोगो को समान दृष्टि से देखता हुआ मेरी भक्ति पाता है।

एतेन विकल्पोऽपि प्रत्युक्तः ॥ १७ ॥

इस से विकल्प भी निरस्त हुआ ॥ १७ ॥ अर्थात् ज्ञान के अगत्व निर्णय मे जो कुछ संदेह था वह ऊपर के भगवत् वाक्य से मिट गया और भक्ति का अगित्व निश्चय हुआ।

देवभक्तिरितरस्मिन् साहचर्य्यात् ॥ १८ ॥

ईश्वर के अतिरिक्त देवताओ की भक्ति भी उस परा भक्ति के समान

नहीं, क्योंकि जगत में उसके समान और भी भक्तियाँ है ॥ १८ ॥ जैसा लिखा है, जैसी देवता मे भक्ति करनी वैसी गुरु मे करनी तो इस सूत्र से अनन्य भक्ति स्थापन किया ।

योगस्तूभयार्थमपेक्षणात् प्रयाजवत् ॥ १९ ॥

और योग तो वाजपेय यज्ञ मे प्रयाज की भाँति भक्ति और ज्ञान दोनो का अंग है ॥ १९ ॥ इससे योग की अंगागता दिखलायी ।

गौण्या तु समाधिसिद्धिः ॥ २० ॥

गौणी भक्ति से तो समाधि की सिद्धि होती है ॥ २० ॥ इस से परा भक्ति की अपेक्षा इसकी महागौणता सिद्ध हुई ।

हेयारागत्वादिति चेन्नोत्तमास्पदत्वात् सङ्गवत् ॥ २१ ॥

भक्ति राग है इससे (राग का कोई ऋषि दुःख-स्वरूप मानते हैं यह समझकर) त्याग करने के योग्य है, यह नहीं क्योंकि इसका आश्रय उत्तम है संग की भाँति ॥ २१ ॥ जैसा साधारण स्त्री-पुरुष के अनुराग मे परस्पर वियोग का और संयोग छूट जाने का दुख होता है वैसा ईश्वर के अनुराग मे नहीं होता क्योंकि संग दुखदाई है यह नियम नहीं है । सत्संग से अनेक सुख होते हैं वैसे ही ईश्वर का अनुराग परम सुख-स्वरूप है ॥

तदेव कर्मिज्ञानियोगिभ्य आधिक्यशब्दात् ॥ २२ ॥

इससे भक्ति ही मुख्य है क्योंकि कर्मी, ज्ञानी और योगियोसे उसको अधिक कहा है ॥ २२ ॥ श्री गीता जी के छठवे अध्याय के ४६ और ४७ वे श्लोक मे आपने श्रीमुख से कहा है कि तपस्वी, ज्ञानी और कर्मी से योगी अधिक हैं और योगियो मे हमारे भक्त अधिक हैं ।

प्रश्ननिरूपणाभ्यामाधिक्यसिद्धेः ॥ २३ ॥

यह अधिकता प्रश्नोत्तर से सिद्ध है ॥ २३ ॥ श्रीगीता जी मे १२ वे अध्याय मे अर्जुन ने पूछा है कि जो अक्षर की उपासना करते हैं और जो आप की भक्ति करते हैं उन मे मुख्य कौन है । इसके उत्तर में आप ने कहा है कि जो मेरे भक्त हैं वे अधिक हैं । इस से बिना किसी अर्थ-वाद से भक्ति की परमोत्तमता सिद्ध हुई ।

नैव श्रद्धा तु साधारण्यात् ॥ २४ ॥

श्रद्धा ही भक्ति नहीं है क्योंकि उस की साधारणता है। २४ ॥ क्योंकि श्रद्धा कर्मादिकों में भी होती है।

तस्या तत्त्वे चानवस्थानात् ॥ २५ ॥

क्योंकि श्रद्धा में भक्ति तत्व की एकता करने में अनवस्था होती है ॥ २५ ॥ अर्थात् श्रद्धावान् भजन करता है, ऐसा लोग कहते हैं तो यदि श्रद्धा भक्ति एक ही होती तो अंग भाव से प्रयोग न होता।

ब्रह्मकांड तु भक्तौतस्यानुज्ञानाय सामान्यात् ॥ २६ ॥

अतएव भक्ति प्रतिपादन के अर्थ उत्तरकांड की संज्ञा ब्रह्मकांड से ज्ञानकांड की सामान्यता है ॥ २६ ॥ अर्थात् जो ज्ञान की मुख्यता होती तो 'अथातो ब्रह्मजिज्ञासा' यह न कहते। इस से कंठरव से ज्ञान की अपेक्षा भक्ति की उत्तमता सिद्ध किया। इति २ आ० इति १ अध्याय ॥

बुद्धिहेतुप्रवृत्तिराविशुद्धेरवघातवत् ॥ २७ ॥

बुद्धि के हेतुओं की प्रवृत्ति धान कूटने की भाँति विशुद्धि तक है ॥ २७ ॥ बुद्धि अर्थात् ब्रह्म-साक्षात्कार यद्यपि कृत्यनिष्पाद्य नहीं अर्थात् अपने किए हुए उपायों से बाहर है तो भी उस के हेतु श्रवण मननादिकों का अनुष्ठान आवश्यक है जैसे जब तक सब छिलके बराबर न निकल जाँय, धान शुद्ध न होगा।

तदङ्गानाञ्च ॥ २८ ॥

उस के अंगों को भी ॥ २८ ॥ अर्थात् जैसे श्रवण-मननादिक की आवश्यकता है वैसे ही गुरु की सेवा आदि उस के उपायों की भी है।

तामैश्वर्य्यपदां काश्यपः परत्वात् ॥ २९ ॥

उस को काश्यपाचार्य्य ऐश्वर्य्यपदा कहते हैं अलग होने से ॥ २९ ॥ अर्थात् सर्वैश्वर्य्यमय ईश्वर को मान कर उस की सेवा करना यही पुरुषार्थ कहते हैं। इनके मत में जीव और ईश्वर का नित्य भेद प्रगट हुआ।

आत्मैकपरां बादरायणः ॥ ३० ॥

बादरायण आचार्य इस को आत्मपर कहते हैं ॥ ३० ॥ वेदांत सूत्र में व्यास जी का मत है कि आत्मज्ञान ही से सिद्धि मिलती है।

उभयपरा शांडिल्यः शब्दोपपत्तिभ्या ॥ ३१ ॥

शांडिल्याचार्य शब्द और उपपत्ति से उभय पर कहते हैं ॥ ३१ ॥ युक्तियों से और वाक्यों से जीव का ईश्वरांश होना सिद्ध है और ईश्वर में सब सामर्थ्य इत्यादि दिव्यगुण उसकी विलक्षणता भी प्रकाश करते हैं, इससे शांडिल्य दानों मत मानते हैं अर्थात् अपने को ईश्वरांश मान करके भी उसकी उपासना करना।

वैषम्यादसिद्धमितिचेन्नाभिज्ञानवदवैशिष्ट्यात् ॥ ३२ ॥

वैषम्य से असिद्धि होगी ऐसा नहीं है क्योंकि ज्ञान की भाँति अवैशिष्ट्य है ॥ ३२ ॥ अर्थात् जिस रीति 'यह वह है" यह भूत और वर्तमान काल की प्रतीति एक ही समय होती है क्योंकि दोनों काल का विषय (यह और वह शब्दों से प्रतिपाद्य) एक ही है वैसे ही ईश्वर में वैषम्य दोष नहीं आ सकता।

न च क्लिष्टः परः स्यादनन्तरं विशेषात् ॥ ३३ ॥

पर (परमात्मा) को कभी इस वैषम्य से क्लेश नहीं होता क्योंकि (ज्ञान के) अनतर विशेष होता है ॥ ३३ ॥ अर्थात् जीव और ईश्वर में जो विशेषता है वह ज्ञान से प्रतीत होती है।

ऐश्वर्यं तथेति चेन्न स्वाभाव्यात् ॥ ३४ ॥

ऐश्वर्य भी क्लिष्ट नहीं हो सकता क्योंकि वह स्वाभाविक है ॥ ३४ ॥ ईश्वर का ऐश्वर्य कुछ उपाधिभूत वा उपाधिजन्य नहीं किंतु नैसर्गिक है इसी हेतु इसमें भी क्लेश नहीं हो सकता।

अप्रतिषिद्धं परैश्वर्यं तद्भावाच्च नैवमितरेषाम् ॥ ३५ ॥

(ईश्वर का) परमैश्वर्य कहीं भी प्रतिषिद्ध नहीं होता, बरंच उसका नैसर्गिकपन प्रगट होता है, इतरों का (जीवों का) ऐसा नहीं ॥ ३५ ॥ यह शंका न हो कि ईश्वर का जब ऐश्वर्य ऐसा है तो जीवों का भी ऐसा ही होगा। ईश्वर का यह सर्व स्वाभाविक है और जीवों का नहीं।

सर्वानृतेकिमितिचेन्नैवं बुद्ध्यानन्त्यात् ॥ ३६ ॥

सब के बिना (उसका) क्या प्रयोजन है ? ऐसा नहीं क्योंकि बुद्धि का आनन्त्य है ॥३६॥ अर्थात् यदि सब जीव क्रमशः मुक्त होंगे तो ईश्वर का क्या प्रयोजन है तो उसका भी क्यों नहीं लय मानते, ऐसा

कहोगे ता यह असभव है क्योकि बुद्धि का अन्त नहीं हो सकता। इस हेतु यह कल्पना मात्र है और ऐसा कालही नहीं कि जिसमे सब जीव एक बार मुक्त हा जॉय और महाप्रलय मे जो जीव मुक्त होते हैं वे वासना सहित होते हैं।

प्रकृत्यन्तरालादवैकार्यं चित्सत्वेनानुवर्तमानत्वात् ॥३७।

प्रकृत्यन्तराल से और चित्सत्व के अनुवर्तमान हाने से (ईश्वर को) अविकारिता है ॥ ३७ ॥ यदि ईश्वर मे उत्पत्ति कर्तृत्वादि ऐश्वर्य साहजिक है तो यह भी एक प्रकार का विकार हुआ, उसका निवारण करते हैं कि प्रकृति को ईश्वर विकृत करके उत्पत्ति आदि करता है। जैसे मायावी अपनी माया से अन्य वस्तुओ मे विकार कर देता है परतु आप नहीं विकार पाता अर्थात् ईश्वर दुग्ध के कार्य की भॉति विकृत नहीं होता वरच सुवर्ण के विकार की भाँति। और उसमे जीव-सत्व जो वर्तमान रहता है वह माया से परे है।

तत्प्रतिष्ठा गृहपीठवत् ॥३८॥

उसकी प्रतिष्ठा का व्यवहार घर मे पीढ़े पर प्रतिष्ठा की भॉति है ॥ ३८ ॥ अर्थात् प्रकृति के विकार से जगत माया मे प्रतिष्ठित है, यह शका न हो जैसे किसी के घर पीढ़े पर कोई बैठा हो ऐसा कहने मे आवेगा कि अमुक पीढ़े पर बैठा है पर वास्तव मे वह पीढा और मनुष्य दोनो घर मे है, वैसेही माया और ससार दोनो ईश्वर में हैं।

मिथोपेक्षणादुभय ॥ ३९ ॥

परस्पर की अपेक्षा से दोनो कारण हैं ॥ ३९ ॥ अर्थात् ससार की उत्पत्ति मे माया और ईश्वर दोनोही आवश्यक हैं।

चेत्याचितोर्न तृतीयं ॥ ४० ॥

प्रकृति और ब्रह्म मे भेद नहीं है ॥ ४० ॥ अर्थात् इन मे तृतीय भाव नहीं है दोनो एक हैं। इससे प्रकृति स्वतत्र कोई अलग है, इसका निषेध किया।

युक्तौ च सपरायात् ॥ ४१ ॥

वियोग के पूर्व दोनो एक हैं ॥ ४१ ॥ अर्थात् सृष्टि होने के समय ब्रह्म और प्रकृति अलग अलग होते हैं परंतु जडाजड़ के भेद से नित्य मे इनका अनन्य सबंध है।

शक्तित्वान्नानृत वेद्य ॥ ४२ ॥

शक्ति के कार्य होने से यह जगत मिथ्या नहीं है ॥ ४२ ॥ अर्थात् जगत माया का कार्य है तो उसकी शक्ति भी सत्य है। प्रकृति केवल जड़मात्र तो है पर मिथ्या नहीं।

तत्परिशुद्धिश्च गम्या लोकवल्लिङ्गेभ्यः ॥ ४३ ॥

उस (भक्ति) परिशुद्धि लोक के (प्रेम के) चिन्हो से जानना ॥४३॥ अर्थात् अश्रु, रोमाच, गद्‌गद् इत्यादि स्थायी भावो से किसको कितना प्रेम है यह प्रगट होता है।

सम्मान बहुमान प्रीति विरहेतरविचिकित्सा महिमख्याति तदर्थप्राणस्थान तदीयतासर्वतद्भावाप्रातिकूल्यादीनि च स्मरणेभ्यो बाहुल्यात् ॥ ४४ ॥

सम्मान, बहुमान, प्रीति, विरह, इतरविचिकित्सा अर्थात् आग्रह पूर्वक दूसरे की अनपेक्षा, महिमा का कथन, प्रियतमही के हेतु प्राण-रक्षण, तदीयता सब उसके भावो से देखना, अप्रातिकूल्य अर्थात् अनुकूलता इत्यादि प्रीति के लक्षण है ॥ ४४ ॥

सम्मान जैसा अर्जुन का, बहुमान इक्ष्वाकु का कि भगवान के नाम वा वर्णों से जिन वस्तुओं से सबंध था उनका भी आदर करता था, प्रीति विदुर की, विरह श्रीगोपीजन का, इतरविचिकित्सा उपमन्यु की और श्वेतद्वीपवासी की तथा चित्रकेतु की, महिमख्याति यम, भीष्म और व्यास की तदर्थ प्राणस्थिति व्रज के लोग तथा हनुमान जी की, तदीयता बलि की और उपरिचर वसु की, तद्भाव श्रीप्रह्लाद जी का, अप्रातिकूल्य भीष्म तथा धर्मराज का, आदि शब्द से नारद उद्धवादि भक्तो की प्रीति की चेष्टा और लक्षण जानना।

द्वेषादयस्तु नैव ॥ ४५ ॥

द्वेषादिक से ऐसी नहीं होगी ॥ ४५ ॥ शिशुपाल इत्यादि के प्रकरण मे भक्ति से उन को मुक्ति नहीं हुई किंतु भगवान के महिमा बल से भक्तो को तो द्वेषादिक होते ही नहीं।

तद्वाक्यशेषात् प्रादुर्भावेष्वपि सा ॥ ४६ ॥

उसके वाक्य शेष से अवतारो मे भी वह है ॥ ४६ ॥ मत्स्यादिक अवतारो मे, शिवादि गुण स्वरूपो मे, सकर्षणादि व्यूहो मे तथा आचार्यादि प्रादुर्भावो मे भी परा भक्ति योग्य है।

जन्मकर्मविदश्चाजन्मशब्दात् ॥ ४७ ॥

जन्मकर्मों के जानने की सिद्धि भी आजन्म शब्द से है ॥ ४७ ॥ अर्थात् जो उस के जन्म कर्मों को जानता है वह फिर जन्म नहीं पाता किंतु उसको पाता है। यह श्रीगीता के ४ अध्याय के ६ श्लोक मे कहा है।

तच्च दिव्य स्वशक्तिमात्रोद्भवात् ॥ ४८ ॥

उसके जन्म कर्मादिक दिव्य है क्योकि केवल उसकी शक्तिमात्र से अनेक प्रकार के दिखाई पड़े है ॥ ४८ ॥ यह ६ श्लोक और उसी अध्याय के छठे श्लोक से सिद्ध है।

मुख्य तस्यहिकारुण्य ॥ ४६ ॥

उसके जन्मादिको मे उसी की करुणा मुख्य है ॥ ४६ ॥ अर्थात् ईश्वर बाधित हो के नहीं जन्म लेता केवल अपनी अपार कृपा से जीवो के उद्धार के हेतु अनेक प्रकार के रूप धारण करता है।

प्राणित्वान्नविभूतिषु ॥ ५० ॥

प्राणी होने से ब्राह्मण राजादि भगवद्विभूति मे भक्ति सिद्धि देनेवाली नहीं होती ॥ ५० ॥

द्यूतराजसेवयो. प्रतिषेधात् ॥ ५१ ॥

द्यूत और राजसेवा के निषेध से ॥ ५१ ॥ क्योकि गीता जी मे आपने श्रीमुख से राजा और जूए को विभूति कहा है और शास्त्र मे उसका निषेध है। इससे विभूतियो मे भक्ति नहीं करनी।

वासुदेवेऽपीतिचेन्न आकारमात्रत्वात् ॥ ५२ ॥

श्रीवासुदेव मे भी विभूति की शका नहीं करनी क्योकि वहाॅ तो चीनी की पुतली की भाॅति कर, पाद, मुख, उदर आदि सब आकार आनदमय हैं ॥ ५२ ॥

प्रत्यभिज्ञानाच्च ॥ ५३ ॥

(श्रीगोपालतापनी, महाभारत, श्रीभागवत आदि पुराण तथा वैष्णवनिबधो मे) भगवान की परब्रह्मता ज्ञापित है ॥ ५३ ॥

वृष्णिषुश्रैष्ठ्येनैतत् ॥ ५४ ॥

विभूति मे श्रीवासुदेव का कथन केवल यादवो मे श्रेष्ठता के हेतु है ॥ ५४ ॥

एव प्रसिद्धेषु ॥ ५५ ॥

इसी प्रकार श्रीरामादि प्रसिद्ध भगवदवतारों का भी विभूति में कथन केवल उस प्रकार की विभूति में श्रेष्ठता दिखाने के हेतु है। अर्थात् जो प्रसिद्ध भगवत्स्वरूप हैं उनमें विभूति बुद्धि न करनी ॥ ५५ ॥

दूसरे अध्याय का पहिला आन्हिक समाप्त हुआ

भक्त्या भजनोपसंहाराद्गौण्यापरायैतद्धेतुत्वात् ॥ ५६ ॥

भक्ति से यहाँ गौण भक्ति लेनी क्योंकि उसका अर्थ भजन अर्थात् सेवा है और यह भक्ति परा में हेतु है ॥ ५६ ॥ क्योंकि गौण भक्ति से मुख्य भक्ति के साधन के बाधक दूर होते हैं और परा भक्ति सिद्ध होती है।

रागार्थप्रकीर्तिसाहचर्याच्चेतरेषाम् ॥ ५७ ॥

गीता अ० ९ श्लोक १४ में कीर्त्तन के साथ कहे हुए नमस्कारादि कर्मों का फल केवल राग अर्थात् परा भक्ति है क्योंकि "स्थाने हृषीकेश" इस श्लोक में कीर्त्तन का फल अनुराग कहा है और पूर्वोक्त १४ श्लोक में कीर्त्तन के साथ नमनादिक का कथन है इससे नमनादिक का भी वही फल है ॥ ५७ ॥

अन्तराले तु शेषाः स्युरुपास्यादौ च काण्डत्वात् ॥ ५८ ॥

गीता जी के ९ अध्याय में १३ श्लोक से २९ श्लोक तक और जितनी भक्तियाँ कही हैं वह बीच की हैं क्योंकि उपासनादि परा भक्ति की साधक हैं ॥ ५८ ॥

ताभ्यः पावित्र्यमुपक्रमात् ॥ ५९ ॥

इन गौणी भक्तियों से पवित्रता अर्थात् मन की शुद्धता होती है क्योंकि उसी अध्याय के दूसरे श्लोक में इनको पवित्र कहा है ॥ ५९ ॥

तासु प्रधानयोगात् फलाधिक्यमेके ॥ ६० ॥

कोई कोई आचार्य कहते हैं कि इन गौण भक्तियों ही में प्रधानता के कारण फल अधिक है ॥ ६० ॥

नाम्नेति जैमिनिः सम्भवात् ॥ ६१ ॥

जैमिनि आचार्य का मत है कि उन को मुख्यता नहीं है, यहाँ उनका नाममात्र कथन है ॥ ६१ ॥ अर्थात् पूर्वोक्त श्रीगीता जी के

श्लोको मे उनका मुख्यता करके नही कथन है वरच गिनती मात्र गिनायी है।

अत्राङ्गप्रयोगाना यथाकालसम्भवो गृहादिवत् ॥ ६२ ॥

यहाँ अग के प्रयोगो का घर के अगो की भाँति यथाकाल सभव है ॥ ६२ ॥ अर्थात् जैसे घर मे पहिले नेव तब द्वार तब छत इत्यादि अगो का प्रयोग एक के बनने पर यथाकाल होता है वैसे ही परा भक्तियो की साधन अग भक्ति का यथासमय प्रयोग होता है क्योकि पहिले गुण श्रवण करैगा तब श्रद्धा होगी तब भजैगा, सेवैगा इत्यादि अनेक भक्तियो के पीछे परा भक्ति पावेगा।

ईश्वरतुष्टेरेकोपि बली ॥ ६३ ॥

ईश्वर की तुष्टि के हेतु एक साधन करने वाला भी बली है ॥ ६३ ॥ अर्थात् भजन वा कीर्त्तन कोई एक साधन भी दृढ करके जो करैगा तो उसकी उस एक साधन पर दृढता ईश्वर के तुष्टि की कारण होगी अर्थात् परा भक्ति की कारण होगा क्योकि परा भक्ति स्वसाध्या नहीं है केवल ईश्वर के प्रसन्न होने से मिलती है।

अबन्धोऽर्पणस्य मुखम् ॥ ६४ ॥

अर्पण का सुख अबध है ॥ ६४ ॥ भगवान मे शुभाशुभ कर्मो का अर्पण अबध का द्वार है। यह कीर्त्तनादिक गौणी भक्तियो के अतिरिक्त परा भक्ति सिद्धि का उपायांतर कहते है क्योकि यज्ञादिक मे से बहुत काल मे अनेक लोकप्राप्ति द्वारा क्रमशः ईश्वर-लोक-प्राप्ति के कष्ट-निवारण के हेतु सब कर्मो का समर्पण सहज उपाय है।

ध्याननियमस्तु दृष्टसौकर्यात् ॥ ६५ ॥

जिस का दर्शन अपने नेत्रो को जॅचे उसी भाव से चितन करना यही ध्यान का नियम है ॥ ६५ ॥ भक्ति यदि स्वाभाविक होती है तो उत्तमा होती है क्योकि हठ से की हुई भक्ति चिरकाल मे सिद्ध होती है। इसी हेतु कहते हैं कि भगवान के स्वरूप के ध्यान मे हठ कर के कोई नियम न मानना, जो स्वरूप अपने नेत्रो को स्वभावत. जॅचे उसी का ध्यान करना।

नयाजि पूजायामितरेषानैवम् ॥ ६६ ॥

"यान्तिमद्याजिनोऽपि मा इस वाक्य में यजन शब्द भगवत्पूजन के अर्थ है, इतर यागादिकों के लिये नहीं ॥ ६६ ॥ अर्थात् यज्ञादिक में कामना और हिंसादि अनेक दोष है, इस से भगवान को यजन किसी और कर्म मार्ग के उपायों से न करना किन्तु केवल भगवत्स्वरूप की सेवा करनी।

पादोदक तु पाद्यमव्याप्ते ॥ ६७ ॥

भगवन्मूर्तियों के स्नान का जल ही पादोदक है, अव्याप्ति से ॥ ६७॥ अर्थात् साक्षाद्भगवान वा अन्य किसी अवतार के चरण का जल ही चरणामृत है, यह हठ न करना क्योंकि इस समय उसकी प्राप्ति कहाँ और पादोदक मे चरण ही की मुख्यता न माननी क्योंकि श्रीशालिग्राम का स्नानजल भी पादोदक कहावेगा।

स्वयमर्पित ग्राह्यमाविशेषात् ॥ ६८ ॥

अपनी समर्पण की हुई वस्तु को आप लेना, क्योंकि विशेषता नहीं है ॥ ६८ ॥ अपना समर्पण की हुई वस्तु है, इस भ्रम से प्रसाद लेने में सकोच न करना क्योंकि वैष्णवों को भगवत्प्रसाद लेने की आज्ञा है और उस समर्पण करने वाले में कोई विशेष नहीं अर्थात् वह भी वैष्णवान्तः पाती है।

निमित्तगुणान्यदपेक्षणादपराधेषु व्यवस्था ॥ ६९ ॥

निमित्त, गुण और अनपेक्षा से अपराधों की व्यवस्था है ॥ ६९ ॥ भगवत्सेवा में जा बत्तीस अपराध कहे है वे तीन भाँति के हैं, एक तो वे कि जैसे किसी कारण से हो जाँय, दूसरे वे जिनके करने का नित्य स्वभाव है और तीसरे वे जो भूले से हो। इन तीनो की व्यवस्था अलग है जैसे अनिच्छापराध से निमित्तापराध और निमित्तापराध से नित्यापराध बढकर है।

पत्रादेर्दानमन्यथाहि वैशिष्ट्यम् ॥ ७० ॥

पत्रपुष्पादि का दान सर्व समान (समान फल रूप) है ॥ ७० ॥ क्योंकि भगवान को पत्र का दान और स्वर्ण कोटि का दान दोनो समान संतोष करने वाला है।

सुकृतत्त्वात्परहेतुश्च भावाच्च क्रियासु श्रेयस्यः ॥ ७१ ॥

ये भक्तियाँ पराभक्ति की कारण और पुण्यरूप हैं इससे सब क्रियाओं मे श्रेयस्कर हैं ॥ ७१ ॥

गौण त्रैविध्यमितरेण स्तुत्यर्थत्वात् साहचर्य्यम् ॥ ७२ ॥

(गीताजी के अ० ७ श्लो० ६ मे आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी और ज्ञानी चारो प्रकार के भक्त कहे है, उन चारो की समता नहीं) गौणी भक्ति उसमे तीन ही हैं और स्तुति के अर्थ इनको ज्ञानी की भक्ति के साथ लिखा है ॥ ७२ ॥ क्योकि आर्त की भक्ति अपनी विपत्ति मिटाने के हेतु है, जिज्ञासु की जानने के हेतु और अर्थार्थी की भकित अपने काम के हेतु है और ज्ञानी की भक्ति केवल प्रेम मे है ।

बहिरन्तरस्थमुभयमवेष्टिसववत् ॥ ७३ ॥

(यद्यपि कीर्तनादिक भक्तियाँ परा भक्ति की अंग हैं परतु यदि कीर्तनादि किसी मे विशेप रुचि होय तो उस भक्ति मे उस भक्ति की मुख्यता होगी क्योकि) पराभक्ति के भीतर की भक्ति भी कहीं कहीं बाहर अर्थात् स्वतत्र गिनी जाती है । जैसे यज्ञ की अवेष्टि यज्ञ के अतर्गत और बहिर्गत भी है जैसे वाजपेय यज्ञ के अग मे वृहस्पतिसव आजाता है परतु वृहस्पतिसव की विशेप महिमा वेद मे अलग भी लिखी है ॥ ७३ ॥

स्मृतिकीर्त्यो कथादेश्चार्तौ प्रायश्चित्तभावात् ॥ ७४ ॥

कथादिको का स्मरण और कीर्तन आर्त भजन मे प्रायश्चित्त भाव से है ॥ ७४ ॥ अर्थात् आर्तलोग अपने पाप वा आपत्ति मिटाने के हेतु कीर्तनादि करते हैं, इससे यहाँ कीर्तनादि मे विशेषता नहीं है ।

भूयसामननुष्ठितिरितिचेदाप्रयाणमुपसंहारान्महत्स्वपि ॥ ७५ ॥

जो कहो कि भक्ति करने वाले बहुत कर्मो का अनुष्ठान नहीं करते सो नहीं, क्योकि बहुत कर्म करने वालो को भी अत समय इसी का विधान है ॥ ७५ ॥ अर्थात् चाहे कितना ही कर्म करो जब भगवान की भक्ति बिना गति नहीं तो उस भक्ति के बिना बहुत विधिपूर्वक किए हुए भी अनेक कर्म व्यर्थ ही है ।

लघ्वपि भक्ताधिकारे महत्क्षेपकमपरसर्वहानात् ॥ ७६ ॥

(क्योंकि) थोड़ा भी भक्ताधिकार बड़े पापो का नाशक होता है

क्योंकि भगवान की अपने शरणागतो की वा नामस्मरण करने वालो के सर्व पापहानि की प्रतिज्ञा है ॥ ७६ ॥

तत्स्थानत्वादनन्यधर्म खले वालीवत् ॥ ७७ ॥

(क्योंकि) भगवदाश्रय होने से (छोटे भी) भगवद्धर्म अनन्य धर्म ही हैं (और उन से सब बडे पापो का क्षय हो जाता है) जैसा ओखली मे बालो का (अर्थात् ओखली मे कितनी भी बाल पडें सब कुट पिस जॉयगी वैसे ही भगवद्धम से कैसे भी पाप हो सब नाश हो जाते हैं) ।

आनिन्द्ययोन्यधिक्रियते पारम्पर्यात्सामान्यवत् ॥ ७८ ॥

चाडालयोनि को भी भगवद्भक्ति का अधिकार है क्योंकि परपरा से भक्तो का समानता है ॥ ७८ ॥ और गज, गृध्र, बानर इत्यादि मनुष्य छोड कर और योनि के जीवो को भी भक्ति से सिद्धि मिली है तथा एक विशेषता यह भी है कि भारतखड छोड कर खडातर-वासियो को तो केवल भक्ति ही का आश्रय है क्योंकि वे कर्मभूमि नहीं है कि वहॉ के लोग कर्म से सिद्ध हो ।

अतोह्यविपक्वभावानामपि तल्लोके ॥ ७६ ॥

इसी हेतु परा भक्ति मे जो पक्के नहीं हैं वे भी भगवल्लोक मे वास करते हैं ॥ ७६ ॥ अर्थात् ब्राह्मण, शूद्र, चडाल इत्यादि सज्ञा से अपने अपने जाति की पूर्ण क्रिया करो तो भी सिद्धि नहीं, कितना भी पुण्य करो अत में क्षीण होने पर मृत्युलोक मे आना पडता है और भक्ति करने वालो का नाश नहीं । जो पक्के नहीं है वे श्वेतद्वीप मे रह कर भगवद्भक्ति मे पक्क होकर अत मे भगवत्पद पाते है और भक्तो की कर्मवश से उपजी हुई कामनाओं को भी भक्ति अत मे भस्म कर देती है । इसमे जडभरत जी का उपाख्यान प्रमाण है ।

क्रमैकगत्युपपत्तेस्तु ॥ ८० ॥

केवल क्रममात्र से गति तो क्रिया की है ॥ ८० ॥ अर्थात् "बहूना जन्मनामन्ते ज्ञानवान् मा प्रपद्यते", "अनेकजन्मससिद्धस्ततो याति परा गति" इत्यादि वाक्यो मे क्रम से जो सिद्धि पानी कही है वह सुकर्म करने वालो को है । भक्तो को तो एक भक्ति ही से सद्यः गति होती है ।

उत्क्रान्तिस्मृतिवाक्यशेषात् ॥ ८१ ॥

क्योंकि भगवद्वाक्य में भक्तों को एक साथ सब कर्मों का उल्लघन करके सिद्धि मिलना कहा है ॥ ८१ ॥ अर्थात् "सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज" इस वाक्य से भगवान् ने अपने भक्त के अन्य धर्मों की और कर्म प्राप्त उनके गतियों की श्रीमुख से आप ही उपेक्षा की है और ६ अध्याय में अनेक प्रकार के सत्कर्म इत्यादि कह कर भी ३० । ३१ । ३२ । ३३ । ३४ श्लोकों में "हमारा भक्त कैसा भी दुराचारी हो उस को साधु ही समझना" कहा है और अनेक जन्म तथा कर्मादिकों को उल्लघन करके उस की मध्यगति की और उस गति के फिर कभी न नाश होने की "क्षिप्रं शश्वत्" इत्यादि शब्द कथनपूर्वक प्रतिज्ञा की है ।

महापातकिनां त्वार्तौ ॥ ८२ ॥

(जो कहो कि जो बड़े बड़े पापी लोग हैं वे भी कर्म को उल्लघन करके परम पद पावेंगे इस पर कहते हैं कि) महापातकियों की भक्ति तो आर्तों की भक्ति में है ॥ ८२ ॥ अर्थात् पापी लोग अपने पाप की निवृत्ति के हेतु भक्ति करते हैं, उन की भक्ति सहजा नहीं । जिनकी भक्ति सहज है उन के पापों के हेतु तो "अपिचेत्सुदुराचारो" इत्यादि वाक्य जागरूक ही है ।

सैकान्तभावोगीतार्थप्रत्याभिज्ञानात् ॥ ८३ ॥

परा भक्ति ही का नाम एकांत भाव है क्योंकि गीता में ऐसा ही कहा है ॥ ८३ ॥ यथा "अनन्याश्चिन्तयन्तो मां', 'यो मां पश्यति सर्वत्र" ,"मन्मना भव मद्भक्तो", "मत्कर्मकृन्मत्परमोमद्भक्त ", "ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि सन्यस्य मत्पराः", "तमेव शरणं गच्छ", "सर्वधर्मान् परित्यज्य" इत्यादि वाक्यों से और उनके उपक्रमोपसहार से सिद्ध है ।

परां कृत्वैव सर्वेषां तथाह्याह ॥ ८४ ॥

(जो कहो कि गीता जी के वाक्यों की प्रवृत्ति तो ज्ञान, योग, सत्कर्म कीर्तनादि गौणी भक्ति इत्यादि अनेक विषयों पर है इस पर कहते हैं) कि श्रीमद्भगवद्गीता के वाक्यों की प्रवृत्ति तो परा भक्ति ही को मुख्य कर के है ऐसा ही आप ने कहा भी है ॥ ८४ ॥ क्योंकि

जब आप ने "मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ॥ मामेवैष्यसि कौन्तेय प्रतिजाने प्रियोसि मे ॥ सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ॥ अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि माशुचः" ये दो वाक्य साधन, सिद्धा परा भक्ति ही के मुख्यता के हेतु कहे तो उस की श्रेष्ठता के हेतु पहिले आग्रहपूर्वक "सर्वगुह्यतमं भूयः शृणु मे परमं वचः" इससे अगले दोनों वाक्यों की महिमा कही और लोक में भी प्रसिद्ध है कि मनुष्य किसी को उपदेश करे परन्तु अंत में जो निचोड़ कर कहे वही बात मुख्य होती है। परञ्च गीता जी के कहने का तो फल परा भक्ति ही है, यह आप ने "यइदं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति ॥ भक्तिं मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयः" इस वाक्य में कहा है। इस से और "अहं" "त्वा" इन दो पदों के अलग होने से श्रीमद्गीता की प्रवृत्ति केवल भक्ति ही के हेतु है न ज्ञानकर्मादिकों के, यही सिद्ध हुआ।

द्वितीयाध्याय का द्वितीयाह्निक समाप्त हुआ।

—❀—

भजनीयेनाद्वितीयमिदं कृत्स्नस्य तत्स्वरूपत्वात् ॥८५॥

(भक्ति की उत्कर्षता और जीवों के साधन कह कर अब सच्चिदानन्दमय परमेश्वर और उस के सदंश से जगत् और चिदंश से जीव और आनन्दमय श्री विग्रह इनका परस्पर संबंध दिखाते हैं) यह सब ईश्वर स्वरूप ही है इस से भजनीय अर्थात् भगवान् से यह अलग नहीं है ॥ ८५ ॥ इस सूत्र से मिथ्यावाद निरस्त करते हैं क्योंकि मिथ्यावादियों के मत से संसार असत्य है परंतु यहाँ पर सूत्रकार भगवान् शाण्डिल्य मुक्त कंठ से जगत् की सत्यता प्रतिपादन करते हैं और इस जगत् का विस्तार इस प्रकार से है कि सच्चिदानंदमय ईश्वर को जब संसार की इच्छा हुई तो अपने सदंश से जड़ प्रपंच किया और चिदंश से चैतन्य प्रपंच (जीव सृष्टि) किया। जीव में आनन्दांश का तिरोभाव है क्योंकि बहुत काल से आनंदराशि भगवान् से इन का वियोग है। उस वियोग का न इनको स्मरण है न वियोग-

जन्य दुःख है, सो भगवान की कृपा से वा उस के भक्तो की कृपा से उस के वियोग का स्मरण आना ही मानो उस के आनदांश के आविर्भाव का कारण है और इसी से उसके एक अश मे स्थित यह सब नित्य सत्य है।

तच्छक्तिर्माया जडसामान्यात् ॥ ८६ ॥

(मिथ्यावादी का निराकरण कर के अब मायावादी का निराकरण करते हैं) कि माया स्वतत्र कोई वस्त्वतर नहीं है किंतु भगवान् के शक्ति ही का नाम माया है और वह भी जड़ अर्थात् अपनी सहज चैतन्यता शून्य अन्य चिदश के समान है ॥ ८६ ॥ इस से मायावादियो का ईश्वर की माया के फद मे फँसना और शाक्तो का स्वतत्र शक्तिवाद निरस्त हुआ।

व्यापकत्वाद्व्याप्यानाम् ॥ ८७ ॥

(सदश और चिदश मे आनदाश व्याप्त है इस से परस्पर इन मे व्याप्य व्यापक भाव हुए तो अब समार की व्याप्य और ईश्वर की व्यापक सज्ञा हुई ता फिर से उस की सत्यता और शुद्धाद्वैतता दिखाने के हेतु कहते हैं) कि व्यापक के सत्य होने से उसका व्याप्य भी सत्य ही है ॥ ८७ ॥

न प्राणिबुद्धिभ्योऽसभवात् ॥ ८८ ॥

(मायावाद निराकरण करके उस के समान ही नास्तिकवाद का भी निराकरण करते हैं) यह किसी प्राणी की बुद्धि से नहीं बना है, क्योंकि इसकी सूक्ष्मता प्राणियो की बुद्धि के बाहर है इस से यह प्राणियो की बुद्धि से बना है यह बात असभव है ॥ ८८ ॥

निर्मायोच्चावच श्रुतीश्च निर्मिमीते पितृवत् ॥ ८९ ॥

यह सब भूत-समूह बना कर वेदो को बनाता है, पिता की भाँति ॥ ८९ ॥ जैसे पिता पुत्रों को उत्पन्न करके फिर उनको शिक्षा देता है वैसे ही भगवान् अपने एकाश से जीवो को प्रगट करके फिर उन की शिक्षा के हेतु वेद कहता है।

मिश्रोपदेशान्नेति चेन्न स्वल्पत्वात् ॥ ९० ॥

जो कहो कि वेद के उपदेश मिश्र हैं अर्थात् अग्निष्टोमादिक यज्ञ मे

हिंसा का विधान है इस से ये वेद ईश्वर के बनाये नहीं, ऐसा नहीं क्योंकि वह भाग उस मे बहुत ही थोड़ा अर्थात् उपेक्षित है ॥ ६० ॥

फलमस्माद्बादरायणो दृष्टत्वात् ॥ ६१ ॥

(अब कर्मवादियों का मत निराकरण करते हैं) कि ये कर्म स्वतः फलदाता नहीं, फल देनेवाला ईश्वर ही है, यह व्यास जी कहते हैं क्योंकि ऐसा ही देखा भी जाता है ॥ ६१ ॥ जैसे राजा के तोष के हेतु अनेक कर्म करो परंतु उसका प्रतिफल देना राजा ही के अधिकार में है वैसे ही ईश्वर का प्रसन्न होना कर्म के अधीन नहीं कर्म केवल साधक है ।

व्युत्क्रमादप्ययस्तथाहृष्टम् ॥ ६२ ॥

लय उलटा चाल से होता है ऐसा ही देखा गया है ॥ ६२ ॥ जैसे गोरखधंधे की डिबियों को फैलाते जाओ तो कई डिबियाँ हो जाती हैं और जब बंद करो तब सब से छोटी अपनेसे बड़ी डिबिया मे और वह अपने से बड़ी मे इसी प्रकार अंत वाली बड़ी डिबिया मे सब डिबियाँ छिप जाती है वैसे ही जिस क्रम से उत्पत्ति होती है (अर्थात् ब्रह्म से प्रकृति, प्रकृति से महत्तत्व इत्यादि एक से एक उत्पन्न होते हैं) वैसे ही लय होने के समय सब भगवान मे लय पाते है, इस से फिर भी संसार की नित्यता सिद्ध किया ।

तीसरे अध्याय का प्रथमाह्निक समाप्त हुआ ।

तदैक्यं नानात्वैकत्वमुपाधियोगहानादादित्यवत् ॥ ६३ ॥

उसकी एकता है क्योंकि उपाधि के योगो के मिटने से नानात्व का एकत्व हो जाता है आदित्य की भाँति ॥ ६३ ॥ जैसे "ध्येय सदा सवितृमंडलमध्यवर्ती" इत्यादि वाक्यो से भगवान् का स्वरूप और आदित्य-मंडल यह दो पृथक् प्रतीत होते है परन्तु वास्तव पृथक् है नही क्योंकि जब मंडलरूपी उपाधि को भगवान् अपने मे लय कर लेता है तब केवल नारायण संज्ञा रह जाता है वैसे ही जब संसार को अपने मे लय कर के उस के संयोग-वियोगात्मक "संसार" इस नाम को भी अपने में लय कर लेता है तब केवल आपही रह जाता है ।

पृथगिति चेन्न परेणासम्बन्धात्प्रकाशानां ॥ ६४ ॥

अलग कहा सो नहीं, ऐसा कहने से पर अर्थात् भगवान से असबध होगा जैसे प्रकाशो का ॥ ६४ ॥ प्रकाशो का अर्थात् सूर्य मडल की और नारायण की जैसी एकता है वैसे ही भगवान् से इस से एकता है। इन दोनो का सबध नहीं हो सकता।

नविकारिणस्तु करणविकारात् ॥ ६५ ॥

ये आत्मा विकारी नहीं हैं क्योंकि ऐसा मानने से उनके कारण अर्थात् भगवान् को भी विकार मानना पडेगा।

अनन्यभक्त्या तद्बुद्धिर्बुद्धिलयादत्यन्त ॥ ६६ ॥

(भजनीय का और भजन करने वाले का स्वरूप दिखा कर उनके वियोग स्मृति का स्मारक फिर से कहते है) कि उस परमानदमय भगवान् मे अनन्य भक्ति करते करते भृंगी कीट की भाँति तद्बुद्धि हो जाती है और उस बुद्धि के भी लय होने से अर्थात् वियोग जन्य असह्य दु'ख से सब सुध बुध छूट जाने से अत्यंत अर्थात् सब वासनाओं के मोक्ष होने से परमानद अर्थात् आनद मात्र कर पाद-मुखोदरादि भगवान श्रीकृष्णचद्र से नित्य लीला मे सयोग होता है ॥ ६६ ॥

आयुश्चिरमितरेषातुहानिरनास्पदत्वात् ॥ ६७ ॥

(जो कहा, कि सचित प्रारब्ध का भोग तो हुआ ही नही आनंद प्राप्ति कैसे हुई इस पर कहते है) कि साधारण जीवों की आयु ही प्रारब्ध की भोग कराने वाली है परतु भगवद्भक्तो को तो उन सचित प्रारब्धो की आप ही हानि हो जाती है क्योंकि उसकी आश्रय आयु का भोग नहीं रहता ॥ ६७ ॥ अर्थात् जिनको भगवद्वियोग स्मरण मे एक एक क्षण कोटि कोटि कल्प तुल्य असह्य यत्रणा सहते हुए बीतते है वा संयोगलाला स्मरण से एक एक क्षण लाख लाख बरस तक स्वर्ग के सुख भोग के समान बीतते हैं उनके सब भले बुरे प्रारब्ध इस वियोग सयोग के अनुभव मे भस्म हो जाते है।

ससृतिरेषाम भक्तिः स्यान्नाज्ञानात्कारणासिद्धे ॥ ६८ ॥

और जीवो की ससार की कारण अभक्ति है, अज्ञान नहीं, कारण की असिद्धि से ॥ ६८ ॥ अर्थात् ससार के कारण भगवान् मे अभक्ति

ही बधन की हेतु होती है क्योंकि बंध मोक्ष का दाता ही जिस से रूठा रहेगा उसे मोक्ष कहाँ।

त्रीण्येषां नेत्राणि शब्दलिंगाक्षभेदाद्रुद्रवत् ॥ ९९ ॥

(जो कहो कि जीव कैसे जाने इस पर कहते हैं) कि इन जीवों को श्रीमहादेव जी की भाँति तीन नेत्र हैं अर्थात् तीन प्रकार से ये जानै। कुछ तो शब्द अर्थात् वेदादिकों से, कुछ लिंग अर्थात् अनुमान से और कुछ अक्ष अर्थात् प्रत्यक्ष से जाने ॥ ९९ ॥

अविस्तरोभावाविकारा स्यु. क्रियाफलसंयोगात् ॥ १०० ॥

लय और उत्पत्ति क्रियाफल के संयोग से विकार हैं ॥ १०० ॥ अर्थात् वास्तविक निर्विकार भावों में क्रिया फल के संयोग से विकार प्रतीत होता है। भगवत्स्वरूप ज्ञानान्तर भक्ति पाने से मनुष्य वास्तविक स्वरूप जानैगा इस से भक्ति ही मुख्य है ॥ इति ॥

व्याकुल लखि सब जीवगन, ज्ञान करम बहु मानि।
कियो सूत्र शांडिल्य ऋषि, परम भक्ति की खानि ॥ २ ॥
सुमिरि राधिका-प्रानपति, व्रज-जुवती-मन-फन्द।
यह ताको भाषा तिलक, किय तदीय हरिचंद ॥ ३ ॥

शांडिल्य सूत्र और उस का भाषा भाष्य हुआ।

—.*.*.—

अथ पाठांतर

१५ सूत्र, अभिज्ञायाः साहाय्यात् इति श्री उपासना सर्वस्व तथा श्रीकाष्ठजिह्वास्वामिकृत पाठ।

२६ सूत्र, तस्यानुज्ञानाय सामर्थ्यात् इति पूर्वोक्त पाठ।

३० सूत्र, आत्मैकपरां इति पूर्वोक्त पाठ।

३१ सूत्र, उभयपरा इति पूर्वोक्त पाठ।

३२ सूत्र, प्रत्यभिज्ञानवत् इति पूर्वोक्त पाठ।

३४ सूत्र, यहाँ से स्वप्नेश्वर के पाठ से पूर्वोक्त ग्रथों के पाठ से बड़ा भेद है। यथा जन्मकर्मविदश्चाजन्मने शब्दात् ३४ तच्च दिव्य स्वशक्ति मात्रोद्भावात् ३५ मुख्यं तस्य हि कारुण्यं ३६ प्राणित्वान्नविभू-

तिषु ३७ वृनराजसेवयोः प्रतिषेधाच्च ३८ वासुदेवेपीतिचेन्नाकारमात्रत्वात् ३६ प्रत्यभिज्ञानाच्च ४० वृष्णिषु श्रेष्ठेनतत् ४१ एव सिद्धेषु च ४२ भक्त्या भजनोपसंहारात् परार्थे हेतुत्वात् ४३ रागार्थम्प्रकीर्त्तितसाहचर्याच्चेतरेषाम् ४४ अन्तराले चशेषा स्युरुपास्यादौ च काडत्वात् ४५ ताभ्यः पावित्र्यमुपक्रमात् ४६ तासुप्रधानयोगात् फलाधिक्यमेके ४७ नाम्नेति जैमिनि सम्भवात् ४८ अगप्रयोगाणा यथाकाल सम्भवो गृहादिवत् ४६ ईश्वरतुष्टेरेकोपिबली ५० अबन्धोऽर्पणस्य मुखम् ५१ ध्याननियमन्तु दृष्टिसौकर्यात् ५२ उद्यद्धि पूजायाभेव प्रयुक्तः ५३ पादोदकनु पाद्यमव्याप्ते. ५४ स्वयमप्यर्पित ग्राह्यमविशेषात् ५५ निमित्तगुणव्यपेक्षणादपराधेषु व्यवस्था ५६ पत्रादेर्दानमन्यथाहि वैशिष्ट्यम् ५७ सुकृतजत्वात् परहेतुभावाच्च क्रियासु श्रेयस्यः ५८ गौणत्रैविध्यमितरेण स्तुत्यर्थत्वात् साहचर्यम् ५६ बहिरत.स्थमुभयमेवेष्टिसंववत् ६० प्रमादसत्वासत्वाभ्या विशेषात् ६१ स्मृतिकीर्त्यो कथादेश्चार्त्तौ प्रायश्चित्तभावात् ६२ भूयसामननुष्ठितिरिति चेदाप्रायणमुपसहारान्महत्स्वपि ६३ लघ्वपि भक्ताधिकारे महत् क्षेपकमपरसर्वहारात् ६४ तत्स्थानत्वदन्यधर्मा. खले बालीवत् ६५ आनिंद्य यानिर्धिक्रियते पारम्पर्यात् सामान्यवत् ६६ अतोह्यविपक्कभावानामपितल्लोके ६७ क्रमैकगत्युपपत्तेस्तु ६८ उत्क्रान्ति वाक्यशेषात् ६६ महापातकिना त्वार्तौ ७० सैकात भावो गीतार्थ प्रत्यभिज्ञानात् ७१ परा कृत्यैव सर्वेषा तथा ह्याह ७२ भजनीयमद्वितीय मिदम् कृत्स्नस्य तत्स्वरूपत्वात् ७२ तच्छक्तिर्मायजडसामान्यात् ७४ व्यापकत्वात्व्याप्याना ७५ नप्राणिवुद्धिभ्योऽसम्भवात् ७६ निर्मायोच्चावच श्रुतीश्चनिर्मिमीतेपितृवत् ७७ मिश्रोपदेशान्नेतिचेन्न स्वल्पत्वात् ७८ फलमस्माद् बादरायणा दृष्टत्वात् ७६ व्युत्क्रमादप्ययस्तथा दृष्ट ८० तदैक्यं नानात्वमुपाधित. ८१ पृथगेव चेन्न परेनासवधात् ८२ अविकारिणस्तु करणविकारात् ८३ अनन्यभक्त्या तद्बुद्धिलयादत्यन्त ८४ ग्रामादिवत् विशिष्टतया पुमर्थत्वात् ८५ आयुश्चिरमित्यपरेषा तु हानिरनास्पदत्वात् ८६ संसृतिरेषामभक्ते स्यान्नाज्ञानात् कारणासिद्धेः ८७ त्रीण्येषा नेत्राणि शब्दलिंगाक्षभेदाद्रुद्रवत् ८८ आविस्तिरोभावा विकारा॰ क्रियाफलसंयोगात् क्रियाफल सयोगात् ८६ इस क्रम सूत्रो के पाठ ग्रन्थसमाप्ति तक हैं। इति।

अथ उपसंहार ।

हम लोगो के आर्य्यशास्त्रों मे श्रुतियों के पीछे मूल सूत्रों का बडा आदर है। ये सूत्र भिन्न २ ऋषियों ने भिन्न २ शास्त्रों के प्रतिपादन को बनाए है और पीछे उन्हीं पर भाष्य व्याख्या टिपनी टीका बना बना कर लोगों ने उन शास्त्रों को चोडाया है। यथा जैमिनि ने पूर्वमीमांसा, व्यास ने उत्तरमीमासा, गौतम ने न्याय, कणाद ने वैशेषिक, कपिल ने साख्य और पतजलि ने योगसूत्र बनाए हैं। इन्हीं छः शास्त्रों की सञ्ज्ञा षड् दर्शन हैं। इन मे पूर्व मीमासा सब से प्राचीन बोध होता है। इन सूत्रों को छोड़ कर और भी अनेक सूत्र है यथा पाणिनि के व्याकरण के सूत्र, वात्स्यायन के कामसूत्र, वामन और भरत के अलकारशास्त्र पर सूत्र, पिगल के छन्द शास्त्र पर और दूसरे दूसरे ऋषियों के अन्य अन्य शास्त्रों पर। वैसे भक्तिशास्त्र पर शाडिल्य ऋषि के और नारद जी के सूत्र हैं। कहते हैं कि सकर्षणसूत्र और उस का प्राचीन भाष्य उपासना पर आगे प्रचलित था किन्तु अब उस की पुस्तक स्मरण शेष रह गई है।

इस शाडिल्य सूत्र के भाष्यकारों ने सूत्रों के आरंभ करने के पूर्व उपासना रहस्य नामक अथर्ववेद की श्रुति का एक प्रकरण लिखा है। उस का आशय यह है कि ब्रह्मा ने श्रीशिव जी से भक्ति का भेद पूछा है उस पर थोड़े से में शिव जी ने ब्रह्मा से भक्तिस्वरूप कथन किया है। ब्रह्मा जी ने वह रहस्य नारद, वशिष्ठ, असित, देवल और शाडिल्य से कहा है।

इस प्रकार हम आर्य लोगों का मूल शास्त्र वेद त्रिकाड कहलाता है अर्थात् कर्म, ज्ञान और उपासना। पहले शास्त्र जीवों को कर्म का उपदेश करता है, उन कर्मो से शुद्ध अधिकारी जीव को ब्रह्मज्ञान कराता है, फिर जब ज्ञान हो लेता है तो उसको उपासना का उपदेश देता हुआ परम सिद्धि को पहुँचाता है।

आज कल काल के प्रभाव से उपासनाकाड का प्रचार विरल हो गया है इसी हेतु इस सूत्र का भाषा में अर्थ प्रचार किया गया इस से जगत् का परमोपास्य तुष्ट हो, इति।

वैष्णवसर्वस्व

[संप्रदायपरंपरा और स्वल्प पुरावृत्त समेत]

'चतुर्भुजभुजच्छाया समालंबात्सुनिर्भयाः ॥
जयन्ति सम्प्रदायास्ते चत्वारो हरिवल्लभाः ॥'

सं० १९३२-६

श्री हरिश्चन्द्रचन्द्रिका ख० स० १०
सन् १८७९ की अप्रैल सख्या
में उत्तरार्द्ध प्र०, युगुलसर्वस्व
की स० १९२२ की लिखी
भूमिका में उल्लेख

वैष्णवसर्वस्व

(पूर्व्वार्द्ध)

१—क्षर से परे अक्षर ब्रह्म स्वरूप नित्य लीला का गोलोक मे धाम है जहाँ श्रीवृदावन मे श्रीयमुनाजी के निकट अनेक कु जलताओं से वेष्टित एक मणिमय महायोगशिलास्तभ है। उस भूमि का नाम विहार-भूमि और तीर्थों की नाम-मूल स्वरूप योगपीठ शिला से मडित उस कुट्टिम का नाम खेला तीर्थ है, जहाँ वेद वेदांतादि सर्वशास्त्र वेद्य सच्चिदानदघन परमात्मा परमानद-स्वरूप अनेक कोटि नित्यसिद्ध, साधन सिद्ध, भक्त, गोप, गौ और श्री गोपीजनो से वेष्टित उस योग-पीठ पर एकाग्र चित्त से ध्यानावस्थित होकर श्रीव्रजेश्वरी की मानावस्था का ध्यान करते है।

२—एक समय सब देवताओं के पूर्वज, सब विद्याके ईशान, सब भूतो के ईश्वर, चराचर के गुरु, मुमुक्षु-शरण, गुण-ब्रह्मस्वरूप श्री शिवजी उस गोकुल मडप मे गये। वहाँ अनेक प्रकार के गान से भगवान को रिझाया और ससार के उद्धार के हेतु प्रेम-मार्ग का सिद्धात पूछा और भगवान ने प्रेममार्ग का परम गुप्त तत्व और रहस्य सब शिव जी को कहा, जो सुनकर शिव जी ने जगत् के विरुद्ध दिगंबर

के जघा पर पडे। महादेव जी ने यह जान कर कि इस शुक ने हमारा रहस्य सुना, बडा क्रोध किया और उस के मारने को अपना त्रिशूल चलाया और वह शुक वहाँ से भागा और व्यासजी की स्त्री के गर्भ मे छिपा, इससे ब्राह्मणी और स्त्री को अवध्य जान कर शिवजी का त्रिशूल फिर आया और शुकदेव जी ने व्यासजी के घर मे जन्म लिया। तो जो रहस्य शुकदेवजी ने साक्षात् शिवजी से सुने थे वे अपने शिष्य श्री विष्णु स्वामी से कहे, इससे तो ये (शुक) तृतीय हुए। और घर से निकल जाने के पीछे नारदजी से "अहो बकीय स्तनकालकूट" यह श्लोक गाते हुए सुन के भगवान के चरित्र पूछे तब नारदजी ने कहा कि तुम्हारे पिता ये सब चरित्र भली भाँति जानते हैं उन से जाकर पूछो। यह नारदजी का बाक्य सुन शुकदेवजी घर आए और अपने पिता व्यासजी से सब रहस्यतत्व सीखे, इस रीति से ये षष्ठ हुए।

७—श्री विष्णुस्वामी—महाराज युधिष्ठिर के राज्य समय से किंचित कलियुग बीते द्रविड देश मे एक राजा हुआ। उस का मत्री सर्वगुण सपन्न एक ब्राह्मण हुआ, जिस का नाम नारायण भट्ट था। उन के घर मे भाद्रपद कृष्ण भौमवार रोहिणी नक्षत्र दो पहर की समय मे श्रीविष्णु स्वामी का जन्म हुआ। इनका बालपन का नाम माधव भट्ट था। सातवे बरस मे इनके पिता परलोक सिधारे और माता पति के साथ सती हो गई तब श्री विष्णु स्वामी अपने मामा रगनाथ के साथ विद्याभ्यास के हेतु श्री काशी क्षेत्र मे चले। मार्ग मे पढरपुर के राजा मगलसेन की भेट कर के काशी मे आए और सदाशिव नामक ब्राह्मण से विद्याध्ययन किया और जब गुरुदक्षिणा मे गुरु ने यह माँगा कि हम को व्यास सूत्र मे कुछ सदेह है सो व्यासजी के मुख से वह अर्थ सुनाय दीजिये। तब योगबल से श्री विष्णु स्वामी ने एक दिव्यरथ मँगाया। उस पर आप आरूढ होकर अपने गुरु और उन के अनुज हरिहर भट्ट और पुत्र रगनाथ भट्ट को साथ लेकर व्यासजी के आश्रम मे जाकर व्यासजी के मुख से शुद्धाद्वैत मत के अनुसार मायावाद का खडन कर के गुरु को सुनवाया और फिर पृथ्वीपर आकर हरिहर भट्ट रगनाथ को शिष्य किया और सात सै

बरस भगवान की आज्ञा से अपना शरीर रक्खा। परतु यह काशी की यात्रावाला प्रसग सब चरित्र के ग्रथो मे नहीं मिलता, केवल श्री विष्णुस्वामी चरितामृत नामक ग्रथ ही मे मिलता है। सर्व चरित्र सम्मत मत यह है कि श्री विष्णुस्वामी ने घर मे सब विद्या पढी और उनको इस बात का सोच पडा कि हम अब किन गुणो कर के अपने पिता से अधिक होय क्योंकि हमारे राजा से बढ कर इस देश में कोई राजा नहीं और हमारे पिता से बढ कर राजा के घर मे और कोई मानपात्र नहीं तब कुबेर की सेवा करे, तो कुबेर भी इद्र का अनुयायी है और इद्रादिक देवता रुद्र के हैं और रुद्र तो ब्रह्मा का पुत्र है, ब्रह्मा भी नारायण के नाभि मे से निकला है और नारायण भी अनेक मत्स्यादि अवतार बारंबार लिया करते हैं, इस से परतत्र ज्ञान होते हैं इस से उपनिषदो मे सर्वेश्वर जिसको कहा है हम उस की उपासना करेंगे और जो सर्वेश्वर है उसकी सेवा महाराजोपचार से करने योग्य है ऐसा विचार कर के छत्र, चमर, सिंहासन, शय्या, धूप, दीप, भोग, इत्यादि राज सेवा-सामग्री सिद्ध कर के और भगवान का नाम रूपादि न जान कर के सर्वस्वामी के भाव से सेवा करने लगे। ऐसे ही नित्य सेवा करें पर उसको कोई अगीकार न करे। जब ऐसे ही बहुत दिन बीते और उन की सेवा अगीकृत न हुई तब उन्हो ने तो यह प्रण किया कि यदि आज से सर्वेश्वर मेरी सेवा न ग्रहण करेंगे तो मैं भी अन्न ग्रहण न करूँगा और ऐसे ही बिना अन्न जलादि से छः दिन बीत गये तब सातवें दिन नित्य की भाँति भोग धर के प्रतिज्ञा की कि यदि आज भी सेवा का अगीकार न होगा तो हम अग्नि प्रवेश करेंगे। ऐसी इन की बुद्धि की दृढता देख कर श्री मच्छड्गुणैश्वर्य्य भगवान् आविर्भूत हुए और सब सेवा का अगीकार किया। जब स्वामी भीतर गए और वहाँ सच्चिदानद रूप घन साक्षात् परब्रह्म द्विभुज मुरली-भूषित दक्षिण और बाम दोनो भागो मे स्वामिनी समेत को देख कर बोले कि आप यहाँ क्यों आए हैं, आप तो पुराण और तत्रो के प्रतिपाद्य साकार देवता हैं और हम ने तो श्रुतिशिरः प्रतिपाद्य निर्गुण सर्व स्रष्टा सर्वस्वामी की उपासना और सेवा की। यह श्री विष्णु स्वामी का वाक्य सुन भगवान बोले—'यदि हम से बढ़कर कोई ईश्वर है तो उसने तुम्हारी सेवा क्यो

नहीं लिया ? और मैंने यदि चोर भाव से लिया तो उस ने दंड क्यों नहीं दिया ?' तब विष्णुस्वामी ने कहा—'तुम साक्षात् ईश्वर हो, हम तुम्हारे शरणापन्न हैं, अपना माहात्म्य आप स्थापन कर के हमारा संशय दूर करो'। इस पर भगवान ने अनेक युक्ति और प्रमाणों से अपना स्वरूप प्रतिपादन किया तब विष्णुस्वामी ने कहा कि आप स-परिवार यहीं विराजो और मेरी सेवा का अंगीकार नित्य करो। तब आप ने आज्ञा किया कि हमारी मूर्त्ति की प्रेम से सेवा करो हम सब स्वीकार करेंगे और भगवान ने पंचाक्षर मंत्र का उपदेश कर के गीता और श्री भागवत परम शास्त्र है, हमारी सेवा ही मुख्य धर्म है और प्रेम मात्र साधन है यह उपदेश किया और आप अंतर्हित हुए। भगवान के कहे हुए प्रकार से और जैसी मूर्त्ति का स्वामी ने दर्शन किया था वैसी मूर्त्ति निर्मित करा के स्वामी सेवा करने लगे और लोकोपकार के हेतु आपने शिष्य संग्रह भी किया और किसी लेख के मत से आपने विवाह कर प्रतिरोध किया। किसी के मत से आपने विवाह नहीं किया केवल त्रिदंडी सन्यास कर के सतत श्री हरि सेवन किया। जिस का मत "विवाह किया" यह है उसी का यह भी लेख है कि आपने शरीर सात सौ बरस रक्खा और आप को जो पुत्र हुआ उन का नाम श्रीगोपीनाथ था, जिनका उसी लेख के मतानुसार चैत्र कृष्ण १३ धनिष्ठा नक्षत्र प्रथम प्रहर में जन्म हुआ था और २१ पीढ़ी तक वंश भी रहा और हरिहर, रंगनाथ, जयगोविंद, भट्टाचार्य, मोहनलाल, व्यंकटेश, नरहरि, चिंतामणि, सोमगिरि, पद्मावती, कुलशेखर, चंद्रसेन, हरिजीवी, शंकर, गोविंददास, देवजीव, यज्ञनारायण, नरसिंह, लक्ष्मणगिरि, हरिदास, गोविंददास, दयाराम, जीवनराम, मनसाराम, कृष्णदत्त, बोपदेव, केशव, जयदेव, रत्नपाल, दुर्गावती, नामदेव, बिल्वमंगल इत्यादि शिष्यवर्ग स्वामी ही के काल में हुए हैं। वरंच श्री महाप्रभु जी का भी स्वामी ने आप ही उपदेश कर आचार्य पदवी दे भाष्य करने की आज्ञा दी परन्तु यह अप्रमाण है। वास्तव में श्रीगोपीनाथ से ले कर श्री बिल्वमंगल तक सात सै परंपरा-प्राप्त शिष्य हुए और यहाँ जिनका नाम लिखा है वे उन में प्रसिद्ध थे और बहुतों के नाम काल बल से लुप्त हो गए। इसी से यहाँ

पहिले और वर्णन छोड के उस घोर काल का वर्णन किया जाता है, जिस मे वैदिक धर्म प्राय: उच्छिन्न सा हो गया था। भगवान ने बुद्धावतार ले कर बहुत से उपधर्मों का उपदेश करके सारे भारतवर्ष को उस धर्म से परिपूर्ण कर दिया। उस के कुछ काल पीछे एक दिन कैलास के शिखर पर सिद्ध वट के नीचे रत्नवेदि पर व्याघ्रचर्म्म के आसन पर बैठ के श्रीपुरुषोत्तम का ध्यान करते रहे। कुछ काल के बाद भगवान् उनकी समाधि से प्रगट हो कर कहने लगे कि "तुम द्वापरादि युगों मे मनुष्यादि मे अंश से अवतीर्ण हो कर अपने बनाये हुए शास्त्रों मे लोगों को मुझ से विमुख करो और अपना प्रभाव प्रगट करो"। यह सुन शिवजी ने स्वीकारा। अनन्तर अपने को प्रगट करने की संधि देख रहे थे। उसी समय दक्षिण मे द्रविड़ देश मे एक महा शिव-भक्त वृद्ध ब्राह्मण था। उस को कोई संतति नहीं थी, इसलिए वह ब्राह्मण कुछ अनुष्ठान करता था। सो एक दिन आप प्रसन्न हो कर "वर ब्रूहि" यह बोले। यह शिव जी की वाणी सुनते ही ब्राह्मण ने कहा "महाराज! यदि आप प्रसन्न हैं तो मुझे पुत्र मिले"। इस पर शिव बोले "निर्गुण मूर्ख पुत्र चाहोगे तो एक सौ पाँच बरस का मिलेगा और दूसरा सर्व-गुण-सम्पन्न बारह वर्ष का मिलेगा।" इस पर ब्राह्मण बोला 'महाराज! तब तक आप ठहरिये जब तक मैं अपनी स्त्री से इसकी सलाह पूछूं'। महादेव जी का ठहरने का विचार जान के स्त्री से पूछने गया और स्त्री की संमति से शंकर जी से कहा महाराज! सर्वगुणसंपन्न पुत्र मुझे दीजिए। शिवजी ने बहुत अच्छा कह कर अन्य सर्वगुणसंपन्न कोई पुत्र न देखकर स्वयं उसका पुत्र होना स्वीकार किया और गर्भ-काल समाप्त होने पर उस ब्राह्मण के स्त्री से अवतीर्ण हुए। ब्राह्मण ने शिव का प्रसाद जान कर उस पुत्र का नाम शंकर रक्खा और क्रम से उपनयन तक संस्कार किये और साम वेद पढाया। यह जनम से ही महाकवि हुआ, कभी शक्ति, कभी शिव और कभी विष्णु का स्तव करता था, जिस से वे देवता प्रत्यक्ष होकर वर देते थे। अणिमादि सिद्धि तो इस के वश मे थीं। कुछ काल के अनंतर किसी ब्राह्मण के घर मे अवतीर्ण गौरी से यथाविधि विवाह हुआ। गृहस्थाश्रमी होकर त्रैवर्णिक धर्मका अर्जन किया और लक्ष्मी ऐश्वर्य संतति की इच्छा करने वाले

लोगो के लिये उपासना काड प्रसिद्ध किया। सर्वजन मे इसकी कीर्त्ति होने के कारण सब इसके वाक्य पर विश्वास करने लगे। ऐसे एकादश वर्ष व्यतीत हुए तब शकराचार्य ने अपने तात से कहा कि पिता अब कुछ अनिष्ट होगा ऐसा ज्ञात होता है इस लिए मेरी मनीषा काशी मे जाने की है सो आप की आज्ञा चाहता हूँ। यह सुन पिता ने कहा बहुत अच्छा है परन्तु हमको भी काशी को ले चलो। तब शकराचार्य ने अपने मा बाप को शिविका मे बैठाल कर स्त्री समेत काशी मे आगमन किया। काशी मे आते ही शकराचार्य को कालज्वर आया और अपनी अत की वेला जान मणिकर्णिका मे स्नान किया और "निमज्जना नाथ भवार्णवान्तश्चिरान्मया पोतइवासि लब्ध." इस श्लोकार्ध से स्तवन करते करते प्राण त्याग किया।

यह पुत्र का अत देख कर माता पिताने बहुत विलाप किया। अनतर गोरीशभूत शकराचार्य की स्त्री ने अग्रिम आधा श्लोक पढ़ा यथा "त्वयापि लब्धं भगवन्निदानीमनुत्तम पात्रमिद दयायाः." । यह श्लोकार्ध सुनते ही शकराचार्य्य जीवित होकर स्त्री से बोले कि यद्यपि तुमने हमको जीवित किया तथापि हम सन्यास करेंगे। ऐसा कहकर चतुर्विध कुटीचर, बहूदक, हस और परमहसात्मक सन्यास किया। यद्यपि शास्त्र की आज्ञा, यावत् मदिरामत्त के समान ज्ञान से मत्त हुए बिना शिखा सूत्र का त्याग करने के विषय नहीं तथापि इन्हो ने अपना पूर्व श्रीविष्णु का "जनान्मद्विमुखान्कुरु" यह वाक्य स्मरण करके शिखा सूत्रका त्याग किया और काषाय वस्त्र और दड ग्रहण किया। अनतर इनके बहुत से शिष्य भी हुए क्योंकि "यद्यदा चरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरोजन.। सयत्प्रमाण कुरुते लोकस्तदनु वर्तते" । अनतर शकराचार्य ने वही भगवान का वाक्य पूर्ण मनोगत कर के व्याससूत्र का भाष्य मायावाद अर्थात् दैत्य मत के अनुसार किया। कुछ दिन के अनंतर प्राय. इन का मत इस देश मे फैल गया।

उसी समय गुजरात देश मे एक राजा था। उसका पुत्र कुमारपाल नामक था। यह हेम सूरि नाम किसी श्वेताम्बर जैन से पढ़ाया गया था। किसी समय कुमारपाल ने स्वप्न मे राहु से ग्रसा हुआ पूर्ण चद्र देखा और हेमसूरि से इस का फल पूछने को तत्काल आया। स्वप्न

का वृत्त सुनते ही हेमसूरि ने उस की बहुत निंदा की। राजपुत्र हेमसूरि के दुष्ट भाषण सुन घर आया और हेमसूरि को मारने का विचार करते करते शेष रात्रि तक जागा। प्रभात होते ही हेमसूरि ने शिष्य द्वारा राजपुत्र को कहला भेजा कि यह 'स्वप्न बहुत लाभदायक है, आज से सातवें दिन राज्य सर्व तुम्हारे हस्तगत होगा। यदि यह असत्य हो तो हमें दंड देना नहीं हमारी आज्ञा मानना'। राजपुत्र ने हाँ कहा और ऐसा ही हुआ। तब राजपुत्रसे कहकर हेमसूरि ने वैष्णव-शैव-मीमांसक सब को नगर से निकलवा दिया।

उसी काल में सूर्य्यांश देवप्रबोध नामा और जैमिनि के अंश भट्टाचार्य्य नामा पूर्व में दो पंडित हुए। वे लोग जब काशी में आये तब सुना कि गुजरात में जैनों ने वेदमार्ग का नाश किया। ये सुन के वे लोग गुजरात गये और काल पाकर हेमसूर्य्य के विश्वासपात्र शिष्य हुए। एक दिन पद्मावती की अंतरंग आराधना में हेमसूर्य्य ने इन दोनों को मद्य पीने को दिया। देवप्रबोध ने तो मारे डर के पी लिया। भट्टाचार्य्य ने कहा कि थोड़ी देर ठहर के पीयेंगे। अनंतर हेमसूर्य्य ने वेद धर्म की निंदा करना शुरू किया। यह सुन कर भट्टाचार्य्य की आँखों से आँसू गिरने लगा और हेमसूर्य्य ने जाना कि यह कोई छिपा हुआ ब्राह्मण है। हेमसूर्य्य ने उसे अपने ऊपर के कमरे में कैद किया। वहाँ जैनमार्ग की बहुतसी पुस्तकें रक्खी थीं, जिनको पढ़ कर भट्टाचार्य्य ने वह वशीकरण सिद्ध कर लिया जिससे हेमसूर्य ने राजा को वश कर लिया था। उस राजा की एक रानी वैद्यक थी और नित्य शालिग्राम का पूजन करके जल पीती थी। उसका महल भट्टाचार्य्य के बँगले से बहुत निकट था। एक दिन उस रानी ने लंबी साँस लेकर यह आधा श्लोक पढ़ा "किंकरोमि क्व गच्छामि को वेदानुद्धरिष्यति"। यह सुनते ही भट्टाचार्य्य ने उत्तर दिया "माविशीद वरारोहे! भट्टाचार्य्योऽस्तिभूतले" और यह कहके कूद पड़े कि जो वेद प्रमाण हो तो हम न मरें। कहते हैं कि इतने ऊँचे से गिरने से वेद की सत्यता से उनके प्राण तो नहीं गये पर 'जो वेद सत्य हो' इस संदेह के वाक्य कहने से उनकी आँख में चोट आई और वहाँ से निकल कर उस नगर में एकांत में वे छिपे छिपे रहने लगे। एक दिन एक बगीचे में एकांत में एक तुलसी का पेड़ देखा

और वहीं बैठे रहे। जब साँझ हुई तब एक माली आया और तुलसी की पुडिया फूल मे छिपाकर ले चला। भट्टाचार्य्य ने माली मे बहुत हठ पूर्वक रानी का सब वृत्तात जाना और "कि करोमि क्वगच्छामि' यह पूरा श्लोक लिखकर मालीको दिया कि वह रानीको देवे। रानी ने एकांत मे भट्टाचार्य्य को बुलाया और यह जैन बनकर उसके महल मे गए और फिर ब्राह्मण होकर रानी को दर्शन दिया। रानी ने इसकी बडी पूजा किया और दोनो ने मिल कर वेद धर्म के लिए बडा विलाप किया। रानी ने उनको अपने महल मे छिपा कर रक्खा। फिर जैसा वशीकरण का बाजू हेमसूर्य्य ने राजा के हाथ मे पहिनाया था वैसा ही दूसरा बाजू भट्टाचर्य ने बनाकर रानी से राजा के हाथ मे बँधवा दिया और वह बाजू अपने पास मॅगवा लिया। इस अभिचार से राजा को बडा ज्वर आया। राजा ने हेमसूर्य मे ज्वर की निवृत्ति का उपाय पूछा। उस ने कहा कि ब्राह्मण को काल पुरुष दान देने से ज्वर छूटेगा। राजा ने एक ब्राह्मण का लड़का खोज कर जनेऊ पहना कर काल-पुरुष को दान दिया और उससे राजा का ज्वर छूट गया। राजा के चित्त में उसी दिन से ब्राह्मणो का महत्व बढा और ब्राह्मणो को राज्य मे रहने की आज्ञा मिली। उसी समय देवप्रबोधाचार्य्य भी प्रायश्चित्त करके नरसिंह जी से वर पाकर सिद्ध होकर पालकी पर चढ कर बहुत से शिष्यो के साथ उस नगर मे आये। भट्टाचार्य्य इनसे आकर मिले। एक दिन जब ये श्राद्ध करते थे तब हेमसूर्य्य ने अपने मत्र से इनका श्राद्ध नाश करना चाहा और जहाँ पाक होता था वहाँ मद्य बरसाना चाहा। भट्टाचार्य्य ने भी मत्र से नारियल उडाये, जो जैन सिद्धो के सिर पर गिरने लगे, जिससे वे वहाँ से भाग गए। दूसरे दिन सब ब्राह्मण मिल कर राजसभा मे गये। राजा ने प्रणामादि से इनका बडा सत्कार किया। ज्योतिषी ने पचाग सुनाया। स्मार्त्त ने कहा आज अमावस्या है, श्राद्ध करना चाहिये। सुनते ही हेमसूर्य्य ने क्रुद्ध कर कहा कि आज अमावस्या नहीं पूर्णमासी है। अंत मे यह ठहरी जिसकी बात झूठ हो वह अपने मत की पुस्तक समेत पृथ्वी मे गाडा जाय। साँझ का हेमसूर्य्य ने अपनी इष्ट देवता पद्मावती से प्रार्थना करके उसका कुडल चद्रमा के स्थान पर उदय कराया। देवप्रबोध ने नृसिंह जी के प्रसाद से यह

बात जानकर राजा से कहा कि यह कुडल है और इसका प्रकाश केवल बारह कोस तक है। राजा ने उसी समय सवार भेजकर जब वृत्त जाना तब दूसरे दिन हेमसूर्य्य को पुस्तको समेत पृथ्वी मे गाड दिया। जिस समय हेमसूर्य्य गाडा जाता था उस समय बडी भीड हुई और सब लोगोने मिलकर हेमसूर्य्य से पूछा कि 'अब तुम धर्मका सच सच तत्व बताओ' तब यह श्लोक पढकर उसने प्राण त्याग किया–'हरिर्भागीरथी विप्रा'विप्रा, भागीरथी हरिः। भागीरथी हरि विप्राः सारमेक जगत्त्रये"॥ जैनो का बल टूटने से वेद फिर प्रवर्त्त हुये और वैष्णव-शैवमत प्रचार हुआ। भट्टाचार्य्य ने अपना वेदात मत चलाया और पद्मावती को श्राप दिया कि तू मनुष्य हो। वही सरस्वती नाम से भट्टाचार्य्य ही के कन्या हुई और भट्टाचार्य्य ने उसका विवाह ब्रह्मा के अश सुरेश्वराचार्य्य नामक अपने शिष्य से कर दिया। सुरेश्वर अपनी स्त्री को लेकर काशी मे रहने लगे। जिस समय भट्टाचार्य्य शतायु होकर जैन ग्रथ पढने के प्रायश्चित्त मे तुषानल करके जलने लगे, उस समय शकराचार्य्य ने आकर इनका हाथ पकड़ा और कहा कि हम से वाद करो। भट्ट ने कहा तुम काशी जाव वहाँ हमारे जामाता से वाद करना, हम तो अब देह त्याग करते हैं। शकराचार्य्य काशी मे आये और सुरेश्वर की स्त्री को मध्यस्थ कर के वाद आरभ किया। पद्मावती ने पूर्व वैर स्मरण कर के शकराचार्य्य का पक्ष किया। सातयें दिन सुरेश्वराचार्य्य हारे और शकराचार्य्य ने उन्हे सन्यासी किया। शकर दक्षिण मे गोकर्ण शिवक्षेत्र मे आये और चार शिष्यो को आज्ञा दिया कि चार दिशा मे जाकर तुम लोग शिखा सूत्र परित्याग पूर्वक सन्यास मत का प्रचार करो। उन शिष्यो मे मध्व नामक एक ब्राह्मण को भगवान श्री रामचद्रजी ने रात्रि को स्वप्न मे आज्ञा दिया कि तुम तो हनुमान के अश हो और वैष्णव मत फैलाने का तुम्हारा अवतार है, सो उठो और शकराचार्य्य का मत खडन करके हमारे तत्व वाद के अनुसार व्यास सूत्र की व्याख्या कर के वैष्णव मत फैलाओ। मध्वाचार्य्य ने भगवदाज्ञानुसार दूसरे दिन से शकराचार्य्य का मत कठरव से खडन करके वैष्णव मत का प्रचार किया।

विल्वमगल के पीछे और मध्वाचार्य्य के पहले द्रविड देश मे रामानुज नाम एक ब्राह्मण हुये। लक्ष्मी को तप से प्रसन्न करके उनसे वर

माँगा कि हमसे भवगत् सिद्धात कहो। लक्ष्मीजी ने गरुड़ जी को आज्ञा दिया और गरुड जी ने नारायणीय सिद्धात रामानुज से कहा, जिसके अनुसार श्रीरामानुजाचार्य्य ने गीता और सूत्र पर भाष्य करके विशिष्टाद्वैत वैष्णव सप्रदाय ससार मे फैलाया। इसी सप्रदाय मे अगस्त्य और परशुराम के बनाये हरिहरोपासक और लक्ष्मी के उपासक वैष्णव शाखातर में हुए हैं।

इस काल से बहुत पूर्व ही पढरपुर मे व्यास और सूर्य्य के अश से निंबादित्य ब्राह्मण हुये, जिनको श्री विट्ठलनाथ जी ने अपना सिद्धान कहा और उसके अनुसार उन्होंने द्वैताद्वैत मत प्रवर्त्त किया। जैनो के बल से लुप्त सप्रदाय को श्रीनिवासाचार्य्य ने सूत्र और गीता पर भाष्य करके फिर से प्रवर्त्त किया।

यह चारो सप्रदाय अर्थात् विष्णुस्वामी, मध्व, 'रामानुज और निबादित्य की पूर्व व्यवस्था हुई। ये सप्रदाय रुद्र, ब्रह्म, लक्ष्मी और सनकादि के क्रमसे प्रवर्त्त किये हुये वास्तव में एक पर प्रगट अलग-अलग ससार मे प्रसिद्ध हैं।

मध्वाचार्य्य से श्री जगन्नाथजी ने आज्ञा किया था कि 'जो इन चारो सप्रदाय के बाहर है वह हमारा प्यारा नहीं है।'

इन्हीं सप्रदायो के चार उपसप्रदाय हैं—विष्णुस्वामी का उपसप्रदाय चैतन्य, रामानुज का नद, मध्वाचार्य्य का प्रकाश और निबादित्य का स्वरूप। इनमे स्वरूप और प्रकाश की सप्रदाय कालबल से विच्छिन्न हो गई। ये चारो उपसप्रदाय मूल सप्रदाय से अविरुद्ध हैं, केवल आचार्यों के रुचिभेद से नामांतर से प्रसिद्ध हैं।

चतुर्भुजभुजच्छाया व्यवसायातसुनिर्भयाः।
जयन्ति स सम्प्रदायाश्चत्वारो हरिवल्लभाः॥ १॥

(उत्तरार्द्ध)

अथ श्रीविष्णु स्वामी सप्रदाय परंपरा

श्री पुरुषोत्तम, शिव जी, श्री नारद जी, श्री व्यास जी। व्यासजी के दो शिष्य शुकदेवजी और शांडिल्य। शांडिल्य के शिष्य गर्ग और कौडिन्य। शुकदेवजी के शिष्य विष्णुस्वामी। विष्णुस्वामी से क्रम से परमानद मुनि, आनद मुनि, प्रकाश मुनि, श्रीकृष्ण मुनि, नारायण मुनि, जै मुनि, श्रीमुनि, शकरभट्ट, पद्मभट्ट, गोपाल भट्ट, श्रीधर भट्ट, श्याम भट्ट, राम भट्ट, सेतु भट्ट, कृष्ण भट्ट, दिवाकर भट्ट, कृपाल भट्ट, विद्याधर भट्ट, दिनकर भट्ट, मधुनिधान भट्ट, ज्ञान देव भट्ट, शुकदेव भट्ट, शिवदेव, शातिदेव, दयालदेव, क्षमादेव, सन्तोषदेव, धीरजदेव, ध्यानदेव, विज्ञानदेव, महाचार्य्य, तत्वाचार्य्य, नृसिहाचार्य्य, सुवाचार्य्य, सुबुद्धाचार्य्य, प्रबुद्धाचार्य्य, प्रबोधाचार्य्य, असुवाचार्य्य, रुद्राचार्य्य, भगवन्ताचार्य्य, रामेश्वराचार्य्य, ब्रह्मविधिचर्य्याचार्य्य, सुदयाचार्य्य, लक्ष्मनारायणाचार्य्य, ज्ञानदेव, नामदेव, विलोचनदेव इत्यादि विल्वमगल जी तक सात सै आचार्य्य हुए हैं, इसी से श्री महाप्रभु जी पहले से गिनने से सात सै सातवे आचार्य्य है।

कहते है कि विष्णुस्वामीने फिर से जन्म लिया था और व्यास अवतार कहलाते थे।

श्री बल्लभी मत के अतिरिक्त श्री विष्णुस्वामी के सप्रदाय के लोग और कहीं कहीं भी मिलते हैं जैसा कि श्री प्रेमाकर गुसाईं के शिष्य नारायण दास जी सारस्वत, जिनको श्री शुकदेव जी ने दर्शन दिया था। उन के पीछे पुरुषोत्तम जी और बशीधर जी इस वश मे प्रसिद्ध हुए हैं। नाभा जी ने इन्हीं नारायण दास का भक्तमाल मे वर्णन किया है। यह गद्दी नवल गोस्वामी के नाम से अब तक प्रसिद्ध है। ऐसे ही ब्रज मे और भी कुछ लोग इस सप्रदाय के है।

अथ श्री मध्व संप्रदाय परंपरा

देवता	अशावतार	पृथ्वीस्थितयब्दा	पुण्यतिथि		स्थल
१ वायुदेव	श्री आनद तीर्थस्वामी	६८	माघ शुक्ल	६	१ स्थलदक्षिणस्थब्रन्दानने
२ रुद्रदेव	पद्मनाभतीर्थस्वामी	७	कातिक कृष्ण	१४	२ बद्रिकाश्रम
३ मन्मथदेव	नरहर तीर्थस्वामी	८	पौष कृष्ण	७	३ अनीगोंदी
४ गरुडदेव	माधव तीर्थस्वामी	१७	भाद्रपद कृष्ण	१५	४ हविरूराद्वी
५ रुद्रदेव	अक्षोभ तीर्थस्वामी		मार्गशीर्ष कृष्ण	१५	५ मेगुर भीमा तीर
६ हसदेव	जय तीर्थस्वामी	६	आषाढ कृष्ण	८	६ मलखेडा
७ सूर्यदेव	विद्यानिधि राजतीर्थ	६४	वैशाख शुक्ल	३	७ जगन्नाथ
८ चद्रदेव	कवींद्र तीर्थस्वामी	७	चैत्र शुक्ल	६	८ पपा सरोवर
९ यमदेव	वागीश तीर्थस्वामी	४	चैत्र शुक्ल	२	९ आनिगोदी
१० अग्निदेव	रामचद्र तीर्थस्वामी	३३	वैशाख शुक्ल	८	१० मलखेडा
११ वरुणदेव	विद्या तीर्थस्वामी	८	कार्तिक कृष्ण	४	११ आनिगोदी
१२ कुबेरदेव	रघुनाथ तीर्थस्वामी	३६	मार्गशीर्ष कृष्ण	२	१२ कोलुर
१३ प्रवाहदेव	रघुवर्य्य तीर्थस्वामी	८	ज्येष्ठ कृष्ण	३	१३ पेनगोडी

	देवता	अंशावतार	पृथ्वीस्थित्यङ्कापुण्यतिथि			स्थल
१४	नैऋतिदेव	रघुत्तम तीर्थ स्वामी	३८ पौष शुक्ल	११	१४	ये चक्रमगर
१५	तु वुरुदेव	वेदव्यास विधि तीर्थ	२४ चैत्र शुक्ल	२	१५	पण्ढरपुर भीमा तीर
१६	हाहागधर्व	विद्याधीश तीर्थ	१८ पौष कृष्ण	१४	१६	साँगलि कृष्णा तीर
१७	हू हू गधर्व	वेदनिधि तीर्थ स्वामी	१७ कार्तिक शुक्ल	१२	१७	निवृत्ति सगम तीर
१८	लोमस ऋषि	सत्यवर्य तीर्थ स्वामी	८ फाल्गुण शुक्ल	६	१८	विलोन नगर
१९	जावालि ऋषि	सत्यनिधि तीर्थ स्वामी	२२ मार्गशीर्ष शुक्ल	४	१९	माचारगुडी कावेरी तीर
२०	विश्वामित्र	सत्यनाथ तीर्थ स्वामी	३९ मार्गशीर्ष शुक्ल	११	१०	कोलुर
२१	मेधातिथि	सत्याऽभिमान तीर्थ	६९ ज्येष्ठ कृष्ण	१४	२१	आरणी
२२	पराशर ऋषि	सत्यपूर्ण स्वामी	२२ ज्येष्ठ कृष्ण	२	२२	माना मदरी
२३	जामदग्नि ऋषि	सत्य विजय स्वामी	१३ ज्येष्ठ कृष्ण	१२	२३	सावपुर सावणर
२४	कश्यप ऋषि	सत्यप्रिय स्वामी	९ चैत्र शुक्ल	१३	२४	तु गभद्रा तीर
२५	माडव ऋषि	सत्यबोध तीर्थ स्वामी	४० फाल्गुण कृष्ण	१	२५	सातविवतुर
२६	—	सत्यसघ तीर्थ स्वामी	११ ज्येष्ठ शुक्ल	२	२६	—
२७	—	सत्यवर तीर्थ स्वामी	२ श्रावण शुक्ल	७	२७	—
२८	—	सत्य धर्म तीर्थ स्वामी		—	२८	—
२९	—	सत्य सकल्प तीर्थ स्वामी		—	२९	—

अथ श्री चैतन्य संप्रदाय परंपरा

श्रीकृष्ण, ब्रह्मा, नारद, व्यास, मध्व, पद्मनाभ, नृहरि, माधव, अक्षोभ्य, जयतीर्थ, ज्ञानसिंधु, दयानिधि, विद्यानिधि, राजेंद्र, जयधर्म्मा, पुरुषोत्तम, ब्रह्मण्य, व्यासतीर्थ, लक्ष्मीपति, माधवेंद्र। उन के तीन शिष्य ईश्वर १ अद्वैत २ और नित्यानंद ३। ईश्वर के श्रीकृष्ण-चैतन्य, उन के गोपाल-भट्ट, उन के गोस्वामी गोपीनाथ, जिनका वंश अब प्रसिद्ध है। श्रीकृष्ण-चैतन्य के मुख्य चौदह पार्षद और चौंसठ महंतों के नाम नीचे लिखे के अनुसार जानो। और श्रीकृष्ण-चैतन्य विद्या में केशवपुरी के शिष्य थे।

अद्वैत १ अभिराम २ नित्यानन्द ३ सुंदर ठक्कुर ४ धनंजय पंडित ५ कमलाकर ६ साहस पंडित ७ पुरुषोत्तम ८ श्रीधर ९ हलायुध १० गौरीदास ११ उद्धारण १२ परमेश्वर १३ कृष्ण १४।

नीलांबर चक्रवर्ती १ गदाधर पंडित २ गदाधर ठक्कुर ३ नरहरी ४ मुकुंद ५ सदाशिव कविराज ६ जगदानंद पंडित ७ दामोदर ८ बन-माली ९ रघुनाथ भट्ट १० गदाधर भट्ट ११ प्रबोधानंद १२ राघो गोस्वामी १३ भूगर्भ गोस्वामी १४ काशीमिश्र १५ रूप गोस्वामी १६ सनातन गोस्वामी १७ रघुनाथदास १८ रघुनाथ भट्ट १९ गोपाल भट्ट २० लोकनाथ २१ दूसरे गदाधर भट्ट २२ जीव गोस्वामी २३ गोविंद २४ माधव २५ वासू घोष २६ सिवानंद की स्त्री २७ परमानंदपुरी २८ राघौदास २९ शुक्लांबर ब्रह्मचारी ३० जगदीश पंडित ३१ श्रीलाचार्य ३२ गरुड ३३ गोपीनाथ सिंह ३४ शंकर ३५ गुणसागर राय ३६ माधव ३७ भास्कर ३८ बनमाली ३९ सार्वभौम ४० सिंहानंद ४१ लोकनाथ कविचंद्र ४२ श्रीनाथ ४३ रामनाथ ४४ काशीमिश्र ४५ रामानंद ४६ प्रतापरुद्र ४७ कालीदास ठक्कुर ४८ माकी स्त्री ४९ गोपीनाथाचार्य ५० शारंगदास ५१ विश्वेश्वर ५२ सत्यराज ५३ रामानंद ५४ गोविंद ५५ गरुड़ ५६ आचार्यरत्न ५७ श्रीवल्लभ ५८ वृंदावन ५९ शिवानंद ६० जगन्नाथ पंडित ६१ अनल ६२ हरिदास ६३ हृदयानंद ६४।

अथ श्रीरामानुज संप्रदाय परंपरा

पुरुषोत्तम, लक्ष्मी, विश्वक्सेन, शठकोप, श्रीनाथ, पुडरीकाक्ष, राममिश्र, यामुनाचार्य, पूर्णाचाय, रामानुज, गोविंदाचार्य, पराशर, वेदाताचार्य, कलिवैरिदास, श्रीकृष्णप्रसाद, लोकाचाय, श्रीशैलनाथ, बरबर मुनि, बरदनारायण, श्रीनिवासदास, प्रणतार्तिहराचार्य, बरदाचार्य, वेंकटेश, बरदार्य्य, प्रणतार्तिहर, वेङ्कटार्य, वेङ्कटेश, वरदाचार्य, प्रणतार्तिहर, श्रीनिवास, वेङ्कटाचार्य, कृष्णाचार्य्य, शेषाचार्य्य, श्रीनिवासरगाचार्य। यह तो वर्तमान वृदावनस्थ स्वामी रगाचार्य तक परपरा लिखी है परतु रामानुज सप्रदाय में चौहत्तर गद्दी है। और देवाचार्य्य से प्रबोधानद, राघवानद, रामानद यह रामानदी शाखा है। रामानद से अनतानद, कृष्णदास, कालीदास, अग्रदास, नारायणदास, गोविंददास, कान्हरदास तक अग्रदासी शाखा है। और निंबादित्य और रामानुज सप्रदाय से मिलकर श्रीजानकी घाट की और मिथिलापुर की सप्रदाय स्वतत्र बन गई है। कितने साधु अग्रस्वामी के सप्रदाय के पौहारी बाबा को रामानुज के अतर्गत मानते हैं पर महाराज विश्वनाथ सिंह ने अपनी गुरु परपरा मे इन लोगो को निंबादित्य के अत पाती हितहरिवश जी के सप्रदाय मे माना है।

अथ श्री निंबादित्य संप्रदाय परंपरा

हंस, सनकादिक, नारद, निंबादित्य। निंबादित्य का नाम निंबार्क और नियमानद भी है। इनकी माता जयती और पिता अरुण द्राविड़ ब्राह्मण। इसी से इनको आरुणी भी कहते हैं। अतरंग रूप इनका श्रीललिताजी और रगदेवी का है। मर्यादा मे ये सुदर्शन चक्र का अवतार हैं। शिष्य परपरा श्रीनिवासाचार्य, विश्वाचार्य, पुरुषोत्तमाचार्य, विलासाचार्य, स्वरूपाचार्य, माधवाचार्य, बलभद्राचार्य, पद्माचार्य, श्यामाचार्य, गोपालाचार्य, कृपाचार्य, देवाचार्य, सुदर भट्ट, पद्मनाभ, उपेंद्र भट्ट, रामचद्रभट्ट, वामनभट्ट, कृष्णभट्ट, पद्माकरभट्ट, भूरिभट्ट, माधवभट्ट, श्यामभट्ट, गोपालभट्ट, बलभद्रभट्ट, गोपीनाथभट्ट, केशव-

भट्ट, गंगलभट्ट, केशव काश्मीरिभट्ट, श्रीभट्ट, हरिव्यासदेव। हरि-व्यासदेवजी से पाँच शाखा नीचे लिखे हुए के अनुसार यथा।

शोभूराम, कर्णहरदेव, मथुरेश नरहरिदास, प्रह्लाददास इत्यादि।

दूसरी शाखा

कर्णहरि, परमानददेव, नागजी, मोहनदेव, आत्माराम, नारायण दास, भगवानदास, गिरधारीदास, गोपालदास।

तीसरी शाखा

शोभूराम, मथुरेशदेव, बदरीशदेव, जयरामदेव, कृष्णदेव, धर्म दास जी।

चौथी शाखा

व्यासदेव, परशुराम, हितहरिवंश, नारायणहित, वृंदावनहित, श्री गोविंदहित।

पाँचवीं शाखा

व्यास जी के पहले किसी महात्मा से है यथा श्री आशाधीर जी, श्रीहरिदास स्वामी, विट्ठलविपुलविनादविहारण, विहारणदास जी, नर-हरदेव जी, रसिकदेव जी, पीतांबरदेव, गोवर्द्धनदेव, नरोत्तमदेव। रसि-कदेव जी के दूसरे शिष्य ललितकिशोरी उनके मौनीदास जी जिनकी श्रीवन में टट्टी है।

शोभूराम जी के भाई आत्माराम उन की दो शिष्य-परंपरा, एक संतदास की, एक माधव दास की।

इसी सम्प्रदाय में सुमुखन भक्त के पुत्र व्यासजी बडे प्रसिद्ध हुए हैं, संवत् १६१२ में जन्म, पैंतालीस वर्ष की अवस्था में श्रीवन आए और बारह सम्प्रदाय चलाई।

श्रीहित हरिवंश जी का निवास देवनगर, गौड़ ब्राह्मण काश्यप गोत्र यजुर्वेद माध्यन्दनी शाखा, पिता व्यास मिश्र माता तारावती, वंशी का अवतार, संवत १५५६ वैशाख सुदी ११ को जन्म। इनके ताऊ नृसिंहा-श्रम प्रसिद्ध भक्त थे। इन को बारह भाई और स्त्री का नाम रुक्मिणी, मोहन जी इत्यादि तीन पुत्र और एक कन्या। श्रीस्वामिनी जी से अश्व-

त्थ वृक्ष पर मंत्र पाया। कृष्णदासी और मनोहरी दो स्त्री और व्याही। संवत १५८२ कार्तिक सुदी १३ को श्रीराधावल्लभ जी को पाट बैठाया, पाँच भोग सात आरती का नेम रक्खा। इनका संस्कृत ग्रंथ श्रीराधा-सुधानिधि श्लोक २७० भाषा ग्रंथ पद चौरासी। मुख्य शिष्य नरबाहन, नाहरमल्ल, विट्ठलदास, मोहनदास, छबीलदास, नवलदास, बलीदास, परमानंद रसिक, हठी, हरिदास, खड्गसेन और गंगा, यमुना।

इति श्री वैष्णव सर्वस्व परंपरावर्णने—उत्तरार्द्ध समाप्तः।

श्रीवल्लभीय-सर्वस्व

श्रीश्रीवल्लभाचार्यचरणकमलमिलिंदमरंद

चिंतासंतानहंतारो यत्पादांबुजरेणवः ।
स्वीयानां तान् निजाचार्यान् प्रणमामि मुहुर्मुहुः ॥

सं० १९३२

युगुलसर्वस्व के भादो शुक्ल ८ स०
१६३३ के उपसहार में तथा
चन्द्रावली नाटिका के प्रथम
सस्करण स०१९३४ के
मुख पृष्ठ पर उल्लेख

श्री वल्लभीय सर्वस्व

दक्षिण मे तैलग देश मे आंध्र प्रान्त मे आकबीडु जिला मे, खम्मम कॉकरविल्ल ग्राम मे यजुर्वेद तैत्तिरीय शाखा भारद्वाज गोत्र मे महादेव पात्र के वश के ब्राह्मण रहते थे। इसी वश मे रामनारायणभट्ट के पुत्र यज्ञनारायण सोमयागी हुए। वे वेद के अवतार थे। इन पर वेद पुरुष अत्यत ही प्रसन्न रहते थे। जब इनको वेद मे कोई संदेह होता तब स्नान करके वेद पुरुष का ध्यान करते और वेद पुरुष प्रत्यक्ष होकर सन्देह-नाश कर देते।

एक बेर मायावादियो ने हँसी से इनसे कहा कि आप वेद के अवतार हो तो बकरेसे वेद पढवावो। तब यज्ञनारायण जी ने बकरे की ओर देखकर कहा "भोलुलायत्व वेदानुशारय"। इतना सुनते ही बकरा वह पाठ करने लगा। ऐसे ही दक्षिण मे उनने अनेक चमत्कार दिखाए। ये श्री रामानुजाचार्य मत के बडे पडित थे।

जब यज्ञनारायण जी ने पहिला सोमयाग किया तब अग्निकुण्ड में से यह शब्द सुन पडा कि ऐसे सौ सोमयाग के पीछे भगवान का अवतार होता है। बत्तीस सोमयाग करके ये देवलोक पधारे।

इनके पुत्र गगाधरभट्ट सोमयागी साक्षात् शिवजी के अवतार थे, जिन्होने अवभृत्थ स्नान करती समय लोगो को प्रत्यक्ष अपने केश में से जलधारा निकलती दिखाई। अट्ठाइस सोमयाग करके ये देवलोक गए।

इनके पुत्र गणपति सोमयागी थे। काशी मे पडितो की सभा मे इन्होने गणेश की भॉति दर्शन दिया और इसी से सभा मे इनका प्रथम पूजन होता था। एक बेर सब प्रसिद्ध नगरो मे जाकर शास्त्र का दिग्विजय किया था। तीस यज्ञ करके ये देवलोक सिधारे।

इनको तीन स्त्री थीं। इनमे ज्येष्ठ स्त्री के ज्येष्ठ पुत्र वल्लभ भट्ट सायकाल की समय प्रहर दिन चढ़े के सूर्य की भॉति दर्शन दिया था। पॉच यज्ञ करके ये भी देवलोक गए।

इनके पुत्र लक्ष्मणभट्ट जी बडे विद्वान साक्षात् अक्षर ब्रह्म शेष जी के अवतार हुए। इनकी छोटी ही अवस्था मे इनके पिता का परलोक हुआ था, इससे इनके मातामह ने लालन पालन करके इनको विद्या पढ़ाया था। इनकी स्त्री देवकीजीका अवतार श्रीइल्लमगारू जी थीं। इनके तीन पुत्र हुए। बडे भाई का नाम नारायणभट्ट उपनाम रामकृष्ण भट्ट। ये कुछ दिन पीछे सन्यासी हो गये, तब केशवपुरी नाम पड़ा। यह ऐसे सिद्ध थे कि खडाऊँ पहिने गगा पर स्थल की भॉति चलते थे। मॅझले श्री महाप्रभुजी और छोटे रामचद्र भट्ट जी। ये महा भारी पडित थे, वेदात, मीमासा, व्याकरण, काव्य और साहित्य बहुत अच्छा जानते थे। लक्ष्मणभट्ट जी के मातुल वशिष्ट गोत्र के ब्राह्मण अपुत्र होने के कारण इन्हें अपने घर ले गए थे। कृष्ण कुतूहल, गोपाल लीला महाकाव्य इत्यादि कई ग्र थ इन्होने बनाए है। ये श्री महाप्रभु जी के विद्या में शिष्य थे और प्रायः अयोध्या मे रहते थे। वादी ऐसे भारी थे कि प्राय. उस काल के सब पडितो को जीता था। यहॉ तक कि इसी बाद के लाग पर इनको विष दे दिया।

लक्ष्मणभट्ट जी के पूर्व पुरुषो ने पचानबे सोमयाग किये थे, सो इन्होने पॉच और करके सौ पूरे किए। अत के सोमयज्ञ का आरभ चैत सुदा ६ सोमवार पुष्य नक्षत्र अभिजित योग मे स० १५३२ मे किया। जब यज्ञ समाप्त हुआ तो कुड से यह अलौकिक वाणी सुन पड़ी कि तुम्हारे कुल मे पूर्ण पुरुषोत्तम का प्रागट्य होगा। यह वाणी सुनते ही यज्ञ में सबको बड़ा आनद हुआ और लक्ष्मणभट्ट जी ने उसी समय काशी मे सवालक्ष ब्राह्मण-भोजन का सकल्प किया। उसी

समय में सयोग से दक्षिण में कुछ यवनों का उपद्रव भी हुआ। इससे लक्ष्मणभटटजी कुटुब को लेकर और बहुत सा द्रव्य साथ लेकर काशी की ओर चले।

विदित हो कि श्री लक्ष्मणभट्ट जी स० १५३२ के चैत्र के अत में बहुत से विद्यार्थी और ब्राह्मण-भोजन के हेतु बहुत सा द्रव्य लेकर काशी चले और कॉकरवल्लि से सात मजिल पर भृग-सार्थक तीर्थ मे, जहाँ सवतोभद्रकुड मे राजा वरुण ने अपने यज्ञ का अवभृत स्नान किया है, तीन दिन तक रहे। वहाँ वैशाख बदी ११ की अर्द्धरात्रि को श्री ठाकुर जी ने श्री स्वामिनी जी सहित दर्शन दिया और आज्ञा किया कि जब तुम काशी से लौटकर चपारण्य आओगे तब तुम्हारे यहाँ हमारा प्रागट्य होगा। यह आज्ञा करके एक उपरना, एक तुलसी की माला, एक कठी देकर श्री मुख से कहा कि जब बालक हो तब उसको यह उपरना उढ़ा देना, यह कठी-माला पहना देना और यह बीड़ा जन्म घाटी मे पिला देना। इतना सुनते ही जब लक्ष्मणभट्ट जी नींद से चौक पडे ता इन वस्तुओ के सिवा और वहाँ कुछ न देखा।

लक्ष्मणभट्टजी भीमरथी, उज्जैन, पुष्कर इत्यादि तीर्थ होते हुए प्रयाग आये। वहाँ भरद्वाज ऋषि के आश्रम मे आकाशवाणी हुई कि तुम हमारे गोत्र मे धन्य हो, जिसके घर साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम का प्रागट्य होगा।

प्रयाग से भट्ट जी काशी आये। वहाँ गगास्नान काशी-विश्वेश्वर का दर्शन करके एक स्थान लेकर उतरे और वेद का पारायण, अग्नि होत्र और ब्राह्मण भोजन प्रारभ किया और थोड़े दिनो मे सवा लाख ब्राह्मण का भोजन समाप्त किया। इसी समय मे दिल्ली के यवन राज्य मे मुगलो और पठानो क विरोध के कारण बडा उपद्रव उठा और भारतवर्ष के पश्चिमोत्तर प्रात मे चारो ओर हलचल पड़ गई। लोग नगर छोड़कर गॉव मे बसने लगे। लक्ष्मण भट्ट जी के जाति के लोग भी काशी छोड़-कर इधर उधर चले गए और लक्ष्मणभट्ट जी भी कुटुब लेकर दक्षिण की ओर चले, सो जब चम्पारण्य पहुँचे तब शके १४०० स० १५३५ वैशाख सुदी ११ रविवार को श्री इल्लमगारू जी का सात महीने का

गर्भश्राव हुआ, सो माता जी ने केले के पत्ते में वह गर्भ लपेटकर शमी के खोडरे मे रख दिया। यहाँ से ये लोग चौडा नगर मे गए और वहाँ सुना कि देशोपद्रव सब शांत हो गया। यहाँ एक रात्रि निवास करके जब लक्ष्मणभट्ट जी फिर काशी की ओर फिरे तो उसी शमी के वृक्ष के नीचे चालीस हाथ के लंबे चौडे अग्निकुंड मे बालक को खेलता देखा। श्री इल्लमगारू जी के स्तन से दूध की धारा उस समय निकली सो महाप्रभु जी के मुखारविंद मे पडी। तब श्री लक्ष्मणभट्ट जी ने वेदमंत्र मे और माता जी ने अपनी भाषा मे अग्नि और बरुण की स्तुति किया और अग्नि ने इल्लमगारू जी को मार्ग दिया। माता जी ने बडे आनंद और वात्सल्य मे पुत्र को गोद में उठा लिया। उस समय आकाश से पुष्पवृष्टि हुई और देवताओं ने प्रत्यक्ष होकर जै जै कार किया। सबके चित्त मे अकस्मात् नंद महोत्सव के आनंद का आविर्भाव हुआ।

श्री लक्ष्मणभट्ट जी बालक को लेकर काशी फिर आए और श्री ठाकुर जी की आज्ञा प्रमाण कंठी, माला, उपरना और बीडा श्री महाप्रभु जी को दिया। तैत्तिरीय शाखा के अनुसार नाम करणादिक सब संस्कार बडे आनंद से हुए और जब श्री इल्लमगारू जी गंगा पूजने को गईं तब श्री गंगा जी ने माता की गोद ही मे श्री महाप्रभु जी का चरण स्पर्श किया और स्त्रियो सहित माता जी के वरदान माँगने पर जल मे से शब्द सुन पडा कि तुम्हारा पुत्र सब वादियो को जीतेगा।

अथ जन्मपत्री

स्वस्ति श्रीमन्नृपति विक्रमार्क राज्याब्दे १५३५ शके १४०० वैशाखे मासे कृष्णपक्षे तिथौ १० रविवासरे घ० १६ प० १४ परत्र ११ तिथौ धनिष्ठा नक्षत्रे घ० ३८ प० ४६ शुभयोगे घ० ३८ प० २ ववकर्णे श्री सूर्योदयात् इष्ट घ० ३७ प० ४२ वृश्चिक लग्नोदये श्री लक्ष्मणभट्ट पत्नीपुत्ररत्नमजीजनत्।

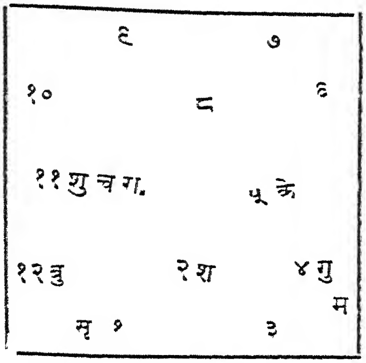

सूर्य०।२।२२।११ लग्न ७।१०।१९।३१ दिन मान ३०।२८ रात्रिमान २९।३२

एक बेर श्री इल्लमगारू जी को व्रजयात्रा की इच्छा हुई और आपने अपने पति से निवेदन किया कि कृपापूर्वक व्रज चलिए परतु भट्ट जी ने कहा कि पुत्र का यज्ञोपवीत करके चलेंगे। यद्यपि इल्लमगारू जी ने पति की आज्ञा का कुछ उत्तर नहीं दिया तथापि व्रजयात्रा की आपकी बडी ही इच्छा थी। यहाँ तक कि एक बेर श्री महाप्रभु जी को गोद मे लिए आप बैठी थीं सो व्रज का स्मरण करके उनके नेत्रो में जल भर आया। सर्वान्तरयामी श्री महाप्रभु जी ने माता की इच्छा पूर्ण करने को जम्हाई लिया और मुखारविद मे चौरासी कोस व्रज का दर्शन कराया। श्री इल्लमगारू जी को यह देखकर बड़ा ही आश्चर्य हुआ और आपने लक्ष्मणभट्ट जी से सब वृत्तांत कहा। भट्ट जी ने कहा कि एक बेर हम अग्निशाला मे भूमि पर शयन करते थे तब अग्नि ने स्वप्न मे हमसे आज्ञा किया कि तुम इस बालक के विषयमे सदेह मत करना सो यह बालक अलौकिक साक्षात् नारायण का स्वरूप है।

एक बेर श्री विश्वनाथ जी ने यह विचार किया कि श्री ठाकुर जी ने हमको तो माया मत फैलाने की आज्ञा दिया है और आप अपने सप्रदाय फैलाने को क्यो प्रगट हुए हुए हैं, इससे एक बेर तो दर्शन

करना चाहिए कि आपने कैसा वेष लिया है और क्या इच्छा है। यह विचार कर योगी बनकर एक सोने का बघनहा हाथ मे लेकर श्री लक्ष्मणभट्ट जी के द्वार पर आये। श्री महाप्रभु जी उस समय अत्यंत रुदन करने लगे और कोई प्रकार से चुप न हो। तब लक्ष्मणभट्ट जी ने अपने पास बैठे हुए ज्योतिषियो से पूछा कि आज कल बालक के ग्रह कैसे हैं। ब्राह्मणो ने उत्तर दिया कि ग्रह तो अच्छे हैं परतु एक बघनहा इनके गले मे पडा रहे तो अच्छा है। श्रीलक्ष्मणभट्टजी ने अपने शिष्यो को आज्ञा दिया कि अभी बघनहा मोल लेकर सोने से मढ़ाकर पोहवा लाओ। शिष्य लोग जैसेही बाहर निकले वैसेही देखा कि एक योगी बघनहा लिए खडा है। बडे हर्ष से शिष्य लोग योगी को भीतर ले गए। श्री महादेव जी ने श्री महाप्रभुजी को कठुला पहना कर पूछा "भगवान कोय वेष."। श्री महाप्रभु जी ने उसी क्षण उत्तर दिया "सर्वेश्वरश्च सर्वात्मा निजेच्छात. करिष्यति" यह सुनकर सब लोगो को बडा आश्चर्य हुआ कि इतने छोटे बालक के मुख से शब्द स्पष्ट और फिर सस्कृत कैसे निकला। किसी ने कहा योगी बड़े सिद्ध हैं, किसी ने कहा नहीं बालक ही बडा प्रतापी है। उस पीछे श्री महादेव जी कई बेर योगी के वेष मे खिलौना लेकर प्राय· मिलने को आते थे।

स० १५४० चैत्रबदी ६ अर्थात् श्री रामनवमी रविवार को लक्ष्मण भट्ट जी ने वेदविधि से आप का यज्ञोपवीत किया। सोरो जी नामक प्रसिद्ध वाराहक्षेत्र मे केशवानद नाम के एक बडे सिद्धयोगी वैष्णव संप्रदाय के थे। सो जब श्री महाप्रभु जी का चपारण्य मे प्रागट्य हुआ, उसी समय उन्होने अपने शिष्यो से कहा कि इस समय पृथ्वी पर कहीं पुरुषोत्तम का अवतार हुआ है। उनके सेवको मे से कृष्णदास मेघन नामक एक सेवक थे, सो वह गुरु का वचन सुनते ही यह विचार करके घूमने निकले कि जो पुरुषोत्तम का प्रागट्य कहीं हुआ होगा, दर्शन होहींगे और जो हमको नाम लेकर पुकारेगा उसी को हम पुरुषोत्तम जानेगे। यह कृष्णदास मेघन फिरते फिरते श्री महाप्रभुजी के उपवीत-समय काशी में आये और भीड देखकर जो श्री लक्ष्मण

भट्ट जी के घर मे गए तो उनको देखते ही श्री महाप्रभुजी ने आज्ञा किया "कृष्णदास तू आया"। इन्होंने दडवत करके उत्तर दिया 'जै, मैं आयो" और एक अँगूठी श्री महाप्रभु जी के यज्ञोपवीत भिक्षा मे दी और तब ये आजन्म श्री प्रभु जी के साथ ही रहे।

उपवीत धारण करने के पहले और पीछे जब आप खेलते तो ब्राह्मण के लडको को शिष्य बनाते और आप गुरु बनकर उपदेश करते।

लक्ष्मणभट्ट जी के घर के पास सगुन दास नामक ढाढ़ी रहते थे। उनको श्री महाप्रभु जी के दर्शन साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम के होय, इससे उनका नेम था कि नित्य आपका दर्शन करके तब जल पीते। तो जब श्री महाप्रभु जी चरणारविंद से चलने लगे तब आप उनके घर पधार कर दर्शन देते। सो एक दिन श्री लक्ष्मणभट्ट जी ने आप से आज्ञा किया, कि शूद्र के घर आप मत पधारा करो। इस पर श्री महाप्रभु जी ने यह वाक्य पढा "स्त्रियो वैश्या तथा शूद्रा तेपियान्ति परागति"। यह सुनकर लक्ष्मणभट्ट जी ने श्री महाप्रभु जी को सगुनदास जी के यहाँ जाने की आज्ञा दिया।

यज्ञोपवीत के पीछे श्री महाप्रभु जी को लक्ष्मणभट्ट जी घर ही मे वेद पढाते थे परंतु आप की बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण थी, इस हेतु असाढ़ सुदी २ पुष्यार्क योग मे माध्वानद स्वामी के यहाँ लक्ष्मणभट्ट जी ने आपको पढ़ने को बैठाया। सो चार ही महीने मे चारो वेद, छओ शास्त्र पढ़कर सब को बड़ा आश्चर्य उत्पन्न किया। गुरु दक्षिणा मे माध्वानद स्वामी ने श्री ठाकुर जी की सेवा माँगी तब आपने आज्ञा किया कि जब श्रीनाथ जी को प्रगट करेंगे तब आप को सेवा देंगे। इन्हीं को और ग्रथो मे माधवेंद्रपुरी करके लिखा है और ये मध्व सप्रदाय के आचार्य थे। और विद्याविलास भट्टाचार्य से आपने न्याय, पातजल और काव्य पढ़ा। श्री महाप्रभु जी की विद्या देख करके लक्ष्मणभट्ट जी को फिर सदेह हुआ परतु ठाकुर जी ने स्वप्न मे पुनर्दर्शन देकर वह सदेह निवृत्त कर दिया। यही माधवेंद्रपुरी श्री कृष्ण चैतन्य के मत्र गुरु हैं और इसी कारण श्री महाप्रभु जी और श्री कृष्ण चैतन्य से

मित्रभाव था और आपने उनको श्री गोवर्द्धन की कदरा से लाकर कृष्ण प्रेमामृत ग्रथ दिया था और ऐसे ही निम्बार्क सप्रदाय के आचार्य केशव काश्मीरी जी से भी आप का बडा सग रहता था। विदित हो कि चैतन्य सप्रदाय के ग्रथ बृहद्गौरगणोद्देशदीपिका ने श्री महाप्रभुजी को चौंसठ महानुभावो की गिनती मे अनन्त सहिता के ७५ वे अध्याय के प्रमाण से श्री शुकदेवजी का अवतार लिखा है।

एक समय श्री लक्ष्मणभट जी ने मायावादी सन्यासियो को अपने घर भोजन को बुलाया था सो श्री महाप्रभु जी ने ऐसा शास्त्रार्थ उठाया, जिससे मायावाद का खडन होय। तब लक्ष्मणभट्ट जी ने कहा जो अपने घर आवे उसका अपमान नहीं करना, इससे आपने उनसे शास्त्रार्थ नहीं किया। पर वैष्णव धर्म-प्रचार की आप को ऐसी उत्कठा थी कि काशी मे जहाँ शास्त्रार्थ होता वहाँ आप जाते और वैष्णव मत का मडन और अन्य मत का खंडन करते। यहाँ तक कि लक्ष्मणभट्ट जी के पास लोग उरहना देने आते कि आप के पुत्र ने भरी सभा मे हमारा अपमान किया। तब लक्ष्मणभट्ट जी आप को निषेध करते। तब जिन पंडितों से आप निषेध करते उन पडितो से शास्त्रार्थ न करते। उस काल मे विश्वनाथ के सभामंडप मे पडितो की सभा नित्य होती थी और वे लोग एक बात पर निर्णय करके तब उठते थे। सो श्री महाप्रभुजी उस सभा-स्थान की भीति पर श्लोक नित्य लिख आते और जब पडित लोग उसका एक दिन मे निर्णय करते तो दूसरे दिन दूसरे श्लोक से उनका सब निर्णय खडित हो जाता। ऐसे ही तीस दिन तक आपने यह खेल खेला और उसी से पत्रावलबन ग्रथ बन गया। एक प्रसग यह भी है कि आप से बहुत से पडित शास्त्रार्थ करने को आते थे और समय बहुत थोडा था, इस लिए आपने पत्रावलम्बन ग्रथ करके विश्वेश्वर के द्वार पर भी डुगडुगी फेर दी थी कि जिसको हमसे शास्त्रार्थ करना हो पहले जाकर वह पत्र देख ले। यह सुनकर जो पडित वह पत्र देखने जाते वह सब अपने प्रश्न का उत्तर पाकर लौट आते और इसी में पत्रावलबन ग्रथ बना।

श्री लक्ष्मणभट्ट जी को श्री महाप्रभुजी के इस घोर शास्त्रार्थ करने से बड़ा क्षोभ हुआ और आपने वात्सल्य भाव से यह सोचा कि

ऐसा न हो कि द्वेष करके जादू से कोई पंडित हमारे पुत्र को मार डाले। यह विचार कर आपने देश जाने का मनोरथ किया क्योंकि बारह वर्ष की काशी मे रहने की आप की प्रतिज्ञा भी पूरी हो गई थी। यह सब बात विचार कर आप सकुटुम्ब काशी से दक्षिण चले।

वहाँ से सात मंजिल पर यह सुनकर कि विष्णु स्वामी संप्रदाय के कोई पंडित लक्ष्मणभट्ट जी अपने पुत्र सहित काशी मे अनेक पंडितो को जीत कर यहाँ आते हैं, बहुत से पंडित मिलकर एक साथ लक्ष्मण भट्टजी के डेरे पर शास्त्रार्थ करने गए और जब श्री महाप्रभुजी ने उनको शास्त्रार्थ मे जीता तब लक्ष्मणभट्जी ने प्रसन्न होकर कहा कि वरदान माँगो। तब आपने दो वरदान माँगे—प्रथम तो यह कि आप हमको शास्त्रार्थ करने जाने से कहीं रोको मत और दूसरे यह कि शास्त्रार्थ मे कोई हमारा तेज पराभव न कर सके। लक्ष्मणभट्ट जी ने बड़ी प्रसन्नता पूर्वक दोनो वरदान दिए।

लक्ष्मणभट्ट जी साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम के धाम अक्षर ब्रह्म शेष जी के स्वरूप हैं, इससे आप को त्रिकाल का ज्ञान है। सो जब आपने अपना प्रयाण समय निकट जाना तब कॉकरवार से बड़े पुत्र रामकृष्ण भट्टजी को बाला जी मे बुलाया और वहीं आपने डेरा किया। पुत्रो को अनेक शिक्षा देकर रामकृष्णभट्ट जी को श्री यज्ञनारायण के समय के श्री रामचंद्र जी पधराय दिए और कहा कि देश मे जाकर सब गाँव और घर आदि पर अधिकार और वेल्लिनाटि तैलंग जाति की प्रथा और अपने कुल अनुसार सब धर्मपालन करो। ऐसे ही श्री यज्ञनारायणभट्ट के समय के एक शालिग्राम जी और मदनमोहन जी श्री महाप्रभुजी को देकर कहा कि आप आचार्य होकर पृथ्वी मे दिग्विजय करके वैष्णव मत प्रचार करो और छोटे पुत्र रामचंद्र जी को, जिनका काशी मे जन्म हुआ था, अपने मातामह की सब स्थावर जंगम संपत्ति दिया[1]। और श्री महाप्रभु जी के ग्यारह वर्ष की

१—ये रामचंद्रभट्ट बड़े पंडित थे। गोपाललीलामहाकाव्य, कृष्ण कुतूहल महाकाव्य और शृंगार-वेदांत ये तीन ग्रंथ इनके मिलते हैं। अयोध्या में ये रहते थे और श्री महाप्रभु जी को विद्यागुरु करके मानते थे। वैष्णव दीक्षा श्री महा-

अवस्था मे लक्ष्मणबाला जी का शृ गार करते करते शरीर समेत उनके स्वरूप मे लय हो गए। उनके पुत्रो ने लक्ष्मणभट्ट जी के वस्त्र का लौकिक सस्कार बडी धूमधाम से किया और महाप्रभु जी ने एक वर्ष तक यथाशास्त्र विहित सब रीति का बर्ताव किया।

काशी मे वैष्णव तत्र, शैव तत्र, कौमारिल प्रभाकर, मौद्गल इत्यादि मत के ग्रथ और शैव, पाशुपत, कालामुख, अघोर ये चार शव सप्रदाय और विष्णु स्वामी इत्यादिक चार वैष्णव संप्रदाय के ग्रथ नहीं मिलते थे। इस हेतु सरस्वती भडार मे जाकर इन ग्रथो को आपने अवलोकन किया और वेद की ३२ शाखा की सहिता ब्राह्मण इत्यादिक कठाग्र किया। फिर जब इल्लमगारू जी पति के हेतु विलाप करतीं तब आप को बडा दु:ख होता, इससे श्री बाला जी ने स्वप्न मे इल्लमगारू जी को विलाप करने का निषेध किया।

जब आपको पृथ्वी परिक्रमा की इच्छा हुई तब मातृचरण को मामा के पास पहुँचाने को आप विद्यानगर पधारे और मार्ग मे अपने अंतरग दामोदर दास जी को सेवक किया।

विद्यानगर मे राजा कृष्णदेव* के यहाँ आचार्य के मामा रग-

प्रभु जी से इन्होंने पाई थी कि नहीं, इसमें सदेह है और रामकृष्णभट्ट जी कुछ दिन पीछे सन्यासी होकर केशवपुरी नाम से खडाऊँ पहनकर जल पर चलने वाले बड़े सिद्ध विख्यात हुए। इन लोगों के समकाल के प्रसिद्ध पडित ये थे, मध्वमत में व्यास तीर्थ, निबार्क मत मे केशवभट्ट, रामानुज मत में ताताचार्य और व्यङ्कटाध्वरि, शकर मत में आनदगिरि, स्मार्तों में वा अन्य मत में मुकुदानद, केवलानद, माधवानद, बरदराज के महत हस्तशृगार और रगनाथ जी के महत आनदराम।

* राजा कृष्णदेव की वश परपरा यों है। पाडु वश में चद्रबीज राजा के दो पुत्र थे—बडा मेरु छोटा नन्दि। नन्दि को भूतनन्दि, उसको नदिल। नंदिल के दो पुत्र—शेषनदि और यशोनदि। इन दोनों को चौदह पुत्र थे, जिनको अमित्र और दुर्मित्र नामक दो भाई राजाओं ने जीत लिया। इनमें से सात भाई दक्षिण गए, जिनमें से नदिराज ने नदपुर वा रगोला बसाया (१०३० ई०)। उनके वश में फिर चालुक्य राज (१०७६ ई०) विजयराज जिन्होंने

नाथ विद्याभूषण दानाध्यक्ष थे। श्री महाप्रभु जी अपने मामा के घर उतरे और वहीं यह सुना कि राजा कृष्णदेव की सभा में आजकल नित्त मतमतान्तर का वाद होता है। यह सुन के आपने इच्छा किया कि हम भी चलेंगे। दूसरे दिन प्रात काल स्नान सध्या होम करके ब्रह्मचारी का भेष कर आप राजा की सभा में पधारे। इनका दर्शन पाते ही सब सभा तेजोहत हो गई और राजा कृष्ण देव रायने बडे आदर से इनको बैठाया। तब आपने राजा से सभा का वृत्तात पूछा। राजा ने हाथ

विजयनगर बसाया (१११८), विमलराज (११५८), नरसिंघदेव, जो बड़ा प्रसिद्ध हुआ (११८०), रामदेव (१२४६) और भूपराज (१२७४)। भूपराज अपुत्र था, इससे इसने अपने निकटस्थ गोत्रज वीर बुक्कराय को गोद लिया। वीर बुक्कराय (१३२४) की सभा में सायण के बडे भाई माधवाचार्य (विद्यारण्य) बडे पडित थे और उन्होंने वेदों पर भाष्य किया है और अनेक ग्रथ बनाए हैं। वीर बुक्कराय की सभा में कई विलायत के लोग आए थे। इनके हरिहरराय (१३६३), उनके देवराज (१३६७) विजयराज (१४१४) और उनके पडरदेव (१४२८)। पडरदेव को श्री रङ्गराज ने जीत कर अपने पुत्र रामचद्रराय को (१४५०) राजा बनाया। इनके नृसिंहराय (१४७३), फिर वीर नृसिंहराय (१४९०), उनके अच्युतराय और उनके कृष्णदेवराय। राजा कृष्णदेवराय ने स० १५७० तक (१५२४ ई०) राज्य किया और गुजरात जय किया और मुसलमानों से लडे। राजा कृष्णदेव के सेनापति नाग नायक ने मथुरा जीत कर राज्य स्थापन किया, जो १६ पीढी तक रहा। इनके रामराज हुए, जो निज़ामशाह और इमादुलमुल्क की लडाई में मारे गए। उनके पीछे श्री रगराज, त्रिमल्लराज, वीर सदापतिराज, द्वितीय श्री रगराज, रामदेवराय, व्यकटपतिराय, द्वितीय तृमधराय, द्वितीय रामदेवराय और द्वितीय व्यकटपतिराय हुए। द्वितीय व्यकट मुगलों से हार कर चद्रदेवगिरि में बसे। इनके पुत्र रामराय, उनको हरिदास (१६६३), चक्रदास (१७०४), त्रिम्मदास (१७२१), रामराय (१७३४), गोपालराव व्यकटपति, त्रिमल्लराय, वीर व्यकटपति और रामदेवराय क्रम से राजा हुए। इस वश के अतिम राजा रामदेवराय, जिनको स० १८७५ (१८२६ ई०) में टीपू सुलतान ने मार कर राज्य नाश कर दिया।

जोडकर निवेदन किया कि आज छ महीने से सब मत मतातर के पडितो से यहाँ शास्त्रार्थ हो रहा है, सो माया मत वालो को अब तक किसी ने नहीं जीता है। यह सुनकर आपने पडितो से प्रश्न किया और शास्त्रार्थ प्रारभ हुआ। चौदह दिन तत्वविचार मे, बारहदिन स्थान-वदादेश इस सूत्र से प्रारभ होकर व्याकरण मे और एक दिन जैन बौद्ध विचार मे, इस तरह सब मिला कर सत्ताइस दिन शास्त्रार्थ हुआ और जितने वादी सभा मे उपस्थित थे सब निरुत्तर हुए। तब राजाने सब पडितो से जयपत्र लिखवा कर उसपर अपनी मुहर करके इनको दिया और सब पडितो और मत के आचार्यों ने मिलकर आचार्य पदवी मे महाप्रभुजी को पुकारा। राजा कृष्णदेव ने कनकाभिषेक से आप की पूजा किया और सपरिवार शरण आकर सेवक हुआ।[1] इस अभिषेक के सोने को श्रीमहाप्रभु जी ने दीन ब्राह्मणो को बॉट दिया और अनेक ब्राह्मण के लडको के यज्ञोपवीत और लडकियो के विवाह और अनेक का ऋण-शोधन इमसे हुआ। इस सुवर्ण के सिवा एक थाली भर कर मुहर राजा ने आप को भेट किया था, जिसमे से सात मुहर आपने अगीकार करके उमका श्रीनाथ जी का नूपुर बनाया। फिर राजा को वहाँ के अनेक ब्राह्मणो वृहस्पति सब वाजपेय आदि यज्ञ और अनेक महादान कराया और उससे जो द्रव्य एकत्र हुआ उसका तीन भाग किया। एक भाग से श्री विठ्ठलनाथ

१—विद्यानगर के, कृष्णागढ के और नवानगर के राजा लोग इसी काल से इस मत के सेवक होते आते हैं किंतु विद्यानगर का वश अब नहीं रहा, उस काल में दक्षिण प्रात के सब राज्य बने हुए थे। विद्यानगर जाने के पूर्व आप हेमाचल गोआ इत्यादि होते हुए चौंडा गए थे। चौंडा के राजा ने एक म्याना और दो प्यादा साथ देकर आचार्य को विद्यानगर पहुँचवाया था। यहाँ पर एक बात और जानने के योग्य है कि श्री महाप्रभुजी विद्यानगर की सभा में श्री विष्णुस्वामी की गद्दी पर विराजे। इसी समय श्री विल्वमगल जी ने श्री विष्णुस्वामी के रहस्य और मतभेद सब आप को देकर तिलक किया था। यह भी जनश्रुति है कि श्री महाप्रभु जीने सभा में योग-बल से अपना कण्डलु फेंका, जो सूर्य का सा सभा में प्रकाश किया। तदनन्तर आप सभा मे गए।

जी की कटिमेखला बनी, दूसरे भाग से पिता का ऋण शोधन किया और तीसरे भाग को करणीय यज्ञ के व्यय निर्वाहार्थ माता को सौंप दिया। और अनेक दिन तक ज्ञान, भक्ति, वैराग्य, व्रत यज्ञादि इत्यादि धर्म का उपदेश करते आप विद्यानगर मे विराजे।

कुछ दिन तक विद्यानगर मे निवास करने के उपरात माता से आज्ञा लेकर पृथ्वी-परिक्रमा करने को स० १५४८ वैशाख वदी २ को आप नगर से बाहर चले। उस सकय ब्रह्मचर्यव्रत के कारण सीआ हुआ वस्त्र नहीं पहरते थे, इससे धाती उपरना पहनकर दड कमडल छत्र और पादुका धारण किए हुए आप चलते थे। इसी ब्रह्मचर्य के दृढ धारण पर भ्रम से बहुत मूर्ख आक्षेप करते हैं कि श्री वल्लभाचार्य पहले दडी थे, फिर गृहस्थ हुए। दामोदरदास और कृष्णदास ये दो सेवक आपके साथ थे। पहले भीमरथी के तट पर पण्ढरपुर मे आए, वहाँ सप्ताह परायण करके बैठक स्थापित किया। (आगे जिस तीर्थ के वर्णन मे पा० बै० स्था० यह सकेत देखो वहाँ समझो कि परायण करके बैठक स्थापन किया) फिर नासिक, त्र्यंबक, पचवटी, गोदावरी तीर्थ में आए वहाँ त्र्याह पा० बै० स्था०। वहाँ से उज्जयिनी मे आए। वहाँ सिप्रा और अगपात कुड (जिसमे भगवान जब सादीपनी जी के यहाँ पढते थे तब पाटिया धोते थे) मे स्नान करके महाकालेश्वर का दर्शन करके नगर के बाहर एक पीपल की डाल गाड़ कर उस पर कमण्डलु का जल आपने छिडका, जिससे वह तत्क्षणात् एक वृक्ष हो गया और उसके नीचे सप्ताह पा० बै० स्था०। यह पीपल का वृक्ष अद्यापि वर्तमान है। वहाँ से पुष्कर जी की यात्रा कर आप व्रज की ८४ कोस की परिक्रमा करने के हेतु स० १५४८ के भाद्रपद कृष्णाष्टमी अर्थात् जन्माष्टमी के दिन श्री गोकुल मे पधारे। तब श्रीनाथ जी को यमुना जल मे क्रीड़ा करते देख आप भी उनके समीप जाने लगे। तब तो श्रीनाथ जी गिरिराज ऊपर आए। वहाँ भी आप उनके पीछे पीछे गए, इसी से श्री भगवान ने प्रसन्न हो यह वरदान दिया कि "यावत् यमुना जी मे गगा जल रहेगा तावत् तुम्हारी सप्रदाय अचल रहेगी"। ऐसा कह कर श्रीनाथ जी अतर्ध्यान हो गए। तब आप जिस मार्ग से पूर्व मे गए थे, पूर्व गत मार्ग से आ अपने व्याकुल शिष्यो से मिलकर

आसन पर आए। तदनतर श्री आचार्य जी महाप्रभु जी ब्रज की यात्रा करने चले और उसका निर्णय करके अनुक्रम से वर्णन किया है। और जिस जिस स्थल मे आपने श्री मद्भागवत का पारायण कर बैठकें नियत की हैं, जो अद्य पर्यंत प्रसिद्ध हैं, उस जगह ऐसा ❀ चिन्ह किया है।

तदीयसर्वस्व

अर्थात्

श्री नारदकृत भक्तिसूत्र का बृहत् भाष्य

प्रेमी जनों के दासानुदास प्रेमपथ के भिक्षुक

तदीय नामांकित अनन्य वीर वैष्णव

श्रीहरिश्चन्द्र

द्वारा

'केनापि देवेन हृदि स्थितेन'

लिखित

भक्त्य त्वनन्यया लभ्यो हरिरन्यत् विडम्बनम्

सं० १९३३

हरिश्चन्द्र मैगजीन ख० १ स० ५
(१५ फरवरी सन् १८७४ ई०)
में नारद सूत्र केवल अर्थ सहित
बिना व्याख्या के छपा था ।
सं० १६२३ में पुस्तक
लिखते हुए अर्थ भी ठीक
किया गया है ।

उपक्रम

हम आर्य लोगों मे धर्मतत्व के मूलग्रथ. का भाषा में प्रचार नहीं। यही कारण है कि भिन्नता स्थान स्थान फैली हुई है। अनेक कोटि देवी देवताओं का माहात्म्य, छोटी छोटी बातो मे ब्रह्महत्या का पाप और तुच्छ तुच्छ बातो मे बडे बडे यज्ञो का पुण्य, अह ब्रह्म का ज्ञान और मूलधर्म छोड कर उपधर्मों मे आग्रह ने भारतवर्ष से वास्तविक धर्मों का लोप कर दिया। जिस जगत्कर्त्ता ने हम लोगो को उत्पन्न किया, ससार के सुख दिए, बुरे भले का ज्ञान दिया और अपना सत् मार्ग दिखलाया उस से यहाँ की प्रजा विमुख हो कर धर्मांतर मे फँस गई। यदि प्रथम कर्त्तव्य उसकी भक्ति के अनतर कर्मानुष्ठान मे प्रवृत्त होते तो कुछ बाधा नहीं थी। वह न हो कर गौण कर्म तो मुख्य हो गए और मुख्य वस्तु गौण हो गई। इसीसे सारा भारतवर्ष भगवद्विमुख होकर छिन्न भिन्न हो गया जो कि इसकी अवनति का मूल कारण हुआ। कभी भगवद्विमुख कोई देश या जाति उन्नत हो सकती है? धर्म हमरा ऐसा निर्बल और पतला हो गया है कि केवल स्पर्श से वा एक चुल्लू पानी से मर जाता है। कच्चे गले सडे सूत वा चिउँटी की दशा हमारे धर्म की हो गई है। हाय!!!

इसी धर्मपथ को समुन्नत करने को एक ईश्वरवादी अनेक आचार्यों ने परिष्कृत और सहज धर्म प्रचलित किए हैं और अनेक लोग इन मार्गों मे दीक्षित हैं। किंतु उन लोगो मे भी वाह्यवेष वाह्याडबर आचार विचार वा परनिंदादि आग्रह ऐसे समा गये हैं कि उनका धर्म किसी काम नहीं आता। या तो ईश्वरवादी हिंदूसमाज से सपूर्ण वहिष्कृत हो जायँगे या कर्ममार्ग से ऐसे दब जायँगे कि नाममात्र के भक्त रहैंगे।

इसी विषमता को दूर करने को इस ग्रथ का आविर्भाव है। इस मे मुक्तकठ से कहा गया है कि केवल प्रेम परमेश्वर का दिव्य मार्ग है। यद्यपि यह ग्रंथ वैष्णवों की शैली पर लिखा गया है, किंतु परमेश्वर के

भक्तमात्र के हेतु यह उद्योग है। क्रिस्तान आदि विदेशी धर्मप्रेमी जन समझें कि कृष्ण उनके निर्गुण परमेश्वर का नाम है, वैष्णवों की तो कुछ बात ही नहीं है, शैव कहें कि विष्णु शिव ही का नामांतर है, ब्राह्म समझें कि हरि ब्रह्म ही को कहते हैं, उपासना और आर्यसमाज इसे अपना ही तत्व मानें, सिक्ख इस में गुरु का पथ देखें और ऐसे ही भक्तिमार्ग वाले मात्र सब लोग इस को अपनी निज संपत्ति समझें। इस में कोरे कर्ममार्गी वा बहु-भक्त वा स्वयं-ब्रह्म लोग यदि मुझ को गाली भी देंगे तो मैं अपने को कृतार्थ समझूँगा।

लोगों को उचित है कि इस ग्रंथ को देखें। निश्चय रक्खें कि परमेश्वर को पाने का पथ केवल प्रेम है। और बातें चाहे धर्म की हों या लोक की, दोनों बड़ी ही हैं। बिना शुद्ध प्रेम न लोक है न परलोक। जिस संसार में परमेश्वर ने उत्पन्न किया है, जिस जाति वा कुटुंब से तुम्हारा संबंध है और जिस देश में तुम हो उस से सहज सरल प्रेम करो और अपने परम पिता परम गुरु परम पूज्य परमात्मा प्रियतम को केवल प्रेम से ढूँढ़ो। बस और कोई साधन नहीं है।

हरिश्चंद्र

समर्पण।

नाथ !

आज बहुत दिन पर कुछ कहने चले हैं। कुछ कहते कहाँ से, वैसा चित्त रहना तब न कहते ? क्या आप से कुछ छिपी है ? भला आप से क्या, आप तो ००००० हैं, आपके लोगों ही से न छिपैगी। बोल चालही में मालूम पड़ैगी। प्यारे ! ऐसा क्यौं ? हम हजार बुरे बुरे बुरे लाख दफे बुरे पर आप तो भले हो न ? फिर क्यो ? क्या हमारी करनी पर गए ? तब तो हो चुकी। भला ध्यान तो कीजिए हममे वा किसी मे भी आप से तुलना क्या ? हाय ! तुलना क्या कुछ बातही नहीं। हरे ! हरे ! जो आप अपनी बड़ाई देखिए तो हम क्या बड़े बड़े क्या हैं। पर ऐसी तो नाथ ने आज तक कभी की नहीं यह नई क्यौं होती है ? नाथ ! अपनाए की लाज तो हम पामरो को होती है तो बड़ो को क्यौं न हो, और फिर जो जितना बड़ा वैसीही उसकी दयालुता भी बड़ी, तो फिर आप की कृपा का क्या पूछना है। पर हाय ! क्या हमारे अपराध उस दया से भी बड़े निकले। प्यारे ! क्या इसी दशा मे रहैं ? नाथ ! क्या वे दिन अब दुर्लभ हो जायगे ? हाय ! उन पवित्र आँसुओ से क्या अब हृदय नहीं सिंचित होगा ? क्या वे सर्वचिंताविस्मारक प्रियालाप अब कर्णरन्ध्रो को फिर न पूर्ण करेंगे ? क्या वे दिन अब इस जीवन मे निस्सन्देह दुर्लभ होगए ? तो फिर ऐसे जीवनही से क्या ? हम जीवन की आशाही क्यौ करते है ? केवल जनम भर पाप कमाने और आपको और अपने को झूठ बदनाम कहने को ? धिक ! ऐसे जीवन पर। हम तो इसकी आशा इसी से करते थे कि दिन दिन हमारी चित्तवृत्ति उज्ज्वल होगी और दिन दिन प्रेमानद बढ़ेगा। इस हेतु नहीं कि प्रवाहरज्जु मे हम दिन दिन और जकड़ते जायगे और केवल जीवनभार ढोकर संसार मे लिप्त होकर अतमे आपके कहलाकर भी वैसे ही डूबैगे जैसे तुम्हारे बिना ससार डूबता है। जीवन का परम

निकलते हैं और मेरा भी मान रख लीजिए । हे नित्यनूतन घन नित्य नव प्रेम बरसाइए।

हाय ! आज हमने आप को कितना कष्ट दिया और कितना बके। जमा भी तो कितने दिन से होरहा था। और फिर बकैं तो किस के आगे। बकनेही से तो कुछ संतोष होता है। जाने दीजिए। देखिए यह आप के लोगों का सर्वस्व है इसे अंगीकार कीजिए। भला कहाँ परम पवित्र अमृतमय प्रेममार्ग, कहाँ हमारी पामर बुद्धि। पर क्या हुआ। ऐसी उत्तम बातैं जो मुँह से निकली हैं यह हमारी करतूत नहीं है, तुमने कही हैं। शिव वा नारद कौन हैं ? आपही। यद्यपि जब बुझ जाय तब काठ का काठ है पर जब तक अग्नि के संग से दहकता रहै काठ भी आग ही कहलाता है। शराबी की कोई जाति नहीं होती है। थोड़ी शराब पियै तो शराबी, बहुत पियै तो शराबी। इसी नाते इतना बके हैं। इसे सुन कर प्रसन्न होना, सुधारना, इसका प्रचार करना यह सब तुम्हारा और तुम्हारे जनों का काम है, हमारी तो कर्त्तव्यता इतनीही थी कि निवेदन कर दिया।

चैत्रशुद्ध ५ — आपका

सं० १९३३ — हरिश्चंद्र

—:o—

श्री तदीयसर्व्वस्व

नारदीय

भक्तिसूत्र का बृहत् भाष्य

दोहा

भरित नेह नव नीर नित बरसत सुरस अथोर ।
जयति अपूरब घन कोऊ लखि नाचत मन मोर ॥
करि करुना लखि जग विमुख कियो प्रेमपथ चारु ।
जय वल्लभ व्रजगोपिका प्रीति कृष्ण अवतारु ॥
जिहि लहि फिर कछु लहनकी आस न चित मे होय ।
जयति जगत पावन करन कृष्ण बरन यह दोय ॥

१ ॐ अथातोर्भक्ति व्याख्यास्यामः ।

अब हम यहाँ से भक्ति की व्याख्या करते हैं । १ ।

अथ शब्द मंगलवाचक है । अतः शब्द से नारद जी अपनी कही हुई पूर्वोक्त वार्त्ता का व्यावर्तन करते है और इन सूत्रो के द्वारा प्रतिज्ञापूर्वक भक्तिशास्त्र का व्याख्यान आरंभ करते हैं ।

२ ॐ सा कस्मै परमप्रेमरूपा ।

वह ईश्वर में परमप्रेमरूपा है । २ ।

सा नाम पूर्वोक्त भक्ति कस्मै नाम सदा प्रश्नार्ह ईश्वर में परमप्रेम-रूपा अर्थात् साधनांतरशून्या है। कि शब्द से ईश्वर का ही बोध होता है क्योंकि ईश्वर में सदा प्रश्न बना ही रहता है। "नैकः सर्वः स वः कः कि" विष्णुसहस्रनाम में भगवान् के नाम हैं क्योंकि वेद ईश्वर के विषय में 'नेतिनेति' बोलते हैं।

३ ॐ अमृतस्वरूपा च।

और अमृतस्वरूप है। ३।

अमृत नाम मधुर है और मोक्षस्वरूप है क्योंकि जो भक्तिरत हैं उनको मोक्षांतर की अपेक्षा नहीं होती।

४ ॐ यल्लब्ध्वा पुमान् सिद्धो भवत्यमृतीभवति तृप्तोभवति।

जिसको पाकर मनुष्य सिद्ध होता है, अमृत होता है और तृप्त होता है। ४।

यत् अर्थात् भक्तिस्वरूप अमृत को पाकर सिद्ध नाम साधनांतर निरपेक्ष और अमृती भवति नाम स्वयमानन्दरूप होता है, मृत्यु से निडर हो जाता है, तृप्त अर्थात् एतद् व्यतिरिक्त इस या परलोकगत सुखविषयक निरिच्छ होता है।

५ ॐ यत्प्राप्य न किंचिद्वांछति न शोचति न द्वेष्टि न रमते नोत्साहीभवति।

जिसको पाकर फिर न कुछ चाहता है न सोचता है, न किसी से द्वेष करता है न कहीं रमता है और न किसी विषय का उत्साह करता है ॥ ५ ॥

क्योंकि पूर्वोक्त वार्ता का मुख्य कारण मन है, परंतु जब वह इसने भक्ति से किसी (परमेश्वर) को अर्पण किया है तो उसके अभाव से ये बातें आप न होंगी क्योंकि कार्य कारण के बिना नहीं हो सकता।

६ ॐ यद्ज्ञानान्मत्तोभवति स्तब्धोभवत्यात्मारामो भवति।

जिसको जानकर पागल, स्तब्ध और आत्माराम हो जाता है ॥६॥

भक्ति का स्वरूप कह कर सूत्र में फल कहते हैं कि उस भक्ति का स्वरूप जान करके मनुष्य मत्त अर्थात् पागल हो जाता है 'जडोन्मत्त-पिशाचवत्'। "निशम्य कर्माणि गुणानतुल्यान् वीर्याणि लीलातनुभिः

कृतानि । यदातिहर्षोत्पुलकाश्रुगद्गद प्रोत्कण्ठ उद्गायति रौति नृत्यति ॥ यदा ग्रहग्रस्त इव क्वचिद्धसत्याक्रन्दते ध्यायति वन्दते जनं । मुहुश्श्वसन् वक्ति हरे जगन् पते नारायणेत्यात्मगतिर्गतत्रप. ॥ तदा पुमान्मुक्तसमस्तबधनस्तद्भावभावानुकृनाशयाकृतिः । निदग्धबीजानुशयो महीयसा भक्तिप्रयोगेण समेत्यधोक्षजम् ॥" श्रीमद्भागवत मे परम भागवत श्रीप्रल्हाद जी ने दैत्यपुत्रो को उपदेश करती समय भक्तों के वर्णन में ये तीन श्लोक कहे हैं। (यहाँ यह भी बात समझनी चाहिए कि ये असुरबालक उपदेशपात्र नहीं थे, तथापि भक्तजनो के चित्त मे जो प्रेम की उमग आती है तो पात्रापात्र का विचार नहीं करते) भक्त जन भगवान के अनेक लीलार्थ धारण किए गए स्वरूपो के कर्म और अतुल्य गुण और वीर्यों को सुनकर जब अत्यत हर्ष से रोमाचित अश्रु से गद्गद कठ हो जाते हैं तब बड़े ऊचे स्वर से गाते रोते नाचते हैं, कभी भूत लगे हुए मनुष्यों के समान हँसते हैं और चिल्लाते हैं, कभी बार-बार लबी साँस लेते हैं, कभी तादात्म्य गति से 'हे हरे,' नारायण, जगत्पते' आदि नाम कीर्तन लज्जा छोड के करते हैं। जब ऐसी गति हो जाती है तब मनुष्य सब बधनो से छूट कर भगवद्भाव हीके भाव, वही अनुकरण, वही चेष्टा, वही आशय, वैसी ही आकृत्यादि करने लगता है और अपने प्रेम से सुकर्म दुष्कर्मों के बीजो को जला कर अपनी परम भक्ति से भगवान को प्राप्त होता है।

तो परम भक्ति प्राप्त होने का यही लक्षण है कि मनुष्य पागल हो जाता है और स्तब्ध हो जाता है अर्थात् फिर उसको लोक और वेद भूत प्रेत देवता इत्यादि किसी को मानना वा किसी का नमस्कार वा किसी का किसी रीति आदर करने की आवश्यकता नहीं रहती और आत्माराम हो जाता है अर्थात् ससार के विषयो मे प्रीति छोड़ आत्माराम अर्थात् ईश्वर ही मे सदा रमण करता है।

पहिला अनुवाक समाप्त हुआ

७ ॐ सा न कामयमाना निरोधरूपात् ।

वह भक्ति कामना के अर्थ नहीं होती, क्योंकि वह निरोधरूपा है ॥७॥

जो कामना के लिए की जाती है वह भक्ति नहीं वह लोकव्यापार है। जब श्री नृसिंह जी ने प्रह्लाद जी को वर माँगने के हेतु कहा तब उन्होंने भी यह उत्तर दिया कि 'हमने आपसे व्यापार नहीं किया, भक्ति किया। जो सेवक होकर सेवा के बदले मे सेव्य से कुछ चाहे वह सेवक नहीं किंतु व्यापारकारी बनिया है, और यदि आप वर देना चाहें तो यही दीजिए कि हमारे मन मे किसी वर वा राज्यभोगादि बाछा की उत्पत्तिही न हो'। भगवान ने श्रीमुख से भी यही आज्ञा की है "नमय्यावेशितधिया कामः कामाय कल्पते। भर्जिता क्वथिता धाना भूयो बीजाय नेष्यते" ॥ जिन लोगो का चित्त मुझ मे शुद्ध रीति से प्रतिष्ठित है उनके काम कामना के अर्थ नहीं होते, क्योंकि भूने और कूटे धान फिर नहीं उगते।

इस सूत्र से विषयजन्य प्रेम का भी निवारण किया, इससे लोग ससार के विषयियो के इंद्रियजन्य सुख वा और किसी इच्छा से की हुई प्रीति को हम किसी पर प्रेम करते है यह कह कर इस प्रेमशब्द को लज्जित न करें, क्योंकि प्रेम तो सर्वदा कामनाशून्य है ॥

कामनाही की निवृत्ति के अर्थ कहते है कि वह भक्ति निरोधस्वरूपा है, तो जब चित्त निरुद्ध होगा तो उसमे कोई कामना आपही न होगा।

भक्तिमार्गीय परमाचार्य श्रीश्रीवल्लभाचार्य महाप्रभु ने अपने ग्रंथ निरोधलक्षण मे लिखा है, 'अहनिरुद्धो रोधेन निरोधपदवीं गतः। निरुद्धानां तु रोधाय निरोध वर्णयामि ते ॥ हरिणा ये विनिर्मुक्तास्ते मग्ना भवसागरे। ये निरुद्धास्तएवात्र मोदमायांत्यहर्निशं' ॥ आप आज्ञा करते हैं—मैं रोध मे निरुद्ध हूँ और निरोध की पदवी को प्राप्त हो चुका हूँ तथापि निरोधाधिकारियोंके निरोध के अर्थ निरोध का वर्णन करता हूँ। फिर आप आज्ञा करते हैं कि जिन को भगवान ने छोड दिया है वे ससारसागर में डूबे हुए हैं और जिनको उसने निरुद्ध किया है

वहाँ अहर्निश परमानद प्राप्त करते हैं। इस वाक्य से यह दिखाया कि निरुद्ध होना स्वसाध्य नहीं है, जिनको वह (ईश्वर) चाहता है, निरुद्ध करता है, नहीं तो उसे छोड देता है। मनुष्य का बल केवल उस मार्ग पर प्रवृत्त होना है, परतु इससे निराश न होना चाहिए कि जब अंगीकार करना वा न करना उसी के आधीन है तो हम क्यों प्रयत्न करै। हमारे क्लेश करने पर भी वह अगीकार करे वा न करे ऐसी शका कदापि न करना। क्योंकि आचार्य आज्ञा करते हैं कि "क्लिश्यमानान्जनान्दृष्ट्वा कृपायुक्तो यदा भवेत्। तदा सर्वं सदानन्दं हृदिस्थं निर्गतं बहिः॥ सर्वानन्दमयस्यापि कृपानन्दः सुदुर्लभः। हृद्गतः स्वगुणान्श्रुत्वा पूर्णः प्लावयते जनान्॥ तस्मात्सर्वं परित्यज्य निरुद्धैः सर्वदा गुणाः। सदानन्दपरैर्गेया सच्चिदानन्दता स्वतः।" जनो को क्लेशित देख करके जब वह कृपायुक्त होता है तब सर्व सदानद रूप बाहर और अतः प्रगट कर देता है। सर्वानदमय को भी उसके कृपा का आनद दुर्लभ है परतु हृदय मे बैठा हुआ जब अपने गुणो को सुनता है तो अपने कृपानद मे लोगो को भिजो देता है। इस हेतु और सब बखेडा छोड़ कर सदानद पर निरुद्ध लोगो का उसका गुण सदा गाना चाहिए। उससे सच्चिदानद का आप मे आप प्रागट्य होता है। अर्थात् नियम है कि जो सब परित्याग करके उसका भजन करेंगे उसको वह निरुद्ध करके परमानद दान करेहीगा। यही उस की प्रतिज्ञा भी है "कौंतेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति। तेषामह समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात्"॥ इस से उसके वाक्य पर विश्वास रख कर निरुद्ध होना चाहिए।

निरोध छः प्रकार का है अर्थात् छः प्रकार की भावना ईश्वर मे करने से मनुष्य निरुद्ध होता है, यथा प्रथम भीतिभाव निरोध' अर्थात् ससार के दुःखो से भयभीत होकर ईश्वर मे अवलब करना, दूसरा "स्वामिभावनिरोध" अर्थात् ईश्वर को ससार का स्वामी मान कर दासभाव से निरुद्ध होना, तीसरा "सत्वभावनिरोध" अर्थात् ईश्वर को 'वासुदेवःसर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः' इस वाक्य के अनुसार छोटे बड़े चेतन सब को ईश्वर मान कर नमस्कार करना और सब स्थान पर उसी को देखना वा स्वामी माता पिता मित्र सब भाव से ईश्वरही का

भजन, चौथा 'सख्यभाव निरोध" अर्थात् ईश्वरही को सखा मान कर निरुद्ध होना, पाँचवाँ "वात्सल्यभावनिरोध" अर्थात् श्री नन्दयशोदादिक व्रज के बडे गोपियों के वा इनके सदृश और किसी के भाव के समान ईश्वर मे पुत्रवत् स्नेह करना, छठा "कान्तभावनिरुद्ध" होना। इन छ निरोधो में पूर्व पूर्व से उत्तर उत्तर अधिक है।

८ ॐ निरोधस्तु लोकवेदव्यापारसन्यास।

निरोध तो लोक वेद व्यापार का त्याग करना है ॥ ८ ॥

इस सूत्र मे निरुद्ध होने का स्वरूप कहते हैं। लोक और वेद के व्यापार को छोड़ देना ही निरोध है।

६ ॐ तस्मै अनन्यता तद्विरोधिषूदासीनता च।

और उसमे अनन्यता और उसके विरोधियो पर उदासीनता भी निरोध है अर्थात् बिना अनन्यता हुए निरोध की सिद्धि नहीं होती ॥६॥

१० ॐ अन्याश्रयाणां त्यागोऽनन्यता।

अन्य आश्रयों का त्याग करना अनन्यता है।

लोक मे यह प्रत्यक्ष है कि स्वामी का सवक, मित्र को मित्र, पुरुष को स्त्री बडी प्रिय होगी। जो अनन्य हो 'अनन्याश्चिन्तयन्तो मामित्यादि श्री महावाक्य भी है, व्याससूत्र मे भी 'अनन्याधिपति.' ईश्वर का गुण लिखा है।

११ ॐ लोकवेदेषु तदनुकूलाचरण तद्विरोधिषूदासीनता।

लोक और वेद मे केवल उन्हीं (प्रेमपात्र) के अनुकूल आचरण करने से उस अनन्यता के विरोधी कर्म मे उदासीनता आप से आप होती है ॥ ११ ॥

लोक और वेद मे श्रीमद्भगवदनुकूलाचरण करना यही 'तद्विरोधिषूदासीनता' है अर्थात् जब हमने उनके अनुकूल ही सब आचरण किए तो तद्विरोधियों मे उदासीनता आपही आ गई क्योंकि तदीय होने ही से जिनके सब पुरुषार्थ पूर्ण हो गए है और सब मङ्गलामङ्गल नष्ट हो गए हैं उनको कार्यांतर करने की आवश्यकता ही नहीं तो उनके वैदिक वा लौकिक कार्य आपही निवृत्त होगए ॥ ११ ॥

१२ ॐ भवतु निश्चयदार्ढ्यादूर्द्ध्वं शास्त्ररक्षणं।

निश्चय के दृढ़ होने के पहिले शास्त्र रक्षण होय ॥ १२ ॥

क्योंकि श्रीमुख से आप ने आज्ञा की है "त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन। निर्द्वन्द्वो नित्यसत्त्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान् ॥ यावानर्थ उदपाने सर्वतः सम्प्लुतोदके। तावान् सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः ॥ कर्म्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ॥" हे अर्जुन वेद त्रिगुण विषय हैं तू तो तीनों गुणों की प्रवृत्ति से अलग होकर निर्द्वन्द्व और अपने स्वरूप में स्थित हो और अपने योगक्षेम की चिंता मत कर। परंतु जब तक तेरे हृदय में अर्थों की तरंगें उठती हैं तब तक तेरा सब वेदों में ब्राह्मण के कहे अनुसार कर्म में अधिकार है वहाँ भी कर्म के फल में तेरा अधिकार नहीं, इससे न तो तू फलों की इच्छा कर और न अकर्मी हो। तो जब तक कामना की तरंगें चित्त में उठती हैं और जब तक अनन्या भक्ति दृढ़ नहीं हुई है तब तक वेद माने, फिर छोड़ दे ।

१३ ॐ अन्यथा पातित्याशंका।

अन्यथा पतित होने की शंका है । १३ ।

अर्थात् जो सिद्ध होने के पहिले कर्मों को छोड दे और न यह सिद्ध हो न वह तो व्यर्थ पतित हो जाता है, परंतु भगवत्कर्म करता हुआ अन्य कर्मों से च्युत जो सिद्ध न होगा तौ भी उस जीव का नाश नहीं है और जीव का कल्याण है। जडभरत जी का उदाहरण इसमें प्रमाण है, क्योंकि उन्होंने अपने मुख से कहा है, "अहं पुरा भरतो नाम राजा विमुक्तदृष्टश्रुतसंगबंधः। आराधनं भगवत ईहमानो मृगोऽभवं मृगसंगाद्धतार्थः ॥ सा मां स्मृतिर्मृगदेहेऽपि वीर कृष्णार्चनप्रभवा नो जहाति। अतो ह्यहं जनसंगादसंगो विशंकमानो विवृतश्चरामि"। श्री मुख से भी आप ने आज्ञा की है "पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते। नहि कल्याणकृत्कश्चिद् दुर्गतिं तात गच्छति" इत्यादि।

१४ ॐ लोकोपि तावदेव किंतु भोजनादिव्यापार-स्त्वाशरीरधारणावधि।

लोक भी तभी तक है किंतु भोजनादि व्यापार तो जब तक शरीर है तब तक है। (४।

इस में कितने लोक ऐसी शंका करते हैं वरञ्च हँसते हैं कि जब खाना पीना आदि व्यवहार छूटता ही नहीं तो कर्म छोड़ देना यह अयुक्त है। परंतु इसी शंका के निवारणार्थ यह सूत्र है, भोजनादि व्यापार शरीररक्षार्थ है और जब तक शरीर है तब तक अवश्य कर्त्तव्य है। इनको जो छोड़ना हो तो विष खाके एक साथही न मर जाना। हाँ तदीयों को उन भोजनादि व्यापार की चिंता करनी अवश्यही नहीं चाहिए और जो कर्मों का कहो तो कर्मों का त्याग अनन्यता की पुष्टि के हेतु है क्योंकि बिना निःसाधन हुए मनुष्य अनन्य नहीं होता। इस से यह सिद्ध हुआ कि जब तक निश्चय न हो तब तक लोक और वेद दोनों मानना परंतु जब निश्चय दृढ़ हो जाय और कामनाओं की निवृत्ति हो जाय तब लोक और वेद दोनों छोड़ कर केवल "कृष्ण एव गतिर्मम" यह उच्चारण करना। श्री विष्णुस्वामी-मत के बीजधारक श्री विल्वमंगलाचार्य ने भी यही कहा है।

"सन्ध्यावंदन भद्रमस्तु भवते भोस्नान तुभ्यं नमः
भोदेवाः पितरश्च तर्पणविधौ नाहं क्षमः क्षम्यताम्।
यत्र क्वापि निषद्य यादवकुलोत्तंसस्य कंसद्विषः
स्मारस्मारमघं हरामि तदलं मन्ये किमन्येन मे"।

दूसरा अनुवाक् समाप्त हुआ।

---

१५ ॐ तल्लक्षणानि वाच्यन्ते नानामतभेदात्।

उस (भक्ति) के लक्षण विविध मतभेद से वर्णन किए जाते हैं।

इस सूत्र में एक शंका है कि सूत्र का लक्षण 'स्वल्पाक्षरमसंदिग्धम्' ऐसा है। सूत्रों में कोई बात व्यर्थ नहीं होनी चाहिए। यहाँ लक्षण तो आपही कहेंगे तो इस सूत्र की क्या अवश्यकता थी। ऐसा नहीं, यह

सूत्र इस अर्थ का प्रतिपादक नहीं है कि हम आगे उस के लक्षण कहेंगे, वरन् ऐसी प्रतिज्ञा है कि ससार मे इस प्रेम को लोग अनेक मत से मानते हैं परतु वास्तव मे वह प्रेम नहीं है। प्रेम वही है जो शास्त्र मे कहा जायगा, जैसा स्त्री पुरुष का कामनार्थ प्रेम वा अन्य किसी प्रकार की त्रिगुणात्मिका देवभक्ति प्रेम नहीं है, यद्यपि ससार मे वह प्रेम कही जाती है और उनके अनेक प्रकार लोग लक्षण कहते हैं। यही बात अग्रिम सूत्रों मे सिद्ध करेंगे।

१६ ॐ पूजादिष्वनुराग इति पाराशर्य्यः।

भगवत्पूजादिक मे अनुराग रूप भक्ति यह श्री व्यासदेव का मत है।

क्योंकि अनेक पुराणों मे तथा जैमिनिसूत्र के भाष्य मे बहुत कर्म-विधान की प्रशसा की है और पूजनादि केवल प्रेम के साधनस्वरूप हैं फलरूप नहीं। श्रीमहाप्रभु जी ने भी सेवानिर्णय मे आज्ञा की है 'कृष्ण-सेवा सदा कार्या मानसी सा परा मता' इत्यादि। जीवों के आसुरावेश-निवृत्यर्थ और मानसी-सेवा सिद्ध्यर्थ बाह्य सेवा (पूजादि) हैं, परतु जब परम प्रेमावेश होता है तब मानसी सेवा भी छूट जाती है।

१७ ॐ कथादिष्विति गर्गः।

कथादि मे अनुराग गर्गाचार्य का मत है।

अर्थात् भगवत्कथाश्रवण को मुख्य मान कर कथा मे अनुराग करना यह नारद जी का मत नहीं है, प्रेम की उत्कठा मे जो भगवत्कथा से अनुराग हो वह ठीक है।

१८ ॐ आत्मरत्यविरोधेनेति शाण्डिल्यः।

आत्मरति के अविरोध से अनुराग शाडिल्य का मत है।

शाडिल्य भक्तिसूत्र के तृतीयाह्निक के तृतीय सूत्र मे मत दिखाते हैं 'तामैश्वर्यपदा काश्यप. परत्वात्', 'आत्मैकपदा बादरायणः', 'उभयपदां शाडिल्य' शब्दोपपत्तिभ्या'। कश्यप का द्वैत और बादरायण का अद्वैत दिखा कर आप द्वैताद्वैत अवलबन करते हैं परतु द्वैत वा अद्वैत वा द्वैता-द्वैत मत का अवलबन करके भक्ति को अपने पूर्वमत के आग्रह से अपनी दीक्षा वा सप्रदाय के अनुसार बलत्कार से भक्ति चलाना नारद का मत नहीं। जब मतमतातर के वाद मे बुद्धि अभिनिविष्ट हो जायगी तो तीव्र

प्रेमलक्षणाभक्ति में अन्यमनस्क होने से भेद पड जायगा। इससे जिस भाव से निरोध हुआ हो उसी भाव मे प्रेम मे प्रवृत्त होना ही नारद का मत है। यदि हमारा यह भाव है कि ईश्वर एक है, आनंदमय है, हम उसके दासानुदास है, हममे उससे कोई सबंध नहीं तो उसी भाव से भक्ति करनी और जो सर्वभाव हो ता सर्व भाव से भक्ति करनी, द्वैताद्वैत भाव पर चित्त आरूढ हो तो उसी भाव से उपासना करनी। अर्थात् जीव ईश्वर के भेदा-भेद के झगडे मे बुद्धि फसा कर प्रेम मे बाधा नहीं डालनी, वही बात अगले सूत्र से सिद्ध करते हैं

१६ ॐ नारदस्तु तदर्पिताखिलाचारता तद्विस्मरणे परमव्याकुलतेति ॥

नारद जी तो सर्व कर्म श्री हरि मे अर्पण करना और श्री हरि की विस्मृति होने मे परम व्याकुल होना यही भक्ति का लक्षण कहते है।

कर्म दो प्रकार के है, लौकिक और पारलौकिक। प्रेमियो के दोनो कर्म यहाँ लिखते है। पारलौकिक मे भक्तो का एतावन्मात्र कर्तव्य है कि अपने सब आचरणो को भगवान मे अर्पण करना और लौकिक मे इतना कर्तव्य है कि जब भगवद्वियोग-जनित परमानन्द का हृदय से तनिक भी विस्मरण हो तब परमव्याकुलता होनी। तो अलौकिक कर्म तो तत्समर्पण से निवृत्त हुए, लौकिक मे जब व्याकुलता का उदय होगा तो आपही सब काम छुट जायगे। इस मे लौकिक और पारलौकिक दोनो कर्मों की प्रवृत्ति से अलग होकर अनवच्छिन्न तैलधारावत् सर्वक्षण भगद्वृत्ति मे मग्न रहना, सर्वदा लीलाका अनुभव करना, सर्वदा वियोग का अनुभव करना, किसी काम मे लगे हो परन्तु चित्त उधरही रखना, जो वह ध्यान तनिक भी भूले तो एक सग व्याकुल हो जाना वही भक्ति का लक्षण है।

२० ॐ अस्त्येवमेवं।

ठीक ऐसाही है।

पूर्वकथित भक्तिलक्षण को इस सूत्र से अन्यस्थान मे स्वकथित वा परकथित अनेक विधियो के निरासपूर्वक मुक्त कठ से प्रतिज्ञा स्वरूप स्थापन करते हैं। लोक मे भी चालू है कि जो बात दो बेर कहते है उस

पर अपनी पूर्ण दृढता दिखाते हैं इस भाव से यहाँ भी यह सूत्र कहा है अर्थात् अब इसमें किसी शंका का अवकाश नहीं।

२१ ॐ यथा व्रजगोपिकानां।

जैसा व्रज की गोपियों का (प्रेम है)।

लक्षण कहके उदाहरण में सब प्रेमियों की शिरोमणि-स्वरूप श्री गोपीजन का नाम लेते हैं अर्थात् प्रेम का उदाहरण जैसा श्री गोपीजन ने दिखाया वैसा और कौन दिखावेगा? हुई है, लोक वेद की कठिन लौहशृंखला को कच्चे सूतसी कौन तोड़ सकता है? जिनके भगवान भी सर्वदा ऋणी हैं उनकी महिमा कौन कह सकता है? श्री मुख से कहा है 'न पारयेऽहं निरवद्यसंयुजां स्वसाधुकृत्यं विबुधायुषापि वः। या मा भजन् दुर्जरगेहशृङ्खलाः संवृश्च्य तद्वः प्रतियातु साधुना" । भगवान् श्री गोपीजन से गले में पीतांबर डाल कर और हाथ जोड़ कर निवेदन करते हैं हे श्रीव्रजदेवियो! मैं जो देवताओं की आयुष्य धारण करूँ और उस अनेक कल्प की आयुष्य से आप लोगों में से एक का भी प्रत्युपकार किया चाहूँ तो न कर सकूँगा। क्योंकि महादुर्जर घर की शृङ्खला आप लोगों के सिवाय और कौन तोड़ सकता है? अतएव मैं आप लोगों का सदा ऋणी हूँ। तो भगवान का यह श्रीमुखवाक्य उन श्रीगोपीजन के प्रति जिनने भगवान के श्रीमुख से कहे हुए रासप्रसंग के द्वारा श्लोकात्मक मर्यादास्थापन के वाक्यों को तृण सा भी नहीं माना, कुछ आश्चर्य नहीं है। एक तो साधारण शास्त्र के वाक्य माननीय है, दूसरे उस में भी भगद्वाक्य, तीसरे जब भगवान् प्रत्यक्ष अपने मुखार-विंद से आज्ञा करें तो ऐसा कौन होगा जो न मानेगा। पर ऐसे श्री गोपीजनही हैं कि प्रेममार्ग के विरुद्ध भगवद्वाक्य को भी न माना।

भगवान ने जब परमभागवत उद्धवजी को भक्ति का उपदेश किया है वहाँ कहा है "रामेण सार्धं मथुरां प्रणीते श्वाफल्किना मय्यनुरक्त-चित्ताः। विगाढभावेन न मे वियोगतीव्राधयोऽन्यं ददृशुः सुखाय॥ तास्ताः क्षपाः प्रेष्ठतमेन नीता मयैव वृन्दावनगोचरेण। क्षणार्द्धवत्ताः पुनरंग तासां हीना मया कल्पसमा बभूवुः॥ ता नाविदन्मय्यनुषंगबद्धधियः-स्वमात्मानमदस्तथेदं यथा समाधौ मुनयोऽब्धितोये न च प्रविष्टा इव

नामरूपे ॥ ब्रह्मा ने भी कहा है "षष्टिवर्षसहस्राणि तपस्तप्त मया पुरा । नन्दगोपव्रजस्त्रीणा पादरेणूपलब्धये ।। ॐ होभाग्यमहोभाग्यं नन्दगोप व्रजौकसा । यन्मित्र परमानन्द पूर्ण ब्रह्म सनातन" । जब उद्धव जी को भगवान् व्रज विदा करने लगे हैं तब वहाँ भी श्री गोपीजन का स्वरूप अपने श्रीमुख से उद्धव जी को समझाया है । "ता मन्मनस्का मत्प्राणाः मदर्थे त्यक्तदैहिकाः । ये त्यक्त लोकधर्माश्च मदर्थे तान्बिभर्म्यह ॥ मयि ता. प्रेयसा प्रेष्ठे दूरस्थे गोकुलस्त्रियः । स्मरन्त्यो न विमुह्यन्ति विरहौत्कंठ्यविह्वलाः ॥ प्रधारयति कृच्छ्रेण प्रायः प्राणान्कथचन । प्रत्यागमनसदेशैर्वल्लभो मे मदात्मिका." । हे उद्धव उन गोपीजन ने मुझ मे मन लगाया है, मै ही उनका प्राण हूँ, मेरे हेतु उनने सब देह के व्यवहार छोड़ दिये हैं और जो लोग मेरे अर्थ लोक और धर्म को छोड देते हैं उनका मैं धारण करता हूँ । वे गोपियाँ उन के परम प्यारो मे प्यारे मेरे दूर रहने से जब मेरा स्मरण करती हैं ता विरह की उत्कठा से व्याकुल होकर अपने शरीर की सुध भी भूल जाती हैं । बड़ी कठिनता से और बड़े दुख से मेरे बिना किसी रीति प्राण धारण करती हैं मेरे आने के सदेसे सुन कर जीती है, उन गोपियों की आत्मा मै हूँ और वे मेरी हैं, इत्यादि । जिन श्री गोपीजन से परम भागवत उद्धव जी ने भी कहा—"अहोयूय स्म पूर्णार्था भवत्यो लोकपूजिता. । वासुदेवे भगवति यासामत्यर्पित मन: ॥ दानव्रततपोहोमजपस्वाध्यायसयमैः । श्रेयोभिर्विविधैश्चान्यैः कृष्णे भक्तिर्हि साध्यते ॥ भगवत्युत्तमश्लोके भवतीभिरनुत्तमा । भक्ति प्रवर्तिता दिष्ट्या मुनीनामपि दुर्लभा ॥ दिष्ट्या पुत्रान्पतीन्देहान् स्वजनान् भवनानि च । हित्वा वृणीयुयूय यत्कृष्णाख्य परंपदम् ॥ सर्वात्मभावोऽधिकृतो भवतीनाम धोक्षजे । विरहेण महाभागा महान्मेनुग्रह. कृतः ॥' इत्यादि । और जब श्री उद्धव जी ने अपने ज्ञान कथनातर श्रीगोपीजन का स्वरूप जाना है तब यही माँगा है कि हम श्रीवृन्दावन मे गुल्मलता हो, यथा "नाय श्रियोंगजनितातरते: प्रसाद: स्वर्योषिता नलिनगधरुचा कुतोन्य: ! रासोत्सवेऽस्यभुजदडगृहीतकण्ठलब्धाशिषा य उदगाद्व्रजवल्लवीनाम् ॥ आसामहो चरणरेणुजुषामह स्या वृदावने किमपि गुल्मलतौषधीना । या दुस्त्यज स्वजनमार्यपथ च हित्वा भेजुर्मुकुन्दपदवीं श्रुतिभिर्विमृग्या ॥

या वै श्रियार्चितमजादिभिराप्तकामैर्योगेश्वरैरपि यदात्मनि रासगोष्ठ्या ॥ कृष्णस्य तद्भगवतश्चरणारविंद न्यस्तं स्तनेषु विजहुः परिरभ्य ताप ॥" श्रीमहाप्रभु जी ने सन्यासनिर्णय ग्रंथ मे आज्ञा की है कि श्री गोपीजन प्रेममार्ग की गुरु हैं तथाच निरोधलक्षण ग्रंथ मे आप ने श्रीगोपीजन तथा व्रज के गोपो का विरहानुभव प्राप्त होने की उत्कंठा दिखायी है। "यच्च दुःख यशोदाया नन्दादीना च गोकुले। गोपिकानां तु यद्दुःख तद्दुःख स्यान्मम क्वचित् ॥ गोकुले गोपिकाना च सर्वेषा व्रजवासिनाम्। यत्सुख समभूत्तन्मे भगवान् किं विधास्यति ॥ उद्धवागमने जात उत्सव सुमहान्यथा। वृन्दावने गोकुले वा तथा मे मनसि क्वचित् ॥ इत्यादि। और "गोपी प्रेम की ध्वजा। जिन घनस्याम किए अपने बस उर धरि स्याम-भुजा" "गोपीपदपंकजपराग कीजै महाराज रज कीजै आपुनेई गोकुला-नगर को।" "ये हरिरसओपी गोपी सब तियते न्यारी। कमलनयन गोविन्दचंदकी प्राणपियारी ॥ निर्मत्सर जे सन्त तिनकी चूडामनि गोपी जे ऐसे मर्याद मेटि मोहनगुन गावै। क्यो नहि परमानन्द प्रेमभक्ति सुखपावै ॥" "अहो विधिना तोपै अँचरा पसारि माँगौ जनम जनम दीजो याही व्रज बसिबो। अहीर की जाति समीप नंदघर घरी घरी घनश्याम हेरिहेरि हँसिबो ॥" "बलि गुरु तज्यौ कंत व्रजवनितन भइ जगमंगलकारी ॥" इत्यादि श्रीसूरदासादिक परम अनुरागियो ने भाषा मे भी श्रीगोपीजन का पवित्र यश वर्णन किया है। परम अंतरंग श्री नागरीदास जी भी गाते है ॥ जयति ललितादिदेवीय व्रज श्रुति ऋचा कृष्णपियकेलिआधीरअंगी। युगुलरसमत्त आनन्दमय रूपनिधि सकलसुखसमयकी छाँहसंगी ॥ गौरमुखहिमकिरणकी जु किरणावली श्रवत मधुगान हिय पियतरंगी। नागरीसकलसंकेतआकारिणी गनत गुनगननि मति होति पंगी ॥ भवतु! इन श्रीगोपीजन के अगणनीय गुण कहाँ तक लिखै। रसिक लोग स्वतः अनुभव करैंगे।

२२७ न तत्रापि माहात्म्यज्ञानविस्मृत्यपवादः ।

यहाँ भी माहात्म्यज्ञानविस्मृति का अपवाद नहीं।

जहाँ प्रेम है वहाँ माहात्म्यज्ञान नहीं, जहाँ माहात्म्यज्ञान है वहाँ प्रेम नहीं, परंतु श्री गोपीजन मे दोनो बाते थीं, क्योकि उनको भगवत

स्वरूप का ज्ञान नहीं था, यह शका नहीं हो सकती। "अस्त्वेवमेतदुपदेशपदे त्वयीशे प्रेष्ठो भवाँस्तनुभृता किल बन्धुरात्मा" ॥ 'व्यक्तभवान् व्रज-भयार्तिहरोऽभिजातो' 'न खलु गोपिकानन्दनो भवानखिलदेहिनामन्तरात्मदृक्' ॥ इत्यादि श्री गोपीजन के वाक्यों मे उनका माहात्म्यज्ञान सिद्ध है।

२३ ॐ तद्विहीनं जाराणामिव।

उसके बिना जारो के समान है।

अर्थात् जहाँ माहात्म्यज्ञान नहीं है वहाँ की प्रीति जारो की सी होती है। यद्यपि भगवान मे ज्ञान वा अज्ञान मे की हुई प्रीति निष्फल नहीं जाती तथापि यह लीला जहाँ पूर्ण प्रादुर्भाव है वहीं है परतु माहात्म्य ज्ञानपूर्वक भक्ति मे यह विशेषता है कि एक प्रस्तर मे भी ईश्वर बुद्ध्या सत्य प्रेम करने से फलदायिनी होती है।

२४ ॐ नास्त्येव तस्मिंस्तत्सुखसुखित्वं।

उस से प्यारे के सुख से सुखी होना नहीं ही है।

क्योंकि जारो की प्रीति अपनी कामना के अर्थ है तो उस मे तत्सुख-सुखित्व कहाँ से आवेगा।

तीसरा अनुवाक् समाप्त हुआ।

---

२५ ॐ सा तु कर्मज्ञानयोगेभ्योऽप्यधिकतरा।

वह (भक्ति) तो कर्म्म, ज्ञान और योग से भी अधिक है।

"तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः॥ कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥ योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना। श्रद्धावान् भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः" ॥ इन वाक्यो से भगवान श्रीमुख से ज्ञान और कर्म से योग को अधिक कह कर अपने भक्त को उससे भी अधिक कहते है और भक्ति ऐसी है कि भगवान मुक्ति देते हैं परतु भक्ति नहीं। तथाहि "मुक्तिंददाति कर्हिचित्स्म न भक्तियोगं।" तथा "न साधयति मां योगो न सांख्यं धर्म उद्धव। न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो यथा भक्तिर्ममोर्जिता॥ भक्त्याहमेकया ग्राह्यःश्रद्धयात्माप्रियः सताम्। भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा श्वपाकानपि

सभवान् ॥" आर भक्ति मे यह विशेप है कि कर्म, ज्ञान ओर योग इनमे अधिकारी अनधिकारी का बडा विचार रहता है परंतु इसमे किसी अधिकार का काम नही। श्रीमुखवाक्य प्रमाण है "केवलेन हि भावेन गोप्यो गाव: खगा मृगा। येऽन्ये मूढधियो नागा: सिद्धा मामीयुरजसा ॥"

२६ ॐ फलरूपत्वात् ।

क्योंकि फलरूपा है।

ज्ञानाभिमानी लोग कहते हैं कि भक्ति का फल ज्ञान है, ऐसा नहीं। क्योंकि श्री भगवद्गीता मे कहा है "अहकार बल दर्प कामं क्रोधं परिग्रह। विमुच्य निर्मम. शान्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥ ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न काङ्क्षति। समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्ति लभते परां" ॥ हई है, ससार के सब प्रकारके साधन का फल केवल भगवत्कृपा है और वह बिना भक्ति सिद्ध न होगी तो दोनो प्रकार से भक्ति के बिना अन्य साधन व्यर्थ ही हुए।

२७ ॐ ईश्वरस्याप्यभिमानद्वेषित्वाद्दैन्यप्रियत्वाच्च ॥

ईश्वर को भी अभिमान से द्वेषित्व है और दैन्य से प्रियत्व है।

अर्थात् कर्म ज्ञान और योग मे उनके साधको को अपने अपने साधन का अभिमान होता है तो उन से भगवान प्रसन्न नहीं रहता। हई है, वह तो निराश्रयो का आश्रय, नि साधनो का साधन, दीनो का बधु, पतितो का प्यारा और सर्व प्रकार से हीनो का सर्वस्व है। जिन लोगो को अपने साधनो का बल है उनको क्यो वह पूछेगा। सच है, जो स्त्री अपने सौंदर्य्य के और जारो के बल से धन कमा लेती है उसे पति क्यो पूछेगा, जो बालक आप धनोपार्जन मे समर्थ है उसे माता पिता क्यो भोजन देगे, जो सेवक अपने गुण से अपना योग क्षेम चला लेता है उसके स्वामी को क्या शोच है, विशेष कर ईश्वर से स्वामी को, जिसको सर्वदा दीन प्यारा है। उसके सामने तो जब अनन्य होकर सब साधन छोडकर उससे कहोगे "सर्वसाधनहीनस्य पराधीनस्य सर्वथा। पापापीनस्य दीनस्य कृष्णएव गतिर्मम" ॥ हे नाथ! मै सब साधन से हीन हूँ और ससार

के पचडे मे मग्न हू पापो से लदा हुआ हूँ और परम दीन हूँ अतएव हे नाथ ! हमारी तो तुमही गति हो।" क्योंकि और किसी के सामने मुँह दिखाने के योग्य नहीं रहा, वेद को कैसे मुँह दिखाऊँ, उनके वाक्यानुसार सर्वकर्मानर्ह और पतित हो रहा हूँ, लोक को भी नहीं मुँह दिखा सकता क्योंकि लोक मे सब से मुख्य रक्षणीय लज्जा का त्याग कर चुका हूँ और लोक के साधनो से विहीन हूँ हमारी तो और कोई शरण नहीं, महा निरवलम्ब हूँ, कोई हाथ पकड़ने वाला नहीं, अथाह समुद्र मे डूबता हूँ अब इस समय तुम्हारे सिवाय और कोई गति नहीं, मेरी तो तुमही गति हो इत्यादि। तभी वह तुम्हारी ओर ध्यान करेगा, ऐसा श्रीमुख से भी कहा है "सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेक शरण व्रज। अह त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि माशुच:" ॥ सब धर्मों को छोड कर एक मेरी शरण आ, मै तुझे सब पातकों से दूर करूँगा, शोच मत कर और यह वाक्य भी कब कहा है जब गीता का उपदेश कर चुके है तब, इसको ठीक देने की भाँति कहा है।

और आप अपने मुखसे इस वाक्य का आग्रह दिखाते है "सर्वगुह्यतमं भूय. शृणु मे परम वच:। इष्टोसि मे दृढमतिस्ततो वक्ष्यामि ते हितम्"। और भी उद्धव जी प्रति श्री भगवद्वाक्य है "अकिचनस्य दान्तस्य शातस्य समचेतस.। मया सतुष्टमनस. सर्वा.सुखमया दिश: ॥ आज्ञायैव गुणान् दोषान् मयादिष्टानपि स्वकान्। धर्मान् सत्यज्य य: सर्वान् मा भजेत स सत्तम ॥ तस्मात् त्वमुद्धवोत्सृज्य चोदना प्रतिचोदना। प्रवृत्तं च निवृत्त च श्रोतव्य श्रुतमेव च ॥ मामेकमेव शरणमात्मान सर्वदेहिना। याहि सर्वात्मभावेन मया स्या.ह्यकुतोभय (?)। न साधयति मा योगो न सांख्य धर्म उद्धव। न स्वाध्यायष्यतपस्त्यागो यथा भक्तिर्ममोर्जिता ॥ भक्त्याहमेकया ग्राह्य: श्रद्धयात्मा प्रिय: सताम्। भक्ति: पुनाति मन्निष्ठा श्वपाकमपि सभवात् ॥ धर्म: सत्यदयोपेतो विद्या वा तपसान्विता। मद्भक्त्या येतमात्मान' (?) न सम्यक्प्रपुनातिहि ॥ कथ विना रोमहर्षं द्रवता चेतसा विना। विनानन्दाश्रुकलया शुध्येद्भक्तथा विनाशय. ॥ वाग्गद्गदा द्रवते यस्य चित्त रुदत्यभीक्ष्ण हसति क्वचिद्वा ॥ विलज्ज उद्गायति नृत्यते च मद्भक्तियुक्तो भुवन पुनाति"।

तथा—"नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया। शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा ॥ भक्त्याहमेकया ग्राह्य अहमेवंविधोऽर्जुन। ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्वेन प्रवेष्टुं च परंतप।" इत्यादि ॥ इन वाक्यों को छोड़ कर भक्तों के दोनों लोक साधन के लिए उसकी दृढ़ प्रतिज्ञा है "कौंतेय प्रतिजानीहि न मेभक्तः प्रणश्यति", "नरकादुद्धराम्यहं", "तान्विभर्म्यहं", "मोय मे व्रत आहित" "योगक्षेमं वहाम्यहं", "तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात्" इत्यादि।

२८ ॐ तस्या ज्ञानमेव साधनमित्येके।

उस (भक्ति) का साधन ज्ञानही है यह किसी का मत है।

ऐसा नहीं हो सकता। गृध्र, अजामिल, गजेंद्र इत्यादि को किसने ज्ञान दिया है "केवलेनहिभावेन गोप्यो गावः खगा मृगाः। येऽन्ये मूढधियो नागाः सिद्धा मामीयुरञ्जसा" ॥ भक्ति का साधन तो अपने चित्त का अंकुर और उनकी कृपा ही है, ज्ञान वेचारा क्या साधेगा?

२९ ॐ अन्योन्याश्रयत्वमित्यन्ये।

दूसरो का मत है कि भक्ति और ज्ञान से परस्पर आश्रयत्व है।

यह भी नहीं हो सकता, जब मनुष्य किसी की भक्ति वा प्रीति कर लेगा तब उसके ज्ञान मे क्या प्रवृत्त होगा? पानी पीके जात नहीं पूछी जाती।

३० ॐ स्वयंफलरूपतेति ब्रह्मकुमाराः।

सनत्कुमारादिक और नारद जी का मत है कि भक्ति स्वयं फलरूपा है।

इह है पहले भी कह आए हैं।

३१ ॐ राजगृहभोजनादिषु दृष्टत्वात्।

राजा का घर और भोजनादि के केवल देखने मे ऐसा ही देखा गया है।

पूर्वकथित फलरूपता का उदाहरण दिखाते हैं।

३२ ॐ न तेन राजपरितोषो क्षुधाशान्तिर्वा।

न उससे राजा का परितोष होगा, न क्षुधा मिटेगी।

ज्ञान के फलरूप होने मे दोष दिखाते हैं कि एक मनुष्य को किसी

राजा का स्वरूपज्ञान बहुत अच्छा है पर इससे क्या ? क्या वह राजा बिना अपनी भक्ति किए ही उसे कुछ देगा वा कुछ भोजन रक्खा है ? हमको उसके स्वरूप का पूर्ण ज्ञान है कि इसमें पूरी है और वह आटा, घी, जल और अग्नि के संयोग से बनी है पर क्या इस ज्ञान ही से भूख मिट जायगी ? कदापि नहीं। वैसा ही भगवान को केवल जानकर कभी सिद्ध नहीं हो सकता क्योंकि वह अपने स्वरूपों पर किस नाते दत्तचित्त होगा ? अतएव अगले सूत्र में फिर से आग्रह दिखाते हैं।

३३ ॐ तस्मात्सैव ग्राह्या मुमुक्षुभिः।

इस कारण मोक्ष की इच्छा करने वाले उसी (भक्ति) का ग्रहण करैं।

जो अपना कल्याण चाहे तो इस सूत्र को कान खोलकर सुने और विश्वास करे।

चौथा अनुवाक समाप्त हुआ।

---

३४ ॐ तस्यास्साधनानि गायन्त्याचार्याः।

उस (भक्ति) के साधन आचार्य्य कहते हैं।

पूर्वोक्त सूत्रों में भक्ति ही मुख्य है ऐसा कह अब उसके साधन दिखाते हैं।

३५ ॐ तत्तु विषयत्यागात्सङ्गत्यागाच्च।

वह (भक्तिसाधन) तो विषयत्याग और संगत्याग से होता है।

जो कहो कि हम विषय और संग में लगे हुए भी सिद्ध हो जायँगे तो यह नहीं हो सक्ता, क्योंकि श्री महाप्रभु जी ने अपने ग्रंथ बालबोध में "जीवाः स्वभावतो दुष्टाः" इस वाक्य से जीव को स्वभावतः दुष्ट कहा है, तो जीव को आसुरावेश होने में कुछ विलंब नहीं लगता। श्रीहरिराय जी ने अपने ग्रंथ कामदोषनिरूपण में इस विषय की कैसी निंदा की है, आप लिखते हैं "दोषेषु प्रथमः कामो विविच्य विनिरूप्यते

यस्मिन्नुत्पद्यते तस्य नाशक सर्वथा मत ॥ विषयावेशहेतुत्वाद्विक्षेपोत्पत्तिकारण। रजोगुणसमुत्पन्नो रज प्रक्षेपको मुखे ॥ ब्रह्मावेशविरोधी च सद्बुद्धेर्बाधका मत । सत्कमनाशक सर्वप्राकृतासक्तिसाधक ॥ चित्ताशुद्धिनिदानत्वाच्चिदुत्पत्तौ च बाधक. । भक्तिमार्गमहाद्वेष्टा वैराग्याभावसाधनात् ॥ सर्वत्रापरितापश्चानेन लाभसमुद्भवात् । यथाकथंचित्संमुच्येद्रियवैमुख्यकारक. ॥ कामलाभौ हरिप्राप्तिप्रतिबंधकपर्वतौ । तावुल्लंघ्य न शक्नोति गन्तु कृष्णांतिक जनः ॥ संसारमोहहेतुत्वान्मनोदूषणसाधनम् । अतः सेवाविरोधी च यत मा मानसी मता ॥ निरोधस्य महाञ्छत्रु-रन्यत्स्फूर्तिकरो यत. । गुणगानसपत्नोऽपि न रोचते गुणा यतः । वैराग्य-बाधकाः सर्वे कामिनस्ते कथं प्रिया. । अतएव हि दृश्यन्ते गुणश्रवण-वैरिणः ॥ क्रोध. स्वकार्यकरणाल्लोभ ऽप्याप्यापि शाम्यति । घृतहोमे वन्हिरिव कामो भोगेन वर्द्धते ॥ कामेन नाशितमति प्रतिपिद्धे प्रवर्तते । अगम्यागमने चौर्य्ये तथैवाभक्ष्यभक्षणे ॥ यतउत्पद्यते क्रोधो महद्दोह-समुद्भवः । लोभोऽपि जायते तस्मात्सचार्थविषये भवेत् ॥ सोर्थः पञ्च-दशानर्थमूल तत्र प्रवर्तते । कामैनैवहि कार्पण्य कामिनीषु सता मत । प्रार्थयन्ति यतस्तुच्छा प्रवेश्य वदने कर" इत्यादि कामदोष पर आपने एक ग्रथ ही बनाया है । तो काम मुख्य दोष है इसमे कोई सदेह नहीं, वरञ्च श्री गीता जी मे काम ही के छुडाने के आग्रह से सुखपूर्वक भोजनादि का भी निषेध किया है । श्रीमुखवाक्य 'इन्द्रियाण्यनुशुष्यन्ति निराहारस्य देहिनः । रसवर्ज रसोप्यस्य पर दृष्ट्वानिवर्तते' । इससे भक्ति के सब साधनो मे मुख्य विषयो का त्याग है । सगत्याग के दोष ४३ । ४४ । ४५ सूत्रो मे दिखावेगे ।

३६ ॐ अव्यावृतभजनात् ।

सतत भजन से ।

निरतर शब्द यहाँ इस हेतु दिया है कि क्षण क्षण मे जीव को आसुरावेश होता है और रजोगुण सतोगुण की तरगे उठा करती है तो उसकी निवृत्ति के हेतु निरतर भजन करै । जिस क्षण मे नामोच्चारण का व्यवधान होगा उसी क्षण मे आसुरावेश होगा अतएव भगवान श्री श्रीवल्लभाचार्य ने आज्ञा की है "तस्मात्सर्वात्मना नित्य श्रीकृष्णः

शरण मम। वदद्भिरेव सतत स्थातव्यमिति मे मतिः" ॥ अपने भक्ति-वर्द्धिनी ग्रंथ मे भी श्रीआचार्य जी ने "अव्यावृतो भजेत् कृष्ण पूजया श्रवणादिभि" इत्यादि लिखा है, भोजनादिक व्यवहार की रीति कुछ नित्य भजन भी कर लेना वा जहाँ सब काम करते है वहाँ एक घटा भर यह भी सही इत्यादि। उपेक्षा वा साधारण व्यवहार पूर्वक भजन का निषेध इस सूत्र से किया। जो कहो कि ससार के और कोई काम न करे सो यह नहीं कहते वरच जब तुम आवश्यक कार्यो से छूटो तब और कोई व्यर्थ काम करने के बदले निरतर भजन करो, जैसा जितने क्षण खाते हो उतनी देर तो नि सदेह तुम कुछ नहीं कह सकते पर जैसेही मुँह धो चुको भगवन्नामोच्चारण प्रारभ करो।

३७ ॐ लोकेपि भगवनगुणश्रवणकीर्तनात्।

लोक मे भी भगवान के गुणो के श्रवण और कीर्तन से। "लोकेपि" अर्थात् जब तक अव्यावृत भजन की सिद्धि न हो और लोक के व्यवहार में चित्त निरा मग्न हो तब तक भगवान् के गुण कीर्तन करके और श्रवण करके निरतर भजन का अभ्यास करे क्योकि कोरे नामोच्चारण से वा ध्यान करने से भजन सुनने या गाने मे सर्वसाधारण का चित्त विशेष लग सकता है। श्रीमहाप्रभुजी लिखते हैं "यथा भक्तिः प्रवृद्धा स्यात्तथोपायो निरूप्यते। बीजभावे दृढ़ेतु स्यात्त्यागाच्छ्रवणकीर्तनात्॥ बीजदाढ्यप्रकारस्तु गृहे स्थित्वा स्वधर्मतः। अव्यावृतो भजेत् कृष्ण पूजया श्रवणादिभिः॥ व्यावृत्तोपि हरौ चित्तं श्रवणादौ यतेत्सदा। ततःप्रेम तथासक्तिर्व्यसनच यदा भवेत्" अर्थात् जो चित्त भक्ति मे न रँगा हो तो श्रवणादिक मे लगावे और जब उसमें कुछ प्रेम और आसक्ति होगी और श्रवणादिक का व्यसन हो जायगा तब आपही भक्ति का बीज दृढ़ हो जायगा। यद्यपि भक्ति के अधिकारी सब लोग नहीं है पर श्रवणकीर्तनादिक के अभ्यास से सब हो जाते हैं, क्योकि श्रवणकीर्तन के अधिकारी मुक्त, मुमुक्षु और विषयी तीनो हैं। यही श्रीपरमभागवत श्रवणाधिकारी राजा परीक्षित ने कहा है "निवृत्ततर्षैरुपगीयमानाद्भवौषधाच्छ्रोत्रमनोभिरामात्। क उत्तमश्लोकगुणानुवादात् पुमान्विरज्येत विना पशुघ्नात्॥"

३८ ॐ मुख्यतस्तु महत्कृपयैव भगवत्कृपालेशाद्वा।

(उस भक्ति का) मुख्य साधन तो महानुभावों की कृपा है वा भगवान की कृपा का लेश।

ऐसाही है, परम भागवत जड़भरतजी ने रहूगण को उपदेश किया है "रहूगणैतत्तपसा न याति न चेज्यया निर्वपणाद्गृहाद्वा। न छन्दसा नव जलाग्निसूर्यैर्विना महत्पादरजोभिषेकात्॥" हे रहूगण, यह (सिद्धि) तप से नहीं होती और न यागादि कर्मो से, न घर छोड़ के योगी बनने से, न वेदों से, न जल से अर्थात् स्नान सन्ध्या तर्पणादि से, न अग्नि से अर्थात् पञ्चाग्नि साधन वा अग्निहोत्र से, न सूर्य से अर्थात् सूर्योपस्थान वा ग्रीष्मताप सेवनादि से। विना महानुभावों के पदरज में नहाये और किसी से यह नहीं हो सकता। यही श्रीमुख से भी कहा है "नह्यम्मयानि तीर्थाणि न देवा मृच्छिलामया। ते पुनन्त्युरुकालेन दर्शनादेव साधवः॥" हे अक्रूर! जिस को जलमय तीर्थ (गङ्गादि) और मृण्मय और शिलामय देव पवित्र नहीं करते व बहुत काल से करते हैं उसको साधु लोग दर्शनही से तत्काल पुनीत करते है।

वरंच श्रीमद्भागवत पंचमस्कंध में श्रीमत्परम भागवत प्रह्लादजी ने कहा है "मागारदारात्मजवित्तबन्धुषु सङ्गो यदि स्याद्भगवत्प्रियेषु नः। यः प्राणवृत्त्या परितुष्ट आत्मवान् सिद्ध्यत्यदूरान्न तथेन्द्रियप्रियः॥ यत्संगलब्धं निजवीर्यवैभवं तीर्थं मुहुःसंस्पृशतां हि मानसं। हरत्यजोतः-श्रुतिभिर्गतोगजं को वै न सेवेत मुकुन्दविक्रमं"॥*

देवीपुराण नवमस्कंध के षष्ठाध्याय में गंगा जी से भगवान् का वाक्य है "मन्मन्त्रोपासकानां च सतां स्नानावगाहनात्। युष्माकं मोक्षणं पापात् दर्शनात् स्पर्शनात्तथा॥ पृथिव्यां यानि तीर्थानि सन्त्यसंख्यानि सुन्दरि। भविष्यन्ति च पूतानि मद्भक्तस्पर्शदर्शनात्॥ मन्मन्त्रोपासका भक्ता विभ्रमन्ति च भारते। पूतां कर्तुंतारितुञ्च सुपवित्रां वसुन्धरां॥ मद्भक्ता यत्र तिष्ठन्ति पादं प्रक्षालयन्ति च। तत्स्थानन्तु महातीर्थं सुपवित्रं भवेद्ध्रुवं॥ स्त्रीघ्नो गोघ्नः कृतघ्नश्च ब्रह्मघ्नो गुरुतल्पगः। जीव-

* देवीपुराणही को देवीभागवत कहते हैं क्योंकि पुराणों मे जहाँ कहीं उपपुराणों को गिना है वहाँ "देवी भागवत" वा "देवीपुराण" ऐसा शब्द है।

न्मुक्तो भवेत्पूतो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ एकादशीविहीनश्च सन्ध्याहीनोति-नास्तिकः। नरघाती भवेत् पूतो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ असिजीवी मसी-जीवी याचकोग्रामयाचकः। वृषवाहो भवेत् पूतो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ विश्वासघाती मित्रघ्नो मिथ्यासाक्ष्यस्य दायकः। स्थाप्यहारी भवेत् पूतो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ अत्युग्रवाग्दूषकश्च जारकः पुंश्चलीपतिः। पूतश्च पुंश्चलीपुत्रो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ शूद्राणां सूपकारश्च देवलो ग्रामयाचकः। अदीक्षितोभवेत्पूतो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ पितरं मातरम्भार्यां भ्रातरं तनयं सुतां। गुरोः कुलञ्च भगिनीं चक्षुर्हीनञ्च बान्धवं ॥ श्वश्रूश्च श्वशुर-ञ्चापि यो न पुष्णाति सुन्दरि। स महापातकी पूतो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ अश्वत्थनाशकश्चैव मद्भक्तनिन्दकस्तथा। शूद्रान्नभोजी विप्रश्च पूतो मद्भक्तदर्शनात् ॥ देवद्रव्यापहारी च विप्रद्रव्यापहारकः। लाक्षा-लोहरसानां च विक्रेता दुहितुस्तथा ॥ महापातकिनश्चैव शूद्राणां शव-दाहकः। भवेयुरेते पूताश्च मद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥" तथा देवी का वाक्य "पुनन्ति सर्वतीर्थानि येषां स्नानावगाहनात्। येषां च पादरजसा पूतो पादोदकान्मही ॥ येषां सदर्शनं स्पर्शं ये वा वाञ्छन्ति भारते। सर्वेषां परमो लाभो वैष्णवानां समागमः ॥ नह्यम्मयानि तीर्थाणि न देवा मृच्छिलामयाः। ते पुनन्त्युरुकालेन विष्णुभक्ताः क्षणादहो"। फिर भगवद्वाक्य "पुरुषाणां शतं पूर्वं तथा तज्जन्ममात्रतः। स्वर्गस्थं नरकस्थं वा मुक्तिमाप्नोति तत्क्षणात् ॥ ये केश्चिद्यत्र वा जन्म लब्धं येषु च जन्तुषु। जीव न्मुक्तास्तु ते पूता यान्ति काले हरेः पदं ॥ मद्भक्तियुक्तो मर्त्यश्च स मुक्तो मद्गुणान्वितः। मद्गुणाधीनवृत्तिर्यः कथाविष्टश्च सन्ततं ॥ मद्गुणश्रुति-मात्रेण सानन्दः पुलकान्वितः। सगद्गदः साश्रुनेत्रः स्वात्मविस्मृत एवच ॥ न वाञ्छन्ति सुखं मुक्तिं सालोक्यादिचतुष्टयं। ब्रह्मत्वममरत्ववा तद्वाञ्छा मम सेवने ॥ इन्द्रत्वं च मनुत्वं च ब्रह्मत्वं च सुदुर्लभं। स्वर्ग-राज्यादिभोगाश्च स्वप्नेऽपि न वाञ्छति ॥ भ्रमन्ति भारते भक्तास्तादृग् जन्म सुदुर्लभं। मद्गुणश्रवणश्राव्यगानैर्नित्यं मुदान्विताः ॥ ते यांति च मही पूत्वा नराः शीघ्रं ममालयं। इत्येवं कथितं सर्वं पद्मे कुरु यथो-चितं ॥ तदाज्ञया तास्तत्रक्रुः हरिस्तस्थौ सुखासने ॥ तथाच सारसंग्रह में पराशरस्मृति "सहस्रवार्षिकी पूजा विष्णोर्भगवतो हरेः। सकृद्भागवता-चार्याः कलां नार्हति षोडशीं ॥" इत्यादि। बृहन्नारदीयपुराण में "पूजना-

द्विष्णुभक्ताना पुरुषार्थोऽस्ति नेतर । तेषु तद्द्वेषत. किंचिन्नास्ति नाशनमात्मन. ।।" पद्मपुराण मे श्री महादेव जी का वाक्य "आराधनाना सर्वेषा विष्णोराराधन पर । तस्मात्परतर देवि तदीयाना च पूजन ॥" श्रीमद्भागवत मे श्री महादेव जी का वाक्य "न मे भागवताना च श्रेयान्न्यास्ति कर्हिचित्" इत्यादि । पूर्वोक्तश्लोको मे तदीय जनो का माहात्म्य सिद्ध हुआ तो ऐसे तदीयो की कृपा से भक्ति मिले इसमे क्या आश्चर्य है वा भगवान ही की कृपा से होय । क्योकि आप कभी कभी भक्तिदान देते है "ददामि बुद्धियोग त येन मामुपयान्ति ते" । परतु भगवान की कृपा से भक्तो की कृपा सुलभ है क्योंकि भगवान भक्तिदान विशेष नहीं करते "मुक्ति ददाति कर्हिचित् स्म न भक्तियोग ।।" इत्यादि अतएव इस सूत्र मे महत्कृपा को मुख्य करके भगवत्कृपा को गौण किया है ।

३९ ॐ महत्सङ्गस्तु दुर्लभोऽगम्योऽमोघश्च ।

और महत्सङ्ग दुर्लभ, अगम्य और अमोघ (सफल) है ।

ऐसा ही है, "क्षणार्द्धेनापि तुलये न स्वर्गं नापुनर्भवं। भगवत्सङ्गिसगस्य मर्त्याना किमुताशिष." इत्यादि । श्रीमद्भागवत मे श्रीमहादेव जी का वाक्य है । "अमोघ सिद्धदर्शन" इत्यादि स्मृति तथा श्रीमुखवाक्य 'न रोधयति मा योगो न साख्य धर्म एवच । न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो नेष्टापूर्तं न दक्षिणा ॥ व्रतानि यज्ञच्छन्दासि तीर्थानि नियमा यमाः । यथावरुन्धेत्सत्सङ्गः सर्वसगापहोहि मा ॥" और लोक मे भी प्रसिद्ध है "सत्सगति. कथय कि न करोति पुसा" इत्यादि ।

४० ॐ लभ्यतेपि तत्कृपयैव ।

महत्सङ्ग उसकी कृपा से ही मिलता है ।

"यस्य भागवताः प्रीतास्तस्य प्रीतो हरिः स्वय ।" इत्यादि वाक्यो से सिद्ध है । तथा श्री महादेव जी ने भी कहा है "अथानघाङ्घ्रेस्तव कीर्तितीर्थे योन्तर्बहिः स्नाति विधूतपाप्मना । भूतेष्वनुक्रोशसुसत्वशीलिना स्यात्सङ्गमोनुग्रह एवमस्तु च" ॥

४१ ॐ तस्मिंस्तज्जने भेदाभावात् ।

उसके और उसके जन मे भेद के अभाव से ।

श्रुति भी है। "यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुराविस्यादि"। "न मे भागवतानां च भुक्तिभेदास्ति कर्हिचित्" इत्यादि श्री मुख से कहा है। तथाच श्री गोपीजन को "ता मन्मनम्का मत्प्राणा वल्लभ्यो मे मद्यात्मिकाः" इत्यादि। श्री महादेव जी को "यस्त्वा द्वेष्टि स मा द्वेष्टि यस्त्वामनु स मामनु। त्वदुपासा जगन्नाथ सैवास्तु मम गोपते" तथा उद्योगपर्व मे दुर्योधन से पाडवो के हेतु भी कहा है "यस्तान् द्वेष्टि स मां द्वेष्टि यस्तानन्नु स मामनु। ऐकात्म्य मा गत विद्धि पाडवै धर्म्मचारिभि ॥" इत्यादि। तथा श्री प्रह्लादादिक भक्तो से भगवान् ने वही कहा है "जिसने तुमसे द्वेष किया उसने मुझ से द्वेष किया"। इसका उदाहरण अबरीष का प्रकरण प्रत्यक्ष है और वहाँ भी श्रीमुख से कहा है "अहभक्तपराधीनो ह्यस्वतत्र इव द्विज। साधुभिग्रस्तहृदयो भक्तैर्भक्तजनप्रिय.॥" महाभारत मे भी कहा है 'तुलसीदलमात्रेण जलस्य चुलुकेन च। विक्रीणीते स्वमात्मान भक्तेभ्यो भक्तवत्सल'॥" उद्धव जी से भी ऐसाही कहा है। *'न तथा मे प्रियतम आत्मयोनिर्न शङ्करः। नचसङ्कर्षणो न श्रीर्नैवात्मा च यथा भवान्' (?)। 'निरपेक्ष मुनि शात निर्वैर समदर्शिन। अनुव्रजाम्यह नित्यपूजयेदङ्घ्रिरेणुभिः (?)॥ इत्यादि श्रीमुख से अपने भक्तो से अपनी एकता स्वाधीनता इत्यादि वर्णन किया, तो इस से भगवान और उनके भक्तो की एकात्मता ही सिद्ध हुई। "त्रिवाप्येक सदागम्य गम्यं भेदप्रभेदकैः। प्रेम प्रेमी प्रेमपात्रत्रितय प्रणतोस्म्यह" ॥

४२ ॐ तदेव साध्यता तदेव साध्यताम्।

उसी का साधन करो, उसी का साधन करो। हम लोग भी मुक्त कठ से यही कहते हैं।

पचम अनुवाक समाप्त।

—:.❀.:—

* चारो नाम चार सप्रदाय के आचार्यों ही के लिये, ब्रह्मा माधव, महादेव विष्णुस्वामी, सकर्षण निम्बार्क और श्री रामानुज इन मर्य्यादामार्ग के भक्तों की उत्कर्षता के हेतु उद्धव को सबसे बडा कहा।

४३ ॐ दु:संगस्सर्वथैव त्याज्य.।

दु संग का सब रीति से त्याग करना। उसके त्याग मे कारण कहते हैं—

४४ ॐ कामक्रोधमोहस्मृतिभ्रंशबुद्धिनाशसर्वनाशकारणत्वात्।

(क्योंकि वह) काम, क्रोध, मोह, स्मृतिभ्रंश, बुद्धिनाश तथा सर्वनाश का कारण है।

ऐसाही श्रीमुख से भी कहा है "ध्यायतो विषयान्पुन्सःसंगस्तेषूपजायते। संगात्संजायते कामः कामात् क्रोधोभिजायते॥ क्रोधाद्भवति संमोह संमोहात् स्मृतिविभ्रमः। स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात् प्रणश्यति॥" विषयों के सुख सोचते सोचते विषयसंग होता है और विषयसंग से अनेक प्रकार की कामना उत्पन्न होती है, और जब उस कामना के पूर्ण होने मे कोई बाधक होता है तब क्रोध उत्पन्न होता है और जब उस क्रोध से अनिवार्य बाधकों का प्रत्यय नहीं कर सकता तब मोह हो जाता है और निराश होके रोने लगता है। फिर इस दु ख से सब स्मृति भूल जाती है और जब स्मृति भूल जाती है तब इस की बुद्धि ठिकाने नहीं रहती और अन्यथा करने पर प्रवृत्त हुआ तहाँ उस का लोक परलोक सब नाश होता है"। इस से यह दिखाया कि सब बिगाड का कारण विषय और उसका संगही है।

४५ ॐ तरङ्गायितापीमे सङ्गात्समुद्रायन्ति।

ये (काम क्रोधादिक) तरंगों की भाँति होकर भी संग से समुद्र से हो जाते हैं।

दु:संग मे और भी दोष दिखाते है। यद्यपि जो लोग सन्मार्ग पर प्रवृत्त है उनको अहर्निश भगवदाराधन करते-करते काम क्रोधादिक की केवल तरंग आती है, जैसे नित्य विषयियों को सुरतान्त, तीर्थगमन, कथाश्रवण वा स्मशानदर्शन से ज्ञान की तरंग आती है। जितनी देर स्मशान पर बैठते हैं संसार नश्वर है, पुत्रादिकों मे मोह अच्छा नहीं इत्यादि ज्ञान छाँटते है पर जहाँ घर आये तहाँ फिर संसारी काम मे मग्न हो गये। वैसे ही अच्छे लोगों को प्रारब्धवशात् संग मे जो कुछ

कामक्रोधादिक की तरगे आती भी हैं तो वे उतने ही काल रहती हैं जब तक कि वे अपना स्वरूप भूले रहते है तथापि यदि वेही सज्जन दु सग मे पड जायँ तो ये ही काम क्रोध उनको डुबा दे।

४६ ॐ कस्तरति कस्तरति माया ? य सगास्त्यजति यो महानुभाव सेवते यो निर्ममो भवति।

कौन तरता है ? माया को कौन तरता है ? जो सगो को छोड़ता है, जो महानुभाव की सेवा करता है, जो निर्मोह होता है।

यद्यपि महात्माओ की कृपा और सगत्याग मुख्य साधन हैं तथापि कुटुबादिक का मोह भी एक बडी भारी बेडी है इससे इस का त्याग भी मुख्य ही है।

४७ ॐ यो विविक्तस्थान सेवते यो लोकबधमुन्मूलयति निस्त्रैगुण्यो भवति योगक्षेम त्यजति।

जो एकात स्थान सेवन करता है, जो लोकबध की जड निकाल देता है, निस्त्रैगुण्य होता है और योग क्षेम छोड देता है।

क्रमश उसके साधन कहते है। यदि जन समाज मे रहेगा तो पहले तो उसके अनवच्छिन्न भगवच्चितन मे कोलाहलादि से अनेक बाधा पडेगी, दूसरे अनेक प्रकार के लोगो से मिलने मे उनके व्यवहार मे व्याप्रत होने और उनके सग मे पड जाने का डर है अतएव श्रीमुख से कहा है "विविक्तजनसेवित्वमरतिर्जनसमदि"। और महात्माओ की भी आज्ञा है "विमुक्तबन्धा विचरेन्नसंग।" इत्यादि तथा लोक का बधन छोड़ना भी एक बडा कठिन साधन है। कोई हसे न, कोई नाम न धरे, 'धोती इतनी नीचे पहिने कि एडी न दिखाय', नहीं निर्लज्ज कहावेगे, मार्ग मे जिस चाल से निकलते हैं वैसे ही निकलना चाहिए, इत्यादि लोककल्पित व्यवहार और भी महाबधन के कारण होते हैं। इस हेतु सब लोकबधन की मूल लज्जा को चौपट कर डालना "एका लज्जा परित्तज्य त्रैलोक्यविजयी भवेत्"। क्योकि भक्ति के साधन मे श्री मुख से आप ने आज्ञा की है "विलज्ज उद्गायति रौति नृत्यति मद्भक्तियुक्तो भुवन पुनाति", तो सबके सामने कौन गावेगा कौन रोवैगा कौन नाचैगा ? जो मेरा सा निपट बेहया होगा तथा जब लोक

छुटा तब उससे भी बड़ा बचन बद बचा, उसके मिटाने के हेतु कहते हैं "निस्त्रैगुण्यो भवति" अर्थात् सत्व, रज, तम इन तीनो गुणो की प्रवृत्ति से अलग हो जाता है। श्री मुख से भी कहा है "त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन ॥"

परन्तु जो कहा कि लोक वेद छोड के केवल अपना भला करना तो चार्वाक का मत है तो इसका खंडन करते हुए कहते हैं "योगक्षेम त्यजति" अर्थात् केवल लोक वेद ही नहीं छोडता बरंच अपने भी खाने पीने पहिरने रहने ओढ़ने बिछाने सोने इत्यादि का शोक छोड देता है "भोजनाच्छादने चिन्ता वृथा कुर्वन्ति वैष्णवा । विश्वम्भरो गुरुर्येषां कि दासान् समुपेक्षते" और उसकी प्रतिज्ञा भी है "अनन्याश्चिन्तयन्तो मा ये जनाःपर्युपासते । तेषा नित्याभियुक्तान योगक्षेम वहाम्यह" इत्यादि। क्योंकि जब सब छोडा फिर अपना हाय हाय न छूटी तो उस छोडने पर धिक्कार है।

४८ ॐ य. कर्मफल त्यजते कर्माणि संन्यसति ततो निर्द्वन्द्वो भवति ॥

जो कर्मफल छोडता हैं, कर्मों का त्याग कर के निर्द्वन्द्व होता है।

निस्त्रैगुण्य होने का क्रमश' साधन कहते है, जब तक चित्त मे अर्थों की तरगे उठे तब तक कर्मों को नहीं छोडना, उसका फल छोड़ना और जब कामनाओ की निवृत्ति हो जाय तब उन कर्मो को भी छोड़ के निर्द्वन्द्व हो जाना, क्योकि श्रीमुख से भी कहा है "निर्द्वन्द्वो नित्यसत्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान् ।" "यावानर्थ उदपाने" इत्यादि ऊपर लिख आए है।

४९ ॐ वेदानपि सन्यसति केवलमविच्छिन्नानुराग लभते ।

वेदो को भी छोड़ देता है और केवल अविछिन्न अनुराग (प्रीति) को पाता है।

अब साधन दिखा कर उसकी सिद्ध दशा लिखते है। जब सिद्ध हो जाता है तब वेदो का त्याग कर देता है और केवल अबिच्छिन्न प्रेम पाता है।

५० ॐ स तरति स तरति स लोकान्तारयतीति ।

वह तरता है, वह तरता है, वह लोकों को तारता है।

नारद जी अपनी प्रतिज्ञा दृढ़ करने के हेतु दो बार कहते है और निश्चय कराते है। वरंच यह कहते है कि वह आपही नहीं तरता किंतु ससार को तारता है, "पुनाति भुवनत्रय", "तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थाणि स्वान्तस्थेन गदाभृता", "ते पुनन्त्युरुकालेन", "मद्भक्तियुक्तो भुवन पुनाति", "स्वय समुत्तीर्य सुदुस्तर" इत्यादि वाक्यों से इनका ससार मे पवित्र कर के तारना सिद्ध है।

षष्ठ अनुवाक समाप्त।

—❀—

५१ ॐ अनिर्वचनीय प्रेमस्वरूप।

प्रेम का स्वरूप कहा जा नहीं सकता।

तो हम लोग क्या कहे।

५२ ॐ मूकास्वादनवत्।

गूंगे के स्वाद की भाँति।

अर्थात् केवल अनुभव सिद्ध है क्योंकि मीठे और मलोने मे जो भेद वा स्वाद है वह कहा नहीं जा सकता। इतना ही कह सकते हैं कि खाके अनुभव कर लो। उसमे भी गूगे के स्वाद का क्या पूछना है। यहाँ वही कहावत है "बिना अपने मरे स्वर्ग नहीं सूझता।"

५३ ॐ प्रकाश्यते क्वापि पात्रे।*

(तथापि) कभी किसी पात्र (अधिकारी) से प्रकाश किया जाता है।

"ब्रूयुः स्निग्धस्य शिष्यस्य गुरवो गुह्यमप्युत" इत्यादि वाक्य से सिद्ध है। तो इस मे यह शका हुई कि श्री नारद जी ने ससार में कोई पात्र पाए बिनाही इन सूत्रों का प्रकाश क्यो किया? इसके उत्तर मे हम इतना ही कहा चाहते हैं कि यह किसी पात्र को उद्देश्य करके नहीं

* जिस पुस्तक में "प्रकाशते" ऐसा पाठ है वहाँ अर्थ है कि प्रेम स्वरूप कभी किसी पात्र (अधिकारी) मे स्वय प्रकाश पाता है।

कहा वरच स्वत. मुँह से प्रेम के आवेश से निकल गया क्योंकि पात्र भर जाता है तब आप से आप ऊपर वह निकलता है। उस समय यह विचार नहीं रहता कि नीचे पात्रान्तर आधारभूत है या नहीं, वही दशा इस की भी है। जब उस परमानद का उच्छ्वास होता है तब यहाँ भी पात्रापात्र–विचार नहीं होता, पागल की भाँति गूढ़ तत्व भी अपने आप बकने लगता है।

५४ ॐ गुणरहित कामनारहित प्रतिक्षणवर्द्धमानमविच्छिन्नं सूक्ष्मतरमनुभवरूपम्।

(प्रेमस्वरूप) गुणो से रहित, कामनाओ से रहित, प्रतिक्षण मे वृद्धिङ्गत, अविच्छिन्न, सूक्ष्मतर केवल अनुभवरूप है।

कामनारहित, क्योंकि कामना से यह भक्ति व्यवहार हो जायगी, इससे स्वर्गादि कामना के अर्थ यजनस्वरूपा भक्ति वा कामपूरणार्थ दपति के प्रेम का नाम प्रेम है, इस का निराकरण किया। श्रीमुख से भी कहा है, "न मय्यावेशितधिया काम॰ कामाय कल्पते। भर्जिता क्वथिता धाना भूयो बीजाय नेष्यते" इत्यादि और सासारिक प्रेम से इस शुद्ध प्रम मे आधिक्य दिखाने के हेतु "प्रतिक्षण वर्द्धमान" यह कहा, क्योंकि ससार मे प्रेम पहले तो बडे चाव से होता है फिर प्रतिदिन अवस्था बल वा रूप गुण धन के घटने से वह प्रेम दिन दिन घटता जाता है और उस अशेषगुणसम्पन्न नित्यनव किशोर असीम-गुणमडित अतुलबलसीम परमानन्दमय मे जो प्रेम होगा वह प्रतिक्षण बढता जायगा क्योंकि उत्तम सौंदर्य और गुण का धर्म है कि जितना उसको देखते वा विचारते जाओगे उतनी ही उत्तम सूक्ष्मता प्रगट होती जायगी और जैसा इस प्रेम को संसार के दु.खादि बाधा कर देते हैं वैसी उसमे कोई बाधा नहीं होती क्योंकि भगद्वियोग के महादु खसागर मे ये सब ससार क्षुद्र दु.ख डूब जाते है। "सर्वपदं हस्तिपदे निमग्न" और सूक्ष्म इतना है कि उसका उदाहरण नहीं दिया जा सकता, इसी हेतु अनुभवरूप कहा है। पुराणातर मे कथा है कि सती ने किसी कल्प मे श्रीजानकी जी का वेष धर के भगवान् की परीक्षा की थी इससे हम सब प्रेमियो के शिरोरत्न श्री महादेव जी ने फिर सती के उस

देह का स्पर्श न किया। बोधा ने भाषा कवित्त में कहा है 'अति छीन मृनाल के तारहु ते तेहि ऊपर पाँव दै आवनो है। सुचिवेध ते नाको सकीर्न तहाँ परतीत को टाँडो लदावनो है॥ कवि बोधा अनी घनी नेजहु ते चढ़ि तापै न चित्त डगावनो है। यह प्रेम को पंथ कराल महा तरवार की धार पै धावनो है॥"

५५ ॐ तत्प्राप्य तदेवावलोकयति तदेव शृणोति तदेव भाषयति तदेव चिन्तयति।

उसको पाकर उसी को देखता है, उसी को सुनता है, उसी को बोलता है और उसी का चिन्तन करता है।

क्योंकि फिर इसको कहने, सुनने और देखने को अवशिष्ट नहीं रहता और जहाँ "त प्राप्य तमेव अवलोकयति" इत्यादि पाठ है वहाँ यह अर्थ है कि उसको अर्थात् भगवान को प्रेम द्वारा पाकर उसी को देखता है क्योंकि उस अनिर्वचनीय रूप को देखकर और देखने की इच्छा नहीं होती।

५६ ॐ गौणी त्रिधा गुणभेदादार्तादिभेदाद्वा।

गौणी (भक्ति) तीन प्रकार की, गुणभेद वा आर्तादि भेद से।

मुख्याभक्ति का स्वरूप दिखाकर गौणी का स्वरूप कहते हैं—सत्व, रज, तम गुणों के भेद से सात्विकी, राजसी, तामसी तीन प्रकार की भक्ति वा श्रद्धा होती है। गुणत्रयविभाग वर्णन में श्रीभगवान ने इसका विस्तार कहा है वा आर्त, जिज्ञासु और अर्थार्थी इन तीनों के भजन के भेद से भी गौणी भक्ति तीन प्रकार की हो जाती है॥

५७ ॐ उत्तरस्मादुत्तरस्मात्पूर्वपूर्वो श्रेयाय भवति।

पिछले पिछले (भेद) से पहला कल्याण हेतु होता है।

अर्थात् तमोगुणी से रजोगुणी और रजोगुणी से सत्वगुणी अच्छी होती है, वैसेही अर्थार्थी से जिज्ञासु और जिज्ञासु से आर्त अच्छा होता है क्योंकि सतोगुणी भक्ति से वा आर्त के भजन से शुद्ध भक्ति मिलने की संभावना है।

सप्तम अनुवाक समाप्त।

—:o—

५८ ॐ अन्यस्मात्सौलभ्यं भक्तौ ।

अन्य से भक्ति मे सुलभता है ।

पूर्व मे भक्ति का अनिर्वचनीय स्वरूप कहा है तो इस से जीवों को शका हो कि ऐसी सूक्ष्म वस्तु के अधिकारी हम कैसे होगे तो इस शका के मिटाने के हेतु और जीवों को उस मार्ग पर आरूढ करने के हेतु कहते है कि और जितने साधन है सब से भक्ति (साधन) सुलभ है क्योंकि न इसमे विद्या का काम है न धन का, न वेद का, न आचार का, न उत्तमता का, न वर्ण का, क्योंकि गणिका को क्या विद्या थी, शबरी को क्या धन था, श्री गोपीजन ने कौन वेद पढा था, गृध्र का कौन आचार था, गज की क्या उत्तमता थी और केवट का कौन वर्ण था । और सबसे बडी सुलभता यह है कि इस मे कोई वाद विवाद नहीं रहता, क्योंकि—

५९ ॐ प्रमाणान्तरस्यानपेक्षत्वात् स्वयप्रमाणत्वात् ।

(यहाँ) अन्य प्रमाण की अपेक्षा नहीं, स्वयमेव प्रमाण है ।

क्योंकि वाद की और प्रमाण की इस मे आवश्यकता नहीं, जब अपने चित्त मे प्रेम का उदय हुआ तब उससे बढ कर और प्रमाण क्या चाहिए । प्रमाणान्तर की अनपेक्षता दिखाकर भक्ति मे और भी उत्तमता दिखाते है—

६० ॐ शान्तिरूपात्परमानन्दरूपाच्च ।

शान्ति रूप और परमानन्द रूप है ।

अर्थात् इस के शान्ति रूप होने से रजोमय तमोमय नानाप्रकार के वाद और विकल्प चित्त मे आप ही नहीं होते और परम शातिरूप है इसी से परमानन्द रूप है क्योंकि परमानन्द वहाँ ही है जहाँ वादादि से प्रतिबध नहीं और "परमानन्द" शब्द कहने से भगवान की और भक्ति की एकता दिखाई क्योंकि ईश्वर का भी परमानन्द स्वरूप है— "आनन्दमयोऽभ्यासात्", "आनन्दमात्रकरपादमुखोदरादि", "आनन्द ब्रह्म", "आनन्द ब्रह्मणो विद्वान्" इत्यादि श्रुति से भगवान् का आनद स्वरूप सिद्ध है और जीव मे आनद का तिरोभाव है तो पुन. आनद उद्दीपन के साधन ज्ञानादि कर के परमानदमयी भक्ति के आविर्भाव

बिना जीव के ताप की निवृत्ति नहीं होती । और वेदांतियो ने ज्ञान का फल आनद कहा है, ज्ञान को स्वत आनदस्वरूप नहीं कहा है । और भक्ति का स्वरूप आनद तो सूत्र मे कहतेही है ।

अब जो जीव को शका हो कि हम ने तुम्हारे कहने अनुसार योगक्षेमादिक सब छोड़ा परतु उस लोक की गति क्या होगी इस शका के मिटाने के हेतु कहते है ।

६१ ॐ लोकहानौ चिता न कार्य्या निवेदितात्मलोकवेदशील-त्वात् ।

लोकहानि मे चिता नहीं करना, क्योकि (भक्तो ने) आत्मा, लोक वेद, शील सब ईश्वर मे अर्पण किया है ।

अर्थात् जो वस्तु कोई किसी को दे देता है फिर उसकी हानि का सोच देने वाले को नहीं होता, जिसको देता है उसी को होता है । हम लोगो को लोकादि हानि का सोच क्यो करना चाहिए, उसका सोच वह (भगवान्) आप करेगा अतएव श्री महाप्रभु जी ने आज्ञा की है "चिता कापि न कार्या निवेदितात्मभि कदापि भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीं च गति । निवेदन तु स्मर्तव्य सर्वदा तादृशैर्जनैः ।। सर्वेश्वरश्च सर्वात्मा निजेच्छातः करिष्यति । सर्वेषा प्रभु सम्बन्धो न प्रत्येकमितिस्थिति. ।। अतोन्यविनियोगेपि चिन्ता का स्वस्य सोऽपि चेत् । अज्ञानादथवा ज्ञानात्कृतमात्मनिवेदन ।। यैः कृष्णस्तत्कृतप्राणै-स्तेषा का परिवेदना" इत्यादि अथवा चतु. श्लोकी मे फिर आप आज्ञा करते है कि * "एव सदा स्व कर्तव्य स्वयमेव करिष्यति । प्रभु. सर्वसम-र्थोहि ततोनिश्चिन्तता व्रजेत् ।। यदि श्री गोकुलाधीशो धृत. सर्वात्मना हृदि । ततः किमपर ब्रूहि लौकिकैर्वैदिकैरपि ।।"

अब जो वसा दृढ़ नियम न सिद्ध हुआ तो क्या करना इसका साधन लिखते हैं—

६२ ॐ न तदसिद्धौ लोकव्यवहारो हेयः किन्तु फलत्यागस्तत्साधन च कार्यमेव ।

* एव सर्वै. स्म कर्तव्यमिति पाठ भेद ।

उस (निश्चय) की असिद्धि मे लोकव्यवहार को नहीं छोड़ना, किन्तु फल छोड़ना, वरच उस (फल) का साधन अवश्य ही करना ।

क्योंकि विश्वास दृढ भए विना लोकव्यवहार छोडने मे वही कहावत होगी "न घर के हुए न घाट के" परतु उसका फल छोड़ देना अर्थात् लोकव्यवहार को असार समझना और विश्वास की सिद्धि के साधन मे प्रवृत्त होना । उसके कौन कौन साधन है सो आगे दिखाते हैं—

६३ ॐ स्त्रीधननास्तिकवैरिचरित्र न श्रवणीयम् ।

स्त्री, धन, नास्तिक और वैरी का चरित्र नहीं सुनना ।

स्त्रियो के चरित्र सुनने से विषयो मे वासना होती है, धन का चरित्र सुनने से लोभ की वृद्धि होती है, नास्तिको का चरित्र सुनने से विश्वास मे हानि होती है तथा वैरियो का चरित्र सुनने से उन पर क्रोध की वृद्धि होती है तो ये सब तमोगुणादिक के कारण है इस से इनको सुननाही नहीं ।

६४ ॐ अभिमानदभादिक त्याज्यम् ।

अभिमान, दम्भ आदि को छोडना ।

भक्तिमार्ग के मुख्य विरोधी येही दो है, क्योकि भक्ति सिद्ध हो जाने पर भी इनके फिर उदय होने का भय रहता है, हम बड़े भक्त है, हम लोगो के उपदेष्टा हैं इत्यादिक अभिमान और वाह्याचरण मे वा पूजा के आडबर मे भेद न पड़े यह दभ और आदि शब्द से काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर इत्यादि लिये जाते है । जो कहो कि दुस्त्यज हैं तो कहते है—

६५ ॐ तदर्पिताखिलाचारस्सन् कामक्रोधाभिमानादिक तस्मिन्नेव करणीयम् ।

सब आचार उसी (भगवान) को अर्पण कर काम क्रोध अभिमान आदि सब उसी पर करना ।

अर्थात् काम करना तो यही कि वह परमश्रेष्ठ हमे मिले, क्रोध करना तो उसी पर कि क्यो नहीं मिलता ? अभिमान भी उसी का कि हमारा स्वामी सर्वेश्वर है हमारा प्यारा सब से सुदर है इत्यादि ।

६६ ॐ त्रिरूपभंगपूर्वक नित्यदासनित्यकान्ता भजनात्मक वा प्रेम एव कार्य्यं प्रेम एव कार्यमिति ।

तीनो रूपभंग पूर्वक (भगवान का) नित्य दास्य और नित्यकान्ता की भाँति भजन रूपी प्रेमही करना, प्रेमही करना ।

त्रिरूप शब्द का क्या अभिप्राय है यह कौन जाने । यदि हम स्मार्त होते तो ब्रह्मा विष्णु शिव का एक करते वा वेदान्ती होते तो त्रिपुटी-भंग वा जीव, ईश्वर और ब्रह्म की एकता करते परंतु यह भक्तिशास्त्र है यहाँ इनका प्रयोजन नहीं । यहाँ तीनो गुणो को मिटा कर वा भक्ति-स्वरूप आनंदांश के आविर्भाव से तीनो (सत्, चित् और आनंद) का परस्पर पृथक्त्व भंग करना वा गुरु ईश्वर और उसके भक्तो क भेद का भंग इत्यादि । अब हम अपना सिद्धांत दिखाते है । युगल स्वरूप मे और उनको पृथक् मानना अर्थात् यह वह और यह दोनो अलग है यह जो तीन प्रकार की भावना है इसका भंग वा प्रेमी, प्रेम और प्रेमपात्र इनके भेद के भंग पूर्वक दासभाव से वा कांताभाव से प्रेम ही करना, प्रेम ही करना । इति शब्द से इन साधनो के कहने के पीछे और कुछ शेष वक्तव्य नहीं यह बोधन किया ।

अष्टम अनुवाक समाप्त ।

---

६७ ॐ भक्ता एकान्तिनो मुख्या: ।

भक्त एकांती (अभ्यंतरचारी) (और सब से) मुख्य होते है ।

पहिले सूत्रो मे साधारण भक्तो की महिमा दिखाकर अब एकांती भक्तो की महिमा दिखाते है । भक्तो मे भी अनन्य और एकांती (अपनी भक्ति को गूढ रखने वाले) मुख्य है । इस एकांती शब्द से भक्ति भी सब संसार के दिखावे की भाँति एक संसारी आचरण है, इस का निषेध किया ।

६८ ॐ कण्ठावरोधरोमाचाश्रुभि: परस्पर लपमाना: पावयन्ति कुलानि पृथिवीं च ।

(जो भक्त लोग) कंठ का अवरोध, रोमांच और अश्रु आदि से युक्त होकर परस्पर भाषण करते हुए कुल और पृथिवी को पवित्र करते हैं ।

स्मरन्त: स्मारयन्तश्च मिथाघौघहरं हरिं । भक्त्या सञ्जातया भक्ता बिभ्रत्युत्पुलकां तनु ॥ क्वचिद्रुदन्त्यच्युतचिन्तया क्वचित् हसन्ति नन्दन्ति वदन्त्यलौकिका: । नृत्यन्ति गायन्त्यनुशीलयन्त्यज भवन्ति तूष्णीम्परमेत्य निर्वृता: ॥ इत्यादि प्रबुद्ध का वाक्य है ॥

परम भागवत प्रल्हाद जी ने कहा है "निशम्य कर्माणि गुणानतुल्यान्वीर्याणि लीलातनुभि: कृतानि । यदातिहर्षोत्पुलकाश्रुगद्गद प्रोत्कण्ठ उद्गायति रौति नृत्यति ॥ यदा ग्रहग्रस्त इव क्वचिद्धसत्याक्रन्दते ध्यायति वन्दते जन । मुहु श्वसन् वक्ति हरे जगत्पते नारायणेत्यात्मगतिर्गतत्रपः ॥" श्रीमुखवाक्य भी है "एवं हरौभगवति प्रति लब्धभावो भक्त्या द्रवद्धृदय उत्पुलक: प्रमोदात् । औत्कण्ठ्यवाष्पकलया मुहुरर्द्यमानस्तच्चापि चित्तबडिशं शनकैर्वियुङ्क्ते ॥" एकादश में भी "शृण्वन् सुभद्राणिरथाङ्गपाणेर्जन्मानि कर्माणि च यानि लोके । गीतानि नामानि तदर्थकानि गायन्विलज्जो विचरेदसङ्ग: ॥ एवंव्रत:स्वप्रियनामकीर्त्या जातानुरागो द्रुतचित्त उच्चै: । हसत्यथो रोदिति रौति गायत्युन्मादवन्नृत्यति लोकबाह्यः" ॥ तृतीय में "देहञ्च तत्वपरमं स्थितमुत्थितं वा सिद्धो विपश्यति यतोऽध्यगमत्स्वरूप । दैवादुपेतमथ दैववशादुपेतं वासो यथा परिकृतं मदिरामदान्धः ॥" इत्यादि और सब भक्तो का आचरण ऐसाही सुनने मे आया है, यथा श्री गोपीजन का "विचिक्युरुन्मत्तकवद्वनाद्वन" "रुरुदु: सुस्वरं राजन्" "कृष्णोऽहं पश्य त गति" "ललितामिति तन्मनाः" 'विक्षिप्तमनसो नृप" इत्यादि और श्री महादेव जी की जड़ोन्मत्तपिशाचचर्या लोक मे प्रसिद्ध ही है "श्मशानेष्वाक्रीड़ा स्मरहर पिशाचाः सहचराः । चिताभस्मालेपः स्रगपि नृकिरोटीपरिकरः अमङ्गल्य शील भवतु नव नामैवमखिलं । तथापि स्मर्तृणां वरद परमं मङ्गलमसि ॥" * श्मशानचक्रानिलधूलिधूम्रो विकीर्णविद्योत-

* दिति से कश्यप जी का वाक्य तृतीय स्कन्ध मे अध्याय १४ श्लोक २४—८ ।

रविंदानुध्यानपरिचितभक्तियोगेन परिप्लुतः परमाल्हादगम्भीरहृदय-हृदावगाढधिषणस्तामपि क्रियमाणा भगवत्सपर्यां न सस्मार ॥" उद्धव जी ने भी ऐसाही किया है "मुक्तकण्ठो रुरोद ह"। श्रुतदेवजी ने भी ऐसाही किया "धुन्वन्वासो ननर्त ह"। राजा चित्रकेतु की भी यही दशा है " स उत्तमश्लोकपदाब्जविष्टर प्रेमाश्रुवर्षैरुपमेहयन्मुहुः ॥ प्रेमोपरुद्धाखिलवर्णनिर्गमो नैवाशकत्त प्रसमीक्षितु चिरम्। (श्रीमद्भागवत) ध्रुवजी का भी ऐसाही चरित्र है। यत्तद्विष्णुपदमाहुः यत्र ह वाव वीरव्रत औत्तानपादिः परमभागवतो अस्मत्कुलदेवताचरणारविंदोदकमिति यामनुसवनमुत्कृष्यमाणभगवद्भक्तियोगेन दृढ क्लिद्यमानातर्हृदय-औत्कण्ठ्यविवशामीलितलोचनयुगलकुड्मलविगलितामलवाष्पकलयाभिव्यज्यमानरोमपुलकोऽधुनापि परमादरेण शिरसा बिभर्त्ति, इत्यादि। श्रीअक्रूर की भी ऐसी दशा हुई "तद्दर्शनाह्लादविवृद्धसभ्रमप्रेम्णोर्द्ध्वरोमाश्रुकलाकुलेक्षण। रथादवस्कद्य स तेष्वचेष्टत प्रभोरमून्यङ्घ्रिरजास्यहो इति ॥" इत्यादि कहाँ तक कहे सब भक्तो के ऐसेही चरित्र हैं क्योंकि प्रेम भी एक मदिरा है, जो पीएगा आपही नाचेगा, रोएगा, हसेगा, बकेगा। श्रीमहाप्रभु जी का भी 'तत्कथाक्षिप्तचित्तास्तत् विस्मृतान्यो व्रजप्रियः' नाम है ॥

६९ ॐ तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थानि सुकर्मी कर्माणि सच्छास्त्री शास्त्राणि।

जो तीर्थों को तीर्थ करते है, कर्मों को सुकर्म करते हैं, शास्त्रो को सच्छास्त्र करते है।

"तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थानि" "तीर्थ पुनाना मुनयोभियन्ति" "स्वयहि तीर्थानि पुनति सतः" इत्यादि वाक्यो से तथा श्रीगङ्गाजी के प्रति भगवान् के वाक्यो से सिद्ध है और सत का कर्मों को सुकर्म करना राजा युधिष्ठिर के यज्ञ के प्रसङ्ग से और व्यास जी के सवाद से सिद्ध है। सतो की महिमा विशेष कर के ३६। ३९। ४०। ४१। सूत्रो मे लिख आए हैं।

७० ॐ तन्मयाः।

(क्योंकि वे) तन्मय हैं।

तीर्थादि के पवित्र करने मे कारण देते हैं कि "पवित्राणां पवित्र'

यो मङ्गलाना च मङ्गल" इत्यादि वाक्य से ससार मे जो कुछ पवित्रता है भगवान की है तो तन्मय जो भक्त हैं उन के दर्शन-स्पर्श से क्यो न पवित्र होगे। "तीर्थपाद" भगवान का नाम है और उनके भक्त उनका चरित्र सर्वदा गान करते हैं और भगवान के चरित्र ही से तीर्थ, कर्म और शास्त्र इन सब को सत्तीर्थता, सत्कर्मता और सच्छास्त्रता होती है, यह क्रम से दिखाते हैं। "तत्रैव गङ्गा यमुना च तत्र गोदावरी सिन्धु-सरस्वती च। सर्वाणि तीर्थानि वसति तत्र यत्राच्युतोदारकथाप्रसग:" इत्यादि वाक्यो से तीर्थों का "तत्कर्म हरितोष यत् सा विद्या तन्मति-र्यया।" "धर्मः स्वनुष्ठितः पुसा विष्वक्सेनकथासु यः। नोत्पादयेद्यदि रति श्रम एवहि केवलम्' ॥ "दानव्रततपोहोमजपस्वाध्यायसयमैः। श्रेयो-भिर्विविधैश्चान्यैः कृष्णे भक्तिर्हि साध्यते" ॥ "धिग्जन्मनस्त्रिवद्विद्यां धिग्व्रत धिग्बहुज्ञता। धिक्कुल धिक्क्रियादाद्य विमुखा ये त्वधोक्षजे" ॥ "देशः कालः पृथग्द्रव्य मन्त्रतन्त्रर्त्विजोऽग्नयः। देवता यजमानश्च क्रतुर्ध-र्मश्च यन्मयः ॥" "नैष्कर्म्यमप्यच्युतभाववर्जित न शोभते ज्ञानमल निरजन। कुतः पुनः शश्वदभद्रमीश्वरे न चार्पितं कर्म यदप्यकारम् ॥" इत्यादि से भगवान का कर्म को भी पवित्र करना और एकादश स्कंध के ५ अध्याय मे "कर्मण्यकोविदाः स्तब्धा" इत्यादि परम भागवत चमस जी के वाक्य मे भगवत्तोष बिना कर्मांतर की प्रवृत्ति की निंदा मे कर्मों का सुकर्म होना तथा "न यद्वचश्चित्रपद हरेर्यशो जगत्पवित्रं प्रगृणीय कर्हिचित्। तद्वायस तीर्थमुशाति मानसा न यत्र हंसा विरमत्यु-शिक्क्षयाः ॥ तद्वाग्विसर्गोजनताघविप्लवो यस्मिन् प्रतिश्लोकमबद्धवत्यपि। नामान्यनतस्य यशोंकितानि यच्छृण्वन्ति गायन्ति गृणति साधव: ॥" इत्यादि से शास्त्रो का सच्छास्त्र करना सिद्ध है तो तन्मय, तत्स्वरूप, तत्समानादरणीय परमभक्त जन तीर्थादिको को तीर्थ बनावेगे इसमे कौन आश्चर्य है।

७१ ॐ मोदति पितरो नृत्यति देवताः सनाथा चेय भूर्भवति।

(जिनके चरित्र देख) पितर आनन्दयुत होते हैं, देवता लोग नाचते हैं और यह पृथ्वी सनाथ होती है।

"कुलं पवित्र जननी कृतार्था वसुन्धरा भागवती च धन्या। स्वर्गेपि

तेषां पितरश्च धन्या येषां कुले वैष्णवनामधेयम्" ॥ "स वै पुण्यतमो देशः सत्पात्रं यत्र लभ्यते ॥" "सङ्कीर्तनध्वनिं श्रुत्वा येच नृत्यन्ति वैष्णवा. । तेषां पादरज.स्पर्शात्सद्यः पूता वसुन्धरा ॥ तद्दिनं सफलं धन्यं यशस्यं सर्वमंगलं । श्रीकृष्णकीर्तनं यत्र यत्र नैवायुषो व्यय. ॥ तत्कीर्तनं भवेद्यत्र कृष्णस्य परमात्मनः । स्थानं तच्च भवेत्तीर्थं मृतानां तत्र मुक्तिदम् ॥ नात्र पापानि तिष्ठंति पुण्यानि सुस्थिराणि च । तपस्विनाञ्च व्रतिनां व्रतानां तपसां फलम् ॥" इत्यादि शास्त्र में महिमा कही है तथा श्रीमुख से भी आज्ञा करते है (वाराहपुराण) "जान्हव्यादीनि तीर्थानि पापनिष्कृतिहेतवे । काङ्क्षति हरिदासानां दर्शनं हरिदासवत् ॥ मद्भक्तजनसम्मर्दपादपांसुविसर्जनात् । चतु.सागरपर्यंतं पावनं स्याद्वसुन्धरे ॥" तथा प्रह्लाद जी से भी भगवान ने कहा है "त्रि.सप्तभि· पिता पूतः पितृभि· सह तेऽनघ । यत्साधोऽस्य गृहे जातो भवान्वै कुलपावनः । यत्र यत्र च मद्भक्ताः प्रशांता· समदर्शिनः । साधव· समुदाचारास्ते पूयन्त्यपि कीकटा· ॥" इत्यादि ।

७२ ॐ नास्ति तेषु जातिविद्यारूपकुलधनक्रियादिभेदः ।

उन (भक्तों) में जाति, विद्या, रूप, कुल, धन और क्रिया आदि का भेद नहीं ।

"नालं द्विजत्वं देवत्वं ऋषित्वं वा सुरात्मजाः । प्रीणनाय मुकुन्दस्य न दत्तं न बहुज्ञता ॥" "विप्राद् द्विषड्गुणयुतादरविंदनाभपादारविंदविमुखाच्छ्वपचं वरिष्ठम् । मन्ये" "अहोबत श्वपचोतो गरीयान्यज्जिह्वाग्रे वर्तते नाम तुभ्यं ॥" "ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रो वा यदि वेतरः । विष्णुभक्तिसमायुक्तो ज्ञेयः सर्वोत्तमोत्तमः ॥" "दैतेया यक्षरक्षांसि स्त्रियः शूद्रा व्रजौकसः ।" "विद्याधरा मनुष्येषु वैश्याः शूद्राः स्त्रियोन्त्यजाः । सर्वेधिकारिणोह्यत्र विष्णुभक्तो यथा नृप ॥" "किरातहूणांध्रपुलिंदपुष्कसाआभीरकंका यवनाः खसादयः । येन्ये च पापा यदुपाश्रयाश्रयाः शुध्यन्ति तस्मै प्रभविष्णवे नमः ॥" पञ्चम स्कन्ध में श्रीहनुमद्वाक्य "न जन्म नूनं महतो न सौभगं न वाङ् न बुद्धिर्नाकृतिस्तोषहेतुः । तैर्यद्विशिष्टानपि नो वनौकसा चकार सख्ये बत लक्ष्मणाग्रजः" "इक्ष्वाकुरैलमुचुकुन्दविदेहगाधीरघ्वम्बरीषसगरा गयनाहुषाद्याः । मांधात्रलर्क्श-

तधन्वनुरतिदेवदेवव्रतो बलिरमूर्तरयो दिलीप ॥ सौभयुतकशिविदेवल-पिप्पलादसारस्वतोद्धवपराशरभूरिषेणाः । येन्ये विभीषण हनूमदुपेन्द्र-दत्तपार्थार्ष्टिषेणविदुरश्रुतदेववर्याः ॥ ते वै विदन्त्यतितरंति च देवमायां स्त्रीशूद्रहूणशबरा अपि पापजीवाः । यद्यद्‌गुणक्रमपरायणशी-लशिक्षास्तिर्यग्जना अपि किमु श्रुतधारणा ये ॥" इत्यादि वाक्यो से तदीयो की समता स्पष्ट है और वैष्णवे जातिबुद्धि अर्थात् वैष्णव मे जातिभेद करना यह ६४ महा अपराधो * म से एक गिना

* (१) भगवान् मे देवविशेष या तत्वविशेषबुद्धि (२) शास्त्रों मे ग्रथ अर्थात् पौरुषेय बुद्धि (३) वैष्णव मे जाति-बुद्धि (४) गुरु मे साधारण मनुष्य-बुद्धि (५) प्रतिमा में शिलाबुद्धि (६) प्रसाद में खाद्यबुद्धि (७) चरणोदक में जलबुद्धि (८) तुलसी मे वृक्षसाधारण बुद्धि (९) गऊ में पशुसाधारण बुद्धि (१०) भागवत और गीता में ग्रथसाधारण बुद्धि (११) भगवल्लीला मे मनुष्यकृत्य बुद्धि (१२) सासारिक प्रेम वा स्त्रीसुख में लीला गान वा स्मरण (१३) श्रीगोपीजन में परकीया भावना (१४) रासलीला में कामबुद्धि (१५) महोत्सव मे स्पर्शास्पर्शबुद्धि (१६) नास्तिक-वादावलम्बन (१७) सदेहपूर्वक धर्माचरण (१८) अश्रद्धापूर्वक धर्माचरण वा धर्म में आलस्य करना (१९) वैष्णव का वाह्य चरित्र देखना (२०) महात्माओं के चरित्र पर गुण दोष विचारना (२१) अपने को उत्तम समझना (२२) किसी देवता या शास्त्र की निंदा (२३) भगवद् विग्रह के सामने पीठ लगाकर बैठना (२४) जूता पहने, (२५) माला पहने, (२६) छड़ी लिए, (२७) नील वस्त्र पहने (रेशम मे नील शुद्ध है) (२८) बिना दतधावन किए, (२९) मलत्याग मैथुनादि के पीछे बिना वस्त्र बदले मदिर में जाना, (३०) भगवद्विग्रह के सामने हाथ पैर हिलाना (३१) ताम्बूलादि खाना, (३२) ऊँचे हँसना, (३३) कुचेष्टा करना, (३४) स्त्री को घूरना, (३५) क्रोध करना (३६) दूसरे को आदर के हेतु अभिवादन करना, (३७) दुर्गंध वस्तु खाकर तथा पहनकर, बिना गध दूर भए वा अजीर्ण भए पर जाना, (३८) मत्त होना अर्थात् नशा सेवन करके जाना, (३९) किसी का अपमान करना वा मारना, (४०) काम क्रोधादि चेष्टा करना (४१) घर आए मनुष्य को विशेष करके सत की अभ्यर्थना न करना (४२) सेवा वा धर्म वा पाडित्य

है और भागवतो के लक्षण मे भी कहा है "न यस्य जन्मकर्मभ्या न वर्णाश्रमजातिभि.। सज्जतेस्मिन्नहभावा देहे वै स हरे प्रिय."। और श्री हरिराय जी ने अपने ग्रथ शिक्षापत्र मे भी ऐसा ही लिखा है। इसी से वैष्णवों को परस्पर जाति, विद्या रूप, कुल, धन और क्रिया आदि का भेद कदापि नहीं करना क्योकि जिस समय वह तदीय हुआ उसी समय सब गुण पूर्ण हो गया। "यस्यास्ति भक्तिर्भगवत्य-किचना सर्वैर्गुणैस्तत्र समासते सुरा." इत्यादि वाक्यों से सिद्ध है।

७३ ॐ यतस्तदीयाः।

क्योंकि (ये) उसके है।

पूर्वोक्त अभेद मानने का हेतु देते है कि जब तुम तदीय हो और वे भी तदीय है तब परस्पर न्यूनाधिक भेद कहाँ रहा, सब एक से भाई

अपने में मानना वा सुकृत को अपना किया समझना (४३) नास्तिकों का, लपटो का, हिंसकों का लोभियो का, मिथ्याचारियों का सग करना (४४) विपत्ति परमेश्वर ने दिया यह बुद्धि करना (४५) धर्म के बल पाप करना (४६) किसी को तृण मात्र भी कष्ट देकर अपने को धार्मिक समझना (४७) स्त्री पुत्र भृत्य परिवार आश्रित दीन सत की उपेक्षा (४८) वस्तु को अपने उपयोगी समझकर सेवा मे देना वा असमर्पित वस्तु ग्रहण करना (४९) इष्टदेव की शपथ खाना (५०) भगवान्, धर्म वा नाम बेचकर द्रव्य कमाना (५१) अन्य देवता से आशा करना (५२) धर्मशास्त्र की मर्यादा का उल्लघन (५३) वह दशा भए विना ज्ञान हाँकना वा वैसा आचरण करना (५४) देवचरित्र की भाँति आचरण करना (५५) सम्प्रदायभेद से वैष्णवों को ऊँचा नीचा समझना (५६) अवतार की तारतम्यदृष्टि से निंदा करना (५७) हँसी में भी किसी को तुम परमेश्वर हो यह कहना (५८) परमेश्वर को कदापि किसी कारण से भी अणुमात्र भी परतंत्र समझना (५९) लोभ से किसी को चरणामृत वा प्रसाद देना (६०) भगवान् के चित्र मूर्ति नाम आदि की अवज्ञा करना या कहना (६१) किसी जीव को किसी प्रकार भी ताप देना वा उद्वेजन करना (६२) तर्कवितर्क से आस्तिकता से मान डिगाना (६३) भगवदवतार में जन्म कर्म मानना (६४) जुगल स्वरूप में भेदबुद्धि।

हुए और जब सब विद्या, जाति, क्रिया इत्यादिकों का मूल पवित्र करने-वाला भगवान इन के हृदय मे बैठा है तो वे आपही सर्वोत्तमोत्तम हो गए।

नवम अनुवाक समाप्त।

---

७४ ॐ वादो नावलम्ब्य ।

श्रीमुख से निषेध किया है "वादवादांस्त्यजेत्तर्कान् पक्षं कञ्चन नाश्रयेत्। वेदवादरतो न स्यान्नपाखण्डी न हेतुकः॥" इत्यादि क्योंकि वाद से मनुष्य के चित्त मे आग्रह की गाँठ पड जाती है और जहाँ आग्रह होता है वहाँ तत्व नहीं प्रगट होता और बहुत वाद करने से तमोगुण उदय होने की भी संभावना है। अब उसमे हेतु देते हैं—

७५ ॐ बाहुल्यावकाशत्वादनियतत्वात्।

(क्योंकि वाद मे) बहुत अवकाश है और अनियत है।

व्यास जी ने भी कहा है "तर्काप्रतिष्ठानात्" तथा श्रुति भी है "नैषामतिरापनेया दुष्प्रतर्क्यै"। क्योंकि जितने वाद हैं वे भगवान् का तत्व जानने के हेतु हैं सो वादो से कभी नहीं जाना जायगा, क्योंकि वहाँ तक बुद्धि जाती नहीं "यतो वाचो निवर्तंते अप्राप्य मनसा सह" "यद्वाचा नाभ्युदित"। सनत्सुजात मे भी "न तं विदुर्वेदविदो न वेदाः", "नेदं यदिदमुपासते", "वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहं", "शब्दब्रह्म सुदुर्बोधं प्राणेन्द्रियमनोमयं। अनन्तपारगम्भीरं दुर्विगाह्यसमुद्रवत्", "नैतन्मनो विशति वागपि चक्षुरात्मा प्राणेन्द्रियाणि च।" इत्यादि से ईश्वर की वादो से दूरता स्पष्ट है और वेद भी उसके विषय में नेति नेति कहते हैं तब व्यर्थ वाद क्यो करना क्योंकि उस की प्रतिज्ञा है "भक्त्याहमेकया ग्राह्य"। इससे वादो को छोड़ कर केवल उस पर विश्वास करना।

७६ ॐ भक्तिशास्त्राणि मननीयानि तदुद्बोधककर्म्मण्यपि करणीयानि।

भक्ति शास्त्रो को मनन करना और उस (भक्ति) को बढ़ाने वाले कर्मों को करना।

वाद छोडकर केवल सिद्धान्त स्वरूप भक्तिशास्त्रो को देखना और उनका चिन्तन करना आचार्यों और भगवज्जनो और सिद्धान्तो के रहस्य को जानना और भक्ति बढाने वाले उत्सव, सत्सग तीर्थाटन, कथा-श्रवण, तदीयो से आलाप, भगवत्सेवा और गुरु-शुश्रूषा इत्यादि कर्म करना इससे भक्ति प्रतिक्षण वर्द्धमान रहेगी।

७७ ॐ सुखदुःखेच्छालाभादित्यक्ते काले प्रतीक्ष्यमाणे क्षणार्द्धमपि व्यर्थं न नेय।

सुख, दुःख, इच्छा, लाभादि [का अभिमान] छोड कर काल की प्रतीक्षा करते हुए भी आधा क्षण भी व्यर्थ न बिताना।

यद्यपि इच्छादि के परित्याग से पूर्ण काम हो गए हैं और कुछ कर्तव्य है नहीं तथापि भगवद्भजन बिना क्षण भर भी नहीं बिताना क्योंकि यह तो नित्य कार्य है। देखो मरने के समय करोड उपाय करो क्षण भर भी विशेष मनुष्य नहीं रह सकता ऐसे अनमोल क्षण को व्यर्थ बिताना मूर्खता की बात है।

७८ ॐ अहिंसासत्यशौचदयाऽस्तिक्यतादिचारित्र्याणि पालनीयानि ॥

अहिंसा, सचाई, शुद्धि, दया, आस्तिकता आदि सब चारित्र्यो का पालन करना।

क्योंकि सत्व गुण के ये सब कृत्य हैं। इनके न करने से वा विरुद्ध करने से तमोगुण की प्रवृत्ति होती है और भक्ति मे बाधा होती है।

७९ ॐ सर्वदा सर्वभावेन निश्चिन्तैर्भगवानेव भजनीयः।

सर्वदा सब प्रकार से निश्चित होकर भगवानही का भजन करना।

साधारण शिक्षा देकर सिद्धात की शिक्षा देते हैं कि सर्वदा सब काल मे दुःख मे सुख मे अनेक कर्मों मे प्रवृत्त रहने के समय भी सर्व भाव से अर्थात् उसको अपना सर्वस्व मान कर केवल उसी का भजन करना और भजन भी निश्चित होकर करना, क्योंकि जो किसी प्रकार खटका रहता है तब भजन भली भाँति नहीं होता।

८० ॐ स कीर्त्यमानश्शीघ्रमेवाविर्भवत्यनुभावयति भक्तान् ।

वह गाए जाने से शीघ्र ही प्रगट होता है और अपने भक्तो को अनुभव कराता है।

सो तो उसकी प्रतिज्ञा ही है "नाह वसामि वैकुण्ठे योगिना हृदये न च। मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद।" और नारद जी ने भी कहा है "प्रगायत स्ववीर्याणि तीर्थपादः प्रियश्रवा। आहूत इव मे शीघ्र दर्शन याति चेतसि ।।" श्रीमहाप्रभु जी ने भी कहा है "क्लिश्यमानान्जनान्दृष्ट्वा कृपायुक्तोवदाभवेत। तदा सर्व सदानन्द हृदिस्थ निर्गत वहिः ॥ सदानन्दमयस्यापि कृपानन्द सुदुर्लभः। हृद्गत.स्वगुणान् श्रुत्वा पूर्ण प्लावयते जनान् ॥" और श्री महाप्रभु जी का "स्वयशोगानसहृष्टहृदयाम्भोजविष्टर। यशःपीयूषलहरीप्लावितोन्यरस॰ पर ॥"

८१ ॐ त्रिसत्यस्य भक्तिरेव गरीयसी भक्तिरेव गरीयसी ।

त्रि (कालमे) सत्य [भगवान] की भक्ति ही सब मे [साधनो मे] बडी है, भक्तिही बडी है।

"भक्त्यैव तुष्टिमभ्येति विष्णुर्नान्येन केनचित्। प्रीयतेमलया भक्त्या हरिरन्यद्विडम्बन ॥" "भक्त्या तुतोष भगवान् गजयूथपाय", "भक्त्याहमेकया ग्राह्य." "भक्ति पुनाति मन्निष्ठा", "भक्त्या मामभिजानाति", "भक्त्यैकलभ्यो पुरुषोत्तमोहि", "भक्तिमान् यः स मे प्रिय॰", "भक्तियोगेन सेवते", "भक्त्यैकलभ्ये पुरुषे पुराणे मुक्त्यै किमर्थं क्रियते प्रयत्न", "धर्मार्थकामै कि तस्य मुक्तिस्तस्य करे स्थिता। समस्तजगता मूले यस्य भक्ति॰ स्थिरा करे ॥" "ब्रह्मसस्थोमृतत्वमेति", "मयि भक्तिर्हि भूतानाममृतत्वाय कल्पते", "तन्निष्ठस्य मोक्षोपदेशात्", "तत्सस्थस्यामृतापदेशात्", "सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति प्रयाचते। अभयसर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद्व्रत मम ॥" "भक्त्या त्वनन्यया शक्यः", "भक्त्यालभ्यस्त्वनन्यया", "श्रद्धावान् भजते यो मा स मे युक्तमो मत॰", "भक्तिप्रियोमाधवः", "मयि सजायते भक्ति॰ कोन्योस्यार्थोवशिष्यते", "योमे भक्त्या प्रयच्छति ॥ तदहभक्त्युपहृत", "अएवप्युपहृत भक्त्यैः प्रेम्णा भूर्यैव मे भवेत्", "श्रेयोभिर्विविधैश्चान्यैः कृष्णे भक्तिर्हि साध्यते," "अपि यः सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्", "अह भक्त-

पराधीनो" इत्यादि वेद, उपनिषत्, श्रीमुखवाक्य, रामायण, भारत, स्मृति, व्याससूत्र, शाण्डिल्यसूत्र, पुराण और तन्त्रो से सिद्ध है कि सब साधनो मे मुख्य साधन केवल भक्तिही है। विस्तरभयात् विशेष प्रमाण नहीं दिया।

८२ ॐ गुणमाहात्म्यासक्ति १ रूपासक्ति २ पूजासक्ति ३ स्मरणासक्ति ४ दास्यासक्ति ५ सख्यासक्ति ६ कान्तासक्ति ७ वात्सल्यासक्ति ८ आत्मनिवेदनासक्ति ९ तन्मयतासक्ति १० परमविरहासक्ति ११ रूपा एकधाप्येकादशधा भवति।

(यह भक्ति) एक रूपही होकर गुणमाहात्म्यासक्ति, रूपासक्ति, पूजासक्ति, स्मरणासक्ति, दास्यासक्ति, सख्यासक्ति, कान्तासक्ति, वात्सल्यासक्ति, आत्मनिवेदनासक्ति, तन्मयतासक्ति और परमविरहासक्ति रूप से एकादश प्रकार का होती है।

इससे श्रवणादिक नवधा भक्ति गौण है, इसका निषेध किया क्योकि नारद जी का मत है कि भक्तिबीज के हृदय मे उत्पन्न होने के पूर्व जो श्रवणादिक है उनको श्रवणभक्ति नहीं कह सकते और यह पूर्वोक्त जो श्रवणादिक हैं वे शुद्धा भक्ति से भिन्न नहीं हैं अतएव प्रति शब्द के साथ आसक्ति का शब्द दिया है। जो यह शका करो कि जिनको प्रेम सिद्ध है उनको तो पूर्वोक्त आसक्तियाँ होगी सो नहीं यह विशेष आसक्ति परत्व है। जैसे प्रेमियो को अपने प्रेम पात्र का सबही अंग सुन्दर लगता है तथापि प्रति प्रेमी को अपने प्रेमपात्रो मे कोई अग वा चेष्टा विशेष मोहके विषय होते है, वैसेही पूर्ण प्रेमियो को यद्यपि सबही आसक्तियाँ सिद्ध हैं तथापि किसीको किसी मे विशेष रुचि है किसी को किसी मे है। श्रवणादिको को गौणी भक्ति मानने मे एक बडा दोष यह है कि जैसे अर्जुन सख्य के वा श्री हनुमान जी दास्य के अधिकारी हैं तो जिसके मत मे यह भक्तियाँ गौणी है उन के मत से ये भक्त भी गौण हुए। तो इस सूत्र से शुक, प्रह्लाद, हनुमान, अर्जुन, बलि, विभीषण आदि एक एक भक्ति के विशेष अधिकारी महानुभावो को गौण भक्त कहने वालो का मत परास्त हुआ और सिद्ध हुआ कि प्रेम एकही वस्तु है जो केवल रुचि की विचित्रता से अलग अलग छलावे दिखाता

है। इनमे तन्मयतासक्ति तथा परम विरहासक्ति वियोगी भक्तो को सिद्ध है, शेष आसक्तियाँ सयोगी और वियोगी दोनो को सिद्ध हैं। और किसी किसी भक्त को एक एक आसक्ति सिद्ध है, परतु किसी को दो तीन भी सिद्ध है और श्री गोपीजन को तो सभी सिद्ध है।

१ "गुणमाहात्म्यासक्ति"—जैसा परीक्षित को, नारद को तथा हनुमान जी को और श्रीपृथुराजा को, जिमने केवल हरिगुण-श्रवण के अर्थ दस हजार कान माँगे थे। परीक्षित ने कहा है "नैषातिदु महा क्षुन्मा त्यक्तोदमपि बाधते। पिवत त्वन्मुखांभोजच्युतं हरिकथामृतम्" ॥ नारद जी का वाक्य "देवदत्तामिमां वीणा स्वरब्रह्मविभूषिता। मूर्छ्यित्वा हरिकथा गायमानश्चराम्यहम्", "प्रगायत. स्ववीर्याणि तीर्थपाद. पृथुश्रवा.। आहूत इव मे शीघ्र दर्शनं याति चेतसि" ॥ हनुमान जी का तो ध्यान ही है "यत्र यत्र रघुनाथकीतन तत्र तत्र कृतमस्तकांजलि। बाष्पवारिपरिपूर्णलोचन मारुति नमत राक्षमातक।" तथा अपने मुँह से [रामायण उत्तरकाण्ड १०७ सर्ग ३१ श्लोक] "यावत्तव कथा लोके विचरिष्यति पावनी। तावत् स्थास्यामि मेदिन्या तवाज्ञामनुपालयन्"। तथा [श्रीमद्भागवत पंचम स्कन्ध १९ अध्याय ८ श्लोक] सुरोऽसुरो वाप्यथवा नरोऽनर: सर्वात्मना य: सुकृतज्ञमुत्तम। भजेत रामं मनुजाकृति हरि य उत्तरामनयत् कोशलान्दिवं"।

२ रूपासक्ति दो प्रकार की होती है—एक किशोररूप में एक बालरूप मे। बाल रूप से श्री मातृचरण श्री नन्दोपनन्दादिक वृद्ध व्रजवासियो को तथा किशोर रूप में व्रज की स्त्री पुरुष पशु पक्षिमात्र को। जैसा "अहो अमी देववरामरार्चित" इत्यादि श्लोको मे श्रीमुख से भी कहा है और "अक्षण्वता फलमिद न पर विदाम" इत्यादि वेणुगीत के श्लोको मे तथा "वामबाहुकृतवामकपोलो" इत्यादि युगलगीत के श्लोको से सिद्ध है।

३ "पूजासक्ति" महाराज पृथु को, जैसा उन्होने कहा है "यत्पादसेवाभिरुचिस्तपस्विनामशेषजन्मोपचित मल धिय:। सद्य.क्षिणोत्यन्वहमेधती सती यथा पदागुष्ठविनि.सृता सरित ॥" इत्यादि।

४ "स्मरणाभक्ति" परम भागवत प्रह्लाद को, जैसा "सोऽहं प्रियस्य सुहृद परदेवताया लीलाकथास्तवनृसिंहविरच्यगीता । अंजस्तितर्म्यनु-गृणन् गुणविप्रमुक्तो दुर्गाणि ते पदयुगालयहंससंग ॥" इत्यादि ।

५ "दास्याभक्ति" परमभागवत प्रह्लाद और हनुमान आदि को, जैसा प्रह्लाद जी का वाक्य "आयुः श्रिय विभवमैंद्रियमाविरिंच्यात् नेच्छामि ते विलुलितानुरुविक्रमेण । कालात्मनोपनय मा निजभृत्य-पार्श्वं ॥" तथा हनुमानजी का वाक्य "दासोऽहं कोशलेन्द्रस्य रामस्या-क्लिष्टकर्मण. ।" इत्यादि और यथा अक्रूर जी का वाक्य "अहं हि नारायणदासदासो दासानुदासस्य च दासदास" ॥ विदुर जी का वाक्य "वासुदेवस्य ये भक्ताश्शान्तास्तद्गतमानसा. । तेषां दासस्य दासोऽहं भवेय जन्मजन्मनि ॥" इत्यादि । तथा उद्धव जी और युधि-ष्ठिर का तो हरिदास नाम ही मिला है ।

६ 'सख्यासक्ति" जैसा अर्जुन, सुग्रीव, उद्धव, कुवेर, सुदामा, देव, सुबल, श्रीदामादि, गरुड़ इत्यादि और कभी कभी हनुमान जी को भी हो सकती है । अर्जुन को श्रीमुख से कहा है "भक्तोसि मे सखा चेति" तथा अर्जुन का वाक्य "सखेति मत्वा प्रसभ यदुक्त हेकृष्ण हेयादव हेसखेति" तथा श्रीमद्भागवत "नर्माण्युदाररुचिरस्मितशोभितानि हेपार्थ हेऽर्जुन सखे कुरुनन्दनति । सजल्पितानि नरदेवहृदिस्पृशानि स्मतुर्लुठन्ति हृदयमम माधवस्य ॥ शय्यासनाटनविकत्थनभोजनादिष्वैक्याद्वयस्य कृतवानिति विप्रलब्धः । सख्युः सखेव पितृवत्तनयस्य सर्वं सोहेमहान्म-हितयान्कुमतेरघ मे ॥"

तथा "या प्रीतिरविवेकाना विषयेष्वनपायिनी । त्वामनुस्मरतः सा मे हृदयान्मापसर्पतु ॥" उद्धव जी की "वैष्णीनां प्रवरो मत्री कृष्णस्य दयितः सखा ॥" "श्रीमुखवाक्य भी "नोद्धवोण्वपि मन्न्यूनो यद्गुणै-र्नार्दितः प्रभुः" "न तथा मे प्रियतमो आत्मयोनिर्न शकरः । न च सक-र्षणो न श्रीनवात्मा च यथा भवान्" । उद्धवजी का वाक्य "शय्या-सनाटनस्थानस्नानक्रीडाशनादिषु । कथं त्वा प्रियमात्मान वय भक्तास्त्य-जेमहि ॥" तथा "मत्रेषु मा वा उपहूय यत्त्वमकुण्ठिताखण्डसदात्म-

बोव.। पृच्छे. प्रभो मुग्ध इवाप्रमत्तस्तन्नो मनो मोहयतीव देव"। कुवेर की श्रीशिवजी मे यथा मनुजी का वाक्य "हेतन गिरिशभ्रातुर्धन दस्य त्वया कृत" तथा श्रीशुकदेव जी का वाक्य "उपास्यमान सख्याच भर्त्रा गुह्यकरक्षसा।" कोश मे भी "कुवेरः त्र्यम्बकसखा" इत्यादि सुबलश्रीदामादि की यथा "श्रीदामा नाम गोपालो रामकेशवयो. सखा सुबलस्तोककृष्णाद्या गोपा. प्रेम्णेदमब्रुवन्। एव सुहृद्वचः श्रुत्वा सुहृत्प्रियचिकीर्षया" इत्यादि। दशम के १८ अध्याय मे सब इन्हीं लोगों के सख्यत्व की सीमा लिखी है। श्रीसुदामा जी की यथा "कृष्णस्यासीत्सखा कश्चिद् ब्राह्मणो यो ब्रह्मवित्तम.। ननु ब्रह्मन् भगवत सखा साक्षाच्छ्रिय.पते"॥ जिसका भगवान ने ऐसा आदर किया "त विलोक्याच्युता दूरात्प्रियापर्यंकमास्थितः। सहसोत्थाय चाभ्येत्य दोर्भ्या पर्यग्रहीन्मुदा।। सख्यु. प्रियस्य विप्रर्षे रंगसंगातिनिर्वृत। प्रीतो व्यमुचदब्बिदून्नेत्राभ्या पुष्करेक्षण॥ अथोपवेश्य पर्यंके स्वय सख्यु समर्हण उपहृत्यावनिज्यास्य पादौपादावनेजनी॥ अग्रहीच्छिरसा राजन् भगवाल्लोकपावन। कुचैलं मलिन क्षाम द्विज धमनिसतत॥ देवी पर्यचरच्छैब्य चामरव्यजनेन वै॥ याभ्यॉं त्रिलोकगुरुणा श्रीनिवासेन सभृतः। पर्यंकस्था श्रिय हित्त्वा परिष्वक्तोऽग्रजो यथा॥" जिसके चावल भगवान ने आप ही छीन कर खाए और "सख्यु' प्रियचिकीर्षया", "परम प्रीणन सखे", "पर्यंके भ्रातरौ यथा", "दाशार्हकाणामृषभ' सखा मे" "सुहृत्कृत फल्ग्वपि भूरिकारि", "तस्यैव मे सौहृदसख्यमैत्री", "एव स विप्रा भगवत्सुहृत्तदा" इत्यादि। गरुड की जैसी "भगवान् भगवत्प्रिय'", "विनतासुतासेविन्यस्तहस्तमपरेण धुनानमब्ज।" तथा हनुमान जी की "न जन्म नून महतो न सौभग नवाग् न बुद्धिर्नाकृतिस्तोषहेतुः। तैर्यद्विसृष्टानपि नोवनौकसश्चकार सख्ये वत लक्ष्मणाग्रज'॥" तथा सुग्रीव की (बालमाकि रा० किष्किन्धा षष्ठ सग श्लोक १२) "तमब्रवीत्तता रामः सुग्रीव प्रियवादिन। आनयस्व सखे शीघ्र किमर्थं प्रविलम्बसे॥" तथा सुग्रीव का वाक्य (७ सग श्लोक १३) "हित वयस्यभावेन ब्रुवे नोपदिशामि ते। वयस्यता पूजयन्मे न त्व शोचितुमर्हसि" तथा श्रीरामजी का वाक्य (७ सर्ग श्लोक १६) "कर्तव्य यद्वयस्येन स्निग्धेन च हितेन च। अनुरूप च युक्तञ्च कृत सुग्रीव

तत्त्वया ॥ एष च प्रकृतिस्थोऽहमनुनीतस्तया सखे । दुर्लभोऽहीदृशो बधु-रस्मिन् काले विशेषतः ॥" इत्यादि ।

७ "कान्तासक्ति"—यथा श्री गोपीजन को । यद्यपि श्री गोपीजन को सभी आसक्तियाँ सिद्ध हैं यह पहले लिख आए हैं और विरहासक्ति मे निरूपण भी करेंगे तथापि श्री गोपीजन की आसक्तियो मे कान्ता-सक्ति अङ्गीभाव से है जो "कृष्ण विदुः पर कान्त" इत्यादि वाक्यों से सर्वत्र सिद्ध है ।

८ "वात्सल्यासक्ति"—श्रीनन्द, यशोदा, कौशल्या, दशरथ, सुमित्रा, कश्यप, अदिति, धनिष्ठा, श्री वृषभानु, कीर्तिदा, पूर्णमासी इत्यादि को ।

९ "आत्मनिवेदनासक्ति"—यथा बलि को "सर्व्वस्वात्मनिवेदने बलिरभूत् ।"

१० "तन्मयासक्ति"—यथा श्री शिव जी को, जिनका अभेद पुराणो से सिद्ध है ।

११ "परमविरहासक्ति"—यथा श्री उद्धवादि को "योगेन कस्तद्विरह सहेत" इत्यादि ।

तथा श्रीगोपीजन को

अथ श्रीगोपीजन मे सभी आसक्तियाँ सिद्ध है यह दिखाते है ।

१ "गुणमाहात्म्यासक्ति" श्री गोपीगीत, वेणुगीत, युगलगीत, भ्रमरगीत आदि से सिद्ध है ॥ २ "रूपासक्ति" गोपीना परमानन्द आसीद्गोविन्ददर्शने । क्षण युगशतमिव यासा येन विनाभवत् ॥ अपरा-निमिषत्दृग्भ्यां जुषाणा तन्मुखाबुज । आपीतमपि नातृप्यत्सन्तस्तच्चरण यथा ॥" इत्यादि से । ३ "पूजासक्ति" फल फूलादि दान से ४ "स्मर-णासक्ति" "स्मरत्य कृष्णचेष्टित" इत्यादि से । ५ "दासासक्ति" "भवाम दास्यः श्यामसुन्दर ते दास्यः" "शिरस्सु च किंकरीणा" इत्यादि से । ६ "सख्यासक्ति" "सखउदेयिवान्० भजसखेभवत्० कितवयो-षितः० इत्यादि से । ७ " कान्तासक्ति" "कान्तकामद", "प्रेष्ठोभवान्", "दयितदृश्यता", "सुरतनाथते" इत्यादि वाक्यो से । ८ वात्सल्यासक्ति—"गोप्यः सुमृष्टमणिकुण्डल" से, दामोदरलीला आदि मे स्पष्ट । ९ आत्म-निवेदनासक्ति" 'यः पत्यपत्य' इत्यादि श्लोको से । १० "तन्मयता-

सक्ति" "कृष्णोहं" इत्यादि वाक्यो मे। ११ "परमविरहासक्ति" "त्रुण युगशतमिव" इत्यादि से। और इन श्री गोपीजन को नित्य लीला मे श्री मुख का दर्शन होते भी केवल पलक की ओट मे जिनका परम-वियोग होता है और कहती है कि हे निर्दई विधना इस मुखचन्द्र देखने के हेतु तुझको रोम रोम मे आँखे बनानी थीं उसके बदले यह उलटा अँधेर किया कि बिना बात की पलक बना दी। तो जिनका प्रेम और विरह इतना सीमा के बाहर है उनकी ये सब आसक्तियाँ सिद्ध हो इसमे क्या आश्चर्य है। जिनकी चरणार-विन्द की रेणु के प्रसाद से लोग प्रेम पथ के अधिकारी हो सकते हैं उनके प्रेम का क्या पूछना है। भक्तिमार्ग के उद्धारकर्ता श्रीआचार्य्य जी ने जिनकी स्पृहा की है यथा 'गोपिकाना च यद्दु'ख तद्दु ख स्या-न्मम क्वचित्'॥ और जिनको अपने मार्ग का गुरु लिखा है यथा "गोपिका प्रोक्ता गुरवः साधने मता" तो अब इस से बढ़ कर उनके आदर के हेतु वा प्रमाण के हेतु हम क्या लिखे वा क्या कहैं।

ये प्रेम के ग्यारह अलग अलग भेद नहीं है किंतु स्वरूप हैं क्योंकि जो अलग होती तो जिसको एक सिद्ध हो उसको दूसरी न होती और यदि दो सिद्ध होगी तो एक से जिस को दो सिद्ध हो उस की विशेषता होगी और प्रेमियो मे कोई छोटा बडा नहीं इससे भक्ति एकही है केवल प्रेमियो की रुचि भेद से अलग दिखाती है।

८३ ओ इत्येव वदन्ति जनजल्पनिर्भया एकमताः कुमारव्यासशुक-शाण्डिल्यगर्गविष्णुकौण्डिन्यशेषोद्धवारुणिबलिहनुमद्विभीषणादयो भ-क्त्याचार्याः।

कुमार (सनकादिक), व्यासजी, शुकदेवजी, शाण्डिल्य, गर्गाचार्य, विष्णु, कौण्डिन्य, शेष, उद्धवजी, आरुणि, बलि, हनुमानजी, विभी-षण आदि भक्ति के आचार्य लोक के उपहास से निर्भय होकर पूर्वोक्त मार्ग कहते हैं॥

कुमार—सनकादिक, इनका प्रेममार्ग निम्बार्कमत के नाम से प्रसिद्ध है। भगवान ने इन लोगों से अपना तत्व हंस का स्वरूप लेकर कहा है और इनकी वंशपरंपरा मन्वन्तर वर्णन में श्रीमद्भागवत मे लिखी

है "महर्षयः सप्त पूर्वे चत्वारो मनवस्तथा। मद्भावा मानसा जाता येषा लोक इमाः प्रजा" ॥ और प्रामाणिक स्मार्तों के निबन्धों मे भी एकादशी के प्रसङ्ग मे ४५ दड का वेध मानने वालो का इनका मत "कपालवेधमित्याहुराचार्या ये हरिप्रिय." "निम्बार्को भगवान्येषामित्याहुः सनकादय. ॥" इत्यादि वाक्यो से प्रमाण करके लिखते है और निम्बार्काचार्य ने अपना परमाचार्य इन्हीं लोगो को माना भी है जैसा उन्होने दशश्लोकी मे कहा है "उपासनीय नितरा जनैः सह प्रहाणयेऽज्ञानतमोनिवृत्तये। सनदनाद्यैर्मुनिभिर्यथोक्त श्रीनारदायाखिलतत्वसाक्षिणे ॥" इत्यादि। और लोग तो भक्तिसाधनार्थ ही प्रगट हुए है क्योकि यद्यपि उन्होने अपना शिष्यरूपी वश तो स्थापन किया, पर पिता की आज्ञा भी न मानकर मोह करनेवाली और सृष्टि न की, यथा "ते नैच्छन्मोक्षधर्माणो वासुदेवपरायणा" इत्यादि। वरच भक्तिस्थापनार्थ यह भगवान् ही का अवतार है "तप्तुन्तपो विविधलोकसिसृक्षया मे वादौ सनात स्वतपसः स चतु सनोऽभूत्। प्राक्कल्पसंप्लवविनष्टमिहात्मतत्व सम्यग् जगाद मुनयो यदचक्षतात्मन् ॥" इति।

व्यास—व्यासजी ने तो मुक्तकठ होकर कहा ही है कि "आलोड्य सर्वशास्त्राणि विचार्य च पुनः पुनः। इदमेकं सुनिष्पन्न ध्येयो नारायणः सदा ॥" इत्यादि। जो कहो कि अनेक पुराणो मे व्यास जी ने अनेक मत और उपासना कही है तो उसमे भक्ति की विशेषता कहाँ आई तो यह शका मत करना क्योकि व्यास जी की तो दृढ प्रतिज्ञा है "वेदे रामायणे चैव पुराणे भारते तथा। आदावन्ते च मध्ये च हरिः सर्वत्र गीयते ॥" इत्यादि इन को भक्ति मिलने का विशेष वर्णन भक्तवशपरपरा मे मिलेगा।

शुकदेवजी—शुकदेवजी ने राजा से पहिले ही सिद्धात स्वरूप कहा है "देहापत्यकलत्रादिष्वात्मसैन्येष्वसत्स्वपि। तेषा प्रमत्तो निधनं पश्यन्नपि न पश्यति ॥ तस्माद्भारत सर्वात्मा भगवान्हरिरीश्वरः। श्रोतव्यः कीर्तितव्यश्च स्मर्तव्यश्चेच्छताभय ॥ एतावान् साख्ययोगाभ्यां स्वधर्मपरिनिष्ठया। जन्मलाभः परः पुसामंते नारायणस्मृतिः ॥ प्रायेण मुनयो राजन् निवृत्ता विधिनिषेधतः। नैर्गुण्यस्था रमन्तेस्म गुणानुक-

थने हरे ।। इत्यादि"। क्यो न कहे ? वेद जिनको मुक्त लिखता है "शुको मुक्तो वामदेवो वा" और भगवान की माया जिनको कभी व्यापी ही नहीं, जिनका देख कर स्त्रियो ने भी लज्जा न की, जिन्होने पिता को वृक्षो मे से उत्तर दिया और प्रेम मार्ग का सिद्धात स्वरूप श्रीमद्भागवत प्रगट करके राजा परीक्षित को मोक्ष दिया तथा सप्ताह मे भी बीच बीच मे जब लीला स्मरण आती थी तब बेसुध हो जाते थे, उन के प्रेम का निरूपण यहाँ क्या हो सकता है।

शाण्डिल्य—शाण्डिल्य जी ने तो स्वतत्र भक्तिशास्त्र ही रचा है, जिसमे ज्ञान, योगादि से भक्तिसाधन ही उत्तम कहा है।

गर्ग—गर्गाचार्य अपनी गर्गसहिता मे अनेक प्रकार के भक्ति के रहस्य तथा यादव आदि के नष्ट होने पर जब भगवत्तत्व का जानने वाला कोई नहीं रहा तब वज्रनाभ ने अनेक प्रकार का रहस्य, जो व्रज मे तथा उद्धव नारदादिको के मुख से सुना था, कहकर फिर से भक्तिमार्ग का स्थापन किया। इनको वात्सल्य और दास्य दोनो भक्ति सिद्ध थी।

विष्णु—लोक मे जिनका नाम विष्णुस्वामी प्रसिद्ध है। विशेष वर्णन परपरा मे देखो।

कौण्डिन्य—कौण्डिन्य के विषय में हम इतना ही जानते है कि हमारे आचार्य ने अपनी गुरुपरपरा मे श्रीगोपीजन के समान इनको भी माना है यथा "कौण्डिन्यो गोपिका: प्रोक्ता गुरव:" इति और जिनको तन्मयतासक्ति थी। जिनको इस आसक्ति से वृक्षो मे भी सर्वत्र श्रीअनत का प्रत्यक्ष दर्शन हुआ था।

शेष—शेषजी ने केवल दास्य भक्ति की शिक्षा के हेतु श्री लक्ष्मण जी का स्वरूप लेकर ससार को दिखाया कि दास्य इसका नाम है और इस रीति करना होता है और आप ने भी पचवटी मे अपने सब गुप्त सिद्धात उपदेश किए तथा श्री लक्ष्मी जी और गरुड़ जी से नारायणीय सिद्धात पाकर उन्होने चित्रकेतु इत्यादि को उपदेश किया, जो मत अब तक रामानुजीय नाम से प्रसिद्ध है और जिसमे यामुन, शठकोप इत्यादि महात्मा और अग्रस्वामी इत्यादि प्रेमी हुए।

उद्धव—उद्धव जी का क्या पूछना है जिनको प्रेमपात्र और प्रेमी अर्थात् श्रीभगवान तथा श्री गोपीजन ने आप अपने मुख मे प्रेममार्ग का उपदेश किया है, उनकी क्या बात है। ये वही उद्धव जी हैं जिनको छोटेपन से खेलही मे भगवत्पूजा का व्यसन था और जिनको भगवान ने अपना तत्व ससार मे स्थापन करने के हेतु ब्रह्मशाप उल्लंघन करके पृथ्वी मे छोडा, उन का क्या पूछना है।

आरुणि—इनही का नामातर निम्बार्क है और ये सनकादिकों के मत के प्रवर्तक हैं और इन के दश श्लोक जो मिलते हैं उनमें युगल स्वरूप की भक्ति का सिद्धात किया है।

व्यूहागिन ब्रह्मपर वरेण्य ध्यायेम कृष्ण कमलेक्षण हरिं। अगेतु वामे वृषभानुजा मुदा विराजमानामनुरूपसौभगा ॥ सखीसहस्त्रैः परिसेविता सदा स्मरेम देवीं सकलेष्टकामदाम्। ये बडे प्राचीन है क्योंकि श्रीमद्भागवत मे वेदस्तुति में इनका मत कहा है और जहाँ परीक्षित राजा से मिलने के हेतु ऋषिगण आये हैं वहाँ भी इनका नाम है यथा “राजर्षिवर्या अरुणादयश्च”। ये श्री स्वामिनी जी के ककण के पूर्णावतार हैं अतएव इनको लोग सुदर्शनतत्व कहते हैं। किसी समय इन्होने यतियो का निमत्रण किया था। उनके आने मे विलब हुआ और जब भोजन करने बैठे तब साँझ हो गई, इस से उन यतियो ने कहा कि अब हम नहीं खायेंगे, तब इन्होने कहा कि आप लोग खाइये अभी सूर्य हैं और आप नीम पर चढकर सूर्य बन के दर्शन दिया, अतएव निम्बार्क नाम पडा। इन के सेव्य श्री स्वरूप श्रीगोपीजनवल्लभजी और शालग्राम सर्वेश्वर जी अभी विद्यमान हैं तथा श्रीनिवासाचार्य, पुरुषोत्तमाचार्य इत्यादि धुरधर पडित और हरिवश जी, व्यासजी, स्वामी हरिदास जी इत्यादि प्रेमी इन्हीं के संप्रदाय मे हुए हैं।

बलि—इनको सर्वस्वात्मनिवेदन भक्ति सिद्ध थी। अपने पितामह साक्षात् प्रह्लाद जी से उपदेष्टा और भगवान् से पात्र पावे तो फिर इनका क्या पूछना है। कहते हैं कि यतीन्द्र, बलि, अबरीष और विश्वक्सेन नाम के किसी काल मे प्राचीन चार वैष्णव संप्रदाय थे, परतु अब सब लुप्त हुए।

हनुमान्—श्रीहनुमान् जी की दास्यभक्ति का वर्णन ऊपर दास्य-भक्तिनिरूपण मे कह आये हैं और क्या कहैं, केवल भगवान की कथा-श्रवण के हेतु जिनका जीवधारण है, उनके प्रेम का माहात्म्य कौन कह सकता है ? क्योकि उन्होने भगवान से यही वर मॉगा है कि "यावत्तव कथा लोके विचरिष्यति पावनी। तावत्स्थास्यामि मेदिन्या तवाज्ञामनुपालयन्।" और जिनका मत अद्यापि श्रीभगवान के मुखारविद से सुने हुए विष्णुतत्व के अनुसार 'मध्वमत" नाम से प्रसिद्ध है।

विभीषण—इन्होने कुसगति मे रह कर भी भगवद्भक्ति लोगो को सिखाई, वरञ्च "सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते। अभय सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद्व्रत मम॥" यह जगदुपकारिणी प्रतिज्ञा इन्हीं के हेतु हुई है।

८४ ॐ य इद नारदप्रोक्त शिवानुशासन विश्वसति श्रद्धधते स भक्तिमान् भवति स प्रेष्ठ लभते स प्रेष्ठ लभते इति।

इस नारद जी के कहे हुए शिवानुशासन पर जो विश्वास और श्रद्धा करता है वह भक्तिमान् होता है, वह प्यारे को पाता है, वह प्यारे को पाता है॥ ८४॥

उपदेश करके उसका फल कहते हैं। विशेष करके प्रेष्ठ शब्द से यह दिखाया कि भगवान इत्यादि को ब्रह्म, विष्णु, नारायण, भगवान इत्यादि भावो से तो और लोग भी पावेगे परतु प्रियतम भाव से वही पावेगा जो इस प्रेमसूत्र पर विश्वास करेगा और प्रेममार्ग पर चलेगा।

इति नारदीये भक्तिशास्त्रे दशमोऽनुवाकः॥

—::※::—

यह श्रीनारद जी का कहा हुआ भक्तिशास्त्र दश अनुवाक में "तदीयसर्वस्व" नामक तदीयनामाकित अनन्यवीर वैष्णव हरिश्चन्द्र कृत भाषाभाष्यसहित समाप्त हुआ॥

॥ इति ॥

श्रीयुगलसर्वस्व

सं० १९३२

श्रीयुगलसर्वस्व

(श्री नित्यलीला के निकुंज सखा सखी सहचरी
सेवक परिवार आदि का नाम रूप वर्ण
स्वभावादि वर्णन)

श्री भागवत, उसकी टीका, पद्मपुराण, नारदपुराण, कृष्ण जन्मखंड,
बाराहपुराण, आदिपुराण, रहस्यपुराण, ब्रह्मांडपुराण, नारद-
पंचरात्र, गौतमीतंत्र, रासोल्लासतंत्र, वृदावनपटल, लघु-
राधा-वृहद्राधातंत्र, हयग्रीव-पचरात्र तथा श्रीहरि-
रायजी, श्रीगोकुलनाथजी की भावना,
श्रीद्वारकेशजी, श्रीव्रजाधीशजी, श्री
गोपिकेशजी की रहस्य भावना
और उज्ज्वलनीलमणि तथा
गणोद्देशदीपिका आदिक
ग्रथो से सग्रह किया।

—:※:—

समर्पण

हे अंतरंगी जन !

आज तक जो पुस्तकें प्रकाशित हुईं वह दूसरे को समर्पित हुईं थीं परंतु यह युगुलसर्वस्व तुम को समर्पित है, माथे चढ़ा कर अंगीकार करो। इस को अनधिकारी के हाथ खबरदार खबरदार मत देना और इस से परमानद लाभ कर के मेरा परिश्रम सफल करना।

भाद्रपद कृष्णा ६ सं० १९३३
श्रीनंदमहोत्सव

आप लोगों के चरणरज
का वांछक
हरिश्चंद्र

युगल-सर्वस्व

दोहा

भरित नेह नव नीर नित, बरसत सुरस अथोर।
जयति अपूरब घन कोऊ, लखि नाचत मन मोर ॥ १ ॥
तन्नमामि निज परम गुरु, श्रीवल्लभ द्विज-भूप।
जाकी कृपा अपार लहि, उबर्‌यौ हौं भवकूप ॥ २ ॥
श्री बृंदावन राज है, जुगल केलि रस धाम।
तहँ के परिकर आदि को, बरनत या थल नाम ॥ ३ ॥
बस, सखी, परिचारिका, पशु पच्छी नर बृंद।
इन सब को बरनन करत, निज अनुभव हरिचंद ॥ ४ ॥
प्रेमबारि परजन्य जो, जिन सम धन्य न अन्य।
सोइ श्याम परजन्य के, दादा श्री परजन्य ॥ ५ ॥
दादी नाम बरीयसी, नाना सुमुख बखान।
नानी देवी पाटला, जासी और न आन ॥ ६ ॥
बड़ी मात श्री रोहनी, पिता नंद सरदार।
माता जसुदाजू अहैं, जा हित यह अवतार ॥ ७ ॥

बड़ काका उपनंदजू, अरु अभिनंद प्रनाम।
नदन अरु संनंद ये, काका छोटे जान ॥ ८ ॥
तुंगा, अतुला, पीवरी, कुबला पुनि रसधाम।
उलटे क्रम सो जानिये, काकिन के ये नाम ॥ ९ ॥
मामा जसबरधन, जसोधर जसदेव सुदेव।
मौसी बिदित जसस्विनी, मौसा मल्ल सुदेव ॥ १० ॥

तडुल पुरट कुबेर ये, सगरे ददा समान।
गोष्ठ कलोल करुण्ड ये, मातामह सम जान ॥ ११ ॥
शीला भेरी अरु शिखा, पितामही सी होय।
पूरनमासी भगवती, सिद्ध बिधाइनि सोय ॥ १२ ॥
जटिला भेला घरघरा, सुखरा भोरा जान।
करवालिका करालिका, मातामही समान ॥ १३ ॥
मंगल पिंगल रंगपिठ, पट्टिस माटर पिंग।
नेह करत पितु से सबै, संगर संकर भृंग ॥ १४ ॥

तरलाछिनी तरालिका, शुभदा कुशाला नारि।
मालिकांगदा बत्सला, ताली आदि विचारि ॥ १५ ॥
और हु वृद्धा मेदुरा, भरी नेह चित चाय।
हरि पै बत्सलता करत, जैसे जसुमति माय ॥ १६ ॥
परम नेहवारी अहै, नाम धनिष्ठा धाय।
तथा तिलिम्बा अम्बिका, ताको जुगल सहाय ॥ १७ ॥
वेदगर्भ भागुरि महायज्वा, द्विज निरधारि।
सुलभा गौतमि भारगी, चंडिलादि द्विज नारि ॥ १८ ॥
भाई श्री बलदेव से, भक्तन के अवलंब।
छनमहँ जिन हति लंब किय, खल कुल लब प्रलंब ॥ १९ ॥

भाबी श्रीमति रेवती, जाको हरि पै चाव।
सख्य तथा बात्सल्य मिलि, जाको अनुपम भाव ॥ २० ॥
मंडल दंडी कुंडली, भद्रकृष्ण से भ्रात।
बहिन नंदिरा मंदिरा, नंदी नंदा सात ॥ २१ ॥
धाय अंबिका को सुअन, बिजय नाम को जौन।
हरि तन रच्छत सर्वदा असि लै सँग रहि तौन ॥ २२ ॥
दिव्य सक्ति कुलबीर पुनि, महाभीम रनभीम।
रणधिर रणथिर सरप्रभ, सूर सभा बलसीम ॥ २३ ॥
इन आदिक हरि जेठ जे, गोप - बाल - सरदार।
पितु आयसु नित सग एहि, रच्छत सदा कुमार ॥ २४ ॥
बीरभद्र भद्रांग भट, गोभट यच्च सुरेस।
भद्रमंडली भद्रबर धन से सुहृद हमेस ॥ २५ ॥

गद्य

विशाल, वृषभ, ओजस्वी, देवप्रस्थ, बरूथप, मिलिद, कुसुमापीड, मणिबध, करधम, मरद, चदन, कुद, कलिद और कुलिक इत्यादि कनिष्ठ सखा हैं, ये सेवा करैं हैं ॥ २६ ॥

दामा, सुदामा, किंकिणी, तोककृष्ण, अश, भद्रसेन, बिलासी, पुडरीक, विटकाच्च, कलबिका, प्रियकर और श्री दाम आदि समान सखा हैं, तिनमे श्रीदामा मुख्य है, पीठमर्द है बड़ो धृष्ट है ॥ २७ ॥

सब सखा की सेना को भद्रमेन सेनापति है, अरु तोककृष्ण तो श्रीकृष्ण की दूसरी प्रतिमूर्ति है, और यह श्री कृष्ण को बहुत ही प्यारो है ॥ २८ ॥

सुबल, अर्जुन, गंधर्व, बसत, उज्वल, कोकिल, सनंदन और विदग्द आदि प्रिय नर्मसखा हैं, इन सो कोई रहस्य छिप्यौ नहीं है ॥ २९ ॥

मधुमगल, पुष्पांक और हस आदि विदूषक हैं और कडार, भारती, गधवध और वेध आदि श्रीकृष्ण के विट हैं ॥ ३० ॥

भृगुर, भृगार, सधिक और ग्रहल आदि चेटक हैं, तथा रक्तक, पत्रक, पत्री, मधुकठ मधुव्रत, सालिक,ताडिक, माली, मालू और मालाधर आदि दास हैं ॥ ३१ ॥

पल्लव, मगल और फुल्ल कोमल और कपिल आदि छोटे बालक नाचि नाचिकै विचित्र चेष्टा करिकै प्रभु को हँसावैं हैं ॥ ३२ ॥

सुबिलास, विशालाक्ष, रसाक, रसशाली और जबुक इत्यादि पान खवाइबेवारे हैं ॥ ३३ ॥

पयोद और बारिद नाम के पानी पियावे को काम करैं, तथा सारग बकुल आदि वस्त्र धरावै हैं ॥ ३४ ॥

प्रेमकद नाम को अतर लगावै और मधुकदला सैरंध्री केसादिक सँवारै हैं ॥ ३५ ॥

मकरंदादिक सदा शृगार करै हैं, तथा सुमना, कुसुमोल्लास, पुष्पहासहर इत्यादि चदन और मालादिक को काम करै हैं ॥ ३६ ॥

दक्ष, सुबध, कर्पूर और सुगधकुसुम आदि नाई है, केश को काम करैं, तेल लगावैं, पॉव दाबै और दर्पण दिखावैं हैं ॥ ३७ ॥

स्वच्छ, शीतल और प्रगुण आदि धन सबधी काम करैं हैं, अरु कमल, विमल आदि पीढा, खडाऊँ, छाता लिये साथ चलै हैं ॥ ३८ ॥

धनिष्ठा, चदनकला, गुणमाला, तडित्प्रभा, भरणी, इंदुप्रभा, शोभा और रभा इत्यादि दासी है, और तिनमें धनिष्ठा मुख्य धाय मातृतुल्या है ॥ ३९ ॥

कुरगी, भृगारी, सुलबा और लबिका इत्यादि दासी दधिमथन, मार्जन तथा और घर के काम करै हैं ॥ ४० ॥

विशारद, तुग, नीतिसार, मनोरम और बावदूक इत्यादि दूत निकुंज विहार के उपयोगी हैं ॥ ४१ ॥

दोहा ।

वृंदा, मेला, मुरलिका, वृंदारिका सुजान ।
दूती सबै निकुंज की, वृंदा तासु प्रधान ॥ ४२ ॥
दूजी बीरा नाम की, दूती परम प्रसिद्ध ।
जासों नहिं कोऊ बची, करत सबै जो सिद्ध ॥ ४३ ॥

सोभन दीपक नाम के, द्वै मसालची खास।
मधुरराव सुविचित्ररव, ये जुग बदी पास ॥ ४४ ॥
चंद्रहास, सिव, चंद्रमुख, नचवैया ये तीन।
सुखद, सुधाकर बहुरि, सारंग मृदंग प्रबीन ॥ ४५ ॥
सुधाकंठ, कलकंठ इन, आदि गान रस लीन।
सबै कलारत अति सुघर, गाय बजावै बीन ॥ ४६ ॥
सारँग, रसद, विलास ये, नाटक नट अभिराम।
सब अभिनय जानहि निपुन, करहि सदा नट काम ॥ ४७ ॥
दरजी रौचिक नाम को, गणअंगण सुसुनार।
चित्र विचित्र चितेर दोउ, कमठ पवन कुहाँर ॥ ४८ ॥
बर्द्धमान अरु बर्द्धको, द्वै बढई सुखरास।
पोटी, मन्थन, दाम, अरु, कंठार आदि फरास ॥ ४९ ॥
कुमुल, कुंड, कंडोल अरु, कारॅड करॅड अनेक।
सेवक सेना मे रहत, धरे दासपन टेक ॥ ५० ॥
हंसी, बंसी, पिंगला, गंगा, रंगा नाम।
प्रिया, पिशंगी, धूमला, मणि, सारनी ललाम ॥ ५१ ॥
इन आदिक जे नैचिकी, तिन सों हरि को हेत।
तिन मे धवली मुख्य अति, निज कर जेहि तृन देत ॥ ५२ ॥
वलीवर्द्द हैं अति भले, उत्पलगंध, पिशंग।
कपि सुन्दर दधिलोल है, नाम सुरंग कुरंग ॥ ५३ ॥
स्वान व्याघ्र भ्रमरक दोऊ, विदित कलस्वन हंस।
शिखी तांडविक शुक जुगल, बोलत परम प्रशंस ॥ ५४ ॥
नित्य बाग वृंदाविपिन, जहॉं जुगल रस केलि।
करहि नित्य, को लखि सकै, बाहु बाहु पर मेलि ॥ ५५ ॥

क्रीडा गिरि **गिरिराज** है, **नीलमंडपक** घाट।
गुफा बनी **मणिकन्दली, केलिकुंज** रस ठाट ॥ ५६ ॥

गद्य

केलिसरोवर को नाम मानसी गगा है और वाके मुख्य घाट को नाम पारग है और वामै सुबिलास नाम की नाव है ॥ ५७ ॥

नंदीश्वर नामा पर्वत पै इदिरालय नामा सुदर मदिर है, जहाँ अनेक प्रकार को सगमरमर पत्थर की आमोदवर्द्धन नाम्नी सुगध सो भरी बैठक है। जाके आगे पावन नामक सुदर कुड है, जापै मदार नामक मणि को फरस है और कुज और अकामनामक महातीर्थ है, जिनके चित्त मे काम की वासना को लेश है वे या तीर्थ को दर्शन नहीं पावै है। और वहाँ की पृथ्वी को नाम अनगरग है और श्रीजमुना जी के घाट को नाम खेलातीर्थ है और पुलिन को नाम लीलापुलिन है जहाँ कदबराज नामक बडो कदब को वृक्ष और भाडीरवट नामक बड़ को वृक्ष है, जहाँ नित्य जुगल स्वरूप को बिहार है ॥ ५८ ॥

आपके दर्पन को नाम शरदिन्दु है और पखा को नाम मधुमारुत है और स्मेर नाम को नित्य लीलाकमल श्री हस्त मे धारन करै हैं और गेंदा को नाम चित्रकोरक है ॥ ५९ ॥

उज्वल नाम आप को बाण है, बिलासकामुक नाम धनुष और मणिबद्ध नाम वाकी डोरी है और अनेक रत्न सो जड़ी बड़े सुंदर मूठ की तुष्टिदा नाम की छुरी है ॥ ६० ॥

शृग को नाम मजुघोष और श्रीराधाचित्ताहारिणी, महानदा तथा भुवनमोहिनी ये तीन बसी हैं, और मुरली को नाम सरला है, और मदनझकृत, बधुर और षड्रध्र ये तीन बेणु है, और काकली को नाम मूकितपिका है, जाको श्रवन करि कै कोइल मूक होइ जाय हैं, और गौरी और गूजरी टोडी ये दोऊ राग अत्यत प्यारे हैं। और बीणा को नाम नादवरागिणी है ॥ ६१ ॥

वेत्र को नाम मंडल है और लट्ठ को नाम पशुवशीकर है और दोहिनी को नाम अमृतदोहिनी है ॥ ६२ ॥

श्री मातृचरण ने नवरत्न की भुजा पै रक्षा बाँधी है और रगद नाम के बाजू और चकन नाम के कंकण और रत्नमुखी नाम की अंगूठी है और निगमशोभन नाम को पीतांबर है, और कलझंकार नाम की किंकिनी है और नूपुरन को नाम हंसगंजन है, जाके शब्द सुनतही श्री व्रजदेविन के चित्त चलायमान होत हैं ॥ ६३ ॥

हार को नाम तारमणि है और माला को नाम तडित्प्रभा है और कंठा को नाम कौस्तुभ है, जाके नीचे भुजगमणि को पदक है। रति और राग के अधिदेवता मकराकृत कुंडल हैं और रत्नपार नाम को मुकुट है और अमरडामर नाम को सीसफूल है और मोर के चंद्रक को नवरत्नविडंबक नाम है और गुंजा की माला को नाम रागवल्ली और तिलक को नाम दृष्टिमोहन है और पल्लव, पत्र पुष्प और मोर के पच्छ तथा कमल इत्यादि सों गुथी श्री चरणारविंद तक बनमाला शोभित है और जो पचरंगे फूलन सों गुथी कटि के नीचे तक सुंदर माला है वाको नाम बैजयंती है ॥ ६४ ॥

श्री युगलसर्वस्व को प्रथम प्रकरण समाप्त भयो।

अथ युगल सर्वस्व को दूसरी प्रकरण लिखियत है।

सोरठा—मगल माधव नाम, मगल ब्रज वृंदा विपिन।
मगल राधा वाम, मगल सब ब्रज गोपिका॥

अथ श्री पूर्ण पुरुषोत्तम को मगल समय कहत हैं। श्रीशुभ सम्वति ईश्वरे नाम्नि द्वापरार्द्धे ८६३८७४ शेष १२५ श्रीसूर्ये दक्षिणायने वर्षा-ऋतौ भाद्रपदे मासि कृष्णे पक्षे अष्टम्यां घटी ५६ पल ४५ बुधवासरे कृत्तिकानक्षत्रे घटी २८ पल० हर्षणयोगे घटी ४१ पल ३७ कौलव करणे इष्टं ४६ घटी १४ पल एतत्समये चन्द्रवशातःपाति वैश्यवशावतस गुरुगोब्राह्मणसेवापरायण श्री मत्पर्जन्यात्मजश्रीमन्नन्दराजगृहे श्रीयशोदा-कुक्षौ पुत्ररत्नमजीजनत्।

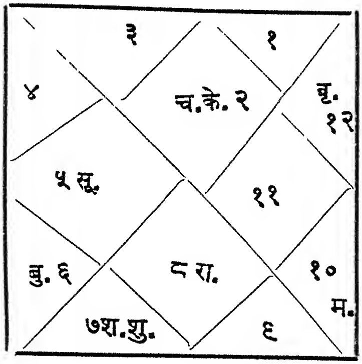

१६५५८७७८७५ सृष्टिमारंभतो गताब्दाः।
१६७२६४३८७५ वाराहकल्पप्रवेशप्रारंभगताब्दाः॥

वंशवृक्ष

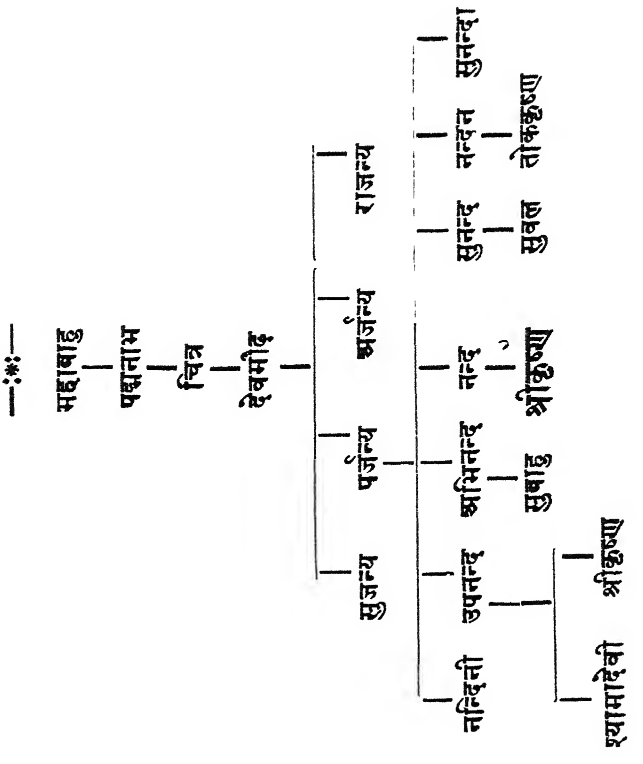
महाबाहु
पद्मनाभ
चित्र
देवमीढ़
सुजन्य
पर्जन्य
अर्जन्य
राजन्य
नन्दिनी
उपनन्द
अभिनन्द
नन्द
सुनन्द
नन्दन
सुनन्दा
श्यामादेवी
श्रीकृष्ण
सुबाहु
श्रीकृष्ण
सुबल
तोककृष्ण

अथ उपनंद जी को वर्णन। उपनद जी श्री नदराय जी के सब भाइन मे बड़े हैं। गॉव मे इन को बड़ो मान है। गॉव मे जो कुछ काहू को धर्म वा माइत वा औषधी पूछनी होय तो इन सो आय के पूछे। इन्हें भगवद्वात्सल्य सिद्ध है और व्रज के सब गॉव की देव पितर की रीति जो कोई करै सो इन सो पूछि कै करै। केशी दैत्य के भय सो वृन्दावन छोड़ि कै ये महा बन मे सब भाइन के साथ वास करै हैं। इनकी स्त्री को नाम तुगी है। इन को वर्ण गौर, दाढ़ी श्वेत और नाभि तक लबी है और हरे रग को वस्त्र पहिने हैं और नव लाख गऊ और लाखन हाथी घोड़े इन के पास हैं।

अथ अभिनंद जी को वर्णन। इन को वर्ण गौर है, शरीर पुष्ट और बलवान, केश सब श्वेत हो गये हैं, पर दॉत नहीं टूटे, गालन पै सुदर गलमुच्छा है और आठ लाख गऊ हैं औ लाल वस्त्र पहिने हैं।

अथ नंद जी को वर्णन। श्री नदराय जी को वर्ण गौर है, केश कछु श्याम और श्वेत मिलुवॉ हैं। तोद बड़ी है, छाती ऊँची है, वस्त्र नीलो पहिरे हैं, इनकी स्त्री को नाम श्री यशोदा है, जिन को अग कछु स्थूल है और रग सॉवरो है। फूलन सो बेनी सदा गूँथी रहै और वस्त्र पीरो पहनै। और इन को नैहर को नाम देवकी है। श्री नदराय जी के ७२००००००० बहत्तर करोड गऊ हैं और भैंस बकरी बहुत हैं। भाइन के हिस्सा मे श्रीनदराय जी को नव लाख गऊ मिली है सो अब वे गऊ मोहना नामक ग्वारिआन के सरदार के पास हैं। उपनद जी और अभिनद जी ने आप राज्य नहीं लियो तासो नदराय जी व्रज के राजा भये। इनके कुलदेवता नारायण हैं, इन के कुल को वेद साम और शाखा कौथुमी है, पर जबसो व्रज के राजा भये तब सो यजुर्वेद और माध्यदिनी शाखा भई। इनके कुलपुरोहित शाण्डिल्य हैं। इनके राज्य मे तीन प्रकार के गोप बसे हैं, प्रथम वे जो व्यापार और गोरक्षण करै हैं, दूसरे वे जो गाय भैंस रखैं और खेती करै हैं, और तीसरे वे जो बकरी इत्यादि छोटे जीव पालैं। श्री नंद रायजी को मुख्य मंदिर उत्तराभिमुख है और दरवाजे के बाहर दोऊ ओर बड़े सिंह बने हैं, भीतर बड़ो चौक है वहॉ एक ऊँचो

चौतरा है जा पै साँझ को सब व्रज के लोग आयकै बैठै हैं, ताके पीछे जो दरवज्जा है वाके दोऊ ओर बडे बडे हाथी बने हैं और वाहू के भीतर दरवज्जा जो है वाके दोऊ ओर चद्रमा और सूर्य बने हैं। वाके भीतरी अनेक चौक है, जिन मे सर्वतोभद्र, कमलचौक और मणिचौक ये तीन मुख्य चौक हैं, ताके आगे श्री व्रजरानीको मदिर है और भीतर बाहर ताई अनेक दर दालान और मंदिर हैं और इनके बीच मे कहूँ कहूँ बड़े बडे वृक्ष लगे हैं और कहीं तुलसी को थावरो है। इनकी या पार की राजथानी को नाम गोकुल और वा पार की राजधानी को नाम नदीश्वर है। गोकुल के देवता चितामणि माधव और मथुरानाथ जी हैं और नदगाँव के ग्रामदेवता नदीश्वर शिव हैं, और शैलासन और पाँडु नाम की दो अथाई हैं।

अथ सुनंद जी को वर्णन। सुनद जी को शरीर बड़ो ही पुष्ट है और अवस्थाहू वृद्ध नहीं भई है, केश सब श्याम हैं और व्रज की सेना को सब प्रबध करै है और सृग और तरवार सदा हाथ मे लिये रहै, बस्त्र पीरे पहरै है। इनकी स्त्री को नाम कुबला और गऊ नौ लाख हैं।

अथ नंदन को वर्णन। ये सबसो छोटे हैं, रग गेहुआँ और केश बड़े लबे लबे हैं। वस्त्र सफेद पहिनै और स्त्री को नाम अतुला है, जाको रग गौर है और श्याम रग को वस्त्र पहिरैं। इन की निज की गऊ सात लाख हैं।

श्री नद जी की माता को नाम बरीयसी है। इन को अग नाटो और केश सब श्वेत होय गये और वस्त्र हरे हैं।

अर्जन्य की स्त्री को नाम नटी और राजन्यकी स्त्री को सुरा है। नदराय जी के फूफा को नाम गुरुवीर है और ये वृषभानु जी के मामा लगै है। और नद राय जी के दोऊ बहिन के पतिन को नाम तीन और काम है।

उपनंद जी के पुत्र को नाम कृष्ण (कोऊ कोऊ को मत है कि उपनद जी को पुत्र नहीं भयो सो जब नद राय जी को पुत्र

भयो तब उपनद जी के गोद मे दै दियो, तामों भगवान को नाम नद जी उपनद जी दोउन को वशपरपरा मे आवै है) और इनकी एक बेटी या का नाम कामा और प्रसिद्ध नाम शामदेवी है। जाको रग सॉवरो है और रूप मे सब कृष्ण को उन्हार है।

अभिनद जी के पुत्र को नाम सुबाहु है, या को रग गोरो और बस्त्र हरो है। यह श्रीकृष्ण के साथ रक्षा के हेतु सदा लकुट लिये रहै, क्योंकि श्रीकृष्ण को बड़ो भाई है तामों याके सख्य में वात्सल्य मिली है।

सुनद जी के पुत्र को नाम सुबल है, याको रग लाल और बस्त्र कारो है और श्रीकृष्ण को बडो प्यारो मित्र है, क्योंकि याकी और भगवान की अवस्था एक ही है।

नदन जू के पुत्र को नाम तोक कृष्ण है (कोऊ को मत है कि या को रग श्याम और वस्त्र पीत है। याके पुकारबे को नाम तोक है और या को चलन बोलन सब श्रीकृष्ण की सी है और यह श्रीकृष्ण को अत्यत प्यारो है क्योंकि आप को नेम है कि जो थोडी हू वस्तु अरोगे तो अपने हाथ सो पहिलो कवर या के मुख मे देत है।

अब जन्म समय को भाव लिखत हैं। तहॉ श्री पूर्ण पुरुषोत्तम ने विश्वावसु नाम सवत् मे जन्म लियो है ताको भाव यह है—जा विश्वाबसु गधर्वन का राजा है ताके सवत मे आपने जन्म लियो तासो यह जतायो कि हम गानविद्या की प्रवृत्ति करेंगे। और दक्षिणायन मे जन्म लियो ताको भाव यह है कि आप अनेक नायकागण को दक्षिण होयेंगे और भक्तजन सो हू दक्षिण रहेंगे, और यज्ञअवतार मे स्त्री को नाम हू दक्षिणा है तासूं दक्षिणअयन मे जन्म लियो। और वर्षा ऋतु मे जन्म लियो ताको भाव यह है कि वर्षा ऋतु सब जगत को जीवन है और सब ऋतुन की अपेक्षा आनददायक है याही सो सब अन्न आदि उत्पन्न होय है तासो यह जनायो कि हम जगत् के हेतु है और सब को आनद देंगे। अरु सब महीना छोड़िकै भाद्रपद मे जन्म लियो ताको यह हेतु है कि भद्र अर्थात् कल्याण वही भाद्र वाको पद नाम घर अर्थात् कल्याण को घर तासो आप ने सब मास छोड़िकै भाद्रपद

ही मे जन्म लियो। अब वर्षा ऋतु के २० दिन का एक ऐसे तीन पाद है तामै मध्य पाद मे जन्म लिया। ताको भाव यह कि प्रथम पाद मे उष्णता विशेष है और तृतीय मे शीतता तासो मध्य के पाद मे जन्म लियो, और ब्रह्मा विष्णु महेश्वर तीन देवता है तामे मध्म मे विष्णु हैं ताको हेत यह जो प्रधान मध्य मे रहे है तासो मध्य पाद मे जन्म लियो सो जाननो। अब कृष्ण पक्ष मे जन्म लियो ताको कारण यह है कि आपको अपने नाम को पक्ष है तामो यह जनायो कि हम अपनो पक्ष थापेगे और अष्टमी तिथि का कारण यह है कि अष्टमी शिवतिथि है, कल्याण रूप है, यद्वा श्रीमहादेव जी परम वैष्णव है तिनकी तिथि है, यद्वा पद्रहो तिथि के मध्य मे अष्टमी है, सो प्रधान मध्य मे रहै है तासो, यद्वा अष्टमी जयतिथि है सो हम असुरन को जय करेगे यह जनाया। वा यह श्री बसुदेव जी की जन्मतिथि है। और रात को जन्म लियो ताको हेत यह है कि हम चंद्रवशी है सो चद्रमा रात्रि को राजा है तासो हम को दिन सो प्रयोजन नहीं। और अर्द्धरात्र को जन्म लियो ताको हेत यह है कि वा समय मे कोई कार्य नहीं कियो जाय है, स्वस्थ बेला है, तासो जा समय मेरे भक्त स्वस्थ रहै वा समय जन्म लियो चाहिए। और चद्रमा के उदय होत जन्म लियो ताको हेत यह है कि जैसे चद्रमा जगत को आह्लाद करै है तैसी आह्लाद हम करेगे यह जनायो, यद्वा हम चद्रवशी हैं सो अपने वशस्थ के उदय सग अपनो उदय कियो। और भगवान के जन्म समय आकाश मे मेघ छाये याको हेत यह है जैसो मेघ सबको आनद देत है तैसो हम आनद देगे, यद्वा मेघ प्रसन्न भये कि हमारा नाम घनश्याम श्रीठाकुर जी को होयगो, हमारी उपमा ब्रह्म को दी जायगी तासो प्रसन्न भये, यद्वा जल को नाम जीवन है सो जीवन जगत को हम करेगे यह जनायो। और रोहिणी नक्षत्र पर जन्म लियो ताको भाव यह कि जैसे चद्रमा को अनेक नक्षत्र हैं तैसेही यद्यपि आप को अनेक सखी सेवन करै तथापि मुख्य श्री प्रियाजी ही है। और रोहिणी मे जन्म ग्रहण करके आपने श्री बलदेव जी से सहोदरता सूचन कराई। बुधवार मे आपने जन्म लियो ताको हेत यह है कि सब ग्रहन मे बुध अत्यत सुदर है तासों आप अलौकिक सौंदर्य प्रगट करेगे और बुध आप के बश को पूज्य हू

है तासो वश को पक्षपात जनायो। वा "विष्णु चद्रसुते" यासो बुध के दिन आप अवतीर्ण भए। काहू पुराण को मत सोमवार के हूँ जन्म-दिन मानवे को है सो वाहू मे पूर्वोक्त भाव जानने। इत्यादि अनेक भाव हैं कहाँ ताईं लिखिये।

अथ चरण चिन्ह वर्णन

छप्पै

स्वस्तिक स्यदन सख सक्ति सिहासन सुदर।
अकुस ऊरधरेख अब्ज अठकोन अमलतर॥
बाजी बारन बेनु बारिचर बज्र बिमलबर।
कुत कुमुद कलधौन कुभ कोदड कलाधर॥
असि गदा छत्र नवकोन जव तिल त्रिकोन तरु तारग्रह।
हरिचरन चिन्ह बत्तिस * लखे अग्निकुड अहि सैल सह॥ १॥
छत्र चक्र ध्वज लता पुष्प ककन अबुज पुनि।
अकुस ऊरधरेख अर्धससि जव बाएँ गुनि॥
पास गदा रथ जग्यबेदि अरु कुडल जानो।
बहुरि मत्स्य गिरिराज सख दहिने पुनि मानो॥
श्रीकृष्ण प्रानप्रिय राधिका चरन-चिन्ह उन्नीस बर।
'हरिचद' सीस राजत सदा कलिमलहर कल्यानकर॥ २॥

अन्य मत सों

केतु छत्र स्यदन कमल ऊरध रेखा चक्र।
अर्ध चद्र कुस बिंदु गिरि सख सक्ति अति बक्र॥
लोनी लता लवग की गदा बिदु द्वै जान।
सिहासन पाठीन पुनि सोहत चरन बिमान॥

---

* श्री चरण चिन्ह के विशेष भाव भक्ति सर्वस्व नाम ग्रंथ में लिखे हैं वहाँ देखो।

अष्टादस श्री चिन्ह श्री राधापद मैं जान।
जा कहँ गावत रैन दिन अष्टादसो पुरान॥
जग्य स्रुवा को चिन्ह है काहू के पद सोइ।
पुनि लक्ष्मी को चिन्ह हू मानत हरि पद कोइ॥
श्री राधापद मोर को चिन्ह कहत कोउ संत।
द्वै फल की बरछी कोऊ मानत कुस के अंत॥

अथ हस्त चिन्ह वर्णन

जव खुर तोरन कमल लता बमी त्रिकोन ध्वज।
वृक्ष शंख घट अग्निकुण्ड अंकुश गृह रथ गज।
सफरी ऊरधरेख कलस फल सब मन भाये।
छत्र गदा धनु सर सुचक्र अरु बिजन सुहाये।
बर पानपात्र गो सींप तिल स्वस्तिक श्रीश्री कृष्णाकर।
'हरिचंद्र' चिन्ह बत्तीस ये सोहत नित जन-सीस पर॥ २॥
इति श्रीयुगलसर्वस्व के पूर्वार्द्ध को दूसरो प्रकरण।

अथ अष्ट सखिन के नाम।

अपने मत सो—श्रीचंद्रावली जी, श्रीललिता जी, श्री विशाखा जी, श्रीचंपकलता जी, श्रीचंद्रभागा जी, श्रीराधासहचरी, श्रीश्यामा जी और श्रीभामा जी। इनमें श्रीचंद्रावली जी को स्वामिनीत्व है और सबन को सखित्व है याही सो पंचाध्याई में अंतर्ध्यान और आविर्भाव और महारास तीनिहू समै में काचित् काचित् करिकै सात ही गिनाई हैं। और सप्तावरणात्मक, श्रीस्वामिनीजी तथा श्रीठाकुरजी को स्वरूपहू है। यथा चतुर्व्यूहात्मक कालात्मक, संयोगात्मक और वियोगात्मक श्रीठाकुरजी को स्वरूप है। वियोगात्मक स्वरूप बृज में प्रगटे हैं और बृज ही में विराजत हैं, मथुरा द्वारका नाहीं जात। तथा श्री स्वामिनीजी शक्तित्रयात्मक-स्वामिन्यात्मक, संयोगात्मक, वियोगात्मक है, तिन मैं वियोगात्मक स्वरूप द्वै वर्ष पहले सेवाकुंज में प्रादुर्भाव भए हैं और संयोगात्मक स्वरूप पूर्णपुरुषोत्तम के साथ श्री यसोदा जी के यहाँ प्रगटे है और पंचावरणात्मक स्वरूप पंद्रह दिन

जान्हवी ६०००, सावित्री १५०००, सुधामुखी १४०००, शुभा १४०००, पद्मा १४०००, गौरी १४०००, सर्व्वमगला १६०००, सरस्वती १३०००, भारती १००००, अपर्णा १४०००, रति १००००, गगा १४०००, अबिका १६०००, सती १३००० नदिनी १००००, सुदरी १२०००, कृष्णप्रिया १६०००, मधुमती १५०००, चम्पा १३००० और चदना १४००० ।

काहू मत सों श्रीनदराय जी की परपरा यह है ।

आभीरभानु के चद्रसुरभि, तिन के मीलुक, मीलुक को महावाह, तिन के कजनाभ, तिन के वीरभानु, तिन के धर्म्मधीर, तिन के धर्म्म-श्रवा, तिन के काननेदु, तिन के जयवल, तिन के जयकीर्ति, तिन के यशोधन, तिन के कठभानु, तिन के महाबुद्धि, तिन के मानमेरु, तिन के मनोरथ, तिन के वगगद, तिन के चित्रसेन तिन के सुनंद, तिन के उपनद, तिन के महानद, तिनके नदन, तिन के कुलनद, तिन के वधुनद, तिन के केलिनद, तिन के प्राणनद, तिन के नद हैं ।

एक मत सों चित्रा जी को वर्णन । श्रीकुड के पूर्व आनद सुखद नाम इन को निकुज है, इन की वय तेरह वर्ष आठ महीना की, वर्ण गौर, वस्त्र जाती पुष्प तुल्य और सेवा चित्र की है ।

श्यामली जी दोऊ स्वरूप की सबधिनी है, श्रीठाकुर जी के काका की बेटी है सॉवलो रग है । श्रीठाकुर जी की उनहार बहुत मिलत है । कोऊ को मत है कि श्री ठाकुर जी के काके की बेटी को नाम श्यामदेवी है, श्यामली जी श्री ठाकुरानी जी के काका की बेटी है परतु श्री ठाकुर जी की पक्षपातिनी है ।

अथ अष्ट सखिन के राग तथा बाजन को वर्णन

जहॉ श्री स्वामिनी जी सयोग मे विपंची जाति की बीन और वियोग मै वशी बजावत है । राग केदार और कान्हरो रात मैं तथा दिन मै सारंग और मालकोस, वर्षा मे मेघ और मल्लार ।

श्री चद्रावली जी । बाजा अमृत कुडली राग सोरठ और जलतरग ।

श्री ललिता जी । बाजा बीन राग भैरव कलिगड़ा ।

श्री विशाखा जी । बाजा मृदग राग सारग ।

श्री चंद्रभागा जी । बाजा स्वरोदय राग केदार ।
श्री चंपकलता जी । बाजा रबाब राग कान्हरा ।
श्री भामा जी । बाजा चंग राग कल्यान ।
श्री सध्यावली जी । बाजा सारंगी राग सोरठ ।
श्री इंदुलेखा जी । बाजा ताल राग बिहाग ।
श्री चित्रा जी । बाजा सितार राग सकरा ।

अन्य मत सों बाजन के वर्णन

श्री ललिता जी मृदंग । श्री जमुना जी सहनाई । श्री विशाखा जी सुरमंडल । श्री श्यामला जी दुधारा । श्रीचंपकलता जी सारंगा । श्री भामा जी करताल । श्री कामा जी तुरही अरु सहचरी किन्नरी ।

अथ अन्य मत सों प्रियाजी के हस्त को चिह्न

जव, माला, कमल, बाटिका, भ्रमर, व्यजन, छत्र, अर्द्धचंद्र, कर्णफूल, मंडवा अरु जलपात्र ।

अथ वामहस्त के चिह्न

लक्ष्मी, सीप, वृक्ष, वेदी, आसन, कुसुमलता अरु चामर ।

अथ श्री ठाकुर जी के दक्षिण हस्त के चिह्न ।

हाथी, अंकुश, घोड़ा, वृक्ष, बाण, गऊ, पखा, मँडवा, बंशी, चक्र, माला और कमल ।

अथ श्रीठाकुरजी के वाम हस्त के चिह्न

मँडवा, कमल, तरवार, थापा, धनु, परिघ, बिल्ववृक्ष, मीन, बाण अरु नंदावर्त ।

अथ श्री ठाकुरजी के उत्सव । भादों सुदी २ को दसूठन, भादों सुदी ५ को श्री चंद्रावलीजू को जन्म, कारबदी ८ को महीना को चौक, पौष सुदी ८ को अन्नप्राशन, माघ बदी ६ को नामकरण, बैशाख सुदी ६ को ब्याह और असाढ़ सुदी ३ को गौना । पूस सुदी ८ को श्री नंदजू को जन्म, माघ सुदी ६ को यशोदाजू को जन्म और

सावन बदी ५ अठवासा तथा अगहन सुदी २ को श्री ठाकुरजी कूख मे पधारे हैं। कार्तिक सुदी १५ का यज्ञपत्नी का अंगीकार।

आधिदैविक उद्धव, आधिदैविकी सुभद्रा, आधिदैविक अर्जुन, आधिदैविकी रुक्मिणी और आधिदैविकी सत्यभामा को व्रज की लीला मे अंगीकार हैं तैसेही आधिदैविक बलदेवजी और रेवतीजी सदा व्रज मे विराजत है और मर्यादा श्रुतिरूपा गोपी इन को यूथ है।

श्रीठाकुरजी के बूआ को नाम मैना है और धरानंद अर्थात् सुनंदजी की बेटी सुभद्रा श्री ठाकुरजी की प्यारी बहन है। श्रीवृषभानु-जी विवेक और श्रीकीर्ति जी भक्ति को स्वरूप हैं तथा देवतान की आदिजननी महामाया देवकी जी को स्वरूप है और धर्म को स्वरूप बसुदेवजी को है। इन दोउन को व्रज मै कबहूं कबहूं बाललीला के दर्शन होत है।

गोलोक मे श्रीगोवर्द्धन को विस्तार बारह हजार कोस है और भगवान के आनंद सों उन की उत्पत्ति है। श्री स्वामिनीजी के सात्विक भाव सों रास की उत्पत्ति है। तिरानबे कोटि रासलीला और उतने ही कुंज है, तिनहूं मे चौरासी मुख्य हैं। निज निकुंज मे श्रीठाकुर जी कबहूं गौर विराजत है कबहूं श्याम। सात्विक कुंज फूलन के हैं, राजस मणि कांच इत्यादि के और तामस धातु पाषाणादि के हैं। निर्गुण कुंज इच्छामय षट ऋतु संपन्न हैं। कुंज मंडल मे पहलो निकुंज श्री यमुनाजी का, दूसरा अग्निकुमारिका का, तीसरो श्रुतिरूपा की मुखिया श्री चंद्रावली जी को और चौथो निज निकुंज है। ऐसे हीं अंतरंग कुंज मे इन स्वरूपन के आधिदैविक स्वरूप क्रम सों श्री यमुनाजी, श्री राधा सहचरी, श्री चंद्रावलीजी और जुगल स्वरूप विराजत हैं और वे स्वरूप अलौकिक मनुष्य के ज्ञान के बाहर के हैं। जिन स्वामिनी और सखिन को जगत भजन करत है वे गुणमई है।

श्री चंद्रावलीजी को गाँव बृज मे रिठौरा है। नवधा भक्ति वात्सल्य में तो श्री नवनंद के स्वरूप मे और शृंगार मे सखी स्वरूप मे रहत हैं। बृज मे अनेक अवतारन के बरदान सों श्रुतिरूपा, ऋषिरूपा, यज्ञसीता, रमासहचरी, लोकालोकबारी, रजोगुण की, तमोगुण की, सतोगुण की,

कोशलपुरी, पुलिंदी, श्वेतद्वीप की, मिथला की, ऊर्द्ध्ववैकुंठ की, भूमिगालोक की, अजितपद की, दिव्या, विष्णुलोक की, अदिव्या, समुद्रकन्या, अप्सरा, पुरश्री, लता, गोपी, वर्हिष्मती, नागकन्या, सुतलनिवासिनी और श्रीरामावतार की मानवी इतनी जूथन को मनोरथ पूर्ण पुरुषोत्तम ने पूर्ण कीनो है।

इन मे जालवरी तो रगजीत नामक गोप की कन्या भई हैं और मत्स्य अवतार के बरदान की बर्हिमती अप्सरा नागकन्या और सुतलवासिनीन ने बृज के पास वर्हिपल नगर मे जन्म लीने हैं। रिषीरूपा बग देश मे मगल गोप के घर पॉच हजार उत्पन्न भई हैं। और श्री नदरायजी ने इन को बगाले सो लाय कै महल मे रक्खी है। कोशल की स्त्री नव उपनंद की पत्नी है। मालव को राजा दिवस्पति गोप व्रज मे बसत है सो देवतान की स्त्री वा की कन्या गोपी भई हैं। सिधु देश को राजा बिमल वाके यहाँ अवध और मिथिलापुर को स्त्री एक करोड़ प्रगटी हैं। ये पहले कामबन मे रहीं, फेर द्वारका गई, जासो इनको राज्यलीला प्रिय है। दक्षिण मे उशीर नगर के गोप पानी न बरिसबे सो व्रज मे आय बसे हैं तिन की बेटी यज्ञजानकी और पुलिंदी भई है। दिव्य बाह, गोपेष्ट, पतग, भार्गव, शुक्र और नीतिविद ये छः लघु वृषभान हैं। इनके घर ऊर्द्ध विष्णुपदवासिनी, रमासखी, जलकन्या, श्वेत द्वीप की स्त्री लोकाचलवासिनी और अजितपद की स्त्री प्रगटी हैं। वीतिहोत्र, श्रुत, अग्निभुक, गोपति श्रीकर, शात, पावन, शांभ और व्रजेश ये नव लघु उपनद हैं। त्रिगुणा और दिव्याऽदिव्या के यूथ को इनके घर प्रागट्य हैं।

और अवतारन मे स्वकीया छोड़ के और स्त्री सो रमण करै तो धर्म की मर्यादा जाय वाही सो जब पूर्ण पुरुषोत्तम प्रगटे हैं तब इन सबन को मनोर्थ पूर्ण भयो है।

विशेष कर के श्री रामावतार की स्त्रीन को व्रज मे प्रागट्य है जासो श्रीरामजू साक्षात् वासुदेव स्वरूप और मर्यादा पुरुषोत्तम हैं और अत्यत ही सुदर हैं, देखतमात्र स्त्रीजन को चित्त हरन करते हैं सो मर्यादा पुरुषोत्तम मे आसक्त होइ के पुष्टि पुरुषोत्ताम सो रमण की

अधिकारिणी होत हैं। ताहू मैं अग्निकुमार दंडकारण्य के पाँच हजार ऋषी को मुख्य नित्य लीला मे अगीकार है क्योंकि पुरुष होइ के प्रभु मे इन ने स्त्रीभाव कीन्हो है, सो कुमारिकान को यूथ जा की मुखिया श्री राधा सहचरी जू हैं, इन्हीं दंडकारण्य के ऋषिन को है।

सुजस गोप की स्त्री जसा सो कीर्ति जी को प्रागट्य है। सुनैनाजी इन की अंश है। चद्र वंश मे कुरंग नामक राजा और वा की स्त्री विशालाक्षी सो सुनैना जू की उत्पत्ति है।

श्री जानकी जू इनहीं के गृह प्रगटी है और मदोदरी, पृथ्वी, पार्वती और सुनयना इन सबन सो आप सो मातृ संबध है। जब ऋषिन को ब्रह्मतेज एक घडा मे बद होय के रावन के पास आयो तब मदोदरी ने वाको अपने गर्भ मे धारण कियो सो नारद जी के कहिबे सो रावण ने वा गर्भ को पीडित करि वा घडा मे भरि कै जनकपुर के पास गडवाय दियो। ताही सो श्रीजानकी जी प्रगटी है। और श्री लक्ष्मन जी सब ब्रह्मान के, भरथ जी सब विष्णुन के ओर शत्रुघ्न जी सब शिवन के आधिदैविक स्वरूप है।

आल्हादिनी, चारुशीला, अतिशीला, सुशीला, हेमा, लक्ष्मना ये श्री जानकी जी की कुंजन की, शोभना, सुभद्रा, शाता, सतोषा, शुभदा, सत्यवती, सुस्मिता, चार्वगी, लोचना, हेमागी, क्षेमा, क्षेमदात्री, सुधात्री, धीरा, धरा और चारुरूपा, ये सोरह सिंगार की, माधवी, मनोजवा, हरिप्रिया, वागीशा, विद्या, सुविद्या, नित्या और वैसा ये आठ अग की मुख्य सखी हैं।

इति श्रीयुगलसर्वस्व के उत्तरार्द्ध को द्वितीय अध्याय स्फुट प्रकरण समाप्त भयो।

—*—

३ अध्याय

अब प्रसगवशात् अन्य अन्य रहस्य निरूपण करत है। १। रसिक जन और महात्मान के निकुजादि वर्णन मे अनेक मत हैं, तिन को परस्पर विरुद्ध देखि कै शंका न करनी काहे सो कि यह तो निकुजलीला भाव सिद्ध है जैसो जाको भाव को अधिकार है वैसो वाहि दर्शन होत है। २। रहस्य पुराण मे तिरानवे कोटि रासलीला लिखी हैं। ३। तिरानबे कोटि कुजहू है। ४। धाम एक भूमडल पर श्रीवृदाबन, एक गोलोक को नित्य वृंदाबन। ५। सब कुजन मे ८४ कुज मुख्य है। याही सो ८४ सेवक हू श्री महाप्रभु जी ने अंगीकार किए है। ६। श्रीठाकुरजी के गुणमय नौ स्वरूप उन की भार्य्या १ अजा २ अरूपा ३ निर्गुणा ४ निराकारा ५ सनातनी ६ निरीहा ७ परब्रह्मभूता ८ अविनाशिनी और ९ निरजना। सो इन नओ स्त्रीन सो श्रवणादिक प्रेम भक्ति उत्पन्न होत भई। ७। और निर्गुणस्वरूप श्री ठाकुरजी को एक सच्चिदानदघन, ताकी स्त्री अलौकिकी, तासो प्रेम लक्षणा उत्पन्न भई, ताके सहज, सुहित और सुहृत तीन पुत्र भए। ८। श्रवणादिक प्रेमन को एक एक को नौ नौ पुत्र भए तेही ८१ और तीन प्रेमलक्षणा के पुत्रन के पुत्र सब मिलि कै चौरासी प्रकार प्रेम तेई निकुज होत भए। ९। श्रवण की भार्या श्रुति ताके नौ पुत्र सूक्ष्मकुज, उनकी सज्ञा, उनके नाम यथा प्रीतिकुज, प्रेमकुंज, कदर्पकुज, लीलाकुज, मज्जनकुज, विहारकुंज, उत्कठकुज, मोहनकुज, युगुलकुज। १०। कीर्त्तन की स्त्री नर्त्तकी ताके नौ देहकुज पुत्र भए यथा हावकुज, भावकुज, कटाक्षकुज, अलककुज, मुक्ताकुज, भ्रुकुज, वेनीकुज, रामराजीकुज, नीवीकुज। ११। अर्चन की भार्या पूजा ताके नौ पुत्र विहारकुज यथा कटिक्षीणकुज, मानकुज, भ्रमनकुज, तिष्ठनकुज, सगीतकुज, आलस्यकुज कलकूजितकुज, विविधाकारकुज, दुकूलकुज, कुचकुज। १२। पाद सेवन की स्त्री पादोदका ताके नौ शृगारकुज यथा नेत्रकुज, कुडलकुंज, हारकुज, ताबूलकुंज, आड़कुज, लावन्यकुज, हास्यकुज, उत्साहकुज, उग्रताकुंज। १३। स्मरण की स्त्री स्मृति ताके नौ महाकेलिकुज यथा कोकिलालापकुंज,

ग्रीवकुंज, आलिंगनकुंज, चुंबनकुंज, अधरपानकुंज, दर्शनकुंज, दर्पनकुंज, प्रलापकुंज, उन्मादकुंज । १४ । वंदन की स्त्री नति वाके नौ एकांतकुंज यथा दर्पकुंज, उत्मादनकुंज, उत्कर्षकुंज, दीनकुंज, अधीनकुंज, सुरतकुंज, आकर्षणकुंज, उच्चाटनकुंज, मूर्छाकुंज, । १५ । दास्य की स्त्री विनया वाके नौ गोप्यकुंज यथा वशकरणकुंज, स्तंभनकुंज, प्रियास्कंधारोहणकुंज, आवेशकुंज, व्यात्तालापकुंज, पर्यंकशयनकुंज, प्रियाचरणताडनकुंज, नखक्षतकुंज, दंतक्षतकुंज । १६ । सख्य की स्त्री मैत्री तासों नौ भावकुंज यथा क्षपितरंगकुंज, विगताभरणकुंज, भूषणकुंज, कंपकुंज, रतिप्रलापकुंज, तुत्तुलगिरिकुंज, प्रियावासभवनकुंज, मदनगुह्यकुंज, आसक्तकुंजकुंज, । १७ । निवेदन की स्त्री आत्मसमर्पिणी ताके नौ परमरसकुंज यथा पीड़ावादीकुंज, सुरतश्रमनिषेधकुंज, ठुनुककुंज, वाग्विभ्रमकुंज, व्यस्तभावकुंज, कामटककुंज, किंकिनिरवकुंज वीरविपरीतकुंज, सुरतांतकुंज । १८ । सुहृत् की स्त्री सुहृदा तासों कलिकाकौतुककुंज और सुहित की स्त्री हितकारिणी तासों सुरतकुंज तथा सहज की स्त्री सहजा तासों सहज प्रेमकुंज येई चौरासी कुंज भए । १९ । इन कुंजन में एक एक में सब कुंज अंतरभाव सों रहत हैं कहूँ प्रच्छन्न रहत हैं और कहूँ प्रकाशित होत है । २० ।

अब और स्फुट रहस्य वर्णन करत हैं । व्रज में सप्तावरण स्वरूप श्रीठाकुर जी को तथा श्रीस्वामिनीजी को विराजत है ॥ २ ॥ वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, कालेश्वर, संयोगरसात्मक और वियोगरसात्मक यह सात स्वरूप मिलि कै पूर्ण होत हैं सो इन में अन्य कल्पन मे कहूँ एक कहूँ दोय ऐसे स्वरूप प्रकट होत है ॥ ३ ॥ जब पूर्ण प्राकट्य भयो तब छ स्वरूप मथुराजी मे प्रगटे, वियोगात्मक स्वरूप व्रज ही मे प्रगटे ॥ ४ ॥ श्रीशक्ति, भूशक्ति, लीलाशक्ति, मनोरथात्मक, स्वामिन्यात्मक, वियोगात्मक, संयोगरसात्मक यह सात स्वरूप श्री स्वामिनी जी के हैं तिन मे अन्य युगन मैं कोउ एक स्वरूप प्रकटत हैं । जब पूर्ण प्रागट्य भयो तब पाँच स्वरूप कीर्त्ति जी के यहाँ प्रगटे और जब श्रीठाकुर जी प्रकटे तिन के साथ मायावृत संयोग-वियोग रसात्मक दोय स्वरूप

यहाँ प्रकटे। सो जब कीरतिजी अपुने घर सों श्री स्वामिनी जी को लाई तब श्री ठाकुर जी माता की गोद मों किलके और हँसे वाही समैं इन दोऊ रसात्मक स्वरूपन को उन पचावरणात्मक स्वरूप मैं स्थापन कीनों ॥ ५ ॥ जब कछु आवरण सों मथुरा पधारे तब वियोगरसात्मक मुख्य स्वरूप श्रीस्वामिनीजी के हृदय मे बिराजे ॥ ६ ॥ श्रीस्वामिनीजी को मनोरथात्मक जो स्वरूप है ताही मे अन्य के प्रभु सो रमण करिबे के मनोरथ तथा वरदान आदि सो जे स्वामिनी प्रकटत है ते मिलि रहत हैं और स्वामिन्यात्मक स्वरूप मे प्रति कुंज प्रति मंडल प्रति जूथ मैं जो स्वामिनी जी के अंश स्वरूप रहत है तिनकी एकता है ॥ ७ ॥

अथ श्रीस्वामिनी-जन्म-समय

अथ ब्रह्मणो द्वितीयप्रहरार्धे श्वेत वाराह कल्पे द्वापराते विश्वावसु संवत्सरे भाद्रपदेशुक्लाष्टम्या गुरु वासरे अरुणोदये विशाखायां सिंहल-ग्नोदये प्राङ्मुहूर्त्तद्वयान्विते श्रीश्रीस्वामिन्या जन्म ॥ ८ ॥

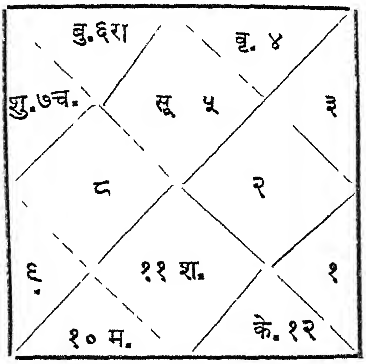

नव वृषभानों का चक्र

नाम	स्त्री नाम	सतति	वर्ण	चाल वस्त्र	गुण	वय	गऊ
सत्यभानु	सत्यकला	श्रीललिताजी	गौर मूँछ श्वेत	शरीर ठिगना चित्त गभीर वस्त्र काले	श्रौदार्य	७५	२२००००००
गुणभानु	गुणकला	श्रीविशाखाजी	गुलाबी, केश श्वेत	रग शहाना	विद्या	६७	२१००००००
धर्मभानु	धर्मकला	श्रीरगदेवी	साँवला, केश श्वेत	वस्त्र लाल शरीर लबा	धर्म	६४	२००००००
रुचिभानु	रुचिरकला	श्रीचित्राजी	पीन शरीर लबा चौडा केश, श्रधकचरे	लीला	ज्योतिष	६०	१६००००००
सुभानु	सुष्ठुकला	श्रीतुगविद्याजी	साँवला, केश श्रधकचरे	डाढी पीत प्रसन्न वदन	रोचकता	५७	१८००००००

नव वृषभानों का चक्र

नाम	स्त्री नाम	संतति	वर्ण	चाल वस्त्र	गुण	वय	गऊ
चद्रभानु	चद्रकला	श्रीचद्रावलीजी श्रीचपकलताजी	गौर केश कृष्ण किचित्श्वेत	हरित	कला	५४	१७००००००
वरभानु	बरकला	श्रीइंदुलेखाजी	लाल, केश काले	पहलवानी धानी	गानविद्या	५२	१६००००००
उदधिभानु	कमला	श्रीसुदेवीजी	पक्का	केश काले श्वेत	व्यायाम पशुपरीक्षण	५०	१५००००००
श्रीवृषभानुजी	कान्तिजी	श्रीदामा श्रीराधिकाजी	लाल	केश काले	राजविद्या	४५	१००००००००

युगलसर्वस्व के उत्तरार्द्ध को तीसरो प्रकरण समाप्त भयो ।

अथ चतुर्थ अध्याय

६४ गुण श्रीभगवान के

सुरम्यांग १ सर्वसल्लक्षणान्वित २ रुचिर ३ तेजोयुक्त ४ बली ५ वयोयुक्त ६ विविधाद्भुतभाषाविन् ७ सत्यवाक्य ८ प्रियवद ९ वावदूक १० पंडित ११ बुद्धिमान १२ प्रतिभान्वित १३ विदग्ध १४ चतुर १५ दक्ष १६ कृतज्ञ १७ दृढव्रत १८ देशकालपात्रज्ञ १९ शास्त्रचक्षु २० पवित्र २० वशी २२ स्थिर २३ दांत २४ क्षमाशील २५ गंभीर २६ धृतिमान् २७ सम २८ वदान्य २९ धार्मिक ३० शूर ३१ करुण ३२ मानदायक ३३ दक्षिण ३४ विनयी ३५ लज्जावान ३६ शरणागतपालक ३७ सुखी ३८ भक्तसुहृत् ३९ प्रेमवश्य ४० सर्वशुभकर ४१ प्रतापी ४२ कीर्त्तिमान ४२ लोकप्रिय ४४ साधुसमाश्रय ४० नारीमनोहर ४६ सर्वाराध्य ४७ समृद्धिमान् ४८ श्रेष्ठ ४९ ईश्वर ५० नित्य सुंदर ५१ सर्वज्ञ ५२ सच्चिदानंदघन ५३ सर्वसिद्धिसंयुक्त ५४ अविचिंत्य ५५ महाशक्ति ५६ अनेककोटि ब्रह्माण्डविग्रह ५७ अवतारावलीबीज ५८ हतारिगतिदायक ५९ आत्माराम गुणाकर्षी ६० अत्यंत अद्भुत और चमत्कार लीला कल्लोल के समुद्र ६१ अतुल्य मधुर प्रेमप्रिय मंडल सों मंडित ६२ मुरली वादन सों सर्वमानसाकर्षी ६३ अत्यंत अलौकिक उज्ज्वल अद्भुत तथा उद्धत रूपश्री सों चराचर को मोहन ॥ ६४ ॥

प्रथम पचास सहज गुण। ६० तक १० अद्भुत। और चार असाधारण गुण।

२४ नित्य प्रिया सहचरी

चंद्रावली १ विशाखा २ ललिता ३ श्यामा ४ पद्मा ५ शैव्या ६ भद्रिका ७ तारा ८ विचित्रा ९ गोपाली १९ धनिष्ठा ११ पालिका १२ खंजनाक्षी १३ मनोरमा १४ मंगला १५ विमला १६ शीला १७ कृष्णा १८ सारिका २९ विशारदा २० तारावली २१ चकोराक्षी २२ शंकरी २३ कुंकुमा २४।

इन मे विशाखा, ललिता, श्यामा, पद्मा सखी और शेष यूथपति है।

अथ यूथपति अपर

चद्रावली और सुशीला १६०००, शशिकला १४०००, चद्रमुखी १३०००, माधवी ११०००, कद्बमाला १३०००, कुंती १००००, यमुना १४०००, जाह्नवी ६०००, पद्ममुखी ६०००, सावित्री १५०००, सुधामुखी १४०००, शुभा १४०००, पद्मा १४०००, गौरी १४०००, सर्वमंगला १६०००, सरस्वती १३०००, भारती १००००, अपर्णा १४०००, रति १००००, गंगा १४०००, अंबिका १६०००, सती १३०००, निदिनी १००००, सुदरी ११०००, कृष्णप्रिया १६०००, मधुमती १४०००, चंपा १३०००, चंदना १४००० ।

श्रीस्वामिनीजी के १६ नाम

राधा १ रासेश्वरी २ रासवासिनी ३ रसिकेश्वरी ४ कृष्णप्राणाधिका ५ कृष्णप्रिया ६ कृष्णस्वरूपिणी ७ कृष्णवामागसंभूता ८ परमानदरूपिणी ६ कृष्णा १० वृंदावनी ११ वृंदा १२ वृंदावनविनोदिनी १३ चंद्रावली १४ चद्रकाता १५ शतचाद्रनिभानना १६ ॥

—:※:—

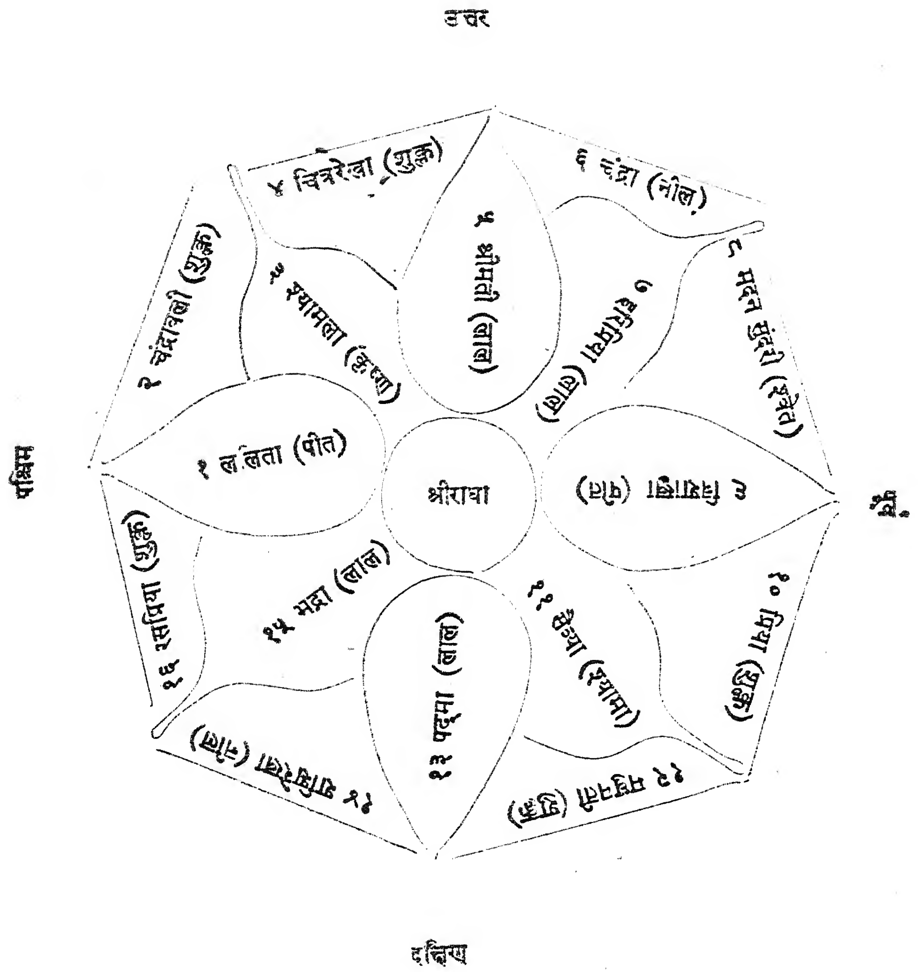

उत्तर
पश्चिम
पूर्व
दक्षिण
श्रीराधा
१ ललिता (पीत)
२ चंद्रावली (शुक्ल)
३ श्यामला (कृष्ण)
४ चित्ररेखा (शुक्ल)
५ श्रीमती (लाल)
६ चंद्रा (नील)
७ हरिप्रिया (लाल)
८ मदन सुंदरी (श्वेत)
९ विशाखा (पीत)
१० प्रिया (शुक्ल)
११ शैव्या (श्यामा)
१२ मधुमती (शुक्ल)
१३ पद्मा (लाल)
१४ शशिरेखा (नील)
१५ भद्रा (लाल)
१६ रसप्रिया (शुक्ल)

अथ उत्सवन पर रागन को अंगीकार

जन्मोत्सव	सारग
दान	टोडी
साँझी	गौरी
विजयदशमी	मारू
रास	केदार, कान्हरा तथा सर्व
कार्तिक	भैरो, ईमन कल्यान
मार्गशीर्ष	पचम
पूस	आसावरी
माघ	मालकोस, वसंत
फागुन	धनाश्री, विहाग आदि सब राग
डोल	हम्मीर सारग
चैत	पूर्वी
बैशाख	मधु सारग, केदार
ज्येष्ठ	सारग शुद्ध
आषाढ	सामतसारग, गौड़, सोरठ
श्रावण	मलार
जागने को समय	भैरव पचम
शृंगार करती समय	रामकली
अरोगती समय	यथाऋतु
दिन	टोड़ी, आसावरी, सारग, धनाश्री
तीसरे पहर	गोरी, पूर्वी, धनाश्री
जन्मोत्सव	सारंग
सैन आरती वा कुंजविहार	केदार, कान्हरा, ईमन
एकांत विहार	विहार, सोरठ, परज, कलिगड़ा

अथ तंत्र मत सों सखीन को वर्णन

१ ललिता	स्वर्णवर्ण	रत्नाभरण	पीतांबर
२ चंद्रावती	„	श्वेत वस्त्र	मंजीर की सेवा

३ श्यामला	स्वर्ण वर्ण	श्याम वस्त्र	मृदंगसेवा
४ चित्ररेखा	,,	शुक्लाबर	डफ की सेवा
५ श्रीमती	,,	रक्त वर्ण	दासी की सेवा
६ चाद्रा	,,	नील वस्त्र	रबाब
७ हरिप्रिया	,,	लाल वस्त्र	उपग
८ मदनसुदरी	,,	श्वेत वस्त्र	रबाब और गाना
९ विशाखा	,,	पीत वस्त्र	वशी
१० प्रिया	,,	श्वेत वस्त्र	वशी
११ शैव्या	,,	श्याम वस्त्र	गाना
१२ मधुमती	,,	शुद्ध वस्त्र	चरन सेवा
१३ पद्मा	,,	लाल वस्त्र	सारंगी
१४ शशिरेखा	,,	नील वस्त्र	यत्र
१५ भद्रा	,,	रेशमी लाल वस्त्र	सुरमडल
१५ रसप्रिया	,,	चीन शुभ्र वस्त्र	तुमरी

एक एक की सात सात सखी

१ ललिता की इंदुमुखी १ रसज्ञा २ शुभदा ३ सुमुखी ४ वल्लभी ५ चद्रिका ६ चतुरा ७।

२ चद्रावती की चंचला १ मधुरा २ हस्तकमला ३ मधुरभाविनी ४ विलासिनी ५ रसवती ६ खजनलोचना ७।

३ श्यामला की सुखदा १ चंपकलिका २ रसदा ३ रसमजरी ४ सुमंजरी ५ शीला ६ चारुमती ७।

४ चित्ररेखा की चद्रप्रभावती १ वासती २ मालती ३ जाती ४ चद्रकांती ५ सुकुतला ६ रभा ७।

५ श्रीमती की भ्रमरगभीरा १ सुशीला २ सुवेशिनी ३ आमलिकी ४ सुधाकठी ५ श्रेया ६ रतिप्रिया ७।

६ चद्रा की शुकप्रिया १ मधुकरी २ सुवेशा ३ अमृतोद्भवा ४ मुरली ५ वल्लभी ६ वृदा ७ ।

७ हरिप्रिया की पारिजातप्रिया १ शुभा २ पचस्वरा ३ रत्नमाला ४ मदिरा ५ रासवल्लवी ६ मातगगमनी ७ ।

८ मदनसुदरी की तागवती १ कु डलधारनी २ केशरी ३ मित्रवृदा ४ लक्षणा ५ अच्युतमालिका ६ चद्रा ७ ।

९ विशाखा की मायावती १ कौशिकी २ कोमलागी ३ सुचदनी ४ पीयूषभाषिणी ५ सत्यवती ६ कु जवासिनी ७ ।

१० प्रिया की कपोतमालिका १ लोपामुद्रा २ किशुकप्रिया ३ इलावती ४ कुंकुमा ५ कमला ६ मदालसा ७ ।

११ शैव्या की सावित्री १ बहुला २ प्रियवादिनी ३ मुक्तावली ४ चित्ररेखा ५ सुमित्रा ६ लोलकु डला ७ ।

१२ मधुमती की अरुंधती १ चित्रवती १ श्रीरक्ता ३ पद्मगधिनी ४ मेनका ५ कलिका ३ रगकेतकी ७ ।

१३ पद्मा की काममूछिनी १ कुमुदप्रिया २ तानप्रिया ३ नित्य विलासिनी ४ हीरावती ५ हारकठा ६ सिहमध्या ७ ।

१४ शशिरेखा की सुलोचना १ नदव्या २ आनदकलिका ३ सुनदा ४ आनददायिनी ५ कुरगाक्षी ६ सुश्रोणी ७ ।

१५ भद्रा की केलिलोला १ प्रियबदा २ श्यामराधा ३ श्यामासेव्या ४ कस्तूरी ५ मानभजनी ६ विचित्रवासना ७ ।

१६ रसप्रिया की मजुकिकिनी १ पिकस्वरा २ भृगगाना ३ रासविहारिणी ४ रसमंजीरा ५ तिलोत्तमा ६ चारुमती ७ ।

अथ अन्य प्रमाण के अनुसार अष्ट सखी को चक्र

	पितानाम	मातानाम	रंग	वस्त्र रंग	मुख्यसेवा
श्री ललिता जी अनुराधा जी	सत्यभानु	सत्यकला	गोरोचनप्रभा	मयूरपिच्छ	पानकीबीड़ी
श्री विशाखा जी	गुणभानु	गुणकला	दामिनीप्रभा	चाँदतारा	वस्त्रादि
श्री चम्पकलता जी श्री इन्दुलेखा	चन्द्रभानु	चन्द्रकला	चम्पकप्रभा	नील	व्यंजनादि
श्री तुंगविद्या	वरभानु	वरकला	हरतालप्रभा	अनार के फूल	शय्या कहानी
नान्दीमुखी	सुभानु	सुष्ठुकला	गौर	पीला	गान
श्री रंगदेवी	धर्मभानु	धर्मकला	कमलकेसर प्रभा	उडहुल के फूल	आभरण
श्री सुदेवी	उदधिभानु	कमला	सलोना	सूहा	केशपाशरचनादि आरसी
श्री चित्रा	शुचिभानु	रुचिरकला	कुंकुमप्रभा	सुनहला	जलादि पान की

	चातुर्य	उन की सखियों के नाम	भाव
श्री ललिता जी अनुराधा जी	मध्या मुख्य स्नेहवर्द्धन	रत्नप्रभा, रतिकला, निपुणा, कलहंसी, कलापिनी, सुमुखी, मन्मथमोदा, सौरभा	सख्य
श्री विशाखा जी	सदा साथ रहना	माधवी, मालती, कुंजरी, हरिनी, चपला, गंधरेखा, शुभानना, सौरभी	सख्य
श्री चम्पकलता जी	यथारुचि सिद्ध करना	कुरंगाक्षी, मिहिर कुंडला, चंद्रिका, सुचरित्रा, मंडिनी, चंद्रलता, रसऐनी, सुमंदिरा	इन पर श्री-प्रिया जीका वात्सल्य है
श्री इन्दुलेखा	कोक	चित्रलेखा, मेदिनी, मदालसा, रसतुंगा, भद्रतुंगा, गानकला, शुभगला, चित्राणी	परमानुराग
श्री तुंगविद्या नान्दीमुखी	वाद्यादि कला	मंजुमेधा, सुमेधिका, गुणचूड़ा, मधुरा, मधुस्यंदा, मधुरेक्षणा, तनुमध्या, वाक्षणी	सुसाहिव
श्री रंगदेवी	शृंगार माल्यनिर्माण	कलकंठी, शशिकला, कमला, सुंदरी, कंदर्पा, प्रेममंजरी, कामलता, मधुविदा	सेवासख्य
श्री सुदेवी	शुकपाठ तिलक आदि	कावेरी, मनोहरा, मंजुकेशी, केशिका, हीरा, चारुकुमारी, हीरकंठा, महाहीरा	सुसाहिव
श्री चित्रा	रुचि अवलोकन	रसालिका, तिलकिनी, सुगंधिका, सौरसेनी, नागरी, रामिलिका, नागवेलिका, अञ्जना	सेवासाख्य

अथ अन्य मत सों अष्ट सखीन को वर्णन

नाम	रग	वस्त्र	माता	पिता	पति	चातुर्य	सेवा
ललिता सुदरी	गोरोचन	मयूरपिच्छ	शारदा	विशोक	बालीक	मध्या वाक्य	ताबूल
विशाखा	बिजली	चाँदतारा	सुदक्षिणा	पावन	वल्लभ	सामादि भेद-काव्य	वस्त्र
चपकलता	चपा	नीला	वाटिका	राम	चडाच	दौत्य	पाक वस्तु
चित्रा	कुकुम	काला	चर्चिका	चतुर	पिठर	आगमज्योतिष, पशुविद्या, जलपान	सॅवारना जल केश
तुगविद्या	केसर	पीले	मेघा	पौष्कर	वालिस	सगीत साहित्य मेलन	बीणा
इदु लेखा	हरिताल	लाल	सागर	वेला	दुर्बल	कोक वशीकरणदैन्य	चदन
रगदेवी	पद्म किंजल्क	सफेद	करुणा	रगसार	चक्रेशण	शृगार	•
सहचरी	गौर	नील	सुदेवी	देवबधु	कोरन खलदु	अजन अभ्यग-चरण-सेवा	पीकदान

अथ अन्य मत सों सखीन को वर्णन चक्र

नाम	रग	कौन की सखी	वस्त्र	वाद्य	सेवा	दल	स्थान
श्रीललिता	चद्रमा	श्रीस्वामिनीजीकी	पीला	...	.	पीला	पश्चिम
चद्रावती (ली)	सोना	श्रीललिताजीकी	श्वेत	. .		सफेद	उसके बाएँ
श्यामला	सोना	श्रीस्वामिनीजीकी	काला	मृदग	...	काला	वायव्य
चित्रलेखा	तपाया सोना	श्रीठाकुरजीकी	श्वेत	डफ	गाना	सफेद	उसके बाएँ
श्रीमती	सोना	श्रीठाकुरजीकी	लाल	...	दास	लाल	उत्तर
चद्रा		श्रीठाकुरजीकी	लीला	रबाब	गाना	नील	उसके बाएँ
हरिप्रिया	सोना		पीला	उपग	...	लाल	ईशान
मदनसुंदरी	चद्र	. .	सफेद	रबाब	गाना	धूम्र	उसके बाएँ
विशाखा	गौर	श्रीस्वामिनिजीकी	पीत	वशी	...	पीत	पूर्व
श्रीप्रिया	सोना	विशाखाजी की	सफेद	वशी	.	शुक्ल	उसके बाएँ
शैव्या	सोना	श्रीकृष्णकी	काला	मजुसुखयत्र	.	श्याम	अग्नि कोण
मधुमती	सोना	युगल स्वरूप की	सफेद		गाना	शुक्ल	उसके बाएँ

अन्य मत सों अष्ट सखीन को चक्र

नाम	रग	किसकी सखी	वस्त्र	वाद्य	सेवा	दल	स्थान
पद्मा	फूल	.	लाल	सारगी	...	लाल	दच्छिण
इदुलेखा वा शशिरेखा	चद्रमा	श्रीठाकुरजीकी	पट्ट	मृदग	गाना	नील	उसके बाएँ
भद्रा	सोना	श्रीयुगल	लाल	स्वरमडल	...	लाल	नैऋत
रसप्रिया	सोना	युगल	लाल	...	...	शुक्ल	उसके बाएँ
वृन्दा (वनप्रिया)	हरदी	..	सफेद साटन	तबूरा	.	.	...
श्रीचद्रावली	लाल सोना	..	चुनरी	.	जाहीके फूलकी माला	..	..

श्री रामचन्द्र के दक्षिण चरण के २४ चिन्ह क्रम सों

एड़ी मे स्वस्ति चिन्ह । १ पीत-रग मध्य तरवा मे ऊर्द्ध रेखा । २ लाल रग । ऊर्द्ध रेखा के बाये तरफ अष्टकोण ३ स्वेत अरुण । श्री । ४ । बालार्क सन्निभ ।

हल । ५ } स्वेत धूम्र ।
मुसल । ६

सर्प । ७ । सित ।

बाण । ८ । स्वेत । पीत अरुण हरित ।

आकाश । ९ ।नील ।

अष्टदल कमल । १० । अरुण

स्यदन । ११ । विचित्र वर्ण जिसमे चारि घोडे स्वेत ।

वज्र । १२ । बिजुरी वर्ण ।

अँगूठे मे जव । १३ । स्वेत रक्त ।

उर्द्ध रेखा के दक्षिण ओर कल्प वृक्ष । १४ । हरिद्वर्ण । अकुश । १५ । श्याम ।

ध्वज । १६ । लोहित चित्रित ।

मुकुट । १७ । तप्त काचन वर्ण ।

चक्र । १८ ।

सिहासन । १९ । रत्नमय ।

कालदड । २० । कसावत ।

चामर । २१ । अत्यत धवल ।

छत्र । २२ । सित लाल ।

नृ । २३ ।

जपमाला (२४ चिन्ह) स्वेत, पीत, अरुण, हरित अरु वज्र-वत ।

———

श्रीराघव के बायें पदाब्ज के २४ चिन्ह क्रम सों

पद मध्य मे दक्षिण पद लौ उर्द्ध रेख की जगह पै सरयू । १ । सित ।
एड़ी मे गो पद ।२। सित रक्त ।
सरयू के दक्षिण ओर भूमि । ३ । पीतरक्त सित ।
कुभ ।४। स्वर्ण वर्ण कुछ स्वेत ।
पताका । ५ । चित्रवर्ण ।
जबू फल । ६ । श्याम ।
अर्द्ध चद्र । ७ । धवल ।
दर । ८ । सित कछु लाल ।
षट्कोण । ९ । महास्वेत ।
त्रिकोण । १० अरुण ।
गदा । ११ श्यामल ।
जीवात्मा । १२ । दीप्तिरूप ।
अगुष्ठ मे बिदु । १३ । पीत ।
गोपद की बाई ओर । शक्ति । १४ । रक्त श्याम सित ।
सुधाकुड । १५ । सित रक्त ।
त्रिवली । १६ । त्रिवेणीवत् ।
मछरी । १७ । रुपेवत ।
पूर्णसिधु । १८ । धवल ।
वीणा । १९ । पीत रक्त सित ।
वशी । २० । चित्र विचित्र ।
धनु । २१ । हरित पीत अरुण ।
त्रोण । २२ । चित्र विचित्र ।
मराल ।२३। चरण चांचु लाल । सित ।
चद्रिका । २४ । सित पीत अरुण विचित्र रग ।

जो चिन्ह श्री रामजी के दक्षिण पद मे हैं सोई चिन्ह श्री जानकी जी के वाम पद मे हैं और जो श्री राघव के वाम पद में सोई श्री लाडिली जी के दच्छिन पद मे ।

उपसंहार

यह पूर्वोक्त श्री युगुलसर्वस्व अनेक प्रामाणिक ग्रथो से सग्रह करके छापा गया। इसके छपने से अनन्य लोग रुष्ट न हो क्योकि यह बजार बजार वेचने और घर घर बॉटने को नहीं छापा गया है केवल अनन्य अधिकारी लोगो के हेतु थोड़ी सी पुस्तके गुप्त रीति से छाप ली गई है।

यह भी विदित रहे कि एक्ट २५ सन् १८६७ ई० की रीति के अनुसार रजिस्ट्री किया है और छापे के अन्य अन्य एक्ट के अनुसार इसका सब स्वत्व हमने केवल अपने हस्तगत रखा है इस्से भूलकर भी कोई इसी भाषा और इसी लिपि मे वा किसी अन्य भाषा और अन्य लिपि मे बा कुछ घटा बढ़ाकर वा कुछ हेर फेर कर भी छापने का उद्योग न करे नहीं तो वह कानून के अनुसार दडनीय होगा।

विदित हो कि सर्व्वसदार्यशिरीधार्यचरण आचार्यवर्य श्री महाप्रभु जी ने युगल स्वरूप की सेवा और भावना ही अपने सप्रदाय मे मुख्य मानी है तथापि प्रचार बालसेवा और बालभाव का किया है। इस का कारण यही है कि ससार के स्वभावदुष्ट जीव इस उत्तम रस के अधिकारी नहीं है। उन की प्रवृत्ति सहज ही नीच है और चित्त सांसारिक विषयो से कलुषित है तो वे लोग यदि यह रहस्य कहै सुनै तो उलटे अपराधी हों। यह तो जलकमल की भॉति जो भक्त ससार मे रहते हैं उन्हीं के कहने सुनने के योग्य है, क्योकि सिगार भावना सिहनी का दूध है, जो या तो सिह के बच्चो के मुँह मे ठहरे या स्वर्ण के पात्र मे। और पात्र मे रक्खो तो फट जाय वैसे ही यह उत्तम रस पात्र बिना नहीं ठहरता। और बाल भाव तो गऊ का दूध है अनेक प्रकार के सत् पात्र मे ठहर सकता है यद्यपि नास्तिक इत्यादि खटाई और वहिर्मुख से पीतल के पात्र मे इस को भी विकार होता हैं तथापि सर्व साधारण मे इस के कहने सुनने वालो का सुनना तो मानो अपने माता पिता का रहस्य उद्घाटन करना है। इस के तो जो अधिकारी हो उन्हीं से कहना सुनना योग्य है। इस मेरे लिखने का तात्पर्य यह कि जिन के पास यह ग्रंथ रहे वह इस को किसी साधारण स्थान मे वा साधारण लोगो के हाथ मे न फेक दे वरच इस को बहुत यत्नपूर्वक रखें।

ऐसे ही युगल स्वरूप के चरणचिन्ह वर्णन मे भक्त सर्वस्व, श्री महाप्रभु जी के वर्णन मे श्री वल्लभीयसर्वस्व, चारो सप्रदाय के सविस्तर वर्णन में वैष्णवसर्वस्व और भगवद्भक्ति निरूपण में तदीय सर्वस्व, भक्ति सूत्र का भाष्य, चद्रावली नाटिका और अनेक लीला तथा रहस्य के गद्य पद्य मय ग्रथ मेरे पास प्रस्तुत हैं। जिन भवदीय लोगो को देखने की इच्छा हो अनुग्रह करके मुझसे मँगवा ले।

भाद्रपद शुक्ल ८ }
सं० १९३३ } हरिश्चंद्र

मूर्त्तिपूजन का निषेध करनेवाले दयानद प्रभृत लोगो के गले की

दूषणमालिका

श्री श्रीवल्लभोविजयते ।

भूमिका

अथ दयानंदनामी क्या जाने कौन जाति वा किस आश्रम के कोई नग्न पुरुष सब देशो मे भ्रमण करते हुए सनातन सधर्म्म रूपी सूर्य्य को राहु की भॉति ग्रास करते हुए मूर्खों और आलस्य से भरे हुए जीवो के हृदय वस्त्र को अपने रग मे रगते हुए इर्मा बहाने अपना नाम लोगो मे विदित करते हुए और अपने वाक्य बना के आडम्बर से साधु लोगो का हृदय दहन करते हुए काशी मे आये और दुर्गाकुण्ड निवासियो के सहवासी हुए और उनने जो व्यर्थ उपद्रव किये वह सब पर विदित हैं अब उनने एक छोटी सी पुस्तक छपवाकर लोगो पर यह विदित करना चाहा है कि मै हारा नहीं इस से मैंने ऐसा विचार किया कि ऐसे मनुष्य से सम्भाषण करना उचित नहीं और पत्रद्वारा शास्त्रार्थ करना जिसमे सब लोगो पर सदसत् का प्रकाश और हारने जीतने का निश्चय हो जाय इस हेतु यह दूषणमालिका उनके गले मे पहिनाई जाती है। उनको उचित है कि इन सब प्रश्नो का प्रति पद उत्तर दे और इसी प्रकार से बराबर पत्रद्वारा शास्त्रार्थ होय और इतने प्रश्नो का एक जीतने के इश्तिहार की भॉति उत्तर न दिया जाय क्योकि इन शब्दो के प्रति शब्द का उत्तर न देने से परास्त समझे जॉयगे और प्रश्नोत्तर करते करते जो थक जाय और जिसकी बुद्धि मे उत्तर की युक्ति न आवै वह हारा समझा जायगा ।

१८७० ई० काशी — हरिश्चंद्र

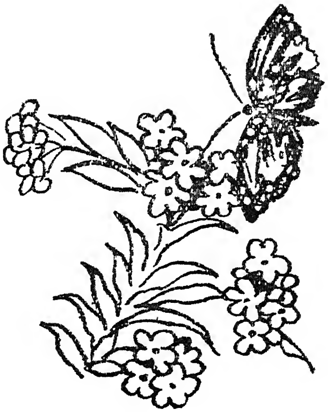

दूषणमालिका

१ आपने जो पुस्तक छपवाई है उसमे वेद के मत्र हैं सो वेद के मत्र शूद्रों तथा म्लेच्छादिकों के हाथ मे देने से आप को दोष हुआ कि नहीं।

२ आप कौन आश्रम और किस जाति के है और किस धर्म को मानते हैं जो कहिये कि हम वेदधर्म को मानते है तो वेदधर्म को मानना इस मे क्या प्रमाण और खीष्ट और मुहम्मदी मत को न मानना इसमे क्या प्रमाण। जो कहिये कि हम उसी कुल मे उत्पन्न हैं इससे यही धर्म मानना योग्य है तो आप मूर्त्ति पूजक के वश में हो कि नहीं।

३ जो आप कहैं कि हम अमुक जाति के थे अब योगी हुए हैं तो आप के पिता पुरुषा सब उसी जाति मे उत्पन्न हुए इसको किसने देखा है और उस मे क्या प्रमाण है।

४ जो कहिये कि शिष्टाचार प्रमाण है और हम सुनते आते हैं कि हम अमुक वशीय हैं तो इसी भाँति मूर्त्ति पूजनादि शिष्टाचार क्यो नहीं मानते।

५ जो कहो कि वेद नहीं है तो दयानंद स्वामी अमुक वश मे भये यह वेद मे कहाँ है।

६ आपने सम्पूर्ण वेद देखा है।

७ जो कहिये कि वेद बहुत है और लुप्त प्राय है इस से सब नहीं देखा है तो वेद मे अमुक वस्तु नहीं यह कहना व्यर्थ हो जाता है।

८ जो आप वेद जानते हैं तो उन के भेद कहिये।

९ बारहो उपनिषत् किन किन ब्राह्मणो वा संहिता के अंत भाग है।

१० जो कहिये कि अमुक के हैं तो वे सब वेद के भीतर हैं या बाहर। जो भीतर हैं तो अश्वमेध प्रकरण मे जब एक बेर सब वेदो को गिनाय गये तो फिर वेद के बाहरवाली कौन ब्रह्मविद्या थी जिसे पुराण के नाम से चर्व्वित चव्वर्ण किया।

११ अश्वमेध प्रकरण मे पुराण शब्द का अर्थ ब्रह्मविद्या है इस मे कौन सा प्रमाण है और बसुरुद्रादि शब्द का अर्थ परमेश्वर ही है लिंगधारी देवता नहीं इस मे क्या प्रमाण और वेद मे जहाँ सहस्रनयन वज्रपाणि इत्यादि विशेषण दिये वहाँ क्या व्यवस्था और जो व्यवस्था आप करे वही ठीक इस मे क्या प्रमाण।

१२ और भी कई स्थान पर पुराण का अर्थ प्राचीन और इतिहास ही है इस का प्रमाण।

१३ ऋग्वेद के कै विभाग है और इसमे कितनी शाखा और कितनी संहिता और कितने उपनिषत् और कितने ब्राह्मण इत्यादि हैं कहिये।

१४ और इन सब के आदि अंत के मंत्र सूचना के हेतु कहिये और इन की पुस्तकें कहा लब्ध होगी और आपने इन सबो को किससे अधीत किया है।

१५ इसी भाँति यजुर्वेद का सब वृतांत कहिये।

१६ ऐसेही सामदेव का कहिये।

१६ इसी प्रकार व्यौरेवार अथर्वेद का संपूर्ण वृतांत कहिये।

१८ जो कहियेगा कि एक मनुष्य सब नहीं जान सकता इससे हम सब नहीं जानते तो ७ वे प्रश्न का दोष आप के माथे पड़ेगा।

१६ इन चारो वेदो को कौन स्वर से पढना चाहिये और उन के स्वर की रीति वेद मे किस स्थान पर लिखी है

२० वे सब स्वर जो आर्ष रीति के हैं सोई हैं या कुछ पलट गये। जो कुछ पलट गये तो इन के पलट जाने मे क्या प्रमाण और जो वेही हैं तो उन के वे ही होने मे और न पलट जाने मे क्या प्रमाण।

२१ वेदो के या मन्त्रो के आप जो अर्थ करे सोई अर्थ है दूसरा अर्थ नहीं इस मे क्या प्रमाण।

२२ आपने ११ ग्रथ आष माने उनके अतिरिक्त ग्र थ अप्रमाण हैं इसमे क्या प्रमाण।

२३ ऋग्वेद का उपवेद आयुर्वेद है इसमे क्या प्रमाण और जो आयुर्वेद प्रचलित है वही प्राचीन है इसमे निश्चायक क्या।

२४ जो कहिये कि उसका प्रमाण उसी मे है तो सब पुराणो मे भी पुराणो की प्रशसा है इस हेतु इस मे श्रुति प्रमाण दीजिये।

२५ चरक आर्ष है इस मे श्रुति प्रमाण दीजिये।

२६ सुश्रुत आर्ष है इस मे श्रुति प्रमाण दीजिये।

२७ धनुर्वेद ही यजुर्वेद का उपवेद है इस मे प्रमाण।

२८ धनुर्वेद का अब कौन ग्रथ मिलता है बताइये और जो मिलता है तो वही आर्ष है इस में प्रमाण दिखलाइये।

२६ जो कहिये कि धनुर्वेद के ग्रंथ लुप्त होगये तो आप इस विषय के अज्ञ ठहरे तो फिर ७ प्रश्न का दोष पडा।

३० सामवेद का उपवेद गान है इस मे श्रुति प्रमाण दीजिये।

३१ गान विद्या के कौन ग्रंथ आर्ष इस मे भी श्रुति पूर्वक कहो।

३२ अथर्ववेद का उपवेद शिल्प है इस मे श्रुति प्रमाण दीजिये।

३३ शिल्प विद्या मे कौन-कौन ग्रथ मिलते हैं और वे श्रुति समत भी हैं इस मे प्रमाण कहिये।

३४ चारो उपवेद जो आप न जानने होगे तो उस विषय के अज्ञ होने से ७ प्रश्न का दोष पड़ेगा।

३५ शिक्षा का कौन ग्र थ है और उसके आर्ष होने मे श्रुति प्रमाण दीजिये।

३६ कल्प जो प्रचलित है सोई आर्ष है इस मे श्रुति प्रमाण दीजिये और कल्प के कौन ग्रथ मिलते हैं कहिये ।

३७ अष्टाध्याई आर्ष है इस मे श्रुति प्रमाण कहिये ।

३८ महाभाष्य प्रमाण है इस मे श्रुति प्रमाण कहिये ।

३९ निरुक्त कौन ग्रथ प्रचलित है और वही आर्ष भी इसमे युक्ति और प्रमाण दीजिये ।

४० छद के कौन ग्रथ आर्ष हैं और उनके आर्ष होने मे क्या प्रमाण और उनके स्वरूप बदले नहीं इसमें श्रुति प्रमाण दीजिये ।

४१ भृगुसहिता आर्ष है इस मे श्रुति प्रमाण दीजिये और प्रचलित भृगुसहिता वही प्राचीन भृगुसहिता है इस मे युक्ति कहिये ।

४२ ये बारह उपनिषत् वेदात शास्त्र है यह बात कहाँ लिखी है इस मे श्रुति प्रमाण दीजिये ।

४३ शारीरिक सूत्र आर्ष है इसमे प्रमाण दीजिये और यह वही सूत्र है जो व्यास ने कहा इस मे युक्ति कहिये ।

४४ कात्यायन आदि सूत्र आर्ष हैं इन मे प्रमाण कहिये और आदिपद से आप और किसे लेते है ।

४५ योगभाष्य आर्ष है इसमे श्रुति प्रमाण दीजिये ।

४६ मनुस्मृति यह वही है जो मनुने कहा है कालबल से बदली नहीं इस मे युक्ति और श्रुति प्रमाण दीजिये ।

४७ मनुस्मृति मे जिन वाक्यो को आप नहीं मानते वे कल्पित हैं इस मे प्रबल युक्ति और श्रुति प्रमाण दीजिये ।

४८ यही महाभारत महाभारत है इसमे क्या प्रमाण और कौन सी युक्ति है ।

४९ महाभारत में जिन श्लोको को आप कल्पित मानते हैं उनके कल्पित और बाकी आर्ष होने मे कौन प्रमाण और कौन सी युक्ति है ।

५० श्रीमद्भगवद्गीता मे श्रीभगवान ने जो "मे" मत् "मा" इन शब्दों से अपनी भक्ति यही परम धर्म है यह कहा है यह प्रमाण है या नहीं ।

५१ जो कहो कि "मे" इत्यादि शब्दों का अर्थ आत्मा है तो और सौ स्थान पर जहाँ ये शब्द आये हैं वहाँ इनका आत्मा अर्थ क्यों नहीं

होता और दूसरे स्थान पर इन शब्दो का अर्थ अपना मुझे होय श्री-मद्भगवद्गीता ही मे आत्मा अर्थ होय इसमे प्रमाण और प्रबल युक्ति दीजिये ।

५२ इन ऊपर के लिखे हुए ग्रथो को आप सब भाँति से जानते हैं कि नहीं । जो सब को न जानियेगा तो सर्वज्ञ न ठहरियेगा और जो सर्वज्ञता बिना कोई बात कहियेगा तो ७ प्रश्न का दोष पडेगा ।

(इन ऊपर लिखे ग्रथो को दयानद प्रमाण मानते है)

५३ शिष्टाचार प्रमाण है कि नहीं ।

५४ जो कहिये कि जो अविरुद्ध अर्थात् वेद मे लिखा है वह प्रमाण बाकी अप्रमाण तो आप नित्य उठ के सब वेद मे लिखी हुई बाते करते है तो इन सब बातो को वेद से सिद्ध कीजिये कि आप मट्टी लगाते हैं सो वेद मे कहाँ लिखा है, आप कौपीन धारण करते है यह कहाँ लिखा है, मै एक दिन आप के दर्शन को गया था उस दिन आप बाजार के लडडू और गुलाबजामुन खाते थे यह कहाँ लिखा है, और उस दिन आप पीतल की लोटिया मे जल पीते थे यह वेद मे कहाँ लिखा है, आप मूर्ति पूजन और पुराणो का निषेध करते है यह कहाँ लिखा है ।

५५ जो कहिये यह तो मनुष्य की परपरा प्राप्त ही है तो मूर्त्तिपूजन भी परपरा प्राप्त है और शिष्टाचार अवश्य माननीय है और भी इसमें यह बात है कि मूर्त्ति पूजन का यद्यपि इस लोकमे कुछ फल न हो तथापि यदि परलोक मे इसका फल सत्य हुआ तो आप फिर महापाप के भागी हुए और जो न सत्य हुआ तो हम लोगो की कुछ हानि नहीं बल्कि शिष्टाचार मानने से हमारी प्रशसाही होगी ।

५६ ये यथा माम्प्रपद्यन्ते तां स्तथैव भजाम्यह । इस भगवत् प्रतिज्ञा का क्या आशय है और यथा शब्द के अतर देवतादिक और मूर्त्ति आदिक नही है इसमे प्रमाण पूर्व्वक नियम कहिये ।

५७ कालाग्निरुद्रोपनिषत् और तापनीयादिक श्रुति को आप क्यो नही मानते इस मे श्रुति प्रमाण दीजिये ।

५८ सब त्रैवर्णी के वश वेदी है इस मे क्या प्रमाण युक्ति पूर्व्वक कहिये ।

तहक़ीक़ात-पुरी की तहकीकात

सं० १८२८

सन् १८७१ ई० में बनारस लाइट

प्रेस से प्रकाशित हुआ।

तहकीकात पुरी की तहकीकात

इसके पूर्व मे कि मै 'तहकीकात पुरी' पर कुछ अपनी अनुमति प्रकट करूँ, मै उसी तहकीकात पर कुछ विचार करता हूँ जिसे देख के लोग उसका सपूर्ण वृत्तात जान जायँ और धोखा न खाय।

अब पहिले ही से विचार कीजिए इसका नाम 'तहकीकात पुरी' है धर्म विचार की तो पुस्तक और सबके पहिले फारसी शब्द 'बिस्मिल्ला गलत'। इसको जाने दीजिए पुस्तक से आरभ कीजिए।

इस पुस्तक मे पहिले ही लिखा है 'काशी धर्म सभा निर्णय:' अब कहिये किस मिती की धर्म सभा मे निर्णय हुआ है कुछ दिन मिती भी है कि यो ही धर्म सभा का ध्यान करके निर्णय किया गया है। जो हो। आगे उसमे लिखा है, यथा नियमित भोगराग वितरण सरभ्रणाय श्री जगन्नाथ मदिरे श्री जगन्नाथ समकाल स्थापित भैरवोत्पाटनं-कैश्चिद्विद्वेषिभि: कृतन्ततत्स्थापनाय यत्र श्री मोहनलाल शर्मा पुरींगत्वा इत्यादि। वाह वाह क्या सुदर सस्कृत वैयाकरण लोगो के देखने योग्य है क्या कहूँ स्थान थोड़ा है नहीं तो प्रति पद उद्धृत करके दिखा देता। इसका अर्थ यह है कि भैरव की मूर्त्ति श्री जगन्नाथ जी के समकाल से स्थापित थी सो अब उच्छिन्न हो गई। पंडित जी ने बिना जगन्नाथ

महात्म देखे इतना परिश्रम क्यों व्यर्थ किया भला प्रत्यक्ष नहीं तो सपने मे तो देख लेते। हाय मुझे इनके इस व्यर्थ परिश्रम का सोच होता है और सुनिये इस व्यवस्था के नीचे लिखा है कि 'गवर्नमेंट को इसमे सहायता देनी उचित है, छिः छिः गवर्नमेंट को क्या पड़ी है कि इसके बीच मे कूदैगी। यह दशा तो जितने पृथ्वी पर मंदिर है सब में है। जब गवर्नमेंट सब पर हाथ लगावैगी तब इधर भी देखैगी, यह भी हुआ। इसके नीचे श्री काशी धर्म सभासद प० बस्ती राम जी की सम्मति है। अब मै फिर पडित जी से पूछता हूॅ कि ससार मे जितनी सभा हैं उनकी यह रीति है कि लेखाध्यक्ष वा सभापति का अत मे हस्ताक्षर होता है सो यह धर्म सभा के किस नियम मे लिखा है कि एक सभासद भी सम्मति कर सकता है और किस सभा में आपने इस व्यवस्था पर सभासदो से सम्मति ली थी। जो कहिए कि मैंने आप ही लिखा है तो बताइए कि धर्म सभा के प्रत्येक सभासद को कितनी व्यवस्था देने का अधिकार है और आप की धर्म सभा के कितने सभासद है। वाह वाहरे धर्म सभा जिसके ऐसे मनमाने नियम, इसको भी जाने दीजिये। इसके आगे एक दूसरी संस्कृत व्यवस्था है जिसमे दो प्रश्नो के उत्तर हैं—पहिला जो कोई औद्धत्य से किसी देव मूर्त्ति को उखाड़ दे तो उसको क्या दोष है। इसका उत्तर देने के पहिले मै पूछता हूॅ कि वह देव मूर्त्ति स्थापित थी इसमे कौन प्रमाण या बिना बात ही कहना कि विश्वनाथ जी के सिर पर एक गरुड़ की मूर्ति थी। उसको शैवो ने तोड़ के फेक दिया हम फिर बैठावेगे। जो कहो कि प्राचीन काल से न थी तो किसी को उसका उखाड़ना भी तो अयोग्य है। मै कहता हूॅ कि पहिले तो किसी की स्थापना ही मे प्रमाण नहीं और जो किसी ने स्थापना किया तो वह योग्य है वा अयोग्य। जैसा किसी शिव जी से बडे देवता के ऊपर किसी क्षुद्र देवता या किसी विष्णु गण की मूर्ति बल से बैठा दे तो वह योग्य होगी वा अयोग्य। मै कहता हूॅ अयोग्य ही होगी। इसमे प्रमाण यही है कि किसी बडे देवता के सिर पर या परम निकट किसी क्षुद्र देवता की मूर्ति अगी भाव से देखने मे नहीं आती। जाने दीजिये इस सस्कृत व्यवस्था का विचार मत कीजिये क्योकि इस पर बड़े बडे लोगो के हस्ताक्षर है और आगे

विचार कीजिये। इस तहकीकात की हिंदी के पूर्व दो श्लोक लिखे हैं जिनमें पहिलेका यह अर्थ है। हम लोग अद्वैतवादी विष्णु, शिवके ईश्वरता का विचार नहीं करते पर जो लोग शिव जी से द्वेष करते हैं उसकी हम दुरुक्ति काटते हैं। इसमें कोई विष्णु द्वेषकी शंका न करें। महाराज अद्वैतवादी जी आप पक्के नहीं हैं अभी कच्चे अद्वैतवादी हैं क्योंकि आप अभी साहेब लोगों के संग नहीं खाते। हाँ और यह तो कहिये कि जब आप अद्वैतवादी हैं तब आप को दुरुक्ति और उसका काटना और विष्णु द्वेष की शंका की डर कहाँ से आई क्योंकि-का विधिः को निषेधः। स्मरण कीजिये आप जैसे हों उससे मुझे कुछ काम नहीं परंतु पंडितों की तो समान दृष्टि चाहिए। शुनिचैवश्वपाके च पण्डितास्समदर्शिनः आप तो समान दृष्टि वाले हैं आप से और दुरुक्ति छेदन से क्या काम और फेर यह तो कहिये कि आप श्री जगन्नाथ जी के भोग का प्रबंध करते हैं कि शिव विष्णुका भेदाभेद करते हैं। यहाँ शिव का द्वेषी कौन है जिसकी दुरुक्ति काटने को आप प्रवर्त्त भए हैं। जो कहिये कि महंत और पंडे तो आप उनकी दुरुक्ति काटते हैं कि उनकी जीविका काटते हैं, यह केवल उन की मनोवृत्ति इसी बहाने प्रकट हो गई।

जो हो अब मैं आगे इस पुस्तक की भाषा पर विचार करता हूँ। पर इससे कोई यह न समझै कि मैं केवल द्वेष बुद्धि से लेखनी लिए हूँ। ऐसा कदापि नहीं क्योंकि जो विषय कि मैं इस स्थान पर नहीं खंडन करता उनसे समझिये कि मेरी संमति है मुझे केवल इस पुस्तक के सब दफों में से केवल २, ३ और ६ दफे में कुछ कहना है। और शेष पर मैं पूर्ण रीति से संमति करता हूँ क्योंकि पुरी के और सब अन्याय उसमें ठीक ठीक लिखे हैं। जैसा दूसरे दफे में लिखते हैं कि 'श्री जगन्नाथ जी के मंदिर में रत्न सिंहासन पर प्राचीन काल से ५ मूर्ति स्थापित थीं जैसा श्री जगन्नाथ १ बलभद्र २ सुभद्रा ३ सुदर्शन ४ भैरव ५। और उस मूर्ति को वैष्णवों ने बंगला सन् १२०८ में उखाड़ के फेंक दिया।'

तीसरे दफा में फिर लिखते हैं कि पं० बस्तीराम जी के बयान से जाना गया कि मूर्ति पहिले से थी पर किसी भाँति उसका अंग भंग हो

गया तब महाराज मानसिंह ने जीर्णोद्धार किया। उसी को आचारियो ने तोड़ा। इस दफे मे साम्प्रत काल के श्री महाराज सवाई रामसिंह की स्तुति भी है।

अब मैं इसका विचार करता हूँ, सुनिये। पहिले तो विष्णु के समान कोई देवता बैठ ही नहीं सकता। क्योंकि विष्णु के समान अन्य देव तुलना करने से बड़ा दोष होता है जैसा वशिष्ठ—श्री महाविष्णुमन्येन हीनदेवनदुर्मतिः। साधारण सकृद्ब्रूते मोंत्यजोनात्यजोंत्यजः। और भी वासुदेव परित्यज्य योन्यदेवमुपासते। तृषितो जान्हवीतीरे कूपङ्खनति दुर्मतिः।

दूसरे कहीं भैरव और विष्णु को एक संग बिठाने की विधि नहीं है। तीसरे शैव पुराणो से ज्ञात हुआ कि भैरव विष्णु का अवतार है इससे जब साक्षात् विष्णु विराजते हैं तब भैरव का क्या काम है। चौथे जगन्नाथ माहात्म्य के देखने से जाना गया कि जगन्नाथ जी नृसिंह के स्वरूप हैं और नृसिंह से भैरवादिक डरते है जैसा इस वाक्य से स्पष्ट है। डाकिनी शाकिनीभूत प्रेतविघ्नपभैरवा। नृहरेर्गर्ज्जनश्रुत्वा पलायन्तेपराङ्मुखाः ।

पॉचवे तामस देवताओ की पूजा का निषेध है इससे भैरव सात्विको के पूजने योग्य नहीं जैसा श्री मद्भागवत मे लिखते हैं। मुमुक्षवोघोर रूपान् हित्वाभूतपतीनथ। नारायण कलाश्शान्ता भजन्तिह्यनुसूयवः।

छठे पचायतन बिना केवल दो देवता की विधि किसी शास्त्र मे देखने मे नहीं आती।

सातवे विष्णु के आवरण मे जहॉ भैरव की पूजा का विधान है वहॉ भैरव को बराबर बिठाना नहीं लिखा है। दुर्गा और भैरव की पूजा नीचे करनी लिखी है।

आठवे जो आवरण पूजा मे भैरव वहॉ हैं तो दुर्गा गरुड़ विष्वक्सेन नारदादिक क्यौ नहीं हैं।

नवे बहुभक्त होना यह बड़ा दोष है। एकोदेवः केशवोवा शिवोवा। अत्रिस्मृति श्लोक ३३८। बहुभक्तोदीनमुखो मत्सरीक्रूर बुद्धिमान्। एतेषानैवदातव्यः कदाचिच्च परिग्रहः।

दसवे एक भगवान सर्व व्यापी है उसी की पूजा मे सबकी पूजा हो जाती है जैसा—श्रुति । एकोदेवस्सर्वभूतेषु गूढः सर्व व्यापी भूतान्तरात्मा । कर्माध्यक्षस्सर्वभूताधिवासस्साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च ।

अनेक नाम उसी के हैं जैसा श्रुति । सुपर्णं विप्राः कवयोवचोभिरेक सत बहुधा कल्पयति । जैसा दूसरी श्रुति मे । इद्र मित्रम्वरुणमग्निमाहुरथा दिव्यः ससुपर्णो गरुत्मान । और यह एक देव भगवान नारायण ही हैं जैसा श्रुति स्मृति कहती हैं । एको हवै नारायणो आस । सर्वे वेदायत्पद मा मनन्ति । वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्य. । मत्तः परतर नान्यत् किंचिदस्ति धनजय इत्यादि वाक्यो से स्पष्ट है तो अलग भैरव की पूजा अप्रयोजन है । उसी की पूजा मे सबकी पूजा आ गई । जैसा पुराण मे लिखते हैं—यथाहि स्कन्द शाखानान्तरोमूलावसेचन । विष्णोराधन तद्वत्सर्वेषामात्मनश्चहि । इत्यादि ।

ग्यारहवे भैरव शिव के स्वरूप है इनकी पूजा बिना भस्म त्रिपु ड के नहीं जैसा बिना भस्म त्रिपुड्रेण बिना रुद्राक्ष मालया । पूजितोपि महादेवो नस्यात् पुन्य फल प्रदः इत्यादि और विष्णु पूजन मे त्रिपुड का निषेध है जैसा आचार माधव के दूसरे अध्याय में बोधायन । ब्राह्मणानामयन्धर्मो यद्विष्णोर्लिंग धारणं । मदन पारिजात में ब्रह्मपुराण का वाक्य है उर्द्ध पुण्ड्रन्द्विज. कुर्यात् । ब्रह्मरात्र का वाक्य—धारयेत्तत्रियाद्योपिविष्णुभक्तोभवेद्यदि । निर्णय सिंधु मदन पारिजात । पृथ्वी चद्रोदय मे भी—उद्ध्र्वञ्चतिलककुर्य्यान्नकुर्य्याद्वै तृपुंड्रकं ! आचारार्क कमलाकरान्हिक मे भी उद्ध्र्वोपु ड्रविहीनस्य स्मशान सद्दशम्मुख । सार सग्रह मे । ब्रह्मरात्र मे भगवान का वाक्य योनधारयते मर्त्यो मामक चिन्हमीदृश । तत्यजामि दुरात्मानंमदीयाज्ञाऽतिलघिन । तो इन वाक्यो से वैष्णवो को और विष्णुपूजन में ऊर्ध्वपुड्र अवश्य आया 'भस्मी भवति तत्सर्व्वमूर्ध्वपु ड्रविनाकृते' और भैरव के पूजन मे त्रिपु ड्र की नित्यता तो अब कहिये एक कालावच्छिन्न पूजा कैसे कीजियेगा और एक स्थान पर भैरव विष्णु की मूर्ति कैसे बैठाते हो ।

बारहवें भैरवादिक उग्र देवता की पूजा तो सब लोगो को करनी ही अयोग्य है फिर उनको रत्न सिहासन पर बिठाना और जगन्नाथ जी

के संग पूजा करना कहाँ हो सकता है जैसा श्रीमद्भागवत में। मुमुक्षवो घोररूपान् हित्वा भूतपतीनथ। नारायण कलाश्शान्ता भजन्तिह्यनुसूयव॰ ॥ २५ ॥ रजस्तम. प्रकृतयस्समशीलाभजन्तिवै। पितृभूतप्रजेशादीन् श्रियैश्वर्य्य प्रजेप्सवः ॥ २६ ॥ तथा सार संग्रह में वशिष्ठस्मृति। रजस्वलांसूतिकाञ्च श्वानङ्काकञ्चगर्दभ। कुक्कुटञ्विडवरा-हञ्च पूपपाखण्डिनन्तथा। वहिर्देवालक स्पृष्ट्वा सबासाजलमाविशेत्। गणेशभैरव दुर्गा रुद्रादीनुग्रदेवतान्। योर्चयेद्भक्तिमान्विप्रो सर्वदेवा लकस्मृतः। और भैरवादिकों के पूजन से वैसी ही गति मिलती है परम पद नहीं मिलता है जैसा श्रीमुख से आज्ञा करते हैं। ७ अध्याय में। कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञाना: प्रपद्यन्तेऽन्य देवता। ततंनियममास्थाय प्रकृत्यानियताः स्वया ॥ २० ॥ योयो यांयातनु भक्तः श्रद्धयार्चितुमि-च्छति। तस्यतस्याचलीं श्रद्धां तामेवविदधाम्यहं ॥ २१ ॥ सतयाश्रद्धया-युक्तस्तस्याराधनमीहते। लभतेच ततः कामान् मयैव, विहितान्हितान् ॥ २२ ॥ अंतवत्तुफलतेषा तद्भवत्यल्पमेधसः। देवानदेवयजोयान्ति मद्भक्तायान्तिमामपि ॥ २३ ॥ इससे मोक्ष की कामनावाले को दूसरे देवता की पूजा सर्वथा अयोग्य ही है और मोक्ष दान शक्ति केवल भग-वान् ही को है जैसा आचार प्रकाश से मत्स्यपुराण का वचन। आरोग्यं भास्करादिच्छेत् धनमिच्छेत् हुताशनात्। ज्ञानम्महेश्वरादिच्छेन्मोक्ष मिच्छेज्जनार्दनात् ॥ दक्ष स्मृति में भी अंत दशा में। योगमभ्यसमा-नस्य ध्रुवकश्चिद्दुपद्रवः। विद्यावायदिवाविद्या शरणन्तु जनार्दन। श्रुति भी कहती है यो ब्रम्हाणं विदधाति पूर्वं योवै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै तहदेवमात्म बुद्धि प्रकाशं मुमुक्षुर्वैशरणमहम्प्रपद्ये। इससे एकांत चित्त होकर भगवत्सेवा ही मुख्य है। बिना अनन्यता के फल नहीं होता जैसा श्री मुख से गाते हैं। ९ वे अध्याय में। महात्मनस्तुमाम्पार्थ दैवीं-प्रकृतिमाश्रिताः। भजन्त्यनन्य मनसो ज्ञात्वाभूतादिमव्यय ॥ १३ ॥ अन-न्याश्चिन्तयन्तो मां येजनाः पर्य्युपासते। तेषान्नित्याभियुक्तानां योग-क्षेमंवहाम्यहं ॥ २ ॥ अपिचेत्सु दुराचारो भजतेमामनन्यभाक्। साधु-रेव समन्तव्यस्सम्यग्व्यवहितोहिसः ॥ ३० ॥ क्षिप्रभवति धर्मात्मा शश्व-च्छान्तिनिगच्छति। कौन्तेयप्रतिजानीहि नमेभक्तः प्रणश्यति ॥ ३१ ॥ तो इन बातों से यह निश्चय है कि जो लोग मोक्ष चाहने वाले हैं सर्व्वं

देव मय सर्वाराध्य मुमुक्षु शरण श्रीकृष्णचन्द्र ही की पूजा उपासना करें और आग्रह कलुष से कलंकित चित्त को इन वाक्यों से स्वच्छ करें और जो किसी प्रकार की कामनादिक हो तो अपने घर में चाहें जिसकी पूजा करें। श्री जगन्नाथ जी के रत्न सिंहासन पर तो भैरव बैठाने का मनोर्थ चित्त से दूर करें क्योंकि उपास्य एक भगवान कृष्ण चंद्र ही हैं दूसरा सर्वथा नहीं है जो इतने पर भी मेरी बात न मानें तो इन वाक्यों के समूह को कान खोल के सुनैं। सार संग्रह में प्रजापति स्मृति। नारायण परित्यज्य हृदिस्थं प्रभुमीश्वर। यान्यमर्च्चयतेदेवं परबुध्यासपापभाक्॥ वशिष्ट भी। नारायणः परं ब्रह्म ब्राह्मणानांहिदैवत। भारत में भी। ब्रह्माशितिकण्ठच याश्चान्या. देवतास्मृता। प्रतिबुद्धान सेवन्ते यस्मात्परिमितम्फल। पद्मपुराण में भी नारायणः परं ब्रह्म विप्राणां दैवत हरिः। सएवपूज्योविप्राना पुरुषर्षभनेतरः। नान्यदेवंनिरीक्षेत नान्यदेवञ्चपूजयेत्। न चान्यप्रणमेद्विप्रो नान्यदायतनम्विशेत्। वाराह पुराण में—यत्सत्वसहहरिर्देवो हरिस्तत्परमपद। सत्वं रजस्तमश्चेति तृतयचैतदुच्यते। और कहाँ तक लिंगपुराण में भी प्रसिद्ध वाक्य देख लीजिये। उसका प्रसाद कौन लेगा क्योंकि वह तो रुद्रांश है और रण्यगर्भोरसजा तमसा शंकर स्वयं। सत्वेनसर्वगोविष्णुस्सर्वात्मा सदसन्मयः। सात्विकैस्सेव्यतेविष्णुस्तामसैरेव शङ्करः। राजसैस्सेव्यते ब्रह्मा सकीर्णैश्च सरस्वती। इस वाक्य को दोनो कानो से सुनिए। बौद्धोरुद्रस्तथावायुर्दुर्गागणपभैरवाः। यमस्कन्दौनैऋतश्च तामसा देवता स्मृताः। फिर पद्म पुराण में। यक्षराक्षसभूताद्या कूष्माण्डागणभैरवाः। नार्चनीयासदादेवि विष्णु लोकमभीप्सभिः। रजस्तमोभिभूताना-मर्च्चन प्रतिबिध्यते। रौरवन्नरक यान्तियक्षभूतगणार्च्चनात्। और भैरव तो कापालिकों के देवता हैं उसका पूजन तो वैष्णव स्मार्त सब को निषिद्ध है जैसा महामेरुतंत्र में संप्रदाय देवता प्रसंग में। कुलाचार्य्य स्तुवामाना सिद्धानाम्मुण्डमालिनी। तथा कापालिकानाञ्च देवता भैरव स्वयं। और कापालिकों के देवता भैरव हैं यह प्राचीन काव्यो में भी प्रसिद्ध है जैसा प्रबोध चंद्रोदय नाटक में तीसरे अंक में कापालिक का वाक्य। मस्तिष्कान्त्रवसाभिधारित महामांसाहुतिर्जुह्वतां। वन्हौ ब्रह्म कपाल कल्पित सुरापानेननः पारणा। सद्यः कृत्त कठोर कण्ठ बिगल-

त्कीलालधारोज्वलै । रच्योंनः पुरुषोपहार बलिभिर्देवो महाभैरवः ॥१॥ इस हेतु सतोमय श्रीकृष्ण की उपासना करो और वह आग्रह छोडो ।

तेरहवें जो भैरव रत्नसिंहासन पर बैठेगा तो फिर श्रीकृष्णातिरिक्त और देवता का विशेष करके रुद्र का प्रसाद निर्माल्य ग्रहण का निषेध है। जैसा नारायण भट्ट कृत धर्म प्रवृत्ति मे। पवित्रम्विष्णुनैवेद्यं सुरसिद्धर्षिभिस्मृत । अन्यदेवस्य नैवेद्यम्भुक्त्वाचान्द्रायण चरेत् । तथा स्कदपुराण के मार्गशीर्ष माहात्म्य मे भगवद् वाक्य । अन्येषान्देवतानाञ्च न गृह्णीयाच्चभक्षितं । अभक्तानांचपक्वन्न भुक्त्वा वैनरक व्रजेत् । फिर स्मृत्यर्थ सार मे और धर्मसिधु के तीसरे परिच्छेद मे। शैव सौर निर्माल्य भक्षणेचान्द्रायणी । प्रायश्चित्तेन्दु शेषर मे भी । रुद्रनिर्म्माल्यस्पर्श सचैलस्नान शैव सौर निर्म्माल्य भक्षणे चान्द्र । इत्यादि । स्मृत्यर्थ सार मे भी तथा श्राद्ध हेमाद्रि मे स्कदपुराण का वाक्य । स्पृष्ट्वारुद्रस्य निर्म्माल्य बाससाआप्लुतश्शुचिः । प्रायश्चित्त मयूष मे भी कालिका पुराण का यही वाक्य यो है। स्पृष्ट्वारुद्रस्यनिर्म्माल्य सवासाआप्लुतश्शुचिः । शिवपुराण मे भी शिव जी का वाक्य । अनर्हम्ममनैवेद्यम्पत्रम् पुष्पम्फलञ्जल । इत्यादि वाक्यो से स्पष्ट है कि जो भैरव रत्न सिहासन पर बैठेगा तो फिर महा प्रसाद कोई न लेगा और फिर भैरव की तृप्ति भी इन अन्नो से नहीं होती है उसकी तो मदिरा और मांस से होती है बिना वह दिये भैरव कभी न तृप्त होगा और जो मांस मदिरा दोगे तो भगवान विष्णु वहाँ न रहैगे। देखो भैरव का मांस प्रिय होना कुल धर्म सार धृतमहामेरु तत्र के वाक्य से स्पष्ट है। किं बेदैः किं पुराणैश्च किम्मन्त्रैश्चैवतर्प्पितः । चतुःषष्ट्युपचारैः किं कितथास्तवनादिभिः । विनाकुलोक्तविधिना रुद्रोभूतगणेश्वरः। न प्रीयते महादेवो भैरवः कुल कैरवः । शोणशोणितधारेण विमलेनपलेन च । प्रस्वदमेदपकेन तथास्थिनिचयेन च । छिधिभिधीतिवाक्येन खड्गानाचालनेनच । मुण्डानाकर्त्तनेनैव रुण्डानानर्त्तनेनहि । चटाचटेतिशब्देन अगानाङ्कदुकेनच । मदिराणा प्रवाहेन मधुकुडेनवैतथा । वाल्वासरितयाचैव मासवेनाधरस्यच । श्यामानादर्शनेचैव विलोमभगचुम्बने । मैथुनेमानिनीना च कन्याना कुचमर्द्दने । मुद्राणा भक्षणेचैव मत्स्यानाम्भोजनेनहि । गायकानान्तुगानेन नर्त्तकीनर्त्तनेन च । मृदगवेणुढक्काना वाद्येनतुमुलेन

च । जय भैरव घोषेण प्रीतस्याच्चण्डिकापति. । विनापञ्चमकारेण कुलस्यविधिनाविना । सर्व्वतः पूजितश्चापि नस्यात्तस्यफलप्रद । तस्मात्सर्व्व प्रयत्नेन मासमुद्रादिभिश्शिव । नित्य मा पूजयेद्देवि भैरव भय नाशन । इति ।

अब हम इन बाता को छोड के शुद्ध जगन्नाथमाहात्म्य से इस व्याख्या का विचार करते है । श्री जगन्नाथ माहात्म्य दो प्रचलित हैं एक तो छोटा लीलादि महोदय धृत सूत सहिता का दूसरा स्कदपुराण के उत्कल खड का । अब इन दोनो मे तो कहीं रत्न सिहासन पर भैरव का नाम नहीं है । इसके अतिरिक्त मनोरथ ग्र थ वृत मिथ्या पुराण के आग्रह खड के भैरव माहात्म्य मे कहीं लिखा हो तो लिखा हो । अब इस स्थान पर मै उन वाक्यो का लिखता हूँ सुनिये । सूत सहिता के माहात्म्य मे तो रत्न सिहासन पर सात मूर्ति लिखी है जैसा बलभद्र १ सुभद्रा २ श्री जगन्नाथ ३ चक्र ४ माधव ५ लक्ष्मी ६ सत्यभामा ७ 'एव सप्तविधामूर्ति ब्रह्मणः कर्योगत.' 'अयमप्तविधामूर्तिर्विधायभगवान् प्रभुः । अवतीर्णस्वयंवेद वेद्यश्चचतुर्भुज ' । इत्यादि वाक्य प्रसिद्ध है और उसके पॉचवें अध्याय के अत भाग म और छठे अध्याय के पूर्व मे लिखे है पुस्तक लेके देख लीजिए । अब उत्कल खड के माहात्म्य का वाक्य सुनिये । ५ अध्याय । एकदारुसमुत्पन्नाचतुर्द्धासम्भविष्यति । फिर उसी अध्याय मे । नीलाचलगुहासस्थै विभ्रद्दारुमयम्वपुः । आस्त-लोकोपकाराय वलेन च सुभद्रया । सुदर्शनेन चक्रेण दारुनानिर्म्मितेन च । फिर सातवे अध्याय मे । तदादेशाद्दारुमय प्रभोर्लिङ्ग चतुष्टय । फिर अठारहवे अध्याय मे । चतुर्मूर्तिस्सभगवान् यथापूर्वमयोदितः । फिर भी । ऋकवेदरूपीहलधृक् सामरूपोनृकेशरी । यतुस्सृष्टिस्त्वियम्भद्राच-क्रमाथर्व्वनस्मृत । भेदैश्चतुर्द्धा भेष्टो यमेकराशिरभेदत' । इत्यादि इस इतने बडे माहात्म्य मे पुस्तक भर मे भैरव का नाम कहीं नहीं है केवल एक स्थान पर पूजाङ्ग मे क्षेत्रपालादि को बलिदान लिखा है दूसरे तीसवे अध्याय मे मार्कंडेय की यात्रा मे मार्कंडेय के मत्र में भैरव शब्द पडा है और कहीं नहीं है फिर रत्नसिहासन पर भैरव बैठना कहॉ रहा ।

और जो आप कहते हैं कि पूजा शाक्त मत से होनी चाहिए यह तो केवल आप की तोतली बोली है नहीं तो विष्णु पूजा शाक्त रीति से आप न कहते और जगन्नाथ जी मे वैष्णवी विधि तो उक्त महात्म्य के इस वाक्य से सिद्ध है। यत्सर्व्वम्वैष्णवङ्कर्म्म प्रतिमारिक कल्पन। फिर। तेतुवैष्णवमार्गोक्ता' महाभोगोपृथग्विधा इत्यादि और भैरवी विधि और भैरव देवता तो चाडाला के अत्यजो के है इस बात को सुन के क्रोध मत कीजिए। ये कृत्य कल्पतरु नामक प्रसिद्ध स्मार्त्त ग्र थ के धरे हुए देवी पुराण के वाक्य को सुनिए। वर्णाश्रमविभेदेन देवा-स्थाप्य तु नान्यथा। ब्रह्मातुब्रह्मणैस्थाप्यो गायत्री सहित' प्रभुः। चतुवर्णै-स्तथा विष्णु प्रतिष्ठाप्यस्सुखार्थिभि.। भैरवोपियथावर्णैरन्त्यजानान्तथा-मत॥ इत्यादि।

महाप्रसाद को सब लग छूते हैं कुछ विचार नहीं करते यह सोचना तो केवल कूपमडूकता है क्योंकि दक्षिण मे बरदराज शेषशायी इत्यादि जितने वैष्णव तीर्थ है सबमे क्षेत्र के भीतर स्पर्शास्पर्श नहीं मानते तो कहिये अब कहाँ आप भैरवी क्षेत्र बनाइएगा। थोडा सा द्रव्य व्यय करके दक्षिण की यात्रा कीजिए तो महाप्रसाद की महिमा प्रगट हो और प्रसाद की ऐसी महिमा तो श्राद्ध सिद्ध ही है इसमे कौन सा सन्देह हो सकता है जैसा सार सग्रह मे पद्मपुराण का वाक्य। विष्णोर्न्निवेदितान्न यो नश्नातिस्पर्शशकया। वायमाविड्वराहश्च विष्टा-याजायतेक्रिमिः॥ तथा नारायणभट्ट कृत धर्मप्रवृत्ति मे—पवित्राम्विष्णु-नैवेद्य सुर सिद्धर्षिभि. कृत। नैवेद्य भक्षण विचार ग्र थ मे पद्मपुराण का वाक्य। रमाब्रह्मादयो देवास्सनकाद्याशुकादयः। श्री नृसिह प्रसादोय सर्व्वेगृह्णान्तु देवता॥ उत्कल खड के माहात्म्य के ३८ वे अध्याय मे। पाकसस्कारकर्तृणा मपर्कोचनदुष्यति। पद्मायास्सन्निधानेन सर्व्वेतेशुचयस्मृताः॥ सार सग्रह मे वाराह पुराण। नैवेद्यं जगदीशस्य चान्नपानादिकतुयत्। भक्ष्याभक्ष्यविचारस्तु नास्तितद्भोजनेद्विजाः। ब्रह्मवान्निर्विकार हि यथाविष्णुस्तथैवसः। विचार येप्रकुर्वन्ति तेनश्यन्ति-नराधमाः। उत्कल खड के माहात्म्य के ३१ अध्याय मे। चिरस्थमपि-सशुद्ध नीतचदूर देशतः। नीलाद्रिमहोदय के माहात्म्य के अध्याय मे। किमुक्तेनाचबहुनाचाण्डालस्पृष्टमेवहि। कुक्कुरस्यमुखाद्भ्रष्ट तग्राह्यन्दैव-

तैरपि। तस्मात्तदन्न सहसा प्राप्तमात्रतदाग्नियात्। विचारस्यनकर्तव्यान कर्तव्याकथञ्चन। जगन्नाथान्नमेतद्वैश्शुष्क कृत्वाथभक्तितः। देशान्तरे जनोयस्तु भक्षेत्प्रतिदिनद्विजा। सर्वपापविनिर्मुक्तस्सगच्छेत्परमपद॥ इत्यादि अनेक प्रज्वलित वाक्यो से आग्रहियो का हृदयान्धकार नाश होय और साधु लोगो को आनद होय और सर्व्वात्मा भगवान ससार की रक्षा करै।

सज्जन लोग इसमे की दुरुक्तियो को क्षमा करें क्योंकि यह तो प्रति उत्तर है स्वय कथन नहीं है।

हरि ॐ शांतिः शांतिः शांतिः।

अष्टादश पुराण की
उपक्रमणिका

सं० १९३३

श्रीहरिश्चन्द्र चन्द्रिका ख० २ स०
८-१२ सन्० १८७५ ई० में
प्रकाशित

भूमिका

व्यास जी के बनाए अठारह पुराण लोक मे प्रसिद्ध हैं। काव्य वाल्मीकीय रामायण, इतिहास महाभारत, अठारह पुराण, अठारह उप पुराण, पाँच पंचरात्र और पाँच सहिता इनकी समष्टि की संज्ञा पुराण है। अठारह उपपुराण, यथा १. आदि पुराण (सनत्कुमारोक्त) २. नरसिह पुराण ३ स्कन्दपुराण ४. शिव धर्म (नंदीशप्रोक्त) ५. आश्चर्य पुराण (दुर्वासा का कहा) ६. नारदपुराण ७ कपिल पुराण ८. वामन पुराण ९. वरुण पुराण १० शाम्ब पुराण ११ सौर पुराण १२. पराशर पुराण १३ भार्गव पुराण १४. मारीच पुराण १५. कालिका पुराण १६. देवी पुराण १७. माहेश्वर पुराण १८. पद्मपुराण। भास्कर, नन्दिकेश्वर, रहस्य, उशना और ब्रह्माड ये पाँच नाम उप पुराणो के और भी मिलते हैं।

१ वशिष्ठ पचरात्र २. नारदीय पंचरात्र ३. कपिल पचरात्र ४. गौतमीय पचरात्र और ५. सनत्कुमारीय पचरात्र और ब्रह्म, शिव, गौतम, प्रह्लाद और सनत्कुमार ये पाँच सहिता है। हमारे गाहकों में बहुत से लोगो की इच्छा होगी कि परिश्रम भी न करै और जान भी ले कि अठारहो पुराणो मे क्या है। हम उनकी इच्छा पूर्ण करने को पुराणो की यह उपक्रमणिका प्रकाश करते हैं, जिससे बहुत सहज मे लोग जान जायगे कि चार लाख श्लोक समूह के अठारह टुकड़ो मे क्या क्या विषय सन्निवेशित है।

२६३५३

अष्टादशपुराणोपक्रमणिका

प्रथम ब्रह्मपुराण

यह पुराण पूर्व एव उत्तर दो भाग मे विभक्त है। अत्रस्थ श्लोक संख्या १०००० दस सहस्र। सूत-शौनक सवाद मे नाना प्रसंग एवं विविध इतिहास वर्णित है।

पूर्व भाग—१. देवता एव असुर गणो की उत्पत्ति वर्णन २. दक्षादि प्रजापति की उत्पत्ति वर्णन ३ सूर्यवंश वर्णन एवं तन्मध्य मे श्रीराम का चतुर्व्यूह कथन ४. सोमवश वर्णन तत् प्रसग से श्रीकृष्ण चरित्र कथन ५. द्वीप कथन ६. वर्ष कथन ७ पाताल कथन ८. स्वर्ग कथन ९. नरक कथन १०. सूर्य स्तुति ११. पार्वती जन्म एवं विवाह कथन १२. दक्ष आख्यान १३. एकाम्र क्षेत्र कथन।

उत्तर भाग—१. पुरुषोत्तम वर्णन २ तीर्थयात्रा विस्तार कथन ३. यमलोक कथन ४. पितृश्राद्ध विधि ५. वर्णाश्रमाचार धर्मनिरूपण ६. विष्णु धर्म कथन ७. युगाख्यान ८. प्रलय कथन ९. योग कथन १०. साख्य कथन ११. ब्रह्मवाद कथन १२. पुराणाश कथन।

फल श्रुति—यह पुराण लिखाकर वैशाख मास मे स्वर्णयुक्त जल धेनु सहित पौराणिक ब्राह्मण को अर्चना पूर्वक दान करने एवं ब्राह्मण

भोजन कराने से चंद्र सूर्य स्थिति काल पर्यंत ब्रह्मलोक मे स्थिति होती है एव सयत होकर यह पुराण श्रवण वा पाठ करने से सकल धर्मफल लभ्य हाता है ।

द्वितीय पद्मपुराण

पॉच खड मे ५५००० पचपन सहस्र श्लोक। पच खड, यथा १. सृष्टि खड २. भूमि खड ३ स्वर्ग खड ४. पाताल खड ५. उत्तर खड।

प्रथम सृष्टिखड—पुलस्त्य भीष्म सवाद से सृष्ट्यादि का उपक्रम एव नाना धर्म आख्यान और इतिहास कथन। इस खड मे १. पुष्कर माहात्म्य विस्तार २. ब्रह्मयज्ञ विधि ३. वेदपाठादि लक्षण ४. दान विवरण ५. पृथक् पृथक् व्रत कथन ६. शैल जाया विवरण ७. तारकाख्यान ८. गोमाहात्म्य ९. कालकेयादि दैत्य वध १०. ग्रहो की पूजा एव दान विवरण है ।

द्वितीय भूमि खड—सूत-शौनक सवाद। १. पितृमातृ पूजा कथन २. शिवशर्मा कथा ३. सुव्रत चरित्र ४. वृत्रासुर वध ५. पृथक् वर्ण आख्यान ६. धर्म कथा ७. पितृशुश्रूषण कथन ८. नहुष कथा ९. ययाति चरित्र १०. गुरुतीर्थ निरूपण ११. राजा के सहित जैमिनि के सवाद मे बहुत सी आश्चर्य कथा १२. अशोक सु दरी की कथा १३. हुण्डदैत्य वध १४. कामदाख्यान १५. विहुण्ड वध १६. च्यवन कु जल का सवाद १७. सिद्धाख्यान १८. ग्र थ की फल श्रुति।

तृतीय स्वर्ग खड—ऋषि लोगो से सौति का कथा-प्रसग १. ब्रह्माडोत्पत्ति कथन २. भूमिलोक संस्थान ३. तीर्थ आख्यान ४. नर्मदा की उत्पत्ति ५. नर्मदास्थ तीर्थ उपाख्यान ६. कुरुक्षेत्रादि तीर्थ कथन ७. कालिदी की पुण्य कथा ८. काशी माहात्म्य ९. गया माहात्म्य १०. प्रयाग माहात्म्य ११. वर्णाश्रम धर्म एव योग निरूपण १२. व्यास-जैमिनि सवाद की पुण्य कथा १३. समुद्र मथन १४. व्रत कथन १५. श्रेष्ठ माहात्म्य स्तोत्र।

चतुर्थ पातालखड—१. श्रीराम का अश्वमेध एव राज्याभिषेक कथन २ अगस्त्यादि का आगमन ३. पौलस्ति का उपाख्यान ४. अश्वमेध करण देश ५. अश्वमेधीय घोटकगमन ६. नाना राज कथन ७. जगन्नाथ देव का वृत्तात ८. वृदावन का माहात्म्य ९. लीलावतारी की नित्य लीलानुकथन १०. वैशाख स्नान दान एव अर्चन ११. धरा-वराह सवाद १२. यम एवं ब्राह्मण की कथा १३. राजा का आचरण १४. श्रीकृष्ण का स्तोत्र १५. शिवशभु मिलन १६. दधीचि का आख्यान १७. भस्मधारण माहात्म्य १८. शिव माहात्म्य १९. इद्रपुत्र का आख्यान २०. पुराणवित्जन की प्रशसा २१. गौतम का आख्यान २२. गीता २३. भारद्वाज के आश्रम मे श्रीरामचद्र का कल्पातरीय इतिहास कथन।

पचम उत्तर खड—शिव-पार्वती सवाद। १. पर्वत का आख्यान २. जालधर की कथा ३. श्री शैलादि का विवरण ४. सगर का उपाख्यान ५. गगा, प्रयाग, काशी एवं गया की पुण्यकथा ६. आम्रादि दानमाहात्म्य ७. महा द्वादशी व्रत कथन ८ चतुर्विंशति एकादशी माहात्म्य ९. विष्णुधर्म कथन १०. विष्णु सहस्रनाम ११. कार्तिक व्रत फल १२. माघस्नान फल १३. जबूद्वीप के तीर्थ सकल का माहात्म्य १४. साभ्रमती महिमा १५. नृसिंहोत्पत्ति कथन १६. देवशर्मा का आख्यान १७. गीता माहात्म्य १८. भक्ति कामाहात्म्य १९. श्री भागवत माहात्म्य २०. इंद्रप्रस्थ की महिमा २१. नाना तीर्थ कथा २२, मत्ररत्न की कथा २३. त्रिपाद विभूति का कथन २४. मत्स्यादि अवतार कथन २५. श्रीराम का शतनाम एव तन्माहात्म्य २६. भृगु की विष्णु विभव परीक्षा।

फलश्रुति—यह पुराण लिखाकर स्वर्णयुक्त पुराणवित् ब्राह्मण को दान करने से अथवा श्रवण करने से वैष्णवधाम की प्राप्ति होती है एव इसकी अनुक्रमणिका श्रवण करने से समुदाय पुराण-श्रवण का फल लाभ होता है।

—:*:—

तृतीय विष्णु पुराण *

आदि एव अत दो भाग मे २३००० तेईस सहस्र श्लोक, उसमे आदि भाग ६ अश मे विभक्त। मैत्रेय-पराशर सवाद वराह कल्पोपाख्यान प्रथमभाग प्रथम अश १ सृष्टि का आदि कारण एव सृष्टिवर्णन

*विष्णु पुराण २३ हजार श्लोक है परतु भूलकर सुखसागर के बारहवें स्कध में तीस हजार लिख दिया। यही नहीं वरच चद कवि ने भी रायसा में २३ हजार चार सौ लिख दिया परतु रायसा के कई एक पुस्तकों में ३३४०० और रामरत्न गीता में अस्सी हजार लिख दिया परतु तुलसी सदार्थ में तेईस हजार लिखा। मेरी राय से जिन जिन पुस्तकों में अतर है उन सबको यहाँ लिख देता हूँ पाठकगण स्वय विचार कर लें।

सुखसागर में मक्खनलाल ने लिखा है। ब्रह्मपुराण दश हजार वो पद्म पुराण पचपन हजार वो विष्णु पुराण तीस हजार वो शिवपुराण चौबीस हजार वो श्रीमद्भागवत पुराण अठारह हजार वो नारद पुराण पच्चीस हजार वो मार्कंडेय पुराण नौ हजार वो अग्नि पुराण पद्रह हजार चार सौ वो लिंग पुराण ग्यारह हजार वो वाराह पुराण चौबीस हजार वो स्कद पुराण इक्यासी हजार एक सौ वो वामन पुराण दश हजार वो कूर्म पुराण सत्रह हजार व मत्स्य पुराण चौदह हजार वो गरुड पुराण उन्नीस हजार वो ब्रह्माण्ड पुराण बारह हजार श्लोक हैं।

पृथ्वीराज रासो मे लिखा है—

पद्धरी—ब्रह्मन्यदेव सम वासुदेव। अष्टादस पुरान तिन कहे भेव ॥
तिन कहों नाम परिमान ब्रन्नि। जिन सुनत सुद्ध भव हो तन्नन्नि ॥
ब्रह्मह पुरान दस सहस जुट्टि। जिहि पढत सुनत तन तप्प छुट्टि ॥
पचास पचह इज्जार गन्नि। पद्मह पुरान तिन कह्यौ ब्रन्नि ॥
तेईस सहस से चारि जानि। विष्णू पुराण विष्णू समानि ॥
चौबीस सहस कहि शिवपुरान। तिहि पढत सुनत सम अमियपान ॥
अठार सहस भागवत भेव। करि पार परिष्यत सुक्कदेव ॥
नारद पुरान कहि पाव लाख। तहाँ मुक्ति मोद आनद भाख ॥
मारकड नाम तेईस हजार। पौरान पवित्र सो दुख हजार ॥
पंद्रह हजार सख्या सपूर। अग्नि पुरान पढ़ि पाप पूर ॥

चवदै हजार से पाँच पट्टि । भवषिन पुरान सो पाप जड्डि ॥
ब्रह्मवैवत्र सहस अठार । केवल गिनान कथि भक्ति सार ॥
रुद्रह हजार लिगह पुरान । आनन्द अर्थ आगम गुरान ॥
चौवीस सहस बाराह भक्ति । पौरख पुरान तिन अमित सक्ति ॥
हजार इक्यासी कहि विवेक । स्कंद पुरान भव भक्ति एक ॥
इग्यारह सहस बावन सु अछ । पौरान सुनत सुवि अग्ग पछ ॥
सत्रह हजार कूरम पुरान । भाषा विनोद प्राक्रम गुरान ॥
विद्या हजार मित मछ देव । विधि मन्त्र उद्धरे सेव मेव ।
उनईस सहस गरुडह पुरान । श्रोतान वक्त भक्ति डगान ।
ब्रह्माड पुरान बारह सहस । करि व्यास भक्ति प्रभु कस नस ॥
पद्रह हजार अरु च्यारि लाख । सम ब्रह्म व्यास कहि चद भाख ॥

तुलसी शब्दार्थ में लिखा है । अष्टादश पुराण—

दोहा—ब्रह्म ब्रह्माड बावन मरस, ब्रह्मवैवर्त सुजान ।
मार्कण्ड अस भविष्य ये, राजस कहैं पुरान ॥ १ ॥
नारद विष्णु बराह अरु, गरुड पद्म सुखसार ।
भगवत रूपी भागवत, ये सात्विक निरधार ॥ २ ॥
मीन कूर्म अरु लिग शिव, स्कधरु अग्नि विचार ।
तामस सिव के अग ए, सुनतहि मिटै खमार ॥ ३ ॥
बावन ब्रह्म दस दस सहस, द्वादस है ब्रह्मण्ड ।
ब्रह्मवैवर्त दस सहस पुनि, पचपन पद्म अखण्ड ॥ ४ ॥
पन्द्रह सहस सुचारि सत, मार्कण्डे सु पुरान ।
साढ़े चौदह भविष्य है, तेइस विष्णु बखान ॥ ५ ॥
पचविस नारद कहत, सूकर चौविस जान ।
उनइस गरुड़ बखानिय, अठारह भगवत मान ॥ ६ ॥
मत्स सु चौदह सहस है, कूरम सत्रह होइ ।
लिग इकादस कहत है, चौबिस रुद्र जु सोइ ॥ ७ ॥
पावक पद्रह सहस पुनि, चारि सैकरा आन ।
स्कन्ध इक्यासी सहस अरु, इकसत करत बखान ॥ ८ ॥
तीन लाख अट्ठानवे, सहस वेद सत आठ ।

सब पुरान ऽश्लोक की, कही व्यास मर्याद ॥ ९ ॥

उपपुराण नाम—सनतकुमारहि जान पुनि, नरसिंह अस्कन्ध ।

दुर्वासा आश्चर्य गनि, नारद कपिल प्रबन्ध ॥ १० ॥

मानव अरु ब्रह्मांड कहि, भार्गव गरुड बखान ।

माहेस्वर पुनि कालिका, साबरु सूर्य पुरान ॥११॥

विष्णुपुरान परासरी पुनि, सचय सर्वार्थ ।

देवि भागवत मिलि भये, अष्टादस सब सार्थ ॥१२॥

श्री भागवत के १२ वें स्कंध के १३ वे अध्याय मे लिखा है ।

ब्राह्मदशसहस्राणिपाद्मपचोनषष्टि च श्रीवैष्णवत्रयोविशच्चतुर्विशति शैवकम् ॥४॥
दशाष्टौ श्री भागवत नारदपचविंशति मारकंडेयनववाहनतुदशपच चतु शतम् ॥५॥
चतुर्दशभविष्यस्यात्तथापचशतानि च दशाष्टौब्रह्मवैवर्तलिंगमेकादशैवतु ॥ ६ ॥
चतुर्विशतिवाराहमेकाशीतिसहस्रकम् स्कादशततथाचैकवामनदश कीतितम् ॥ ७ ॥
कौर्मसप्तदशाख्यातमात्स्यतत्तुचतुर्दश एकोनविंशत्सौवर्ण ब्रह्मांडद्वादशैवतु ॥ ८ ॥
एवपुराणसदोहश्चतुर्लक्षउदाहृत तत्राष्टदशसाहस्र श्री भागवतमिष्टते ॥ ९ ॥

पुराणोंके नामों मे भी कई एक लोगोंने पृथक् पृथक् लिखा है । यथा शब्द कोष में लिखा है—पुराण । (पुरा पुराना, पुर आगे जाना—अर्थात् जिसमें पुराने समय की बातें हों, अथवा जो पुराने समय में बने हों) पुराण वे ग्र थ जिनमें से बहुतों को व्यास जी ने बनाए अथवा इकट्ठे किये । पुराण सब पद्य में लिखे हुए है और उनको हिंदू पवित्र मानते है । हर एक पुराण में बिशेष करके इन पाँच बातों का वर्णन है । जैसे—सर्गश्च प्रति सर्गश्च वशो मनवन्तराणि च । वशानु चरितं चैव पुराण पच लक्षणम् ॥

अर्थात् १ ससार की उत्पत्ति, २ प्रलय और प्रलय के पीछे फिर ससार की उत्पत्ति, ३ देवता और शूरवीरों की बशावली ४ मनुष्यो का राज और ५ उनके वश के लोगो का ब्यवहार और चलन । पुराण अठारह है १ ब्रह्म पुराण २ पद्म पुराण ३ ब्रह्मांड पुराण ४ अग्नि पुराण ५ विष्णु पुराण ६ गरुड पुराण ७ ब्रह्मवैवर्त्त पुराण ८ शिव पुराण ९ लिग पुराण १० नारद पुराण ११ स्कद पुराण १२ मार्कंडेय पुराण १३ भविष्यत् पुराण १४ मत्स्य पुराण १५ वाराह पुराण १६ कूर्म्म पुराण १७ वामन पुराण, श्रीमद्भागवत पुराण । इन सब पुराणों में चार लाख श्लोक गिने गए हैं और अठारह उपपुराण भी हैं । पुराण० पुराना, पहले का, सबसे पहला ।

२. देवादि की उत्पत्ति ३ समुद्र मंथन ४ दक्षादि वर्णन ५. ध्रुव चरित्र ६. पृथु चरित्र ७ प्रचेता आख्यान ८. प्रह्लाद उपाख्यान ९. प्रह्लाद राज्य का पृथक् आख्यान।

प्रथम भाग द्वितीय अंश --१ प्रियव्रत उपाख्यान २. द्वीप और

संस्कृत कोष में लिखा है—पुराण पु० पण अर्थात् व्यवहार दाव मुख्य धन द्यूतव्यवहार अर्थात् जुए का खेल विष्णु चिरजीवी दीर्घायु प्राण जीव के बनाए हुए अठारह पुराण तथा च प्रमाणम्। श्लोकमद्वय द्वय चैव व्रत्रयवचतुष्टयम्। अनापलिंगकूस्कानि पुराणानि पृथक् पृथक्॥ मार्कंडेय पुराण १ मत्स्य पुराण २ भविष्योत्तर पुराण ३ भागवत पुराण ४ ब्रह्मांड पुराण ५ ब्रह्मवैवर्त पुराण ६ ब्रह्मोत्तर पुराण ७ वाराह पुराण ८ वामन पुराण ९ वायुपुराण १० विष्णु पुराण ११ अग्नि पुराण १२ नारद पुराण १३ पद्मपुराण १४ लिंगपुराण १५ गरुड पुराण १६ कूर्मपुराण १७ स्कंद पुराण १८

शिवपुराण के उल्था में शिवसिंह ने यों लिखा है। पुराण अठारह हैं और उपपुराण भी अठारह हैं जिनके नाम यह हैं पद्म १ स्कंद २ गरुड ३ मत्स्य ४ वायु ५ ब्राह्मांड ६ लिंग ७ अग्नि ८ कूर्म ९ वामन १० नारदीय ११ विष्णु १२ भविष्योत्तर १३ मार्कंडेय १४ वाराह १५ भारत १६ ब्रह्मवैवर्तक १७ भागवत १८। उपपुराण—काली १ शाम्ब २ सनत्कुमार ३ वरुण ४ मारीच ५ नंदी ६ शिव ७ दुर्वासा ८ मुनि ९ नारदीय १० कपिल ११ सौरि १२ माहेश्वरी १३ शुक्र १४ भार्गव १५ नृसिंह १६ धर्म १७ पाराशर १८।

अथ श्लोक अष्टादश पुराणे।

पद्म स्कंद विहंग मत्स्य पवन ब्रह्मांडलिंगाग्नयः।
कूर्मोवामन नारदीयसहित विष्णु भविष्योत्तर॥
मार्कण्डेय वराह भारतयुतः श्री ब्रह्म वैवर्त्तकः।
श्रीमद्भागवत दिशतु परम श्रेय. पुराणानिवै॥ १॥

यथा अष्टादश उपपुराणे।

काली साव सनत्कुमारवरुण मारीचनंदीशिव।
दुर्वासामुनिनारदीय कपिल शौरि च माहेश्वरी॥
शुक्र भार्गवकनृसिंहपरम धर्म्म च पाराशर।
कुर्वन्त्युपपुराणकानिसततेसम्मीलितेऽष्टादश ॥ २॥

वर्ष निरूपण ३. पाताल कथन ४. नरक कथन ५. सप्तस्वर्ग निरूपण ६. सूर्यादि सचार ७. भरत चरित्र ८. मुक्तिमार्ग निरूपण ६. निदाघादि ऋतु सवाद।

प्रथम भाग तृतीय अश—१. मन्वन्तर कथा २. वेदव्यास अवतार ३. नरक उद्धार और कर्म ४. सगर एव और्व सवाद मे सर्व धर्म निरूपण ५. वर्णाश्रम निरूपण ६. श्राद्ध कल्प ७. सदाचार कथन ८. मायामोह की कथा।

प्रथम भाग चतुर्थ अश—१. सूर्यवश कथा २. सोमवश कथा।

प्रथम भाग पचम अश—१. नाना राजा लोगो की कथा २. श्री कृष्णावतार प्रश्न ३. गोकुल कथा ४. श्रीकृष्ण बाल्य लीला पूतनादि वध ५. कौमार अघासुरादि वध ६. कैशोर कस वधादि मथुरा लीला ७. यौवन द्वारावती लीला दैत्य वध एवं विवाह ८. भूभार हरण ६. अष्टावक्र उपाख्यान।

प्रथम भाग षष्ठ अश—१. कलिजात चरित्र २ चतुर्विध लय कथा ३. ब्रह्मज्ञान कथा ४. केशिध्वज कर्तृक खाण्डिक्य निरूपण।

द्वितीय भाग—सूत्र-शौनक सवाद—१ विष्णु धर्म कथन २. नाना धर्म कथन ३. पुण्य व्रत नियम एव यम कथन ४. धर्म शास्त्र ५. अर्थ शास्त्र ६. वेदात शास्त्र ७. ज्योतिः शास्त्र ८ वश आख्यान ६. स्तव कथन १०. मनु सकल की कथा।

फल श्रुति—यह पुराण लिखकर आषाढ मास मे घृत धेनु के साथ पौराणिक ब्राह्मण को दान करने से सूर्य के रथ पर आरोहण करके विष्णु धाम मे गमन एव भक्ति युक्त पाठ किवा श्रवण करने से विष्णु लोक मे वास औ दिव्य भोग प्राप्त होती है इसकी अनुक्रमणिका पाठ वा श्रवण करने से समुदाय पुराण श्रवण फल होता है।

—:o:—

चतुर्थ वायुपुराण

पूर्व और उत्तर दो खंड २४००० चौबीस सहस्र श्लोक वायु ने श्वेत कल्प प्रसंग से सकल धर्म कहा है।

पूर्व भाग—१ स्वर्गादि लक्षण विस्तार कथन २ सकल मन्वन्तर के राजगण का वंश कथन ३. गयासुर वध ४. मास गणा की महिमा एवं माघ मास का विशेष महिमा ५ दान धर्म एवं राज धर्म विस्तार कथन ६. भूचर, पातालचर, दिक्चर एवं आकाशचर विवरण ७. व्रत विवरण।

उत्तर भाग १. नर्मदा तीर्थ कथन २. शिव संहिता कथन।

फल श्रुति—यह पुराण लिखकर गुड़ धेनु के साथ गृहस्थ ब्राह्मण को श्रावण मास में दान करने से चतुर्दश इंद्र परिमित काल रुद्रलोक में वास नियम एवं हविष्य से पुराण श्रवण करने से वा श्रवण कराने से रुद्र तुल्यता प्राप्ति। पुराण की अनुक्रमणिका सुनने से समुदाय पुराण श्रवण फल प्राप्त होता है।

—.❀—

पंचम श्रीभागवत

द्वादशस्कंध १८००० अठारह सहस्र श्लोक सारस्वत कल्पीय कथा।

प्रथमस्कंध—१. सूत और ऋषियों का मिलन २. व्यासदेव का पुण्य चरित्र ३ पांडव का चरित्र ४ परीक्षित का उपाख्यान।

द्वितीयस्कंध—१. परीक्षित शुक संवाद से सृष्टिद्वयनिरूपण २. ब्रह्मा नारद संवाद से अवतार कथन ३ पुराण लक्षण ४ सृष्टि प्रकरण कथन।

तृतीय स्कंध—१. विदुर चरित्र एवं मैत्रेय मिलन २ ब्रह्मा सृष्टि प्रकरण ३. कपिल सांख्य कथन।

चतुर्थ स्कंध—१. सती चरित्र २. ध्रुव चरित्र ३. पृथुचरित्र ४. प्राचीनबर्हि आख्यान।

पंचम स्कंध—१. प्रियव्रतचरित्र एवं उनका वंश कथन २ ब्रह्मांडान्तर्गत लोक सकल का वृत्तांत ३. नरक स्थिति कथन।

वर्ष निरूपण ३. पाताल कथन ४. नरक कथन ५. सप्तस्वर्ग निरूपण ६. सूर्यादि सचार ७. भरत चरित्र ८. मुक्तिमार्ग निरूपण ९. निदाघादि ऋतु सवाद ।

प्रथम भाग तृतीय अश—१. मन्वन्तर कथा २. वेदव्यास अवतार ३. नरक उद्धार और कर्म ४. सगर एव और्व सवाद मे सर्व धर्म निरूपण ५. वर्णाश्रम निरूपण ६. श्राद्ध कल्प ७. सदाचार कथन ८. मायामोह की कथा ।

प्रथम भाग चतुर्थ अश—१. सूर्यवश कथा २ सोमवश कथा ।

प्रथम भाग पचम अश—१. नाना राजा लोगो की कथा २. श्री कृष्णावतार प्रश्न ३. गोकुल कथा ४. श्रीकृष्ण बाल्य लीला पूतनादि वध ५. कौमार अघासुरादि वध ६. कैशोर कस वधादि मथुरा लीला ७. यौवन द्वारावती लीला दैत्य वध एवं विवाह ८. भूभार हरण ९. अष्टावक्र उपाख्यान ।

प्रथम भाग षष्ठ अश—१. कलिजात चरित्र २. चतुर्विध लय कथा ३. ब्रह्मज्ञान कथा ४. केशिध्वज कर्तृक खाण्डिक्य निरूपण ।

द्वितीय भाग—सूत्र-शौनक सवाद—१ विष्णु धर्म कथन २. नाना धर्म कथन ३. पुण्य व्रत नियम एव यम कथन ४. धर्म शास्त्र ५. अर्थ शास्त्र ६. वेदात शास्त्र ७. ज्योतिः शास्त्र ८. वश आख्यान ९. स्तव कथन १०. मनु सकल की कथा ।

फल श्रुति—यह पुराण लिखकर आषाढ मास मे घृत धेनु के साथ पौराणिक ब्राह्मण को दान करने से सूर्य के रथ पर आरोहण करके विष्णु धाम मे गमन एव भक्ति युक्त पाठ किवा श्रवण करने से विष्णु लोक मे वास औ दिव्य भोग प्राप्ति होती है इसकी अनुक्रमणिका पाठ वा श्रवण करने से समुदाय पुराण श्रवण फल होता है ।

—:❀:—

चतुर्थ वायुपुराण

पूर्व और उत्तर दो खड २४००० चौबीस सहस्र श्लोक वायु ने श्वेत कल्प प्रसग से सकल धर्म कहा है।

पूर्व भाग—१ स्वर्गादि लक्षण विस्तार कथन २. सकल मन्वन्तर के राजगण का वश कथन ३. गयासुर वध ४. मास गणो की महिमा एव माघ मास की विशेष महिमा ५ दान धर्म एव राज धर्म विस्तार कथन ६. भूचर, पातालचर, दिक्चर एव आकाशचर विवरण ७ व्रत विवरण।

उत्तर भाग १. नर्मदा तीर्थ कथन २ शिव सहिता कथन।

फल श्रुति—यह पुराण लिखकर गुड धेनु के साथ गृहस्थ ब्राह्मण को श्रावण मास मे दान करने से चतुर्दश इद्र परिमित काल रुद्रलोक मे वास नियम एव हविष्य से पुराण श्रवण करने से वा श्रवण कराने से रुद्र तुल्यता प्राप्ति। पुराण की अनुक्रमणिका सुनने से समुदाय पुराण श्रवण फल प्राप्त होता है।

—:❀:—

पंचम श्रीभागवत

द्वादशस्कध १८००० अठारह सहस्र श्लोक सारस्वत कल्पीय कथा।

प्रथमस्कंध—१. सूत और ऋषियो का मिलन २. व्यासदेव का पुण्य चरित्र ३ पाडव का चरित्र ४ परीक्षित का उपाख्यान।

द्वितीयस्कध—१. परीक्षित शुक सवाद से सृष्टिद्वयनिरूपण २. ब्रह्मा नारद सवाद से अवतार कथन ३. पुराण लक्षण ४. सृष्टि प्रकरण कथन।

तृतीय स्कध—१. विदुर चरित्र एव मैत्रेय मिलन २. ब्रह्मा सृष्टि प्रकरण ३. कपिल सांख्य कथन।

चतुर्थ स्कध—१. सती चरित्र २ ध्रुव चरित्र ३. पृथुचरित्र ४. प्राचीनवर्हि आख्यान।

पचम स्कध—१. प्रियव्रतचरित्र एव उनका वश कथन २ ब्रह्मांडान्तर्गत लोक सकल का वृत्तात ३. नरक स्थिति कथन।

षष्ठ स्कंध—१. अजामिल चरित्र २ दक्ष सृष्टि निरूपण ३. वृत्रासुर आख्यान ४. मरुत जन्म कथन।

सप्तम स्कंध—१ प्रह्लाद चरित्र २ वर्णाश्रम निरूपण ३. वासना कर्म इत्यादि कीर्तन।

अष्टम स्कंध—१ गजेंद्र मोक्षण २ मन्वन्तर निरूपण ३ समुद्र-मथन ४. बलि वैभव एवं बंधन ५ मत्स्यावतार चरित्र।

नवम स्कंध—१ सूर्यवंश कथन २ रामायण ३ सोमवंश निरूपण।

दशमस्कंध—१. श्री कृष्ण बाल चरित्र २ कौमार चरित्र ३ ब्रज स्थिति ४. कैशोर लीला ५ मथुरावास ६. यौवन ७ द्वारकास्थिति ८. भूभार-हरण।

एकादश स्कंध—१ वसुदेव नारद संवाद २ यदु दत्तात्रेय संवाद ३. श्रीकृष्ण-उद्धव संवाद ४ यादव मुक्ति कथन।

द्वादशस्कंध—१ भविष्य एवं कलि कथा २ परीक्षित मोक्ष ३. वेदशाखा कथन ४. मार्कंडेय तपस्या ५ सौरी विभूति कथन ६ पुराण संख्या कथन।

फलश्रुति—यह पुराण हेम सिंहासनस्थ करके भादों पूर्णिमा को प्रीति पूर्वक ब्राह्मण का वस्त्र एवं स्वर्ण सहित दान करने से भगवद्भक्ति लाभ होता है और श्रवण करने से अथवा श्रवण कराने से भक्ति और मुक्ति लाभ होता है और इसकी अनुक्रमणिका श्रवण करने किंवा कराने से संपूर्ण भागवत श्रवण फल लभ्य होता है।

—❀—

षष्ठ नारद पुराण

पूर्व एवं उत्तर दो भाग में २५००० पचीस सहस्र श्लोक। पूर्व भाग चार पाद में विभक्त पूर्व भाग का प्रथम पाद—सूत-शौनक संवाद—१. सृष्टि संक्षेप वर्णन एवं नाना धर्म कथा।

पूर्व भाग द्वितीय पाद—१ मोक्ष धर्म कथन मोक्षोपाय निरूपण २ वेदाग कथन ३ सनन्दन कर्तृक नारद प्रति शुकोत्पत्ति कथन ४ महातत्र से पशुपाश विमोचन ५ मत्रशोधन ६ दीक्षा ७ मत्रोद्धार पूजा प्रयोग कवच विष्णु सहस्रनाम एव स्तोत्र ८ गणेश सूर्य विष्णु शिव एव शक्ति का क्रम से उपाख्यान कथन।

पूर्व भाग तृतीय पाद—१. नारद और सनत्कुमार सवाद २ पुराण लक्षण प्रमाण एव दान काल कथन ३. चैत्रादि मास की प्रतिपदादि तिथि व्रत विस्तार कथन।

पूर्वभाग चतुर्थ पाद—१ सनातन कर्तृक नारद प्रति वृहदाख्यान कथन।

उत्तर भाग—१. एकादशी व्रत विषयक प्रश्न २ वशिष्ठ एव माधाता का सवाद ३ रुक्मागद की कथा ४. मोहिनी की उत्पत्ति एव संवाद ५. मोहिनी प्रति वसु का शाप एव उद्धार ६. गगा की पुण्य कथा ७ गया यात्रा ८ काशी माहात्म्य ९ पुरुषोत्तम वर्णन १० क्षेत्र यात्रा एव अन्यान्य बहु कथा ११ प्रयाग माहात्म्य १२ कुरुक्षेत्र माहात्म्य १३ हरिद्वार माहात्म्य १४ कामोदा आख्यान १५ बदरी तीर्थ माहात्म्य १६ कामाख्या माहात्म्य १७ प्रभास माहात्म्य १८ पुराण आख्यान १९ गौतमाख्यान २० वेदपादस्तव २१ गोकर्ण क्षेत्र माहात्म्य २२. लक्ष्मण आख्यान २३ सेतु माहात्म्य २४ नर्मदा माहात्म्य २५ अवती माहात्म्य २६. मथुरा माहात्म्य २७ वृदावन माहात्म्य २८ ब्रह्मा के निकट वसु का गमन २९ मोहिनी चरित्र कथन।

फल श्रुति—यह पुराण श्रवण करने किवा श्रवण कराने से ब्रह्म धाम प्राप्ति होती है और अनुक्रमणिका श्रवण करने मे किवा श्रवण कराने मे स्वर्ग लाभ होता है और यह पुराण आश्विनी पूर्णिमा को सप्त धेनु युक्त उत्तम ब्राह्मण को दान करने से मोक्ष प्राप्ति होती है।

—❀—

सप्तम मार्कण्डेय . पुराण

६००० नौ सहस्र श्लोक

१ मार्कंडेय कर्तृक जैमिनि का पक्षियो के निकट प्रेरण २. धर्म पक्षि सकल का जन्म निरूपण ३. इनकी पूर्व जन्म कथा ४ सूर्य क्रिया कथन ५. बलदेव तीर्थ यात्रा ६. द्रौपदेय कथा ७ हरिश्चंद्रपुण्य कथा ८. आडीवक नामक युद्ध कथा ६ पिता पुत्र कथा १०. दत्तात्रेय कथा ११. हैहय चरित्र एव माहात्म्य १२. मदालसा कथा १३. अलर्क चरित्र १४. षष्ठी सकीर्तन १५. नवप्रकार पुण्य कथा १६. कतिपय अतकाल निर्देश १७. पक्षिसृष्टि निरूपण १८. रुद्रादि सृष्टि १६. द्वीप एव वर्ष कथा २०. मनु कथा और अष्टम मन्वन्तर मे देवी माहात्म्य कथा २१. प्रणवोत्पत्ति कथा वेद एव तेज जन्म २२. मार्कंडेय जन्म और माहात्म्य २३. वैवस्वत चरित्र सहित वत्समीर चरित्र २४ खनित्र पुण्य कथा २५. अवक्षित चरित्र २६. किमिच्छुव्रत २७ अविनाश चरित्र २८. इक्ष्वाकु चरित्र २६. तुलसा चरित्र ३०. रामचद्र कथा ३१. कुशवश आख्यान ३२. सोमवश की कथा ३३ नहुष की अद्भुत कथा ३४. ययाति चरित्र ३५. यदुवश कीर्तन ३६ श्रीकृष्ण बाल चरित्र ३७. मथुरा मे श्रीकृष्ण चरित्र ३८. द्वारका चरित्र ३६ सकल अवतार कथा ४०. साख्ययोग उद्देश ४१. प्रपच एव असत्य कीर्तन ४२ मार्कंडेय चरित्र ४३. पुराण श्रवण फल।

फल श्रुति—यह पुराण लिखाकर सुवर्ण सयुक्त ब्राह्मण को दान करने से ब्रह्मपद मिलता है एव भक्ति पूर्वक श्रवण करने से किंवा श्रवण कराने से मार्कंडेय तुल्य गति प्राप्ति और वाछित फल लाभ होता है।

—❀—

अष्टम अग्निपुराण

१५००० पद्रह सहस्र श्लोक ईशानकल्प कथा वशिष्ठ नल उपाख्यान।

१. पुराण प्रश्न २. सर्व अवतार कथा ३ सृष्टि प्रकरण कथन ४. विष्णु पूजादि विधि ५. अग्नि पूजा मत्र और मुद्रादि लक्षण ६. दीक्षा विधान ७ अभिषेक कथन ८ मडल करण लक्षण ६ कुशमार्जन १० पवित्रारोपण विधि ११. देवालयकरण विधि १२ शालग्राम पूजा एव लक्षण कथन १३ प्रतिष्ठा प्रकरण १४ न्यासादि विधि १५. विनायक दीक्षा विधि १६ अन्यान्य कथन १७. देवप्रतिष्ठा विधि १८. ब्रह्माड निरूपण १६ गगादि तीर्थ माहात्म्य २०. द्वीप वर्णन २१. ऊर्द्ध एव अधोलोक रचना २२. ज्योतिषचक्र निरूपण २३ ज्योतिष शास्त्र वर्णन २४ युद्ध जयकरण शास्त्र २५ षट्कर्म कथा २६ मत्रयत्र औषध प्रकरण २७. कुब्जिकादि कथन २८. छ: प्रकार के न्यास की विधि २६ कोटि होम विधान एव विस्तार निरूपण ३० ब्रह्मचर्य धर्म ३१. श्राद्धकल्प विधि ३२. ग्रहयज्ञ ३३. वेदोक्त एव स्मृत्युक्त कर्म ३४ प्रायश्चित्त कथन ३५ तिथि व्रतादि कथन ३६ बार व्रत ३७. नक्षत्र व्रत ३८. मास व्रत ३६. दीपदान विधि ४० नूतन व्यूहार्चन प्रकरण ४१ नरक निरूपण ४२. व्रत एव दान निरूपण ४३ नाड़ी चक्रवर्णन ४४. सध्या विधि ४५. गायत्री अर्थ ४६ शिवलिग स्तोत्र ५० शकुन्यादि शुभाशुभ दृष्टि निरूपण ५१ मडलादि निर्देश ५२ रणदीक्षा विधि ५३. श्री रामोक्तनीति ५४ रत्न लक्षण ५५. धनुर्विद्या ५६. व्यवहार निरूपण ५७ देवासुर विवर्धन आख्यान ५८. आयुर्वेद निरूपण ५६. गजादि की रोग चिकित्सा एव आरोग्य कथन ६० गो अश्वादि की चिकित्सा ६१ नाना पूजा प्रकरण ६२ विविध शांति ६३ छद शास्त्र ६४ साहित्य शास्त्र ६५ एकार्ण वादि शास्त्र समाख्यान ६६. प्रसिद्ध शिष्टानुशासन ६७. धनागार एव सृष्ट्यादि वर्ग ६८. प्रलय लक्षण ६६. शारीरक निरूपण ७० नरक वर्णन ७१ योग शास्त्र ७२. ब्रह्मज्ञान ७३. पुराण श्रवण माहात्म्य।

फल श्रुति—यह पुराण लिखकर अग्रहायण मास मे सुवर्ण कमल सहित अथवा तिल धेनु सहित पुराणवित् ब्राह्मण को दान करने से

स्वर्ग लाभ होता है एव यह पुराण श्रद्धा करके श्रवण करने किवा श्रवण कराने से सकल पाप क्षय होता है। और भक्ति युक्त होकर इस पुराण अनुक्रमणिका पाठ करने से सकल पुराण पाठ का फल लभ्य होता है।

—:❀:—

नवम भविष्य पुराण

पच पर्व १४००० चौदह सहस्र श्लोक। अघोरकल्प वृत्तांत। नाना आश्चर्य कथा। प्रथम पर्व ब्राह्मण पर्व और द्वितीय तृतीय चतुर्थ एव पचम पर्व एकत्र है।

प्रथम पर्व सूत शौनक सवाद—१. पुराण प्रश्न २. नाना आख्यान युक्त सूर्य चरित्र वर्णन ३. सृष्ट्यादि लक्षण ४ पुस्तक लेखक एव लिखने का लक्षण ५ सकल प्रकार सस्थान लक्षण ६ प्रतिपदादि तिथि एव मत्र कल्प कथन ७ विष्णु विषय अष्टम्यादि शेष कल्प कथा ८ शैव विषय इच्छाधीन भिन्न भिन्न कल्प कथन ९ सौर विषय शेष कथा १० नाना आख्यान युक्त प्रतिसृष्टि नाम वर्णन ११. पुराण उपसहार एव पच पर्व कथन। इस पर्व म धर्म विषय मे ब्रह्मा की महिमा का आधिक्य कथन है।

द्वितीय पर्व—भोग विषय मे शिवमाहात्म्य कथन।

तृतीय पर्व—मोक्ष विषय मे विष्णु का माहात्म्य कथन।

चतुर्थ विषय—चतुर्वर्ग विषय मे सूर्य माहात्म्य कथन।

पचम पर्व—सर्व कथा युक्त प्रति सर्ग वर्णन। इस पुराण में अद्वितीय ब्रह्म का गुण तारतम्य रूप भेद से सकल देव की समता वर्णित है।

फल श्रुति—यह पुराण लिख कर पौषी पौर्णिमा को गुड धेनु स्वर्ण वस्त्र माल्य सहित पुराण पाठक ब्राह्मण को दान करने से एवं श्रवण किवा पाठ करने स सकल घोर पाप से विमुक्ति एव ब्रह्मपद प्राप्ति हाती है और पुराण की अनुक्रमणिका पाठ किवा श्रवण करने से भक्ति मुक्ति मिलती है।

—:❀—

दशम ब्रह्मवैवर्तपुराण

चार खड १८००० अठारह सहस्र श्लोक। १ ब्रह्म खड २. प्रकृति खंड ३. गणेश खड ४ श्रीकृष्णजन्म खड।

सूत ऋषि सवाद प्रथम ब्रह्मखड—१. सृष्टि प्रकरण २. नारद और ब्रह्मा विवाद एव शापान्त ३ नारद का शिवलोक गमन एव गान शिक्षा ४ शिवादेश से मरीचि के सहित नारद का सावर्णि प्रबोधार्थ सिद्धाश्रम मे गमन।

द्वितीय प्रकृति खड—१ सावर्णि-नारद सवाद २ श्रीकृष्ण माहात्म्य युक्त नानाख्यान ३ प्रकृति की अश और कलाओ का माहात्म्य वर्णन ४ उनका गगादि विस्तार और माहात्म्य वर्णन।

तृतीय गणेशखड—१ गणेशजन्म प्रश्न २ पुण्यव्रत कथन ३ पार्वती कार्त्तिक एव गणेश जन्म ४ कार्त्तवीर्य चरित्र ५ परशुराम विवरण ६ जमदग्नि एव गणेश का आश्चर्य विवाद।

चतुर्थ श्रीकृष्ण जन्म खड—१. श्रीकृष्ण जन्म प्रश्न एवं जन्मकथा २ गोकुल गमन ३ पूतनादि वध ४ बाल्य कौमार विविध लीला वर्णन ५ शरत्काल मे गोपी सहित रास क्रीडा ६ श्री राधिका सहित निर्जन क्रीडा विस्तार वर्णन ७ अक्रूर सहित हरि मथुरा गमन ८ कस वध ६. द्विज सस्कार १० सादीपनी गुरु निकट विद्योपार्जन ११. कालयवन वध १२ द्वारिका गमन १३ नरकादि वध वर्णन।

फल श्रुति—यह पुराण लिखकर माघ मास मे धेनु सहित ब्राह्मण को दान करने से ब्रह्मलोक प्राप्ति होती है एव अज्ञान बधन से मुक्ति होती है और पाठ किंवा श्रवण करने से ससार बधन क्षय होता है तथा इसी पुराण की अनुक्रमणिका पाठ करने से श्रीकृष्ण के प्रसाद से वाछित फल लाभ होता है।

—•※•—

एकादश लिंग पुराण

पूर्व एव उत्तर दो भाग ११००० ग्यारह सहस्र श्लोक। शिव माहात्म्य प्रकाशक अग्नि कल्प कथा।

पूर्व भाग—१. पुराणात मे सृष्टि विषयक सक्षेप प्रश्न २. योगाख्यान ३. कल्पाख्यान ४. लिगउद्भव एव पूजा ५. सनत्कुमार और शैलादि का सवाद ६. दधीचि चरित्र ७ युग धर्म निरूपण ८. कोष कथन ९. सूर्य वश एव सोम वश वर्णन १०. सृष्टि वर्णन एव त्रिपुर आख्यान ११ लिग प्रतिष्ठा कथन १२ पशुपाश विमोक्षण १३ शिव व्रत १४. सदाचार निरूपण १५. प्रायश्चित्त कथन १६ श्रीशैल वर्णन १७. अधक आख्यान १८. वाराह चरित्र १९ नृसिह चरित्र २० जलधर-वध २१. शिव सहस्र नाम २२. दक्षयज्ञ विनाश २३ कामदेव दहन २४. गिरिजा सह शिव विवाह २५ विनायक आख्यान २६. शिवनृत्य २७ उपमन्यु कथा।

उत्तर भाग—१ विष्णु माहात्म्य २ अबरीष कथा ३. सनत्कुमार-नन्दि संवाद ४. शिव माहात्म्य ५. स्नान यागादिक वर्णन ६ सूर्य पूजा विधि ७. शिव पूजा ८ बहुविध दानादि विधि ९. श्राद्धप्रकरण १०. मूर्ति प्रतिष्ठा प्रकरण ११ घोरतम कथा १२. व्रजेश्वरी महाविद्या गायत्री महिमा वर्णन १३ त्र्यम्बक माहात्म्य १४. पुराण श्रवण माहात्म्य।

फल श्रुति—यह पुराण लिखाकर फाल्गुनी पूर्णिमा को तिल धेनु सहित भक्ति पूर्वक ब्राह्मण को दान करने से जरा मरण वर्जित हो कर शिव सायुज्य प्राप्ति होती है और पुराण पाठ वा श्रवण करने से नाना भोग करके अत मे शिव लोक मे गमन होता है और अनुक्रमणिका श्रवण किंवा पाठ करने से श्रोता एव पाठक उभय शिवभक्त होते है एव बहुकाल स्वर्ग भोग करते हैं।

—:※:—

द्वादश वाराह पुराण

पूर्व एव उत्तर भाग २४००० चौबीस सहस्र श्लोक विष्णु माहात्म्य वर्णन भूमि-वराह सवाद मानवकल्प प्रसंग।

पूर्व भाग—१ आदिकृत वृत्तांत रंभा चरित्र कथन २. दुर्जय प्रति श्राद्ध कल्प कथा ३. महातपस्या आख्यान ४. गौरी उत्पत्ति कथन ५. विनायक कथा ६. नाग कथा ७. सेनानी एवं आदित्य कथा ८ देवगण कथा ९. कुबेरगण सकल कथा १० वृष कथा ११. सत्यतप कथा १२. व्रत आख्यान १३ अगस्त्य गीता १४. रुद्रगीता १५. महिषासुर वध में ब्रह्मा विष्णु एवं शिव की शक्ति एवं माहात्म्य कथन १६ पर्वाध्याय १७. श्वेत उपाख्यान १८. गोदान कथा १९. भगवद्धर्म्म २० व्रत एवं तीर्थ कथा २१. अत्रि अपराध कथा २२ शारीरिक प्रायश्चित्त २३. सकल तीर्थ महिमा २४. मथुरा माहात्म्य विशेष वर्णन २५. ऋषि पुत्र प्रसंगाधीन यमलोक वर्णन २६. कर्मविपाक २७ विष्णुव्रत निरूपण २८. गोकर्ण माहात्म्य।

उत्तर भाग—१. पुलस्त्य कुरुराज संवाद सकल तीर्थ माहात्म्य पृथक् पृथक् विस्तारित रूप वर्णन २. अशेष धर्माख्यान ३. पौष्कर पुण्य कथा।

फलश्रुति—यह पुस्तक लिख कर चैत्री पूर्णिमा को कांचन गरुड़ एवं तिल धेनु समन्वित भक्ति पूर्वक ब्राह्मण को दान करने से वैष्णव धाम प्राप्ति एवं देवता और ऋषि गण द्वारा वंदित होता है और पुराण पाठ करने किंवा श्रवण करने से संस्कार नाशिनी विष्णु भक्ति लभ्य होती है।

त्रयोदश स्कंदपुराण

सप्त खंड ८१००० इक्यासी सहस्र श्लोक। १. माहेश्वर खंड २. वैष्णव खंड ३. ब्रह्म खंड ४. काशी खंड ५. अवंती खंड ६. नागर खंड ७. प्रभास खंड। इस पुराण में कार्तिकेय ने माहेश्वर धर्म कहा है।

प्रथम माहेश्वर खंड, प्रायः १२००० बारह सहस्र श्लोक—१. केदार माहात्म्य २. दक्ष यज्ञ कथा ३. शिवलिंग अर्चन फल ४. समुद्र मंथन ५. देवेंद्र चरित्र ६. पार्वती उपाख्यान एवं विवाह ७ कार्तिकेय उत्पत्ति ८. तार-

कथा और पचामृत स्नान एव घटा वादनादि फल ४२ नाना पुष्प द्वारा अर्चन फल ४३ तुलसीदल से अर्चन फल ४४ नैवेद्य माहात्म्य ४५ हरिवास वर्णन ४६ एकादशी एव जागरण माहात्म्य ४७. मत्स्योत्सव विधान ४८ नाम माहात्म्य ४९ ध्यानादिपुण्य कथा ५० मथुरा तीर्थ माहात्म्य ५१ द्वादश वन माहात्म्य ५२ श्री मद्भागवत माहात्म्य ५३ बज्र शांडिल्य सवाद ५४ अतर्लीला कथन और श्रीनाथ केशवदेवादि विग्रह स्थापन ५५ माघ मे स्नान दान जप माहात्म्य और नानाख्यान ५६ वैशाख माहात्म्य ५७ शय्या दान फल ५८. जल दान फल ५९. कामाख्या वर्णन ६० श्रुतदेव चरित्र ६१ व्याध उपाख्यान ६२. अक्षय तृतीयादि विशेष पुण्य कीर्तन ६३ अयोध्या माहात्म्य चक्र ब्रह्मतीर्थ प्रसग ऋण प्रति विमोक्ष कथा आधार सहस्र एव स्वर्ग द्वार च द्र हरि और धर्म हरि वर्णन ६४ स्वर्णवृष्टि आख्यान ६५ तिलद्वार सहित सरयू मिलन कथा ६६ सीताकु ड कथा ६७. गुप्त हरि कथा ६८ सरयू और घर्घरा आख्यान ६९ गो प्रभाव ७० दुग्धोदकथा ७१. गुरु कु डादि पचतीर्थ कथा ७२ घोषार्कादि त्रयोदश तीर्थ वर्णन ७३. गया कूप माहात्म्य ७४ माडव्य आश्रम और पूर्व तीर्थ वर्णन ७५ अजितादि मानसादि असख्य तीर्थ वर्णन।

तृतीय ब्रह्मखड—१. सेतु माहात्म्य प्रसग से स्नान एव दर्शनजन्य फलकथन २ गालव तपस्या ३ राक्षसाख्यान ४ चक्रतीर्थ माहात्म्य ५ देवी पतन कथा ६.वेतालतीर्थ माहात्म्य ७. पाप नाशादि तीर्थ कथन ८ मगलादि तीर्थ माहात्म्य ९. ब्रह्मकुड वर्णन १० हनुमत कुंड महिमा ११ अगस्त्य तीर्थ फल १२ रामतीर्थ कथन १३. लक्ष्मीतीर्थ निरूपण १४. शखादि तीर्थ महिमा १५ साध्यमृत् तीर्थ महिमा १६ धनुष्कोट्यादि तीर्थ महिमा १७. क्षीर कुडादि माहात्म्य १८ गायत्र्यादि तीर्थ माहात्म्य १९. रामनाथ महिमा एव तत्वज्ञानोपदेश २० सेतु यात्राभिधान २१. धर्मारण्य माहात्म्य एव ततस्थान सभूति और पुण्य कथा २२. कर्म सिद्धि आख्यान २३. ऋषिवश २४. अप्सरा तीर्थ माहात्म्य २५. वर्ण एवं आश्रम धर्म और तत्व निरूपण २६. देवस्थान विभाग २७. बकुलार्क कथा २८. छत्रानदा शांता श्री माता एवं मतगिनी देवी की अवस्थिति २९. इन्द्रेश्वरादि माहात्म्य ३०. द्वारकादि

निरूपण ३१ लोहासुर आख्यान ३२ गगाकूप निरूपण ३३ श्रीराम चरित्र ३४. सत्यमदिर वर्णन ३५ जीर्णमदिरादि उद्धार कथा ३६ शासन प्रतिपादन ३७ जाति भेद कथन ३८. स्मृति धर्म निरूपण ३६. नानाख्यान से वैष्णव धर्म निरूपण ४०. चातुर्मास्य सकल धर्म निरूपण ४१. दानव्रत महिमा ४२. तपस्या पूजा एव सच्छत्र कथन ४३. प्रकृति आख्यान ४४. शालिग्राम निरूपण ४५. तारकासुर वध उपाय ४६. लक्ष्मी अर्चन एव महिमा ४७ विष्णु की शाप से वृक्षत्व प्राप्ति एव पार्वती का अनुनय ४८ महादेव का ताडवनृत्य रामनाम निरूपण ४६ हरलिग पतन ५० जवन कथा ५१. पार्वती जन्म और चरित्र ५२. तारक वध ५३ प्रणव ऐश्वर्य कथन ५४. तारक चरित्र ५५. दक्ष यज्ञ समाप्ति ५६. द्वादश अक्षर निरूपण ५७. ज्ञान योग आख्यान ५८. द्वादश आदित्य महिमा ५६. श्रावणादि पुण्य कथा।

तृतीय ब्रह्म खड उत्तर भाग—१. शिव का अद्भुत माहात्म्य २. पचाक्षर महिमा ३ गोकर्ण महिमा ४. शिवरात्रि महिमा ५ प्रदोष व्रत कीर्तन ६. सोमवार व्रत ७. सीमतिनी कथा ८. भद्रायु उत्पत्ति कथन ६. सदाचार १०. शिव धर्म कथा ११. भद्रायु विवाह एव महिमा १२. भस्म माहात्म्य १३ शवराख्यान १४ उमा माहेश्वर व्रत १५ रुद्राक्ष माहात्म्य १६. रुद्राध्याय माहात्म्य श्रवणादि पुण्य कथन।

चतुर्थ काशी खड विध्य नारद सवाद—१ सत्य लोक प्रभाव २. अगस्त्याश्रम मे देवता सकल का आगमन ३ प्रतिव्रता चरित्र ४ तीर्थ यात्रा प्रशसा ५. सप्तपुरी आख्यान ६ यमपुरी निरूपण ७ शिव शर्मा की ध्रुवलोक इद्रलोक अग्नि लोक प्राप्ति ८ अग्नि उद्भव ६. क्रव्याद वरुण सभव १०. गंधवती अलका पुरी एव ईश्वरी का उद्भव और चाद्र मगल बुध एव रवि आदि लोक का उद्भव ११ सप्त ऋषि एवं ध्रुव लोक का वर्णन १२ ध्रुवलोक की पुण्य कथा १३. सत्य लोक निरूपण १४. स्कध और अगस्त्य का अलाप १५ मणिकर्णिका का उद्भव १६. गगा का प्रभाव एव सहस्र नाम १७. वारानसी प्रशंसा १८. भैरव आविर्भाव १६. दडपाणि एव ज्ञान रवि का उद्भव २०. कलावती आख्यान २१. सदाचार निरूपण २२. ब्रह्मचारि कथा २३. स्त्री लक्षण कथन २४. कृत्याकृत्य निर्देश २५ अविमुक्तेश्वर वर्णन २७. गृहस्थ एव

योगि धर्म २७ काल ज्ञान २८ दिवोदास कथा २६ काशी वर्णन ३०. योगिचर्या लोलार्क ३१. शाम्बार्क कथा ३२ द्रुपदार्क एवं तार्क्ष्य तीर्थकथा ३३. अरुणार्क का उदय ३४ दशाश्वमेध आख्यान ३५. मंदराचल से गणपति की माया प्रकाश ३६ पिशाचमोचन आख्यान ३७ गणेश प्रेषण ३८ गणपति का आगमन और माया प्रकाश ३६ पृथ्वी से माया का प्रादुर्भाव ४० विष्णु माया का विस्तार ४१ दिवोदास विमोचन ४२. पच नदोत्पत्ति ४३. बिंदुमाधव सभव ४४ वैष्णव तीर्थ आख्यान ४५ महादेव का काशी मे आगमन ४६. जैगायव्य के सहित महेश का आख्यान ४७ शिवक्षेत्र आख्यान ४८. कदुकेश्वर एव व्याघ्रेश्वर का उद्भव ४६. शैलेश्वर एव कृत्तिवास का उद्भव ५०. देवता सकल का अधिष्ठान ५१ दुर्गासुर का पराक्रम ५२. दुर्गाविजय ५३. ओंकारेश्वर वर्णन ५४ ओङ्कार माहात्म्य ५५ त्रिलोचन समुद्भव ५६ केदार आख्यान ५७ धर्मेश्वर कथा ५८. वीरेश्वर आख्यान ५६ गंगा माहात्म्य कीर्तन ६२ विश्वकर्मेश्वर महिमा ६१. दक्ष यज्ञोद्भव ६२ सतीश्वर एवं अमृतेश्वर उपाख्यान ६३. पराशर भुजस्तम्भ ६४ क्षेत्र तीर्थ समूह वर्णन ६५ मुक्ति मडप कथा ६६. विश्वेश्वर विभव ६७. यात्रा परिक्रम।

पचम अवती खंड—१. महाकाल वन का आख्यान २. ब्रह्मशीर्षच्छेद ३. प्रायश्चित्त विधि ४. अग्नि उत्पत्ति एव आगमन ५. देवदत्त ६. नाना पाप नाशन शिव स्तोत्र ७ कपाल मोचन आख्यान एव महाकाल वनस्थिति ८. कर्णखलेश तीर्थ आख्यान ६. अप्सरा कुड कथा १०. स्वग मे रुद्रकुड उपाख्यान ११ कुडुवेश एव मर्कटेश्वर तीर्थ वर्णन १२. स्वर्गद्वार चतुः सिधु शकराक गधवती एव दशाश्वमेध कालाश तीर्थ वर्णन १३. पिशाचकादि यात्रा १४. हनुमान एव यमेश्वर वर्णन १५. महाकालेश्वर यात्रा १६. वाल्मीकेश्वर तीर्थ १७. भेषजाख्य शुक्र तीर्थ कुशास्थली प्रदक्षिणा १८. अक्रूर मदाकिनी कपाल चद्रार्क वैभव करभेश लड्डुकेशादि तीर्थ वर्णन १६. मार्कंडेश्वर २०. यज्ञवापी २१. सोमेश २२. नरकातक २३. केदारेश्वर २४. रामेश्वर २५. सौभाग्येश्वर २६. नरार्क २७. केशार्क २८. शक्ति भेद २६. स्वर्णाक्षर मुख ३०. ओंकारेश्वरादि तीर्थ वर्णन ३१. अधक स्तुति कीर्तन ३२. कालारण्य लिंग सख्या ३३. स्वर्ण शृंग ३४. कुशास्थली ३५. अवत्याश्व ३६. उज्ज-

यिनी ३७ पद्मावती ३८ कूर्मद्वती ३६ रमावती नामक तीर्थ उपाख्यान ४० विशाला एवं प्रतिकल्प ४१ ज्वर शांतिक तीर्थ कथन ३२ शिप्रा-स्नानादि फल ४३ नाग कृत शिव स्तुति ४४ हिरण्याक्ष बधाख्यान ४५. सुंदरकुंड ४६. नील गंगा ४७ पुष्कर ४८. विंध्यवासनी ४६. पुरुषोत्तम ५० अविनाश ५१. अघ नाशन ५२ गोमती ५३. वामन एवं कुंड तीर्थ वर्णन ५४. विष्णु सहस्र नाम ५५ काल भैरव तीर्थ वीरेश्वर सरोवर आख्यान ५६. नाग पंचमी में नृसिंह महिमा वर्णन ५७ जयंतिका कुठारेश्वर यात्रा ५८. देवसाधक ५६. कर्कराज ६० विघ्नेशादि सुरोहण तीर्थ विवरण ६१. रुद्रकुंडादि बहुतीर्थ निरूपण ६२. अष्टतीर्थ निरूपण ६३. रेवा माहात्म्य ६४. धर्म पुत्र का वैराग्य वशात: मार्कंडेय संगम ६५ प्रागलय उपाख्यान ६६. अमृता कीर्तन ६७. प्रति कल्प मे नर्मदा वर्णन ६८. आर्यस्तव ६६ नर्मदास्तव ६०. कालरात्रि कथा ७१. महादेव स्तुति ७२ पृथक् पृथक् कल्प की अद्भुत कथा ७३ विशल्याख्यान ७४ जालेश्वर कथा ७५. गौरीव्रत ७६. त्रिपुर दहन कथा ७७. देहपात विधान ७८. कावेरी संगम ७६. दारुतीर्थ ब्रह्माभिन्न ईश्वर कथा ८० अग्नि ८१. रवि ८२. मेघनाद ८३. द्विदारुक ८४ देव ८५. नर्मदेश्वर ८६. कपिलाख्य ८७ करंजक ८८. कुंडलेश्वर ८६. पिप्पलाद ६०. विमलेश्वरादि तीर्थ कथन ६१ शचीहरण आख्यान ६२. मदक वध ६३. शूलभेद उद्भव ६४ पृथक् दान धर्म कथन ६५. दीर्घ तापस आख्यान ६६. ऋष्य शृंग कथा ६७. चित्रसेन कथा ६८. काशीराज मोक्षण ६६. देवशिला आख्यान १००. शबरी चरित्र १०१ व्याधाख्यान १०२. पुष्करिण्यर्क १०३. तापितेश्वर १०४. शक्र १०५. करोटीक १०६. कुमारेश १०७. अगस्त्येश १०८. मातृज १०६. लोकेश ११०. धनदेश १११. मंगलेश ११२. कामज ११३. नागेश ११४. गोपार ११५. गौतम ११६. शंखचूडज ११७. नारदेश ११८. नंदिकेश ११६ वरुणेश्वर १२०. दधि स्कंद २२१. हनुमंतेश्वर १२२. रामेश्वर १२३. सोमेश १२४. पिंगलेश्वर १२५. ऋणमोक्ष १२६. कपिलेश्वर १२७. पूतिकेश्वर १२८. जलेशय १२६. चंडार्क १३०. यम १३१. कलहंडीश १३२. नांदिक १३३. नारायण १३४. कोटीश्वर १३५. व्यास १३६. प्रभासिका १३७. नागेश्वर १३८. संकर्षण १३६. मन्मथेश्वर १४०. एरंडी संगम १४१. सुवर्णशील

१४२ करज १४३. कामह १४४ माडीर १४५ वाह्निनीभव १४६. चक्र १४७ धौतपाप १४८ स्कान्द १४६. आंगिरस १५०. कोटि १५१. अयोनि १५२. अगार १५३ त्रिलोचन १५४. इद्रेश १५५. जबुकेश १५६. सोमेश १५७ काहनाशक १५८ नार्मद १५६. आर्क १६०. आग्नेय १६१ भार्गवेश्वर १६२ ब्राह्म १६३ दैव १६४. भागेश १६५ आदि वाराह १६६ रामेश १६७ सिद्धेश १६८ आहल्य १६६. कटकेश्वर १७०. शाक्र १७१. सौम्य १७२. नान्देश १७३ तापेश १७४ रुक्मिणीभव १७५. योजनेश १७६ वराहेश १७७ द्वादशी तीर्थ १७८. शिव १७६. सिद्धेश १८०. मंगलेश्वर १८१ लिंग वराह १८२. कुडेश १८३ श्वेतवाराह १८४ भार्गवेश १८५. रवीश्वर १८६ शुक्लादि १८७ हुकारस्वामि १८८ सग मेश १८६. नरकेश १६०. मोक्ष १६१ सार्प १६२ गोपक १६३ नाग १६४. शाव १६५ सिद्धेश १६६ मार्कंड १६७ अक्रूर १६८ कामोद १६६ शूलागोप २०० माडव्य २०१ गोपकेश्वर २०२ कपिलेश २०३ पिंगलेश २०४. भूतेश २०५. गाग २०६. गौतम २०७ आश्वमेध २०८ मृदुकच्छ २०६ केदारेश्वर २१० कणखलेश २११ जालेश्वर २१२ शालग्राम २१३ वराह २१४ चद्रप्रभास २१५. आदित्य २१६. श्रीपति २१७ हसक २१८ मूलस्थान २१६. शूलेश २२०. आग्नेय एवं चित्रदैवक २२१. शिखीश्वर २२२ कोटि २२३ दशकन्य २२४. सुवर्णाक २२५. ऋणमोक्ष २२६. भारभूति २२७ पुङ्ख २२८ मुडिम २२६ आमलेश्वर २३०. कपालेश्वर २३१. शृंगेरण्डीभव २३२ कोटी २३३. लोटनेश्वर तीर्थ विवरण २३४. फल श्रुति कथन २३५. इमिजगल माहात्म्य रोहिताश्व कथा २३६. धुन्धुमार उपाख्यान २३७ धुधुमार वधोपाय २३८ धुधुमार वध कथन २३६. चित्रवह उद्भव एव २४०. महिमा कथन २४१. चडीश प्रभाव २४२. रतीश्वर वर्णन और केदारेश्वर वर्णन २४३. लक्ष तीर्थ कथन २४४. विष्णुपदी उद्भव २४५ मुखार २४६. च्यवनान्ध २४७. ब्रह्म सरोवर २४८. चक्र २४६ ललिता २५०. बहुगोमख २५१ रुद्रावर्त २५२ मार्कंड २५३ रावणेश्वर २५४ शुद्धपट २५५ देवान्धु २५६ प्रेत २५७ जिह्वोद २५८ सम्भूति २५६ शिवोद भेद तीर्थ वर्णन २६० फलश्रुति।

षष्ठ नागर खड—१. लिंगोत्पत्ति आख्यान २. हरिश्चन्द्र कथा

३. विश्वामित्र माहात्म्य ४. त्रिशंकु स्वर्ग गति ५ हाटकेश्वर माहात्म्य ६. वृत्रासुर वध ७. नागविल्व ८. शखतीर्थ कथा ६. अचलेश्वर वर्णन १०. चमत्कार पुराख्यान ११. गयशीर्ष १२ बालसख्य १३. बालमंड १४. मृगाह्वय १५. विष्णुपाद १६. गोकर्ण १७. युगरूप १८. समाश्रय १६. सिद्धेश्वर २०. नागसरोवर २१. सप्तार्षेय २२ अगस्त्य २३. भ्रूण-गतनेश २४. भैष्म औ इन्दुवैर और अर्क २५. सार्मिष्ट २६ शोभनार्थ २७. दौर्गभमान सजकेश्वर तीर्थ वर्णन २८. जमदग्नि उपाख्यान २६. नैः क्षत्रिय कथा ३०. रामह्रद ३१. नागपुर ३२ षडलिंग ३३. यज्ञभू ३४. मुडिरादि ३५. त्रिकार्क ३६. सती परियागेश ३७. यागेश वालि-खिल्य ३८. गाडुर तीर्थ कथन ३६. लक्ष्मी सप्तविंशति शाप कथन ४०. सोमप्रसाद कथन ४१. अम्बावृद्ध ४२. पादुकाख्य ४३ आग्नेय ४४. ब्रह्मकुंड ४५. गोमुख ४६. लोह षष्ट्याख्य ४७. आजाबालेश्वरी ४८. शालेश्वर ४६. राजवापी ५०. रामेश्वर ५१. लक्ष्मणेश्वर ५२. कुशेश्वर ५३. लवेश्वर तीर्थ वर्णन ५४. लिंग उपाख्यान ५५. अष्ट-षष्टि समाख्यान ५६. दमयती एव त्रिजातक उपाख्यान ५७. रेवती ५८. भद्रिका तीर्थ ५६. क्षेमकरी ६०. केदार ६१ शुक्ल ६२. मुखारक ६३. सत्य सधेश्वर तीर्थ आख्यान ६४. कर्णोत्पला नदी कथा ६५ अटेश्वर ६६. याज्ञवल्क्य ६७. गौरी ६८ गणेश तीर्थ कथा ६६. वास्तुपदा आख्यान ७०. अजाग्रह कथा ७१. सौभाग्यादि कथा ७२ शूलेश्वर कथा ७३. धमराज कथा ७४. मिष्टाम्म्रदेश्वर आख्यान ७५. गाणपत्य त्रय कथा ७६ जाबालि चरित्र ७७. मकरेश्वर कथा ७८. कालेश्वरी ७६. अधकोपाख्यान ८०. अप्सरा कुंड उपाख्यान ८१. पुष्पादित्य उपाख्यान ८२. रोहिताश्व उपाख्यान ८३. नागरोत्पत्ति कीर्तन ८४. भार्गव चरित्र ८५. विश्वामित्र ८६. सारस्वत चरित्र ८७. पैप्पलाद ८८. कसारीश एवं ८६. पौण्ड तीर्थ वर्णन ६०. सावित्र्याख्यान सहित ब्रह्मा यज्ञ चरित्र एवं रैवत भर्तृ यज्ञाख्यान कथा ६१. मुख्य तीर्थ निरीक्षण ६२. कौरव क्षेत्र ६३. हाटकेश क्षेत्र ६४ प्रभास क्षेत्र उपाख्यान ६५. पौष्कर क्षेत्र ६६. नैमिष क्षेत्र ६७. धर्म अरण्य क्षेत्र ६८. वारानसी ६६. द्वारका १००. अवती पुरी कथन १०१. वृंदावन १०२. खाण्डवा-रण्य १०३. अद्वैताख्य पुरी कथन १०४. कल्प १०५. शालग्राम एव

१०६ नन्दग्राम का उपाख्यान १०७ असि १०८ शुक्ल १०६ पितृ-संज्ञ तीन तीर्थ का वर्णन ११०. श्च्यर्बुद १११ रैवत ११२ शैव इन तीन पर्वतो का उपाख्यान ११३. गगा ११४ नर्मदा ११५ सरस्वती इन तीन नदियो का उपाख्यान ११६ कुपिका औ शग्व ११७ अमरक एव बालमडन इन चार तार्थ का हाटकेश्वर तीथ क्षेत्र के समान फल कथन ११८ साबादित्य ११६ श्राद्धकल्प १२० युधिष्ठिर १२१ आंधक १२२ जलशायि १२३ चातुर्मास्य १२४ अशून्य शयन व्रत कथन १२५ मगलेश १२६ शिवरात्रि १२७ तुला पुरुष दान १२८ पृथ्वी दान कथन १२६ बालकेश्वर १३० कपालमोचनेश्वर १३१ पाप पीड १३२ सप्त-लिंग वर्णन १३३ युगपरिमाणादि कथन १३४ निबेशशाक १३५ भार्या-ख्या कथन १३६ एकादश रुद्र कथन १३७ दान माहात्म्य १३८ द्वादश आदित्य उपाख्यान ।

सप्तम प्रभास खड—१ सोमेश वर्णन २ विश्वेश वर्णन ३ अर्क-स्थल वर्णन ४ सिद्धेश्वरादि का पृथक् उपाख्यान ५ अग्नितीर्थ ६ कपर्दीश तीर्थ वर्णन ७ भीम ८ भैरव ६ चडीश १० भास्कर ११. अगारकेश्वर १२. बुध बृहस्पति मगल चद्र शनि १३ राहु केतु १४ शिव स्वरूप मूर्ति वर्णन १५ सिद्धेश्वरादि पचरुद्र अवस्थिति वर्णन १६ वरा-रोहा १७ अजापाला १८ मगला १६ ललिता एवा ईश्वरी २० लक्ष्मीश २१ वाडवेश २२ अर्घीश २३. कामेश्वर २४ गौरीश्वर २५. वरुणेश्वर २६ उशीष २७ गणेश्वर २८ कुमारेश २६. शाकल्य ३०. शकल एव उतक ३१ गौतम ३२ दैत्यघ्नेश ३३ चक्रतीर्थ सनिहितार्थ कथन ३४ भूतेशादि लिग कथन ३५ आदि नारायण कथन ३६ चक्र-धराख्यान ३७ साबादित्य कथा ३८ कटक शोधिनी कथा ३६ महि-षघ्नी कथा ४० कपालीश्वर कथा ४१ कोटीश कथा ४२ बालब्रह्म कथा ४३ नरकेश ४४ सम्वर्तेश ४५ निधीश्वर कथा ४६ बलभद्र कथा ४७ गगा कथा एवा गणेश्वर कथा ४८. जाबवती कथा ४६. पाडुकूप सत्कथा ५० शतमेघ लक्षमेघ एवा कोटिमेध कथा ५१ दुर्बासार्क ५२ यदुस्थान ५३ हिरण्यारगम कथा ५४ नगरार्क ५५ श्रीकृष्ण ५६ सकर्षण एवा समुद्र कथा ५७ कुमारी क्षेत्रपाल ५८ ब्रह्मेश की पृथक् कथा ५६. पिगल ६० सगमेश्वर ६१ शकरार्क ६२ घटेश की कथा ६३ ऋषितीर्थ

६४ नदार्क तीर्थ ६५ त्रितयकूप कीर्तन ६६ शशपाल ६७ पर्णार्क ६८. अशुमती की अद्भुत कथा ६९ वाराह ७० स्वामि वृत्तांत ७१ छाया-लिंगाख्य ७२ गुल्फ कथा ७३ कनक नन्दा ७४ कुंती एवं ७५ गणेश कथा ७६ चमसाद्भेद ७७ विदुर ७८ त्रिलोकेश कथा ७९ मचनेश ८० त्रैपुरेश ८१ षण्ड तीर्थ कथा ८२ सूर्य्यप्राची ८३ त्र्यक्षण ८४ उमानाथ कथा ८५ शृंगार ८६ मूल स्थल ८७ च्यवनाकेश कथा ८८. अजपालेश ८९ बालार्क ९० कुबेर स्थल कथा ९१ ऋषितोषा कथा ९२. सगालेश्वर कीर्तन ९३ नारदादित्य कथन ९४ नारायणनिरूपण ९५ तप्तकुंड माहात्म्य ९६ मूलचंडीश वर्णन ९७ चतुर्वक्त्र गणाध्यक्ष ९८. कलम्बेश्वर कथा ९९ गोपाल स्वामि १०० बकुल स्वामि १०१ मारुती कथा १०२ क्षेमार्क १०३ उन्नत १०४ विघ्नेश १०५ जलस्वामि कथा १०६ कालमेघ १०७ रुक्मिणी १०८ उर्वशीश्वर १०९ भद्रा कथा ११० शखावर्त १११ इलुतीर्थ ११२ गाध्यद एव अच्युत गृह कथा ११३ जालेश्वर ११४ हुंकार कूप ११५ नाडीश कथा ११६ आशापुर विघ्नेश एवं ११७ कलाकुंड कथा ११८. कपिलेश्वर कथा ११९ जरद्गव शिव कथा १२०. नल १२१ कर्कोट १२२ हाटकेश्वर कथा १२३ नारदेश १२४ यन्त्रभूषा एवं दुर्गकूट एव गणेश कथा १२५ सुपर्णाख्य १२६. भैरवी १२७. भल्लतीर्थ कथा १२८ कर्दमाल कीतन १२९ गुप्त सोमेश्वर कीर्तन १३० बहु स्वर्णेश १३१. शृंगेश १३२ कोटीश्वर कथा १३३ मार्कंडेश्वर १३४ कोटीश्वर एवं १३५. दामोदर गृह कथा १३६ स्वर्ण रेखा १३७ ब्रह्मकुंड १३८ कुंभीश्वर १३९ भीमेश्वर १४०. ब्रह्मायर्थ क्षेत्र मृगाकुंड १४१ सर्वस्व कथा १४२. विघ्नेश १४३. गणेश १४४ रैवत कथा १४५. अर्बुदेश्वर कथा १४६. अचलेश्वर १४७ नागतीर्थ कथा १४८ वशिष्ठाश्रम वर्ण १४९ भद्र वर्ण माहात्म्य १५० त्रिनेत्र माहात्म्य १५१ केदार माहात्म्य १५२ तीर्थगमन कीर्तन १५३. कोटीश्वर १५४. रूप तीर्थ १५५. हृषीकेश कथा १५६. सिद्धेश १५७ शुक्रेश्वर १५८. मणिकर्णिकेश कीर्तन १५९. पंगु १६० यम एव १६१. वराह तीर्थ वर्णन १६२. चन्द्र प्रभास १६३. पिंडोद १६४ श्रीमाता १६५. शुक्ल १६६. कात्यायनी तीर्थ माहात्म्य १६७ पिंडारक माहात्म्य १६८ कनखल १६९ चक्र एवं १७०. मानुष तीर्थ माहात्म्य १७१. कपिलाग्नि

१७२ रक्तानुबध तीर्थ कथा १७३ गणेश १७४. पार्थेश्वरयात्रा १७५. मुद्गल यात्रा कथन १७६. चंडीस्थान १७७. नागोद्भव शिव कुड १७८. महेश कथा १७६ कामेश्वर १८० मार्कंडेय उत्पत्ति कथा १८१. उद्दालकेश १८२ सिद्धेश गत तीर्थ कथा १८३. श्री देवमाता उत्पत्ति १८४. व्यास १८५ गौतम तीर्थ कथा १८६ कुलसान्ता माहात्म्य १८७ राम एव कोटि तीर्थ कथा १८८ चद्रादूभव १८६ ईशानशृग १६०. ब्रह्मस्थानोद्भव १६१ त्रिपुष्कर १६२ रुद्र ह्रद १६३. गुहेश्वर कथा १६४ अविमुक्त माहात्म्य १६५ उमा माहेश्वर माहात्म्य १६६. महौजस प्रभाव १६७ जबुतीर्थ वर्णन १६८. गगाधर एव मिश्र कथा १६६. फलश्रुति २००. द्वारका माहात्म्य प्रसग चद्र शर्म कथा २०१. एकादशी जागरणादि व्रत २०२ महा द्वादशीकथा २०३ प्रह्लाद एव ऋषि समागम २०४. दुर्वासा उपाख्यान २०५ यात्रा उपक्रम कीर्तन २०६ गोमती उत्पत्ति कथन २०७ गोमता स्नानादि फल २०८. चक्रतीर्थ माहात्म्य २०६ गोमती समुद्र सगम २१०. दुःसनकादि ह्रदाख्यान २११. नृगतीर्थ कथा २१२ गोप्रचार कथा २१३. गोपी द्वारका गमन २१४ गोपीसरोवर आख्यान २१५ ब्रह्मतीर्थादि कीर्तन २१६ नानाख्यान युक्त पचनदी आख्यान २१७ शिवलिग २१८ महातीर्थ २१६ कृष्णपूजादि कीर्तन २२० त्रिविक्रममूर्ति कथा २२१ दुर्वासा एव श्रीकृष्णकथन २२२ कुशदैत्य वधोपाख्यान २२३ प्रतिमा आख्यान २२४, विशेष पूजाफल २२५ गोमती एव द्वारिका मे तीर्थ आगमन कीर्तन २२६ कृष्ण मदिर दर्शन फल २२७ द्वारावती अभिषेक २२८ द्वारका तीर्थ वास कथा २२६ द्वारकापुर कीर्तन।

फल श्रुति—यह पुराण लिखकर हेमशूल युक्त ब्राह्मण को दान करने से शिवलोक प्राप्ति होती है।

— ❀ —

चतुर्दश वामनपुराण

पूर्व, उत्तर दो भाग १०००० दस सहस्र श्लोक। उत्तर भाग वृहत् वामन सज्ञक इस पुराण मे त्रिविक्रम चरित्र बहुविध वर्णित है कूर्म कल्प का आख्यान।

प्रथम पूर्व भाग—१ पुराण प्रश्न २ ब्रह्मा शिरच्छेद कथा ३ कपाल मोचन आख्यान ४ दक्ष यज्ञ विनाश ५ महादेव का काल-रूप धारण ६ कामदेव दहन ७ प्रह्लाद नारायण का युद्ध एव देवता असुर का युद्ध एव सूर्य की कथा ९ भुवनकोश वर्णन १० काम्यव्रत आख्यान ११ दुर्गा चरित्र १२ तपती चरित्र १३ कुरुक्षेत्र वर्णन १४ सरोवर माहात्म्य १५ पार्वती जन्म तपस्या एवं विवाह कथन १६ गौरी उपाख्यान १७ कौशिकी उपाख्यान १८ कुमार चरित्र १९ अंधक वध उपाख्यान २० साध्य उपाख्यान २१ जावालि चरित्र २२ अरजा कथा २३ अधक युद्ध एव गण कथन २४ मरुत जन्म कथा २५ बलि चरित्र २६ लक्ष्मी चरित्र २७ त्रिविक्रम चरित्र २८ प्रह्लाद की पूर्व मे तीर्थ यात्रा २९ धुन्धु चरित्र ३० प्रेतउपाख्यान ३१ नक्षत्र पुरुष आख्यान ३२ श्रीदाम चरित्र ३३ त्रिविक्रम चरित्र ३४ ब्रह्मउक्तस्तव ३५ प्रह्लाद एवं बलि सवाद ३६ सुतल मे हरि प्रशंसा कथन

द्वितीय उत्तर भाग—१ माहेश्वरी सहिता श्री कृष्ण के भक्ति का कीर्तन २ भागवती संहिता अवतार कथा ३ सौरी सहिता सूर्य महिमा कथन ४ गाणेश्वरी सहिता गणेश महिमादि कथन। यह सहिता चतुष्टय के प्रत्येक संहिता मे एक सहस्र श्लोक।

फल श्रुति—यह पुराण लिखकर कार्तिकी सक्राति को घृत धेनु के साथ वेदज्ञ ब्राह्मण को दान करने से नरक भोग से मुक्ति और स्वर्ग लाभ होता है एव भोगादिक और देहांत मे विष्णु के परम पद की प्राप्ति होती है। यह पुराण पाठ किवा श्रवण करने से परमगति प्राप्त होती है।

—:❀:—

पंचदश कर्मपुराण

पूर्व एव उत्तर दो भाग १७००० सत्रह सहस्र श्लोक। ऊत्तर भाग पचपाद मे विभक्त। लक्ष्मी कल्पचरित्र। इसी कल्प मे हरि ने कूर्म रूप धारण किया है एव इद्रद्युम्न प्रसग से धर्मार्थ काम मोक्ष का माहात्म्य कहा है।

प्रथम पूर्व भाग—१ पुराण उपक्रम कथन २ लक्ष्मी इन्द्रद्युम्न संवाद ३ कूर्म ऋषिगण कथा ४ वर्णाश्रमाचार कथा ५ जगदुत्पत्ति कथा ६ काल सख्या एव लयान्त मे विभुस्तव ७ सर्गसंक्षेप कथा ८ शकर चरित्र ६ पार्वती सहस्रनाम १० योग निरूपण ११ भृगुवंश आख्यान १२ स्वायम्भुवकथा १३ देवतादि उत्पत्ति १४ दक्ष यज्ञ नाश १५ दक्ष सृष्टि कथा १६ कश्यप वंश कथन १७ आत्रेय वंश कथन १८ कृष्ण चरित्र १६ मार्कण्डेय कृष्ण सवाद २० व्यास पाडव की कथा २१ युगधर्म कथा २२ व्यास जैमिनि की कथा २३ वाराणसी माहात्म्य २४ प्रयाग माहात्म्य २५ त्रिलोक वर्णन २६ वेदशाखा निरूपण।

द्वितीय उत्तर भाग—१ ऐश्वरी गीता २ नानाधर्म प्रकाशिका व्यास गीता ३ नानाविध तीर्थ का पृथक् माहात्म्य ४ ब्राह्मी सहिता ५ भागवती सहिता। इसमे सकल वर्णन से पृथक् वृत्ति निरूपण है।

उत्तर भाग मे प्रथम पाद मे ब्राह्मण की सदाचारात्मिका व्यवस्थिति कथन। द्वितीय पाद मे क्षत्रिय की वृत्ति निरूपण। तृतीय पाद मे वैश्य जाति की चार प्रकार की वृत्ति निरूपण। चतुर्थ पाद मे शूद्र की वृत्ति कथन। पचम पाद मे वर्ण शकर की वृत्ति कथन।

फल श्रुति—यह पुराण लिखकर भक्ति पूर्वक हेम कूर्म युक्त ब्राह्मण को दान करने से परम गति होती है और श्रवण किवा पाठ करने से सर्वोत्कृष्ट गति मिलती है।

—:※:—

षोडश मत्स्य पुराण

१४००० चौदह सहस्र श्लोक सत्य कल्प कथा। १ व्यास कर्तृक नरसिह वर्णन २ मनु एवं मत्स्य सवाद ३ ब्रह्मांड वर्णन ४ ब्रह्मदेव एवं असुर उत्पत्ति कथन ५ मारुत उत्पत्ति ६ मदन द्वादशी कथा ७ लोकपाल पूजा ८ मन्वन्तर कथन ६ वैश्य राज्याभि वर्णन १० सूर्य एवं वैवस्वत की उत्पत्ति ११ बुध का सगम १२ पितृवंशानु कथन १३. श्राद्ध काल निरूपण १४ पितृतीर्थ प्रचार १५ सोमोत्पत्ति १६ सोम-

वंश कीर्तन १७ ययाति चरित्र १८ कार्तवीर्य चरित्र १९ सृष्ट वंश कीर्तन २० भृगुशाप २१ विष्णु का दश मूर्ति धारण २२ पुरुवंश कथा २३ हुताशनवंश कथन २४ क्रिया योग कथन २५ पुराण कीर्तन २६ नक्षत्र पुरुष कथन एवं व्रत २७ मार्कंडेय शयन २८ कृष्णाष्टमी व्रत २९ तडाग विधि माहात्म्य ३० पादुकोत्सर्ग ३१ सौभाग्य शयन वर्णन ३२ अगस्त्य व्रत कथन ३३ अनंत तृतीया ३४ रस कल्यानी व्रत कथा ३५ आनंद कर व्रत ३६ सारस्वत व्रत ३७ उपराग अभिषेक ३८ सप्तमास स्वपन व्रत कथा ३९ भीम द्वादशी व्रत ४० अनंग शयन व्रत ४१ अशून्य शयन व्रत ४२ अंगारक व्रत ४३ सप्तमी सप्तक व्रत ४४ विशोक द्वादशी व्रत ४५ दशधा मेरुप्रदान व्रत ४६ ग्रहशांति ४७ ग्रह स्वरूप कथन ४८ शिव चतुर्दशी व्रत ४९ सर्व फल त्याग व्रत ५० सूर्यवार व्रत ५१ संक्रांति स्नान ५२ विभूति द्वादशी व्रत ५३ षष्टि व्रत माहात्म्य ५४ स्नान विधि क्रम ५५ प्रयाग माहात्म्य ५५ द्वीप एवं लोकानुवर्णन ५७ अंतरिक्ष और दिशा कथन ५८ ध्रुव माहात्म्य ५९ इंद्रभवन वर्णन ६० त्रिपुर घातन ६१ पितृ प्रवर माहात्म्य ६२ मन्वंतर निर्णय ६३ चतुर्युग संभूति युगधर्म निरूपण ६४ वज्रांग-संभूति ६५ तारकासुरोत्पत्ति एवं माहात्म्य ६६ ब्रह्मदेव अनुकीर्तन ६७ पार्वती संभव ६८ शिव तपोवन वर्णन ६९ अनंगदेह दाह ७० रति विलाप ७१ गौरी तपोवन ७२ शिव प्रसादन ७३ पार्वती ऋषि संवाद एवं विवाह ७४ कार्तिकेय जन्म औ विजय ७५ तारकवध ७६ नरसिंह वर्णन ७७ पद्म कल्प कथा ७८ अंधकासुर घातन ७९ बारानसी माहात्म्य ८० नर्मदा माहात्म्य ८१ प्रवरानुक्रम ८२ पितृगाथा कीर्तन ८३ उभयमुखीदान ८४ कृष्णाजिन दान ८५ सावित्र्युपाख्यान ८६ राजधर्म ८७ विविधोत्पात् कथन ८८ ग्रह शांति कथन ८९ यात्रा निमित्त कथन ९० स्वप्न मंगल कीर्तन ९१ वामन माहात्म्य ९२ वराह माहात्म्य ९३ समुद्र मथन ९४ कालकूट अभिशान्तन ९५ देवासुर विमर्द्दन ९६ वास्तुविद्या ९७ प्रतिभा लक्षण ९८ देवता स्थापन ९९ प्रासाद लक्षण १०० देव मंडप लक्षण १०१ भविष्य राजा का उद्देश कथन १०२ महादान कथन १०३ कल्प कथा।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर भक्ति पूर्वक विषुव संक्रांति

को ब्राह्मण को दान करने से परम पद मिलता है और इस पुराण के पाठ किंवा श्रवण करने से आयु कीर्ति कल्याण की वृद्धि एवं हरि भवन प्राप्ति होती है।

—❀—

सप्तदश गरुड़पुराण

पूर्व एवं उत्तर दो खंड में। १९००० उन्नीस सहस्र श्लोक गरुड प्रति भगवान ने कहा है। इस पुराण मे तार्क्ष्य कल्प की कथा है।

प्रथम पूर्व खंड—१ पुराण उपक्रम वर्णन २ संक्षेप स्वर्ग वर्णन ३ सूर्यादि पूजा विधि ४ दीक्षा विधि ५ लक्ष्मी पूजा प्रकरण ६ नवव्यूह अर्चन ७ विष्णु पूजा विधान ८ वैष्णव पंजर ९ योगाध्याय १० विष्णु सहस्रनाम ११ सूर्य पूजा १२ मृत्यु जयार्चन १४ नाना-मंत्र १५ शिव पूजा १६ गण पूजा १७ गोपालपूजा १८ त्रैलोक्य मोहन श्री रामार्चन १९ विष्णु पूजा एवं पंचतत्व पूजा २० चक्रा-र्चन २१ देवपूजा २२ न्यासादि कथन २३ संध्यादि उपासना २४ दुर्गार्चन २५ सुरार्चन २६ माहेश्वर पूजा २७ पवित्रा रोपणार्चन २८ मूर्तिध्यान २९ वास्तु प्रमाण ३० प्रासाद लक्षण ३१ सकल देवता पृथक पूजा ३३ अष्टांग याग ३४ दान धर्म ३५ प्रायश्चित्त विधि क्रम ३६ द्वीप ईश्वर और नरक वर्णन ३७ सूर्य व्यूह कथन ३८ ज्योतिष श्राद्ध वर्णन ३९ सामुद्रिक स्वर ज्ञान ४० नवरत्न परीक्षा ४१ तीर्थ माहात्म्य ४२ गया माहात्म्य ४३ मनवन्तर पृथक् पृथक् आख्यान ४४ पित्राख्यान ४५ वर्णधर्म ४६ द्रव्यशुद्धि ४७ द्रव्य समर्पण ४८ श्राद्ध-कथा ४९ विनायक पूजा ५० ग्रहयज्ञ ५१ आश्रम कथा ५२ मन-नाख्यान एवं प्रशौच ५३ नीतिसार ५४ व्रतोक्ति ५५ सूर्य वंश ५६ सोमवंश ५७ हरि अवतार कथन ५८ रामायण ५९ हरिवंश ६० भारताख्यान ६१ आयुर्वेद ६२ निदान ६३ चिकित्सा ६४ द्रव्यगुण ६५ रोगघ्न विष्णु कवच ६६ गरुड कवच ६७ त्रिपुर आख्यान ६८ प्रश्न चूडामणि ६९ अश्वायुर्वेद ७० ओषधीनाम कथन ७१ व्याकरण शास्त्र ७२ छंदशास्त्र ७३ सदाचार ७४ स्नान विधि ७५ वैश्वदेव तर्पण

७६ संध्या ७७ पार्वण कर्म ७८ नित्य श्राद्ध ७९ सपिंड श्राद्ध ८० धर्मसार निष्कृति ८१ प्रतिसक्रम ८२ युगधर्म कृत फल ८३ योगशास्त्र ८४ विष्णु भक्ति ८५ भगवत्प्रणाम फल ८६ वैष्णव माहात्म्य ८७ नरसिंह स्तव ८८ ज्ञानामृत ८९ गुह्याष्टक स्तव ९० विष्णु अर्चना ९१. वेदांत सार सांख्य और सिद्धांत शास्त्र ९२ ब्रह्मज्ञान ९३ आत्म ज्ञान ९४ गीता सार एवं फल कथन।

द्वितीय उत्तर खंड प्रेत कल्प कथा—१ धर्म प्रकटित करण २ पूर्व योनि गति कारण ३ दानादिफल ४ और्ध्व दैहिक क्रिया ५ यमलोक मार्ग वर्णन ६ षोडश श्राद्ध फल ७ यममार्ग से निष्कृति कथन ८ धर्मराज वैभव ९ प्रेत पीडा निर्णय १० प्रेत चिन्ह निरूपण ११ प्रेत चरित्र १२ प्रेत कारण १३ प्रेत कृत्य विचार १४ सपिंडीकरण १५ प्रेतत्व मोक्षण आख्यान १६ विमुक्ति कारण दान १७ प्रेत आवश्यक दान १८ शारीरिक विनिर्देश १९ यमलोक वर्णन २० प्रेतत्व उद्धार कथन २१ कर्म कर्त्ता निर्णय २२ मृत्यु की पूर्व क्रिया कथन एवं पश्चात कर्म निरूपण २३ षोडश श्राद्ध कथन २४ स्वर्ग प्राप्ति क्रिया २५ सूतक संख्या २६ नारायण बलि कर्म २७ वृषोत्सर्ग माहात्म्य २८ निषिद्ध त्याग २९ अपमृत्यु क्रिया ३० मनुष्य कर्म विपाक ३१ कृत्याकृत्य विचार ३२ मुक्ति कारण विष्णु ध्यान ३३ स्वर्ग गमन विहित आख्यान ३४ स्वर्ग सुख निरूपण ३५ भूर्लोक वर्णन ३६ सप्तलोक वर्णन ३७ पंच ऊर्द्ध लोक कथन ३८ ब्रह्मांड स्थिति कीर्तन ३९ ब्रह्मांड अनेक चरित्र कथन ४० ब्रह्मजीव निरूपण ४१ आत्यन्तिक लय कथन ४२ फल श्रुति निरूपण।

फल श्रुति—यह पुराण पाठ करने किंवा श्रवण करने से पाप शमन होता है और लिखकर विष्णु संक्रांति को सुवर्ण हंस द्वय युक्त ब्राह्मण को दान करने से स्वर्ग लाभ होता है।

—:※:—

अष्टादश ब्रह्मांड पुराण

४ पाद तीन भाग १२००० बारह महस्र श्लोक । प्रथम भाग मे—१ प्रक्रिया पाद २ अनुषग पाद ३ उपोद्‌घात पाद मध्य भाग ४ उपसहार पाद शेष भाग। इस पुराण मे भविष्य कल्प की कथा है।

प्रथम भाग प्रक्रिया पाद आरभ—१ कृत्य समुद्देश २ नैमिषाख्यान ३ हिरण्य गर्भोत्पत्ति ४ लोक कल्पना कथा।

द्वितीय अनुषङ्ग पाद—१ कल्पमन्वतराख्यान कथा २ लोक ज्ञान कथन ३ मानसिक सृष्टि विवरण ४ रुद्र प्रभाव विवरण ५ महादेव विभूति वर्णन ६ ऋषि सर्ग वर्णन ७ अग्नि उत्पत्ति विवरण ८ काल सद्भाव वर्णन ६ प्रियव्रत समूह उद्देश १० पृथिवी आयाम एव विस्तार वर्णन ११ भारतवर्ष वर्णन १२ अन्य वर्ष वर्णन १३ जम्बादि सप्तद्वीप वर्णन १४ अधः एव उर्द्ध लोक विवरण १५ ग्रहाचार १६ आदित्य व्यूह विवरण १७ देवग्रह वर्णन १८ नीलकंठाख्यान १६ महादेव वैभव २० अमावस्या कथा २१ युग तत्व निरूपण २२ यज्ञ प्रवर्तन २२ मध्य एवं अन्त्य युग की क्रिया एवं सत्ययुग की प्रजा का लक्षण २४ ऋषि प्रवर वर्णन २५ वेद आख्यान २६ स्वायम्भुव निरूपण २७ शेष मन्वन्तराख्यान २८ पृथिवी दोहन।

मध्यभाग उपोद्‌घात पाद—१ सप्तऋषि कथा २ प्रजापति उपाख्यान ३ देवादि उद्भव ४ जय एवं क्रीड़ा ५ मरुत उत्पत्ति कीर्तन ६ काश्यप विवरण ७ ऋषि वंश निरूपण ८ पितृकल्प कथा ६ श्राद्ध कल्प कथा १० वैवस्वतोत्पत्ति ११ वैवस्वत सृष्टि विवरण १२ मनुपुत्र निर्णय १३ गधर्व निरूपण १४ इक्ष्वाकुवंश विवरण १५ अत्रिवंश विवरण १६ अमावसु अर्चन १७ रजि चरित्र १८ ययाति चरित्र १६ यदुवंश निरूपण २० कार्तवीर्य चरित्र २१ जमदग्नि विवरण २२ वृष्णिवंश विषय २३ सागर उपाख्यान २४ भार्गव चरित्र २५ गय वध २६ समर विवरण २७ पुनर्वार भार्गव विषय २८ देवासुर युद्ध मे कृष्ण का आविर्भाव वर्णन २६ शुक्र कर्तृक इलस्तव ३० विष्णु माहात्म्य विवरण ३१ इलिवंश निरूपण ३२ कलियुग के भविष्य राजा गण का चरित्र।

अतभाग उपसहार पाद—१ वैवस्वत मन्वन्तर का सक्षेप विवरण २ भविष्य मनु का कर्म चरित्र ३ कल्प प्रलय निर्देश ४ काल परिमाण विवरण ५ परिमाण और लक्षण सहित चतुर्दश लोक विवरण ६ नरक एवं विकर्म वर्णन ७ मनोमयपुर आख्यान ८ प्राकृतिक लय विवरण ९ शैवपुर वर्णन १० सत्वादि गुण सबध से जीव की गति विवरण ११ अनिर्देश्य ब्रह्म वर्णन।

फल श्रुति—यह पुराण श्रवण किंवा पाठ करै उसका पाप मोचन होय एवं देवलोक मे गति होय। यह पुराण लिख कर * स्वर्ण-

* इतिहास तिमिर नाशक तीसरा खड में यह सिद्ध किया गया है कि पहले आर्य लोग लिखना न जानते थे किंतु यह भ्रम है। पुराणों में प्रायः लिखने का अनेक स्थानों में वर्णन आया है जो इस अनुक्रमणिका से मालूम हुआ होगा और इसका अनेक मैने कई एक स्थलों मे सग्रह किया है। इतिहास तिमिरनाशक का भ्रम मूल लेख नीचे लिखा है। अब हम लोग मेक्समूलर साहब के लेखा को माने या पुराण को। यथार्थ में मेक्समूलर को भ्रम हुआ है और उसी को मूल मान कर राजा जी चले हैं तब वह क्यों न भूले।

"इसका कुछ प्रमाण नहीं मिलता कि इनको लिखना भी आता हो वेद श्रुति स्मृति शास्त्र दर्शन सूक्त ऋच साम वर्ग अध्याय अध्यापक उपाध्याय ग्रथ पाठ पाठक पठन मनन घोषण इत्यादि सब शब्द जब उनके अर्थ पर ध्यान करो यही गवाही देते हैं कि वेदों के जमाने में लिखना किसी को नहीं आता था। वेद वा ब्राह्मण वा सूत्रों में इसका कहीं कुछ जिक्र नहीं[1] है। कोई शब्द ऐसा नहीं कि जिससे इसका इशारा पाया जाय। उणादि सूत्र में जो अति प्राचीन व्याकरण है और जिसका जिक्र पाणिनी ने किया है यदि कोई शब्द ऐसा मिल भी जाता है तो वह पीछे से मिलाया हुआ मालूम होता है [इसी तरह उणादि सूत्र में दीनारः जिनः तिरीटम् स्तूपः इत्यादि शब्द पीछे से लिख दिये गए हैं। दीनारः (Denarious) रूमी शब्द है और जि धातु को जिससे जिन निकला है। सायन ने जहाँ उणादि से लिखा छोड दिया है नृसिंह ने भी अपनी स्वर मजरी में जि धातु को छोड दिया है। यह धातु किसी प्रामाणिक ग्र थ में नहीं मिलता है] जैसा अरबी शब्द किताब (पुस्तक) जिसका अर्थ ही लिखना है अथवा यूनानी शब्द पेपर (कागज़) जिसका अर्थ ही पेपरिस वृक्ष की छाल

सिहासनस्थ करके ब्राह्मण को दान करने से ब्रह्म लोक प्राप्ति होती है।

छोड़ि अनेकन साधन को मन मान कह्यौ न करै चित चाही।
नद के लाल सो नेह करै किन भूलत दौरे वृथा जिय दाही॥
आजु लौ नीचन सो हरिचन्द से कौन ने बोलि तौ प्रीत निबाही।
है गनिका सबरी गज गीध अजामिल आदिक याकी गवाही॥

—:※:—

से बनाया हुआ है कोई भी हाथ नहीं लगता। सस्कृत मे सूत्रों की रचना ऐसी है कि जुबानी याद रक्खे जाँय। सूत्रकारों ने उन्हें लिखने के लिए कदापि नहीं रचा। मनुजी ने जहाँ पढने पढाने का बहुत विस्तारपूर्वक नियम बाँधा है [ब्रह्मारम्भेवसाने च पादौग्राह्यौ गुरोस्सदा। सहत्यहस्तावध्येय सहि ब्रह्माञ्जलिः स्मृतः॥ अध्येष्यमाणन्तु गुरुर्नित्य कालमतन्द्रित। अधीष्व भो इति ब्रूयाद्विरामोसित्वति चारमेत्।] पुस्तक कलम दवात कागज का नाम भी नहीं लिखा, लिखने का कहीं किसी प्रकार से कुछ चर्चा ही नहीं किया और देखो अब तो लिखना पढना ये दोनों ऐसे द्वद्व हो गए हैं कि पर्यायी से जान पडते हैं। एक के स्मरण के साथ ही दूसरे का स्मरण भी हो आता है। निदान लिखने की विद्या इस देश में पीछे से फैली (यदि पहले होती तो महाभारत में जहाँ कौरव पाडव के दूतों का हाल लिखा है उनके साथ पत्र जाने का भी हाल लिखा होता।) पत्र लेखनी मसी ये सब शब्द पीछे से काम मे आये। उत्तर में पहले भोजपत्र और दक्षिण मे पहले तालपत्र पर लिखा होगा इसी से जिस पर लिखें उसका नाम पत्र रह गया और तालपत्र पर लीकों के खींचने अर्थात् खोदने से यह काम ही लिखना ठहरा। लिप लीपना है जब पत्रों पर सियाही लगाई होगी यह शब्द काम में आया। यदि पाणिनी के समय मे भी लिखना किसी को मालूम होता वह अवश्य इसके लिए कोई शब्द बनाता। इसने जो वर्ण अक्षर और विराम लिखा है वर्ण का अर्थ आवाज का रग है, अक्षर का अर्थ अविनाशी है, विराम का अर्थ आवाज का बद होना है। यदि वह लिखना जानता होता अनुस्वार विसर्ग जिह्वामूलीय और उपध्मानीय का नाम बोपदेव की तरह बिंदु द्विबिंदु बज्राकृति और गजकुभाकृति रखता।"

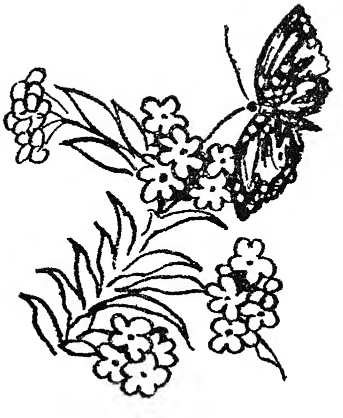

श्रीहरि

उत्सवावली

[वर्ष भर के उत्सवों की तालिका और संक्षेप सेवा श्रृंगार वर्णन]

" तत्कर्म हरितोषं यत् "
" कर्माण्येक तस्य देवस्य सेवा "
" कृष्ण सेवा सदा कार्या "

—:❀:—

४८ संं० १६३३ ?

उत्सवावली

चैत्र शुक्ल पक्ष

प्रतिपदा—नवरात्रारंभ, अभ्यंग, शृंगार भारी, हो सके तो गुलाब की फूल मंडली।

पंचमी—श्री रामानुजस्वामी का जन्मोत्सव।

षष्ठी—श्री यदुनाथ जी का जन्मोत्सव।

नवमी—श्री रामनवमी, केसरिया वस्त्र, उत्सव का शृंगार, पंचामृत (दोपहर को)।

एकादशी—मुकुट का शृंगार।

द्वादशी—दमनक (दौना) समर्पण करना।

पूर्णिमा—महारास की समाप्ति का उत्सव, मुकुट का शृंगार।

किसी के मत से चैत्र शुक्ल द्वितीया को श्री जानकी-जन्म। जिस दिन मेष संक्रांति पड़े उस दिन सत्तू के लड्डू भोग धरना।

वैशाख कृष्ण पक्ष

एकादशी—श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु का जन्म, केसरिया बागा।

बैशाख शुक्ल पक्ष

तृतीया—अक्षयतृतीया। निकु ज मे प्रथम स्नेह का उत्सव। केसरी किनारा रगा हलका वस्त्र, मोती पोत के आभरण। गर्मी की सेवा आज से चली। खसखाना, पखा, मट्टी की झारी, छिरकाव, फुहारा, जो बन जाय। परशुराम-अवतार।

सप्तमी—श्री रामराज्य।

नवमी—श्री जानकी-जन्म-दिन, श्री स्वामिनी जी से विवाहोत्सव, सेहरे का शृगार।

एकादशी—श्री हरिवश जी का जन्म।

चतुर्दशी—नृसिह जयती, गर्मी की जो सेवा बाकी हो सो सब और भी इस दिन से चलै, केसरिया वस्त्र, सध्या को पचामृत-स्नान।

पूर्णिमा—श्री राधारमण जी का प्राकट्य।

ज्येष्ठ कृष्णपक्ष

पचमी—कूर्मावतार।

ज्येष्ठ शुक्लपक्ष

दशमी—दशहरा, जमुनाजी-गगाजी का पूजन।

एकादशी—जल विहार, पानी भरकर उसमे सिहासन रखकर श्री ठाकुरजी को पधरावना।

चतुर्दशी—स्नान यात्रा के हेतु जल ले आना। जल मे फूल की कली, चदन, कपूर इत्यादि ठंढी वस्तु मिलाकर ओस मे ढँककर रखना वा विधिपूर्वक मत्र से अधिवासन करना।

पूर्णिमा—स्नान यात्रा, ज्येष्ठा नक्षत्र मे पहले दिन के लाये पानी से सबेरे श्री ठाकुरजी को स्नान कराना। मूग भींगी, फल इत्यादि ठंढी वस्तु भोग लगाना।

आषाढ़ शुक्ल पक्ष

द्वितीया—पुष्य नक्षत्र मे रथ यात्रा। सफेद गोटे का बागा। जड़ाऊ आभरण, कुलह, चद्रिका।

तृतीया—श्री ठाकुरजी का गौना।

षष्ठी—पांडुरग षष्ठी, श्री विट्ठलनाथजी (दक्षिणवाले) का पाटोत्सव है और इसी दिन से रगीन वस्त्र धारण कराना आरभ होता है।

एकादशी—हरिशयनी।

पूर्णिमा—असाढी जोग, चुनरी का बागा, मुकुट, मोर की पिछवाई।

श्रावण कृष्ण पक्ष

प्रतिपदा वा द्वितीया—जिस दिन चंद्रमा अच्छा हो हिडोला आरंभ, लाल बागा, पाग, मोरशिखा।

पचमी—अठवाँसा का उत्सव।

श्रावण शुक्ल पक्ष

तृतीया—श्री ठकुरानी तीज, चुनरी का बागा, श्री स्वामिनी जी का शृ गार भारी। हिडोले का मुख्य उत्सव।

पचमी—श्याम बागा, मुकुट का शृंगार।

अष्टमी—लाल बागा, मुकुट का शृ गार, बगीचे मे हिंडोला।

एकादशी—पवित्रा, श्री ठाकुरजी को पवित्रा यथाशक्ति समर्पण करना।

द्वादशी—गुरु को और श्री ठाकुरजी को पवित्रा समर्पण करना।

त्रयोदशी—चतुरा नागा का उत्सव।

पूर्णिमा—रक्षाबधन।

पूर्णिमा पीछे हिडोला विसर्जन अच्छे मुहूर्त मे करना।

भाद्रपद कृष्णपक्ष

सप्तमी—श्री विष्णु स्वामी का जन्मोत्सव, किसी किसी मत से पूतना-वध के कारण छठे दिन छठी नहीं हुई थी, इसी कारण इस सप्तमी को हुई।

अष्टमी—महामहोत्सव जन्माष्टमी पहिले दिन से सब तैयारी कर रखना। उत्सव के दिन बडे सबेरे उठना। घर मे जितने स्वरूप ठाकुर जी के छोटे बडे हो सबको पचामृत स्नान कराकर अभ्यग कराके उत्तम केसरिया वस्त्र शृ गार भारी कुलह चद्रिका आदिक जहाँ तक हो सकै

भारी तयारी करना। शृंगार करके तिलक करना, भेट धरना। बंदनवार थापा केले का खंभा लगाना। अष्टमी के दिन को श्री ठाकुर जी के जनम गाँठ के उत्सव की भावना करना और रात को जन्मोत्सव की भावना। सध्या से रोशनी करना। अर्द्धरात्रि को एक छोटे स्वरूप को पचामृत स्नान कराना। घंटा शंख नौबतखाना बजाना। ब्रज भयो महर के पूत, यह पद गाना। जन्म पीछे श्री ठाकुरजी को नई फूल की माला तिलक पीतांबर समर्पण करना। फिर यथा शक्ति महाभोग धरना। पजीरी भोग। सबेरे नवमी को श्रीठाकुरजी को पालने पर झुलाना। दही से नद महोत्सव करना, पालना के भोग मे मेवा मिठाई मक्खन रखना, भेट आरती करना।

भाद्रपद शुक्ल पक्ष

द्वितीया—दधिपठन का उत्सव।

पंचमी—श्रीबलदेव जी का जन्म, श्रीचद्रावली जी का जन्म। जहाँ दो स्वामिनी जी बिराजती हो वहाँ दक्षिण भाग की स्वामिनी जी को दूध का स्नान, तिलक।

अष्टमी—श्री राधाष्टमी, शृगार जन्माष्टमी का, श्री स्वामिनी जी को दूध से स्नान कराना, तिलक भोग आरती तोरण आदि जन्माष्टमी की भाँति सब करना।

एकादशी—दान एकादशी, मकुट काछनी का शृगार वस्त्र लाल, दही दूध छोटी छोटी कुल्हिया मे भोग रखना, ब्रज भक्त (सखी) हो तो उनके सिर पर दही दूध रखकर सामने खडी करना।

द्वादशी—वामनजयती, केसरिया वस्त्र, धोती उपरना, कुलह, दोपहर को पचामृत।

पूर्णिमा—साँझी के उत्सव का आरभ, साँझ को ठाकुर जी के सामने फूल की वा रग की साँझी बनाना।

आश्विन कृष्ण पक्ष

अष्टमी—महीना का चौक।

द्वादशी—श्री गो० गोपीनाथ जी का उत्सव।

त्रयोदशी—श्रीबाल कृष्ण जी का उत्सव।

चतुर्दशी—कोट की आरती।

पूर्णिमा—साँझी की समाप्ति।

आश्विन शुक्ल पत्त

प्रतिपदा—नवरात्रारभ, कुलह चद्रिका।

नवमी—नवरात्र की समाप्ति, कुलह चद्रिका, सफेद छापे का बागा, सामग्री

दशमी—विजयदशमी, सफेद जरी का बागा, पाग चंद्रिका, संध्यो को जवार की कलगी धराना, तिलक, खजर कमर में धराना, रावण वध के कीर्तन गाना।

एकादशी—मुकुट।

पूर्णिमा—महारास, सफेद ताश का बागा, मुकुट, आभरण सफेद रात को चाँदनी में श्री ठाकुर जी विराजैं, सफेद वस्तु भोग लगाना, रास के कीतन गाना।

कार्तिक कृष्ण पत्त

दशमी वा एकादशी से हटरी दीपमालिका आरभ।

त्रयोदशी—धन तेरस, हरी जरी का बागा।

चतुर्दशी—रूप चतुर्दशी, बागा लाल जरी का।

अमावस्या—दीपावली, सफेद ताश का बागा, कुलह चद्रिका, रात को हटरी मे बैठाना, सामने दीपावली, चौपड़, भँड़ेहर, खिलौना आदि रखना।

कार्तिक शुक्ल पत्त

प्रतिपदा—अन्नकूट, शृगार दीवाली का रहेगा। गोबर्धन की पूजा करके अन्नकूट का भोग रखना, जहाँ तक बन पड़े सामग्री समर्पण करना।

द्वितीया—भाई दूइज, तिलक।

अष्टमी—गोपाष्टमी।

नवमी—अक्षयनवमी, गोविंदाभिषेकोत्सव, परिक्रमा करना।

एकादशी—प्रबोधिनी, अच्छे समय मे ऊख के मंडप मे पधराय कर जगाना, नया जाड़े का कपड़ा समर्पण करना, अँगीठी आदि जाड़े का उपचार रखना।

द्वादशी—श्री गिरिधर जी का और श्री रघुनाथ जी का उत्सव।

त्रयोदशी—श्री राधावल्लभ जी का पाटोत्सव।

पूर्णिमा—यज्ञपत्नी अंगीकार।

कार्तिक मे अगस्त के फूल की माला, दीप दान, रग से स्वस्तिकादि लिखना, तुलसी समर्पण और सामग्री भोग रखना।

मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष

तृतीया—बुध अवतार।

षष्ठी—श्री गोविंदराय जी का उत्सव।

त्रयोदशी—श्री घनश्याम जी का उत्सव।

मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष

द्वितीया—कुख मे पधारे।

पचमी—श्री रुक्मिणी जी तथा श्री सीता जी का विवाहोत्सव।

सप्तमी—श्री गोकुलनाथ जी का उत्सव।

पौष कृष्ण पक्ष

नवमी—प्रभु श्री गो० विट्ठलनाथ जी का उत्सव।

पौष शुक्ल पक्ष

अष्टमी—अन्नप्राशन, इसी दिन श्री नदराय जी का जन्म।

माघ कृष्ण पक्ष

षष्ठी—श्री ठाकुर जी का नामकरण।

मकर सक्रांति जिस दिन हो उस दिन छींट के नए रूई के वागा धराना और तिल का लड्डू भोग धरना।

माघ शुक्ल पक्ष

पचमी—बसंतोत्सव, खेल आरभ, सफेद वागा, इसी दिन से अबीर बुक्का केसर चोआ से नित्य खिलाना, सामने बसत रखना, बसत राग माघ की पूर्णिमा तक गाना। श्री अद्वैत प्रभु का उत्सव।

षष्ठी—श्री यशोदा जी का जन्म ।

अष्टमी—श्री मध्वाचार्योत्सव ।

त्रयोदशी—श्री नित्यानद प्रभु का उत्सव ।

पूर्णिमा—होली डॉड़ा ।

फाल्गुण कृष्ण पक्ष

सप्तमी—श्रीनाथ जी का पाटोत्सव ।

फाल्गुण शुक्ल पक्ष

एकादशी—कुज एकादशी, फूल का मुकुट धरावना, कुज में खिलाना ।

पूर्णिमा—होलिकोत्सव, सफेद बागा, पाग, मोर चद्रिका, खेल । श्री चैतन्य प्रभु का उत्सव ।

चैत्र कृष्ण पक्ष

प्रतिपदा—दोलोत्सव, सफेद बागा, पाग मोर चद्रिका, आम के मौर की डोल बॉध कर ठाकुर जी को झुलाना, चार भोग चार खेल होय।

पचमी—मत्स्यावतार ।

त्रयोदशी—बाराहावतार ।

—:*:—

सक्षिप्त नित्य सेवा पद्धति

सेवा का मूल यह है कि स्नेह पूर्वक जैसे निज देह वा बालक वा स्वामी की गर्मी सर्दी आदि ऋतु के अनुसार भोजन वस्त्र से रक्षा की जाती है वैसे ही सर्व स्वामी परिपूर्ण परमेश्वर की मूर्ति की भी सेवा करना । नित्य सबेरे प्रातः कृत्य से निवृत्त होकर तिलक संध्या करके मदिर मे जाकर पहिले दडवत करके मार्जनी करना, रात के बरतन धोकर वस्त्रादि जो बदलना हो सब ठीक करके घटानाद पूर्वक ठाकुर जी को जगाना और मगल भोग रखकर मगला आरती करना, फिर स्नान कराकर यथा शक्ति शृ गार करना, फूल की माला पहराना, चरण पर तुलसी समर्पण करके खड़ी मूर्ति हो तो वेणु धराकर दर्पण दिख-

लाना, श्रद्धा सौकर्य हो तो शृंगार भोग रखकर फिर दूध भोग लगाकर तब राजभोग धरना। न सौकर्य हो तो शृंगार पीछे एक ही भोग रखना। आचमन मुख वस्त्र करके बीडी समर्पण करके चौपड़ खिलौना आदि सामने धर के आरती करना। फिर सज्जा साज करके किवाड़ बंद कर देना। संध्या को फिर घंटानाद करके जगा कर दिन का पानी आदि बदल कर यथा शक्ति फल भोग रखना सौकर्य हो तो साँझ को भी दो भोग और रखना नहीं तो एक ही बेर सही। फल भोग के पीछे शृंगार उतार कर शयन भोग रखना और दूध रखना। फिर आरती करके शयन कराना। गर्मी हो तो पतली चद्दर, जाड़ा हो तो रजाई उढ़ाना। स्वामिनी जी को साडी और खड़े सरूप हो तो तनियाँ रात को भी रहै। बालसरूप हो तो नंगे ही पौढ़ै। मणि विग्रह हों तो नित्य स्नान नहीं कराना। व्रत के दिन भी ठाकुर जी को नित्य की भाँति अन्न आदि समर्पण करना। गर्मी सर्दी का सेवा में बहुत ध्यान रखना।

—:❀:—

अथ संक्षिप्त निर्णय

एकादशी के व्रत का मोटा निर्णय यह है कि पहले दिन पचपन घडी से पल भर भी दशमी विशेष हो तो व्रत नहीं करना, द्वादशी को व्रत करना। किंतु निंबार्क संप्रदाय वाले ४५ घडी से अधिक दशमी हो तो व्रत नहीं करते। द्वादशी दो हों तो पहिली द्वादशी को व्रत करना। दो एकादशी हों तो दूसरी एकादशी को व्रत करना। पत्रा न मिलै और दशमी के समय में कुछ भी संदेह हो तो द्वादशी को व्रत करना। जन्माष्टमी, रामनवमी और नृसिंह जयंती उदयात् लेना और वामन द्वादशी मध्यान्हव्यापिनी, विजय दशमी सायंकाल व्यापिनी। और उत्सव सब संसार में जिस दिन तिथि मानी जाय उस दिन। रास पूर्णिमा जिस दिन चंद्रमा की कला विशेष मिलै उस दिन करना।

—:❀:—

हिंदी कुरानशरीफ़

सं० १६३२

श्रीहरिश्चंद्र चन्द्रिका ख० २ स०
८१२, सन् १८७५ ई० में
अपूर्ण प्रकाशित

हिंदी कुरानशरीफ

मुहम्मदीय मत प्रयुक्त ईश्वर के पवित्र और आदरणीय वाक्य आरंभ करता हूँ क्षमा करने वाले और दयालु ईश्वर के नाम के साथ।

सब स्तुति उसी की है जो लोकों का भर्त्ता है। हम तेरी ही वंदना करते और तुझी से सहायता चाहते हैं। मुझको सीधा मार्ग दिखा। जो मार्ग उनका है जिन पर तूने कृपा की है न कि उनका जिन पर तूने क्रोध किया है और जो भूले हैं।

१ म० खण्ड समाप्त हुआ।

—:❀:—

आरंभ करता हूँ क्षमा करनेवाले और दयालु ईश्वर के नाम के साथ।

निस्सदेह यह पुस्तक धर्मियों को उसका मार्ग दिखाती है। जो बिन देखे विश्वास करते हैं और वन्दना का नियम रखते हैं और उस पर संतोष रखते हैं जो मैंने उन्हें दिया है। और जो लोग कि उस पर विश्वास लाते हैं जो तुम्हारे लिए उतारा गया और जो तुम्हारे पूर्व उतारा गया और जो अंत के दिन का स्मरण रखते हैं।

यही लोग अपने परमेश्वर की शिक्षा पर चलनेवाले और यही लोग मुक्ति पाने वाले हैं। और निश्चय जो लोग बहिर्मुख हैं उन्हें चाहे तू कितना भी डरावै या न डरावै वे विश्वास न करैगे। कृपा की ईश्वर ने इनके चित्त कान और आँखो पर और उन पर परदा है और उनको बडा पाप है। मनुष्यो मे कोई कहते हैं कि ईश्वर पर विश्वास लाए हम और पिछले दिनो पर निश्चय किया और कोई विश्वास नहीं लाते। वे ईश्वर से और उसके विश्वासियो से छल करते हैं पर यह नहीं समझते कि उन्होने अपनी आत्मा से छल किया। इनके चित्त मे व्याधि है और ईश्वर ने बढ़ाई है इनकी व्याधि, और वे पाप के और दुःख के भागी है क्योकि वे झूठ बोलनेवाले थे, जब उनसे कहा जाता है कि पृथ्वी पर उपद्रव मत करो वे कहते हैं कि हम योग्य करते हैं, निश्चय रक्खो कि वे पाखडी है और अज्ञानी हैं, जब उनसे कहा जाता है कि तुम भी विश्वास करो जैसे औरो का विश्वास है तो वे कहते हैं, कि विश्वास हम कैसे करैं विश्वास करनेवाले तो मूर्ख हैं पर निश्चय रखो कि वे ही मूर्ख है पर वे अपने को जानते नहीं। वे जब धर्मियो से मिलते हैं तब कहते है कि हम भी उस पर विश्वास रखते है पर जब अपने (पाखडी) वर्ग के मुखियो से मिलते है तो कहते हैं कि हम निस्सदेह तुम्हारे साथ है हँसी नहीं करते, (परतु) ईश्वर उनसे हँसी करता हे और उनको अपने विरुद्ध प्रेरणा करता है, यही लोग है जिन्होने शिक्षा के बदले कुमार्ग मोल लिया इससे इनके व्यौपार मे न तो कुछ लाभ हुआ और न इनको मार्ग मिला, इन लोगो की उपमा उस मनुष्य की है जिसने आप आग लगाई और अपने पास की वस्तु जला दी इसी से ईश्वर ने उनका प्रकाश हरण कर लिया और उनको अधकार मे डाल दिया इसी से वे नहीं देखते। वे बहिरे अधे और गूँगे हैं क्योकि उनकी गति नहीं। वा मेघ की आकाश मे अधेरी और गरज और चमक से वे कानो मे उगली करते हैं पर मृत्यु की कड़क (बिजली) से डरो और (निश्चय रखो कि) भगवान दुष्टो को आच्छादन करने वाला है। निकट है कि वह बिजली उनकी दृष्टि हरण कर ले जाय क्योकि वह जब उनको प्रकाश देती है तब वे उस मार्ग पर चलते हैं और वह जब अधकार करती है तब वे खड़े रह जाते हैं और यदि

ईश्वर चाहै तो उनका कान और आँख हरण कर ले क्योंकि निश्चय ईश्वर वस्तु मात्र का प्रभु है। हे लोगो ! अपने परमेश्वर की बंदना करो जिसने तुमको और तुम्हारे पूर्वजों को उत्पन्न किया तो बचोगे। जिसने तुम्हारे हेतु पृथ्वी का बिछौना बनाया और आकाश की छत और आकाश से पानी उतार कर फल उत्पन्न करके तुम्हारा भोज्य बनाया इससे उसकी किसी को समता मत दो यह तुम जानते हो। यदि तुमको इस विषय में संदेह हो तो जो वस्तु हमने अपने दासों के हेतु बनाई है इसमें से (एक भी) वस्तु वैसी ही लाओ और अपने साक्षियों से पूछो कि ईश्वर को छोड कर तुम (कैसे) सच्चे हो तुम वैसा नहीं कर सकते निश्चय तुम वैसा नहीं कर सकते इससे उस अग्नि से डरो जिसका मनुष्य ईंधन है और पत्थर (भी उन) पाखंडियों के हेतु बनाये गए है, और लोगों को यह समाचार शुभ है जिन्होंने उस पर विश्वास किया है और अच्छी करनी की है क्योंकि उनके लिए वे स्वर्ग बने हैं जिनके नीचे नहरें बहती हैं और उनको (उत्तम) फलों का भोजन मिलैगा तब वे कहैंगे कि यह वह वस्तु है जो हमें पहिले ही से मिली हैं जो एक दूसरे के समान हैं और ये अवर्णनीय और पवित्र हैं और वे उसमें सदा रहने वाले हैं।

निश्चय भगवान को इसमें लज्जा नहीं है कि कोई मच्छड़ की उपमा दे या कोई और उपमा दे जो लोग विश्वास रखते हैं वे भली भाँति जानते हैं कि निश्चय यह उनके ईश्वर का कहा है पर जो अविश्वासी हैं वे कहते हैं कि ईश्वर को ऐसी उपमा देने की क्या आवश्यकता थी। इसी से वह बहुतों को सन्मार्ग दिखाता है और बहुतों को वह भुलाता है क्योंकि वे उसकी आज्ञा उल्लघन करते हैं। जो दुष्ट लोग शपथ किये पीछे ईश्वर के साथ के नियमों को तोड़ते हैं और जिन बातों को उसने जोडने की आज्ञा दी है उनको भी तोडते हैं और सारे देश में उपद्रव उठाते हैं वे निश्चय हानि वाले हैं। जिसने मृत से तुमको जीवनदान दिया और जीवित से मृत करैगा और फिर जिलावैगा और अपने पास बुलावैगा उस ईश्वर पर तुम क्यों नहीं विश्वास करते। उसी ने पृथ्वी पर की सब वस्तु तुम्हारे हेतु उत्पन्न की और सातों आकाश की ओर दृष्टि फेर कर पृथ्वी से उसका

(गुणद) सबध स्थिर किया और वही सर्वज्ञ है। जब उसने देवताओ से कहा कि मुझको पृथ्वी पर एक आश्चर्य (ईश्वर का दूत और स्थानापन्न) रखना है तो देवताओ ने कहा कि क्या आप ऐसा मनुष्य भेजा चाहते हैं जो उपद्रव करै और पृथ्वी पर बहुत जीवो का वध करै। हम लोग सदा आप का गुणगान करते है और आप की पवित्र मूर्ति का ध्यान करते हैं (अर्थात् हम पृथ्वी पर भेजे जाने के योग्य हैं) ईश्वर ने कहा तुम सब अल्पज्ञ हो सर्वज्ञ केवल मै हूँ फिर आदिम को उसने अपनी सृष्टि के स्थावर जगमो के नाम बताए और उन वस्तुओ को देवताओ को दिखाकर उनका नाम पूछा। उन लोगो ने कहा प्रभु तू सबसे निराला है हम सब केवल उतना ही जानते हैं जितना ज्ञान तूने हमें दिया है और निस्सदेह सर्वज्ञ केवल तू है। तब ईश्वर ने आदम से कहा कि तू इनके नाम बता तब उसने सब नाम बतलाए तब ईश्वर ने कहा कि देखो पृथ्वी और स्वर्ग का त्रिकाल ज्ञान हमको है और हम तुम्हारे प्रगट और प्रच्छन्न कर्मों को जानते है, आज्ञा दिया कि सब देवता इसकी वदना करो और सबने वदना की परतु अवलीश (इबलीस) ने वंदना न की आज्ञा से फिर गया क्योकि वह दुष्ट था। मैंने आज्ञा दी कि ए आदिम तुम और तुम्हारी स्त्री वैकुठ मे रहो और सावधानी से इन अमृत फलो को खाओ और चाहो जहाँ फिरो परतु इस वृक्ष के पास मत जाना नहीं तो पापी होगे परतु उनको स्तेन (शैतान) ने बहकाया और उनको उस परम सुख से च्युत किया। तब मैंने कहा कि तुम नीचे उतरो, तुम्हारे मे परस्पर बैर है और बहुत काल तक तुमको पृथ्वी पर रहना है और बड़े काम करने हैं फिर आदिम ने अपने ईश्वर से बहुत से धर्म सीखे और ईश्वर उनपर दयालु हुआ क्योकि वह सच्चा दयालु और क्षमावान है। फिर मैंने कहा कि तुम सब नीचे उतरो और जब कभी कोई हमारा अनुशासन मिलै तो उसको मानो क्योकि जो हमारी आज्ञा मानते हैं उनको न भय है न शोक पर जो उस आज्ञा का उल्लघन करते है और हमारे अनुभवो को झूठा करते हैं वे नारकी हैं और सदा नर्क मे रहैंगे। हे इसराईल (ईश्वरायिल) की सतान हमारे अनुग्रहो को स्मरण करो जो हमने तुम्हारे ऊपर किए और तुम अपने वचनो को पूरा करो तो मैं

भी अपने वचनो को पूरा करूगा और केवल मेरा ही भय रखो। और मानो जो कुछ हमने तुम्हारे हेतु उतारा क्योकि सच माननेवाला तुम्हारे पास है और मेरी आज्ञाओं का बहुमूल्य समझो और मुझसे भय करो। सत्य मे असत्य मत मिलाओ और सबको जान बूझकर मत छिपाओ और वदना करो (नमाज खडी करो) और दान(जकात) दो और वदना मे झुकनवालो के साथ झुको।

लोगो को सन्मार्ग पर चलने का उपदेश करते हो पर तुम आप वैसा आचरण नहीं करते। धर्म पुस्तको को पढते हो पर समझते नहीं। धैर्य से प्रार्थना करो और निश्चय रखकर वदना करो यद्यपि यह कठिन है परतु दीन भक्तो को सदा लभ्य है क्यौकि उनको अपने सृष्टिकर्त्ता परमेश्वर से मिलने और अत मे उसके पास जाने का निश्चय है। हे इसराईल की सतान हमारे उन अनुग्रहो को जो हमने तुम पर किए हैं स्मरण रखो। हमने तुमको ससार के जीवमात्र से श्रेष्ठ किया है। और उस दिन का भय रखो जिस दिन कोई किसी के कुछ भी काम नहीं आता और न किसी की सिफारश सुनी जाती है न कोई कुछ बदला देकर बच सकता है और न किसी की कोई सहायता कर सकता है। उसको स्मरण करो जो हमने तुमको फरऊनके गणो से बचाया जो तुमको बडा दुःख देते और तुम्हारे सतान का बध करते तथा तुम्हारी स्त्रियो को (दासी बनाने को) जीती रखते। ईश्वर ने इस कार्य मे तुम्हारी बडी सहायता की है। तुम देखते थे कि (नील) नदी को दो भाग करके हमने तुम्है बचा लिया और फरऊन के गण को डुबा कर नाश कर दिया। मूसा से हमने चालीस रात्रि मे सब आपत्तियो से छुडाने का प्रण किया था पर फिर तुम सब मुझसे फिर गए और बछड़े की पजा की अतएव तुम बहिर्मुख हो। तब भी हमने तुमको क्षमा किया कि तुम अब भी हमारे गुण मानो और इसी हेतु मूसा को हमने धर्म पुस्तक और उपदेश दिए कि तुम उनके द्वारा सत्यमार्ग पहिचानो। और जब मूसा ने अपनी जाति से कहा कि तुम लोगो ने इस बछड़े की पजा करके अपनी बड़ी हानि किया इससे अब तुम इसकी घृणा करो और इसके प्रायश्चित्त मे अपने जीव की बलि दो क्योकि इसी मे तुम्हारे परमेश्वर की प्रसन्नता है। यो उसने

तुम्हारी ओर फिर दृष्टि फेरी क्योकि वह क्षमावान और दयावान है परतु तुमने फिर यही कहा ए मूसा जब तक हम लाग परमेश्वर को अपने सामने न देखैगे कभी विश्वास न करैगे। इस बात पर तुम्हारे सामने बिजली ने फिर तुमको घात किया परतु हमने मरने पीछे फिर तुमको इस वास्ते जिलाया कि तुम अब भी विश्वास लाओ। और हमने दिन भर तुम पर मेघ की छाया की और मन* और सलवी† उतार कर कहा कि उत्तम वस्तुओ को मैने तुम्हें दिया तुम इन्हें खाओ। तुमने मुझसे विमुख होकर अपनी ही हानि की कुछ मेरी हानि नहीं की है। फिर मैने तुमसे कहा कि इस नगर मे बसो और यथा सुख निर्भय इन उत्तम खाद्य वस्तुओ को खाते फिरो और मेरा धन्यवाद करके द्वार मे प्रवेश करो और कहो कि हमै क्षमा कर तो मै तुम्हारे अपराधो को क्षमा करू। विशेष कर मै उनकी क्षमा करूँगा जो विश्वासी हैं। परंतु दुष्टात्मा लोगो ने फिर मुझसे मुख फेर लिया इस हेतु मैने आकाश से फिर उन अन्यायियो पर क्रोध उतारा। फिर जब मूसा ने अपने शिष्यो के हेतु पानी मॅगा मैने कहा तुम अपनी छडी पत्थर पर मारो। फिर उससे बारह सोते वह निकले और सब ने अपनी अपनी जीविका पहिचान ली। फिर मैने आज्ञा दी कि ईश्वरदत्त जीविका से निर्बाह करो और देश मे उपद्रव उठाते मत फिरो। फिर तुमने कहा कि ए मूसा हम एक प्रकार के भोजन पर सतोष न करैगे इससे तू पुकार अपने ईश्वर को कि हमारे हेतु पृथ्वी से साग, लकड़ी, गेहूँ, मसूर और प्याज उत्पन्न करै। उसने कहा तुम एक उत्ताम वस्तु के बदले बुरी वस्तु चाहते हो।

किसी नगर मे उतरो तो जो तुम मॉगते हो तुमको मिलै। तब उन पर विपत्ति और दैन्य पड़ा और ईश्वर का कोप हुआ क्योकि वह ईश्वर की आज्ञा नहीं मानते थे और आचार्यों को व्यर्थ मार डालते थे और वह आज्ञा के विरुद्ध थे और उन्होने सीमा उल्लंघन

* मन एक मीठा दाना धनिया का सा था जो ईश्वर ने जीवों पर क्षमा करके बरसाया था।

† सलवी बटेर की सी एक चिड़िया थी जिन्हें परमेश्वर ने उनके लिए भेजा था।

की थी। जो लोग मुसलमान* या यहूदी† या क्रिस्तान‡ या साबईन§ जो कोई ईश्वर पर और प्रलयकाल पर विश्वास करता है और अच्छा काम करता है, तो वह ईश्वर से अपनी कमाई पाता है और न उसको डर है, और न वह दु:ख भोगता है। जब हमने पर्वत|| ऊंचा किया और तुमसे वाक्य लिया और कहा कि जो हमने तुमको दिया उसका बल से पकड़ो जिसमे तुमको भय हो फिर इसके पीछे तुम फिर गए सो इस अवसर पर जो ईश्वर की उदारता और दया तुमपर न होता तो तुम नाश हो जाते और तुम जानते हो कि तुम लोगो मे से जिसने अतवार के दिन उपद्रव किया उनको हमने शाप दिया कि बदर हो जाओ और इस कथा को जो उस जात के लोग है वा होंगे उनके हेतु हमने विभीषिका रखा कि इससे उनको भय और उपदेश हो। और जब मूसा ने अपनी जाति को कहा कि एक बछडी बलि दो तो उन्होने कहा कि तुम हँसी करते हो। मूसा ने कहा कि मै इन मूर्खों की मडली मे ईश्वर से शरण माँगता हूँ तब वह बोले कि अपने ईश्वर को पुकार कि वह हमसे वर्णन करै कि वह गाय कैसी है। उसने कहा वह न बूढी है न बिन ब्याई और इन सभो मे डील की छोटी है लो अब जो ईश्वर ने आज्ञा किया है करो। फिर उन्होने कहा अपने ईश्वर को पुकार कि वह उसका रग बतलावै। मूसा ने कहा कि वह एक गहिरे पीले रग की गाय है जिसके देखने से नेत्रों को आनद होता है। वे बोले हमारे वास्ते अपने ईश्वर को पुकार कि वह वर्णन करै कि वह किस जात की गाय है क्योंकि हमको

* म० मुहम्मद का मत मानने वाले।

† म० मूसा का मत मानने वाले।

‡ म० ईसा का मत मानने वाले।

§ म० इब्राहीम का मत माननेवाले। इस मत के लोग अब नहीं देख पडते।

|| तूर पर्वत० जब तौरेत उतरी तब लोगों ने कहा कि यह सब आज्ञा हमसे न मानी जायँगी इस हेतु उनको भय दिखाने को ईश्वर ने तूर पर्वत ऊँचा किया कि उनके ऊपर गिर पडै।

व्यर्थ के मनोरथ किया करते हैं इससे उनके पास सेवाय तर्क वितर्कों के और कुछ नहीं है। और वे लोग अपराधी हैं जो पुस्तक अपने हाथ से लिखते है और कहते हैं कि यह ईश्वर के यहाँ से आई है और उससे लाभ उठाते हैं सो उनके इस हाथ के लिखने और लाभ उठाने पर धिक्कार है। कितने कहते है कि हमको नर्क का भय नहीं केवल कुछ दिन नर्क भोगना होगा*। तो कहो कि क्या ईश्वर से उन लोगों ने ऐसा वचन ले लिया है यदि एसा वचन ले लिया है तो अवश्य ईश्वर उसके विरुद्ध न करैगा परतु उसके विषय मे व्यर्थ झूठ क्यो कहते हो। जिन लोगो ने पाप कमाया है उनको पाप ने आच्छादन कर लिया है और वे नर्क के भागी हैं और सदा नर्क ही मे रहेंगे। और जिन लोगो ने धर्म विश्वास किया और पुण्य कर्म किए वे स्वर्ग के भागी हैं और सदा स्वर्ग मे रहेंगे। हमने इसराईल की संतान से शपथ लिया था कि ईश्वर को छोड़ और किसी की पूजा मत करो, माता, पिता, सबधी, अनाथ और दीनो का उपकार करो, लोगो से अच्छे वचन बोलो, वदना नित्य करो और दान दो किंतु तुम लोगो मे से कुछ लोग फिर गए। फिर तुम लोगों से हमने शपथ लिया कि आपस मे मार काट न करो और न अपने जातिवालो को देश से निकालो और तुमने भी यह प्रतिज्ञा की और उस पर आरूढ रहे। परतु फिर तुम वैसे ही मार काट करते हो, अपने जाति के लोगो को देश से निकाल देते हो, उन पर पाप और अन्याय से चढाई करते हो, और वही लोग जब तुम्हारे सामने बंधुए होकर आते हैं तो उनको छुडाने का भी प्रस्तुत होते हो, यद्यपि उनका निकाल देना ही पाप है, तो क्यों धर्म पुस्तक का एक वाक्य मानते हो एक नहीं मानते, तो ऐसे लोगो को क्या दड है, यही कि संसार जीवन मे तो निन्दा और प्रलय के दिन कठिन से कठिन नर्क दड, क्योंकि ईश्वर तुम्हारे सब कर्मों का ज्ञाता है। ऐसे ही लोगो ने तुच्छ ससार के बदले (चिरसुख) स्वर्ग

* यहूदियों के एक सप्रदाय का विश्वास था कि केवल थोडी सा पाप की यातना भोगने के बाद यहूदी मात्र स्वर्ग जायँगे। जैसा कि काशी वासियों का भैरवी यातना के विषय में विश्वास है।

छोड़ा है सो ऐसे लोगो का पाप न हलका होगा न उन पर दया होगी। और हमने मूसा (मोक्ष) को धर्म पुस्तक दी और उसके पीछे बराबर धर्मदूत भेजे और मरियम के पुत्र ईसा (ईश) को अनेक चमत्कार शक्ति दीं और पवित्रात्मा (जिबरील=गरुड)* के द्वारा अनेक बल दिए किंतु किसी धर्मदूत ने तुम लोगो से कोई बात ऐसी कही जो तुम्हारी रुचि के अनुसार नहीं था तो तुम अभिमान करते थे और कुछ लोगो को बहकाया और अनेको को मार डाला। और कहते कि हमारे चित्त पर आवरण† पड़ा है इससे ईश्वर ने उनको (धर्मदूतो से) विमुख होने पर धिक्कृत किया। और जब उनको धर्मपुस्तक ईश्वरकी ओर से मिली तो अपने पासवाली (धर्म पुस्तक) को सच्ची बतलाने लगे, सो यद्यपि पहिले ये अधर्मी लोगो को जीतने चाहते थे‡ परतु जब उनको वह वस्तु भेजी गई जिसका उनको ज्ञान था और उससे भी फिर गए तो विमुख होनेवालो को ईश्वर ने धिक्कार किया। ऐसे लोगो ने प्राण के बदले बुरी वस्तु मोल ली कि उन वाक्यो से जो ईश्वर ने उनके हेतु उतारा फिर गए सो भी केवल ईर्षा से और अपनी दया से वह अपने दासो मे से चाहे जिसके द्वारा अपने वाक्य उतारे अतएव (विरोधी) उन पर कोप पर कोप हुआ और ऐसे फिर जानेवालों को पाप और दुर्दशा है। और जो उनसे कहो कि जो वाक्य ईश्वर ने उतारा है उसको मानो तो वे कहते है कि हम पर जो पूर्व मे उतरा है वही मानते हैं जो अब उतरा है उसको नहीं मानते और यद्यपि यह सत्य है पर उन से पूछो कि जो तुम धार्मिक हो तो ईश्वर के दूतो को क्यो दुःख देते हो। यद्यपि मूसा प्रत्यक्ष मे आश्चर्य सिद्धि लेकर तुम्हारे पास आया परतु उसके पीछे तुमने फिर बछड़ा बना लिया और तुम उपद्रवी हो। (अपूर्ण)

* कहते हैं कि जिब्रील (गरुड) सदा ईसा के साथ रहते हैं।

† यहूदियों का विश्वास है कि उनके चित्त पर ईश्वर ने एक आवरण बनाया है जिससे दूर धर्म का उनको व्यर्थ सस्कार न हो।

‡ अर्थात् जब यहूदियों पर अधर्मी लोग उपद्रव करते तब वे (म० मुहमम्मद) अंतिम धर्म दूत के उत्पन्न होने की प्रार्थना करते पर जब वह उत्पन्न हुए तो यहूदी लोग उनसे फिर गए।

श्रीवल्लभाचार्य कृत चतुश्श्लोकी

नमः प्रेमपथप्रवर्तकेभ्यः

—:※:—

सर्वदा सर्वभावेन भजनीयो व्रजाधिपः।
स्वस्यायमेव धर्मोहि नान्यः क्वापि कथं च न ॥ १ ॥

संसार के जीवों को कर्मजाल में बधे देखकर आप परम कारुणिक श्रीमहाप्रभुजी अन्य साधनो की निवृत्ति के हेतु परम अमृत स्वरूप वाक्य श्रीमुख से आज्ञा करते हैं, सर्वदेति। सब समय में दुःख सुख मे खाते पीते उठते बैठते सब क्षण मे सर्व भाव से व्रजाधिप श्रीराधारमण ही का भजन करना क्योकि भजनीय वही है, और कोई प्रेम का बदला नहीं दे सकता और भजन भी सर्व भाव से करना अर्थात् ससार मे जितने भाव है ईश्वर भाव, गुरु भाव, मित्र भाव, पतिभाव इत्यादि पृथक् भाव जिसमे जिससे हो सब को समेटकर सब भाव से उन्हीं का भजन करना, रीझाना भी उन्हीं पर खीझना तो उन्हीं पर, मॉगना तो उन्हीं से लड़ना तो उन्हीं से, जिसमे फिर कहीं और कोई भाव न रह जाय केवल एक अवलब श्रीकृष्ण ही हो इस पर आप आज्ञा करते हैं कि जो लोग हमारे है उनका निश्चय एक यही धर्म है दूसरा कोई धर्म

कदापि किसी भाँति से नहीं है अर्थात् कर्ममार्ग प्रवर्तकः इस नाम से कोई यज्ञादिको को ही मुख्य धर्म मान कर इसे छोड़ उसमें प्रवृत्त होकर भ्रांत न हो जायँ इस हेतु आप मुक्त कठ से कहते हैं कि हमारे लोगो का तो मुख्य धर्म यही है कि सर्वदा सब भाव से केवल श्रीकृष्ण ही का भजन करना।

एव सर्वैस्स्वकर्तव्यं स्वयमेव करिष्यति।
प्रभुस्सर्वसमर्थोहि ततो निश्चिंतता व्रजेत्॥ २॥

अब जो कोई शका करे कि हम सब छोड कर एक श्रीकृष्ण ही को भजे तो हमारा योग क्षेम पितृ देव कर्मादिक सब कैसे सिद्ध होगा, इस शका के निवारण के हेतु आप आज्ञा करते है कि इन सब बातो की चिंता छोड कर जैसा पूर्व में कहा है वैसा ही करो फिर तुम्हारा जो कुछ कतव्य है वह सब आप कर लेगा करने न करने अन्यथा करने मे और भी सब मे वह निश्चय करके समर्थ है इमसे आप निश्चित हो जाना, जब हमने उसके भरोसे सब छोड़ा है तो वह अतर्यामी है आप जानता है सब कर लेगा। गीता मे उसकी प्रतिज्ञा है कि जो लोग अनन्य होकर मुझे भजते है उनका योगक्षेम मै वहन करता हूँ इससे लोक वेद दोनो से निश्चित होकर केवल भजन ही करना।

यदि श्रीगोकुलाधीशो धृतस्सर्वात्मना हृदि।
तत. किमपर ब्रूहि लौकिकैर्वैदिकैरपि॥ ३॥

जो यह शका करो कि हम लौकिक वैदिक कर्म छोड दे तो पतित न हो जायँगे उस पर आप आज्ञा करते हैं कि जो श्रीगोकुलाधीश्वर सर्वभाव से एकचित्तता से हृदय मे धारण किए गए हैं तो बताओ फिर और किसी लौकिक और वैदिक कर्मों से क्या ? क्योकि ये तो दोनो रीति से व्यर्थ पड़ते है जो श्रीकृष्ण की भक्ति नहीं है तो ये कर्म किस काम के क्योंकि ये परमानदमय श्रीकृष्ण वियोगदान मे समर्थ नहीं हैं और जो श्रीकृष्ण की भक्ति है तब ये किस काम के क्योंकि उसको फिर और कोई कर्म अवशिष्ट नहीं है इससे सर्व प्रकार से अनन्य होकर सर्वांतरयामी एक श्रीकृष्ण ही का भजन करना।

तस्मात् सर्वात्मना नित्य गोकुलेश्वर पादयोः ।
स्मरण कीर्तनं चापि न त्याज्यमिति मे मतिः ॥ ४ ॥

इससे सर्व भाव से आत्मा मन बुद्धि प्राण देह और इंद्रिय सब से नित्य प्रतिक्षण श्रीगोकुलेश्वर जुगल चरणारविंद का स्मरण और कीर्तन कभी नहीं छोडना यह श्री महाप्रभु जी आज्ञा करते हैं कि हमारी मति है अर्थात् जो श्रीमहाप्रभु जी के मतावलंबिगन हैं उनको तो सब साधन छोड कर एक श्रीकृष्ण ही भजनीय है। यह आपने अपना मत दिखाया ।

श्रीवल्लभाचार्य विरचिता चतुश्श्लोकी समाप्ता।*

* श्री हरिश्चंद मेगजीन जिल्द १ संख्या ३ दिसंबर १५ सन् १८७३ ई० में प्रकाशित।

श्रुति रहस्य

[नमः श्रीवल्लभाय श्रुतिवाक्यैस्तत्स्वरूपप्रदर्शकाय श्रीगिरिधराय च]

वेद के अक्षर कामधेनु हैं और इसी कारण सब मतो के आचार्य लोग उनके जितने अर्थ करते हैं सब मान्य होते हैं। यदि उनमे एक भी न माना जाय तो पूर्वाचार्यों पर आक्षेप होने से न माननेवाले नास्तिक गिने जाते हैं। जैसे 'चत्वारिशृ गा' इस श्रुति का निरुक्तकार, महाभाष्यकार, रामानुजाचार्य, विद्यारण्य इत्यादि ने अनेक प्रकार का अर्थ किया है और ये सब अर्थकार ऐसे हैं कि उनमें से एक के भी मानने बिना काम नहीं चलता तो सिद्धात यह हुआ कि श्रुति से जितने अर्थ निकलेंगे वे कोई अप्रमाण न होगे । जैसा चत्वारिशृ गा के यहाँ सब अर्थ दिखाते है।

चत्वारिशृ गात्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्तहस्तासो अस्य ।
त्रिधा बद्धा वृषभो रोरवीति महोदेवो मर्त्या आविवेश ॥

१. अक्षरार्थ

उसको चार सींग हैं, तीन पैर है, दो सिर हैं, सात हाथ हैं, तीन प्रकार से बँधा हुआ बैल चिल्लाता है, तेज देवता मरनेवालो में घुसा है।

अब यह केवल रूपक की भाँति कूट हुआ इसको स्पष्ट करने को

२. निरुक्तकार का अर्थ

यह श्रुति यज्ञ का प्रतिपादन करती है, चार वेद इसके चार सींग हैं, तीन सवन अर्थात् नीच, मध्य और उच्च स्वर ये तीन पैर है, प्रायणीय और उदयनीय ये दो सिर है, सात गायत्र्यादि छंद इसके हाथ है, मंत्र, ब्राह्मण और कल्प तीनो से बँधा हुआ यज्ञ वृषभ शब्द करता है, तेज का देवता मनुष्यो मे इनके कल्याण के हेतु प्रवेश करता है।

३. महाभाष्यकार का अर्थ

यह श्रुति शब्दरूपी वृषभ के वर्णन मे है यथा सज्ञा, क्रिया, उपसर्ग और निपात ये चार इसके सींग है, और भूत भविष्यत् और वर्त्तमान ये काल तीन पैर है, नित्य और कार्य ये दो सिर हैं, सात विभक्तियाँ हाथ है, हृदय, कठ और सिर तीन स्थानो मे बँधा है, वर्षण मे इसकी वृषभ सज्ञा है, शब्द करनेवाला महान् देव (शब्द स्वरूप) मरण धर्म-वाले मनुष्यो में प्रविष्ट होता है।

४. श्रीरामानुज का अर्थ

यह श्रुति ईश्वर के वर्णन मे है, चारो वेद चार सींग हैं, नित्य, बद्ध और मुक्त तीनो प्रकार के जीव तीन पाद है, शुद्ध सत्व और गुणात्मक सत्व इसके दो सिर हैं अर्थात् शिरःस्थान मे है, महत्तत्वादि, सात प्रकृति और विकृति इसके सात हाथ है, ऐसा महादेव श्रेष्ठ वृषभ वासु-देव अपने सकर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्ध इन तीनो रूपो से मनुष्यो मे बँधता नाम प्रकट होता हुआ सब वस्तुओ को रोरवीति अर्थात् नाम-रूपवत् करता है और मर्त्य नाम चेतनाऽचेतन पदार्थों को अतरात्मा होकर प्रवेश करता है।

५. श्री विद्यारण्य का अर्थ

यह श्रुति प्रणव पर है, अकार, उकार, मकार और नाद ये इसके चार सींग हैं, अध्यात्म, विश्व और तैजस ये तीन पाद हैं, चित् और अचित् ये दो शक्तियाँ शिरस्थान मे है, भूरादि सात लोक सात हाथ हैं, विराट् हिरण्यगर्भ और व्याकृत इन तीन प्रकारो से बँधा हुआ वृषभ प्रणव ब्रह्म तेजोमयत्व का प्रतिपादन करता है।

६. श्री वल्लभाचार्य जी के मतानुयायी का अर्थ

यह श्रुति श्री पुष्टि लीलास्थ पूर्ण पुरुषोत्तम ही का प्रतिपादन करती है, उन श्री पुरुषोत्तम के चार नित्य सिद्धादि यूथ शृंग अर्थात् उत्तम स्थान में हैं और उनके तीन पाद अर्थात् प्राप्ति होने के साधन तनुजा, चित्तजा और मानसी यह तीन प्रकार की सेवा है, सख्य और आत्मनिवेदन ये दो भक्तियाँ शिर अर्थात् सिद्ध स्थान में हैं, श्रवणादिक सात भक्तियाँ हाथ अर्थात् साधन स्थान में हैं, श्रीपुरुषोत्तम की पूर्वोक्त नौ प्रकार के भक्ति से युक्त जीव अलौकिक सामर्थ्य, सायुज्य और सेवा में उपयोगी देह धारण, इन तीन प्रकार से बँधा है, और उनकी लीला के प्रवेश के अर्थ धर्म-स्वरूप वर्षा करनेवाले और शोभा करनेवाले वृषभ अर्थात् श्रीआचार्य रोरवीति नाम भक्तों को मंत्र और ग्रंथ द्वारा उपदेश करते हैं जिससे वर्ण धर्मा जीव अर्थात् सेवामार्गी जीव जब अधिकारी होते हैं तब महोदेव लीलास्थ पूर्ण पुरुषोत्तम उनमें आवेश करके लीला का अनुभव कराते हैं।

७. श्रीवेणु पर अर्थ

यह श्रुति श्रीवेणु का प्रतिपादन करती है, गान में चार रीति की बानी चार सींग है, कोमलादि तीन स्वर पाद हैं, मुख्य छिद्र वा लय और स्वर दो सिर हैं, सात रंध्र सात हाथ हैं, अधर दो हस्तों से बँधा हैं; ऐसा 'रुद्रो वै वेणुः' इस श्रुति से साक्षाद्रुद्रस्वरूप वेणु 'श्रीगोपालमुपास्महे श्रुतिशिरोवशीरवैर्दर्शित', इससे वेणु रूप ही धर्म मनुष्यों में प्रवेश करता है।

८. श्री संगीत पर अर्थ

यह श्रुति संगीत का भी प्रतिपादन करती है, इसके तत, वितत, घन और धमन चार सींग हैं, तीन ग्राम तीन पाद हैं, लय और स्वर दो सिर हैं, सात स्वर वा त्रिमूर्छना सप्तक सात हाथ हैं, कंठ, नाभि और मुख इन तीन स्थलों से बँधा हुआ संगीत रूपी वृषभ अर्थात् गान ब्रह्म मनुष्यों को तन्मय कर देता है।

९. साहित्य पर अर्थ

यह श्रुति साहित्य का भी प्रतिपादन करती है, इसके आरभट्यादि

कथन चार सींग हैं, लक्षणा, व्यंजना और ध्वनि तीन पाद हैं, दृश्य और श्रव्य दो सिर है, चित्रादि सात हाथ हैं, गद्य, पद्य और गीत तीन रीति मे बंधा है, ऐसा साहित्य रूपी वृषभ मनुष्यो को चित्त मे उल्लास कर आनद देता है। यथा—

सुभाषितरसास्वाद बद्धरोमाचकचुकाः।
विनापि कामिनीसग कवयः सुखमासते ॥
सुभाषितेन गीतेन युवतीना च लीलया।
यस्य न द्रवते चित्त सवै मुक्तौऽथवा पशुः ॥*

* यह लेख श्री हरिश्चद्र मैगनीज जिल्द १ सख्या ६ मार्च १५ सन् १८७४ ई० में प्रकाशित।

इशुखृष्ट और ईशकृष्ण

पाठक गण को स्मरण होगा कि भारत भिक्षा मे "भारत भुज बल लहि जग रच्छित, भारत सिच्छा लहि जग सिच्छित" लिखा है, आज उसी का हम प्रमाण देना चाहते हैं। न्यायप्रियगण देखे कि जैसा भारत भिक्षा मे कहा गया वह उचित है कि नहीं।

समाज की उन्नति का मूल धर्म है। जहॉ का धर्म परिष्कृत नहीं वहॉ कभी समाज उन्नत नहीं। धर्म पर सब लोगो को ऐसा आग्रह रहता है, कि उसको साक्षात् परमेश्वर से उत्पन्न मानते हैं अतएव अन्य विषयो को छोड़ कर केवल धर्म पर हम विचार किया चाहते हैं और मुक्त कंठ होकर कहते हैं कि ससार के धर्माचार्य मात्र ने भारतवर्ष की छाया से अपने अपने ईश्वर, देवता, धर्म पुस्तक, धर्म नीति और निज चरित्र निर्माण किया है। जितने धर्म प्रचलित हैं या प्रचलित थे वह सब या तो वैदिको का अनुगमन है या बौद्धो का। यहॉ तक कि प्रसिद्ध ईश्वरवाची शब्द भी इसी से निकले है। अगरेजो मे परमेश्वर को गाड (God) कहते हैं। यह गौतम का नामातर है। उत्तर के देशो मे गौतम को गोडमा कहते है, इसी से यह गाड शब्द बना। फारसी मे मूर्तियो को बुत कहते है यह शब्द बुद्ध से निकला है। हरम हर्म्य से, सनम शंभु से, दैर देवल से, देव देवता से और ऐसे ही देवतावाचक अनेक शब्द दूसरे दूसरो से।

यह सब जाने दीजिये सृष्टि के आरंभ से चलिये। भगवान मनु लिखते है कि प्रथम सब जगत सुषुप्त था। फिर सर्वनियता जगदीश्वर ने स्वशक्ति से प्रवेश पूर्वक उसका चैतन्य किया। यही यूनानियों के ऋषि केयस ने भी लिखा है। फिर परमात्मा ने अपनी प्रकृति रूपी परिणत शरीर से प्रजा उत्पन्न करने की इच्छा से चिंता किया कि 'कैसे सब होगा' और यह चिंता करके पहिले जल होय यह कह कर आकाशादि क्रम से जल सृष्टि किया। ओल्ड सिस्टेम (बाइबिल) के जिनिसिस के प्रथम अध्याय को इस से, वहाँ भी यही है। फिर परमात्मा ने जल से ब्रह्मा उत्पन्न किया उसने आकाश पृथ्वी स्वर्गादि निर्माण किया और महत्तत्व अहंकार गुण आदि की क्रम से सृष्टि हुई और उससे मनुष्य पशु पक्षी स्थावरादि उत्पन्न हुए। फिर प्राणविशिष्ट इंद्रादि देवगण और कर्म हेतुक पाषाणमय देवगण और साध्य नामक सूक्ष्म देवगण अग्निष्टोमादि यज्ञ बनाये गए। *

अँगरेजी और यूनानी फिलासिफी मे इस बात की छाया देख लीजिये। फिर वेद क्रिया काल ग्रह उन्नत अवनत स्थान तप संतोष इच्छा आदि की सृष्टि हुई फिर कर्तव्य अकर्तव्य कर्म के विभाग के हेतु धर्म अधर्म की सृष्टि हुई। धर्म का फल सुख और अधर्म का दुःख (अब महाभारत के आदि पर्व मे धर्म अधर्म की सृष्टि वर्णन इस मनु कथित सृष्टि की तुलना करके उससे मिल्टन के मृत्यु विषयक प्रस्ताव मिला कर पढो।) फिर पंच महाभूतो के सूक्ष्म अंश और स्थूल अंश से जगत की सृष्टि हुई। (मिल्टन की ५ वीं पुस्तक मे स्वर्गच्युति के गल्प से इसे मिलाओ।) फिर मानव सृष्टि हुई और आत्मा को उसके देहो मे प्रवेश का अधिकार दिया गया और एक को छोड़ कर दूसरे में गमन का भी (इससे सिद्ध होता है कि Transmigration of soul के प्रगट कर्ता भी मनु ही हैं।)

ऐसे ही संसार के सब देवता भी भारतवर्ष ही के देवगण की छाया हैं। मिनर्वा नाम्ना यूरोप की प्राचीन देवी हम लोगों की भगवती दुर्गा हैं। मिनर्वा इंद्र के कंधो से प्रगटी है यहाँ भी दुर्गा देवताओं

* See Plato's Theology Concerning spiritual nature.

के अश (अश कधे को भी कहते है) से प्रादुर्भूत हुई हैं। मिनर्वा भी सब शस्त्रो के लिए जन्मी है और दुर्गा भी, मिनर्वा युद्ध की देवी है दुर्गा भी। मिनर्वा शनिश्चर से लड़ी है दुर्गा महिषासुर से (महिषासुर और शनैश्चर मे सादृश्य यह है कि शनैश्चर महिषवाहन है और महिषासुर महिष रूप) मिनर्वा और दुर्गा दोनो सिंहवाहिनी हैं मिनर्वा के एक हाथ मे भाला और दूसरे मे मदुम का सिर है (यह मदुस शब्द मधु वा महिष से निकला होगा) और दुर्गा का भी यही ध्यान है। मिनर्वा का दूसरा ध्यान कटे सिर का मुकुट पहिने और सर्प लपेटे है और दुर्गा का भी। मिनर्वा को मुर्गे प्यारे हैं यहाँ देवी को भी कुक्कुट बलि दिया जाता है।

अब अपेल्लो को लीजिए। यह हिंदुओ के श्रीकृष्ण का चित्र है। इसका सूर्य मे निवास है और यहाँ भी नारायण का सूर्य मे निवास है। इस नाम के चार देवता थे और यहाँ भी श्रीकृष्ण के चार व्यूह हैं। उसने पाइथन नामक सर्प को मारा और यहाँ भी कालिया दमन हुआ। वहाँ वह शिल्प, औषध, गान, काव्य, और रस का देवता है और यहाँ भी। उसका ध्यान सुदर युवा, लबे केश और हाथ मे कभी धनुष कभी वशी लिये है और यहाँ भी। वह पर्वत पर नव मित्रो के साथ विहार करता था यहाँ गिरिराज पर नव गोपियो के साथ विहार है।

वैसे ही जुपिटर* इद्र है। और इन दोनो को देवराजत्व प्राप्त है। यहाँ इस को अपने भाई टिटन्स का डर था वहाँ हिरण्य कशिपु का। इद्र भी बडा लपट है और जुपिटर भी। जुपिटर का ध्यान सोने के सिहासन पर बिजली हाथ मे लिये हुये मेघो मे शासन करते हुए है, और यहाँ भी वज्रहस्त है। किंतु जुपिटर के चरित्र मे श्रीकृष्ण के बहुत से चरित्र मिला दिये हैं†।

* यद्यपि यूरोप वालों ने हमारे देवताओं के चरित्र का बहुत अनुकरण किया है तथापि उसके देवताओं के वेश में बडा गडबड़ है इससे वंश परपरा को मिलान न कर के केवल चरित्र मात्र का यहाँ उदाहरण दिया है।

† दिव धातु से देववाची शब्द ससार में प्रसिद्ध है। भारत के इद्र देव

केवल यूरोप के मूर्तिपूजको पर ही नहीं नये सप्रदाय वालो की भी यही दशा है। गेब्रिल (जिबरईल) गरुड़ का अपभ्र श है और गरुड जैसे परमेश्वर के सबसे उत्तम पार्षदो मे है वैसे ही जिबरईल उत्तम फरिश्तो मे। वरच फरिश्ता शब्द ही पार्षद का अपभ्रश है। जिब्रईल का ईश्वर की आज्ञा ला कर मत-प्रवर्त्तक होने का उदाहरण भी रामानुज सप्रदाय मे देख लीजिये। क्रिस्तानो मे एक आचार्य जोसफेट करनेल है और यह महात्मा शाक्यसिंह की प्रतिमूर्ति हैं। दोनो के पिता राजा, दोनो के जन्म के पूर्व ज्योतिषियो ने कहा था कि यह या तो बडा प्रतापी राजा होगा या धार्मिक। दोनो के पिता ने चेष्टा किया कि जिसमे पुत्र सन्यासी न हो और उनको रम्य उद्यान मे रखा किंतु ससार की असारता जान कर दोनो ही सन्यासी हो गये और दोनो ने अपने पिता को नये धर्म से दीक्षित किया। सबसे ऊपर आनद की बात यह है जान, जो मनुष्य जोजफेट का माहात्म प्रचारक है, लिखता है कि जोजफेट भारवर्ष मे हुआ और हिंदुस्थान से आये विश्वस्त लोगो से हमने उसका चरित्र सुना। अब बतलाइये जोजफेट शाक्यसिह ही का नामान्तर है कि नहीं*।

धर्म ही पर नहीं नीति सबधी भी यावत् गल्प मात्र इसी भारत-वर्ष से फैलकर और स्थानो मे गई है। विलसन साहब लिखते है—केपस नगर के घोडा का उपाख्यान भारतवर्ष मे भी प्रचलित है किंतु भेद इतना है कि भारतवर्ष मे घोड़ा हाथी के स्वरूप मे है। उर्दू किताबो का यह किस्सा अत्यत प्रसिद्ध है कि टके की मुर्गी लेंगे, तब उसको अडे बच्चे होंगे तो उनको बेच कर बकरी लेंगे, उसको बच्चे होंगे तो उनको बेच कर घोड़ी लेंगे, उसको बच्चे होंगे तो उससे रोजगार करेंगे, रुपया पैदा होगा तब बादशाह की बेटी से शादी

व देवेंद्र और यूनान मे दिवस वा जियस। दोनों वज्रपाणि वारिदाता दाम्भिक पर्वत वासी और विलाससुखभोगी और एक वृत्रदानवहन्ता दूसरे टाइटस-दानव हन्ता।

* See Professor Max Muller's Sanskrit Literature

करेंगे जब वह शर्बत पिलाने आवेगी और खडी होकर विनती करके कहेगी कि मेरे प्यारे दूध पीओ तो हम एक लात मारेंगे, यह कह कर लात जो चलाया तो बरतन फूट गए। इसी से मसल निकली है कि तुम्हारा तो बर्तन फूटा हमारी गृहस्थी ही खराब हो गई। अंग्रेजी मे इस गल्प को और तरह से कहते हैं। फरासीस मे लाफेन्टन कवि ने इसको पैरट गोपिनी के नाम से लिखा है जिसने पूर्व की भॉति सोचते सोचते अपना दधिभाजन फोड़ डाला। संसार की और भाषाओ मे भी रूपातर से यह गल्प प्रसिद्ध है।

परतु इसका मूल कहॉ है ? भारतवर्ष मे। पचतत्र देखिये उसमे यह किस्सा स्वभाव कृपण नामक ब्राह्मण के नाम से प्रसिद्ध है, और हितोपदेश मे देवशर्मा के नाम से। एक विद्वान ने लिखा है कि ब्राह्मण से एक साधारण चर्म विक्रेता वा कुभकार इत्यादि नाम हुआ। अंत मे जयसुरसिक लाफेण्टन ने इस गल्प को लिखा तो इस शुष्क ब्राह्मण के स्थान पर नवयौवना ग्वालिनि को पुस्तक मे स्थान दिया। अब कहिये कि कैसे सस्कृत वेश त्याग कर यह सब किस्से और भाषा मे हुए और इतनी दूर पहुँचे। इस छोटे छोटे किस्सो मे एक ऐसी संजीवनी शक्ति है कि राज्य और धर्म का हेर फेर हो जाय और भाषा का परिवर्तन हो जाय परतु यह सब छोटी छोटी गल्प बालको और मुग्ध स्त्रियो के मुख द्वारा एक ही रूप से अनेक सहस्र कोस तक प्रचलित रहेंगे। महात्मा मोक्षमूलर लिखते हैं 'उन्नीसवीं शताब्दी मे इस खीष्ट धर्म प्रधान देश मे हम लोग अपने बालको को जो ऐहिक और पारलौकिक ज्ञान की गल्पो मे शिक्षा देते हैं वह धर्म विरोधी ब्राह्मणो और बौद्धो की पौत्तलिक धर्म की पुस्तको से सग्रहीत हैं। अब इस बात को कोई न मानेगा किंतु हजार दो हजार बरस पहले भारतवर्ष के किसी निर्जन वन और क्षुद्र पल्लियो मे भ्रमण करने ही से यह सभ्य बीज प्राप्त होता, जो अब समस्त पृथ्वी मे विस्तृत है और सरस बालको के हृत क्षेत्र मे सदा लहलहाता रहेगा। बड़े बड़े विद्वान भी किसी अपनी नीति को इस सुरीति पर सर्व हृदयग्राही और चिरस्थायी नहीं कर सके हैं जैसा कि इन गल्प रचयिताओ ने सहज हृदयग्राही रचना की है। किंतु ये बुद्धिमान लोग कौन थे यह ज्ञात नहीं और

ससार के और और मानवोपकारियो की भॉति विस्मृति देवी के अपार उदर मे यह भी शयन करते हैं। यदि दो सहस्र वर्ष पूर्व कोई भारत वर्ष मे जाता तो ये महात्मा लोग मिलते। अब केवल हम यही कह सकते हैं कि यह अति चातुर्य उन्हीं लोगो का है जिनको अब कोई कोई निगरो पुकारते हैं।" *

* श्रीहरिश्चंद्र चद्रिका खड ६ सख्या ७ जनवरी सन् १८७६ पर प्रकाशित और इसके अत में 'क्रमशः' छपा है अतः अधूरा है।

वैष्णवता और भारतवर्ष

यदि विचार करके देखा जायगा तो स्पष्ट प्रकट होगा कि भारतवर्ष का सबसे प्राचीन मत वैष्णव है। हमारे आर्य लोगों ने सबसे प्राचीनकाल में सभ्यता का अवलंबन किया और इसी हेतु क्या धर्म क्या नीति सब विषय के संसार मात्र के ये दीक्षागुरु हैं। आर्यों ने आदिकाल से सूर्य ही को अपने जगत् का सब से उपकारी और प्राणदाता समझ कर ब्रह्म माना और इन का मूल मंत्र गायत्री इसी से इन्हीं सूर्य नारायण की उपासना में कहा गया है। सूर्य की किरणें 'आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनव' जलोंमें और मनुष्योंमें व्याप्त रहती है और इस द्वारा ही जीवन प्राप्त होता है इसी से सूर्य का नाम नारायण है। हम लोगों के जगत् के ग्रह मात्र, जो सब प्रत्येक ब्रह्माण्ड हैं, इन्हीं की आकर्षण शक्ति से स्थिर हैं, इसी से नारायण का नाम अनंत कोटिब्रह्माडनायक है। इसी सूर्य का वेद में नाम विष्णु है, क्योंकि इन्हीं की व्यापकता से जगत् स्थित है। इसी से आर्यों में सबसे प्राचीन एक ही देवता थे और इसी से उस कालके भी आर्य वैष्णव थे। कालांतर में सूर्य में चतुर्भुज देव की कल्पना हुई। 'ध्येयः सदा सवितृ मंडल मध्यवर्ती नारायणःसरसिजासनसंनिविष्ट'', 'तद्विष्णोः परमं पदम्', 'विष्णो. कर्माणि पश्यत', 'यत्र गावो भूरिशृंगा.', 'इदंविष्णुर्विचक्रमे' इत्यादि श्रुति जो सूर्यनारायण के आधिभौतिक ऐश्वर्य की प्रतिपादक

थीं, आधिदैविक सूर्य की विष्णुमूर्ति के वर्णन मे व्याख्यात हुई । चाहे जिस रूप से हो वेदो ने प्राचीनकाल से विष्णुमहिमा गाई । उस के पीछे उस सूर्य की एक प्रतिमर्ति पृथ्वी पर मानी गई, अर्थात् अग्नि । आर्यों का दूसरा देवता अग्नि है । अग्नि यज्ञ है और 'यज्ञो वै विष्णुः' यज्ञ ही से रुद्र देवता माने गये । आर्यों के एक छोड़ कर दो देवता हुए । फिर तीन और तीन से ग्यारह को त्रिविध करने से तैतीस और इसी तैतीस से तैतीस करोड देवता हुए । इस विषय का विशेष वर्णन अन्य प्रसग मे करैगे । यहाँ केवल इस बात को दिखलाते है कि वर्तमान समय मे भी भारतवर्ष से और वैष्णवता से कितना घनिष्ठ सबध है । किंतु योरप के पूर्वीविद्या जाननेवाले विद्वानो का मत है कि रुद्र आदि आर्यों के देवता नहीं हैं * वह अनार्यो (Non-Aryan or Tamalıan) के देवता है । इस के वे लाग आठ कारण देते हैं। प्रथम वेदो मे लिगपूजा का निषेध है । यथा वशिष्ठ इद्र से विनती करते है कि हमारी वस्तुओ को 'शिश्नदेवा' (लिगपूजक) से बचाओ इत्यादि† ऋग्वेद और अन्यान्य ऋचाओ मे भी शिश्नदेवालोगो को असुर, दस्यु इत्यादि कहा है और रुद्री मे भी रुद्र की स्तुति भयकर भाव से की है । दूसरी युक्ति यह है कि स्मृतियो मे लिगपूजा का निषेध है । ‡ प्रोफेसर मैक्समूलर ने वशिष्ठस्मृति के अनुवाद के स्थल मे यह विषय बहुत स्पष्ट लिखा है । तीसरी युक्ति वे यह कहते हैं कि लिगपूजक और दुर्गाभैरवादिको के पूजक ब्राह्मण को पंक्ति से बाहर करना लिखा है । (मिताक्षरावृत्त ब्रह्माडपुराण के वाक्य, चतुर्विशतिमत पराशर व्याख्या मे माधव श्लोक २६, आपस्तम्ब, भागवत चतुर्थस्कध द्वितीयाध्याय २८ श्लोक और धर्माब्धिसार के तीसरे परिच्छेद का पूर्वार्द्ध देखो ।) चौथी युक्ति यह कहते हैं कि लिग का तथा दुर्गा भैरवादि का निर्माल्य

* एँटिक्विटीज अव उडीसा १ जिल्द १३६ पेज देखो ।

† Rıgveda, IV., P. 6 and Dr Wılson's Vedıc Comments

‡ Professor Max Muller's Ancient Sanskrit Lıterature, P. 55

खाने मे पाप लिखा है। कमलाकरान्हिक, निर्णयसिंधु (आचारमाधवादि ग्रंथो मे सैकडो वाक्य हैं, देख लो)। पाँचवे शास्त्रो मे शिवमदिर और भैरवादिको के मदिर को नगर के बाहर बनाना लिखा है। * छठवे वे लोग कहते हैं कि शैवबीजमन्त्र से दीक्षित और शिव को छोड़ कर और देवता को न माननेवाले ऐसे शुद्ध शैव भारतवर्ष मे बहुत ही थोड़े हैं। या तो शिवोपासक स्मार्त्त हैं या शाक्त हैं। शाक्त भी शिव को पार्वती के पति समझकर विशेष आदर देते है, कुछ सर्वेश्वर समझ कर नहीं। जगमादिक दक्षिण मे जो दीक्षित शैव हैं वे बहुत ही थोडे हैं। शाक्त तो जो दीक्षित होते हैं वे प्रायः कौलही हो जाते हैं। सौर गाणपत्य की तो कुछ गिनती हो नहीं। किंतु वैष्णवों मे मध्व और रामानुज को छोडकर और इन मे भी जो निरे आग्रही हैं वे ही तो साधारण स्मार्तों से कुछ भिन्न है, नहीं तो दीक्षित वैष्णव भी साधारण जनसमाज से कुछ भिन्न नहीं और एक प्रकार के अदीक्षित वैष्णव तो सभी है। सातवीं युक्ति इन लोगा की यह है कि जो अनार्यलोग प्राचीन काल मे भारतवर्ष में रहते थे और जिन को आर्यलोगो ने जीता था वही शिल्पविद्या नहीं जानते थे और इसी हेतु लिंग, ढोंका सिद्धपीठ इत्यादि पूजा उन्हीं लोगो की है जो अनार्य हैं। आठवे शिव, काली, भैरव इत्यादि के वस्त्र, निवास, आभूषण आदिक सभी आर्यों से भिन्न हैं। स्मशान मे वास, अस्थि की माला आदि जैसी इन लोगो की वेषभूषा शास्त्रो मे लिखी है वह आर्योचित नहीं है।

* भागवत के पहले स्कंध के दूसरे अध्याय का २५ श्लोक। "व्यवहाराध्याय दिव्य प्रकरण कोष विधान १८ श्लोक, वशिष्ठस्मृति, गीतासप्तमाध्याय २० श्लोक, गौतमकृताचारसूत्र १२ खड, आचारप्रकाश में मत्स्यपुराण का वाक्य और काशीखड का वाक्य देखो। इस विषय की पुष्टता के हेतु प्रोफेसर मैक्समूलर लिखते हैं कि जिस ऋचा के वशिष्ठ ऋषि हैं उसी में शिश्नदेवालोगों की निंदा है अतएव इस विषय में वशिष्ट की स्मृति भी प्रमाण के योग्य है। बहुत लोग यह भी कहते हैं कि शाक्तमत नास्तिकों की प्रकृति ही से जगत् माननेवाले (Naturalists) की नेचरियों की शाखा है, क्रम पा कर उसी प्रकृति को वे लोग देवी के आकार में मानने लगे।

इसी कारण शास्त्रो मे शिव का, भृगु और दक्ष आदि का विवाद कई स्थल पर लिखा है और रुद्रभाग इसी हेतु यज्ञ के बाहर है। यद्यपि ये पूर्वोक्त युक्तियॉ योरोपीय विद्वानो की हैं, हमलोगो से कोई सबध नहीं किंतु इस विषय मे बाहरवाले क्या कहते है, केवल यह दिखलाने को यहॉ लिखी गई है।

पाश्चिमात्य विद्वानो का मत है कि आर्य लोग (Aryans) जब मध्य एशिया (Central Asia) मे थे तभी से लोग विष्णु का नाम जानते है। जोरोस्ट्रियन (Zorastrian) ग्र थ जा ईरानी और आर्य शाखाओ के भिन्न होने के पूर्व के लिखे है उन मे भी विष्णु का वर्णन है। वेदो के आरभकाल से पुराणो के समय तक तो 'विष्णुमहिमा आर्यग्र थो मे पूर्ण है। वरच तत्र और आधुनिक भाषा ग्रथो मे उसी भॉति एकछत्र विष्णुमहिमा का राज्य है।

पडितवर बाबू राजेन्द्रलाल मित्र ने वैष्णवता के काल को पॉच भाग मे विभक्त किया है। यथा १ वेदो के आदि समय की वैष्णवता, २ ब्राह्मण के समय की वैष्णवता, ३ पाणिनि के और इतिहासो के समय की वैष्णवता, ४ पुराणो के समय की वैष्णवता, ५ आधुनिक समय की वैष्णवता।

वेदो के आदि समय से विष्णु की ईश्वरता कही गई है। ऋग्वेद सहिता मे विष्णु की बहुत सी स्तुति है। विष्णु को किसी विशेष स्थान का नायक या किसी विशेष तत्व वा कर्म का स्वामी नहीं कहा है, वरच सर्वेश्वर की भॉति स्तुति किया है। यथा विष्णु पृथ्वी के सातो तहो पर फैला है। विष्णु ने जगत् को अपने तीन पैर के भीतर किया। जगत् उसी के रज मे लिपटा है। विष्णु के कर्मो को देखो जो कि इद्र का सखा है। ऋषियो ! विष्णु के ऊँचे पद को देखो, जो एक ऑख की भॉति आकाश मे स्थिर है। पडितो ! स्तुति गाकर विष्णु के ऊँचे पद को खोजो। इत्यादि। ब्राह्मणो ने इन्हीं मंत्रो का बड़ा विस्तार किया है और अब तक यज्ञ, होम, श्राद्ध आदि सभी कर्मों मे ये मत्र पढ़े जाते हैं। ऐसे ही और स्थानो मे विष्णु को जगत् का रक्षक, स्वर्ग और पृथ्वी का बनानेवाला, सूर्य और ॲधेरे का उत्पन्न

करनेवाला इत्यादि लिखा है। इन मत्रो मे विष्णु के विषय मे रूप का परिचय इतना ही मिलता है कि उस ने अपने तीन पदो से जगत् को व्याप्त कर रखा है। यास्क ने निरुक्त मे अपने से पूर्व के दो ऋषियो का मत इस के अर्थ मे लिखा है। यथा शाक्यमुनि लिखते हैं कि ईश्वर का पृथ्वी पर रूप अग्नि है, घन में विद्युत् है और आकाश मे सूर्य है। सूर्य की पूजा किसी समय समस्त पृथ्वी मे होती थी यह अनुमान होता है। सब भाषाओ में अद्यापि यह कहावत प्रसिद्ध है कि 'उठते हुए सूर्य को सब पूजता है।' (अरुणभाव सूर्य के उदय, मध्य और अस्त की अवस्था का तीन पद मानते है।) दुर्गाचार्य अपनी टीका मे उसी मत को पुष्ट करते हैं। सायणाचार्य विष्णु के बावन-अवतार पर इस मत्र को लगाते है। किंतु यज्ञ और आदित्य ही विष्णु है, इस बात को बहुत लोगो ने एक मत होकर माना है। अस्तु, विष्णु उस समय आदित्य ही को नामातर से पुकारा है कि स्वय विष्णु देवता आदित्य से भिन्न थे, इस का झगड़ा हम यहाँ नहीं करते। यहाँ यह सब लिखने से हमारा केवल यह आशय है कि अति प्राचीनकाल से विष्णु हमारे देवता हैं। अग्नि, वायु और सूर्य यह तीनो रूप विष्णु के हैं, इन्हीं से ब्रह्मा, शिव और विष्णु यह तीन मूर्तिमान् देव हुए है।

ब्राह्मणो के समय मे विष्णु की महिमा सूर्य से भिन्न कह कर विस्तर रूप से वर्णित है और शतपथ, ऐतरेय और तैत्तिरीय ब्राह्मण मे देवताओ का द्वारपाल, देवताओं के हेतु जगत् का राज्य बचानेवाला इत्यादि कह कर लिखा है।

इतिहासो मे रामायण और भारत मे विष्णु की महिमा स्पष्ट है, वरच इतिहासो के समयमे विष्णु के अवतारोका पृथ्वी पर माना जाना भी प्रकट है। पाणिनि के समय के बहुत पूर्व कृष्णावतार, कृष्ण पूजा और कृष्णभक्ति प्रचलित थी, यह उन के सूत्र ही से स्पष्ट है। यथा, जीविकार्थे चापण्ये वासुदेवे. ॥ ५ ॥३।६६॥ ० कृष्ण नमेच्चेतसुख यायात्। ३। ३। १५ इ० वासुदेवे भक्तिरस्य वासुदेवकः ॥४ ॥ ३॥६८॥ ० और प्रद्युम्न, अनिरुद्ध और सुभद्रा नाम इत्यादि के पाणिनि के लिखने

ही से सिद्ध है कि उस समय के अति पूर्व कृष्णावतार की कथा भारतवर्ष मे फैल गई थी। यूनानियो के उदय के पूर्व पाणिनि का समय सभी मानते है। विद्वानो का मत है कि क्रम से पूजा के नियम भी बदले यथा पूर्व मे यज्ञाहुति, फिर बलि और अष्टांग पूजा आदि हुई और देवविषयक ज्ञान की वृद्धि के अत मे सब पूजन आदि से उस की भक्ति श्रेष्ठ मानी गई।

पुराणो के समय मे तो विधिपूर्वक वैष्णव मत फैला हुआ था, यह सब पर विदित ही है। वैष्णव पुराणो की कौन कहे, शाक्त और शैव पुराणों मे भी उन देवताओं की स्तुति उन को विष्णु से सपूर्ण भिन्न कर के नहीं कर सके है। अब जैसा वैष्णव मत माना जाता है उस के बहुत से नियम पुराणो के समय से और फिर तत्रो के समय से चले हैं। दो हजार वर्ष की पुरानी मूर्त्तियाँ वाराह, राम, लक्ष्मण और वासुदेव की मिली हैं और उन पर भी खुदा हुआ है कि उन मूर्त्तियो की स्थापना करनेवालो का वश भागवत अर्थात् वैष्णव था। राजतरगिणी के ही देखने से राम, केशव आदि मूर्त्तियो की पूजा यहाँ बहुत दिन से प्रचलित है, यह स्पष्ट हो जाता है। इस से इस की नवीनता या प्राचीनता का झगडा न करके यहाँ थोड़ा सा इस अदल बदल का कारण निरूपण करते है।

मनुष्य के स्वभाव ही मे यह बात है कि जब वह किसी बात पर प्रवृत्त होता है तो क्रमशः उस की उन्नति करता जाता है और उस विषय को जब तक वह एक अत तक नहीं पहुँचा लेता सतुष्ट नहीं होता। सूर्य के मानने की ओर जब मनुष्यो की प्रवृत्ति हुई तो इस विषय को भी वे लोग ऐसी ही सूक्ष्म दृष्टि से देखते गये।

प्रथमतः कर्म मार्ग में फँसकर लोग अनेक देवी देवो को पूजते हैं, किंतु बुद्धि का यह प्रकृत धर्म है कि यह ज्यो ज्यो समुज्ज्वल होती है अपने विषय मात्र को उज्ज्वल करती जाती है। थोड़ी बुद्धि बढ़ने ही से यह विचार चित्त मे उत्पन्न होता है कि इतने देवी देव इस अनंत सृष्टि के नियामक नहीं हो सकते, इन का कर्त्ता स्वतत्र कोई

विशेष शक्तिसपन्न ईश्वर है। तब उस का स्वरूप जानने की इच्छा होती है, अर्थात् मनुष्य कर्मकांडसे ज्ञानकांड मे आता है। ज्ञानकांड में सोचते सोचते संगति और रुचि के अनुसार या तो मनुष्य फिर निरीश्वरवादी हो जाता है या उपामना मे प्रवृत्त होता है। उस उपासना की भी विचित्र गति है। यद्यपि ज्ञानवृद्धि के कारण प्रथम मनुष्य साकार उपासना छोडकर निराकार की ओर रुचि करता है, किंतु उपासना करते करते जहाँ भक्ति का प्राबल्य हुआ वहीं अपने उस निराकार उपास्य को भक्त फिर साकार कहने लगता है। बडे बड़े निराकारवादियो ने भी "प्रभो दर्श दो! अपने चरणकमलो को हमारे सिर पर स्थान दो, अपनी सुधामयी वाणी श्रवण कराओ" इत्यादि प्रयोग किया है। वैसे ही प्रथम सूर्य पृथ्वीवासियो को सब से विशेष आश्चर्य और गुणकारी वस्तु बोध हुई, उस से फिर उन मे देवबुद्धि हुई। देवबुद्धि होने ही से आधिभौतिक सूर्य मडल के भीतर एक आधिदैविक नारायण माने गये। फिर अंत मे यह कहा गया कि नारायण एक सूर्य ही मे नहीं, सर्वत्र हैं, और अनत कोटि सूर्य, चंद्र, तारा उन्हीं के प्रकाश से प्रकाशित है। अर्थात् आध्यात्मिक नारायण की उपासना मे लोगो की प्रवृत्ति हुई।

इन्हीं कारणो से वैष्णवमत की प्रवृत्ति भारतवर्ष मे स्वाभाविकी है। जगत् मे उपासनामार्ग ही मुख्य धर्ममार्ग समझा जाता है। कृस्तान, मुसलमान, ब्राह्म, बौद्ध उपासना सब के यहाँ मुख्य है। किंतु बौद्धो मे अनेक सिद्धो की उपासना और तप आदि शुभ कर्मो के प्राधान्य से वह मत हम लोगो के स्मार्त्त मत के सदृश है और कृस्तान, ब्राह्म, मुसलमान आदि के धर्म मे भक्ति की प्रधानता से ये सब वैष्णवो के सदृश हैं। इंजील मे वैष्णवो के ग्रथो से बहुत सा विषय लिया है और ईसा के चरित्र मे श्री कृष्ण के चरित्र का सादृश्य बहुत है, यह विषय सविस्तर भिन्न प्रबध मे लिखा गया है। तो जब ईसाइयों के मत को ही हम वैष्णवो का अनुगामी सिद्ध कर सके हैं, फिर मुसलमान जो कृस्तानो के अनुगामी हैं वे हमारे अन्वनुगामी हो चुके।

यद्यपि यह निर्णय करना अब अति कठिन है कि अतिप्राचीन के ध्रुव, प्रह्लाद आदि, मध्यावस्था के ऊद्धव, आरुणि, परीक्षितादिक और

नवीन काल के वैष्णवाचार्यो के खान - पान, रहन - सहन, उपासना - रीति, वाह्य चिह्न आदि मे कितना अतर पडा है, किंतु इतना ही कहा जा सकता है कि विष्णु-उपासना का मल सूत्र अति प्राचीनकाल से अनवच्छिन्न चला आता है। ध्रुव, प्रह्लादादि वैष्णव तो थे, किंतु अब के वैष्णवो की भॉति कठी, तिलक, मुद्रा लगाते थे और मास आदि नहीं खाते थे, इन बातो का विश्वस्त प्रमाण नहीं मिलता। ऐसे ही भारतवर्ष मे जैसी धर्मरुचि अब है उस से स्पष्ट होता है कि आगे चल कर वैष्णवमत मे खाने पीने का विचार छूट कर बहुत सा अदल बदल अवश्य होगा। यद्यपि अनेक आचार्यों ने इसी आशा से मत प्रवृत्त किया कि इसमे सब मनुष्य समानता लाभ कर और परस्पर खानपानादि से लोगो मे ऐक्य बढ़ै और किसी जाति, वर्ण, देश का मनुष्य क्यो न हो वैष्णवपक्ति मे आ सकै, किंतु उन लोगो की यह उदार इच्छा भली भॉति पूरी नहीं हुई, क्योंकि स्मार्त मत की और ब्राह्मणो की विशेष हानि के कारण इस मत के लोगो ने उस समुन्नत भाव से उन्नति को रोक दिया, जिस से अब वैष्णवो मे छुआछूत सब से बढ गया। बहुदेवोपासको की घृणा देने के अर्थ वैष्णवातिरिक्त और किसी का स्पर्श बचाते वहॉ तक एक बात थी, किंतु अब तो वैष्णवो ही मे ऐसा उपद्रव फैला है कि एक सप्रदाय के वैष्णव दूसरे सप्रदाय वाले को अपने मदिर मे और अपने खान पान मे नहीं लेते और 'सात कनौजिया नौ चूल्हे' वाली मसल हो गई है। किंतु काल की वर्तमान गति के अनुसार यह लक्षण उनकी अवनति के है। इस काल मे तो इस की तभी उन्नति होगी जब इस के वाह्यव्यवहार और आडबर मे न्यूनता हागी और एकता बढाई जायगी और आंतरिक उपासना की उन्नति की जायगी। यह काल ऐसा है कि लोग उसी मत को विशेष मानेगे जिस मे वाह्य देह-कष्ट न्यून हो। यद्यपि वैष्णवधर्म भारतवर्ष का प्रकृत धर्म है इस हेतु उस की ओर लोगो की रुचि होगी, किंतु उसमे अनेक सस्कारो की अतिशय आवश्यकता है। प्रथम तो गोस्वामीगण अपना रजोगुणी-तमोगुणी स्वभाव छोड़ेगे तब काम चलैगा। गुरु लोगों मे एक तो विद्या ही नहीं होती, जिसके न होने से शील, नम्रता आदि उनमे कुछ नहीं होते। दूसरे या तो वे अति रूखे

क्रोधी होते हैं या अति बिलासलालस होकर स्त्रियों की भाँति सदा दर्पण ही देखा करते हैं। अब वह सब स्वभाव उनको छोड़ देना चाहिए, क्योंकि इस उन्नीसवीं शताब्दी मे वह श्रद्धाजाड्य अब नहीं बाकी है। अब कुकर्मी गुरु का भी चरणामृत लिया जाय वह दिन छप्पर पर गए। जितने बूढ़े लोग अभी तक जीते हैं उन्हीं के शील सकोच से प्राचीनधर्म इतना भी चल रहा है, बीस पचीस बरस पीछे फिर कुछ नही है। अब तो गुरु गोसाई का चरित्र ऐसा होना चाहिए कि जिस को देख सुन कर लोगो मे श्रद्धा से स्वय चित्त आकृष्ट हो। स्त्रीजनो का मदिरो से सहवास निवृत्त किया जाय। केवल इतना ही नहीं, भगवान श्री कृष्णचन्द्र की केलिकथा जो अतिरहस्य होने पर भी बहुत परिमाण से जगत् मे प्रचलित है वह केवल अंतरग उपासको पर छोड़ दी जाय, उनके माहात्म्य मत विशद चरित्र का महत्व यथार्थ रूप से व्याख्या कर के सब को समझाया जाय। रास क्या है, गोपी कौन है, यह सब रूपक अलकार स्पष्ट कर के श्रुतिसम्मत उनका ज्ञान वैराग्य भक्तिबोधक अर्थ किया जाय। यह भी दबी जीभ से हम डरते २ कहते है कि व्रत, स्नान आदि भी वहीं तक रहैं जहाँ तक शरीर को अति कष्ट न हो। जिस उत्तम उदाहरण के द्वारा स्थापक आचार्यगण ने आत्मसुख विसर्जन कर के भक्ति सुधा से लोगो को प्लावित कर दिया था उसी उदाहरण से अब भी गुरु लोग धर्म प्रचार करै। वाह्य आग्रहो को छोड़ कर केवल आतरिक उन्नत प्रेममयी भक्ति का प्रचार करे, देखै कि दिग्दिगत से हरिनाम की कैसी ध्वनि उठती है और विधर्मीगण भी इसको सिर झुकाते हैं कि नहीं और सिक्ख, कबीरपंथी आदि अनेक दल के हिंदूगण भी सब आप से आप बैर छोड़ कर इस उन्नतसमाज मे मिल जाते है कि नहीं।

जो कोई कहै कि यह तुम कैसे कहते हो कि वैष्णवमत ही भारतवर्ष का प्रकृत मत है तो उस के उत्तर मे हम स्पष्ट कहैंगे कि वैष्णव मत ही भारतवर्ष का मत है और वह भारतवर्ष की हड्डी लहू मे मिल गया है। इस के अनेक प्रमाण हैं, क्रम से सुनिए (१) पहले तो कबीर, दादू, सिक्ख, बाउल आदि जितने पथ है सब वैष्णवो की शाखा

प्रशाखाये हैं और सारा भारतवर्ष इन पंथो से छाया हुआ है। (२) अवतार और किसी देव का नहीं, क्योंकि इतना उपकार ही [दस्यु दलन आदि] और किसी से नहीं साधित हुआ है। (३) नामो को लीजिए तो क्या स्त्री, क्या पुरुष, आधे नाम भारतवर्ष के विष्णुसबधी है और आधे मे जगत् है। कृष्णभट्ट, रामसिह, गोपालदास, हरिदास, रामगोपाल, राधा, लक्ष्मी, रुक्मिन, गोपी, जानकी आदि। विश्वास न हो कलेक्टरी के दफ्तर से मर्दुमशुमारी के कागज निकाल कर देख लीजिए वा एक दिन डॉकघर मे बैठकर चिट्ठियो के लिफाफो की सैर कीजिए। (४) ग्रंथ, काव्य, नाटक आदि के, सस्कृत या भाषा के, जो प्रचलित है उन को देखिए। रघुवश, माघ, रामायण आदि ग्रथ विष्णुचरित्र के ही बहुत है। (५) पुराण मे भारत, भागवत, वाल्मीकि रामायण यही बहुत प्रसिद्ध है और यह तीनों वैष्णवग्रथ हैं। (६) व्रतो मे सब से मुख्य एकादशी है वह वैष्णव व्रत है और भी जितने व्रत है उन मे आधे वैष्णव है। (७) भारतपर्ष मे जितने मेले है उन मे आधे से विशेष विष्णुलीला, विष्णुपर्व या विष्णुतीर्थों के कारण है। (८) तिहवारो की भी यही दशा है। वरच होली आदि साधारण तिहवारो मे भी विष्णुचरित्र ही गाया जाता है। (९) गीत, छंद चौदह आना विष्णुपरत्व है, दो आना और देवताओ के। किसी का व्याह हो, रामजानकी के व्याह के गीत सुन लीजिए। किसी के बेटा हो नद बधाई गाई जायगी। (१०) तीर्थो मे भी विष्णुसबधी ही बहुत हैं। अयोध्या, हरिद्वार, मथुरा, वृंदावन, जगन्नाथ, रामनाथ, रगनाथ, द्वारका, बद्रीनाथ आदि भली भाँति याद कर के देख लीजिए। (११) नदियो मे गगा, यमुना मुख्य हैं, सो इन का माहात्म्य केवल विष्णुसबध से है। (१२) गया मे हिदू मात्र को पिडदान करना होता है, वहाँ भी विष्णुपद है। (१३) मरने के पीछे 'रामरामसत्य है' इसी की पुकार होती है और अत मे शुद्ध श्राद्ध तक 'प्रेतमुक्ति प्रदोभव' आदि वाक्य से केवल जनार्दन ही पूजे जाते हैं। यहाँ तक कि पितृरूपी जनार्दन ही कहलाते हैं। (१४) नाटको और तमाशो मे रामलीला, रास ही अति प्रचलित है। (१५) सब वेद पुस्तको के आदि और अत में लिखा रहता है 'हरिः ॐ'।

(१६) सकल्प कीजिए तो विष्णु: विष्णु: । (१७) आचमन मे विष्णु विष्णु । (१८) शुद्ध होना हो तो य: स्मरेत् पुण्डरीकाक्ष । (१६) सुग्गे को भी राम ही राम पढ़ाते हैं । (२०) जो कोई वृत्तांत कहै तो उस को राम कहानी कहते हैं । (२१) लड़को को बाल गोपाल कहते हैं । (२२) छपने मे जितने भागवत, रामायण, प्रेमसागर, व्रजविलास छापी जाती है और देवताओ के चरित्र उतने नहीं छपते । (२३) आर्यलोगो के शिष्टाचार मे रामराम, जयश्रीकृष्ण, जयगोपाल ही प्रचलित हैं । (२४) ब्राह्मणो के पीछे वैरागी ही को हाथ जोड़ते हैं और भोजन कराते हैं । (२५) विष्णु के साला होने के कारण चद्रमा को सभी चंदामामा कहते है । (२६) गृहस्थ के घर घर तुलसी का थाला, ठाकुर की मूर्ति, रसोई भोग लगाने को रहती है । (२७) कथा घाट बाट मे भागवत ही रामायण की होती है । (२८) नगरोके नाममे भी रामपुर, *

---

* विष्णु सबधी अनेक गाँव हैं, कई एक यहाँ पर लिखे जाते हैं । जिला गया के जहानाबाद थाना के इलाके में बिसुनगज गाँव है । जिला गया के नबीनगर थाना के इलाके में किसुनपुर बटाने के किनारे पर है, यहाँ मेला लगता है । जिला गया के दाऊदनगर थाना के इलाके में गोपालपुर गाँव है । जिला गया के शहरघाटी थाना के इलाके मे नारायणपुर गॉव है ।

बरेव से तीन कोस पूरब सकरी नदी के बायें किनारे गोविदपुर बैजनाथ जी की कच्ची सडक पर भारी बाजार है । यहाँ लकडी और बहुत सी जगली चीज बिकती है । यहाँ से दो कोस नैर्ऋत्यकोन में एक तारा गाँव से आध कोस दक्खिन महभर पहाड में ककोलत बडा भारी और प्रसिद्ध झरना है, इस में सदा पानी मोटी धार से गिरा करता है । पानी गिरते गिरते नीचे एक अथाह कुड बन गया है । पानी इस झरने का बहुत निर्मल और ठढा रहता है । यह स्थान परम रम्य और मनोहर लगता है । मेष की सक्राति में (बिसुआ) बडा मेला लगता है । गोविदपुर के आस पास बिसुनपुर, सुघडी और पहाड के पार सिऊर रपऊ आदि बड़े बडे गाँव हैं । सिऊर में दो बड़े तालाब हैं और एक पुराने राजगृह का चिन्ह देख पडता है ।

सीतापुर मुल्लापुर के पश्चिम सदर मुकाम सीतापुर लखनऊ से ५३ मील

गोविंदगढ, रघुनाथपुर, गोपालपुर * आदि ही विशेष हैं। (२९) मिठाई मे गोविंदबड़ी, मोहनभोग आदि नाम है, अन्य देवतो का कहीं कुछ नाम नहीं है। (३०) सूर्यचद्रवशी क्षत्री लोग श्रीराम कृष्ण के वश मे होने का अब तक अभिमान करते है। (३१) ब्राह्मणगण ब्रह्मण्य देव कह कर अब तक कहते है 'ब्राह्मणो माम-कीतनुः'। (३२) औषधियो मे भी रामबाण, नारायणचूर्ण आदि नाम मिलते हैं। (३३) कार्तिकस्नान, राधा दामोदर की पूजा, देखिए, भारतवर्ष मे कैसी है। (३४) तारकमत्र लोग श्रीरामनाम ही को कहते है। (३५) किसी हौस मे चले जाइए तूल के थान निकलवा कर देखिए उस पर जितने चित्र विष्णुलीला सबधी मिलेंगे अन्य नहीं। (३६) बारहो महीने के देवता बिष्णु हैं। ऐसी ही अनेक अनेक बाते हैं। विष्णुसबधी नाम बहुत वस्तुओ के हैं, कहाँ तक लिखे जायँ। विष्णुपद (आकाश), विष्णु-रात (परीक्षित), रामदाना, रामधेनु, रामजी की गैया, रामधनु (आकाश धनु), रामफल, सीताफल, रामतरोई, श्रीफल, हरिगीती, रामकली, रामकपूर, रामगिरी, रामचादन, रामगगा, हरिचदन, हरिसिगार, हरिकेला, हरिनेत्र, (कमल), हरिकेली (बगला देश), हरिप्रिय (सफेदचंदन), हरिवासर (एकादशी), हरिबीज (बगनीबू), हरिवर्षखड, कृष्णकली, कृष्णकद, कृष्णकांता, विष्णुक्राता (फूल), सीतामऊ, सीतावलदी, सीताकुण्ड, सीता-

---

उत्तर बसा है। दरयाबाद सीतापुर के वायु कोन। सदर मुकाम दरयाबाद लख-नऊ से ४५ मील वायुकोन उत्तर को झुकता हुआ है।

* एक गाँव असनीगोपालपुर है। वहाँ के नरहरि कवि ने अपने परि-चय में कहा है:—

कवित्त—नाम नरहरि है प्रशसा सब लोग करै हसहू से उज्वल जगु व्यापे हैं। गगा के तीर ग्राम असनीगोपालपुर मदिरगोपाल जी को करत मत्र जापे हैं। कबि बादशाही मौज पावै बादशाही वो जगावै बादशाही जाते अरिगन कापे हैं। जब्बर गनीमन के तोरिबे को गब्बर हुमायू के बब्बर अकब्बर के थापे हैं॥ १॥

मढ़ी, सीता की रसोई, हरिपर्वत, हरि का पत्तन, रामगढ़, रामबाग, रामशिला, रामजी की घोडी, हरिपदा (आकाशगगा), नारायणी, कन्हैया आदि नगर नद नदी पर्वत फलफूल के सैकड़ो नाम हैं। (जले विष्णु: स्थले विष्णु:) सब स्थान पर विष्णु के नाम ही का सबध विशेष है। आग्रह छोड़ कर तनिक ध्यान देकर देखिए कि विष्णु से भारतवर्ष से क्या सबध है, फिर हमारी बात स्वय प्रमाणित होती है कि नहीं कि भारतवर्ष का प्रकृत मत वैष्णव ही है।

अब वैष्णवो से यह निवेदन है कि आप लोगो का मत कैसी दृढ़ भित्ति पर स्थापित है और कैसे सार्वजनीन उदारभाव से परिपूर्ण है, यह कुछ कुछ हम आपलोगो को समझा चुके। उसी भाव से आपलोग भी उस मे स्थिर रहिये, यही कहना है। जिस भाव से हिंदूमत अब चलता है उस भाव से आगे नहीं चलैगा। अब हमलोगो के शरीर का बल न्यून हो गया, विदेशी शिक्षाओ से मनोवृत्ति बदल गई, जीविका और धन उपार्जन के हेतु अब हमलोगो को पॉच पॉच छ छ पहर पसीना चुआना पडेगा, रेल पर इधर से उधर कलकत्ते से लाहौर और बबई से शिमला दौड़ना पड़ैगा, सिविल सर्विस का, बैरिस्टरी का, इजिनियरी का इम्तिहान देने को विलायत जाना होगा, बिना यह सब किए काम नहीं चलैगा, क्योकि देखिए, कृस्तान, मुसल्मान, पारसी यही हाकिम हुए जाते हैं, हमलोगो की दशा दिन दिन हीन हुई जाती है। जब पेट भर खाने ही को न मिलैगा तो धर्म कहॉ बाकी रहैगा, इस से जीवमात्र के सहज धर्म उदरपूरण पर अब ध्यान दीजिये। परस्पर का बैर छोड़िए। शैव, शाक्त, सिक्ख जो हो, सब से मिलो। उपासना एक हृदय की रत्न वस्तु है उस को आर्यक्षेत्र मे फैलाने की कोई आवश्यकता नहीं। वैष्णव, शैव, ब्राह्म, आर्यसमाजी सब अलग अलग पतली पतली डोरी हो रहे है, इसी से ऐश्वर्य रूपी मस्तहाथी उन से नहीं बॅधता। इन सब डोरी को एक मे बॉध कर मोटा रस्सा बनाओ, तब यह हाथी दिगदिगत भागने से रुकैगा। अर्थात् अब वह काल नहीं है कि हमलोग भिन्न २ अपनी अपनी खिचड़ी अलग पकाया करै। अब महाघोर काल उपस्थित है। चारो ओर आग लगी हुई है। दरिद्रता केमारे देश जला जाता है। अँगरेजो से जो नौकरी बच जाती

है उन पर मुसल्मान आदि विधर्मी भरती होते जाते हैं। आमदनी वाणिज्य की थी ही नहीं, केवल नौकरी की थी सो भी धीरे धीरे खसकी। तो अब कैसे काम चलेगा। कदाचित् ब्राह्मण और गोसाईं लोग कहै कि हमको तो मुफ्त का मिलता है, हम को क्या ? इस पर हम कहते हैं कि विशेष उन्हीं को रोना है। जो करालकाल चला आता है उस को आँख खोल कर देखो। कुछ दिन पीछे आप लोगो के माननेवाले बहुत ही थोडे रहेंगे, अब सब लोग एकत्र हो। हिंदूनाम-धारी वेद से ले कर तंत्र, वरंच भाषाग्रंथ माननेवाले तक सब एक होकर अब अपना परमधर्म यह रक्खो कि आर्यजाति मे एका हो। इसी मे धर्म की रक्षा है। भीतर तुम्हारे चाहे जो भाव और जैसी उपासना हो ऊपर से सब आर्यमात्र एक रहो। धर्म संबंधी उपाधियो को छोड़ कर प्रकृत धर्म की उन्नति करो।*

—:❀:—

*इस लेख का उल्लेख 'रामायण का समय' में किया गया है, जो सं–१९४१ की रचना है अतः यह उसके पहिले लिखा गया होगा।

मदालसोपाख्यान

(मार्कंडेय पुराण से संगृहीत)

जिसे

बाबू हरिश्चंद्र ने

अपनी पत्रिका बालाबोधिनी से लेकर

युवराज

श्रीयुत प्रिंस आव वेल्स बहादुर

के

शुभागमन के आनंद के अवसर में

बालिकाओं को

वितरण के अर्थ अलग छपवाया

जिस लड़की को यह पुस्तक दी जाय उससे अध्यापक लोग
५ बेर कहला ले "राजपुत्र चिरजीव" ।

Benares Light Press

बनारस लाइट छापाखाना में मुद्रित हुआ ।

यह उपाख्यान पहिले बालाबोधिनी
में प्रकाशित हुआ और सं०
१९३२ में यह अलग पुस्तका-
कार छापी गई।

मदालसा

(उपाख्यान मार्कण्डेयपुराण से)

पुराने जमाने मे शत्रुजित नाम का एक राजा था और उसको अरिविदारण कृतध्वज नाम एक लडका था। अश्वतर नाग के दो लडके ब्राह्मण बनकर उसके साथ खेलने आते थे। राजकुमार से उनसे ऐसी प्रीति हो गई थी कि वे रात दिन नाग लोक छोडकर यहीं भूले रहते थे। एक दिन नागों के राजा अश्वतर ने अपने लड़कों से पूछा 'प्यारे लडको, आज काल तुम लोग नाग लोक छोड़कर मृत्यु लोक ही मे क्यो रमे रहते हो ?' वे बाले 'पिता, शत्रुजित राजा के कुमार कृतध्वज ने शिष्टाचार और प्रीति से हमारा मन ऐसा मोहा है कि पाताल उसके बिना गर्म और उसके मिलने से सूर्य ठंढा मालूम पड़ता है।' पिता ने कहा 'निस्सदेह वह पुरुष धन्य है जिसको ऐसा मित्रो को सुखदाई पुत्र हुआ है, भला ऐसे सच्चे सुहृत् का तुम लोगो ने कुछ उपकार भी किया ?' लड़ने कहने लगे 'भला हम लोग उसका क्या उपकार करेंगे, धन, जन विद्या सबमे वह हमसे बढ चढ़ के हैं और जो उसका एक काम है उमको ब्रह्मादिक ईश्वर के सिवा कोई कर नहीं सकता।' नागराज ने कहा 'भला हम सुनैं तो सही,

ऐसा कौन काम है जो आदमी न कर सकै। किसी प्रकार भी तुम लोग मित्र का प्रति उपकार कर सको तो मै अपने को ऋण से छूटा समझू।' नाग पुत्र बोले 'उस मित्र के पिता के पास उसकी जवानी मे गालव नाम का ब्राह्मण एक बहुत बढ़िया घाडा लेकर आया और बोला कि महाराज एक राक्षस हम लोगो को बहुत दुःख देता है, नित्य तप मे विघ्न कर करके उसने हमारी नाको मे दम कर रक्खा है और हम लोगो ने बडे कष्ट से तप किया है इससे उसको शाप देकर तप नहीं न्यून किया चाहते। एक दिन बड़े दुःखी हो कर जो मैने एक लम्बी ठढी सॉस भरी तो देखता हूँ कि यह घोडा आसमान से उतरा चला आता है, साथ ही आकाश वाणी भी सुनी कि इस घोडे की गति पृथ्वी और आकाश पाताल सब जगह है। और ऐसा घोडा पृथ्वी पर दूसरा नहीं है। चाल मे हवा को भी यह पीछे छोडता हुआ संसारियो के मन की भॉति उडा चलता है। इसका नाम कुवलय है, इसे राजा शत्रुजित को दो और उसका पुत्र इस घोडे पर सवार होकर उस राक्षस को मारै। इससे उस राजा की बड़ी कीर्ति होगी। सो अब मैं आप के पास आया हूँ। राजा ने कुमार को उसी समय सज सजा कर असीस दी और ब्राह्मण के साथ बिदा किया। राज कुमार गालव के आश्रम मे रहने लगा। एक दिन वह राक्षस जगली सूअर बन कर आया और जब कुँअर ने उसके पीछे धनुष तान कर घोडा दौडाया तो वह एक घने जगल मे भागा। भागते भागते वह बहुत दूर जाकर एक गडहे मे गिर पडा तो कुँअर भी साथ ही कूदा। अँधेरे मे कुँअर को कुछ भी नहीं देखाता था पर घोडा फेके चला जाता था। जब उँजेला आया तो वह सुअर न दिखाई पड़ा, सिर्फ एक बड़ा रत्नो से जडा घर सामने खड़ा था। उसके दरवाजे की सीढ़ी पर एक जवान सुदर स्त्री चढी जाती थी। कुँअर भी दरवाजे पर घोड़ा बॉध बेधड़क उस मकान मे घुसा और एक बड़ी सजी सजाई जड़ाऊ दालान मे हिडोला खाट पर उसे एक कन्या दिखाई पड़ी और जो स्त्री उसे सीढी पर चढ़ती मिली थी, वह भी उसके पास बैठी थी। कुँअर को देखते ही वह कन्या बेहोश हो गई। उस स्त्री और कुँअर ने

किसी तरह उसको सावधान किया। तब कुँअर उस सखी से उन लोगों का नॉव गॉव और बेहोशीका कारण पूछने लगा । स्त्री बोली यह गधर्वों के राजा विश्वावसु की कन्या है। इसको पातालकेतु नामका दैत्य माया से उठा लाया है। अगली तेरस को वह दुष्ट इससे ब्याह करने को था और जब इस दुख से यह प्राण देने लगी तो आकाशवाणी हुई कि प्राण मत दे। गालव के आश्रम मे जिस राज कुँअर से यह मारा जायगा वही तेरा हाथ पीला करैगा। मैं इसकी सखी विध्यवान् की पुत्री कुंडला हूँ। मेरे पति पुष्कर माली को जब शम्भू दैत्य ने वध कर डाला तब से धर्म में लगी हूँ। इसके मूर्च्छा का कारन यह है कि आज मैं खबर ले आई हूँ कि गालव के आश्रम मे किसी ने उस सुअर बने हुए दैत्य को बान से मारा है। अब वही इसका पति होगा पर यह तुम्हारे रूप से मोह गई है और यह सोचती है कि हाय जिसको मै चाहती हूँ उससे न ब्याही जाऊँगी। अब आप कौन है, कहिए ? राजकुमार ने सब हाल कहा और अपना राक्षस का मारना वर्णन किया। सुनते ही उस कन्या ने घूघट कर लिया और बहुत प्रसन्न होकर कुडला से बोली सखी, सुरभी का कहना क्या झूठ हो सकता है। कुडला ने उसी समय तुबरू गधर्व का ध्यान किया। उसने आते ही प्रसन्नता से अग्नि को साक्षी देकर दोनो का हाथ दोनो को पकड़ा दिया और आप तप करने चला गया। कुडला भी अपनी सखी को गले लगाकर दुलहा दुलहिन दोनो को कुछ हित की बातें सिखाकर तप करने गई। कुँअर उस कन्या (मदालसा) को घोड़े पर बिठाकर उस पाताल की गुफा से बाहर निकलने लगा पर उसी क्षण राक्षसो की फौज ने चोर चोर कर आन घेरा और मदालसा को उससे छुडाना चाहा। कुँअर ने बहादुरी से उन सबो को बात की बात में मार गिराया और आप राजी खुशी अपने घर आया। पिता के पैरो पर पड़कर सब हाल कह सुनाया। राजा-रानी बहू-बेटा पाकर बड़े प्रसन्न हुए और सब लोग सुख से रहने लगे। राजा ने कुँवर को आज्ञा दे दी थी कि तुम नित्य घोड़े पर चढ़कर मुनियो की रखवाली किया करो। कुँअर घोड़े पर चढा एक दिन यमुना किनारे के मुनियो की रखवाली कर रहा था कि एक आश्रम देखा। इस आश्रम में उस

पातालकेतु राक्षस का भाई तालकेतु कपटी मुनि बन कर बैठा था। कुँअर को देखते ही पुराना बैर याद करके वह बोला कि कुअर तुम अपने गहिने हमको दो और जब तक हम पानी मे जाकर वरुण की पूजा करके न फिरै तब तक तुम हमारे आश्रम की चौकी दो। राजपुत्र ने सब गहना उतार दिया और उस कुटीचर की कुटी का पहरा देने लगा। वह दुष्ट गहना लेकर जल मे डूबकर माया से कुँअर के महलो मे गया और मदालसा से बोला कि हमारे आश्रम मे कृतध्वज को एक राक्षस ने मार डाला और हिनहिनाते हुए उस बिचारे घोडे को भी घसीट ले गया। शूद्र तपसियो से क्रिया कराके उसका गहना लेकर मै तुमको देने आया हूँ, यह लो। इतना कहकर आभूषण सब फेक दिये और आप चलता हुआ। मदालसा ने उसी समय पति के दुःख से प्राण त्याग किये। महल मे हाहाकार मच गया, जिधर देखो उधर कुहराम पड़ा हुआ था और दर दीवार से हाय कुँअर हाय बहू की आवाज आती थी। राजा शत्रुजित धीरज रखकर बोला कि इतना क्यो रोते हो? मुनियो की रक्षा मे हमारा पुत्र यश कमाकर मारा गया, इसका क्या सोच है। उसकी माँ भी बोली कि बडो का यश बढ़ाकर जो क्षत्री युद्ध मे मरै उसका क्या रोना और ऐसी बहू का भी क्या सोच जो पति के सब सुख भोगकर अन्त मे पति लोक उसके साथ हो गई, उठो क्रिया करो और सोच दूर करो। राजा ने नगर के बाहर सब लोक रीति किया और बेटे बहू को पानी देकर घर फिरा। इधर कपटी मुनि भी कुँअर से आकर बोला कि मेरा काम हो गया, आपका कल्याण हो, अब घर सिधारिये। कुँअर जब नगर मे आया तो सबको उदास पाया। कुँअर को देखते ही बधाई बधाई का चारो ओर से शोर मच गया। कुँअर बहुत चकपकाया कि यह मामला क्या है? अन्त मे घर पर गया और सब हाल सुनकर बहुत ही घबड़ाया। माँ बाप के डर से रो तो न सका पर अपनी पतिव्रता प्रान प्यारी के बिछुडने से बहुत ही उदास हो गया और यह प्रतिज्ञा कर ली कि मैं प्रान तो नहीं देता पर अब किसी दूसरी स्त्री से जन्म भर न मिलूँगा। तब से इस सुख से वंचित है और यदि संसार मे उसका

कोई हित है तो इतना ही है कि मदालसा उसको फिर मिलै पर यह सिवा ईश्वर के कौन कर सकता है ?' नागराज ने कहा 'पुत्र ईश्वर की दया और मनुष्य के परिश्रम के आगे कोई बात कठिन नहीं।'

उसी दिन से अश्वतर ने हिमालय पर्वत पर सरस्वती की आराधना करनी प्रारभ कर दी। जब सरस्वती प्रसन्न हुई, कहा 'वर-माँगो' तो नागराज ने यह वर लिया कि उन्हे और उनके भाई कबल को सगीत विद्या सपूर्ण रीति से आजाय। वर पाकर कबल अश्वतर दोनो कैलाश को गए और गाकर श्री भोलानाथ सदाशिव को ऐसा रिझाया कि महादेव पार्वती साथ ही बोले "माँगो क्या चाहते हो"। दोनो ने हाथ जोडकर कहा "नाथ! कुवलयाश्व की स्त्री मदालसा उसी रूप और अवस्था से हमारे घर मे फिर जन्म ले"। "एवमस्तु" त्रिनयन जी ने कहा और यह भी आज्ञा दिया कि तुम्हारी साँस से आज के तीसरे दिन मदालसा उत्पन्न होगी। तीसरे दिन मदालसा का जब जन्म हुआ तो नागाधिप ने सबसे छिपाकर उसको निज के जनाने मे रक्खा। एक दिम बातो बात मे अश्वतर ने कहा 'बेटा भला हम भी तुम्हारे मित्र को देखे'। नाग कुमार उसी समय कुवलयाश्व के पास आए और बोले 'हम आप से कुछ जाँचते हैं'। ऋतध्वज बोला 'मित्र, हमारे धन्य भाग, इतने दिन तक आप लोग मेरे साथ रहे, कभी कुछ न कहा, आज भला इतना कहा तो, मैं राज्य और प्राण भी देने को प्रस्तुत हूँ।' कुमारो ने कहा 'मेरे पिता जी आप को देखा चाहते है'। राजकुमार उन ब्राह्मण बने हुए नागकुमारो के साथ चला और वे दोनो उसका हाथ पकड़ कर यमुना मे कूद पड़े। जब पैर तल पर लगे और कुअर ने आँख खोली तो देखा कि एक रत्नमय नगरी मे खडे है। नागपुत्र कुमार को लेकर नागेश्वर के सामने गए। कुमार नाग लोगो का वैभव देख कर चकित हो गया। उसके नगर के जोहरी जितनी बड़ी मनियो का ध्यान भी नहीं कर सकते, वैसी वहाँ अनेक देखने मे आई। नाग सम्राट को तीनो कुमारो ने साष्टाङ्ग दण्डवत किया। अश्वतर ने राजकुअँर का सिर सूँघा और गोद मे बैठाकर बोले 'पुत्र, तुम धन्य हौ, आज तक तुम्हारे गुणो को अपने पुत्रो के मुख से सर्वदा सुनने से तुम्है देखने की जो मेरी लालसा

बेटे को देख कर ऐसा कलेजा ठढा हुआ जैसे किसी को खोई हुई सपत्ति मिले। राजा के सारे राज्य मे आनद फैल गया और घर घर बधाइयाँ होने लगीं। कुँअर का राज का बोझ सुपुर्द करके राजा भी सुचित हुआ और कुँअर भी मदालसा के साथ सुख से काल बिताने लगा। काल पाकर राजा रानी परलोक को सिधारे और कुवलायश्व राजा और मदालसा रानी हुई। राज का प्रबध कुवलायश्व ने बहुत अच्छा किया। प्रजा सब सुखी और चोर और शत्रु दुखी। कुवलायश्व मदा-लसा के साथ महल-बगीचे वन पहाड़ो और नदियो सुदर स्थानो मे सुख से काल बिताता था। समय से मदालसा को एक पुत्र हुआ। नाम करण के दिन राजा ने जब उसका सुबाहु नाम रक्खा तो मदालसा हँसी। राजा ने पूछा 'ऐसे अवसर मे तुम हँसती क्यो हो ?' मदालसा ने कहा 'सुबाहु किसकी सज्ञा है इस जीव की कि इस देह की ? देह की कहो तो हो नहीं सकती क्योकि यह मेरा हाथ, यह मेरा देह, यह सब लोग कहते है इसमे देह का कोई दूसरा अभिमानी अलग मालूम होता है और जो कहो जीव की है तो जीव को तो बाहु हुई नहीं वह तो निर्लेप है। फिर इसकी सुबाहु सज्ञा क्यो ? मेरे जान यह नामकरण इसका व्यर्थ है।' राजा को ऐसे नामकरण के आनद के अवसर मे उसका यह ज्ञान छाँटना जरा बुरा मालूम हुआ पर चुप कर रहा। मदालसा जब बालक को खिलाने लगती तो यह कह कर खिलाती।

बैत—अरे जीव तू आतमा शुद्ध है। निरजन है तू और तू बुद्ध है॥
फँसा है तू आकर के भौजाल मे। निराला है तू इनसे पर चाल मे॥
न माया में इनके अरे कुछ भी भूल। न सपने की सपत पै इतना तू फूल॥
तेरा कोई दुनिया मे साथी नहीं। तेरा राज घोडा व हाथी नहीं॥

चौपाई—पुत्र भूल तू जग मे आया। माया ने तुझको भरमाया॥
तू है अलख निरजन बेटा। जग माया ने तुझै लपेटा॥
है तू इस शरीर से न्यारा। परमातमा शुद्ध अविकारा॥
वही जतन तू कर सुत मेरे। जिससे छूटै बन्धन तेरे॥

छोटेपन ही से ज्ञान के सस्कार से बड़ा होते ही वह लडका ससार

को छोडकर बन मे चला गया। और उसके पीछे दो लडके और भी हुए और वे भी बालकपन ही से ज्ञान का उपदेश सुनते सुनते जब बडे हुए तो ससार से उदास होकर घर छोड़ गए। क्योकि कच्चे कलेजे मे जो बात सिखाई जाती है बडे होने पर उसका असर चित्त पर बहुत रहता है। राजा मदालसा के इस कृत्य से बहुत उदास रहता था। जब चौथा लडका हुआ और उसका नामकरण करने लगा तो मदालसा से बोला कि देवी, अब की तुम्हीं इसका नाम रक्खो क्योकि उन तीनो के हमारे नाम रखने से तुम हँसती थीं। मदालसा ने उस लड़के का नाम अलर्क रक्खा। राजा ने पूछा 'अलर्क शब्द का तो कुछ अर्थ ही नहीं ऐसा नाम क्यो ?' मदालसा ने कहा 'पुकारने के वास्ते कोई सज्ञा रखनी चाहिए, इसमे सार्थक और निरर्थक क्या ?' एक दिन राजा ने देखा कि उसको भी वही सब कह कह कर खिला रही है, तो राजा को बड़ा ही क्षोभ हुआ। हाथ जोड़कर बोला 'चडिके, यह बालक हमै दान कर दो, तीन को तुम मिट्टी मे मिला चुकीं यही एक बाकी रहा है।' पति की इच्छा नुसार मदालसा ने उसे ज्ञानोपदेश न करके उसके बदले अनेक प्रकार की नीति और धर्म पढाया, जिसके प्रताप से किसी समय अलर्क बडा प्रतापी हुआ क्योकि माता की शिक्षा सब शिक्षा से बढ़ कर है। राजा रानी ने अलर्क को समर्थ देखकर राज का बोझ सौप दिया और आप तप करने वन मे चले गए। यही अलर्क जब राज काज मे भूल कर ससार मे फँस गया था तो मदालसा के दिए हुए यत्र को (जिस पर लिखा था "सपत्ति मे औदार्य, विपत्ति मे धैर्य, सग्राम मे शौर्य और सब समय मे जिसे ज्ञान नहीं, उसका ससार मे जन्म व्यर्थ है। सग, काम, क्रोध, लोभ, मोह ये पॉचो दुस्त्यज है, इससे इनको १ सत् २ स्वकीया ३ अपनी अकृतज्ञता ४ सिद्धात ५ भगवान की ओर प्रयुक्त करै) पढकर और अपने बडे भाई सुबाहु की कृपा और दत्तात्रेय जी के उपदेश से बड़ा ज्ञानी गुणी प्रतापी और प्रसिद्ध राजा हुआ है।

—:※:—

एक कहानी कुछ आप बीती कुछ जग बीती

प्रथम खेल

जमीने चमन गुल खिलाती है क्या क्या ?
बदलता है रंग आसमॉ कैसे कैसे ॥

हम कौन हैं और किस कुल मे उत्पन्न है आप लोग पीछे जानेगे। आप लोगो को क्या, किसी का रोना हो पढे चलिए, जी बहलाने से काम है। अभी मै इतना ही कहता हूँ कि मेरा जन्म जिस तिथि को हुआ वह जैन और वैदिक दोनो मे बड़ा पवित्र दिन है। स० १६३० मे मै जब तेईस बरस का था, एक दिन खिडकी पर बैठा था, बसन्त ऋतु, हवा ठढी चलती थी ? सॉझ फूली हुई, आकाश मे एक ओर चन्द्रमा दूसरी ओर सूर्य पर दोनो लाल लाल, अजब समा बँधा हुआ, कसेरू, गडेरी और फूल बेचनेवाले सड़क पर पुकार रहे थे। मैं भी जवानी की उमगो मे चूर, जमाने के ऊँच नीच से बेखबर, अपनी रसिकाई के नशे मे मस्त, दुनिया के मुफ्तखोरे सिफारशियो से घिरा हुआ अपनी तारीफ सुन रहा था, पर इस छोटी अवस्था मे भी प्रेम को भली भाँति पहचानता था।

कोई कहता था आप से सुदर ससार मे नहीं, कोई कसमे खाता

था, आपसा पंडित मैंने नहीं देखा, कोई पैगाम देता था चमेली जान आप पर मरती है, आपके देखे बिना तड़प रही है, कोई बोला हाय ! आपका फलाना कवित्त पढ़कर रात भर रोते रहे, दूसरे ने कहा आपकी फलानी गजल लाला रामदास की सैर में जिस वक्त प्यारी ने गाई सारी मजलिस लोट पोट हो गयी, तीसरा ठंढी साँस भरकर बोला धन्य है आप भी गनीमत है बस क्या कहें कोई जी से पूछे, चौथा बोला आपकी अंगूठीका पन्ना क्या है काँचका टुकड़ा है या कोई ताजी तोड़ी हुई पत्ती है, एक मीर साहब चिड़ियावालेने चोंच खोली, बेपर की उड़ायी बोले कि आपके कबूतर किससे कम हैं वल्लाह कबूतर नहीं परीजाद है, खिलौने है, तसवीर है। हुमा पर साया पड़े तो उसे शहबाज बना दे, ऐसे ही खूबसूरत जानवरों में ईसाई लोग खुदा का नूर उतरना मानते हैं, इनको उड़ते देखकर किसके होश नहीं उड़ते,कसम कलामुल्लाह शरीफ की मटियाबुर्जवालों ने ऐसे जानवर ख्वाब में नहीं देखे। एक दलाल घोड़े की तारीफ कर उठा, जौहरी ने खचरों की तरफ बाग मोड़ी, बजाज बाग की स्तुति में फूल बूटे कतरने लगा, सिद्धान्त यह कि मैं बिचारा अकेला और वाह वाहें इतनी कि चारों ओर से मुझे दबाए लेती थीं और मेरे ऊपर गिरी क्या फिसली पड़ती थीं।

यह तो दीवानखाने का हाल हुआ अब सीढ़ी का तमाशा देखिये। चार पाँच हिंदू, चार पाँच मुसलमान सिपाही, एक जमादार, दो तीन उम्मेदवार और दस बीस उठल्लू के चूल्हे, कोई खड़ा है, कोई बैठा है, हाय रुपया हाय रुपया सबके जबान पर, पर इसमें सब ऐसे ही नहीं कोई-कोई सच्चा स्वामिभक्त भी है। कोई रंडी के भडुए से लड़ता है, रुपये में दो आना न दोगे तो सरकार से ऐसी बुराई करेंगे कि फिर बीबी का इस दरबार में दरशन भी दुर्लभ हो जायगा, कोई बजाज से कहता है कि वह काली बनात हमें न ओढ़ाओगे तो बरसों पड़े झूलोगे रुपये के नाम खाक भी न मिलेगी, कोई दलाल से अलग सट्टा बट्टा लगा रहा है, कोई इस बात पर चूर है कि मालिक का हमसे बढ़कर कोई भेदी नहीं जो रुपया कर्ज आता है हमारी मारफत आता है, दूसरा कहता है बचा हमारे आगे तुम क्या पूचल चर हो औरतों का भुगतान सब मैं ही करता हूँ।

इन सबो मे से एक मनुष्य को आपलोग पहचान रखिए, इससे बहुत काम पडेगा। यह नाटा खोटा अच्छे हाथ पैर का साँवले रग का आदमी है, बडी मोछ, छोटी ऑखे, कछाड़ा कसे, लाल पगड़ी बॉधे, हरा दुपट्टा कमर मे लपेटे, सफेद दुपट्टा ओढ़े, जात का कुनबी है। इसका नाम होली है। होली आजकल मेरे बहुत मुँह लग रहा है, इसीसे जो बात किसी को मुझ तक पहुँचानी होती है वह लोग उससे कहते हैं। रेवडी के वास्ते मसजिद गिरानी इसीका काम है।*

* यह अश कविवचन सुधा भाग ८ सं० २२ वैशाख कृष्ण ४ सं० १६३३ में प्रकाशित हुआ था।

प्रहसन-पंचक

स० १९३०–४०

सबै जातिगोपाल की, बसंतपूजा,
ज्ञातिविवेकिनी सभा, सडभढयो
सवाद. तथा स्वर्ग में विचार
सभा पाँचों लेख प्रहसव पचक
नाम से छपा।

प्रहसन-पंचक

सबै जात गोपाल की

—:❀:—

[एक पडित जी और एक क्षत्री आते हैं]•

क्षत्री—महाराज देखिए बड़ा अंधेर हो गया कि ब्राह्मणो ने व्यवस्था दे दी कि कायस्थ भी क्षत्री हैं। कहिए अब कैसे कैसे काम चलैगा।

पडित—क्यो, इस मे दोष क्या हुआ? "सबै जात गोपाल की" और फिर यह तो हिंदुओ का शास्त्र पनसारी की दूकान है और अक्षर कल्प वृक्ष हैं इस मे तो सब जात की उत्तमता निकल सकती है पर दक्षिणा आप को बाएँ हाथ से रख देनी पड़ैगी फिर क्या है फिर तो "सबै जात गोपाल की।"

क्ष०—भला महाराज जो चमार कुछ बनना चाहै तो उसको भी आप बना दीजिएगा।

पं०—क्या बनना चाहै?

क्ष०—कहिए ब्राह्मण।

प०—हाँ, चमार तो ब्राह्मण हई हैं इस मे क्या सदेह है, ईश्वर के चर्म्म से इनकी उत्पत्ति है, इन को यम दड नहीं होता। चर्म का अर्थ

ढाल है इस से ये दुड रोक लेते है। चमार मे तीन अक्षर है 'च' चारो वेद 'म' महाभारत 'र' रामायण जो इन तीनो को पढावै वह चमार। पद्मपुराण मे लिखा है इन चर्म्मकारो ने एक बेर बडा यज्ञ किया था, उसी यज्ञ मे से चर्मरण्वती निकली है। अब कर्म भ्रष्ट होने से अन्त्यज हो गए हैं नहीं तो है असिल मे ब्राह्मण, देखो रैदास इन मे कैसे भक्त हुए है लाओ दक्षिणा लाओ। 'सबै०'

क्ष०—और डोम।

पं०—डोम तो ब्राह्मण क्षत्रिय दोनो कुल के हैं, विश्वामित्र-वशिष्ट वश के ब्राह्मण डोम हैं और हरिश्चद्र और वेणु वश के क्षत्रिय हैं। इस मे क्या पूछना है लाओ दक्षिणा 'सबै जा०'

क्ष०—और कृपा निधान! मुसलमान।

प०—मीयाँ तो चारो वर्णो मे हैं। वाल्मीकि रामायण मे लिखा है जो वर्ण रामायण पढै मीयाँ हो जाय।

पठन् द्विजो वाग् ऋषभत्वमीयात्।
स्यात् क्षत्रियो भूमिपतित्वमीयात्॥

अल्लहोपनिषत् मे इनकी बड़ी महिमा लिखी है। द्वारका मे दो भाँति के ब्राह्मण थे जिनको बलदेव जी (मुशली) मानते थे। उन का नाम मुशलिमान्य हुआ और जिन्हें श्रीकृष्ण मानते उनका नाम कृष्ण-मान्य हुआ। अब इन दोनो शब्दो का अपभ्रश मुसलमान और कृस्तान हो गया।

क्ष०—तो क्या आप के मत से कृस्तान भी ब्राह्मण हैं?

प०—हई हैं इस मे क्या पूछना है—ईशावास उपनिषत् मे लिखा है कि सब जगत ईसाई है।

क्ष०—और जैनी?

प०—बडे भारी ब्राह्मण हैं। 'अर्हन्नित्यपि जैनशासनरताः' जैन इनका नाम तब से पड़ा जब से राजा अलर्क की सभा मे इन्हें कोई जै न कर सका!

क्ष०—और बौद्ध?

पं०—बुद्धिवाले अर्थात् ब्राह्मण।

त्त०—और धोबी।

प०—अच्छे खासे ब्राह्मण जयदेव के जमाने तक धोबी ब्राह्मण होते थे। 'धाई कविः दमापतिः' । ये शीतला के रज से हुए हैं इससे इनका नाम रजक पडा।

त्त०—और कलवार।

प०—त्त्री है, शुद्ध शब्द कुलवर है भट्टी कवि इसी जाति मे था।

त्त०—और महाराज जी कुहाँर।

प०—ब्राह्मण, घटखर्प्पर कवि था।

त्त०—और हाँ हाँ वेश्या।

प०—त्त्रियानी—रामजनी, और कुछ बनियानी अर्थात् वेश्या।

त्त०—अहीर।

प०—वैश्य—नदादिकों के बालकों का द्विजाति सस्कार होता था। 'कुरु द्विजाति सस्कार स्वस्तिवाचनपूर्व्वक' भागवत मे लिखा है।

त्त०—भुइहार।

प०—ब्राह्मण।

त्त०—दूसर।

पं०—ब्राह्मण, भृगुवश के, ज्वालाप्रसाद पडित का शास्त्रार्थ पढ़ लीजिए।

त्त०—जाठ।

प०—जाठर त्त्रिय।

त्त०—और कोल।

प०—कोल ब्राह्मण।

त्त०—धरिकार।

प०—त्त्रिय शुद्ध शब्द धैर्य्यकार है।

त्त०—और कुनबी और भर और पासी।

प०—तीनो ब्राह्मण वश मे हैं, भरद्वाज से भर, कन्व से कुनबी, पराशर से पासी।

त्त०—भला महाराज नीचो को तो आप ने उत्तम बना दिया अब कहिए उत्तमो को भी नीच बना सकते हैं?

प०—ऊँच नीच क्या, सब ब्रह्म है, आप दक्षिणा दिए चलिए सब कुछ होता चलैगा। सबै०

क्ष०—दक्षिणा मैं दूँगा, आप इस विषय मे भी कुछ परीक्षा दीजिए।

प०—पूछिए मै अवश्य कहूँगा।

क्ष०—कहिए अगरवाले और खत्री।

प०—दोनो बढई है, जो बढ़ियाँ अगर चदन का काम बनाते थे उनकी सज्ञा अगरवाले हुई और जो खाट बीनते थे वे खत्री हुए वा खेत अगोरने वाले खत्री कहलाए।

क्ष०—और महाराज नागर गुजराती।

प०—सँपेरे और तेली, नाग पकडने से नागर और गुल जलाने से गुजराती।

क्ष०—और महाराज भुँइहार और भाटिये और रोड़े।

प०—तीनो शूद्र, भूजा से भुइँहार, भट्टी रखने वाले भाटिये, रोड़ा ढोने वाले रोडे।

क्ष०—(हाथ जोड़कर) महाराज आप धन्य हौ लक्ष्मी वा सरस्वती जो चाहै सो करैं चलिए दक्षिणा लीजिये।

प०—चलो इस सब का फल तो यही था।

(दोनो गए)*

—:※:—

बसंत पूजा

[यजमान और सर्व्वभट्ट और मुद्र भट्ट आते हैं]

यज०—महाराज इसका नाम वसत पूजा क्यौ है?

स० भ०—महाराज इसमे बसतो की बसत ही मे पूजा करते हैं विशेषत: हमलोग पूरे वसतनदन है क्योकि तौकी बाई को बाईस रुपये मिलैं, मियाँ खिलौना को पदरह, लाट साहब को नजर भी पद्रही की

* हरिश्चद्र मैगजीन जि० १ स० ६ नवबर १४ सन् १८७३।

असरफी, बड़े डाक्तर और वकीलो को फीस भी इतनाही, बीनकारो को दस, कवियो को पॉच, चपरासियो को दो, कथा पर एक, पडितो को ईमान बिगड़वाई आठ आना पर हम को दुअन्नी. कठसरैया की माला और बेलकठा, सेती के चदन घस मोरे ललुआ।

मु० भ०—सत्य सत्य हम चिल्लाने मे किसी से कम नहीं, शास्त्र भी हमारा सर्वोपरि वेद उस पर यह दशा।

य०—अच्छा आज कोई इस समय के अनुसार सहिता पढ़िये तो हम विशेष दक्षिणा दे।

स० भ०—तर आरभ करा मुद्र भट्ट।

मु० भ०—हॅआ मी म्हणतो सहस्र शीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः।

स० भ०—अ आं सहस्राक्षः नेत्र कुत्रास्ति।

मु० भ०—स्वकार्य्यदशने—मा भवतु प्रजा दर्शने = सहस्रपात्—(रेलादिना) सभूमि सर्व्वतो वृत्त्वा—अत्यतिष्ठद्दशागुल।

स० भ०—हां हा अत्यतिष्ठत्साद्धं त्रिहस्त वासप्रवितस्तकं।

मु० भ०—पुरीषः एवेदं सर्व्वं यद्भूतयच्च भाव्य।

स० भ०—उतमद्यत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।

य०—सहस्र शीर्षा का अध्याय तो हमै भी याद है यह मत पढ़िये दूसरा चरखा निकालिये।

मु० भ०—तरते नमः म्हणा।

स० भ०—हां—राज्ञेनमः वणिजेनम गौरायचनमस्ताम्रायचनमः कृष्णायचनमः कपर्दिने नमोनमः।

मु० भ०—नमश्श्वभ्यश्श्वपतिभ्यश्चयोनमोनमः।

य०—हमै यह नमोनमो नहीं सुहाती।

स० भ०—तर देवता म्हणा—गौरी देवता हनूमान् देवता जाम्बुवान् देवता चद्रमा देवता।

मु० भ०—पूषा देवता मूशा देवता ईसा देवता मूठा देवता मीठा देवता गोदेवता के भक्तको देवता।

स० भ०—अकाल देवता स्वार्थो देवता धोखा देवता जोषा देवता कोरा देवता शिष्टाचारो देवता।

मु० भ०—लाटो देवता जज्जो देवता मजिस्टरो देवता पुलिस देवता डाक्टरो देवता ।

स० भ०—बगला देवता सड़को देवता रेलो देवता तारो देवता धूआँकसो देवता ।

मु० भ०—कोतवालो देवता थानेदारो देवता नाजिरो देवता कास्टिबलो देवता देव ताकत का हौआः ।

स० भ०—ईशावास्यमिदं सर्व्वं यत्किंचित् जगत्यां जगत् ।

मु० भ०—मधुव्वाता ऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धवः माध्वीर्नस्सन्त्वोषधीः । मधुम्हणजे मद्य ।

स० भ०—सलामश्चते बद्‌गीचते घूसश्चते चदाचते अड्रेसश्चते बालश्चते बलश्चते राज्यंचते पाटंचते कलाकौशल्यचते स्वच्छ विहारश्चते लक्ष्मीचते विद्याचते ।

मु०भ०—रिसेप्‌शनश्चते—इल्युमिनेशनश्चते—टैक्शचते—चुंगीचते जमाचते जुर्मानाचते ।

स० भ०—बैतुलमालश्चते रसूमश्चते स्टाम्पश्चते नजरश्चते डालीचते इनामश्चते ।

मु०भ०—रेलतार का किराया च ते अंगरेजी सौदे का दामश्चते रुईचते अन्नचते ।

स०भ०—एकाचते बलचते तनमनधन सर्व्वम्चंते भवतु ।

मु०भ०—मर्खताचमे कायरत्वञ्चमे धक्काचमे गरदनियाचमे हँसीचमे ।

स०भ०—भ्रष्टताचमे आजादीचमे इङलिसाइज्डत्वचमे बीएचमे एमएचमे ।

मु०भ०—गर्व्वचमे कमेटीचमे चुंगी कमिश्नरीचमे आनरेरी मैजिस्ट्रेटीचमे ।

स०भ०—खानाचमे टिकट्चमे मद्यचमे होटलचमे लेक्चरचमे ।

मु०भ०—स्टारअवइंडियाचमे कौंसिलमेंबरत्वचमे उपाधिचमे ।

स०भ०—दर्बार में कुरसीचमे मुलाकातमे आनरचमे प्रतिष्ठाचमे ।

मु०भ०—फूल्सकेपचमे हाफसिविलाइजेडत्वचमे जितत्वमन्धत्वचमे बूटचमे शिफारशेन कल्पन्ताम् ।

य०—लीजिए महाराज दक्षिणा, कान की मैल सब निकल गई अब नींद आती है बस धता।

दोनों०—अहाहा इस गला फाडने का फल तो यही था लाइये लाइये।

सब जाते हैं। *

—:॰:—

ज्ञाति विवेकिनी सभा

[विपिन राम शास्त्री सभा के सब पंडितों से बोले]

'हे सभा के विराजमान पंडितो, आज हम ने आप सब को इस लिये बुलाया है कि आप सब महात्मा हमारी इस बिनता को सुनो और उस पर ध्यान दो। वह हमारी बिनती यह है कि हमारे पुश्तैनी यजमान गडेरये लोग जो परम सुशील और सत्कर्म लवलीन हैं इन्हे किसी वर्ण मे दाखिल करे। अरे भाइयो यह बडे सोच की बात है कि हमारे जीते जी यह हमारे जन्म के यजमान जो सब प्रकार से हम को मानते दानते है नीच के नीच बने रहे तो हमारी जिदगी को धिक्कार है। कोई वर्ष ऐसा नहीं होता कि इन विचारो से दस बीस भेडा बकरा और कमरी आसनादि वस्तु और सीधा पैसा न मिलता होय। बिचारे बड़े भक्तिमान और ब्रह्मण्य होते है। इस लिये हम ने इन के मूल पुरुष का निर्णय और वर्ण व्यवस्था लिखी है। हम को आशा है कि आप सब हमारी समति से मेल करेगे। क्योंकि आज की हमारी कल की तुम्हारी। अभी चार दिन ही की बात है कि निबासीराम कायस्थ की गढत पर कैसा लबा चौडा दस्तखत हम ने कर दिया है। और हम क्या आप सब ने ही कर दिया है। रह गई पाडित्य सा उसे आज कल्ह कौन पूछता है गिनती मे नाम अधिक होने चाहिएँ।

* हरिश्चद्र मैगजीन जि० १ स० ७८ अप्रैल-मई सन् १८७४।

"मैंने कलिपुराण का आकाश खंड और निघट पुराण का पाताल खंड देखा तो मुझे अत्यत खेद भया कि यह हमारे यजमान खासे अच्छे क्षत्री अब कालवशात् शूद्र कहलाते हैं। अब देखिए इन के नामार्थ ही से क्षत्रियत्व पाया जाता है। गढारि अर्थात् गढ़ जो किला है उस के अरि तोडने वाले, यह काम सिवाय क्षत्री के दूसरे का नहीं है। यदि इसे गूढारि का अपभ्रश समझे तो यह शब्द भी क्षत्रियत्व का सूचक है। गूढ मत्स्य का नाम है तिन का अरि अर्थ ले तो यह भी ठीक है क्योंकि जल स्थल सब का आखेट करना क्षत्रियो का काम है। सब अर्थ अनुमान मात्र है मुख्य इन का नाम गरुडार्य अर्थात् गरुड़ के वशी वा गरुड़ के भाई जो अरुण हैं उन के वश मे उत्पन्न। इसी से जो पडित लोग इन का नाम गरलारि अनुमान करते हैं सो भी ठीक है क्यौंकि गरलारि जो मरकत अथवा गरुड़ मणि है सो गरुड़ जी की कृपा से पूर्वकाल मे इन के यहाँ बहुत थे और इन को सर्प नहीं काटता था और ये सर्प विष निवारण मे बडे कुशल थे इसी से ये गरुडार्य्य कहलाते थे, अब गडरिया कहलाने लगे हैं।

"इन की पूर्व कालिक प्रशस्तता और कुलीनता का वृत्तांत तो आकाश खड ही कहे देता है कि इन का मूल पुरुष उत्तम क्षत्री वर्ण था। यद्यपि इस अवस्था मे सब प्रकार से हीन दोन हो गए हैं तथापि बहुत से क्षत्रियत्व के चिन्ह इन मे पाए जाते हैं। पहिले जब इन के पुरखे लोग समर भूमि मे जुड़ते थे और लड़ने के लिये व्यूह रचना करते थे तो अपने योद्धाओ के चेतने और सावधान करने के लिए सस्कृत मे यह बोली बोलते थे। मत्तोहि मत्तोहि दृढ दृढ। अर्थात् मतवाले हो गए हो सॅभलो चौकस रहो सो इस वाक्य के अपभ्रश का लेश अब भी इन लोगो मे पाया जाता है। देखो जब ये भेड़ी और बकरियों को डॉटने लगते हैं तो "द्रहि द्रहि मतवाही मतवाही' कहने लगते है तो इन के क्षत्री होने मे भला कौन सदेह कर सकता है। क्षत्री का परम धर्म वीरता, शूरता, निर्भयता और प्रजा पालन है सो इन मे सहज ही प्राप्त है। सावन भादो की अधेरी रात मे जगलो के बीच सिह के समान गरजते हैं और अपनी प्रजा भेड़ी बकरी को बड़े भारी शत्रु वृक से बचाते हैं। शिकारी ऐसे होते हैं कि शशप्रभृति बन जतुओ

को दडो से पीट लेते है। बड़े बड़े बेगवान आखेटकारी श्वान इन की सेवा करते और इन की छाग मेषमयी सेना की रक्षा मे उद्यत रहते है। और दुःख सुख की सहनशीलता इन्हीं के बॉटे पडी है। जेठ की धूप और सावन भादो की वर्षा और पूस माघ की तुषार के दु ख को सहकर न खेदित होना इन्हीं का काम है। जैसे इन के पुरखे लाग पूर्वकाल मे बाणो से विद्ध होने पर भी रण मे पीछे को पॉव नहीं देते थे ऐसे ही जब इन के पॉव मे भदई कुश का डाभा तीव्र चुभ जाता है तो ये उस असह्य व्यथा को सह कर आगे ही का बढ़ते है। और धरती को सुधारने मे तो इन की प्रत्यक्ष महिमा है कि जिस खेत मे दो तीन रात ये गरुड़वंशी नृपति छागमयी सेना को लेकर निवास करते हैं उस खेत के किसान को ऋद्धि सिद्धि से पूर्ण कर देते हैं। फिर वह भूमि सबल और विकार रहित हो जाती है और मोटे नाजो की कौन कहे उस मे गोधूम और इक्षुदड अपरिमित उत्पन्न होता है तो इनसे बढ़कर भूमिपाल और प्रजारक्षक कौन होगा। और यज्ञ करना क्षत्रियो का मुख्य धर्म है सो इनमें भली भॉति पाया जाता है। शरत्कालीन और चैत्र मासिक नवरात्र मे अच्छे हृष्ट पुष्ट छाग मेषो के बलि प्रदानसे भद्रकाली और योगिनीगणको तृप्त करते है। और जब इनके यहॉ लोम कर्तनात्सव होता है तो उस समय सब भाई बिरादर इकट्ठे होकर खान पान के साथ परम आनन्द मनाते हैं। व्यवहार कुशल ऐसे होते है कि इनकी सेना की कोई वस्तु व्यर्थ नहीं जाती। यहॉ तक कि मल मूत्र मास चाम लोम उचित मूल्य से सब बिकता है। और वैरीहता ऐसे है कि सबसे बडे भारी शत्रु को पहिले ही इन्होने मार डाला है जैसे कहावत प्रसिद्ध है कि गड़रिया अपनी रिस को मनही मे मार डालता है यदि ऐसा न करते तो इनकी प्रजा की ऐसी वृद्धि काहे को होती। ये ऐसे नीतिज्ञ होते है कि मेष छाग की शक्ति के अनुसार हलकी लकडी से उनकी ताड़ना करते हैं। वृक्ष और नदी से बढ़कर परोपकारी साधू कोई नहीं होता सो वहीं इनका रात दिन निवास रहता है इस लिए ये गरुड़ार्य सदैव सज्जनो की सगति मे रहते हैं। मनोरजन तत्र मे लिखा है कि पूर्व काल मे यथार्थ सचित पशुओ को राक्षस लोग उठा ले जाते थे तब उनकी रक्षा का सभार

ऋषियो ने इन गरुड वशी क्षत्रियो को सौपा ता इन्होने राक्षसो को जीत कर यज्ञ पशुओ की रक्षा की तभी से छागमेष की रक्षा इनके कुल मे चली आती है।

"मै अति प्रसन्न हुआ कि आप सब ने सम्मति से एकता कर के मेरी बात रखली और तत्र के इन प्रामाणिक वचनो को सच्चा किया।

मेषचारणसंसक्ताः छागपालनतत्पराः।
बभूवुःक्षत्रियादेवि स्वाचारप्रतिवर्जनात्॥
कलौपचसहस्राब्दे किंचिदूनेगतेसति।
क्षत्रियत्वंगमिष्यति ब्राह्मणानाव्यवस्थया॥

(तदनतर गरुड़ वशियो के सम्मुख होकर)

हे गरुडवंशियो आज इस सभा के ब्राह्मणो ने तुम्हारे पुनः अपने क्षत्रिय पद के ग्रहण और धारण करने की अभिलाषा को पूर्ण किया। अब सब दक्षिणा लाओ हम सब पडित जन आपस मे बॉट ले और तुम्हारे क्षत्री बनने के कागद पर दस्तखत कर दे॥"

(कलऊ गड़ेरिया दक्षिणा देता है पडित लोग लेते है)

कलऊ—सब महरजवन से मोरी इहै विनती हौ कि जवन किछु किहा कराना हो तवन पक्का पोढ़ा कर दिह.। हॉ महरज्जा जिहमॉ कोऊ दोषे न

विपिनराम—दोखै का सारे ?

कलऊ—अरे इहै कि धरम सास्तरवा मे होइ तौने एहिमा लिखिह.।

विपिनराम—अरे सरवा धरमसास्तर फास्तर का नाम मत लेइ ताइ तोप के काम चलाउ सास्तर का परमान ढूंढे सरऊ तौ तोहार कतहूं पता न लागी। अरे फिर आज काल धरमसास्तर को पूछत को है।

कलऊ—अरे महरज्जा पोथी पुरान के अश्लोक फश्लोक लिख दीहा इहै और का महरज्जा तोहार परजा हौ।

विपिनराम—अरे सरवा परजा का नॉव मत लेइ। अस कहु कि हम क्षत्री हई ।

कलऊ—अच्छा महरज्जा हम त्रत्री हईं तोहरे सब के पायन परत हई ।

विपिनराम—अच्छा चिरजू चिरजू सुखी रहा । अच्छा कलऊ तुम दोऊ प्रानी एक बिरहा गाइ के सुनाइ दा तो हम सब बिदा होहिं ।

कलऊ—बहुत अच्छा महरज्जा (अपना स्त्री से) आउरे पवरी धीहर ।

(दोनों स्त्री पुरुष मिलकर नाचते गाते हैं)

आउ मोरि जानी सकल रसखानी । धरि कंध बहियाँ नाचु मनमानी ।
मै भैलो छतरि तु धन छतराना । अब सब छुटि गैरे कुल कै रे कानी ।
घन धन बम्हना तै पोथिया पुरानी । जिन दियो छतरी बनाइ जगजानी ॥

(सब का प्रस्थान भया)*

—:֍:—

संडभंडयोः संवादः

—:֍:—

संडः—कः कोत्र भोः ?

भंडः—अहमस्मि भंडाचार्यः ।

सं०—कुतो भवान् ?

भं०—अहं अनादियवनसमाधित उत्थितः ।

सं०—विशेषः ।

भं०—कः अभिप्राय ।

सं०—तर्हि तु भवान् वसंत एव ।

भं०—अत्र कः संदेहः केवल वसंतो, वसंतनन्दनः ।

सं०—मधुनन्दनोवा माधवनंदनो वा ?

भं०—आः ! किमामाक्षिपसि ! नाहं मधोः कैटभाग्रजस्य नंदनः । अहं तु हिंदू पदवाच्य अतएव माधवनन्दनः ।

सं०—तर्हितु सुस्वागत ते । आगच्छ । माधवनंदन ।

भं०—हंत, प्रणाम करोमि ।

---

* यह लेख कविवचनसुधा जि० ८ सं० १६, ११ दिसंबर सन् १८७६ में प्रकाशित हुआ था ।

स०—आस्यता स्थीयताच।

भ०—ह् ह् ह् ह्, भवानेव तिष्ठतु।

स०—नाय कालो व्यर्थशिष्टाचारस्य, तत् स्थीयता, इदमासन।

भ०—इदमासनमास्ये।

[उभावुपनिशत.]

सं०—किमर्थं निर्गतोसि ?

भ०—कुतः जननीजठरकुहर पिठरात्, गृहाद्वा।

स०—पूर्वतस्तु निर्गत एव विभासि, परत' पृच्छामि।

भं०—होलिका रमणार्थं।

स०—हहा ! अस्मिन् घोरतरसमयेपि भवादृशा होलिका रमणमनुमोदयति न जानासि नाय समयो होलिकारमणस्य ? भारतवषधने विदेशगते, क्षुत् चामपीडितेच जनपदे, किं होलिकारमणेन ?

भ०—अस्मादृशा गृहे सर्वदैव होलिका, नाह लोकरोदन शृणोमि। लोकास्तु सर्वदैव रोदनशीलाः।

स०—तर्हि भवान् ढुढावशजातः।

भ०—नाहं ढुढिराजः।

स०—नहि भो, मया उच्यते तर्हितु भवान् ढुढावशजातः ?

भ०—नाह जयपुरी।

स०—कःकथयति भवान् जयपुरी, दिल्लीपुरी, गोरक्ष पुरी, गिरिर्भारतीति ?

भ०—तर्हि न बुद्धो मया ढु ढाशब्दार्थः।

सं०—ढु ढानाम्न्या राक्षस्या एव होलिकापर्व।

भ०—आः ! पुनरपि मामाक्षिपसि राक्षसवशकलकेन ! मधुनदनः मेवोक्त नाह मधुवंशीय, माधवनंदनोह।

स०—भवतु, केन साक रस्यसे होलिकाक्रीड़ः।

भ०—यो मिलिष्यति—उदारचरिताना तु वसुधैव कुटुम्बकं।

स०—कया सामग्र्या भवान् रिरसुः ?

भ०—धवलधूलिरक्तपौडरश्यामपंकपीतागरुजादिद्रव्यैः। अंतरच गुलालश्च चोवा चदनमेव च। अबीरः पिचकारी चेति वाक्यात्।

स०—अधुना, भारते तादृक् कीतिकर्तारो न सति, धवलधूलिः कुत आगमिष्यति ?

भ०—न ज्ञात भवता ? चुंगीरचित राज मार्गत ।

स०—भवतु राजमार्गतो, देवमार्गतो वा, किन्तु धवलधूलिः कुनस्तत्र निरतरमकककर्मप्राचुर्यात् ?

भ०—आः ! यथार्थनामन् ! नास्ति धूल्यभाव ? भारतेतु प्राय. सर्वेषामेव नेत्रेधूर्तप्रक्षेपिता धूलिर्मिलिष्यति ।

स०—तर्हि रक्तपौडरकुत. मेडिकलहालात् ?

भ०—न बुद्ध भा भवता, रक्तपौडर नाम अर्बार' रक्तच तत् पौडरचेति समास. ।

स०—रक्तं, पौडर चेति कि वस्तुद्वय ?

भ०—हा ! कीदृशो भवानल्पज्ञः ! नहि नहि, भो अन्यवर्णावच्छेदक रक्त वर्णावच्छिन्नः पौडर, नाम विशिष्टजातिबोधकः स्वाभाविकधर्मवान् तत्त्वरूपश्चूर्णविशेष.।

स०—हहो बुद्ध भवान् वैयाकरणी नैय्यायिकश्च ।

भ०—सत्यमेव, यत्र शाब्दिकास्तत्र तार्किका इति हि प्रसिद्धिः ।

स०—भवतु रक्तपौडर कुत आनेष्यसि, आर्याणा शिरसि तदभावात् ?

भ०—हहहह, रक्त रजसोपि दारिद्र्य मम नारीभडस्य ! विशेषतः कुसुमाकरे ऋतौ ?

सं०—ज्ञात—परतु श्यामपकं कि जयचद्रादारभ्य आर्यकुलानर्थविग्रहमूलजनकानोमुखात्, भारत ललनाया अश्रुपूर्णान्नेत्राद्वा ?

भ०—नहि, गधविक्रेतुर्हट्टपण्यात् ।

स०—अगरुजकुत, आर्याणा मुख काति समूहात् ?

भ०—पाचलात्काश्मीरात् । अस्माक तु सर्वत्रैव गतिः, यतः कुतश्चिद् गृहीत्वा क्रीडिष्यामि ।

स०—क्रीड निश्चितो भवान्, कुत्रास्माक देशचिंतातुराणा क्रीडाभिरुचिः ?

भ०—भवतस्तु व्यर्थ देशचिंतातुराः भवच्चिंतया कि भविष्यति ? सुख क्रीड, रमस्व, खेल, कूद्खेलम् याति, पुनः क युवतयः, रोद-

नेन न किमपि भविता, भारततु हालिकाया मेव गता। अत्रतु जमघटो धूलिखेल एवावशिष्यति, तन्मारय अनतागलराजधानीशिखरोपरि पोलिटिकलचितासमूह।

स०—मित्र, परमयमुत्साह' किमूलः इति जानासि वा त्व ?

भ०—नहि, लोके तु शिष्टाचार एव सर्वकर्मप्रधानो मन्यते, अतः सएव मूल भविता अथवा पश्यचाधुनिक विद्यार्थिन।

स०—भवतु तथैव करोमि।*

—※.—

स्वर्ग में विचार सभाका अधिवेशन

—:o:—

स्वामी दयानद सरस्वती और बाबू केशवचद्रसेन के स्वर्ग मे जाने से वहाँ एक बेर बडा आदोलन हो गया। स्वर्गवासी लोगो मे बहुतेरे तो इनसे घृणा करके धिक्कार करने लगे और बहुतेरे इनको अच्छा कहने लगे। स्वग मे भी 'कसरवेटिव' और 'लिबरल' दो दल हैं। जो पुराने जमाने के ऋषि मुनि यज्ञ कर करके या तपस्या करके अपने अपने शरीर को सुखा सुखा कर और पच पच कर मरके स्वर्ग गए हैं उन के आत्मा का दल 'कसरवेटिव' है, और जो अपनी आत्माही की उन्नति से वा और किसा अन्य सार्वजनीन उच्च भाव सपादन करने से या परमेश्वर की भक्ति से स्वर्ग मे गए है वे 'लिबरल' दल भक्त हैं। वैष्णव दोनो दल के क्या दोनो से खारिज थे, क्योकि इनके स्थापकगण तो लिबरल दल के थे किंतु अब ये लोग 'रेडिकल्स' क्या महा महा रेडिकल्स हो गए हैं। बिचारे बूढ़े व्यासदेव को दोनो दल के लोग पकड़ पकड़ कर लेजाते और अपनी अपनी सभा का 'चेयरमैन' बनाते थे, और बेचारे व्यासजी भी अपने प्राचीन अव्यवस्थित स्वभाव और शील के कारण जिस की सभा मे जाते थे वैसी ही वक्तृता कर देते थे। कसरवेटिवो का दल प्रबल था, इसका मुख्य कारण यह था कि स्वर्ग के जमींदार इन्द्र, गणेश प्रभृति भी उनके साथ योग देते थे, क्योकि बगाल के जमीं-

* विद्यार्थी ख० १ स० ८ फाल्गुन स० १९३५।

दारो की भाँति उदार लोगो की बढती से उन बेचारो को विविध सर्वोपरि बलि और भाग न मिलने का डर था।

कई स्थानो पर प्रकाश सभा हुई। दोनो दल के लोगो ने बड़े आतंक से वक्तृता दी। 'कसरवेटिव' लोगो का पक्ष समर्थन करने को देवता लोग भी आ बैठे और अपने अपने लोको मे भी उस सभा की शाखा स्थापन करने लगे। इधर 'लिबरल' लोगो की सूचना प्रचलित होने पर मुसलमानी-स्वर्ग और जैन स्वर्ग तथा क्रिस्तानी-स्वर्ग से पैगंबर, सिद्ध, मसीह प्रभृति हिदू-स्वर्ग मे उपस्थित हुए और 'लिबरल' सभा मे योग देने लगे। बैकुठ मे चारो ओर इसी की धूम फैल गई। 'कसरवेटिव' लोग कहते, "छिः! दयानद कभी स्वर्ग मे आने के योग्य नहीं, इसने १ पुराणो का खडन किया, २ मूर्ति पूजा की निदा किया, ३ वेदो का अर्थ उलटा पुलटा कर डाला, ४ दश नियोग करने की विधि निकाली, ५ देवताओं का अस्तित्व मिटाना चाहा, ६ और अत मे सन्यासी होकर अपने को जलवा दिया। नारायण! नारायण! ऐसे मनुष्य की आत्मा को कभी स्वर्ग मे स्थान मिल सकता है, जिस ने ऐसा धर्म विप्लव कर दिया और आर्यावर्त को धर्म वहिर्मुख किया।"

एक सभा मे काशी के विश्वनाथ जी ने उदयपुर के एकलिंग जी से पूछा "भाई! तुम्हारी क्या मत मारी गई जो तुम ने ऐसे पतित को अपने मुँह लगाया और अब उसके दल के सभापति बने हौ, ऐसाही करना है तो जाओ लिबरल लोगो से योग दो।" एकलिंग जी ने कहा "भाई, हमारा मतलब तुम लोग नहीं समझे। हम उसकी बुरी बातो को न मानते न उसका प्रचार करते, केवल अपने यहाँ के जगल की सफाई का कुछ दिन उसको ठेका दिया, बीच मे वह मर गया अब उसका माल मता ठिकाने रखवा दिया तो क्या बुरा किया।"

कोई कहता "केशवचद्रसेन! छि छि! इसने सारे भारतवर्ष का सत्यानाश कर डाला। १ वेद पुराण सब को मिटाया, २ क्रिस्तान मुसलमान सब को हिदू बनाया। ३ खाने पीने का विचार कुछ न बाकी रक्खा। ४ मद्य की तो नदी बहा दी। हाय हाय ऐसी आत्मा क्या कभी बैकुठ मे आसकती है।"

ऐसे ही दोनो के जीवन की समालोचता चारो ओर होने लगी।

लिबरल लोगो की सभा भी बडी धूमधाम से जमती थी। किंतु इस सभा मे दो दल हो गए थे, एक जो केशव की विशेष स्तुति करते, दूसरे वे जो दयानद को विशेष आदर देते थे। कोई कहता, अहा धन्य दयानंद, जिसने आर्यावर्त के निद्रित आलसी मूर्खो की मोह निद्रा भग कर दी। हजारो मूर्खों को ब्राह्मणो के (जो कसरवेटिवो के पादरी और व्यर्थ प्रजा का द्रव्य खाने वाले है) फदे से छुडाया। बहुतो को उद्योगी और उत्साही कर दिया। वेद मे रेल, तार, कमेटी, कचहरी दिखाकर आर्यों की कटती हुई नाक बचा ली। कोई कहता धन्य केशव! तुम साक्षात् दूसरे केशव हो। तुम ने बग देश की मनुष्य-नदी के उस वेग को, जो कृश्चन समुद्र मे मिल जाने को उच्छलित हो रहा था, रोक दिया। ज्ञान कर्म का निरादर कर के परमेश्वर का निर्मल भक्ति मार्ग तुम ने प्रचलित किया।

कसरवेटिव् पार्टी मे देवताओ के अतिरिक्त बहुत लोग थे जिन मे, याज्ञवल्क्य प्रभृति कुछ तो पुराने ऋषि थे और कुछ नारायणभट्ट, रघुनंदनभट्टाचार्य्य, मडनमिश्र प्रभृति, स्मृति ग्रथकार थे। सुना है कि विदेशी स्वर्ग के कुछ 'शीआ' लोगो ने भी इनके साथ योग दिया है।

लिबरल दल मे चैतन्य प्रभृति आचार्य, दादू, नानक, कबीर प्रभृति भक्त और ज्ञानी लोग थे। अद्वैतवादी भाष्यकार आचार्य्य पचदशीकार प्रभृति पहले दलभुक्त नहीं होने पाए। मिस्टर ब्रैडला की भॉति इन लोगो पर कसरवेटिवो ने बड़ा आक्षेप किया किंतु अत मे लिबरलो की उदारता से उन के समाज मे इनको स्थान मिला था।

दोनो दलो के मेमोरियल तयार कर स्वाक्षरित होकर परमेश्वर के पास भेजे गए।—एक मे इस बात पर युक्ति और आग्रह प्रगट किया था कि केशव और दयानद कभी स्वर्ग मे स्थान न पावै और दूसरे मे इसका वर्णन था कि स्वर्ग मे इनको सर्वोत्तम स्थान दिया जाय।

ईश्वर ने दोनो दलो के डेप्यूटेशन को बुलाकर कहा "बाबा अब तो तुम लोगो की 'सैल्फगवर्नमेंट' है। अब कौन हम को पूछता है, जो जिसके जी मे आता है करता है। अब चाहे वेद क्या सस्कृत का

अक्षर भी स्वप्न मे भी न देखा हो पर लोग धर्म विषय पर वाद करने लगते हैं। हम तो केवल अदालत या व्यवहार या स्त्रियो के शपथ खाने को ही मिलाए जाते है। किसी को हमारी डर है? कोई भी हमारा सच्चा 'लायक' है? भूतप्रेत ताजिया के इतना भी तो हमारा दरजा नहीं बचा। हम को क्या काम चाहे वैकुठ मे कोई आवे। हम जानते हैं चारो लड़को (सनक आदि) ने पहले ही से चाल बिगाड़ दी है। क्या हम अपने बिचारे जयविजय को फिर राक्षस बनवावे कि किसी का रोकटोक करे। चाहे सगुन मानो चाहे निर्गुन, चाहे द्वैत मानो चाहे अद्वैत, हम अब न बोलेगे। तुम जानो स्वर्ग जाने।"

डेप्यूटेशन वाले परमेश्वर की ऐसी कुछ खिजलाई हुई बात सुनकर कुछ डर गए। बड़ा निवेदन सिवेदन किया। कोई प्रकार से परमेश्वर का रोष शात हुआ। अत मे परमेश्वर ने इस विषय के बिचार के हेतु एक 'सिलेक्टकमेटी' स्थापन की। इसमे राजा राम मोहन राय, व्यासदेव, टोडरमल, कबीर प्रभृति भिन्न भिन्न मत के लोग चुने गए। मुसलमानी-स्वर्ग से एक 'इमाम', क्रिस्तानी से 'लूथर', जैनी मे पारसनाथ, बौद्धो से नागार्जुन और अफरीका से सिटावाया के बाप को इस कमेटी का 'एक्स अफीशियो मेबर' किया। रोम के पुराने 'हरकुलिस' प्रभृति देवता जो अब गृह सन्यास लेकर स्वर्गही मे रहते हैं और पृथिवी से अपना सबध मात्र छोड़ बैठे है, तथा पारसियों के 'जरदुश्तजी' को 'कारेस्पांडिग आननेरी मेबर' नियत किया और आज्ञा दिया कि तुम लोग इस सब कागज पत्र देख कर हम को रिपोर्ट करो। उनकी ऐसी भी गुप्त आज्ञा थी कि एडिटरो की आत्मागण को तुम्हारी किसी 'कारवाई' का समाचार तब तक न मिलै जब तक कि रिपोर्ट हम न पढ़ ले नहीं ये व्यर्थ चाहे कोई सुनै चाहे न सुनै अपनी टॉय टॉय मचा ही देगे।

सिलेक्ट कमेटी का कई अधिवेशन हुआ। सब कागज पत्र देखे गए। दयानन्दी और केशवी ग्रंथ तथा उनके उनके प्रत्युत्तर और बहुत से समाचार पत्रो का मुलाहिज़ा हुआ। बालशास्त्री प्रभृति कई कसरवेटिव और द्वारकानाथ प्रभृति लिबरल नव्य आत्मागणो की

इस मे साक्षी ली गई। अंत मे कमेटी या कमीशन ने जो रिपोर्ट किया उसकी मर्म बात यह थी कि :—

"हम लोगो की इच्छा न रहने पर भी प्रभु की आज्ञानुसार हम लोगो ने इस मुकदमे के सब कागज पत्र देखे। हम लोगो ने इन दोनो मनुष्यो के विषय मे जहाँ तक समझा और सोचा है निवेदन करते हैं। हम लोगो की सम्मति मे इन दोनो पुरुषो ने प्रभु की मंगलमयी सृष्टि का कुछ विघ्न नहीं किया वरंच उस मे सुख और संतति अधिक हो इसी मे परिश्रम किया। जिस चंडाल रूपी आग्रह और कुरीति के कारण मनमाना पुरुष धर्मपूर्वक न पाकर लाखो स्त्री कुमार्ग गामिनी हो जाती है, लाखो विवाह होने पर भी जन्म भर सुख नहीं भोगने पातीं, लाखो गर्भ नाश होते और लाखो ही बाल हत्या होती है, उस पापमयी परम नृशंस रीति को इन लोगो ने उठा देने मे अपने शक्यभर परिश्रम किया। जन्मपत्री की विधि के अनुग्रह से जब तक स्त्री पुरुष जीए एक तीर घाट एक मीर घाट रहै, बीच मे इस वैमनस्य और असंतोष के कारण स्त्री व्यभिचारिणी पुरुष विषयी हो जायँ, परस्पर नित्य कलह हो, शांति स्वप्न मे भी न मिलै, वश न चलै, यह उपद्रव इन लोगो से नहीं सहे गये। विधवा गर्भ गिरावैं, पंडित जी या बाबू साहब यह सह लेंगे, वरंच चुपचाप उपाय भी करा देंगे, पाप को नित्य छिपावेंगे, अंततोगत्वा निकलही जायँ तो संतोष करेंगे, पर विधवा का विधिपूर्वक विवाह न हो, फूटी सहेंगे, आँजी न सहेंगे, इस दोष को इन दोनो ने निःसंदेह दूर करना चाहा। सवर्ण पात्र न मिलने से कन्या को वर मूर्ख अंधा वरंच नपुंसक मिले तथा वरको काली कर्कशा कन्या मिले जिसके आगे बहुत बुरे परिणाम हो, इस दुराग्रह को इन लोगो ने दूर किया। चाहे पढ़े हो चाहे मूर्ख, सुपात्र हो कि कुपात्र, चाहे प्रत्यक्ष व्यभिचार कर या कोई भी बुरा कर्म करे, पर गुरू जी है, पंडित जी है, इनका दोष मत कहो, कहोगे तो पतित होगे, इनको दो, इनको राजी रक्खो, इस सत्यानाश संस्कार को इन्होने दूर किया। आर्य जाति दिन दिन ह्रास हो, लोग स्त्री के कारण, धन के वा नौकरी व्यापार आदि के लोभ से,

मद्यपान के चसके से, बाद मे हार कर राजकीय विद्या का अभ्यास करके मुसल्मान या क्रिस्तान हो जायँ, आमदनी एक मनुष्य की भी बाहर से न हो केवल नित्य व्यय हो, अत मे आर्यो का धर्म और जाति कथाशेष रह जाय, किंतु जो बिगडा सो बिगडा फिर जाति मे कैसे आवेगा, कोई भी दुष्कर्म किया तो छिपके क्यो नहीं किया, इसी अपराध पर हजारो मनुष्य आर्य पक्ति से हर साल छूटते थे, उसको इन्होने रोका। सब से बढ कर इन्होने यह कार्य किया, सारा आर्यावर्त जो प्रभु से विमुख हो रहा था, देवता बिचारे तो दूर रहे, भूत प्रेत पिशाच मुरदे, साँप के काटे, बाघ के मारे, आत्म हत्या करके मरे, जल, दब या डूब कर मरे लोग, यही नहीं मुसलमानी पीर पैगबर औलिया शहीद वीर ताजिया गाजीमियाँ, जिन्होने बडी मूर्ति तोड कर और तीर्थ पाट कर आर्य धर्म विध्वस किया, उन का मानने और पूजने लग गए थे, विश्वास तो मानो छिनाल का अग हो रहा था, देखते सुनते लज्जा आती थी कि हाय ये कैसे आर्य हैं, किससे उत्पन्न हैं, इस दुराचार की ओर से लोगो का अपनी वक्तृताओ के थपेड़े के बल से मुँह फेर कर सारे आर्यावत को शुद्ध 'लायल' कर दिया।

'भीतरी चरित्र मे इन दोनो के जो अतर हैं वह भी निवेदन कर देना उचित है। दयानद की दृष्टि हम लोगो की बुद्धि मे अपनी प्रसिद्धि पर विशेष रही। रग रूप भी इन्होने कई बदले। पहले केवल भागवत का खंडन किया। फिर सब पुराणो का। फिर कई ग्रंथ माने कई छोड़े। अपने काम के प्रकरण माने अपने विरुद्ध को क्षेपक कहा। पहले दिगबर मिट्टी पोते महात्यागी थे। फिर संग्रह करते करते सभी वस्त्र धारण किये। भाष्य मे भी रेल तार आदि कई अर्थ जबरदस्ती किए। इसी से संस्कृत विद्या को भली भाँति न जानने वाले ही प्राय इनके अनुयायी हुए। जाल को छुरी से न काट कर दूसरे जाल ही से जिस को काटना चाहा इसी से दोनो आपस मे उलझ गए और इसका परिणाम गृह विच्छेद उत्पन्न हुआ।

"केशव ने इनके विरुद्ध जाल काट कर परिष्कृत पथ प्रकट किया। परमेश्वर से मिलने मिलाने की आड़ या बहाना नहीं रखा। अपनी भक्ति की उच्छलित लहरो मे लोगो का चित्त आर्द्र कर दिया। यद्यपि

ब्राह्म लोगो मे सुरा मासादि का प्रचार विशेष है किंतु इसमे केशव का कोई दोष नहीं। केशव अपने अटल विश्वास पर खडा रहा। यद्यपि कूचबिहार के सबध करने से और यह कहने से कि ईसामसीह आदि उससे मिलते हैं, अंतावस्था के कुछ पूर्व उन के चित्त की दुर्बलता प्रकट हुई थी, किंतु वह एक प्रकार का उन्माद होगा वा जैसे बहुतेरे धर्म प्रचारको ने बहुत बडी बाते ईश्वर की आज्ञा बतला दीं वैसे ही यदि इन बेचारे ने एक दो बात कही तो क्या पाप किया। पूर्वोक्त कारणो ही से केशव का मरने पर जैसा सारे ससार में आदर हुआ वैसा दयानद का नहीं हुआ। इस के अतिरिक्त इन लोगो के हृदय के भीतर छिपा कोई पुन्य पाप रहा हो तो उस को हम लोग नहीं जानते इस का जानने वाला केवल तूही है।"

इस रिपोर्ट पर विदेशी मेबरो ने कुछ क्रुद्ध होकर हस्ताक्षर नहीं किया।

रिपोर्ट परमेश्वर के पास भेजी गयी। इस को देख कर इस पर क्या आज्ञा हुई और वे लोग कहाँ भेजे गए यह जब हम भी वहाँ जायँगे और फिर लौट कर आसकेंगे तो पाठक लोगो को बतलावेंगे। या आप लोग कुछ दिन पीछे आपही जानोगे।*

---

* मित्रविलास खड ८ स० ४० (१६ जून सन् १८८५ ई०)

स्तोत्र-पंचरत्न

सं० १६३१-५ ?

स्तोत्र पचरत्न के नाम से श्रीवेश्यास्तवराज, श्रीसेवापद्धति,
मदिरास्तवराज, ककरस्तोत्र और अँगरेज स्तोत्र बाँकीपुर
खड्गविलास प्रेस से छपा था जिस की भूमिका
भारतेंदुजी ने सन् १८८२ ई० में लिखी
थी। द्वितीय बार सन् १८८६ ई०।
अंत में 'ईश्वर बड़ा विलक्षण
है' सम्मिलित है।

भूमिका

प्रिय पाठकगण ! यद्यपि ये स्तोत्र हास्यजनक हैं तथापि विज्ञ लोग इनसे अनेकहो उपदेश निकाल सकते हैं। शोच का विषय है कि इन दिनो हम आर्य लोगों का दीन भारतवर्ष माम मदिरा वेश्यादि दोषो से ग्रस्त हो रहा है। यदि इसके बचाव का कोई उपाय शीघ्र न किया जायगा तो हम लोगो को बडी भारी क्षति सहनी पड़ेगी अतएव शीघ्र ही इन आपत्तियो से भारतवासियो को बचना उचित है।

बकरी विलाप * को इसमे सम्मिलित करने मे केवल यही प्रयोजन है कि इस दीन दुखिया के विलाप को सुनकर मासलोलुप महाशय बकरो पर दया करे और वृथा हो अपनी जिह्वा के स्वादार्थ इन सहायहीन बिचारो के प्राण न ले। ससार मे सहस्रो ही एक से एक उत्तम स्वादिष्ट खाद्य-वस्तु ईश्वर ने उत्पन्न की है कुछ मास के सिर मे सुरखाब का पर लगा हो नहीं है अतएव आशा है कि पाठकगण इस घृणित और जघन्य कार्य से अपना अपना हाथ खींच लेगे।

हरिश्चंद्र

---

* बकरी विलाप भारतेदु ग्र थावली भाग २ मे पृ० ६६०–२ पर प्रकाशित हो चुका है।

स्तोत्र पंचरत्न

श्री वेश्यास्तवराज

(महा सस्कृत)

ओं अस्य श्री वेश्यास्तवराज महामाला मत्रस्य भण्ड्राचार्य्यः श्री हरिश्चन्द्रो ऋषि द्रव्योबीज मुख कीलकं वाग्वधू महादेवता सर्वस्वाहार्थ जपे विनियोग । अथ अगन्यास. । द्रव्य हारिण्यै हृदयाय नमः जेरपायी धारिण्यै शिरसे स्वाहा चोटी काटिन्यै शिखायै वषट् प्रत्यङ्गालिङ्गिन्यै कवचाय हुंकामान्ध कारिण्यै नेत्राभ्या वौषट् विषयार्थिन्यै अस्त्रत्रयाय फट् ।

अथ करन्यास

सर्व शून्य कर्त्र्यै अगुष्टाभ्यान्नमः लोकवेदनिषेधिन्यै तर्जनीभ्यान्नमः मध्यम विधायिन्यै मध्यमाभ्यान्नमः दुर्नामदायिन्यै अनामिकाभ्यान्नमः कनिष्ठकारिण्यै कनिष्ठिकाभ्यान्नम. आसमुद्रान्त कर ग्राहिण्यै करतल कर पृष्टाभ्यान्नम. ॥

अथ ध्यानम्

पद्माकारामुखा कपोल ललिता माधुर्य पूर्णाधरा । अत्युच्चस्तनमण्डला विषजलैः पूर्णा घटकाचनीं । मिथ्याप्रेम मयीं तनुं विदधतीं सर्वस्व सहारणीं । ध्यायेद्वार वधू सदैव हृदये धर्मार्थ विच्छित्तये ॥

अथ स्तोत्र प्रारम्भ ।

नौमि नौमि नौमि देवि रण्डिके ।
लोक वेद सिद्ध पथ खण्डिके ॥
कोटि यक्षराज कोष नासिनी ।
स्वार्थ सिद्धि हेतही विलासिनी ॥
दृष्टि मात्र मन्द मन्द हासिनी ।
कामि बृन्द काम दुःख नासिनी ॥
जातरूप जात रूप शालिनी ।
द्रव्यमान वीर्य कोष कालिनी ॥
नव्य यून बृन्द मुण्ड मालिनी ।
क्षेत्रपाल बाहनादि पालिनी ॥
काशिका प्रवास मोक्ष दायिनी ।
पोर्ट ब्राडिकादि मद्य पायिनी ॥
केश पाश स्वच्छ गुच्छ शोभिनी ।
द्रव्य दर्श भव्य भाव लोभिनी ॥
काम अग्नि ज्वाल माल कुण्डिनी ।
कामि चित्त पक्षिका भुसुण्डिनी ॥
पुन्य तीर्थ यात्रि बृन्द पावनी ।
दैन युक्त काम सैन्य छावनी ॥
मद्यप प्रमोद पुष्ट पीढिका ।
एनलाइटेड पथ सीढिका ॥
पेशवाज अङ्ग शोभिताननना ।
गिल्टभूषणा प्रमोद कानना ॥
मातृ पितृ बन्धु शील भक्षिका ।
लोक लाज नाश हेतु तक्षिका ॥
गुप्त द्रव्य पुञ्ज गेह रक्षिका ।
यौवनासवार्थ पुष्प मक्षिका ॥
धर्म कर्म शर्म चर्म हारिणी ।
गर्म घर्म नम मर्म कारिणी ॥
प्रेजुडीस लेश मात्र भञ्जिका ।

मद्यपान घोर रग रञ्जिका ॥
दायिनी क्षणैक मात्र सङ्ग की ।
आतशक सुजाक और फिरङ्ग की ॥
पितृ नाम हीन मातृ नामिका ।
सर्व जाति पाति मध्य गामिका ॥
मिष्ट जिह्वा कपाल मूडनी ।
मित्र वर्ग युक्त नर्क बूडनी ॥
लोक वेद लाज पत्र फाडनी ।
जीवितैव कब्र मध्य गाडनी ॥
द्रव्य लाभ धावमान साडनी ।
सद्गृहस्थ गेह की उजाड़नी ॥
सम्प्रदायि वृन्द जीविका प्रदा ।
टाल हेतु माल पूरनी सदा ॥
नायकावलम्बिनी सुखास्पदा ।
त्वानमामि रण्डि देवते सदा ॥
इदं वार बधू स्तोत्र दिव्यादिव्यतरमहत् ।
गुप्त गुप्तवती तत्रे देवैरपि सुदुर्लभम् ॥
यः पठेत्प्रातरुत्थाय सायवासुसमाहितः ।
मुक्तो भवतिसदैव देवगेहादि बन्धनात् ॥
जप्त्वा जप्त्वा पुनर्जप्त्वा पतित्वा चमहीतले ।
उत्थाप्यचपुनर्जप्त्वा नरोमुक्तिमवाप्नुयात् ॥

इति

—❀:—

स्त्री सेवा पद्धति

इस पूजा मे अश्रु जल ही पाद्य है, दीर्घश्वास ही अर्घ्य है, आश्वासन ही आचमन है, मधुर भाषण ही मधुपर्क है, सुवर्णालंकार ही पुष्प है, धैर्य ही धूप है, दीनता ही दीपक है, चुप रहना ही चंदन है और बनारसी साड़ी ही विल्पपत्र है, आयु रूपी आँगन मे

सौंदर्य तृष्णा रूपी खूटा है, उपासक का प्राण पुज छाग उसमे बँध रहा है, देवी के सुहाग का खप्पर और प्रीति की तरवार है, प्रत्येक शनिवार की रात्रि इसमे महाष्टमी है, और पुराहित यौवन है।

पदादि उपचार करके होम के समय यौवन पुरोहित उपासक के प्राण समिधो मे मोहाग्नि लगाकर सर्वनाश तत्र से मत्रो से आहुति दे "मानखण्ड के लिए निद्रा स्वाहा" "बात मानने के लिए माँ बाप का बधन स्वाहा" "वस्त्रालकारादि के लिए यथा सर्वस्व स्वाहा" "मन प्रसन्न करने के लिए यह लोक परलोक स्वाहा" इत्यादि, होम के अनन्तर हाथ जोड़कर स्तुति करै।

हे स्त्री देवी! ससार रूपी आकाश मे गुब्बारा (बेलून) हो, क्योंकि बात बात मे आकाश मे चढा देती हो, पर जब धक्का दे देती हो तब समुद्र मे डूबना पडता है अथवा पर्वत के शिखरो पर हाड़ चूर्ण हो जाते है, जीवन के मार्ग मे तुम रेलगाड़ी हो, जिस समय रसना रूपी एञ्जिन तेज करती हो एक घडी भर मे चौदहो भुवन दिखला देती हो, कार्यक्षेत्र मे तुम इलेक्ट्रिक टेलीग्राफ हो, बात पडने पर एक निमेष मे उसे देशदेशातर मे पहुँचा देती हो तुम भवसागर मे जहाज हो, बस अधम को पार करो।

तुम इद्र हो श्वसुर कुल के दोष देखने के लिए तुम्हारे सहस्र नेत्र है स्वामी के शासन करने मे तुम बज्रपाणि हो। रहने का स्थान अमरावती है क्योंकि जहाँ तुम हो वहीं स्वर्ग है।

तुम चन्द्रमा हो तुम्हारा हास्य कौमुदी है उससे मन का अधकार दूर होता है तुम्हारा प्रेम अमृत है जिसकी प्रारब्ध मे होता है वह इसी शरीर से स्वर्ग सुख अनुभव करता है और लोक मे जो तुम व्यर्थ पराधीन कहलाती हो यही तुम्हारा कलक है।

तुम बरुण हो क्योंकि इच्छा करते ही अश्रु जल से पृथ्वी आर्द्र कर सकती हो तुम्हारे नेत्र जल की देखा देखी हम भी गल जाते है।

तुम सूर्य हो तुम्हारे ऊपर आलोक का आवरण है पर भीतर अंधकार का बास है, हमे तुम्हारे एक घड़ी भर भी आँखो के आगे

न रहने से दसो दिशा अधकारमय मालूम होता है पर जब माथे पर चढ जाती हौ तब तो हम लोग उत्ताप के मारे मर जाते हैं किम्बहुना देश छोडकर भाग जाने की इच्छा होती है।

तुम वायु हो क्योकि जगत की प्राण हो तुम्हे छोडकर कितनी देर जी सकते है ? एक घडी भर तुम्हे बिना देखे प्राण तडफडाने लगते है, जल मे डूब जाने की इच्छा होती है पर जब तुम प्रखर बहती हो किस के बाप की सामर्थ्य है कि तुम्हारे सामने खड़ा रहै।

तुम यम हो यदि रात्रि को बाहर से आने मे विलम्ब हो, तो तुम्हारी वक्तृता नरक है। वह यातना जिसे न सहनी पडै वही पुण्यवान है उसी की अनंत तपस्या है।

तुम अग्नि हो क्योकि दिन रात्रि हमारी हड्डी हड्डी जलाया करती हो।

तुम विष्णु हो तुम्हारी नथ तुम्हारा सुदर्शन चक्र है उसके भय से पुरुष असुर माथा मुड़ाकर तटस्थ हो जाते है एक मन से तुम्हारी सेवा करै तो सशरीर बैकुण्ठ को प्राप्त कर सकता है।

तुम ब्रह्मा हौ तुम्हारे मुख से जो कुछ बाहर निकलता है वही हम लोगो का वेद है और किसी वेद को हम नहीं मानते तुमको चार मुख है क्योकि तुम बहुत बोलती हौ सृष्टिकर्त्ता प्रत्यक्ष ही हौ पुरुष के मनहूस पर चढ़ती हौ चारो वेद तुम्हारे हाथ मे है इससे तुमको प्रणाम है।

तुम शिव हौ सारे घर का कल्याण तुम्हारे आधीन है। भुजंग वेनी धारिणी है (३) त्रिशूल तुम्हारे हाथ मे है क्रोध मे और कठ मे विष है तौ भी आशुतोष हौ।

इस दिव्य स्तोत्र पाठ से तुम हम पर प्रसन्न हो। समय पर भोजनादि दो। बालको की रक्षा करो। भृकुटी धनु के सन्धान से हमारा वध मत करो। और हमारे जीवन को अपने कोप से कटकमय मत बनाओ।

—:❀:—

वाइन्मगैलिसाइवाइन् मरु वरम्ऐक्वावाइटा ॥
दुधिया दुधुवा दुद्धी दारू मद दुलारिया ।
कलवार-प्रिया काली कलवरियानिवासिनी ।
होटलीलोटलीलोट नाशिनी चोटलीचला ।
धनमानादि सहर्त्री ग्रैण्डटोटल कारिणी ॥
पचापच परित्यक्ता पच पचप्रपचिता ।
इमानिश्रीमहामद्य नामानिवदनेसदा ।
तिष्ठन्तु सेविनासख्या क्रमात्साद्धं शतानिच ॥
यः पठेत्प्रातरुत्थाय नामसार्द्ध शतम्मुदा ।
धनमान परित्यज्य ज्ञातिपक्त्याच्युतोभवेत् ॥
निन्दितो बहुभिर्लोकैर्मुखश्वासपराङ्मुखै. ।
बलहीनोक्रियाहीनो मूत्रकृत्लुण्ठतेच्चितौ ॥
पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा यावल्लुठतिभूतले ।
उत्थाय च पुनः पीत्वा नरोमुक्तिमवाप्नुयात् ॥

इति श्री पञ्चमहातन्त्रे प्रपचपटले पञ्चमकारवर्णनेमदिरास्तवाराजे साद्ध शतनाम सपूर्णम् ।

—:※:—

अथ स्तवराज—

हे मदिरे तुम साक्षात् भगवती का स्वरूप हो, जगत तुमसे व्याप्त है, तुम्हारी स्तुति करने को कौन समर्थ है अतएव तुम्हें प्रणाम ही करना योग्य है । हे मद्य तुम्हें सौत्रामणि यज्ञ मे तो वेद ने प्रत्यक्ष आदर दिया है परतु तुम अपने सोमरूप प्रच्छन्न अमृत प्रवाह से सपूर्ण वैदिक यज्ञ वितान को प्लावित करती हो अतएव हे श्रुतिश्रुते तुम्हें प्रणाम है ।

हे वारुणि ! स्मृतिकारो ने भी तुम्हारी प्रवृत्ति नित्य मानी है, निवृत्ति केवल अपने पद्धतिपने के रक्षण के हेतु लिखी है अतएव हे स्मृतिस्मृते ! तुम्हें प्रणाम है ।

हे गौडि! पुराणों में तो तुम्हारी सुधासारिणि कथा चारों ओर अति वाहित है, निषेध के बहाने भी तुम्हारा विधि ही विधि है, इससे हे पुराण प्रतिपादिते! तुम्हें प्रणाम है।

हे सोम सन्तते! चंद्रमा में तुम्हारा निवास, समुद्र तुम्हारी उत्पत्ति का स्थान और सकल देव, मनुष्य, असुर तुम्हारे पति हैं, अतएव हे त्रिलोकगामिनि! तुम्हें प्रणाम है।

हे बोतल वासिनि! देवी ने तुम्हारे बल से शुंभादि को मारा। यादव लोग तुम्हें पी के कट मरे। बलदेव जी ने तुम्हारे प्रताप से सूत का सिर काटा, अतएव हे शक्ति! तुम्हें प्रणाम है।

हे सकल मादक सामग्री शिरो रत्ने! तंत्र केवल तुम्हारे प्रचार ही को बनाए हैं, और इनका कोई प्रयोजन नहीं था केवल तुम मय जगत् करने को इनका अवतार है, अतएव हे स्वतंत्रे! तुम्हें प्रणाम है।

हे ब्राडि! बौद्ध और जैन धर्म की तुम सारभूत हो। मुसल्मानी में मुफ्त के मिस हलाल हौ! क्रिस्तानों में भी साक्षात् प्रभु की रुधिर रूप हौ और ब्राह्मोधर्म की तुम एक मात्र आड़ हौ, अतएव हे सर्व धर्म मर्म स्वरूपे! तुम्हें प्रणाम है।

हे शाम्पिन! आगे के लोग सब तुम्हारे सेवक थे, यह श्लोकों के प्रमाण सहित बाबू राजेन्द्रलाल के लेकचर से सिद्ध है तो अब तुम्हारा कैसे त्याग हो सकता है, अतएव हे सिद्धे! तुम्हें प्रणाम है।

हे ओल्डटाम! तुम्हें भारतवर्षियों ने उत्पन्न किया, रूम, चीन इत्यादि देश के लोगों ने कुछ परिष्कृत किया, अब अँग्रेजों और फरासीसियों ने तुम्हें फिर से नए भूषण पहिराए, अतएव हे सर्वविलायत भूषिते! तुम्हें प्रणाम है।

हे कुलमर्यादासंहारकारिणि! तुमसे बढ़कर न किसी का बल है, न आग्रह, न मान, तुम्हारे हेतु तुम्हारे प्रेमी कुल, धन, नाम, मान, बल, मेल, रूप वरञ्च प्राण का भी परित्याग करते हैं, अतएव हे प्रणयैक पात्रे! तुम्हें प्रणाम है।

हे प्रेजुडिस-विध्वमिनी। तुम्हारे प्रताप से लोग अनेक प्रकार की शका परित्याग करके स्वच्छद विहार करते हैं, जिनके बाप-दादे हुक्का-भॉग-सुरती से भी परहेज करते थे वे अब सभ्यो की मजलिस मे तुम्हारा सेवन करके जाना ऐब नहीं समझते, अतएव हे बोलड्लेस जननि ! तुम्है प्रणाम है।

हे सर्वानद सार भूते ! तुम्हारे बिना किसी बात मे मजा ही नहीं मिलता, रामलीला तुम्हारे बिना निरी सुपनखा की नाक मालूम पड़ती है, नाच निरे फूटे कॉच और नाटक निरे उच्चाटक बेव-कूफी के फाटक दिखाई पड़ते है, अतएव हे मजे की मोटरी, तुम्हैं प्रणाम है।

हे मुख-कज्जलावलेपके ! होटल नाच जाति पॉति घाट बाट मेला तमाशा दरबार घोड़ दौड़ इत्यादि स्थान मे तुम्है लेकर जाने से लोग देखो कैसी स्तुति करते हैं। अतएव हे पूर्व पुरुष सचित विद्या धन राज सपर्कादि जन्य कठिन प्राप्य प्रतिष्ठा समूह सत्यानाशनि ! तुम्हैं बारबार प्रणाम करना योग्य है।

कङ्कर स्तोत्र

ककड़ देव को प्रणाम है। देव नहीं महादेव क्योकि काशी के ककड़ शिव शकर समान है।

हे ककड़ समूह ! आज कल आप नई सड़क से दुर्गा जी तक बरा-बर छाये हौ इससे काशी खण्ड "तिलेतिले" सच हो गया अतएव तुम्हैं प्रणाम है।

हे लीला कारिन् ! आप केशी शकट वृषभ खरादि के नाशक हौ इससे मानो पूर्वार्द्ध की कथा हौ अतएव व्यासो की जीविका हौ।

आप सिर समूह भञ्जन हौ क्योकि कीचड़ मे लोग आप पर मुँह के बल गिरते हैं।

आप पिष्ठ पशु की व्यवस्था हौ क्योकि लोग आप की कढ़ी बना कर आप को चूसते है।

आप पृथ्वी के अतरगर्भ से उत्पन्न हौ। ससार के गृह निर्माण मात्र के कारण भूत हौ। जल कर भी सफेद होते हौ। दुष्टो के तिलक हौ। ऐसे अनेक कारण है जिनसे आप नमस्कारणीय हौ।

हे प्रबल वेग अवरोधक! गरुड़ की गति भी आप रोक सकते हौ और की कौन कहै इससे आप को प्रणाम है।

हे सुदरी सिगार! आप बड़ी के बडे हौ क्योकि चूना पान की लाली का कारण है और पान रमणी गण मुख शोभा का हेतु है इससे आप को प्रणाम है।

हे चुगी नदन! ऐन सावन मे आप को हरियाली सूझी है क्योकि दुर्गा जी पर इसी महीने मे भीड़ विशेष होती है तो हे हठ मूर्ते! तुम को दडवत है।

हे प्रबुद्ध! आप शुद्ध हिदू हौ क्योकि शरह विरुद्ध हौ आब आया और आप न बर्खास्त हुए इससे आप को सलाम है।

हे स्वेच्छाचारिन! इधर उधर जहाँ आप ने चाहा अपने को फैलाया है। कहीं पटरी के पास हो कहीं बीच मे अड़े हौ अतएव हे स्वतत्र आप को नमस्कार है।

हे ऊभड़ खाभड शब्द सार्थ कर्त्ता! आप कोणमिति के नाशकारी हौ क्योकि आप-अनेक विचित्र कोण सम्बलित हौ अतएव हे ज्योतिषारि आप को नमस्कार है।

हे शस्त्र समष्टि! आप गोली गोला के चचा, छर्रों के परदादा, तीर के फल तलवार की धार और गदा के गोला हौ इससे आप को प्रणाम है।

आहा! जब पानी बरसता है तब सड़क रूपी नदी में आप द्वीप से दर्शन देते हौ इससे आप के नमस्कार मे सब भूमि को नमस्कार हो जाता है।

आप अनेको के वृद्धतर प्रपितामह हो क्योकि ब्रह्मा का नाम पितामह है उनका पिता पकज है उसका पिता पंक है और आप उसके भी जनक हौ इससे आप पूजनीयो मे एल एल डी हौ।

हे जोगा जिवलाल रामलालादि मिश्री समूह जीविका दायक! आप कामिनी-भजक धुरीश विनाशक बारनिस चूर्णक हौ। केवल गाड़ी

ही नहीं घोडे की नाल सुम बैल के खुर और कटक चूर्ण को भी आप चूर्ण करनेवाले हौ इससे आप को नमस्कार है।

आप में सब जातियो और आश्रमो का निवास है। आप बाणप्रस्थ हौ क्योंकि जगलो मे लुडकते हौ। ब्रह्मचारी हौ क्योकि बटु हौ। गृहस्थ हौ चूना रूप से, सन्यासी हौ क्योकि घुट्टमघुट्ट हौ। ब्राह्मण हौ क्योकि प्रथम वर्ण हो करभी गली गली मारे मारे फिरते हौ। क्षत्री हौ क्योकि खत्रियो की एक जाति हौ। वैश्य हौ क्योकि कांट बांट दोनो तुम मे है। शूद्र हौ क्याकि चरणसेवा करते हौ। कायस्थ हौ क्योंकि एक तो ककार का मेल दूसरे कचहरी पथावरोधक तीसरे क्षत्रियत्व हम आप का सिद्ध कर ही चुके हैं। इससे हे सववर्ण स्वरूप तुमको नमस्कार है।

आप ब्रह्मा, विष्णु, सूर्य, अग्नि, जम, काल, दक्ष और वायु के कर्त्ता हौ, मन्मथ की ध्वजा हौ, राजा पद दायक हौ, तन मन धन के कारण हौ, प्रकाश के मूल शब्द की जड और जल के जनक हौ वरञ्च भोजन के भी स्वादु कारण हौ, क्योंकि आदि व्यजन के भी बाबा जान हो इसी से हे कंकड़ तुमको प्रणाम है।

आप अँगरेजी राज्य मे श्रीमती महराणी विक्टोरिया और पार्लामेण्ट महासभा के आछत, प्रबल प्रताप श्रीयुत गवर्नर जनरल और लेफ्टेण्ट गवर्नर के वर्तमान होते, साहिब कमिश्नर साहिब मजिस्ट्रेट और साहिब सुपरिनटेडेट के इसी नगर मे रहते और साढ़े तीन तीन हाथ के पुलिस इंसपेक्टरो और कासिटेबुलो के जीते भी गणेश चतुर्थी की रात को स्वच्छंद रूप से नगर मे भडाभड़ लोगो के सिर पाव पड़कर रुधिर धारा से नियम और शाति का अस्तित्व बहा देते हौ अतएव हे अँगरेजी राज्य मे नवाबी स्थापक, तुम को नमस्कार है।

यह लबा चोड़ा स्तोत्र पढ़कर हम बिनती करते हैं कि अब आप सदे सिकदरी बाना छोड़ो या हटो या पिटो।

अँगरेज स्तोत्र

अस्य श्री अँगरेजस्तोत्र माला मत्रस्य श्री भगवान मिथ्या प्रशसक ऋषिः जगतीतल छन्द कलियुग देवता सर्व वर्ण शक्तयः शुश्रुषा बीज वाकस्तम्भ कीलकम् अँगरेज प्रसन्नार्थे पठे विनियोगः।

अथ ऋष्यादि न्यास. मिथ्या प्रशसक ऋषयेनमः शिरसि जगतीतल छदसे नमः मुखे। कलियुगो देवतायै नमः हृदि। सर्व वर्ण शक्तयः भ्योनम' पादयो.। शुश्रुषा बीजायनमः गुह्ये। वाकूस्तम्भ कीलकाय नमः सर्वाके। अथ मत्र। ओ नमः श्री अँगरेजेभ्य' मिथ्याप्रशसक नाथेभ्यः सर्वशक्तिमद्भ्यः स्वाहा। अथ करन्यासः। ओ अगुष्टाभ्यानमः नमस्तर्जनीभ्यानम.। श्री अँगरेजेभ्य मध्यमाभ्यानमः। मिथ्याप्रशसक नाथेभ्यः। सर्वशक्तिमद्भ्यः कनिष्टकाभ्यानम.। स्वाहा करतल कर पृष्टाभ्यानमः। अथ ध्यानम्। य ब्रह्मा वरुणेन्द्ररुद्रमरुतस्तुन्वन्ति दिव्यैः स्तवैर्वेदैः सांगपदक्रमोपनिषदैर्गायन्ति य सामगाः। ध्यानावस्थित तद्गतेनमनसापश्यन्ति य योगिनो यस्यांत न विदुः सुरा सुरगणा देवायतस्मै नम। इति ध्यानम्।

हे अगरेज ! हम तुमको प्रणाम करते हैं।

तुम नानागुण विभूषित, सुदरकाति विशिष्ट, बहुत सपद युक्त हो, अतएव हे अँगरेज ! हम तुमको प्रणाम करते हैं।

तुमहर्ता—शत्रुदल के, तुम कर्त्ता—आईनादि के, तुम विधाता—नौकरियो के अतएव हे, अँगरेज हम तुमको प्रणाम करते है।

तुम समर मे दिव्यास्त्रधारी—शिकार मे बल्लमधारी, विचारागार मे अर्ध इचि परिमित व्यासविशिष्ट वेत्रधारी, अहार के समय कांटा चिमचाधारी, अतएव हे अगरेज हम तुमको प्रणाम करते है।

तुम एक रूप से पुरी के ईश होकर राज्य करते हो, एक रूप से पण्यवीथिका मे व्यापार करते हो, और एक रूप से खेत मे हल चलाते हो, अतएव हे त्रिमूर्ते! हम तुमको प्रणाम करते है।

आप के सत्वगुण आप के ग्रथो से प्रगट, आपके रजोगुण आपके युद्धो से प्रकाशित, एव आपके तमोगुण भवत्प्रणीत भारतवर्षीय सवाद पत्रादिको से विकसित, अतएव हे त्रिगुणात्मक ! हम तुमको प्रणाम करते हैं।

तुम हो अतएव सत् हो, तुम्हारे सत्रु युद्ध में चित्, और उम्मेदवारों को आनन्द, अतएव हे सच्चिदानंद! हम तुमको प्रणाम करते है।

तुम ब्रह्मा हो क्योंकि प्रजापति हो, तुम विष्णु हो, क्योंकि लक्ष्मी के कृपापात्र हो, तुम महेश्वर हो क्योंकि तुम्हारी स्त्री गौरी, अतएव हे त्रिमूर्ते! हम तुमको प्रणाम करते है।

तुम इंद्र हो—तुम्हारी सेना वज्र है, तुम चंद्र हो—इनकमटैक्स तुम्हारा कलंक है, तुम वायु हो—रेल तुम्हारी गति है, तुम वरुण हो—जल मे तुम्हारा राज्य है, अतएव हे अंगरेज! हम तुमको प्रणाम करते है।

तुम दिवाकर हो—तुम्हारे प्रकाश से हमारा अज्ञानांधकार दूर होता है, तुम अग्नि हो—क्योंकि सब खाते हो, तुम यम हो—विशेष करके अमला वर्ग के, अतएव हे अँगरेज! हम तुमको प्रणाम करते हैं।

तम वेद हो—और रिग्यजुस्साम को नहीं मानते, तुम स्मृति हो—मन्वादि भूल गए, तुम दर्शन हो—क्योंकि न्याय मीमांसा तुम्हारे हाथ है, अतएव हे अँगरेज! हम तुमको प्रणाम करते हैं।

हे श्वेतकांत—तुम्हारा अमल धवल द्विरद रद शुभ्र महाश्मश्रु शोभित मुख मंडल देख करके हमे वासना हुई कि हम तुम्हारी स्तुति करें अतएव हे अँगरेज हम तुमको प्रणाम करते हैं।

तुम्हारी हरित कपिश पिङ्गल लोहित कृष्ण शुभ्रादि नानावर्ण शोभित अतिशयरंजित भल्लुकमेदमार्जितकुंतलावलि देखकरके हमको वासना हुई कि हम तुम्हारा स्तव करें, अतएव हे अंगरेज! हम तुमको प्रणाम करते हैं।

हे वरद! हमको वर दो, हम सिर पर शमला बाँध के तुम्हारे पीछे पीछे दौडेगे, तुम हमको चाकरी दो हम तुम को प्रणाम करते है।

हे शुभकर! हमारा शुभ करो, हम तुम्हारा खुशामद करैंगे, और तुम्हारे जी की बात कहेंगे, हमको बड़ा बनाओ हम तुमको प्रणाम करते है।

हे मानद ! हमको टाइटल दो, खिताब दो, खिलअत दो, हमको अपना प्रसाद दो हम तुमको प्रणाम करते है ।

हे भक्तवत्सल ! हम तुम्हारा पात्रावशेष भोजन करने की इच्छा करते है तुम्हारे कर स्पर्श से लोक मण्डल मे महामानास्पद होने की इच्छा करते है, तुम्हारे स्वहस्तलिखित दो एक पत्र बक्स मे रखने की स्पर्द्धा करते है, हे अग्रेज ! तुम हम पर प्रसन्न हो हम तुम को नमस्कार करते हैं ।

हे अतरयामिन् ! हम जो कुछ करते है केवल तुम को धोखा देने को, तुम दाता कहो इस हेतु हम दान करते है, तुम परोपकारी कहो इस हेतु हम परोपकार करते है तुम विद्यमान कहो इस हेतु हम विद्या पढते हैं, अतएव हे अग्रेज ! तुम हम पर प्रसन्न हो हम तुमको नमस्कार करते हैं।

हम तुम्हारी इच्छानुसार डिस्पेसरी करैगे, तुम्हारे प्रीत्यर्थ स्कूल करैगे तुम्हारी आज्ञा प्रमाण चदा देगे, तुम हम पर प्रसन्न हो, हम तुम को नमस्कार करते हैं ।

हे सौम्य ! हम वही करैगे जो तुम को अभिमत है, हम बूट पतलून पहिरैगे, नाक पर चश्मा देगे, काटा और चिमिटे से टिबिल पर खायेगे, तुम हम पर प्रसन्न हो ,हम तुम को प्रणाम करते हैं ।

हे मिष्टभाषिण ! हम मातृभाषा त्याग करके तुम्हारी भाषा बोलैगे, पैतृक धर्म छोड़ के ब्राह्म धर्मावलब करैगे, बाबू नाम छोड कर मिष्टर नाम लिखवावेगे, तुम हम पर प्रसन्न हो हम तुम को प्रणाम करते हैं ।

हे सुभोजक ! हम चावल छोड के पावरोटी खायगे, निषिद्धमास बिना हमारा भोजन ही नहीं बनता, कुक्कर हमारा जलपान है, अतएव हे अग्रेज ! तुम हम को चरण मे रक्खा हम तुम को प्रणाम करते है।

हम विधवा विवाह करैगे, कुलीनो की ज्ञाति मारैगे, जाति भेद उठा देगे—क्योकि ऐसा करने से तुम हमारी सुख्याति करोगे, अतएव हे अग्रेज ! तुम हम पर प्रसन्न हो हम तुम को नमस्कार करते हैं ।

हे सर्वद ! हम को धन दो, मान दो, यश दो, हर्मदा उसको नहीं सिद्ध करो, हम को चाकरी दो, राजा करो, रायबहादुर करो जब लोगो का मिबर करो हम तुम को प्रणाम करते हैं। पर जो

यदि यह न हो तो हम को डिनर होम मे निमत्रण करो, बड़ो, वर कमेटियो का मिम्बर करो, सीनट का मिम्बर करो, जसटिम वह आनरेरी मजिस्ट्रेट करो, हम तुम को प्रणाम करते हैं।

हमारी स्पीच सुनो, हमारा एसे पढो हम को वाह वाही दो, इतना ही होने से हम हिंदू समाज का अनेक निन्दा पर भी ध्यान न करेंगे, अतएव हम तुम्हीं को नमस्कार करते हैं।

हे भगवन्—हम अकिञ्चन हैं और तुम्हारे द्वार पर खड़े रहेंगे, तुम हमको अपने चित्त मे रक्खो हम तुम को डाली भेजेंगे, तुम अपने मन मे थोडा सा स्थान मेरी ओर मे भी दो, हे अंग्रेज ! हम तुमको कोटि कोटि साष्टाग प्रणाम करते हैं।

तुम दशावतार धारी हो, तुम मत्स हो क्योकि समुद्रचारी हो और पुस्तक छाप छाप के वेद का उद्धार करते हो, तुम कच्छ हो—क्योकि मदिरा हलाहल, वारागना, धन्वन्तर और लक्ष्मी इत्यादि रत्न तुमने निकाले हैं पर वहा भी विष्णुत्व नहीं त्याग किया है अर्थात् लक्ष्मी उन रत्नो मे से तुमने आप लिया है, तुम श्वेत वाराह हो क्योकि गौर हो और पृथ्वी के पति हो, अतएव हे अवतारिन् ! हम तुम को नमस्कार करते हैं।

तुम नृसिंह हो क्योकि मनुष्य और सिंह दोनो पन तुम मे है टैक्स तुम्हारा क्रोध है और परम विचित्र हो, तुम वामन हो क्योकि तुम बामन कर्म्म मे चतुर हो, तुम परशुराम हो क्योकि पृथ्वी निक्षत्री करदी है, अतएव हे लीलाकारिन् ! हम तुमको नमस्कार करते हैं।

तुम राम हो क्योकि अनेक सेतु बॉधे है, तुम बलराम हो क्योकि मद्यप्रिय और हलधारी हो, तुम बुद्ध हो क्योकि वेद के विरुद्ध हो, और तुम कल्कि हो क्योकि शत्रु सहारकारी हो, अतएव हे दश विधि रूप धारिन् ! हम तुमको नमस्कार करते हैं।

तुम मूर्तिमान् हो ! राज्यप्रबंध तुम्हारा अग है, न्याय तुम्हारा शिर है, दूरदर्शिता तुम्हारा नेत्र है और कानून तुम्हारे केश हैं अतएव हे अग्रेज ! हम तुमको नमस्कार करते है।

कौसिल तुम्हारा मुख है, मान तुम्हारी नाक है, देश पक्षपात तुम्हारी मोछ है और टैक्स तुम्हारे कराल दंष्ट्रा हैं अतएव हे अगरेज ! हम तुमको प्रणाम करते है हमारी रक्षा करो।

चुंगी और पुलिस तुम्हारी दोनो भुजा है, अमले तुम्हारे नख है, अन्धेर तुम्हारा पृष्ठ है और आमदनी तुम्हारा हृदय है अतएव हे अंग्रेज ! हम तुमको प्रणाम करते है।

खजाना तुम्हारा पेट है, लालच तुम्हारी क्षुधा है, सेना तुम्हारा चरण है, खिताब तुम्हारा प्रसाद है, अतएव हे विराटरूप अग्रेज ! हम तुमको प्रणाम करते है।

दीक्षा दान तपस्तीर्थ ज्ञानयागादिकाः क्रिया।
अग्रेज स्तवपाठस्य कला नार्हति षोडशीम् ॥ १ ॥
विद्यार्थी लभते विद्या धनार्थी लभते धनम्।
स्टारार्थी लभते स्टारम् मोक्षार्थी लभते गति ॥ २ ॥
एक काल द्विकाल च त्रिकाल नित्यमुत्पठेत्।
भव पाश विनिर्मुक्तः अग्रेज लोक सगच्छति ॥ ३ ॥

—.❀.—

ईश्वर बड़ा बिलक्षण है

भला इस ससार बनाने का क्या काम था ? व्यर्थ इतने उल्लू एक सग पिजड़े मे बन्द कर दिए किसी को दुःखी बनाया किसी को सुखी, किसी को राजा बनाया किसी को फकीर, इसी से मै कहता हूँ कि ईश्वर बडा बिलक्षण है।

सब उसमे लय रहता, किसी को कुछ दुःख सुख का अनुभव न होता, वह केवल परम आनदमय अपने मे रहता इसी से—

कोई इसको हॉ कहता है कोई नही, कोई मिला कोई अलग, कोई एक कोई अनेक तो उसको अपने माहात्म्य की दुर्दशा क्यो करानी थी इसी से—

सत्व सामर्थ्य मान उसका सुन कर भी लोग सर्वदा उसको नहीं मानते पर हॉ जब कुछ दु:ख पडता है तब स्मरण करते हैं। जब लोगो का कुछ बनता है तो उसको धन्यवाद तो थोडे लाग देते हैं पर जो कुछ काम बिगडता है तो गाली सभी देते हैं, पानी न बरसै तो, घर का कोई मर जाय तो, रोग फैले तो, हार जॉय तो सब प्रकार से वह गाली सुनता है इसी से—

अनेक प्रकार के जीव, विचित्र स्वभाव, अलग अलग धर्म और रुचि, विचित्र-विचित्र रग काम क्रोध, मद ईर्षा, अभिमान दम्भ, पैशुन्य, अानृत्य इत्यादि अनेक प्रकार के स्वभाव बनाकर लवा चौडा गोरख धधा का जाल फैला कर इस घनचक्कर मे सब को घुमा दिया है इसी से—

एक बिचारा सुख से अपना काल क्षेप करता है कुछ उसके काम मे विघ्न डालकर व्यर्थ बिना बात बैठे बिठाये उसको रुला दिया, कोई दु:ख मे है उसको एक सग सुख दे दिया इसी से—

एक को घटाया एक को बढ़ाया, एक को बनाया एक को बिगाडा, राई को पर्वत् किया पर्व्वत को राई, राजा को रक किया रक को राजा, भरी ढलकाया खाली भरा इसी से—

उदार और पडित दरिद्र मूर्ख धनवान, और सुदर रसिक को कुरूपा कूढ स्त्री, कुरसिक को सुदर वा रसिक स्त्री, सुस्वामी को कुसेवक कुसेवक को कुस्वामी इत्यादि ससार मे कई बाते बे जोड है इसी से—

प्रत्यक्षलोग देखते है कि हमारे बाप दादा इत्यादि मर गए और नित्य लोग मरते जाते हैं तब भी जो लोग जीते है जानते है कि ससार का पट्टा मैने लिखवा लिया है पहिले तो मै मरूहींगा नहीं और मरा भी तो सब मेरे साथ जायगा इसी से—

सच है मनुष्य यह कैसे सोचै, जो हम बैठे है, खाते पीते है, चैन करते हैं कभी साचते नहीं कि हमारी दशातर भी होगी वही हम कैसे मरैंगे कदापि नहीं आता इसी से—

मजा है तमाशा है खेल है धूम है, दिल्लगी है मसखरापन है, लुच्चापन है, हॅसी है, मूर्खता है, खिलौने हैं, बालक है, पट्ठे है, नासमझ

है, जड हैं, जीव हैं मोहित है, उल्लू के पट्ठे हैं, सब परतु उसके समझ मे और उसके लोगो के समझ मे भेद है इसी से—

उसके नाते परस्पर सब केवल सगे भाई बहन हैं पर लोग जाति कुजाति वर्ण आश्रम नीच ऊँच राजा प्रजा स्त्री पुत्र इत्यादि अनेक भेद समझते हैं इसी से—

यह उसी को विलक्षणपना है कि हिंदुओ को सब के पहिले उसने लक्ष्मी और सरस्वती दी और चिर काल तक उनको इस देश मे स्थित किया परतु अब वह हिदू दास धर्म शिक्षित हो रहे हैं इसी से—

यह उसी का विलक्षणपन है जिस भूमि मे उदयन, शूद्रक, विक्रम, भोज ऐसे राजा कालीदास, बाण से पडित दे उसी भूमि में हमारे तुम्हारे से लोग हैं, यह उसी का विलक्षणपन है कि मुसलमानो ने हिदुस्तान के बहुत दिन तक भोगा अब अग्रेज भोगते हैं, मुसलमानो के अपने पक्षपात हैं अग्रेजो को अपनी का, हिदू दोनो की समझ में मूर्ख है इसी से—

यह उसी का विलक्षणपन है कि हिदू निर्लज्ज हो गए हैं, ऐसे समय मे जब कि सब आगे बढा चाहते है ये चूकते हैं और पीछे ही रहे जाते हैं, विशेष करके सब ससार का आलस्य पश्चिमोत्तर देश वासियो मे घुसा है और अपने को भूल रहे हैं क्षुद्रपना नहीं छूटता इसी से—

यह उसी का विलक्षणपना है कि हम लोग समाचार पत्र लिखते हैं और यह अभिमान करते है कि हमारे इन लेखो से हमारे भाइयो का कुछ उपकार हो, भला नक्कारखाने मे तूती की आवाज कौन सुनता है, सब अपने रग मे उसकी माया से मस्त है उनको क्यो नहीं छोड़ते हैं क्यो नहीं विराग करते, ससार मिटै हमको क्या हम कौन जो कहै, पर यह नहीं समझते, हम अपने ही अभिमान मे चूर है यह भी सब उसी की माया है इसी से हम कहते है ईश्वर बड़ा विलक्षण है।

—:o:—

मुशायरा[1]

चिड़ीमार का टोला। भाँत भाँत का जानवर बोला ॥

लखनऊ दिल्ली बनारस पूरब और दखिन के कई मुफ्तखोरे शायर एक जगह जमा हुए और लगे रंग बिरंगी बोलियाँ बोलने। मैंने भी वहीं मैक्राफून[2] की कल लगा दी। जो कुछ उसमें आवाज़ बन्द हो गई आप लोग भी सुन लीजिए।

सबके पहिले लाला साहब उठे और बन्दगी करके यों चोंच खोली।

"गल्ला कटै लगा है कि भैया जो है सो है।
बनियन काँ गम भवा है कि भैया जो है सो है ॥
लाला की भैंसी शीर निचोवत माँ शाशी जब।
दूध ओहमाँ मिल गवा है कि भैया जो है सो है ॥
इक तो कहत[3] माँ मर मिटी खिलकत[4] जो हैगा सब।
तेहपर टिकस बँधा है कि भैया जो है सो है ॥
अँगरेज़ से अफगान से वह जंग होत है।
अखबार माँ लिखा है कि भैया जो है सो है ॥
कुप्पा भए है फूल के बनियाँ व फर्त्ते माल[5]।
पेट उनका दमकला है कि भैया जो है सो है ॥
अखबार नाहीं पंच से बढ़ कर भवा कोऊ।
सिक्का य जम गवा है कि भैया जो है सो है ॥"

---

१ कवि सम्मेलन २ एक यंत्र ३ अकाल ४ प्रजा ५ धन कमाकर।

इसके बाद लाला साहब ने रे रे कर के एक होली भी गाही दी ॥

कैसी होगी खिलाई । आग तन मन मे लगाई ॥
पानी की बूँदी से पिंड प्रगट कियो सुंदर रूप बनाई ।
पेट अधम के कारन मोहन घर घर नाच नचाई ॥
तबौ नहीं हबस बुझाई ।
भूँजी भाँग नहीं घर भीतर का पहिनी का खाई ।
टिकस पिया मोरी लाज का रखल्यो ऐसे बनो न कसाई ॥
तुम्है केसर की दोहाई ।
कर जोरत हौं बिनती करत हौं छाडौ टिकस कन्हाई ।
आग लगौ ऐसो फाग के ऊपर भूखन जान गंवाई ।
तुम्है कुछ लाज न आई ।'

लाला साहब के गाने के बाद ही ललाइन साहब से भी न रहा गया । कुछ जो मेम साहब की तालीम ने तुन्दी किया सो चट से कूद परदे के बाहर बेतकल्लुफ[1] तशरीफ लाई और मटक मटक कर कहने लगीं ।

"लिखाय नाहीं देत्यो पढ़ाय नाहीं देत्यो ।
सैयाँ फिरंगिन बनाय नाहीं देत्यो ॥
लहगा दुपट्टा नीक न लागे ।
मेमन का गौन मँगाय नाहीं देत्यो ॥
वै गोरिन हम रंग सँवलिया ।
रंग मे रंग मिलाय नाहीं देत्यो ॥
हम ना सोइबे कोठा अटरिया ।
नदिया प बँगला छवाय नाहीं देत्यो ॥
सरसो का उबटन हम ना लगैबै ।
साबुन से देहियाँ मलाय नाहीं देत्यो ॥
डोली मियाना प कब लग डोलो ।
घोडवा प काठी कसाय नाहीं देत्यो ॥

१. निस्सकोच

कब लग बैठीं काढ़े घुँघटवा ।
मेला तमासा जाये नहीं देत्यो ॥
लीक पुरानी कब लग पीटो ।
नई रीत रसम चलाय नाहीं देत्यो ॥
गोबर से ना लीपब पोतब ।
चूना से भितिया पोताय नाहीं देत्यो ॥
खुसलिया छदम्मी ननकू इन कॉ ।
विलायत का काहे पठाय नाही देत्यो ॥
धन दौलत के कारन बलमा ।
समुंदर मे बजरा छोड़ाय नाही देत्यो ॥
बहुत दीनों लग खटिया तोडिन ।
हिंदुन का काहें जगाय नाहीं देत्यो ॥
दरस बिना जिय तरसत हमरा ।
कैसर का काहें देखाय नाहीं देत्यो ॥
हिजपिया तोरे पय्यॉ पड़त है ।
पचा मॉ एहकॉ छपाय नाही देत्यौ ॥

ललाइन साहब की आजादी देखते ही साहो जी साहब मुतहैय्यर[1] हो घबड़ा कर यो रुके ।

का भवा आवा है ए राम जमाना कैसा ।
कैसी मेहरारू है ई हाय जनाना कैसा ॥
लोग क्रिस्तान भए जाथै बनथै साहेब ।
कैसा अब पुन्न धरम गंगा नहाना कैसा ॥
हाल रोजगार गवा धूल मे बेवहार मिला ।
का सराफी रही हुंडी का चलाना कैसा ॥
धोय के लाज सरम पी गए सब लरकन लोग ।
काहे के बाप मतारी रहे नाना कैसा ॥
आँखी के आगे लगे पीये सभै मिल के शराब ॥
हाय अब जात कहाँ पच मे जाना कैसा ।

---

१ चकित

पगडी जामा गया अब कोट औ पतलून रही ।
जब चुरुट है तो इलइची का है खाना कैसा ॥
सब के उप्पर लगा टिक्कस कि उड़ा होस मेरा ।
रोवै के चहिए हँसी ठीठी ठठाना कैसा ॥

साहो जी की बनारसी सुनते ही लखनऊ के एक शोहदे साहब जो चार अगुल की टोपी दिए एक कोने मे अकड़े हुए डँटे थे बहुत ही परीशान हुए क्योकि उनके समझ में यह कुछ भी न आया तो चिटख कर बोले "बनिए क्या जो है सो नाहक की बक बक लगाई है एक कनगुज्झा[1] इँधे[2] और एक नागझिन्नी[3] ऊँधे[4] और चपतगाह[5] प एक गुद्की जमाऊँगा जो है सो कि बताना निकल पडेगा" और कहने लगे ।

क्यो बे सुनता नहीं सोहदे की बी तकरीर को आँ ।
कहीं नकभिन्नी की आऊ न तेरे पीर को आँ ॥

लोगो ने बढावा दिया कि हाँ साहब यह भी तो बडे शायर हैं कुछ फर्माएँ । इतना इशारा पाना था कि लगे शोहदे जी गाने ।

सान सौकत तेरे आसिक की मेरी जान जे है ।
होगे सुलफा[6] इसी दरवाजे प अरमान जे है ॥
कहीं सुहदे भी पिचकते हैं भला झाँपो के[7] ।
आ तो डँट जा अभी खम ठोक के मैदान जे है ॥
गैर के कहने पै हजरत को न मुतलक हो खेयाल ।
बच्चो एक एक को बहकाता है सैतान जे है ॥
आके हम लोगो से मांगै न टिकस मोटे मल ।
रख दूँ धुन के उन्हें बनियो प फकत सान जे है ॥
आज मामूर है आलम के नमूदारो[8] मे ।
लुत्फ अल्लाह का सर पर तेरे खाकान[9] जे है ॥

---

१. चपेटा, थप्पड, २. इस ओर ३. नाक भन्ना देनेवाला थप्पड़ ४. उस ओर ५. चपत मारने का स्थान ६. जला देना ७. एक गाली ८ प्रकट लोगों ९. राजा ।

शुहदे की बातचीत सुन कर हमारे बनारस के भैया लोगों से कब रहा जाता है यह भी अपनी चर्री बूकने ही लगे।

चाई चकार चोर ओर नटखट तोर बदे।
हाय गैल सारे रामवै चोपट तोरे बदे॥
घर से नगर से जात कुटुम सगा भाई से।
केसे भयल बिगार न खटपट तोरे बदे॥
रोअल करीला पाटी प माथा पटक पटक।
लेईला जब कि रात के करवट तोरे बदे॥
राजा नवाब बाबू के ताडीला ए रजा।
होय जाई राज रामधै कोरट तोरे बदे॥
टंके सारन के बहाली तू घरे चल आवः।
आज न आय सक. कौनो बखत कल आवः॥
आज खरचा भी दुकनदार से पौले बाड़ी।
चल के बैठक मे बचा चाभ के मगदल आवः॥
नरकू चिरकिट औ पनारू से कहः घुरपतरी।
नल के बगले मे तो हौए सभे बैठल आवः॥
उहै चल जाला सरवा देखः बतौले भ्फॉई।
देख के कैसनै हमन के हौ खडकल आवः॥
चाभ के पान महावीरो क टीका देके।
मल के देही मे अतर सॉझी बेरा चल आवः॥
सारे चल आवै लै सब खोज मे हमरे तोहरे।
मोड वा गल्ली के आगे तनी भ्फड़कल आव.॥
कौनो सरवा नहीं समभ्फाय के कहतै राजा।
तेग[1] से कौने बदे बाड़ः तुं खड़कल आवः॥
भौं चूम लेइला केहू सुन्दर जे पाईला।
हम ऊ हई कि होठे प तरुवार खाईला॥
इन कै के अपने रोज तो रहिला चबाइला।
राजा के अपने खुरमा औ बुंदिया चभाइला॥

१ तेग अली, जिसकी यह रचना है।

सौ सौ तरे कै मूडे प जोखिम उठाईला।
पै राजा तोहें एक बेरी देख जाईला॥
पुतरी मतिन रखब तोहें पलकन के आड़ मे।
तोहरे बदे हम आँखी मे बैठक बनाईला॥
कहली कि काहे आँखी मे सुरमा लगावलः।
हँस के कहै लै छूरी के पत्थर चटाईला॥
हम भारे वाला बाडी हजारन मे रामधै।
पै राजा तोसे बेत मतिन थरथराईला॥
राजा बाबू तोरे चेहरा प लुभायल बाडै।
सैकडन सरवा तोरे आँखी क घायल बाडै॥
रात भर कँहरीला खटिया प परल हम सगी।
केहू राजा से कहै काहे कोहायल बाडै॥
बाघ की नाईं महल्ला मे त डौडत होइहै।
सब केहू कहला टहलू त परायल बाडै॥
आँख की पुतरी मतिन सामने नाचत हाइहैं।
नींद जब आवैलै तब देखीला आयल बाड़ै॥
पाँचो पकवान नहीं नीक लागत बा रमधै।
तिल के चेहरा क तोरे 'तेग' भुखायल बाड़ै॥

बनारस के गुडो की बोली सुनते ही बैसवारे के तिलंगा भाई को भी फुरफुरी आई और ढोलक बजाकर गाने ही लगे कि—

फुरै कहत हौ महिते जो जइहौ रिसाय के।
भरुका म बिख भरा है मैं मर जैहौं खाय के॥
सारन क आज सार म भँवरी बताय के।
लैहौ करेजा दूध बकेना पियाय के॥
खरिहान माँ जे रात के रइहौ तुम आय के।
दैहौ उकाँव गोहुँ क तुम कँ उठाय के॥
सूरज के कुछ न लीन न तुम हन गुनहगार।
काहे क हम कँ मारथौ घामे डहाय के॥
बौरान रोज फिर्त हौं बारी बगौचा मे।

टोला म हमरे आएव न एक दिन भुलाय के ॥
घरहू प आय तेग क दरसन नहीं हौ घात।
औरन ते तो मिलत हौ रजा धाय धाय के।

इन सब की रे रे के पीछे एक नये ढग के शायर कबरिस्तान के फकीर मरघट के बाम्हन एक नई अनोखी चाल की शायरी ले उठे। यह ढगही सबसे निराला। रेखती फेखती सबसे अलग मरसिये का भी चचा। माशूक ही को कोसना।

फिर उन्हे हैजा हुआ फिर सब बदन नीला हुआ।
फिर न आने का मेरे घर मे नया हीला हुआ ॥
कहरे हक[1] नाज़िल[2] हुआ पत्थर पड़े वह मर गए।
अन्न का टुकड़ा उन्हे तबरम् अबाबीला हुआ ॥
फिर उन्हें आया पसीना सब बदन ठढा हुआ।
मुफलिसी मे फिलमसल आँटा अजी गीला हुआ ॥
नाम सुनते ही टिकस का आह करके मर गए।
जानली कानून ने बस मौत का हीला हुआ ॥
आप शेखी पर चढ़े थे मिसले अफग़ाने बद।
खूब शुद गदको के मारे सब बदन ढीला हुआ ॥
कैसरे हिन्दोस्ताँ अब जान इनकी बख्शा दो।
देख लो रंजिश से सब इनका बदन पीला हुआ ॥

अफसोस कि अ० फालेन[3] इस मौके पर नहीं थे नहीं तो कई नए मोहावरे उनके हाथ लगते।

—:❀:—

१—खुदा का कोप २—उतरा ३—एस डबल्यू फैलों

पाँचवें (चूसा) पैग़म्बर

लोगो दौड़ौ, मै पॉचवॉ पैगम्बर हूँ, दाऊद, ईसा, मूसा, मुहम्मद ये चार हो चुके । मेरा नाम चूसा पैगम्बर है, मै विधवा के गर्भ से जनमा हूँ और ईश्वर अर्थात् खुदा की ओर से तुम्हारे पास आया हूँ इससे मुझ पर ईमान लाओ नहीं तो ईश्वर के कोप में पड़ागे ।

मुझ को पृथ्वी पर आए बहुत दिन हुए पर अब तक भगवान का हुक्म नहीं था इससे मै कुछ नहीं बोला, बोलना क्या बल्कि जानवर बना घात लगाए फिरता था और मेरा नाम लोगो ने मूश, बद्र, लका की सैना और मुल्च्छ रक्खा था पर अब मै उन्हीं लोगो का गुरु हूँ क्योंकि ईश्वर की आज्ञा ऐसी है इससे लोगो ईमान लाओ ।

जैसे मुहम्मदादि के अनेक नाम थे वैसे ही मेरे भी तीन नाम हैं, मुख्य चूसा पैगम्बर, दूसरा डबल[1] और तीसरा सुफैद और पूरा नाम मेरा श्रीमान् आनरेबल हज़रत डबल सफैद चूसा अलैहुस्सलाम[2] पैगम्बर आखिर कुन जमॉ[3] है ।

मुझ को कोहचूर पर खुदा ने जल्वा दिखलाया और हुकुम दिया कि मैंने पैगम्बर किया तुझ को तू लोगों को ईमान मे ला, दाऊद ने बेला बजा के मुझे पाया तू हारमोनियम बजावैगा, मूसा ने मेरी खुदाई रौशनी से कोहतूर जलाया तू आप अपनी रौशनी से ज़माने

---

१. दूना २. प्रणाम है जिसको ३. ससार का अत करनेवाला ४. जन साधारण के स्थानों

को जला कर काला करैगा, ईसा मर के जिया था तू मरा हुआ जीता रहैगा, मुहम्मद ने चॉद को बीच मे से काटा तू चॉद का कलंक मिटा अपना टीका बनावैगा।

(खुदा कहता है) देख मूर्त्तिपूजन अर्थात् बुतपरस्ती को ज़माने से उठा देना क्योकि मैने हाफ् सिविलाइज़्ड किया दुनिया को पूरा तुझको, जो शराब सब पैगम्बरो पर हराम थी मैंने हलाल किया तेरे पर, बल्कि तेरे मजहब की निशानी है जो तेरे आसमान पर आने के बाद रूए ज़मीन पर कायम रहैगी क्योंकि "यद्यपि तेरा राज्य सर्वदा न रहैगा पर यह मत यहाँ सर्वदा दृढ रहैगा"।

(खुदा कहता है) मैने हलाल किया तुझपर गऊ, सूअर, मेढक, कुत्ता वगैरह सब जानवर जो कि हराम हैं, मैने हलाल किया तुझपर, अपने मजहब के वास्ते झूठ बोलना और हुकुम दिया तुझ को औरतों की इज्जत करने और उन को अपने बराबर हिस्सा देने की बल्कि यारोके सग जाने की, और सिवाय पब्लिक प्लेसो के कोहेतूर पर जहाँ मैने जलवा दिखाया तुझ को तीन आरामगाह[1] फरिश्तो से बनवाकर तुझे बख्शीं और तुझपर हलाल कीं जिन तीनो का नाम कुर्सी, झुर्सी, और दगली है।

(खुदा कहता है) देख, खबरदार, मुँह वगैरह किसी बदन को साफ न रखना नहीं तो तुझे शैतान बहका देंगे, लिबास सियाह हमेशः पहिरना और मेरी याद मे सिर खुला रखना।

मै खुदा के इन हुक्मों को मानकर तुम्हारे पास आया हूॅ, मेरा कहा मानो और ईमान लाओ मै खुदा का प्यारा पुत्र, माशूक, जोरू, नायब नहीं हूॅ बल्कि खुदा का दूसरा हूॅ? यह इज्जत किसी पैगम्बर को नहीं मिली थी।

लोगो! मेरा कहा मानो खुदा मुझ से डरता है क्योकि मै प्रच्छन्न नास्तिक हूॅ पर पैगम्बरिन के डर से आस्तिक हो गया हूॅ इससे खुदा को हमेशः हमारी दलीलो से अपने उड जाने का डर रहता है तो जब खुदा मुझ से डरता है तब उस के बन्दो तुम मुझ से बहुत ही डरो।

१. सुखस्थान

मेरे प्यारे अगरेजो ! तुम खौफ मत करो मै तुम को सब गुनाहो से बरी कराऊँगा क्योंकि नाशिनैलिटी बड़ी चीज है। पैगम्बरिन और तुम्हारा रग एक है इससे मै तुम्हारे पापो को छिपा दूँगा।

प्यारे मुसल्मानो ! मैं कुछ तुमसे डरता हूँ क्योंकि तुम को मार डालने मे देर नहीं लगती इससे मैं तुम्हारी बेहतरीके वास्ते अपनी धर्मपुस्तक मे लिख जाऊँगा कि हमारे सक्सेसर[1] लोग तुम्हारी खातिर करें तुम्हारे न पढने पर अफसोस करें और तुम्हारे वास्ते स्कूल और कालिज बनावें।

मगर मेरे मेमने हिंदुओ ! तुम को मै सब प्रकार नीच समझूँगा क्योंकि यह वह देश है जो ईश्वर के क्रोध रूपी अग्नि से जल रहा है और जलैगा और ईश्वर के कोप से तुम्हारा नाम जीते हुए, हाफसिविलाइज्ड,[2] रूड,[3] काफिर, बुतपरस्त, अँधेरे मे पडे हुए, बारबरस,[4] वाजिबुल् कत्ल[5] होगा।

देखो हम भविष्य बानी कहते हैं तुम रोते और सिर टकराते भागते भागते फिरोगे, बुद्धि सीखते ही नहीं, बल नाश हो चुका है एक केवल धन बचा है सो भी सब निकल जायगा, यहाँ महँगी पड़ैगी, पानी न बरसैगा, हैजा डेंगू वगैरह नए नए रोग फैलैंगे, परस्पर का द्वेष और निन्दा करना तुम्हारा स्वभाव हो जायगा, आलस छा जायगी, तब तुम उस के कोप अग्नि से जल के खाक के सिवा कुछ न बचोगे।

पर प्यारो ! जो मुझ सच्चे पैगम्बर पर ईमान लावेगा वह छुड़ाया जायगा क्योंकि मै खुशामद पसद और घूस लेने वाला जाहिरा[6] नहीं हूँ मै ईश्वर का सच्चा पैगम्बर और दुनिया का सच्चा बादशाह हूँ क्योंकि सूरज को खुदा ने रोशनी मेरे लिए इनायत की, चाँद मे ठढक सिर्फ मेरे लिए बखशी गई और जमीन आसमान मेरे लिए पैदा किया बल्कि फरिश्ते भी मेरे ही लिए बनाए गए।

---

१. उत्तराधिकारी २. अर्द्ध सभ्य ३. उदड ४. जगली
५. मार डालने के योग्य ६. प्रकट में

ईमान लाओ मुझ पर, डाली चढ़ाओ मुझ को, जूता उतार के आओ मेरी मज़ार पाक[1] पर, पगड़ी पहन कर आओ मेरे मकबरे मे, इनाम दो इन को और धक्का खाओ उन का जो मेरे मुजाविर[2] हैं क्योंकि वे मूजिब होंगे तुम्हारी नजात के, और जो कुछ मै कहूँ उसे सुन कर हजूर, साहब बहुत ठीक फरमाते है, बजा इरशाद, बेशक, ठीक है, सत्त बचन, जो आज्ञा जो आज्ञा जे आज्ञा, इस मे क्या शक, ऐसा ही है, मेरे मालिक, मेरे बाबाजान, सच सच फरमाते हो—कहो क्योंकि जो मै कहता हूँ वह ईश्वर कहता है, और मेरे अनादरी को सहो अगर मेरी दरगाह मे तुम्हें गरदनियाँ दी जाय तो उस की कुछ लाज मत करो फिर घुसो क्योंकि मेरी दरगाह से निकलना दुनिया से निकल जाना है।

देखो शराब पियो, बिधवा विवाह करो, बालापाठशाला करो, आगे से लेने जाओ, बाल्यविवाह उठाओ, जाति भेद मिटाओ, कुलीन का कुल सत्यानाश मे मिलाओ, होटल मे खाओ, लव[3] करना सीखो, स्पीच दो, क्रिकेट खेलो, शादी मे खर्च कम करो, मेम्बर बनो, मेम्बर बनो, दरबारदारी करो, पूजा पत्री करो, चुस्त चालाक बनो, हम नहीं जानते को हम नहीं जानता कहो, चक्करदार टोपी पहिनो वा सिर खुला रक्खो पर पौशाक सब तंग रक्खो, नाच, बाल,[4] थियेटर अटा गुड़गुड़ बक प्रिवी सिर्वो घरो मे जाओ क्योंकि ये काम मूजिब होंगे खुदा और मेरी खुशी के।

शराब पियो, कुछ शका मत करो, देखो मै पीता हूँ क्योंकि यह खुदा का खून है जो उस ने मुझे पिलाया और मैने दुनिया को और यह उस के दोनो बादशाहत की निशानी है जो बाद मेरे बहुत दिनो तक कायम रहैगी क्योंकि उसने हुक्म दिया है कि औरो की तरह तू मकान बहुत पक्का न बनवा क्योकि दुनिया खुद नापायदार[5] है मगर मेरे खून के बोतलो के टुकडे जो कि (खुदा कहता है) मेरी हड्डियाँ हैं बहुत दिनो तक न गलैंगी और मेरे सच्चे राज की निशानी कायम रहेगी।

---

१. पवित्र क़ब्र २. पंडा ३. प्रेम ४. नाचघर ५. आधारहीन

देखो मेरा नाम चूना है क्योंकि मै सब का पाप रूपी पैसा चूस लेता हूँ क्योंकि खुदा ने फरमाया है कि मेरे बन्दे पैसो के बहकाने से गुनाह करते है अगर उन के पास पैसा न रहे तो खुद गुनाह न करें इस से तू सब से पहिले इन का पैसा चूस ले।

मेरा दूसरा नाम डबल है क्योंकि डबल हिंदी मे पैसे को कहते है और अगरेजी मे दूने को और पच्छिम मे उस बरतन को जिस्से घी वा अनाज निकाला जाता है और मेरा तीसरा नाम सुफेद है क्योंकि मै रौशनी बखशने वाला हूँ और दिल मेरा साफ चिट्टा चमकीला चीनी की जात है और चमडा मेरा गोरा है और भी मै सफेद करूँगा लोगो को अपने दीन की चादर्ना से इनलाइटेड[1] करके।

मेरे पहाड़ का नाम कोहनूर है क्योंकि मै सब के पापी दिलो को और पापो को तथा प्रेजुडिसो[2] को लोगो के बल और धन को चूर करूँगा, और मेरी पहली आरामगाह कुर्सी है क्योंकि अब वहाँ की आबहवा साफ होकर बेवकूफी की शिकायत रफा हो गई और दूसरी भुरसी है जहाँ जलती आग पर मेरे से पैगम्बर के सिवा दूसरा नहीं बैठ सकता और तीसरी दगली है उस मे चारो ओर दगल[3] भरा है और बीच मे मेरा सिहासन है।

जहाँ पर खुदा ने 'हलाल किया है शराब, बीफ, मटन, बग्गी, दगल, फसल, नैशानालिटी,[4] लालटैन, कोट, बूट, छड़ी, जेबीघड़ी, रेल, धूँआकश, बिधवा, कुमारी, परकीया, चाबुक, चुरुट, सडी मछली, सड़ी पनीर, सड़े अँचार, मुँह की बू, अधो भाग के केश, बिना पानी के मल धोना, रुमाल, मौसी, मामी, बूआ, चाची मे अपनी बेटी पोतियो के, कजिन फ्रेड,[5] लेपालट की बहू, खानसामा खानसामिन, हुक्का, थुक्का, लुक्का, बुक्का और आजादी को और हराम किया बुतपरस्ती, बेईमानी, सच बोलना, इनसाफ करना, धोती पहरना, तिलक लगाना, कठी पहरना, नहाना, दतुअन करना, स्वच्छन्द होना, उदार होना, निर्भय होना, कथा, पुरान, जातिभेद, बाल्यविवाह, भाई वा

---

१ प्रकाशित २. अधविश्वासों ३. कपट ४. जातीयता
५. चचेरे भाई बहन मित्र

मां वा पिता के साथ रहना, मत्तिपूजन तथा आर्थोडाक्स[1] की सुहबत, सच्ची प्रीत, परस्पर उपकार, आपस का मेल बुरी बातें घातें लातें फातें छातें और प्रेजुडिस को।

लोगो ! दौड़ो दौड़ो ईमान लाओ मुझ पर, देखो पीछे पछताओगे और हाथ मलते रह जाओगे मैं ईश्वर का प्यारा दूसरा और पाँचवाँ पैगम्बर केवल तुम्हारे उद्धार के वास्ते पृथ्वी पर आया हूँ ईमान लाओ मुझ पर हुकुम मानो मेरा, दहिना हाथ जो तुमलोगो के सामने उठा है खुदा का हाथ है इस को सिजदा करो, झुको, अदब करो, ईमान लाओ और इस शराब को खुदा का खून समझ कर पिओ पिओ पिओ।

१. कट्टर

क़ानून ताज़ीरात शौहर

सं० १६४०

क़ानून ताज़ीरात शौहर[1]

पहिला बाब[2]

तमहीद[3]

चूँकि मुनासिब मालूम हुआ कि एक कानून ऐसा इजरा किया जावै जिस से बाद शादी के जौज:[4] अपने शौहरो पर बखूबी हकूमत कर सके और इस सबब से उन दोनो मै निफाक[5] न पैदा हो लेहाज़ा कानून हस्बज़ैल[6] मुरौविज[7] किया गया।

दफ़:[8] (१) इस कानून का नाम ताज़ीरात शौहर होगा, हिंदुस्तान मे कोई औरत या मर्द जो शादी कर लेगा वह कानूनन इस का पाबन्द[9] समझा जायगा।

मुस्तसना[10]

जो अह्ल[11] यूरप हिंदुस्तान मे आकर शादी करेगे वह इस कानून से मुस्तसना समझे जायँगे।

—:❀:—

१. पति दड विधान २. प्रकरण ३. भूमिका ४. पत्नी ५. झगडा ६. निम्न के अनुसार ७. प्रचलित ८. धारा ९. आबद्ध १०. मुक्त ११. निवासी

दूसरा बाब

बयान असर[1] अल्फ़ाज़[2]

दफ: (२) किसी औरत के तहत हुकूमत[3] मे कोई शै[4] जो कि ज़ाहिरा[5] मनकूल:[6] मगर बगैर हुक्म औरत के गैरमनकूल,[7] है उस से मुराद[8] शौहर है।

तमसीलात[9]

अलिफ–सन्दूक वगैरह को शौहर नहीं कह सक्ते क्योंकि वह जायदाद[10] मनकूल: से हैं मगर अपने को खुद बखुद नहीं चला सक्ते हैं।

बे–गाय, बैल, कुत्ता, गदहा वग़ैरह अगरचे खुद बखुद चल सक्ते हैं मगर वह अपने औरतो की हुकूमत से जायदाद गैरमनकूल: नहीं हो जाते, इस वास्ते लफ्ज़ शौहर उन पर असर पज़ीर[11] न होगा।

जीम–चूंकि ऐसी जायदाद जो कि जाहिरा मनकूल: हो मगर औरत के हुक्म से फौरन ग़ैर मनकूल: हो जावे सिर्फ शादीकरद:[12] मर्द है, लेहाजा लफ्ज शौहर से मुराद उन्हीं लोगो से होगी।

दफ: (३)-शौहर जोरू की जायदाद है, इस वास्ते उस पर उस को हर किस्म[13] का अखतियार हासिल[14] है।

तमसील

अपनी जायदाद को लोग जिस तरह बना बिगाड़ सक्ते हैं, उसी तरह जोरुओ को अपने शौहर पर जद व कोब[15] करना वा खाना न देना वग़ैरह वग़ैरह का अखतियार हासिल है।

—:o:—

तीसरा बाब

सजा

दफ: (४) इस क़ानून मे मुजरिमो[16] को हस्बजैल सज़ा दी जायगी।

---

१. परिभाषा २. शब्दों ३. शासन के अधीन ४. वस्तु ५. प्रकट में ६. चल ७. अचल ८. तात्पर्य ९. उदाहरण १०. सपत्ति ११. प्रभावान्वित १२. विवाहित १३. प्रकार १४. प्राप्त १५. मार-पीट १६. दोषियों

अलिफ—कैद यानी शौहर को मकान की चार दीवारी से बाहर न जाने देना, यह कैद दोनो तरह की होगी, बा[1] मेहनत व बिला[2] मेहनत—लफज मेहनत से यह मुराद है कि शौहर कैद भी रहे और गालियो की बौछार भी बरदाश्त करता रहे—लफ्ज बिना मेहनत से मुराद है कि सिर्फ बाहर न जाने पाये।

बे—अलग बिस्तर या दूसरे मकान मे सोलाना।

जीम—हमेशा के वास्ते गुलामी[3] करानी।

दाल—जुर्मानः यानी किसी किस्म का नक्द या जेवर लेकर कसूर मुआफ करना।

दफः (५) इस कानून मे भी सजाय मौत सब से बडी सजा है मगर आदमी के जान को उन की बदन से अलग कर देना यहाॅ सजाय मौत नहीं, यहाॅ लफ्ज सजाय मौत से यह मुराद है कि औरत रूठ कर अपने बाप या भाई के घर चली जाय और फिर न आये।

दफः (६) सजाय हब्सदवाम[4] बअबूर[5] दरियाशोर[6] से इस क़नून मे यह मुराद है कि औरत चद अरसः के वास्ते शौहर को अपने घर मे न आने दे या चद अरसः के वास्ते खफा हो कर अपने बाप के घर मे चली जावे॥

दफः (७) मुक़द्दमात सर्सरी[7] के वास्ते हस्बज़ैल छोटी छोटी सज़ाये मुकर्रर हैं—

अलिफ—न बोलना। बे—भौ चढ़ाना। जीम—रोना। दाल—बकना।

—:※:—

१. सहित २. बिना ३. दासता ४. सदा का कारावास ५. पार कर ६. समुद्र ७. साधारण

चौथा बाब

मुस्तसनियात[1]

दफः (८) हर बशर[2] जो खुदा के यहाँ से जामय[3] औरत पहिना के उतारा गया है वह इस कानून से मुस्तसना है।

दफः (९) कोई जुर्म मुन्दर्जे कानून हाजा अगर बहुक्म औरत किया जाय तो इस कानून से मुस्तसना है।

दफः (१०) कोई शख्स जो कि दरहकीकृत फकीरी अख़तियार करे और दुनिया छोड़ दे वह बाद उस लमहः[4] के जिसमे कि दुनिया छोड़ी है इस कानून से मुस्तसना है।

दफः (११) कोई शख्स जो अपने जोरू को तिलाक दे, वह बाद उस लमहः के जब कि उस ने अपनी औरत को तिलाक दिया है उस लहजः[5] के पेश्तर तक जब कि वह दूसरी औरत से सरोकार कायम करै इस कानून से मुस्तसना है।

—:※:—

पाँचवाँ बाब

इमदाद[6] जुर्म

दफः (१२) कोई शौहर जो कि दूसरे शौहर को किसी औरत के बरख़िलाफ वरगलाएगा[7] तो यह समझा जायगा कि उस ने जुर्म करने मे इमदाद की।

दफः (१३) जिस वक्त कोई शौहर किसी दूसरे शौहर के जुर्म करने के वक्त मौजूद रहे और उस को उस जुर्म से न बाज रक्खे[8] तो वह भी जुर्म की इमदाद करनेवाला समझा जायगा।

मुस्तसनियात

अलिफ—कोई औरत व मर्द जिन की शादी नहीं हुई है इमदाद करने के जुर्म से मुस्तसना है।

---

१. मुक्तगण २. मनुष्य ३. वस्त्र ४. क्षण ५. समय ६. सहायता ७. बहकावेगा ८. रोके

बे—कोई शख्स जो बजोर बद्माशी या दौलत या और किसी सबब से जुर्म करद: शौहर की औरत के अखतियार के बाहर है वह इस कानून से मुस्तसना है।

जीम—मगर बगेर शादी किए हुए भी वह लोग जो किसी औरत के तहत हकूमत मे हैं मुस्तसना न समझे जायँगे।

तमसीलात

अलिफ—जैद का बकर नाम का एक भतीजा है जिस की शादी नहीं हुई है, जैद बकर के बहकाने से किसी मेल: मे गया और वहॉ रात को देर तक रहा पस जैद मुजरिम हुआ, मगर बकर जो कि दूसरे घर मे रहता है और औरत की हकूमत से बाहर है इमदाद जुर्मकी तुहमत उस पर नहीं हो सकती।

बे—खालिद एक नव्वाब है जिस के सबब से अमरू की गुजर औकात[१] होती है, खालिद ने किसी शब मुहफिल मे अमरू को अपने साथ रहने पर मजबूर किया मगर चूकि वह दौलतमन्द है इस वास्ते इमदाद जुर्म के इत्तिहाम[२] से मुस्तसना है।

जीम—जैद बकर का छोटा भाई है और अपने भावज की पकाई हुई रोटी खाता है। अगर जैद व बकर दोनो किसी शब को देर तक बाहर रहे तो जैद इमदाद जुर्म करने से सजायाब[३] हो सक्ता है।

दफ: (१४) इमदाद जुर्म करनेवाले मुजरिमो की सजा उन की अदालत मे होगी अगर वे असल मुजरिम की अदालत के हद अख्तियार[४] के बाहर है।

तमसील

अलिफ—जैद असल मुजरिम है और बकर उस का मददगार है मगर दोनो की शादी हो चुकी है तो जैद की सजा उस की जोरू करैगी और बकर की सजा जैद की जोरू के बहकाने से बकर की जोरू करैगी।

---

१. कालयापन २. दोष
३. दडित ४. अधिकार की सीमा

दफ: (१५) जुर्म के इमदाद करनेवालों की सजा ब नजर तम्बीह[1] सिर्फ सरसरी तौर से काफ़ी होगी।

—:※:—

छठा बाब

जुर्म खिलाफ अदब अदालत

दफ: (१६) लफ्ज अदालत से मुराद यहाँ सिर्फ शादी की हुई जोरू समझना चाहिए।

दफ: (१७) जो शौहर अपनी जोरू से लड़ना चाहे या लड़े या गैर शख्स जो उससे लडता हो उस की इमदाद करे तो उस को किसी किस्म की कैद की सजा दी जायगी लेकिन अगर अदालत की राय मे यह जुर्म संगीन[2] मालूम हो तो हब्सदवाम बअबूर दरयायशोर की सजा देने का भी अदालत को अख़तियार है।

दफ (१८) जो शख्स अपने किसी बुजुर्ग या रिश्त:दार या दोस्त या लड़को को अपने तरफ करके जोरू पर हावी[3] होने का इराद: करे उस की कैद की सज़ा या अलग सोने की सजा या सिर्फ गाली वग़ैरह दी जायगी।

दफ. (१९) जो शख्स सिवा अपनी औरत के और किसी औरत पर इश्क[4] जाहिर करैगा, तो वह अदालत का दुश्मन समझा जायगा।

खुलास.

अपनी जोरू के सिवा किसी औरत पर मेहरबानी की नजर करना ही जुर्म है, चाहै वह किसी सबब से क्यो न हो।

तमसीलात

सुगरा जैद की जोरू है और कुबरा जैद की परोसिन है मगर कुबरा ग़रीब है इस वास्ते जैद कभी २ कुबरा की कुछ मदद करता है पस जैद मुजरिम जुर्म मुन्दरज दफ: हाज़ा[5] का हुआ।

अलिफ—अदालत को अखतियार हासिल है कि बगैर क़सूर किए

---

१ शासन की दृष्टि से २. भारी

३. प्रभाव डालने ४. आसक्ति ५. पूर्वोक्त

हुये भी शौहर को इस जुर्म का मुजरिम करार दे, मुजरिम का यह सबूत देना कि वह मुर्तकिब[1] इस जुर्म का नहीं हुआ काबिल समाअत[2] न होगा।

बे—अदालत के खौफ से झूठ मूठ भी एक मर्तबः जुर्म का इकरार कर लेना किसी शौहर को मुजरिम बनाने के वास्ते काफी होगा।

जीम—बगैर जुर्म के इस कसूर मे मुजरिम बनानेवाली अदालत यानी औरत सिन्रसीदः[3] या बदसूरत होनी चाहिये या जिसका शौहर सिनरसादः या मकरूहसूरत[4] हो उस औरत को भी इस किस्म का जुर्म कायम[5] करने का अखतियार हासिल है।

दाल— अगर नोजवान या खूबसूरत औरत अखतियारात मुन्दर्जे बाला हासिल करना चाहे तो उस को अपनी बदमिजाजी[6] कबूल करनी पडेगी।

दफ़० (२०) इस कानून मे जितनी किस्म की सजाये लिखी हैं वह सब या उन मे से चद दफः १९ के मुजरिम को दी जा सकती हैं।

—:**:—

सातवॉ बाब

जुर्म खिलाफ फौज सर्कारी

दफ. (२१) घर के लड़के बर्री[7] फोज और मजदूरनियॉ बह्री[8] फौज समझी जायॅगी।

दफः (२२) जो शख्स अपने किसी लड़की या अपने किसी लड़के को उन के मॉ के बरखिलाफ[9] बोलने या मजदूरनियो को बगैर हुक्म बीबी के काम करने को कहैगा तो वह फौज के बरखिलाफ बलवः करने का मुजरिम करार दिया जायगा।

दफः (२३) जो मुजरिम जुर्म मुन्दर्जे दफः २२ का होगा उस को गाली बकने या झिड़की देने या रोने की सजा दी जायगी।

१. करनेवाला २. सुनने के योग्य।

३. प्रौढ़ा या वृद्धा ४. घृणित रूपवाली ५. स्थापित ६. कर्कशापन ७. स्थल की ८. समुद्री ९. विरुद्ध।

आठवाँ बाब

जुर्म बरखिलाफ अमन[1] शहर

दफ: (२४) जो शख्स अपने दोस्तों या रिश्तःदारों को जो जोरू की राय के बरखिलाफ है अकसर अपने मकान में जमा करैगा या ज्याद:तर उन की दावत करैगा वह इस बात का मुजरिम समझा जायगा कि उस ने शहर के अमन में फरक[2] डाला।

दफ: (२५) जो शख्स किसी रिश्त:दार या बुजुर्ग को घर में अपने जोरू के समझाने के वास्ते बुलावेगा वह भी शहर के अमन में फरक डालने का मुजरिम करार दिया जायगा।

दफ: (२६) दफ: २४ वो २५ के मुजरिमों की सजा गाली वगैर: या जुर्म संगीन हो तो हब्सदवाम बअबूर दरियायशोर हो सकती है।

—:❀:—

नवाँ बाब

अदूलहुक्मी[3]

दफ: (२७) जो अपनी जोरू का हुक्म न मानेगा वह अदूल-हुक्मी का मुजरिम करार दिया जायगा।

तमसीलात

अलिफ—जोरू ने हुक्म दिया कि कल शाम तक फलाना जेवर या कपड़ा बन कर आवै मगर शौहर तंगदस्ती[4] के सबब से नहीं ला सकता इसवास्ते मुजरिम हुआ।

बे—जोरू से एक दूसरी औरत से लड़ाई है और वह लड़ाई भी महज[5] बे बुनियाद[6] है। दोनों के शौहर आपस में करीबी[7] रिश्त:दार हैं, एक शौहर के यहाँ कोई शादी या गमी[8] का जरूरी काम पेश आया और दूसरे शौहर को लड़ाई के सबब से उस की जोरू ने

---

१. शाँति २. भंग करना ३. आज्ञा की अवहेलना ४. धनाभाव
५. केवल ६. बेजड़ ७. पास की ८. शोक

पहिले के यहाँ जाने मे बाज रखना चाहा मगर शौहर शर्त आदमियत से बाज़ न रहा इस वास्ते वह मुजरिम जुर्म दफ़: हाजा का हुआ।

जीम—जोरू के शैतानपरस्ती[1] पर एतकाद[2] है मगर शौहर एक पढ़ा लिखा आदमी है। लडको की खैरियत के वास्ते जोरू ने शौहर को किसी पीर की नेयाज[3] करने को कहा मगर शौहर ने ईमान के पाबन्दी से उसको नहीं माना लेहाजा वह मुजरिम दफ़: हाजा का हुआ।

दफ़: (२८) मुजरिम जुर्म अदूलहुक्मी को जुर्मानः या कैद या दोनो किस्म की सजाये दी जायेंगी।

दसवाँ बाब

जुर्म दिलशिकनी[4]

दफ़: (२९) जो शौहर अपनी जोरू की दिलशिकनी करेगा वह दिलशिकनी के जुर्म का मुजरिम समझा जायगा।

तमसीलात

अलिफ़—शौहर ने हीलतन[5] या सरीहतन[6] कोई हरकत[7] ऐसी नहीं की कि उस की जोरू की दिलशिकनी हो मगर जोरू ने किसी हरकत से अपनी दिलशिकनी मान ला तो वह भी दिलशिकनी होगी और उस मे शौहर को कोई उज्र[8] न होगा।

बे—शौहर किसी मोहफिल मे गया और वहाँ ब मजबूरी उस को रंडियो का तमाशा देखना पडा तो यह भी दिलशिकनी हुई।

---

१. भूत पूजना २ विश्वास ३ मिन्नत या चढावा ४. हृदय पर चोट ५. कपट से ६. प्रकट में ७. काय ८. आपत्ति।

ग्यारहवाँ बाब

हंगामः[1]

दफः (३१) जोरू की किसी बात का जवाब देना जुर्म हंगामः है।

दफः (३२) हंगामः करनेवाले मुजरिम को रोने या बकने की सजा दी जायगी।

कितः[2] तारीख तसनीफ[3] दर सन् १८८३ ई०।

चोगरदीद ईं जोराफतनामः तसनीफ।
के बाशद हर्फ हरफश दुर ओ गौहर॥
ज रूये आबरू शुद ईसवी साल।
निको कानून ताजीरात शौहर॥

१. विद्रोह २. एक छंद ३. रचना ४ जब यह बुद्धिमानी की रचना प्रणीत हुई, जिसके हर एक अक्षर मोती से हैं। तब प्रतिष्ठा के रूप में ईसवी साल हुआ 'निको कानून ताजीरात शौहर'। (१८८३)

[बलिया में व्याख्यान]

भारतवर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है ?

सं० १९३४

बलिया में भारतेंदु जी

—:❀:—

इस साल बलिया मे ददरी का मेला बड़ी धूम धाम से हुआ। श्री मुशी बिहारीलाल, मुंशी गणपति राय, मुशी चतुर्भुज सहाय सरीखे उद्योगी और उत्साही अफसरो के प्रबध से इस वर्ष मेले मे कई नई बाते ऐसी हुई, जिनसे मेले की बडी शोभा हो गई। एक तो पहलवानो का दंगल हुआ, जिसमे देश देश के पहलवान आए थे और कुश्ती का करतब दिखलाकर पारितोषिक पाया। दूसरे मेले के थोडे दिन पूर्व ही से एक नाट्य समाज नियत हुआ था, जिसने मेले में कई उत्तम नाटको का अभिनय किया। श्री भारतेदु बाबू हरिश्चद्र जी नाट्य समाज के प्रबध-कर्ताओ के आग्रह और अनुराग से यहाँ विराजमान थे। उक्त बाबू साहब कृत प्रसिद्ध नाटक "सत्यहरिश्चद्र" और "नीलदेवी" बड़ी सुघराई से खेले गए। सपूर्ण दर्शक-मडली मोहित हो गई और इन नाटको के कवि बाबू हरिश्चद्र जी की, जो सयोग से नाट्यशाला मे इस समय विद्यमान थे बार बार सराहना करने लगी। बाबू साहब का नाम सुनकर इस जिले के मैजिस्ट्रेट आदिक अनेक साहिबान और मेम लोग भी थियेटर मे उपस्थित थे और "सत्य हरिश्चद्र" "नीलदेवी" का अभिनय देखकर बडी प्रसन्नता प्रगट की। वरच रॉबर्ट्स साहब मैजिस्ट्रेट ने कहा कि इनके नाटक कवि शिरोमणि शेक्सपियर से भी उत्तम हैं। बलिया की सज्जन-मंडली ने बाबू हरिश्चद्र जी का योग्य आदर समान किया। श्री बाबू जी साहेब के स्वागत समानार्थ यहाँ "बलिया इंस्टिट्यूट" की एक सभा की गई जिसमे इस नगर के सब प्रतिष्ठित अफसर और रईस एकत्र थे। इस जिले के मान्यवर, सर्व प्रिय कलेक्टर मि० डी० टी०, रॉबर्ट्स साहेब बहादुर सभाध्यक्ष के उच्चासन मे इस अवसर पर सुशोभित थे। श्री मुशी बिहारीलाल जी सेक्रेटरी बलिया इंस्टिट्यूट ने सक्षिप्त आदर

सूचक वाक्य द्वारा बाबू साहेब का सभा से परिचय कराया। यद्यपि इसकी कुछ ऐसी आवश्यकता न थी क्योंकि कौन ऐसा देश और नगर है जहाँ भारतेन्दु बाबू हरिश्चंद्र जी का नाम नहीं प्रसिद्ध है? यहाँ एक पृथक् सभा "आर्यदेशोपकारिणी सभा" के नाम से स्थापित है। उसके सेक्रेटरी पं० इंदिरादत्त उपाध्याय जी बी० ए० ने एक छोटा ऐड्रेस बाबू साहेब की प्रशंसा में पढ़ा। तदुपरांत बाबू हरिश्चंद्र जी ने एक बड़ा ललित, गंभीर और समयोपयोगी व्याख्यान इस विषय पर दिया कि "भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?" सभासद्गण बाबू साहेब का लेकचर सुनकर गद्‌गद् हो गये। व्याख्यान समाप्त होने पर श्रीमान् सभापति साहेब ने बाबू साहेब को धन्यवाद दिया और गुणानुवाद किया और सभा विसर्जित हुई। लेकचर तथा ऐड्रेस पाठकों के अवलोकनार्थ नीचे प्रकाशित होता है।

रविदत्त शुक्ल

ऐड्रेस

सभासद महाशय,

आज का दिन धन्य है कि हम लोग इस बलिया मे भारतभूषण भारतेंदु श्री हरिश्चंद्र जी के स्वागत के निमित्त एकत्र हुए हैं। बलिया ऐसे सामान्य स्थान मे एक ऐसे बडे विद्वान और देश-शुभचिंतक का आगमन एक बड़े सौभाग्य और धन्यवाद का विषय है। ऐसे अवसर का उपस्थित होना बड़ा ही दुर्लभ है। मै आर्य देशोपकारिणी सभा के ओर से, जो यहाँ बलिया इन्स्टिट्यूट से एक पृथक् ही सभा है, श्रीमान् बाबू साहब को अनेकानेक धन्यवाद देता हूँ कि उन्होने बलिया मे इस अवसर पर विराजमान होकर हम लोग का मनोर्थ सिद्ध किया और अपने मुख-चद्र से अमृत की वर्षा करके हम बलिया-निवासी अनुरागियो का उत्साह बढ़ाया। श्रीकृपासागर जगदीश्वर से हम सब भारतवासियो की यही प्रार्थना है कि श्री बाबू साहेब सरीखे उत्साही गुणग्राही स्वदेशानुरागी उदार चरित सर्व प्रिय पुरुष को दीर्घायु करै और सदा इस दीन भारतवर्ष के हितसाधन मे तत्पर रखे। आज हम श्रीमान् डी० टी० रॉबर्ट्स साहेब बहादुर को भी कोटि कोटि धन्यवाद देते हैं कि श्रीमान् ने इस कृपानुरागपूर्वक सभा मे सुशोभित होकर हम लोगो को आदर दिया।

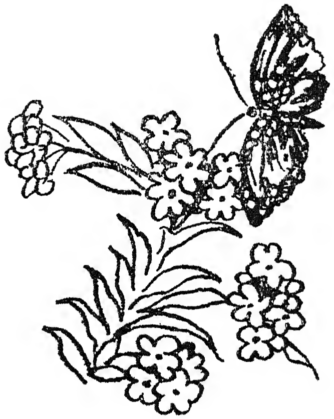

भारतवर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है ?

आज बड़े ही आनद का दिन है कि इस छोटे से नगर बलिया मे हम इतने मनुष्यो को बडे उत्साह से एक स्थान पर देखते हैं। इस अभागे आलसी देश मे जो कुछ हो जाय वही बहुत कुछ है। बनारस ऐसे ऐसे बड़े नगरो मे जब कुछ नहीं होता तो यह हम क्यो न कहैंगे कि बलिया मे जो कुछ हमने देखा वह बहुत ही प्रशसा के योग्य है। इस उत्साह का मूल कारण जो हमने खोजा तो प्रगट हो गया कि इस देश के भाग्य से आजकल यहाँ सारा समाज ही ऐसा एकत्र है। जहाँ राबर्ट्स साहब बहादुर ऐसे कलेक्टर हो वहाँ क्यो न ऐसा समाज हो। जिस देश और काल मे ईश्वर ने अकबर को उत्पन्न किया था उसी मे अबुल्फजल, बीरबल, टोडरमल को भी उत्पन्न किया। यहाँ राबर्ट्स साहब अकबर हैं तो मुशी चतुर्भुजसहाय, मु शी बिहारीलाल साहब आदि अबुल्फजल और टोडरमल हैं। हमारे हिदुस्तानी लोग तो रेल की गाडी है। यद्यपि फर्स्ट क्लास, सेकेड क्लास आदि गाडी बहुत अच्छी-अच्छी और बड़े बडे महसूल की इस ट्रेन मे लगी है पर बिना इजिन ये सब नहीं चल सकती, वैसेही हिदुस्तानी लोगो को कोई चलानेवाला हो तो ये क्या नहीं कर सकते। इनसे इतना कह दीजिए "का चुप साधि रहा बलवाना", फिर देखिए हनुमानजी को अपना बल कैसा याद आ जाता है। सो बल कौन दिलावै। या हिदुस्तानी राजे-महराजे नवाब रईस या हाकिम। राजे-महाराजो को अपनी पूजा

भोजन झूठी गप से छुट्टी नहीं। हाकिमो को कुछ तो सर्कारी काम घेरे रहता है, कुछ बॉल, घुडदौड, थिएटर, अखबार मे समय गया। कुछ बचा भी तो उनको क्या गरज है कि हम गरीब गंदे काले आदमियो से मिलकर अपना अनमोल समय खोवैं। बस वही मसल हुई—'तुम्हें गैरो से कब फुरसत हम अपने गम मे कब खाली। चलो बस हो चुका मिलना न हम खाली न तुम खाली।' तीन मेढक एक के ऊपर एक बैठे थे। ऊपरवाले ने कहा 'जौक शोक', बीचवाला बोला 'गुम सुम', सब के नीचेवाला पुकारा 'गए हम'। सो हिंदुस्तान की साधारण प्रजा की दशा यही है, गए हम।

पहले भी जब आर्य लोग हिंदुस्तान मे आकर बसे थे, राजा और ब्राह्मणो ही के जिम्मे यह काम था कि देश मे नाना प्रकार की विद्या और नीति फैलावैं और अब भी ये लोग चाहैं तो हिंदुस्तान प्रतिदिन कौन कहै प्रतिछिन बढै। पर इन्हीं लोगो को सारे ससार के निकम्मेपन ने घेर रखा है। "बोद्धारो मत्सरग्रस्ता प्रभवः स्मरदूषिताः।" हम नहीं समझते कि इनको लाज भी क्यो नहीं आती कि उस समय मे जब इनके पुरुषो के पास कोई भी सामान नहीं था तब उन लोगो ने जगल मे पत्ते और मिट्टी की कुटियो मे बैठ करके बॉस की नलियो से जो तारा ग्रह आदि वेध करके उनकी गति लिखी है वह ऐसी ठीक है कि सोलह लाख रुपए के लागत की विलायत मे जो दूरबीने बनी हैं उनसे उन ग्रहो को वेध करने मे भी वही गति ठीक आती है, और जब आज इस काल मे हम लोगो को अगरेजी विद्या की और जगत् की उन्नति की कृपा से लाखो पुस्तकै और हजारो यत्र तैयार हैं तब हम लोग निरी चुगी की कतवार फेकने की गाडी बन रहे हैं। यह समय ऐसा है कि उन्नति की मानो घुडदौड़ हो रही है। अमेरिकन, अगरेज, फरासीस आदि तुरकी ताजी सब सरपट्ट दौड़े जाते हैं। सबके जी मे यही है कि पाला हमीं पहले छू ले। उस समय हिंदू काठियावाड़ी खाली खड़े खड़े टाप से मिट्टी खोदते हैं। इनको, औरों को जाने दीजिए, जापानी टट्टुओ को हॉफते हुए दौडते देखकर भी लाज नहीं आती। यह समय ऐसा है कि जो पीछे रह जायगा फिर कोटि उपाय किए भी आगे न बढ़ सकैगा। इस लूट मे, इस बरसात मे भी जिसके सिर पर कम-

बस्ती का छाता और आँखो मे मूर्खता की पट्टी बँधी रहे उनपर ईश्वर का कोप ही कहना चाहिए।

मुझको मेरे मित्रो ने कहा था कि तुम इस विषय पर आज कुछ कहो कि हिदुस्तान की कैसे उन्नति हो सकती है। भला इस विषय पर मैं और क्या कहूँ। भागवत मे एक श्लोक है "नृदेहमाद्य सुलभ सुदुर्लभं प्लव सुकल्प गुरु कर्णधार। मयाऽनुकूलेन नभः स्वतेरितु पुमान् भवाब्धि न तरेत् स आत्महा।" भगवान कहते है कि पहले तो मनुष्य जनम ही बड़ा दुर्लभ है, सो मिला और उसपर गुरु की कृपा और मेरी अनुकूलता। इतना सामान पाकर भी जो मनुष्य इस संसार-सागर के पार न जाय उसको आत्म हत्यारा कहना चाहिए। वही दशा इस समय हिदुस्तान की है। अगरेजो के राज्य मे सब प्रकार का सामान पाकर अवसर पाकर भी हम लोग जो इस समय पर उन्नति न करै तो हमारा केवल अभाग्य और परमेश्वर का कोप ही है। सास के अनुमोदन से एकात रात मे सूने रगमहल मे जाकर भी बहुत दिन से जिस प्रान से प्यारे परदेसी पति से मिलकर छाती ठढी करने की इच्छा थी, उसका लाज से मुँह भी न देखै और बोलै भी न, तो उसका अभाग्य ही है। वह तो कल फिर परदेश चला जायगा। वैसे ही अंगरेजो के राज्य मे भी जो हम कूँए के मेढक, काठ के उल्लू, पिंजड़े के गगाराम ही रहैं तो हमारी कमबख्त कमबख्ती फिर कमबख्ती है।

बहुत लोग यह कहैंगे कि हमको पेट के धधे के मारे छुट्टी ही नहीं रहती बाबा, हम क्या उन्नति करै ? तुम्हारा पेट भरा है तुमको दून की सूझती है। यह कहना उनका बहुत भूल है। इगलैंड का पेट भी कभी यो ही खाली था। उसने एक हाथ से अपना पेट भरा, दूसरे हाथ से उन्नति की राह के काँटो को साफ किया। क्या इंगलैड मे किसान, खेतवाले, गाड़ीवान, मजदूरे, कोचवान आदि नहीं हैं ? किसी देश मे भी सभी पेट भरे हुए नहीं होते। किंतु वे लोग जहाँ खेत जोतते बोते हैं वहीं उसके साथ यह भी सोचते है कि ऐसी और कौन नई कल या मसाला बनावै जिसमे इस खेती मे आगे से दूना अन्न उपजै। विलायत मे गाडी के कोचवान भी अखबार पढ़ते हैं। जब मालिक उतरकर किसी दोस्त के यहाँ गया उसी समय कोचवान ने

गद्दी के नीचे से अखबार निकाला। यहाँ उतनी देर कोचवान हुक्का पीएगा या गप्प करेगा। सो गप्प भी निकम्मी। वहाँ के लोग गप्प ही मे देश के प्रबध छाँटते है। सिद्धात यह कि वहाँ के लोगो का यह सिद्धात है कि एक छिन भी व्यर्थ न जाय। उसके बदले यहाँ के लोगो को जितना निकम्मापन हो उतना ही बड़ा अमीर समझा जाता है। आलस यहाँ इतनी बढ़ गई कि मलूकदास ने दोहा ही बना डाला "अजगर करै न चाकरी, पछी करै न काम। दास मलूका कहि गए, सबके दाता राम।" चारो ओर आँख उठाकर देखिए तो बिना काम करनेवालो की ही चारो ओर बढती है। रोजगार कहीं कुछ भी नहीं है। अमीरो की मुसाहबी, दल्लाली या अमीरो के नौजवान लड़को को खराब करना या किसी की जमा मार लेना, इनके सिवा बतलाइए और कौन रोजगार है जिससे कुछ रुपया मिलै। चारो ओर द्ररिद्रता की आग लगी हुई है। किसी ने बहुत ठाक कहा है कि दरिद्र कुटुंब इसी तरह अपनी इज्जत को बचाता फिरता है जैसे लाजवती कुल की बहू फटे कपड़ो मे अपने अग को छिपाए जाती है। वही दशा हिंदुस्तान की है।

मर्दुमशुमारी की रिपोर्ट देखने से स्पष्ट होता है कि मनुष्य दिन दिन यहाँ बढ़ते जाते हैं और रुपया दिन दिन कमती होता जाता है। तो अब बिना ऐसा उपाय किए काम नहीं चलैगा कि रुपया भी बढ़ै, और वह रुपया बिना बुद्धि बढ़े न बढ़ेगा। भाइयो, राजा महाराजो का मुँह मत देखो, मत यह आशा रक्खो कि पडितजी कथा मे कोई ऐसा उपाय भी बतलावैगे कि देश का रुपया और बुद्धि बढ़े। तुम आप ही कमर कसो, आलस छोड़ो। कबतक अपने को जगली हूस मूर्ख बोदे डरपोकने पुकरवाओगे। दौड़ो इस घोड़दौड़ मे जो पीछे पड़े तो फिर कहीं ठिकाना नहीं है। "फिर कब राम जनकपुर ऐहैं"। अबकी जो पीछे पड़े तो फिर रसातल ही पहुँचोगे। जब पृथ्वीराज को कैद करके गोर ले गए तो शहाबुद्दीन के भाई गियासुद्दीन से किसी ने कहा कि वह शब्दभेदी बाण बहुत अच्छा मारता है। एक दिन सभा नियत हुई और सात लोहे के तावे बाण से फोड़ने को रखे गए। पृथ्वीराज को

लोगो ने पहले ही से अधा कर दिया था। सकेत यह हुआ कि जब गियासुद्दीन हूँ करे तब वह तावो पर बाण मारे। चद कवि भी उसके साथ कैदी था। यह सामान देखकर उसने यह दोहा पढा। "अबकी चढी कमान, को जानै फिर कब चढ़ै। जिनि चुक्कै चौहान, इक्कै मारय इक्क सर ॥" उसका सकेत समझकर जब गियासुद्दीन ने हूँ किया तो पृथ्वीराज ने उसी को बाण मार दिया। वही बात अब है। अबकी चढी, इस समय मे सर्कार का राज्य पाकर और उन्नति का इतना सामान पाकर भी तुम लोग अपने को न सुधारो तो तुम्हीं रहो। और वह सुधारना भी ऐसा होना चाहिए कि सब बात मे उन्नति हो। धर्म मे, घर के काम मे, बाहर के काम मे, रोजगार मे, शिष्टाचार मे, चाल चलन मे, शरीर के बल मे, मन के बल मे, समाज मे, बालक मे, युवा मे, वृद्ध मे, स्त्री मे, पुरुष मे, अमीर मे, गरीब मे, भारतवर्ष की सब अवस्था, सब जाति सब देश मे उन्नति करो। सब ऐसी बातो को छोड़ो जो तुम्हारे इस पथ के कटक हो, चाहे तुम्हे लोग निकम्मा कहै या नगा कहै, कृस्तान कहैं या भ्रष्ट कहै। तुम केवल अपने देश की दीनदशा को देखो और उनकी बात मत सुनो।

अपमान पुरस्कृत्य मान कृत्वा तु पृष्ठत:।
स्वकार्य्यं साधयेत् धीमान् कार्य्यध्वसो हि मूर्खता ॥

जो लोग अपने को देशहितैषी लगाते हो वह अपने सुख को होम करके, अपने धन और मान का बलिदान करके कमर कस के उठो। देखादेखी थोडे दिन मे सब हो जायगा। अपनी खराबियो के मूल कारणो को खोजो। कोई धम की आड मे, कोई देश की चाल की आड़ मे, कोई सुख की आड़ मे छिपे है। उन चोरो को वहाँ वहाँ से पकड़ पकड़ कर लाओ। उनको बाँध बाँध कर कैद करो। हम इससे बढ़कर क्या कहें कि जैसे तुम्हारे घर मे कोई पुरुष व्यभिचार करने आवै तो जिस क्रोध से उसको पकडकर मारोगे और जहाँ तक तुम्हारे मे शक्ति होगी उसका सत्यानाश करोगे। उसी तरह इस समय जो जो बातै तुम्हारे उन्नति पथ मे कॉटा हो उनकी जड़ खोदकर फेक दो। कुछ मत डरो। जब तक सौ दो सौ मनुष्य बदनाम न होगे, जात से

बाहर न निकाले जायँगे, दरिद्र न हो जायगे, कैद न होंगे वरंच जान से न मारे जायँगे तब तक कोई देश भी न सुधरैगा।

अब यह प्रश्न होगा कि भाई हम तो जानते ही नहीं कि उन्नति और सुधारना किस चिडिया का नाम है। किसको अच्छा समझै? क्या ले, क्या छोड़ै? तो कुछ बातें जो इस शीघ्रता मे मेरे ध्यान मे आती हैं उनको मैं कहता हूँ, सुनो—

सब उन्नतियो का मूल धर्म है। इससे सबके पहले धर्म की ही उन्नति करनी उचित है। देखो, अँगरेजो की धर्मनीति और राजनीति परस्पर मिली हैं, इससे उनकी दिन दिन कैसी उन्नति है। उनको जाने दो, अपने ही यहाँ देखो! तुम्हारे यहाँ धर्म की आड़ मे नाना प्रकार की नीति, समाज-गठन, वैद्यक आदि भरे हुए है। दो एक मिसाल सुनो। यही तुम्हारा बलिया का मेला और यहाँ स्नान क्यो बनाया गया है? जिसमे जो लोग कभी आपस मे नहीं मिलते, दस दस पाँच पाँच कोस से वे लोग साल मे एक जगह एकत्र होकर आपस मे मिले। एक दूसरे का दु.ख सुख जानै। गृहस्थी के काम की वह चीजैं जो गाँव मे नहीं मिलतीं, यहाँ से ले जायँ। एकादशी का व्रत क्यो रखा है? जिसमे महीने मे दो एक उपवास से शरीर शुद्ध हो जाय। गगा जी नहाने जाते हो तो पहिले पानी सिर पर चढ़ा कर तब पैर डालने का विधान क्यो है? जिसमे तलुए से गरमी सिर मे चढकर विकार न उत्पन्न करे। दीवाली इसी हेतु है कि इसी बहाने साल भर मे एक बेर तो सफाई हो जाय। यही तिहवार ही तुम्हारी मानो म्युनिसिपालिटी हैं। ऐसे ही सब पर्व सब तीर्थ व्रत आदि मे कोई हिकमत है। उन लोगो ने धर्मनीति और समाजनीति को दूध पानी की भाँति मिला दिया है। खराबी जो बीच मे भई है वह यह है कि उन लोगो ने ये धर्म क्यो मानत लिखे थे, इसका लोगो ने मतलब नहीं समझा और इन बातो को वास्तविक धर्म मान लिया। भाइयो, वास्तविक धर्म तो केवल परमेश्वर के चरणकमल का भजन है। ये सब तो समाजधर्म हैं जो देशकाल के अनुसार शोधे और बदले जा सकते है। दूसरी खराबी यह हुई कि उन्हीं महात्मा बुद्धिमान ऋषियो के वश के लोगो ने अपने बाप दादो का मतलब न समझकर बहुत से नए नए धर्म बनाकर शास्त्र

मे धर दिए। बस सभी तिथि व्रत और सभी स्थान तीर्थ हो गए। सो इन बातो को अब एक बेर आँख खोलकर देख और समझ लीजिए कि फलानी बात उन बुद्धिमान ऋषियो ने क्यो बनाई और उनमे देश और काल के जो अनुकूल और उपकारी हो उनको ग्रहण कीजिए। बहुत सी बाते जो समाज-विरुद्ध मानी है किंतु धर्मशास्त्रो मे जिनका विधान है उनको चलाइए। जैसे जहाज का सफर, विधवा विवाह आदि। लडको को छोटेपन ही मे ब्याह करके उनका बल, वीय, आयुष्य सब मत घटाइए। आप उनके माँ बाप है या उनके शत्रु है। वीर्य उनके शरीर मे पुष्ट होने दीजिए, विद्या कुछ पढ लेने दीजिए, नोन, तेल, लकड़ी की फिक्र करने की बुद्धि सीख लेने दीजिए तब उनका पैर काठ मे डालिए। कुलीन प्रथा, बहुविवाह को दूर कीजिए। लड़कियो को भी पढाइए, किंतु उस चाल से नहीं जैसे आजकल पढाई जाती है जिससे उपकार के बदले बुराई होती है। ऐसी चाल से उनको शिक्षा दीजिए कि वह अपना देश और कुलधर्म सीखे, पति की भक्ति करें और लडको को सहज मे शिक्षा दे। वैष्णव शाक्त इत्यादि नाना प्रकार के मत के लोग आपस का वैर छोड़ दे। यह समय इन झगडो का नहीं। हिंदू, जैन, मुसलमान सब आपस में मिलिए। जाति मे कोई चाहे ऊँचा हो चाहे नीचा हो सबका आदर कीजिए, जो जिस योग्य हो उसको वैसा मानिए। छोटी जाति के लोगो को तिरस्कार करके उनका जी मत तोड़िए। सब लोग आपस मे मिलिए।

मुसलमान भाइयो को भी उचित है कि इस हिंदुस्तान मे बसकर वे लोग हिंदुओ को नीचा समझना छोड़ दे। ठीक भाइयो की भाँति हिंदुओ से बरताव करे। ऐसी बात, जो हिंदुओ का जी दुखानेवाली हो, न करे। घर मे आग लगै तब जिठानी-द्योरानी को आपस का डाह छोडकर एक साथ वह आग बुझानी चाहिए। जो बात हिंदुओ को नहीं मयस्सर हैं वह धर्म के प्रभाव से मुसलमानो को सहज प्राप्त हैं। उनमे जाति नहीं, खाने पीने मे चौका चूल्हा नहीं, विलायत जाने मे रोक टोक नहीं। फिर भी बडे ही सोच की बात है, मुसलमानो ने अभी तक अपनी दशा कुछ नहीं सुधारी। अभी तक बहुतो का यही ज्ञान है कि

दिल्ली लखनऊ की बादशाहत कायम है। यारो! वे दिन गए। अब आलस हठधर्मी यह सब छोडो। चलो, हिंदुओ के साथ तुम भी दौडो, एकएक दो होगे। पुरानी बातें दूर करो। मीरहसन की मसनवी और इदरसभा पढाकर छोटेपन ही से लडको का सत्यानाश मत करो। होश सम्हाला नहीं कि पट्टी पार ली, चुस्त कपडा पहना और गजल गुनगुनाए। "शौक तिफ्ली से मुझे गुल की जो दीदार का था। न किया हमने गुलिस्ताँ का सबक याद कभी"। भला सोचो कि इस हालत मे बडे होने पर वे लडके क्यो न बिगडेंगे। अपने लडको को ऐसी किताबें छूने भी मत दो। अच्छी से अच्छी उनको तालीम दो। पिनशिन और वजीफा या नौकरी का भरोसा छोडो। लडको को रोजगार सिखलाओ। विलायत भेजो। छोटेपन से मिहनत करने की आदत दिलाओ। सौ सौ महलो के लाड प्यार दुनिया से बेखबर रहने की राह मत दिखलाओ।

भाई हिंदुओ! तुम भी मतमातर का आग्रह छोडो। आपस मे प्रेम बढाओ। इस महामत्र का जप करो। जो हिंदुस्तान मे रहे, चाहे किसी रग किसी जाति का क्यो न हो, वह हिंदू। हिंदू की सहायता करो। बगाली, मरट्ठा, पजाबी, मदरासी, वैदिक, जैन, ब्राह्मो, मुसलमान सब एक का हाथ एक पकडो। कारीगरी जिसमे तुम्हारे यहाँ बढै, तुम्हारा रुपया तुम्हारे ही देश मे रहै वह करो। देखो, जैसे हजार धारा होकर गगा समुद्र मे मिली है, वैसे ही तुम्हारी लक्ष्मी हजार तरह से इगलैंड, फरासीस, जर्मनी, अमेरिका को जाती है। दीआसलाई ऐसी तुच्छ वस्तु भी वहीं से आती है। जरा अपने ही को देखो। तुम जिस मारकीन की धोती पहने हो वह अमेरिका की बिनी है। जिस लकिलाट का तुम्हारा अगा है वह इगलैंड का है। फरासीस की बनी कघी से तुम सिर झारते हो और वह जर्मनी की बनी चरबी की बत्ती तुम्हारे सामने बल रही है। यह तो वही मसल हुई कि एक बेफिकरे मँगनी का कपड़ा पहिनकर किसी महफिल मे गए। कपडे को पहिचान कर एक ने कहा, 'अजी यह अगा फलाने का है'। दूसरा बोला, 'अजी टोपी भी फलाने की है।' तो उन्होने हँसकर जवाब दिया कि, 'घर की तो मूछै ही मूछे हैं।' हाय अफसोस, तुम ऐसे हो गए कि अपने निज

के काम की वस्तु भी नहीं बना सकते। भाइयो, अब तो नींद से चौंको, अपने देश की सब प्रकार उन्नति करो। जिसमे तुम्हारी भलाई हो वैसी ही किताब पढो, वैसे ही खेल खेलो, वैसी ही बातचीत करो। परदेशी वस्तु और परदेशी भाषा का भरोसा मत रखो। अपने देश मे अपनी भाषा मे उन्नति करो।

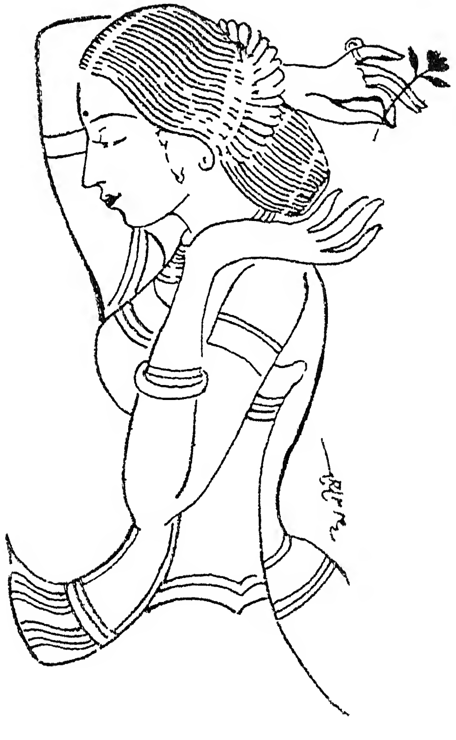

संगीत सार*

भारतवर्ष की सब विद्याओं के साथ यथाक्रम संगीत का भी लोप हो गया। यह गानशास्त्र हमारे यहाँ इतना आदरणीय है कि सामवेद के मंत्र मात्र गाए जाते हैं। हमारे यहाँ वरंच यह कहावत प्रसिद्ध है 'प्रथम नाद तब वेद'। अब भारतवर्ष का संपूर्ण संगीत केवल कजली ठुमरी पर आ रहा है। तथापि प्राचीन काल में यह शास्त्र कितना गंभीर था यह हम इस लेख में दिखलावेंगे।

गाना, बजाना, बताना और नाचना इस के समुच्चय को संगीत कहते हैं। प्राचीन काल में भरत, हनुमत्, कलनाथ और सोमेश्वर यह चार मत संगीत के थे। कोई कोई शारदा, शिव, हनुमत् और भरत यह चार मत कहते हैं। सात अध्यायों में यह शास्त्र बँटा है जैसे स्वर, राग, ताल, नृत्य, भाव, कोक और हस्त। सम्यक् प्रकार से जो गाया जाय उसे संगीत कहते हैं, धातु और मातु संयुक्त सब गीत होते हैं। नादात्मक धातु और अक्षरात्मक मातु कहलाते हैं। वह गीत यंत्र और गात्र विभाग से दो तरह के हैं। वीना वेनु इत्यादि से जो गाया जाय वह यंत्र और कंठ से जो गाया जाय वह गात्र गीत है। गीत निबद्ध और अनिबद्ध दो प्रकार के होते हैं, अक्षरों के नियम और गमक के नियम बिना अनिबद्ध और ताल मान गमक अक्षर रसादि के नियम सहित निबद्ध। शुद्ध, शालग और संकीर्ण के भेद से यह

* हरिश्चंद्र चंद्रिका सं० २ सं० ८-११ सन् १८७५ ई०।

गीत तीन प्रकार के है परतु यह भेद प्रबध हीके होते हैं। शुद्ध के एलादिक बीस भेद है, यथा एला, सांध्यभवा, पाट करण, पच, तालेश्वर, कैरात, स्मर, चक्रपाल, विजया, गद्य, त्रिभंगी, टेकौ, वर्णपुट, सर्गपुट, द्विपदिका, मुक्तावली, माहका, लब, दडक और वर्त्तनी। इन गीतो के छ अग है यथा पद, तान, बिरुद, ताल, पाट और स्वर। ध्रुवक, मडक प्रतिमडक, नि:सारक, वासक, प्रतिलाभ, एकतालिका, यति और झूमरी ये शालग के भेद है। चैत्र, मगलक, नगनिका, चर्चा, अतिनाट, उन्नवी, दोहा, बहुला, गुरुबला, गोता, गोवि, हेम्ना, कोपी, कारिका, त्रिपदिका और अधा ये सकीर्ण के भेद हैं। गात प्रबध मे अक्षरो के मात्राशुद्धि पुनरुक्ति इत्यादि दोष नहीं होते। गाना बनाना सब दो प्रकार का होता है, एक ध्वन्यात्मक दूसरा रागात्मक। रागात्मक चार प्रकार के होते हैं, यथा स्वर प्रधान अर्थात् स्वर के आग्रह से जिसमे ताल की मुख्यता न रहै, दूसरा उभय प्रधान जिसमे ताल बराबर रहे और स्वर भी सुदर हो, तीसरा शुद्धता प्रधान जिस मे राग के शुद्ध रूप रहने का आग्रह हो चाहै माधुर्य हो चाहै न हो, चौथा माधुर्य प्रधान जिस मे राग का शुद्ध रूप कुछ बिगडै तो बिगडै पर माधुर्य रहै।

स्वर—षड्ज, ऋषभ, गाधार, मध्यम, पंचम, धैवत और निषाद ये सात हैं। मयूर, गऊ, बकरी, क्रौंच, कोकिल, अश्व और हाथी इनके शब्द मे क्रम से पूर्वोक्त स्वर निकलते हैं। नासा, कठ, उर, तालु, जिह्वा और दत छ स्थान से जो उत्पन्न हो वह षड्ज, (ऋषीशगतौ) स्वर को गति नाभि से सिर तक पहुँचै इससे ऋषभ, गधवाही वायु की नलिकाओ मे वह स्वर पूर्ण हो इस से गाधार, फिर वह स्वर मध्य अर्थात् नाभि तक प्राप्त हो इस से मध्यम, (धयतिस्वरान् इति धैवत) मध्यम के आगे भी जो स्वरो को खींचै वह धैवत, पूर्वोक्त पॉचो सुरों को पूर्ण करै वा पचम स्थान मूर्द्धा तक पहुँचे वह पचम और (निषीदन्तिस्वरा अस्मिन् इति निषाद.) स्वरो का जिस मे विराम हो अर्थात् जिस से ऊँचा और कोई स्वर न हो वह निषाद। इन्हीं साता सुरो के प्रथमाक्षर * से स रि ग म प ध नि ये सात स्वर वर्ण नियत हुए।

* 'ष' 'ऋ' के उच्चारण की सुगमता के हेतु 'स' 'रि' माना है।

षड्ज, पचम और मध्यम मे चार, ऋषभ-धैवत मे तीन और गांधार-निषाद् मे दो श्रुति हैं। संपूर्ण स्वर सरिगमपधनि। खाडव निषाद बिना अर्थात् सरिगमपध और उडव ऋषभ और पचम बिना अर्थात् सगमधनि। नाटवसतादि सपूर्ण राग सातो सुर से, खाडव राग छ· सुर से और उड्व पॉच सुर से गाए जाते है। नाम के क्रम से रखने से इनका प्रस्तार होता है और नष्ट, उद्दिष्ट, मेरु, मर्कटी, पताका, सूची, सप्तसागर इत्यादि मे इसका विस्तार होता है।

राग—जैसे रास मे वशी के सात रध्रो से सात सुरो की उत्पत्ति मानते हैं वैसेही रास मे १६०८ गोपियो के गाने से सोलह सौ आठ तरह के राग हैं, जो एक एक मुख्य से दो सौ अट्ठाईस तरह के हाकर बने हैं। भरत और हनुमत् मत से छ राग भैरव, कौशिक (मालकोस), हिंदोल, दीपक, श्रा और सोमेश्वर, और कलानाथ के मत से छ राग श्री, बसत, पचम, भैरव, मेघ और नटनारायण। पूर्वमत मे प्रत्येक राग को पॉच रागिनी, पर मत मे छ रागिनी आठ पुत्र और एक एक पुत्र-भार्या। अन्य मत से मालव, मल्लार, श्री, वसत, हिल्लाल और कर्णाट ये छ राग हैं। मालव की रागिनी धानसी, मालसी, रामकीरी, सिधुडा, भैरवी और आसावरा। मल्लार की बेलावला, पूर्वा, कानडा, माधवी, कोडा और केदारिका। श्री की गाधारी, शुभगा, गोरी, कौमारिका, बेलवारी, और बैरागी। बसत की टोड़ी, पचमी, ललिता, पटमञ्जरी, गुज्जरी और बिभाषा। हिल्लोल की मायूरी, दीपिका, देशकारी, पाहिडा, बराडा और मारहारा। कर्णाट का नाटिका, भूपाली, रामकली, गडा, कामादा और कल्यानी। इन मे बराड़ी, मायूरी, कोड़ा, वेरागी, धानुर्षा, वेलावली और मारहारी मध्यान्ह को, गाधारी, दीपिका, कल्यानी, पूरबी, कान्हडा, शाखी, गौरी, केदारा, पाहड़ी, मालसी, नाटी, मायूरी, भूपाली और सिधुड़ा सॉझ को और बाकी सबेरे गाना। राग छओ तीसरे पहर से आधीरात तक। वर्षा मे मल्लार और बसतपचमी से रामनवमी तक बसत और वामन द्वादशी से विजयदशमी तक मालसी यह समय नियत है। बेलावली, गाधारी, ललिता, पटमजरी, वैरागा, मोरहाटी और पाहिडी (पहाड़ी) यह करुणा मे, पूरबी, कान्हड़ा, गौरी, रामकोरी, दापिका, आसावरी, विभाषा,

वडारी और गडा यह वीर मे, शेष शृगाररस मे गाना। वैसेही मालव, श्री, हिल्लोल और मल्लार शृ गार मे और वसत और कर्णाट वीररम मे गाना। यह पूर्वोक्त अन्य मत दक्षिण मे प्रचलित है इधर नहीं। कहते हैं कि शिव, शारद, नारद और गधर्व यह चार मत पृथक् है। इधर हनुमत् और भरत मत मिल के प्रचलित है। हनुमत् मत से प्रथम राग भैरव, उसका ध्यान महादेवजी की भाँति, उत्पत्ति शिवजी के मुख से, जाति उडव अर्थात् धनिसगम, यह पचस्वर, गृहधैवन, गाने का समय शरत्ऋतु मे प्रातः काल, भैरवी, बगाली, बरारी, मधुमाधवी और सिधवी यह पाँच रागनी, हर्ष, तिलक, सूहा, पूरिया, माधव, बलनेह, मधु और पचम ये आठ पुत्र। कलानाथ-मत से यह चतुर्थराग, इसकी भैरवी, गुर्जरी, भासा, विलावली, कर्णाटी और बड़हसा यह छ रागिनी, देवशाख, ललित, मालकोम, बिलावल, हर्ष, माधव, बलनेह, और मधु ये आठ पुत्र। सोमेश्वर-मत से भैरवी, गुनकली, देवा, गूजरि, बगाली और बहुली ये छ रागिनी और गाने का समय ग्रीषम। भरत-मत से ललिता, मधुमाधवी, बरारी, बाहाकली और भैरवी यह पाँच रागिनी, देवशाख, ललित, विलावल, हर्ष, माधव, बगाल, विभास और पचम ये आठ पुत्र, सूहा, विलावली, सारठी, कु भारी, अदाही, बहुलगूजरी, पटमजरी, मिरवी यह आठ पुत्र-भार्या, मतातर से भैरवी, बगाली, बैरारी मध्यमा, मधुमाधवी और सिधवी यह छ रागिनी, कोशक, अजयपाल, श्याम, खरताप, शुद्ध, और टोल यह छ पुत्र, अष्टी, रेवा, बहुला, सोहिनी, रामेली और सूहा यह छ पुत्रबधू। सब मतो से रागो का परम्पर भेद दिखाकर अब केवल प्रसिद्ध हनुमत् और भरत मत सब रागो का वर्णन करते हैं। मालकोस भरत मत से दूसरा राग है, विष्णुके कठ से निकला है, सपूर्ण जाति, स्वर सातो सरिगमपधनि, गृह षड्ज स्वर, शरद्ऋतु मे पिछली रात का गाने का समय, ध्यान युवा गौर पुरुष, इसकी रागिनी हनुमत् मत से यथा—टोड़ी, गुनकली, गौरी, खभावती और ककुभ, आठ पुत्र यथा मारू, मेवाड़, बडहस, प्रवल, चद्रक, नद, भ्रमर और खुखर। भरत मत से गौरी, दयावती देवदाली, खभावती और ककुभ रागिनी, और गांधार, शुद्ध, मकर, त्रिछन, महाना, शक्रवल्लभ, माली

और कामाद पुत्र, घनाश्री, मालश्री, जयश्री, सुधवारी, दुर्गा, गाधारी, भीमपलासी और कामोद, आठ पुत्र भार्या। हिंदोल भरत मत से द्वितीय और हनुमत से तृतीय राग है, उत्पत्ति ब्रह्मा के शरीर से, जाति उड़व, स्वर सगमपध पाँच, गृह षड्ज, गान समय बसत ऋतु दिन का प्रथम भाग, ध्यान स्वर्ण वर्ण हिंडोले पर भूलता हुआ। हनुमत् मत से रागिनी रामकली, देशाखी, ललिता, विलावली और पटमजरी, पुत्र चद्रबिब, मडल, शुभ, आनद, विनोद, गौर प्रधान और विभास। भरत मत से रागिनी रामकली, मालावती, आशावरी, देवारी और गुनकली, पुत्र बसत, मालव, मारू, कुशल, लकादहन, बखार बध, नागधुन और धवल, पुत्रबधू लीलावती, कैरवी, चैती, पारावती, पूरबी, तिरवरी, देवगिरि और सुरमती। दीपक हनुमत् मत से दूसरा और भरत मत से चतुर्थराग, सूर्य के नेत्र से उत्पत्ति, जाति सपूर्ण, स्वर सरिगमपधनि सात, गृह षड्ज, गाने का समय ग्रीष्म का मध्यान्ह, हाथी पर सवार वीरवेष। हनुमत मत से रागिनी इसकी देसो, कामोद, केदार, कान्हरा और कर्नाटी, पुत्र कुंतल, कमल, कलिग, चंपक, कुसुभ, राम, लहिल और हिम्मालि। श्री राग दोनो मतों से पाँचवाँ राग, जाति सपूर्ण, सात स्वर सरिगमपधनि, गृह षड्ज, समय हेमंत की सध्या, ध्यान सुदर सिहासनारूढ़ पुरुष। हनुमत् मत से रागिनी मालश्री, मारवा, घनाश्री, बसत और आशावरी, पुत्र सिघु, मालव, गौड़, गुनसागर, कुंभ, गभीर, सकर और विहाग, भरत मत से रागिनी सिधवी, काफी, देसी, विचित्रा और सोरठी, पुत्र श्री रमण, कोलाहल, सामत, सकर, राकेश्वर, खट, बड़हस और देसकार [मतांतर से हम्मीर और कल्याण भी], पुत्र-भार्य्या कुभा, सोहनी, शारदा, ध्याया, शशिरेखा, सरस्वती, क्षमा और बैया। मेघ दोनो मत से छठा राग, ध्यान श्यामरंग, शोणित-खड्ग-हस्त, जाति उड़व, पचस्वर यथा ध नि स रि ग, गृह धैवत, गान-समय वर्षा की रात्रि, रागिनी टक, मदपारी, गूजरी, भूपाली और देशी, पुत्र जालधर, सार, नटनारायन, शंकराभरण, कल्याण, गजधर, गाधार और सहान, भरत मत से पाँच रागिनी मलारी, मुलतानी, देसी, रतिवल्लभा और कावेरी, पुत्र यथा कलायर, वागेश्वरी, सहाना, पूरिया,

तिलक, कान्हरा, स्तभ, शंकराभरण, पुत्र-बधू यथा कर्नाटी, कादवी, ककल्लनाट, पहाडी, मॉझ, परज, नटभजी, शुद्ध नट। यह छ रागो का वर्णन हुआ। अब और बातो का भी वर्णन करते हैं।

मूर्च्छना वह वस्तु है जो खरज से ऋषभ तक पहुँचने मे जहाँ स्वर बदलैगा वहाँ लगै। यह तो हनुमत् मत से है। भरत मत से स्वरो के गान मे गले का कँपाना मूर्च्छना है। और मतो से ग्राम का सातवे भाग का नाम मूर्च्छना है। षड्ज ग्राम की मूर्च्छना, यथा ललिता, मध्यमा, चित्रा, राहिनी, मतगजा, सौवीरा। मध्यम ग्राम की मूर्च्छना, यथा पञ्चमी, मत्सरी, मधु, मध्या, शुद्धा, अन्ता, कलावती और तीव्रा। गाधार ग्राम की मूर्च्छना ७ यथा रौद्री, ब्राह्मी, वैष्णवी, स्वेदरी, सुरा, नादावती और विशाला। इन्हीं मूर्च्छनाओ का जहाँ शेष मे विस्तार होता है उन को तान कहते है। वे ४६ हैं। इन्हीं मे स्वरो के मेल से कूटतान होती है। इन मूर्च्छनाओ के जनक तीन ग्राम है—षड्ज, मध्यम, गधार। इन तीन ग्रामो मे पूर्व दो पृथ्वी पर और अत का स्वर्ग मे गाया जाता है।

श्रुति वही वस्तु है जो स्वरो का आरभ करती हैं और सूक्ष्मरूप से स्वरो मे व्याप्त रहती है। ये ४ षड्ज मे, ३ ऋषभ मे, २ गाधार मे, ४ मध्यम मे, ४ पंचम मे, ३ धैवत मे, २ निषाद मे, यही २२ श्रुति है। कोमल, अति कोमल, समान, तीव्र, तीव्रतर से रीति रागो मे यथा रीति सुर बरते जाते है और जहाँ सूक्ष्म और स्फुट स्वर लगते है वहाँ काकली कहलाती है। लोगो का चित्त रजन करते है इससे इन की राग सज्ञा है और जहाँ राग रागिनियो के ध्यान रूप क्रिया आदि लिखे हैं, उनका आशय यह है कि वैसे अवसर पर वे राग योग्य हाते हैं। जैसे भैरवी का ध्यान है कि स्वेत वस्त्रा सबेरे शिव पूजन करती है, तो जानो कि ऐसे ही सबेरे शिव-पूजन के अवसर मे इसका गाना उत्ताम है।

हमारे प्रबध के पढनेवालो को एक ही रागिनी का नाम बारबार कई रागो मे देखकर आश्चर्य्य होगा। इसमे हमारा दोष नहीं, यह संगीत शास्त्र के प्रचार की न्यूनता से ग्रथो मे गड़बड़ हो गई है। कोई अन्वेषण करने वाला हुआ नहीं, जो ग्रथकारो को मिला वा

उन्होने सुना लिख दिया । यह तो जब अपने गले वा हाथ से करता हो और ग्रथो को भी जानता हो वह एक वेर निर्णय कर के लिखै तब यह सब ठीक हो जाय ।

ताल । समय का सूक्ष्म से सूक्ष्म और बड़ा से बडा समान विभाग ताल है । विचार करके देखो तो छदो की प्रवृत्ति भी ताल ही से होगी । एक गिरह की लकीर खींचो तो इस बिदु से लकीर के उस बिदु तक उंगली ले जाने मे जो काल लगैगा वह ताल ठहरा और उसी गिरह भर के बाल बराबर मोटे जितने सूक्ष्म भाग है उनके प्रति भाग पर जो काल लगा वह भी ताल है । पर ऐसे सूक्ष्म और ऐसे गुरु जिन के बरताव मे काल का स्मरण न रहै वह कुछ काम नहीं आते । सिद्धांत यह कि गाने के अनुकूल समय का विभाग ही ताल है । नृत्य, गान वा वाद्य को नियमित काल से उठाना, नियमित काल पर समाप्त करना । उसी नियमित काल को अनेक समान भागो पर बॉट देने की जो क्रिया है वह ताल है । महादेव जी के नृत्य ताडव और पार्वती जी के नृत्य लास्य का प्रथमाक्षर लेकर ताल शब्द बना है, वा तल नाम हाथ की हथेली वा पद-तल इस का भाव ताल है; क्योंकि प्रायः ताल विन्यास हाथ वा पैर ही से होता है । तालो के बनाने को चार मात्रा की कल्पना है, एक नियमित काल की मात्रा होती है । अर्द्ध मात्रा की द्रुत, एक मात्रा की लघु, दो मात्रा की गुरु और तीन मात्रा की प्लुत सज्ञा है । चचत्पुट, चारुपुट इत्यादि साठ ताल के मुख्य और एकसौ एक गौण भेद सगीतदामोदर वाले शुभकर ने किये है । इन चार मात्राओ पर अगुल्यादि से सकेत करके ये ताल बनते हैं और इन्हीं मात्राओ को जहॉ बीच बीच मे छोड देते है और काल के समाप्त का चिन्ह बीच मे नहीं करते फिर दूसरे तीसरे इत्यादि पर चिन्ह करते है तो उस बीच मे छूटे हुए काल मे जहॉ नियमित मात्रा समाप्त होती है पर प्रगट नहीं की जाती उसे ख वा खाली कहते हैं । एक नियम काल कल्पित मात्रा के ताल समाप्त होने पर फिर से वही ताल आरभ करने को इन दोनो की मित्रतासूचक जो बीच का एक नियमित समान काल है वह भी ख अर्थात् खाली कहलाता है । चचत्पुट ताल मे दो गुरु एक लघु और एक प्लुत हैं, एक एक गुरु लघु और प्लुत चारु-

पुट मे है, ऐसे ही सब तालो का प्रस्तार है। जहाँ मात्रा के काल अनुसार तान की समाप्ति होती है उस को सम कहते हैं। इन चौसठ तालो के अतिरिक्त आठ अष्टताल, ग्यारह रुद्रताल, चार ब्रह्मताल और चौदह इंद्रताल है। रुद्रताल का प्रथम भेद वीरविक्रम यथा एक मात्रा एक शून्य ऐसी तीन आवृत्ति फिर दो ताल यह वीरविक्रम हुआ। ऐसे ही सब ताल यथा मात्रानुसार जानो। आज कल प्रसिद्धताल चौताला, तिताला, एकताला, आडा, रूपक, झपताल इत्यादि हैं।

संगीत के पूर्वोक्त तीन भेद अर्थात् स्वर, राग और ताल गले के अतिरिक्त वाद्यो से भी संपादित होते हैं, अतएव अब वाद्यो का वर्णन करते हैं। बाजो के चार भेद हैं, यथा तत, सुशिर, आनद्ध और घन। नए मत से अर्थात् कालानुसार दो भेद और कर सकते है, यथा समष्टि और स्वयवह। तार से जो बजै वह तत यथा वीणादिक। फूँकने से बजे वह सुशिर यथा वंशी इत्यादिक। चमडे से मढ़े हो वह आनद्ध यथा मृदगादिक। कासादिक से जो ताल सूचक हो वह घन यथा झाँझ आदिक। ये चारो वा तीन वा दो जिस मे मिले हो वह समष्टि यथा हारमोनियम आदि और जो ताली इत्यादि से बजै वह स्वयवह यथा अरगन आदि। ये सब वाद्य तीन भेद मे विभक्त हैं यथा स्वर वाही, ताल वाही और उभय वाही। तम्बूरादिक स्वर वाही, झाँझ इत्यादि ताल वाही, वीणादिक उभय वाही। इन चारो मे तत मे वीणा, सुशिर मे वशी, आनद्ध मे मृदग और घन मे ताल (झाँझ) मुख्य हैं। तत यथा अलाबुनी, ब्रह्मबीना, किन्नरी, लघुकिन्नरी, विपची, वल्लकी, ज्येष्ठा, चित्रा, ज्योतिष्मती, जया, हस्तिका, कुब्जिका, कूर्मी, शारगी, परिवादिनी, त्रिशरी, शतचद्री, नकुलौष्ठी, टसरी, उडम्बरी, पिनाकी, निबध, तानपुर, स्वरोद, स्वरमडल, स्वरसमुद्र, शुष्कल, रुद्र, गदावरण, हस्तक, विलास्य, मधुस्पन्दी और घोण इत्यादि। वीणा के तीन भेद हैं यथा वल्लकी, पचतत्री (विपची) और परिवादिनी। ध्वनिमाला, रंग-मल्ली, घोषवती, कठकूजिका और विद्युत् ये वीणा ही के नामांतर हैं। वीणा के सात भेद और है यथा नारद की महती, दीव की लम्बी, सरस्वती की कच्छपी, तुबरु की कलावती, विश्वावसु की बृहती और चाडालो की कडील वीना अथवा चाडाली (इसका प्रयोजन शव क्रिया

के समय पडता था)। वीणा के अग को कोलंबिक, बधन को उपनाह, दड को प्रवाल, बगल के काठ को ककुभ और प्रसेवक और वंशशाला, काकलिका, कूनिका, मेरु इत्यादि और वस्तुओ को कहते है। सुशिर यथा वशी, मुरली, वेणु (तीनो वशी के भेद), पारी, मधुरी, तित्तरी, शख, काहला, तोमडी, निषग, बुक्का, शृगिका, मुखचग, स्वरनाभि, आवर्त्ती, शृग, कापालिका, चर्म्मवश, स्वरनादी (सैनाई), वक्रगला, चर्म्मरेहा और गलस्वरा इत्यादि। वेणु रक्तचदन, खैर, चदन, स्वर्ण, चाँदी, तामा, लोहा और कठिन पाषाण का होता है परंतु बॉस का सब से उत्तम है। मतग मुनि के मत से बॉसही का वेणु होता है। दस अगुल का वेणु महानद, इस के ब्रह्मा देवता, ग्यारह अगुल का नद इसके रुद्र देवता, बारह अगुल का विजय इसके सूर्य्य देवता और चौदह अगुल का जय इसके विष्णु देवता। वशी की फूँक मे निबिडता, प्रौढता, सुस्वरता, शीघ्रता और मधुरता ये पॉच गुण है और सीत्कार-बाहुल्य, स्तब्ध, विस्वर, खडित, लघु और अमधुर ये छ दोष हैं। तेरह और सत्रह अगुल की वशी नहीं बनाना इसमे आचार्य्यो ने दोष माना है। कानी उँगली जा सकै इतना बीच का छेद (पोलापन) रहै, यह छेद आरपार रहै पर सिर की ओर किसी वस्तु से अवरुद्ध वा बधनांतर सयुक्त रहै, सिरे से एक अगुल वा दो अगुल छोड कर स्वर का छेद करना, फिर पॉच अगुल छोड़ कर सात सुर के सात छेद आधे आधे अगुल पर बेर के बीज के बराबर करै, दोनो ओर तार वा चर्म्मतार से वशी को बॉधे और बीच मे सिक्कक [छींके] स्वर की मधुर और श्रुति उत्पन्न करने को लगावै। अयुक्ति वद्धयुक्ति और युक्ति [अर्थात् छिद्रो को बंद करना खोलना और उससे श्रुति लय तान इत्यादि किंचित् बद करके निकालना] ये तीन अगुलिक्रिया है और अकम्पत्व और सुस्वरत्व ये दो अगुली के गुण हैं। गानेवालो को सहायता देना, स्थान देना, उन के दोष छिपाना और जिन स्वरो पर गला न पहुँचै वे स्वर निकालने ये चार इस मे लाभ है। भगवान को तीन वशी है यथा घर मे बजाने की १२ अगुल की मुरली सज्ञक, श्री गोपीजन को बुलाने की १८ अगुल की वशी संज्ञक और गउ बुलाने की एक हाथ की वेणु सज्ञक। इससे ज्ञात होता है, वेणु का प्रमाण एक हाथ तक है। आनद्ध मे मर्दल,

अर्द्ध मर्दल, मर्दल खड, ढलक, मुरज, ढक्का, पटह, बिबक, दर्पवाद्य, पवन, घन, रुञ्ज, कलास, विकलास, टाकली, अर्द्धटाकली, जिलाट, कलिका, गो, मुद्री, अलाबुज, लावज, त्रिवल्य, कठ कमठ, भेरी, हुडुक्क, कुडुक, झनस, मुरल, झल्ली, दुकुल्ली, दौंडिशान, डमरू, तु बुर, टमुकिडुडु, कुंडली, स्तक, अभिघट, रज, दुदुभी, दूटुकी, ददुर, उपाग, खजरीट और करचंग ये सब हैं। इन मे मर्दल (मृदग) श्रेष्ठ है। मर्दल खैर के काठ का अच्छा होता है। चमड़े की डोरी से मेरु सयुक्त कर के दोनो मुँह मढ़ा कर कसना। मढने के पीछे छ महीने तक न बजाना। काठ का दल आध अगुल मोटा हो और बाई पूरी दस वा बारह अगुल चौड़ी हो तथा दहिनी उस से एक वा आधी अगुल छोटी हो। बाई ओर तो पिसान की पूरी चिपकाना और दहिनी ओर खरली (खली) की पूरी लगा के सुखा देना। वह खरली—राख, गेरू, भात और केदुक (गालव, शायद भाषा मे केदुआ कहते है) की हो वा चिपीटक (चूड़ा ?) मे जीवनीसत्व (?) मिला कर लगाना। मट्टी का हो तो मृदंग कहलाता है। इस मे पाट, बिधि पाट, कूटपाट और खड पाट ये चार प्रकार के वर्ण है और यति, उडव, अवच्छेद, गजर, रूपक, ध्रुव, गलप, सारिगोनी, नाद, कथित, प्रहरन और वृदन ये बारह प्रबंध हैं। घन मे करताल, कास्यताल, कम्बिका, जयघटा, शुक्तिका, पटवाद्य, पट्टातौघ, घर्घर, ददा, झम्भा, मञ्जीर, कर्तरी, उकुर, काष्टताल, प्रस्तरताल, दतताल, जलतरग, तालतरग, पात्रतरग, त्रिकोणघंटा, डोलक इत्यादि हैं। घन के दो भेद हैं। अनुरक्त वह जिन मे गीतो का अनुगमन हो और विरक्त वह जो केवल ताल दे। लडाई मे वीरो का गर्जन और ये चार वाद्य बजते हैं, इससे लड़ाई की पचबाद्य सज्ञा है। यह वाद्यो का साधारण वर्णन हुआ। ऐसे ही अनगिनती वाद्य हैं, जो अब नाम मात्रावशेष हैं। उनके रग रूप की किसी को खबर नहीं।

सगीत का चौथा अग नृत्य है। ताल, मान, रस, भाव, हास, बिलास, बाद्यादि सयुक्त अग विक्षेप का नाम नृत्य, इस के दो भेद तालाश्रित नृत्य और भावाश्रित नृत्त। नृत्य मधुर हो तो लास्य और

उत्कट हो तो ताडव कहलाता है। ताडव के पेरली और बहुरूप ये दो भेद है। जिसमे अंग बहुत चलै पर अभिनय थोड़ा हो वह पेरली, इसी की देशी भी संज्ञा है। जहॉ अभिनय बहुत हो और रूपांतर-धारण इत्यादि क्रिया हो वह बहुरूप। लास्य के छुरित और यौवत दो भेद है। जहॉ नायिका-नायक रसपूर्वक भाव परस्पर दिखाते, चुबन इत्यादि करते नृत्य करै वह छुरित और जहॉ नटी वा नटी-वेषधारी सुदर पुरुष नाचै वह यौवत। हाथ-पैर-सिर-नेत्र का चलाना, मुड़ना, फिरना, भाव, कमर लचकाना, घुँघरू बजाना, गाना, वस्त्र उठाना और घूमना इन सब नृत्य के अगो मे जिसको अभ्यास न हो और जो सुंदर न हो वह न नाचै। अलागलाग, उरपतिरप, लगडॉट, लहाछेह, घट-बढ और सकोचन-प्रसारन ये नृत्य के काम है और शिव-नृत्य, मयूरनृत्य, रास नृत्य, कुक्कुटनृत्य, मण्डूकनृत्य, बलाकानृत्य, हंसनृत्य, कर्त्तकनृत्य, मण्डल नृत्य, युगल-नृत्य, एकहाझ नृत्य, आलातचक्र, कलानृत्य इत्यादि नृत्य के और अनेक भेद हैं।

सगीत का पॉचवा अग भाव है। निर्विकार चित्त मे प्रीतम वा प्रिया के संयोग वा वियोग के सुख वा दुःख के अनुभाव से जो प्रथम विकार हो वह भाव है। उसी का अनुकरण नृत्य मे करना भाव-क्रिया है। हॅसना, रोना, उदास होना, प्रसन्न होना, व्याकुल होना, छकना, मत्त होना, बुलाना, प्रणाम करना इत्यादि क्रिया को गीत अर्थ के अनुसार प्रत्यक्ष दिखाना भाव है। भाव के चार भेद है, यथा स्वर, नेत्र, मुखाकृत और अंग। स्वर से दुःख, सुख इत्यादि का बोध कराना स्वर भाव है। यह बहुत कठिन है क्योंकि गाने के स्वरो का व्यत्यय न होकर भाव प्रगट हो यह कठिन बात है। नेत्र ही से सब बातो का बोध हो और अग न चलै, वह नेत्र भाव है। यह भी कठिन है पर तादृश नहीं परतु इस मे नेत्र ही से हॅसी प्रगट करना वा अनायास आँसू बहाना कठिन काम हैं। मुख की चेष्टा ही से भाव प्रगट करना मुखाकृत भाव है, अर्थात् कोई अग न हिलै, भौं-नेत्र इत्यादि यथा स्थान स्थित रहैं और भाव चेष्टा से प्रगट हो, यह भी बहुत कठिन है। अग अर्थात् नेत्र हाथ इत्यादि अगो से भाव बताना अग भाव है। यह औरो की अपेक्षा सहज है। नृत्य वा गीत मे इन मे से एक

वा दो वा तीन वा चारो साथ ही किए जाते है। भाव रसज्ञता जितनी विशेष होगी उतने ही अच्छे होगे क्योकि अनुभवगम्य है।

सगीत का छठा भेद कोक अर्थात् नायिका, नायक, रस, रसाभास, आलबन, उद्दीपन, अलकार, समय, समाज इत्यादि का ज्ञान कोक है। यह साहित्य ग्रथो मे सविस्तर वर्णित है इस से यहाँ नहीं लिखते। इसका जानना सगीत वाले को अवश्य क्योकि भाव और नृत्य मे इस के बिना काम नहीं चलता।

सातवाँ भेद हस्त है। नाचने गाने वा बताने मे हाथ चलाना हस्त है। इसके दो भेद है, एक लयाश्रित दूसरा भावाश्रित। प्रायः यह नृत्य और भाव के अतर्गत ही सा है, इस से कोई विशेषता नहीं।

पूर्वोक्त सातो अग की समष्टि का नाम आदि सगीत-दामोदर, संगीत-कल्पतरु, सगीतसार इत्यादि ग्रथो से चुनकर और अपनी जानकारी के अनुसार भी ये बाते यहाँ लिखी गई हैं। इसको लिखकर प्रकाश करने मे हमारा कुछ प्रयोजन है। शास्त्र दो प्रकार के होते हैं- एक अदृष्टवाद् दूसरे दृष्टवाद्। अदृष्टवाद परलोक इत्यादि के मत मे मनुष्य को तर्क छोड कर केवल शास्त्र अवलबन करना चाहिए। दृष्टवाद् मे शास्त्रो के और बुद्धि के तथा अपने और दूसरो के अनुभव के अविरुद्ध जो बात हो वह माननी चाहिये। सगीत शास्त्र के और अपने मत के अविरुद्ध मनुष्य को बरतना उचित है। अब देखिए कि सगीत की क्या दशा हो रही है। कितनी रागिनियो का गाना कौन कहै किसी ने नाम भी नहीं सुना है। कितनी मत भेद से दो दो चार चार रागो की रागिनी है, यह क्या ? केवल अध परपरा। हम यह पूछते है कि प्रथम गाने मे चार मत होने ही का क्या प्रयोजन है ? एक भैरव राग सारा ससार एक स्वर-क्रम और रीति से गावै, यदि कहीं मतो के भेद से चारो भैरव मे भेद है तो उस मे एक को भैरव सिद्ध रक्खो बाकी या तो किसी दूसरे राग मे आप ही मिले निकलैंगे, यदि न मिले निकलै, उन का दूसरा नाम रक्खो। ऐसे ही हजारो बाते हैं, कोइ बँधा हुआ नियम नहीं। जितने इस विद्या के जानने वाले है, अपने अभिमान मे मत्त हैं। कोई ऐसा नियम नहीं कि जिस के अनुसार सब चलें। यही कारण है कि रागो के पत्थर पिघलने इत्यादि

प्रभाव लोप हो गए। हा ! किसी काल मे इस शास्त्र का ऐसा कठिन नियम था कि पुराणों मे बराबर लिखा है कि ब्रह्मा ने अमुक गधर्व को ताल से वा स्वर से चूकने से यह शाप दिया, शिवजी ने यह शाप दिया, इद्र ने यह शाप दिया, वही संगीत शास्त्र अब है कि कोई नियम नहीं। शास्त्र अखिल सब डूब गए। कुछ जैनो ने नाश किये, कुछ मुसल्मानो ने। मुसल्मानो मे अकबर और मुहम्मदशाह को इसका ध्यान भी हुआ तो बडे बडे गवैये मुसल्मान बनाए गए, जिस से हिदुओं का जी और भी रहा सहा टूट गया। चलिये सब विद्या मिट्टी मे मिली। इसमे मुख्य कारण यही हुआ कि केवल गुरुमुख-श्रुति पर यह विद्या रही। किसी ने कभी इस को ऐसी सुगम रीति पर न लिखा कि उसे देखकर वही काम दूसरे कर सके। धन्य ! राजा यतींद्रमोहन ठाकुर और शौरींद्रमोहन ठाकुर, जिन्हो ने इस काल मे इस विद्या की बड़ी ही वृद्धि की। श्रीक्षेत्रमोहन गोस्वामी ने इस विषय मे नियम भी बनाए है और बाबू कृष्णधन बानुर्जी ने एक सितार-शिक्षा भी छपवाई है। उधर के लोगो ने इस विषय मे बहुत कुछ किया है पर इधर अभी कुछ नहीं हुआ। हमारे काशी के बाबू महेशचद्र देव ने सितार, बीन और तानपूरा बनाने मे जैसे परिश्रम करके खूँटी, तूमा, इत्यादि मे नई उपयोगी बात निकाली है वैसेही और सब जानकार लोग मिलकर एक बेर इस लुप्त हुए शास्त्र का भली भॉति मथन करके इसकी एक सनियम उज्ज्वल परिपाटी बना डालै। नहीं तो यह शास्त्र कुछ दिन मे लोप हो जायगा। और हमारे हिंदुस्तानी अमीरो को चाहिए कि वारबधू के मुखचद्र के सुदरताही पर इस विद्या की इति श्री न करै, कुछ आगे भी बढे। हमने इसमे जो बाते लिखी है उनको सबके खडन मडन पूर्वक निर्णय करने के वास्ते यहाँ प्रकाश करते हैं। जो लोग जानकार है वे आनद से जो इसमे अयोग्य हो उसका खंडन करै, जो बात हमारे समझ मे न आई हो उसे समझावै और जो योग्य हो उसका अनुमोदन करै। इस विषय मे जो कोई पत्र भेजैगा उसे हम बड़े आनदपूर्वक प्रकाश करैंगे। आशा है कि हमारा परिश्रम व्यर्थ न जायगा और इस विद्या के रसिक लोग हमारी बिनती के अनुसार इसके उद्धार का उपाय शीघ्र ही करैंगे।

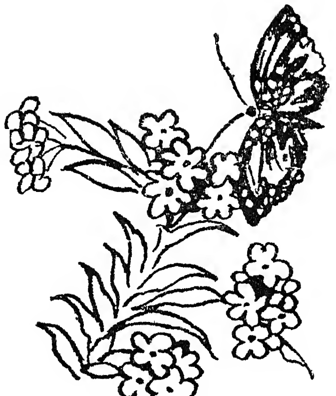

खुशी

हुम्बदिल ख्वाह आसूदगी का खुशी कह सकते है याने जो हमारे दिल की ख्वाहिश हो वह कोशिश करने से या इत्तिफाकियः बगैर कोशिश किये बर आवे तो हम का खुशी हासिल होती है। खुशी जिंदगी के फल को कहते है, अगर खुशी नहीं है तो जिन्दगी हराम है क्योंकि जहाँ तक ख्याल किया जाता है मालूम होता है कि इस दुनिया मे भी तमाम जिंदगी का नतीजा खुशी है।

इसी खुशी के हम तीन दर्जे कायम कर सकते है याने आराम, खुशी और लुत्फ—आराम वह हालत है जिस मे तकलीफ का एक हिस्सा या बिल्कुल तकलीफ रफअ हो जावे। खुशी वह हालत है जिस मे आराम का हिस्सा तकलीफ के मेक़दार से ज्याद: हो जाय। और लुत्फ वह हालत है जिसमें तकलीफ का नाम भी न बाकी रहे।

खुशी तीन किस्मो मे बॅटी है याने दीनी खुशी, दुनियावी खुशी और गलत खुशी।

दीनी खुशी अपने अपने मजाहब के उकदे के मुताबिक कुछ कुछ अलग है मगर नतीजा सबका एक ही है याने इलात दुनियवी से छुट कर हमेश: के वास्ते परमेश्वर की कुर्बत मयस्सर होनी हो असली खुशी है। हम लोगो मे परमेश्वर का नाम सत् चित आनद है और हम लोगो के नेक अकीदे के मुताबिक परमेश्वर का नाम रूप सब बिल्कुल लतीफ है

इसी से उस की याद मे लुत्फ हासिल होता है। उपनिषद मे एक जगह सब की खुशी को मुकाबिला किया है। वह लिखते है कि खुशी जिन्दगी का एक जुज़्व आजम है और दुनिया मे जितने मखलूकात हैं सब खुशी ही के वास्ते मखलूक हैं। इसी सब खिलकत मे जानदारो की बनावट और लियाकत के मुताबिक खुशी बँटी हुई है, कीडा सिर्फ इस बात से खुश होता है कि एक पत्ते पर से दूसरे पत्ते पर जाय, चिड़ियो की खुशी का दर्जा इस से कुछ बढा है याने इधर उधर परवाज करना बोलना वगैर.। इसी तरह अखीर मे आदमी की खुशी बनिस्बत और जानवरो के बहुत बढी चढी है। आदमियो मे भी बनिस्बत बेवकूफो के समझदारो की खुशी का दर्जः ऊंचा है। आदमियो की खुशी से देवताओ की खुशी बहुत ज्यादः है। इस लबी चौडी तकरीर का खुलासा उन्होने यह निकाला है कि सबसे ज्याद और लतीफ परमेश्वर है। उस मे कितना लुत्फ और खुशी है जो हम लोग नहीं जान सकते। इसी से अगर हम लोगो को खुशी और लुत्फ की तलाश है तो हम लोगो को उसी का भजन करना चाहिए।

इस के पहिले दुनियवी ख़ुशी का बयान किया जाय उस खुशी का बयान आप लोग सुन लीजिए जो अब हम हिंदुओ को खास कर साकिनाने बनारस को मयस्सर है। सब मे बडी खुशी बेफिकरी है।

"अजगर करै न चाकरी, पछी करै न काम।
दास मलूका यों कहे, कि सबके दाता राम" ॥

ऐसे ही खूब भाँग पीना, झन्नाटे इक्के पर सवार होकर बहरी ओर जाना, कभी २ कुछ गाना सुन लेना, बरसात के दिनो मे अगर फोलनी दाना मयस्सर हो तो क्या बात है। अगर इस खुशी का दर्जा बहुत बढ गया तो एक आध सैल हो गई कुछ खाना कुछ पीना कुछ नाच कुछ तमाशा हो गया और अगर यहा खुशी 'सिविलाइजड' की गई तो उसकी छोटी छोटी कुमेटियो या बर्फ की दावत से बदल दिया।

इस से मेरा यह मतलब नहीं है कि इन बातो मे बिल्कुल ख़ुशी नहीं है। बेशक तफरीह मे खुशी है मगर उन्हीं लोगो को जो हमेश: बडी खुशी की तलाश मे रहते हैं और जो दुनियवी खुशी के बयान मे हम दिखावेगे।

जिन की तबीयत तहकीकात की तरफ रुजुअ है और जो लोग हर शय और हर फेल का सबब और नतीजा दरयाफ्त करने की ख्वाहिश रखते हैं और यह भी जानना चाहते है कि इस दुनिया मे जिन्दगी की हालत मे इमान को किस चीज की ज्याद: जुरूरत है उन पर यह बात बखूबी रौशन होगी कि इस किस्म के खयालो को तहज़ीब के कायदो के पैरौ रह कर दलीलो से सुलझाने मे और बसबूत कामिल इस अम्र का तस्फिय' करने मे कैसे वक्त दरपेश होते है। चुनाचे जब हम खयाल करते हैं कि दुनिया मे हम को किस खास चीज की जरूरत और वह जरूरत लाबुदी क्यो है तो दिल मे मुखतलिफ वजूहात के साथ कई किस्म के खयाल पैदा होते हैं और मुखतलिफ हाजतो के रफअ करने की मुखतलिफ सूरते दरपेश आती हैं मगर इस मौकअ पर हम रूह की उस खास हाजत का जिक्र करेंगे जिसे जिन्दगी का वसूल और अक्ल का नतीजा कहना चाहिये याने खुशी। यह वह चीज है जिसके हासिल करने की कोशिश हम पर उतनी ही लाजिम है जितना उस के तहसील के तरीको के मालूम करने की भी जुरूरत है। इसी से इस लाजिम मल्जूम जरूरत की कैफियत को हम खुशी के नाम से पुकारते हैं। अब यह सवाल पैदा हुआ कि हमारी जिन्दगी के वसूल का यह लतीफ हिस्सा याने खुशी क्या चीज है और क्यो कर हासिल हो सकती है। इस सवाल का जवाब अकसर बडे बडे आलिमो ने अपने अपने तौर पर दिया है जिन सभी को इख्तिसार मे पहिले बयान कर के तब जो कुछ होगा हम अपनी राय जाहिर करेंगे। मशहूर फिलासफर पेली का कौल है कि खुशी दिल की वह हालत है कि जिस मे तअदाद राहत की रज से ज्यादा बढ जाय। खुशी की शुरूअ हालत ख्वाहिश के मुताबिक काम शुरूअ करना, बाद अज़आ और कामियाब होता है वह काम चाहे किसी किस्म का क्यो न हो मसलन् इल्म व हुनर सीखना, मुल्क फतह करना, बाग लगाना, गाना, खाना वगैर: वगैर: इसी खुशी के हासिल करने के वास्ते पहिले हम लोगो को चन्द दर चद तकलीफे इन कामों मे कामयाब होने को उठानी पड़ती हैं। मुमकिन है कि बगैर खुशी हासिल होने तकलीफ रफअ हो जाय मगर जब तकलीफ होगी तब

खुशी ख्वाह न ख्वाह जायः हो जायगी। हाँ बिल्कुल तकलीफ के दूर हो जाने को हम बेशक खुशी कह सकते हैं और इसी सबब से खुशी हासिल करने का गोया यह वसूल है कि पहिले की तकलीफ को कोशिश की तकलीफ से बदलना और कामियाबी की खुशी से उसी कोशिश की तकलीफ को कामयाबी की खुशी से जाय. कर देना। इसी से अगर खुशी की बतौर सरसरी के तहकीकात की जाय तो यह बात साबित होगी कि खुशी उस हालत का नाम है जिस मे रंज का हिस्सा राहत से दब गया है। केट साहब का कौल है कि खुशी हमेशः तकलीफ का नतीजा है और इस की मिसाल मकान बनाने से साफ जाहिर है। यह बात हम लोगो की आदत मे दाखिल है कि अपनी मौजूदः हालत का कभी नहीं पसद करते और हमेशः अपनी हालत असली से बढने की कोशिश करते है तकलीफ मौजूद को दबा कर खुशी के हिस्से को बढाया चाहते है। अगर हमारी खुशी हमेशः कयाम पजीर होती तो हम हालत मौजूद. से कहीं घटे हुए होते क्योकि हमलोग किसी किस्म की कोशिश न करते और जिस का नतीजा यह होता कि कोई नई बात न जाहिर होती इसी से गोया उमी कारसाज हकीकी ने दुनिया की तरक्की के वास्ते यह कायदा मुकर्रर किया है कि आदमी पहिल जैसी तकलीफ उठावे पीछे से आराम हो और इसी बुनयाद पर आदमी को खासियत भी ऐसी ही बनाई है। हाँ यह बात बेशक है कि किसी को कम तकलीफ है और किसी को ज्याद. और कोई उसे थोड़ी कोशिश मे हासिल करता है और किसी को अपनी उम्र का एक बडा हिस्सा उस के हासिल करने मे सर्फ करना होता है। इसी को तफरीह हम लोग कहते है कि यह आदमी खुश है और यह ज्यादः खुश है। इसी सबूतो से कहा जाता है कि खुशी खुद कोई चीज नहीं है बल्कि तकलीफ के उलटे अक्स का नाम खुशी और यही सबब है कि रंज और राहत लाजिम मलजूम है। बल्कि इसी से हमेशः यह एक मुअइअन कायदा है कि कोई काम बगैर तकलीफ के शुरूअ नहीं होता।

सर विलियम हमिल्टन खुशी की तारीफ मे फरमाते है कि खुशी खुद कोई चीज नहीं है बल्कि आदमी की खासियत या आदत

को जब कोई रुकावट नहीं होती तो यही हालत ख़ुशी की कहलाती है।

इन आलिमो की राय पर बहस न कर के अब हम ख़ुशी के लफ्ज को भी कुछ बयान किया चाहते है। खुशी एक नाम है जो आराम को याने ख्वाहिशो के पूरे होने की और तकलीफो की हालत को कहते है और इस ऊपर के लफ्जी बयान से भी साबित हुआ कि खुशी एक ऐसा लफ्ज है जो हमेशा तकलीफ के मुकाबले मे मुस्तअमल होता है।

बहुत लोगो का ख्याल है कि खुशी से इल्म से कुछ इलाका नहीं है बल्कि वह एक खसलत जबली है जो इनसान और हैवान दोनो मे बराबर होती है। मगर यह बात नहीं है क्योंकि इस किस्म की हैवानी खुशी से आलिम लोगो की खुशी से क्या फर्क है यह जिनको कुछ भी शऊर है बखूबी जान सकते है और इसीसे कहा जा सकता है कि मिस्ल हैवानो के जो खुशी है वह झूठी खुशी है और जो खुशी के दर्जः से बढी हुई है वह बडी खुशी है बल्कि खुदापरस्त लोग इसी वास्ते इन दोना खुशियो से बढ़ कर के एक खुशी ऐसी मानते है जिसकी कोशिश मे दुनियवी खुशियो को भी तर्क कर देना होता है।

यह हर शख्स जानता है कि बार बार इस्तअमाल करने से कैसी भी खुशी क्यो न हो जायः हो जायगी बल्कि ऐसी हालत मे उसी खुशी का नाम बदल कर आदत है। यही सबब है कि अय्याश लोग अकसर गमगीन देखे गये है क्योंकि पहिले जिस खशी को उन्होने बडी कोशिश से हासिल किया था अब वह उनका रोजमर्रः हो गया और हवस कम न हुई पस जब वह रोज अपनी औकात, ताकत इज्जत और रुपया सर्फ करते है मगर हज नहीं हासिल होता तो गमगीन होते है। इसी किस्म से खाना, पीना, नाच, रग वगैरह की खुशी भी जल्द जायः हो जाती है मगर हॉ शिकार वगैरः की खुशी का दर्जः कुछ इस से बडा है और इसी तरह वह खुशी जो सनअत सीखने से हासिल होती है मसलन रगराजी, इल्म मुसीकी, कारीगरी वगैरः ऊपर बयान की हुई खुशियो से ज्याद. देरपा है क्योंकि गुजाइश के सबब से यह खुशी जल्दी जायः नहीं होती और इसी से जल्द

हालत पर खुदा का शुक्र किया। इस कहने से मेरा यह मतलब नहीं है कि आदमी अपने हौसलो को पस्त करदे और कहे पादशाह होना न चाहिए बल्कि हमेशः अपने हौसले को बढा कर कामयाब होता रहे मगर बाद कामयाबी के अपनी हालत ऐसी न परेशान रक्खे जिस से अपनी कोशिशो का सुख भोगने के बदले उसे रात दिन दुख उठाना पड़े हमेशः हुकुमा जब अमीरो से उन के तरद्दुदात की शिकायत करते है तो उन का रह्म की नज़र से देखते हैं मगर वे उमरा अपने से छोटे दर्जे वालो का कभी रह्म की नज्र से नहीं देखते बल्कि हिकारत की। इस का यही सबब है कि उलमा अपनी कोशिश से कामयाब होकर खुशी के दर्जे को पहुँच गये है और किसी किस्म के तरद्दुद बाकी न रहने से वह दूसरो की मदद मे अपने औकात सर्फ कर सकते है। बरखिलाफ़ इस के उमरा अपनी कोशिशो की नाकामयाबी से दूसरो पर हमेशः हसद किया करते हैं। मतवे का खासफायदा ऊँचा हौसला और बड़ी बड़ी खुशियो मे शामिल रहने का खयाल है और यह वह खुशियाँ है जो हर हालत मे एक सूं रहती है। और इन .खुशियो का नतीजा यह होता है कि आसूदः लोग अपने कौम वतन और दुनिया की तरक्की की तदाबीर के हौसले का मौकअ़ पाते है। बरखिलाफ इस के हैवानी खुशी के जोयाँ उमरा आपस मे दुश्मनी बढाये, हसद फैलाये बग़ैर हज जिदगी उठाये अपनी ज़िंदगी मुफ्त बरबाद करते है।

मेरे ऊपर के बयान से आप लोगो पर जाहिर हो गया होगा कि खुशी इमारत पर मुस्तसना नहीं बल्कि एक खुदादाद चीज है। अब मै बयान करता हूँ कि खुशी किस चीज़ मे है। अब इस के हासिल करने की और बादहू उस के कायम रखने की तदबीर सोचनी .ज़ुरूर हुई। .खुशी हासिल करने का तरीका जानने के लिये सब के पहिले लियाकत की ज़ुरूरत है। बहुत सी ऐसी हालते हैं जिन मे खुशी हासिल करने की कोशिश की जाती है मगर उस का नतीजा उलटा होता है और अकसर रज के मौको मे यकायक .खुशी हासिल हो जाती है इसी से .खुशी हासिल करने की खास तदबीरो का बयान करना मुश्किल है। सिर्फ अपनी हाजतो को पूरा करना

.ख़ुशी नहीं कही जा सकती क्योंकि बहुत सी हाजतें ऐसी होती हैं जो महज़ ग़लत वसूलों पर कायम होती हैं। अकसर उलमा का कौल है कि ख़ुशी मुहब्बत में है। दुनिया में ख़ुदा ने मुहब्बत के सज़ावार भाई, जोरू, लड़के, रिश्तःदार और दोस्त वग़ैरः बहुतेरे बनाए हैं। अक्सर इन लोगों की अदममौजूदगी में ख़ुशी न हासिल होने से लोग फ़कीर हो जाते हैं या दुनिया में रहते हैं तो परेशान रहते हैं। चंद लोग दूसरों की हाजत रफ़अ करने को .ख़ुशी कहते हैं क्योंकि दूसरे लोग ख़ुशी हासिल करने को जो कोशिश करते हैं उन को अपनी कोशिश में कामयाब बनाकर .ख़ुश कर देना गोया उन की ख़ुशी में शरीक होना है।

बाज उलमा ख़ुशी हासिल करने की कोशिश ही को ख़ुशी कहते हैं मगर इस में मुश्किल यह है कि पहिले से उस कोशिश के अख़ीर नतीजे की कामयाबी को बख़ूबी जाँच कर लेना चाहिए। दूसरे जब तक कि उस काम का अंजाम बख़ूबी न हो जाय बराबर मुसतअदी की भी ज़रूरत है। पेली का कौल है कि ख़ुशी जितनी अपने इरादों की मज़बूती में है उतनी सिर्फ़ ख़यालात और कोशिश में नहीं। इस कौल की तसदीक़ बहुत साफ़ है। जो अपने इरादों पर मज़बूत है वह हमेशः अपनी कामयाबी को अपनी आँखों के सामने देखता है और अगर ऐसा शख़्स अपना काम पूरा किये हुए भी मर जाय तो उस को वही ख़ुशी हासिल रहेगी जो कि कामयाबी पर हो सकती थी। वही मज़बूत की ख़ुशी हासिल करने के वास्ते काम के पीछे लगे रहना निहायत ज़रूर है ख़्वाह वह अपने फ़ायदे के वास्ते हो या आम फ़ायदे के वास्ते हो। अक़्लमंद लोग इसी काम में लगे रहने को दिल्लगी कहते हैं और यह वह दिल्लगी है जो आदमियों को अपने इरादों पर कामयाब करके .ख़ुशी ही नहीं बख़्शती है बल्कि रूहानी व जिस्मानी सिहत को भी कायम रखती है।

इन में ख़ुशी के चंद वसीले ऐसे हैं जिन का असर आदमी अपनी मौत के बाद भी छोड़ जा सकता है मसलन् मुल्की . की जमाअतों का कायम करना, स्कूल और शफ़ाख़ानों की बुनियाद डालना वग़ैरः वग़ैरः।

ज़ाती फ़ायदों की ख़ुशी भी बाज़ हालत मे आदमी के मरने के बाद भी कायम रह सकती है मसलन् अपने खान्दान के खुद व नोश की सूरत बेखलिश कायम कर जाना। किसी काम की तरफ मजबूती से दिल लगाने मे एक फायदा यह भी है कि बीच मे छोटी छोटी तकलीफे जो इत्तिफाक से सरजद होती है उन को आदमी अपनी होनहार .ख़ुशी की धुन मे बिल्कुल खयाल मे नहीं लाता।

ख़ुशी की एक उमद. हालत यह भी है कि अपनी बुरी आदत को बदल देना। वह आदमी कैसा खुश होगा जब वह अपने को बुरी आदत से छूटा हुआ देखेगा।

बहुत से लोग गैर मामूली ख्वाहिशो के पूरे होने को ख़ुशी कहते है जैसा कि जो शखस हमेश. तनहाई मे रहता है उसे अगर दोस्तो की सुहबत नसीब होती है तो उस को गनीमत जानता है। मगर कोशिश कुनिन्दः को ऐसे मौकअ मे बनिस्बत सुस्त लोगों के ऐसे हालत मे भी जयादः ख़ुशी हासिल होती है। मसलन् जो फिलासफी की बडी बडी किताबो के पढ़ने मे हमेशः अपना वक्त सर्फ करता है उसे अगर छोटी मोटी कोई किस्से की किताब मिल जाय तो वह बडी ख़ुशी से पढ़ेगा बरखिलाफ इस के जो हमेश. किस्से कहानियो से जी बहलाता है उस को अगर फिलासफी की किताब दे दी जाय तो उस का जी उलझेगा और वह उसे फेक देगा।

गैर मामूली ख़ुशी अमीरों पर भी असर करती है। मसलन् किसी अमीर की सालाना आमदनी हजार रुपया है मगर किसी साल इत्तिफाक से दस या बारह आ जावे तो, उस को ख़ुशी हासिल होगी। यही मिसाल इस बात की दलील है कि अगरचे दौलतमदी ख़ुशी की मूजिब है मगर उस मे भी तरक्की ज्याद. .ख़ुशी देती है।

ख़ुशी का एक बड़ा भारी सबब तदुरुस्ती भी है और यह तदुरुस्ती तबही दुरुस्त रह सकती है जब आदमी रूहानी या जिस्मानी तकलीफ से बच सकता है। ख़ुशी है वह जिस का बदन बलगम या रीह या चरबी से नहीं तैयार है। बल्कि किसी किस्म की तकलीफ न होने की आसूदगी से तैयार है। मगर यह खयाल ज़ुरूर है कि यह तदुरुस्ती

इस किस्म की बेफिक्री से न पैदा हो जिस से कि तमाम काशिश और हौसले पस्त हो जाय जैसा कि हमारे हजरात बनारस की खुशी है।

हम पहिले कह चुके है कि सच्ची खुशी के लिये लियाकत की जुरूरत है मगर इस लियाकत के साथ दुनियवी तहजीब और दीनी ईमानदारी की भी निहायत जुरूरत है। अक्सर लोगो को बहुत सी ऐसी बातो मे खुशी हासिल होती है जो दर हकीकत ईमान, तहजीब, आकबत, आबरू, बल्कि जान, माल और जिस्मी आराम को भी गारत करनेवाले होते है। तो क्या हम ऐसी खुशी को भी अस्ली खुशी कहेंगे? मसलन् मूजी को ईजारसानी मे, बदकार को बदी मे, किमार बाज को जुए मे और ऐसे ही बहुत सी बातो मे खुशी मान ली जाती है जो हिकमतन, शरहन् और यकीनन, हर सूरत से सिवाय जरर के फायदा नही पहुँचाती। इस सूरत मे तो बल्कि यह सोचना लाजिम आता है कि ऐसी खुशियो के नजदीक भी न जाय क्योकि जब कोई शय तुम्हारी अक्ल पर गालिब आ जाय तो तुम नशे के आलम की तरह, अपने हवास पर काबू न रख कर झूठी खुशी की तलाश मे जाहिरी लज्जत के धोखे से जहर का प्याला पी जाओगे। हकीकी खुशी वही है जिसका अजाम व आगाज दोनो खुश है। अस्ली खुशी सुफहए दिल से रज का नाम यककलम हटा देती है और तमाम जिस्म को, हवा से खमुसः को और जान को ऐसी राहत देती है कि उस हालत महवीयत मे उसी सामाने खुशी की निस्बत हर लहजः मे दिल नई नई उलफते और नए नए शौक पैदा करता है। इस कैफियत का ठीक ठीक जाहिर करना जबान की कूव्वत से बाहर है इस से तजरिबःकार लोगो के कयास ही पर छोड़ दिया जाता है।

पेली ने लिखा है कि खुशी तहजीब वाकियः जमाअतो की मुतफर्रिक लोगो मे करीब करीब वराबर हिस्सो मे बंटी है और इसी से बुराई करने वाला हमेशः बमुकाबलः ईमानदार दुनियवी खुशी से भी महरूम-रहता है, खुशी से गम को अलाहिदः करने के लिये एक खास किस्म की लियाकत की जुरूरत होती है जो हर शख्स मे नहीं पाई जाती इसी से खालिस खुशी का लुत्फ हर शख्स को नसीब नहीं होता। दुनिया मे तकलीफ भी जब अपनी हद को पहुँचती है खुशी का मजा चखाती

है। जब आदमी पर हद से ज्यादः जुल्म होता है या हालत सकरात पहुँचती है तब नई खुशी से बदल जाता है और यही सबब है कि आदमी जितना छोटी छोटी तकलीफो से तग आता है उतना बडी तकलीफ से नहीं घबराता। सच्चे आशिको की हिजरत की तकलीफ जब हद से ज्यादः बढ जाती है तब फिराक मे वस्ल से ज्यादः मजा मिलता है। सुई गड़ने मे जो तकलीफ होती है वह बल्कि नहीं बरदाश्त होती मगर जग मे मुतवातिर चोटो को आदमी बेतकलीफ बरदाश्त कर सकता है। अफरीकः के मशहूर सैयाह डाक्टर ल्यूगशटन (लिविंगस्टोन) ने लिखा है जब वह बेर के जगल मे फंस गए थे तो उनको मायूसी के साथ एक किस्म की खुशी हुई थी। इसी तरह अक्सर मौत शदीद के वक्त लोग खुश पाये गये है। इसका सबब यह है कि जब आदमी की हालत बिल्कुल ना उमैदी को पहुँचाती है तो उस तकलीफ का खौफ का बाकी नहीं रहता मसलन् जब तक आदमी को जीस्त की उमैद है, उस को मौत का खौफ रहेगा मगर जिस वक्त कि जीस्त की उम्मैद बिल्कुल मुनकतअ हो गई फिर उस को किस बात का खौफ रहा। यही सबब है कि हिंदू शास्त्रकारो ने खौफ और रज की अस्ली हालत को भी एक रस माना है और जाहिर है कि ट्राजिडी यानी ऐसे तमाशे जिन का आखिर हिस्सा बिल्कुल रज से भरा हो देखने मे एक अजीब किस्म का लुत्फ देती है बल्कि ट्राजिडी मे जैसी उम्दा किताबे लिखी गई हैं वैसी कामेडी मे नहीं। जिसतरह रज की आखरी हालत खुशी से बदल जाती है उसी तरह खुशी की भी आखरी हालत रज से बदल जाती है और इसी से ज्यादः खुशी के वक्त लोग शिद्दत से रोते हुए पाये गये हैं। खुलासा कलाम यह कि इस किस्म की बहुत सी खुशियाँ दुनिया में हैं जिन को हम खालिस खुशी नहीं कह सकते।

अब हम इस बात पर गौर किया चाहते है कि वह अस्ली खुशी हिदुओ को क्यो नहीं हासिल होती क्योकि जब हम इसी खुशी को अपनी पूरी बलदी की हद पर हर सूरत से कामिल देखना चाहते हैं तो हमेशः गैर कौमो मे पाते हैं। इस की जाहिर वजूहात जो मालूम होती है उन मे सब से पहिला सबब हिदुओ के दीनी व दुनियवी तरीको का आपस मे मिल जाना और तनज्जुली के जमाने के कम बेश

फाजिलो का इहकाम शरश्री में दखल दर माकूलात करना है जिन के कलाम पर आपने अपनी नातजुरिबःकारी से पूरा अमल कर लिया है। इन फुजला ने अपनी कम हिम्मती की वजह से ऐसे कायदे जारी किये जिन से आखिरकार हम लोगों की यह तर्स के लायक हालत पहुँची कि हम लोग उस खुशी को जो फी जमाना गैर कौमों को हासिल है कभी ख्वाबोखयाल मे भी नहीं ला सकते। इन फिलासफरो के फिलासफी का इत्र निकाल कर जिन बातो को हमारे आराम के लिये जुरूरी बल्कि हमारी नजात का मूजिब ठहराया है वे अगर इस नजर से देखे जावें जिस से हम खुशी को अब अस्ली हालत पर गैर कौमो मे बतलाते हैं तो साफ जाहिर होगा कि इन्हीं की तअलीम का यह फल है कि परमेश्वर ने इन बेचारे हिंदुओ को इस सच्ची खुशी से महरूम रख कर इन के हिस्से से अपना एक दूसरी प्यारी खिलकत की गोद भरदी है जहाँ कि हर एक की उम्र का जाम खुशी से लबालब नजर आता है, इन कदीम जमाने के फिलासफरो के उसूल की बहस बहुत तूल है और इसी तरह उनको सिलसिलेवार दलीलो से रद करने के लिये भी बड़ी गुंजाइश चाहिये इस लिये यहाँ सिर्फ उन पुराने खयालो का खुलासा दिखलाया जाता है कि किस तरीके पर उन्हो ने अपनी उस अनोखी खुशी की बुनियाद कायम की है और वह इस तरक्कीयाफ्त' जमाने के आकिलो के कौलो फेअल के नजदीक कितनी हेच है।

इन उलमा की खुशी का पहिला तरीका सन्तोष यानी कनाअत है। उन्हो ने अपनी पेचीदः इबारत के बेमानी मजमून मे जिस का हर फिकरा अब हदीस गिना जाता है आखीर को यह साबित किया है कि खुशी व रंज दोनों गलत और वहम है यानी रंज और राहत से अलहदः वह हालत जिस मे अक्ल, खयाल, हवास और हरकत (शायद सकते की बीमारी की हालत) सब सलफ हो जावे वही परमानंद है और वही खुशी का असलुल्वसूल और लुब्बे लबाब है। आदमी को इस हालत तक पहुँचने के लिये उन लोगो ने चंद कायदे भी ईजाद फरमाये है जिन मे अव्वल उन के कलाम पर बिला हुज्जत यकीन लाना हर्गिज हर्गिज दलील और अक्ल को दखल न देना। दूसरे उसी गारतगर सन्तोष को इख्त्यार करना और ख्वाहिश व हाजतो को दिल मे

पैदा न होने देना। तीसरे सब कुछ बरदाश्त कर लेना और रंज और राहत को एक अम्रे तकदीरी समझ कर दमबखुद रहना। चौथे नेक और बद मे तमीज न करना और भला बुरा सब को यकसाँ समझना। पाँचवे (मुआज अल्लाह) खालिक और मखलूक न समझना।

जाहिर है कि पहिले कायदे पर अमल करने ही से अक्ल पर जवाल आया और फायदः व नुकसान का खयाल जाता रहा। उन्हीं आँखोको अपने हाथसे फोड़कर बहकते बहकते उस अंधे कुए मे जा पड़े जिस मे परमेश्वर ही हाथ पकड कर निकाले तो निकलना मुमकिन है। दूसरे क़ायदे को इख्तियार करते ही नामर्दी छा गई काहिली बढने से हिम्मत बहादुरी और हौसले का नाम ही न बाकी रहा फौरन बेबस हो कर ज़माने के हेरफेर के मुताबिक हमेशः के वास्ते अपने मुल्क को गैर कौम की नज़्र कर आप परमानन्द की मूरत बन बैठे। ग़ौर का मुकाम है कि जब ख्वाहिश और हाजत न होगी तब आदमी को किसी शय से तअल्लुक बाकी न रहेगा जिस के हासिल होने या कायम रहने को हम खुशीका मूजिब कहे। आसूदगीको एक मौकअ तक कौन न पसद करेगा क्योकि बकद्र ख्वाहिश उस के हासिल होने पर जब तक हम ऐसी नई ख्वाहिश न पैदा करे जिस के पूरे करने का ज़रिय पहिले से सोच लिया हो यह ज़ुरूर है कि हम पहिली ख्वाहिश पर कामयाब होने का मज़ा हासिल करने के लिये आसूदगी इख्तियार करे। सिवाय इसके आसूदगी से यह मुराद नहीं है कि हमारी भूख जाती रहे और हमको हर रोज़ ताजा खाना खाने की जरूरत न बाकी रहे। जब हम खाना खा चुकते हैं बेशक आसूदगी हासिल करते हैं मगर फिर मेहनत वगैरः से भूख बढ़ा कर खाने का नया शौक पैदा करते हैं। उसी तरह जितना हमारा इल्म बढ़ता जाता है और खुशी के नये नये सामान नज़र आते हैं उतना ही हमारी आदमीयत पर फर्ज होता है कि अगर हम अपनी हालत का बेहतर होना न पसन्द करे तौ भी अपनी जमाअत की हाजत रफअ करने के खयाल से उस सामान के मुहैया करने की तदबीर से बाज न आवे। बल्कि जिस हालत मे किसी ऐसी आफत नागहानी से हम पर कोई सदमा ऐसा सख्त हायल होता है कि जिस से दिल पस्त और बे हौसलः हो जाता है और हरगिज़ किसी ख्वाहिश के पैदा करने

या उसके बढाने मे खुशी नहीं दिखलाती उस वक्त भी अगर इस कबख्त सतोष का गुजर न हुआ होय तो दूसरो को खुशी पहुँचाने से इसान खुशी हासिल कर सकता है। क्योकि हिकमत से यह साबित है कि खुशी का बदला खुशी और रज का बदला रज मिलता है। यह बात जाहिर है कि तरक्की और कनाअत से जिद है और जब तरक्की मौकूफ हुई तो जमाना जुरूर तनज्जुली पहुँचाएगा।

जब हम देखते है कि हमारे हर चहार तरफ हर कौम के लोग बाजी लगा लगा कर और जान लड़ा कर दौड रहे है और अपनी २ मुस्तअदी और कूवत के जोर से तरक्की के बुकचे लूट कर मालामाल हुए जाते है तब किस तरह दिल कुबूल कर सकता है कि हम कनाअत के टुकडे तोड कर पेट भरे और मुहताजी के जहन्नुम को खुशी से कुबूल करे। अलबत्तः लाचारो की हालत में सब्र उस वक्त तक काम दे सकता है कि जब तक हम अपनी हालत बदलने की दूसरी सूरत न पैदा कर सके। तीसरे कायदे की निसबत यह कहना है कि सख्ती के बरदाश्त करने की आदत उसी कनाअत से दिल बुझे जाने और पित्ता मर जाने के बाद खुद बखुद पैदा होती है, उस वक्त गैरत जो इसान को हैवान से अलहद करनेवाली चीज़ है गुम हो जाती है और जब यह इसान का उमदः जेवर खो गया तो खुशी का सिर्फ नाम याद रह सकता है। बरदाश्त सिर्फ दुश्मन की ताकत घटा कर हिकमते अमली से उस पर ग़ालिब आने का मौकअ पाने के लिये है न कि हमेशः के लिए गुलामी इख्तियार करने के। चौथे कायदे की तअलीम मे खुशी और रज का फर्क ही न बाकी रक्खा कि एक के हासिल करने और दूसरे के रफअ करने की जुरूरत होती। उस अनूठे कारीगर ने अपने कारीगरी की बारीकी जानने के लिये जो कुछ हमे तमीज़ बख्शा है उस से हम दम पर दम नए तिलस्मात का भेद जानते जाते हैं जिस से हमारे दिल का अँधेरा खुद बखुद दूर होता है और हमारी आँखो के सामने वह बाते दिखलाई पड़ती है जिस के बगैर हम किसी चीज़ की पूरी पूरी कद्र नहीं कर सकते। जाहिर है कि जब हम कद्र ही नहीं कर सकते तो हमे न उस के हासिल होने की ख्वाहिश होगी न हासिल होने पर खुशी होगी। हर शख्स इसकी वजह खुद दरयाफ्त कर सकता है कि

तमीज़ के साथ खुशी की तअदाद बढती हैं बल्कि मुख्तलिफ हुकमा इस बात पर बहस करते है और खुशी जानकारी है या अनजानपन। एक का कौल है कि इल्म ही खुशी का मूजिब है क्योंकि अपनी ख्वाहिश और उस के पूरे होने की कद्र आदमी इल्म से करता है बरखिलाफ इस के दूसरा आलिम कहता है कि जानकारी ही से ख्वाहिश बढती है और आदमी अपनी हशमत मौजूदः का कम समझता है। खैर इस बहस का जवाब और मौकअ पर मौजूद है। इस वक्त इस कहने से मतलब यही है कि हर हालत मे बे तमीज को खुशी की कद्र नहीं मालूम हो सकती क्योंकि वह अपनी गलती नहीं पहचान सकता और इसी से वाकिफकारी के फायदो को नहीं उठाता जिसपर कि खुशी का घटना बढ़ना मौजूद है।

पॉचवे कायदे की निसबत हम इतना ही कह सकते है कि इस शैतानी खयाल से सख्त मुसीबत, इतिहा की आजिजी और मायूसी की हालत में जब कि किसी सूरत मे तस्कीन नहीं होती और खुशी का नाम भी जबान से नहीं निकल सकता उस वक्त बदो के वास्ते एक आखरी दरवाजा फर्य्याद का जो खुला था वह भी बन्द कर दिया गया। तमाम उम्र देखा कि ये कि कभी दो मुख्तलिफ जुज एक नहीं हुए मगर इन दिल्लगीबाजो ने यकीन करा ही दिया कि कोहार और खिलौना एकही चोज है पर और के तजरिब. और आदमी की बनावट की खासियत को बखूबी मालूम करने से मालूम होता है कि हमारी जिन्दगी का कडुआ प्याला उस की याद के आबहयात के दो चार कतरे शामिल किए बगैर किसी खालिस खुशी से शीरीं किया नहीं जा सकता मगर जब याद और यादकुनिंदा ही बाकी न रहा तो फकत इस जिन्दगी के नतीजे ही रह गए। खैर इस तूल कलामी से कुछ हासिल नहीं अब सिर्फ इतना दिखलाना और बाकी है कि उन कौमो मे जिनको परमेश्वर ने अस्ली खुशी हासिल करने का शऊर और मनसब बखशा है हिंदुओ के बरखिलाफ जाहिरा क्या फर्क है। कौमियत का पास, अपने तरक्की की कोशिश, बेतकल्लुफी आजादी, इल्म और हुनर सीखने का खान्दानी रिवाज, बे हुनरी और काहिली और एहसान उठाने की शर्म, मुस्तअदी, दिलेरी, सिपहगिरी का शौक,

फनून की चाह, बे गरज दोस्ती और उस की शर्तों की पाबन्दी, तहज़ीब की कैद, सफाई, कद्रदानी, खुदा का खौफ और मजहब का रस्म और दूरंदेशी के सिवाय खुशी को बुनयाद, औरतों की लियाकत और इरादे, ऐसी ही बहुत सी बाते है जो उन कौमो को खुदा ने बख्शीं और हम उन से महरूम है। खुशी तो इन सिफतो की गुलाम है मुमकिन है कि जहाँ यह सिफते मोजूद हो खुशी खुद बखुद बस्तः न हाजिर हो। मगर बरखिलाफ इस के हमारे पास जो सामान हैं रंज के हैं यानी बे इखतियारी, दीनी और दुनियवी कायदो का एक होना, ना तजरिबः कार बुजुर्गों की बात पर अमल करना, मजहब के उन फुजूल उकायद की पाबन्दी जिन से दर हकीकत मजहब से कोई इलाका नहीं है, अपने हसब व नसब का भूल जाना, हमदर्दी का दिल से गुम होने, तरीकः तालीम के वसूलो का पस्त होना, अपनी पाबन्दियो से मुल्क की आबो-हवा को बिगाड़ कर तद्रुस्ता मे फर्क डालना, तकलीफ ही को सवाब और आराम का मूजिब समझना, दौलत का हमेशः बाहर जाना और कार के उम्दः वसीलो का जायः होना, मुख्तलिफ मजाहिब की पाबदी से दिलो का नें होना। एक और सबसे बडी बात उस परमेश्वर का हम लोगों से नाराज रहना। ऐसी ही बहुत सी बाते है जिन से हम हिंदुओ को अब ख्वाब मे भी खुशी नसीब नहीं है कि जिन मे से एक एक तहकीकात और बयान के वास्ते अलग अलग किताबे लिखी जायँ तो भी काफी न हो।

—•❀•—

जातीय-संगीत

—:※:—

भारतवर्ष की उन्नति के जो अनेक उपाय महात्मागण आजकल सोच रहे है उनमे एक और उपाय भी होने की आवश्यकता है। इस विषय के बडे बड़े लेख और काव्य प्रकाश होते हैं, किंतु वे जनसाधारण के दृष्टिगोचर नहीं होते। इसके हेतु मैंने यह सोचा है कि जातीय संगीत की छोटी छोटी पुस्तकें बने और वे सारे देश, गॉव गॉव, मे साधारण लोगों मे प्रचार की जायॅ। यह सब लोग जानते हैं कि जो बात साधारण लोगो मे फैलेगी उसी का प्रचार सार्वदेशिक होगा और यह भी विदित है कि जितना ग्रामगीत शीघ्र फैलते हैं और जितना काव्य को संगीत द्वारा सुनकर चित्त पर प्रभाव होता है उतना साधारण शिक्षा से नहीं होता। इससे साधारण लोगो के चित्त पर भी इन बातो का अंकुर जमाने को इस प्रकार से जो संगीत फैलाया जाय तो बहुत कुछ संस्कार बदल जाने की आशा है। इसी हेतु मेरी इच्छा है कि मै ऐसे ऐसे गीतो को संग्रह करूॅ और उनको छोटी छोटी पुस्तको मे मुद्रित करूॅ। इस विषय मे मै, जिनको जिनको कुछ भी रचनाशक्ति है, उनसे सहायता चाहता हूॅ कि वे लोग भी इस विषय पर गीत वा छंद बनाकर स्वतंत्र प्रकाश करें या मेरे पास भेज दें, मै उनको प्रकाश

करूँगा और सब लोग अपनी मंडली में गानेवालों को यह पुस्तक दें। जो लोग धनिक हैं वह नियम करें कि जो गुणी इन गीतों को गावेगा उसी का वे लोग गाना सुनेंगे। स्त्रियों को भी ऐसे ही गीतों पर रुचि बढ़ाई जाय और उनको ऐसे गीतों के गाने का अभिनंदन किया जाय। ऐसी पुस्तकें या बिना मूल्य वितरण की जायँ या इनका मूल्य अति स्वल्प रक्खा जाय। जिन लोगों को ग्रामीणों से संबंध है वे गाँव में ऐसी पुस्तकें भेज दें। जहाँ कहीं ऐसे गीत सुनें उसका अभिनंदन करें। इस हेतु ऐसे गीत बहुत छोटे छोटे छंदों में और साधारण भाषा में बनें, वरंच गवाँरी भाषाओं में और स्त्रियों की भाषा में विशेष हों। कजली, ठुमरी, खेमटा, कँहरवा, अद्धा, चैती, होली, साँझी, लंबे, लावनी, जाँते के गीत, बिरहा, चनैनी, गजल इत्यादि ग्रामगीतों में इनका प्रचार हो और सब देश की भाषाओं में इसी अनुसार हो, अर्थात् पंजाब में पंजाबी, बुंदेलखंड में बुंदेलखंडी, बिहार में बिहारी, ऐसे जिन देशों में जिन भाषा का साधारण प्रचार हो उसी भाषा में ये गीत बनें। उत्साही लोग इसमें जो बनाने की शक्ति रखते हैं वे बनावें, जो छापने की शक्ति रखते हैं वे छपवा दें और जो प्रचार की शक्ति रखते हैं वे प्रचार करें। मुझसे जहाँ तक हो सकैगा मैं भी करूँगा। जो गीत मेरे पास आवैंगे उनका मैं यथाशक्ति प्रचार करूँगा। इससे सब लोगों से निवेदन है कि गीतादिक भेजकर मेरी इस विषय में सहायता करें और यह विषय प्रचार के योग्य है कि नहीं और इसका प्रचार सुलभ रीति से कैसे हो सकता है इस विषय में प्रकाश करके अनुगृहीत करेंगे। मैंने ऐसी पुस्तकों के हेतु नीचे लिखे हुए विषय चुने हैं। इनमें और भी जिन विषयों की आवश्यकता हो लिखें। ऐसे गीतों में रोचक बातें जो स्त्रियों और गवाँरों को अच्छी लगैं होना चाहिए और शृंगार, हास्य आदि रस इसमें मिले रहैं जिसमें इनका प्रचार सहज में हो जाय।

बाल्य विवाह—इसमें स्त्री का बालक पति होने का दुःख, फिर परस्पर मन न मिलने का वर्णन, उससे अनेक भावी अमंगल और अप्रीतिजनक परिणाम।

जन्मपत्री की विधि—इससे बिना मन मिले स्त्री पुरुष का विवाह और इसकी अशास्त्रता।

बालको की शिक्षा—इसकी आवश्यकता, प्रणाली, शिष्टाचारशिक्षा, व्यवहार शिक्षा आदि ।

बालको से बर्ताव—इसमे बालको के योग्य रीति पर बर्ताव न करने मे उनका नाश होना ।

अँगरेजी फैशन—इससे बिगडकर बालको का मद्यादि सेवन और स्वधर्म विस्मरण ।

स्वधर्मचिंता—इसकी आवश्यकता ।

भ्रूणहत्या और शिशुहत्या—इसके प्रचार के कारण, उसके मिटाने के उपाय ।

फूट और बैर—इसके दुर्गुण, इसके कारण भारत की क्या-क्या हानि हुई इसका वर्णन ।

मैत्री और ऐक्य—इसके बढने के उपाय, इसके शुभ फल ।

बहुजातित्व और बहुभक्तित्व—के दोष, इससे परस्पर चित्त का न मिलना, इसी से एक का दूसरे के सहाय मे असमर्थ होना ।

योग्यता—अर्थात् केवल वाणी का विस्तार न करके सब कामो के करने की योग्यता पहुँचाना और उदाहरण दिखलाने का विषय ।

पूर्वज आर्यों की स्तुति—इसमे उनके शौर्य्य, औदार्य्य, सत्य, चातुर्य्य, विद्यादि गुणो का वर्णन ।

जन्मभूमि—इससे स्नेह और इसके सुधारने की आवश्यकता का वर्णन ।

आलस्य और सतोष—इनकी ससार के विषय मे निंदा और इससे हानि ।

व्यापार की उन्नति—इसकी आवश्यकता और उपाय ।

नशा—इसकी निंदा इत्यादि ।

अदालत—इसमे रुपया व्यय करके नाश होना और आपस मे न समझने का परिणाम ।

हिंदुस्तान की वस्तु हिंदुस्तानियो को व्यवहार करना—इसकी आवश्यकता, इसके गुण, इसके न होने से हानि का वर्णन ।

भारतवर्ष के दुर्भाग्य का वर्णन—करुणा रस संवलित ।

ऐसे ही और और विषय जिनमे देश की उन्नति की संभावना हो लिए जाय। यद्यपि यह एक एक विषय एक एक नाटक, उपन्यास वा काव्य आदि के ग्रंथ बनाने के योग्य हैं और इनपर अलग ग्रंथ बने तो बड़ी ही उत्तम बात है, पर यहाँ तो इन विषयो के छोटे छोटे सरल देशभाषा मे गीत और छंदों की आवश्यकता है जो पृथक पुस्तकाकार मुद्रित होकर साधारण जनो मे फैलाए जायगे। मै आशा करता हूँ कि इस विषय की समालोचना करके और पत्रो के संपादक महोदयगण मेरी अवश्य सहायता करेंगे और उत्साही जन ऐसी पुस्तको का प्रचार करेंगे।

—:※:—

लेवी प्राण लेवी

श्री युत लार्ड म्यौ साहिब बहादुर गवर्नर जेनरल हिंद ने काशी में १ नवम्बर को एक "लेवी" का दर्बार किया था। यद्यपि 'दर्बार' और 'लेवी' मे बहुत भेद है पर यह 'लेवी' और "दर्बार" दोनो के बीच की अपूर्व वस्तु थी। श्री मन्महाराजाधिराज काशिराज को कोठी मे इस 'लेवी' के हेतु एक डेरा दल बादल खड़ा किया गया था जो सूर्य नारायण और श्रीयुत लार्ड साहिब के तेज और प्रताप परम सुशीतल खसखाने की भाँति हो गया था और गरमी भी मारे गरमी के इसी खसखाने मे आ छिपी थी, डेरे के बीच मे चँदवा के नीचे एक सोने की कुरसी धरी थी। नाम लिखने वाले मुंशी बद्रीनाथ फूले फाले अबा पहिने पगड़ी सजे पुराने दादुर की भाँति इधर उधर उछलते और शब्द करते फिरते थे और बाबू भी वैसे ही छोटे तेंदुए बने गरज रहे थे। पहिले लोगो ने यह प्रगट किया कि जूता पहिन कर जाने की आज्ञा नहीं है। फिर कोलाहल हुआ कि चाहो जैसे आओ तिस पर भी शाहजादों के अतिरिक्त केवल चार रईस जूता पहिरे हुए थे। इतने मे बंगाली बाबू सबका नंबर लगाने लगे और पंडितो को दक्षिणा बटने

वाली सभा की भाँति एक एक का नाम लेकर पुकार के बल्लमटेर की पल्टन की चाल से सबको खडा कर दिया। बनारस के रईस भी कठ-पुतली बने हुए उसी गत नाचते रहे। जब खड़े खडे बडी देर हुई और पैर टूटने लगे और इस तपस्या पर भी श्रीयुत लार्ड साहिब के दर्शन न हुए तब राय नारायण दास आनरेरी मजिस्ट्रेट हौलदार की भाँति बोल उठे "सिट डौन" (बैठ जाओ)। सब लोग खडे खडे थक तो गए ही थे मुँह के बल बैठ गये परतु राय साहब को यह 'कवायद' कराना तभी अच्छा लगता जब उनके हाथ मे एक लकडी भी होती। लार्ड साहब की 'लेवी' समझ कर कपडे भी सब लोग अच्छे अच्छे पहिन कर आए थे पर वे सब उस गरमी मे बड़े दुखदाई हो गए। जामे वाले गरमी के मारे जामे के बाहर हुए जाते थे, पगडीवालो को पगड़ी सिर का बोझ सी हो रही थी और दुशाले और कमखाब की चपकन वालो को गरमी ने अच्छी भाँति जीत रक्खा था। सबके अगो से पसीने की नदी बहती थी मानो श्रीयुत को सब लोग आदर से "अर्घ्य पाद्य" देते थे। कोई खडा हो जाता था तो कोई बैठा हो रह जाता था कोई घबड़ा कर डेरे के बाहर घूमने चला जाता था कि इतने मे कोलाहल हुआ "लाट साहब आते हैं"। रायनारायण दास साहिब ने फिर अपने मुख को खोला 'स्टैंड अप' (खड़े हो जाव)। सब के सब एक साथ खडे हो गए। राय साहिब का 'सिट डौन कहना' तो सबको अच्छा लगा पर "स्टैंड-अप" कहना तो सबको बुरा लगा मानो भले बुरे का फल देने वाले राय साहिब ही थे। इतने मे फिर कुछ आने मे देर हुई और फिर सब लोग बैठ गये। वाह वाह दर्बार क्या था "कठपुतली का तमाशा" था या बल्लमटेरो की 'कवायद' थी या बंदरो का नाच था या किसी पाप का फल भुगतना था या "फौजदारी की सजा थी"। बैठते देर न हुई थी कि श्रीयुत लार्ड साहिब आये फिर सबके सब उठ खड़े हुए। श्रीमान् के सग श्री काशीराज और उनके चिरजीव राजकुमार और बहुत से साहिब लोग थे। श्रीयुत लार्ड साहिब बीच मे खडे हो गये। उनकी दाहिनी ओर श्री काशीराज और उनके राजकुमार शोभित हुए। पहिले तैमूर के वशवालो की मुलाकात हुई फिर महाराज विजयानगरम् और उनके कुँअर की। इसी भाँति सब लोगो का नाम बोलते गए और

सलाम होती गई । श्री महाराज विजयानगर भी बाईं ओर खडे हो गए थे । जब सब लोगो की हाजिरी हो चुकी श्रीयुत लार्ड साहिब कोठी पधारे और सब लोग इस बदीगृह मे छूट छूटकर अपने अपने घर आए । रईसो के नबर की यही दशा थी कि आगे के पीछे और पीछे के आगे अँधेरनगरी हो रही थी । बनारस वालो को न इस बात का ध्यान कभी रहा है और न रहेगा । ये विचारे तो मोम की नाक हैं चाहे जिधर फेर दो, हाय—पश्चिमोत्तर देश वासी कब कायरपन छोड़ेंगे और कब इनकी उन्नति होगी और कब इनको परमेश्वर वह सभ्यता देगा जो हिदुस्तान के और खड वासियो ने पाई है ।*

—.❀:—

हरिद्वार

(कवि वचन सुधा ३० अप्रैल १८७१ Vol. III No. 1 P. 10)

श्रीमान् क० व० सु० सपादक महाद्येषु !

श्री हरिद्वार को रुड़की के मार्ग से जाना होता है । रुडकी शहर अगरेजो का बसाया हुआ है । इसमे दो तीन वस्तु देखने योग्य हैं एक तो (कारीगरी) शिल्प विद्या का बड़ा कारखाना है जिसमे जल चक्की पवन चक्की और भी कई बडे बडे चक्र अनवर्त खचक्र मे सूर्य, चद्र, पृथ्वी मगल आदि ग्रहो की भाँति फिरा करते हैं और बड़ी बड़ी धरन ऐसी सहज मे चिर जाती है कि देखकर आश्चर्य होता है । बड़े बडे लोहे के खभे एक क्षण मे ढल जाते हैं और सैकडो मन आटा घडी भर मे पिस जाता है । जो बात है आश्चर्य की है । इस कारखाने के सिवा यहाँ सबसे आश्चर्य श्री गगाजी की नहर है, पुल के ऊपर से तो नहर बहती

* कविवचनसुधा ख० २ स० ५ कार्तिक शुक्ल १५ स० १९२७ ।

है और नीचे से नदी बहती है। यह एक बडे आश्चर्य का स्थान है। इसके देखने से शिल्प-विद्या का बल और अंगरेजो का चातुर्य और द्रव्य का व्यय प्रगट होता है। न जानै वह पुल कितना दृढ बना है कि उस पर से अनवर्त कई लाख मन वरन कराड मन जल बहा करता है और वह तनिक नहीं हिलता। स्थल मे जल कर रक्खा है। और स्थानो मे पुल के नीचे से नाव चलती है यहाँ पुल के ऊपर नाव चलती है और उसके दोनो आर गाड़ा जाने का मार्ग है और उसके परले सिरे पर चूने के सिह बहुत ही बडे बड़े बने है। हरिद्वार का एक मार्ग इसी नहर की पटरी पर से है और मै इसी मार्ग से गया था।

विदित हो कि यह श्री गगाजी की नहर हरिद्वार से आई है और इसके लाने मे यह चातुर्य किया है कि इसके जल का वेग रोकने के हेतु इसको सीढी की भाँति लाए है। कोस कोस डेढ़ डेढ़ कोस पर बडे बडे पुल बनाये है वही मानो सीढ़ियाँ हैं और प्रत्येक पुल के ताखो से जल को नीचे उतारा है। जहाँ जहाँ जल को नीचे उतारा है वहाँ बडे बड़े सीकडो मे कसे हुए दृढ तखते पुल के ताखो के मुँह पर लगा दिये हैं और उनके खींचने के हेतु ऊपर चक्कर रक्खे है। उन तखतो से ठोकर खाकर पानी नीचे गिरता है वह शोभा देखने योग्य है। एक तो उसका महान शब्द दूसरे उसमे से फुहारे की भाँति जल का उबलना और छींटो का उडना मन को बहुत लुभाता है और जब कभी जल विशेष लेना होता है तो तखतो को उठा लेते हैं फिर तो इस वेग से जल गिरता है जिसका वर्णन नहीं हो सकता और ये मल्लाह दुष्ट वहाँ भी आश्चर्य करते है कि उस जल पर से नाव को उतारते हैं या चढ़ाते हैं। जो नाव उतरती है तो यह ज्ञात होता है कि नाव पाताल को गई पर वे बड़ी सावधानी से उसे बचा लेते है और क्षण मात्र मे बहुत दूर निकल जाती है पर चढ़ाने में बडा परिश्रम होता है। यह नाव का उतरना चढ़ना भी एक कौतुक ही समझना चाहिए।

इसके आगे और भी आश्चर्य है कि दो स्थान नीचे तो नहर है और ऊपर से नदी बहती है। वर्षा के कारण वे नदियाँ क्षण मे तो बड़े वेग से बढ़ती थीं और क्षण भर मे सूख जाती है। और भी मार्ग मे जो

नदी मिली उनकी यही दशा थी। उनके करारे गिरते थे तो बडा भयकर शब्द होता था और वृक्षो को जड़ समेत उखाड उखाड के बहाये लाती थी। वेग ऐसा कि हाथी न सम्हल सके पर आश्चर्य यह कि जहाँ अभी डुबाव था वहाँ थोडी देर पीछे सूखी रेत पडी है और आगे एक स्थान पर नदी और नहर को एक मे मिला के निकाला है। यह भी देखने योग्य है। सीधी रेखा की चाल से नहर आई है औ रबेड़ी रेखा की चाल से नदी गई है। जिस स्थान पर दोनो का संगम है वहाँ नहर के दोनो ओर पुल बने है और नदी जिधर गिरती है उधर कई द्वार बनाकर उसमे काठ के तखते लगाये हैं जिससे जितना पानी नदी मे जाने देना चाहें उतना नदी मे और जितना नहर मे छोड़ना चाहें उतना नहर मे छोड़ै।

जहाँ से नहर श्री गगाजी मे से निकाला है वहाँ भी ऐसा ही प्रबध है और गगाजी नहर में पानी निकल जाने से दुबली और छिछली हो गई हैं परतु जहाँ नील धारा आ मिली है वहाँ फिर ज्यौ की त्यौ हो गई हैं।

हरिद्वार के मार्ग मे अनेक प्रकार के वृत्त और पत्ती देखने मे आए। एक पीले रग का पत्ती छोटा बहुत मनोहर देखा गया। बया एक छोटी चिडिया है उसके घोसले बहुत मिले। ये घोसले सूखे बबूल काँटे के वृत्त मे हैं और एक एक डाल मे लड़ी की भाँति बीस बीस तीस तीस लटकते हैं। इन पत्तियो की शिल्पविद्या तो प्रसिद्ध ही है लिखने का कुछ काम नहीं है इसी से इनका सब चातुर्य प्रगट है कि सब वृत्त छोड़ के काटे के वृत्त मे घर बनाया है। इसके आगे ज्वालापुर और कनखल और हरिद्वार है जिसका वृत्तात अगले नबरो मे लिखूँगा।

पुरुषोत्तम शुक्ल १० }

आपका मित्र
यात्री

हरिद्वार

(कवि वचन सुधा १४ अक्टूबर सन् १८७१ ई०)

श्रीमान् कविवचन सुधा सपादक महामहिम मित्रवरेषु !

मुझे हरिद्वार का शेष समाचार लिखने मे बडा आनंद होता है कि मैं उस पुण्य भूमि का वर्णन करता हूँ जहाँ प्रवेश करने ही से मन शुद्ध हो जाता है। यह भूमि तीन ओर सु दर हरे हरे पर्वतो से घिरी है जिन पर्वतो पर अनेक प्रकार को वल्ली हरी भरी सज्जनो के शुभ मनोरथो की भाँति फैल कर लहलहा रही है और बड़े बड़े वृक्ष भी ऐसे खड़े है मानो एक पैर से खड़े तपस्या करते हैं और साधुओ की भाँति घाम ओस और वर्षा अपने ऊपर सहते है। अहा ! इनके जन्म भी धन्य हैं जिन से अर्थी विमुख जाते ही नहीं। फल, फूल, गध, छाया, पत्ता, छाल, बीज, लकडी और जड़ यहाँ तक कि जले पर भी कोयले और राख से लागो का मनोर्थ पूर्ण करते है। सज्जन ऐसे कि पत्थर मारने से फल देते है। इन वृक्षो पर अनेक रग के पक्षी चहचहाते है और नगर के दुष्ट बधिको से निडर होकर कल्लोल करते हैं। वर्षा के कारण सब ओर हरियाली ही दृष्टि पड़ती थी मानो हरे गलीचा की जात्रियो के विश्राम के हेतु बिछायत बिछी थी। एक ओर त्रिभुवन पावनी श्री गगा जी की पवित्र धारा बहती है जो राजा भगीरथ के उज्वल कीर्ति की लता सी दिखाई देती है। जल यहाँ का अत्यंत शीतल है और मिष्ट भी वैसा ही है मानो चीनी के पने को बरफ मे जमाया है, रग जल का स्वच्छ और श्वेत है और अनेक प्रकार के जल जतु कल्लोल करते हुए। यहाँ श्री गगा जी अपना नाम नदी सत्य करती हैं अर्थात् जल के वेग का शब्द बहुत होता है और शीतल वायु नदी के उन पवित्र छोटे छोटे कनोंको लेकर स्पर्श हीसे पावन करता हुआ सचार करता है। यहाँ पर श्री गगा जी दो धारा हो गई हैं एक का नाम नील धारा दूसरी श्री गगा जी ही के नाम से, इन दोनो धारो के बीच मे एक सुंदर नीचा पर्वत है और नील धारा के तट पर एक छोटा सा सु दर चुटीला पवत है और उसके शिखर पर चण्डिका देवी की मूर्ति

है । यहाँ हरि की पैरी नामक एक पक्का घाट है और यहीं स्नान भी होता है । विशेष आश्चर्य का विषय यह है कि यहाँ केवल गगा जी ही देवता हैं दूसरा देवता नहीं यो तो वैरागियो ने मठ मदिर कई बनालिये है । श्री गगा जी का पाट भी बहुत छोटा है पर वेग बडा है, तट पर राजाओ की धर्मशाला यात्रियो के उतरनेके हेतु बनी हैं और दुकाने भी बनी हैं पर रातको बद रहती है। यह ऐसा निर्मल तीर्थ है कि काम क्रोधकी खानि जो मनुष्य है सो वहाँ रहते ही नहीं । पडे दूकानदार इत्यादि कनखल वा ज्वालापुर से आते है । पडे भी यहाँ बडे बिलच्चण सतोषी हैं । ब्राह्मण होकर लोभ नहीं यह बात इन्हीं मे देखने मे आई । एक पैसे को लाख करके मान लेते हैं । इस च्चेत्र मे पाँच तीर्थ मुख्य हैं हरिद्वार, कुशावर्त्त, नीलधारा, विल्वपर्वत और कनखल । हरिद्वार तो हरि की पैडा पर नहाते हैं, कुशावर्त्त भी उसी के पास है, नीलधारा वही दूसरी धारा, विल्व पर्वत भी पास ही एक सुहाना पर्वत है जिसपर विल्वेश्वर महादेव की मूर्ति है और कनखल तीर्थ इधर ही है, यह कनखल तीर्थ बडा उत्तम है । किसी काल मे दच्च ने यहीं यज्ञ किया था और यहीं सती ने शिवजी का अपमान न सहकर अपना शरीर भस्म कर दिया, यहाँ कुछ छोटे छोटे घर भी बने है । और भारामल जैकृष्णदास खत्री यहाँ के प्रसिद्ध धनिक है । हरिद्वार मे यह बखेडा कुछ नहीं है और शुद्ध निर्मल साधुओ के सेवन योग्य तीर्थ है । मेरा तो चित्त वहाँ जाते ही ऐसा प्रसन्न और निर्मल हुआ कि वर्णन के बाहर है। मै दीवान कृपा राम के घर के ऊपर के बगले पर टिका था । यह स्थान भी उस क्षेत्र मे टिकने योग्य ही है चारो ओर से शीतल पवन आती थी । यहाँ रात्रि को ग्रहण हुआ और हम लोगो ने ग्रहण मे बड़े आनद पूर्वक स्नान किया और दिन मे श्री भागवत का पारायण भी किया । वैसे ही मेरे सग कल्लू जी मित्र भी परमानदी थे । निदान इस उत्तम क्षेत्र मे जितना समय बीता बड़े आनंद से बीता । एक दिन मैने श्री गंगा जी के तट पर रसोई करके पत्थर ही पर जल के अत्यत निकट परोस कर भोजन किया । जल के छलके पास ही ठढे ठंढे आते थे । उस समय के पत्थर पर का भोजन का सुख सोने की थाल के भोजन से कहीं बढ़ के था । चित्त मे बारबार ज्ञान,

वैराग्य और भक्ति का उदय होता था। झगड़े लड़ाई का कहीं नाम भी नहीं सुनाता था। यहाँ और भी कई वस्तु अच्छी बनती हैं, जनेऊ यहाँ का अच्छा महीन और उज्वल बनता है। यहाँ की कुशा सबसे विलक्षण होती है जिसमे से दालचीनी जावित्री इत्यादि की अच्छी सुगध आती है। मानो यह प्रत्यक्ष प्रगट होता है कि यह ऐसी पुण्यभूमि है कि यहाँ की घास भी ऐसी सुगधमय है। निदान यहाँ जो कुछ है अपूर्व है और यह भूमि साक्षात् विरागमय साधुओ और विरक्तो के सेवन योग्य है। और सपादक महाशय मै चित्त से तो अब तक वहीं निवास करता हूँ और अपने वर्णन द्वारा आपके पाठको को इस पुण्यभूमि का वृत्तात विदित करके मौनावलबन करता हूँ। निश्चय है कि आप इस पत्र को स्थानदान दीजिएगा।

आपका मित्र
यात्री

—:❀:—

लखनऊ

(कविवचन सुधा Vol 2 No. 22 श्रावण कृष्ण ३० स० १९२८ P. 173)

श्रीमान् क० व० सुधा सपादक महोदयेषु !

मेरे लखनऊ गमन का वृत्तांत निश्चय आपके पाठकगणो को मनोरंजक होगा।

कानपुर से लखनऊ आने के हेतु एक कंपनी अलग है। इसका नाम अ० रु० रे० कपनी है। इसका काम अभी नया है और इसके गार्ड इत्यादिक सब काम चलानेवाले हिंदुस्तानी है। स्टेशन कान्हपुर का तो दरिद्र सा है पर लखनऊ का अच्छा है। लखनऊ के पास पहुँचते ही मसजिदो के ऊँचे ऊँचे कगूर दूर ही से दिखाते है, परतु नगर मे

प्रवेश करते ही एक बड़ी बिपत आ पडता है। वह यह है कि चुगी के राक्षसो का मुख देखना होता है। हम लोग ज्यो ही नगर मे प्रवेश करने लगे जमदूतो ने रोका। सब गठरियो को खोल खोल के देखा जब काई वस्तु न निकसी तब अँगूठियो पर (जो हम लोगो के पास थीं) आ झुके बोले इसका महसूल दे जाओ। हम लोग उतर के चौकी पर गए। वहाँ एक ठिगना सा काला रूखा मनुष्य बैठा था। नटखटपन उसके मुखरे से बरसता था। मैने पूछा क्यो साहब बिना बिकरी की वस्तुओ पर भी महसूल लगता है। बोले हाँ, कागज देख लीजिए छपा हुआ है। मैने कागज देखा उसमे भी यही छपा था। मुझे पढ़ के यहाँ की गवर्नमेट के इस अन्याय पर बड़ा दुःख हुआ। मैने उनसे पूछा कि कहिये कितना महसूल दूँ। आप नाक गाल फुला के बोले कि मै कुछ जवहिरी नहीं हूँ कि इन अँगूठियो का दाम जानू मोहर करके गादामको भेजूँगा वहाँ सुपरेटेडेट साहब साँझ को आकर दाम लगावैगे। मैने कहा कि साँझ तक भूखो कौन मरेगा। बोले इससे मुझे क्या ? कहाँ तक लिखूँ इस दुष्ट ने हम लोगो को बहुत छकाया। अंत मे मुझे क्रोध आया तब मैंने उसको नृसिह रूप दिखाया और कहा कि मै तेरी रिपोर्ट करूँगा। पहिले तो आप भी बिगडे, पीछे ढीले हुए, बोले अच्छा जो आपके धरम में आवे दे दीजिए। तीन रुपये देकर प्राण बचे तब उनके सिपाहियो ने इनाम माँगा। मैने पूछा क्या इसी घंटो दुख देने का इनाम चाहिये। किसी प्रकार इस बिपत से छूटकर नगर मे आए। नगर पुराना तो नष्ट हो गया है जो बचा है वह नई सड़क से इतना नीचा है कि पाताल लोक का नमूना सा जान पड़ता है। मसजिद बहुत सी है, गलियाँ सकरी और कीचड़ से भरी हुई बुरी गदी दुर्गंधमय। सड़क के घर सुथरे बने हुए है। नई सड़क बहुत चौड़ी और अच्छी है। जहाँ पहिले जौहरी बाजार और मीनाबाजार था वहाँ गदहे चरते हैं और सब इमामबाड़ो मे किसी मे डाकघर कहीं अस्पताल कहीं छापा खाना हो रहा है। रूमी दर्वाजा नवाब आसिफुद्दौला की मसजिद और मच्छीभवन का सर्कारी किला बना है। बेदमुश्क के हौजो मे गोरे मूतते हैं। केवल दो स्थान देखने योग्य बचे हैं। पहिला हुसैनाबाद और दूसरा कैसर बाग़। हुसैनाबाद के फाटक के बाहर एक षट्कोण तालाब सुदर बना है और एक

बारहदरी भी उसके ऊपर है और हुसैनाबाद के फाटक के भीतर एक नहर बनी है और बाई ओर ताजगज का सा एक कमरा बना हुआ है। वह मकान जिसमे बादशाह गड़े हैं देखने योग्य है। बड़े बडे कई सुदर झाड रक्खे हुए है और इस हुसैनाबाद के दीवारो मे लोहे के गिलास लगाने के इतने अँकुडे लगे है कि दीवार काली हो रही है। कैसरबाग भी देखने योग्य है। सुनहरे शिखर धूप मे चमकते है। बीच मे एक बारादरी रमणीय बनी है और चारों ओर अनेक सुदर सुंदर बगले बने है। जिसका नाम लका है उसमे कचहरी होती है। और औध के तअल्लुकेदारो को मिले हैं। जहाँ मोती लुटते थे वहाँ धूल उडती है। यहाँ एक पीपल का पेड श्वेत रग का देखने योग्य है।

यहाँ के हिंदू रईस धनिक लोग असभ्य है और पुरानी बाते उनके सिर मे भरी हैं। मुझसे जो मिला उसने मेरी आमदनी गाँव रुपया पहिले पूछा और नाम पीछे। वरन् बहुत से आदमी सग मे न लाने की निदा सबने किया पर जो लोग शिक्षित हैं वे सभ्य है। परतु रडियाँ प्रायः सब के पास नौकर है। और मुसल्मान सब वाह्य सभ्य हैं, बोलने मे बड़े चतुर है। यदि कोई भीख माँगता है या फल बेचता है तो वह भी एक अच्छी चाल से। थोड़ी अवस्था के पुरुषो मे भी स्त्रीपन झलकता है। बाते यहाँ की बडी लबी चौड़ी बाहर से स्वच्छ पर भीतर से मलीन। स्त्रियाँ सुदर तो ऐसी नहीं पर आँख लडाने मे बड़ी चतुर। यहाँ भगेड़िने रडियो के भी कान काटती है। हुक्के की भग की दूकानो पर सज सज के बैठती है और नीचे चाहनेवालो की भीड़ खड़ी रहती है पर सुदर कोई नहीं।

और भी यहाँ अमीनाबाद, हजरतगज, सौदागरो की दूकानें, चौक, मुनशी नवलकिशोर का छापाखाना और नवाब मशकूरुद्दौला की चित्र की दूकान इत्यादि स्थान देखने योग्य हैं।

जैसा कुछ है फिर भी अच्छा है।

ईश्वर यहाँ के लोगो को विद्या का प्रकाश दे और पुरानी बाते ध्यान से निकालें।

आपका चिरानुगत
यात्री

जब्बलपुर

(कविवचन सुधा २० जुलाई सन् १८७२ ई०)

श्रीयुत कवि वचन सुधा सपादक समीपेषु

महाशय

मेरी इच्छा है कि मैं अपनी मध्य देशीय और बंबई की यात्रा का सविस्तर समाचार लिखकर आपके पत्र द्वारा अपने देशवालो पर विदित करूँ जिसमें वे लोग इसे पढकर सज्ञ हो जायँ और आशा रखता हूँ कि आप को स्थान देने मे कुछ असमंजस न होगा।

मैने आप की पवित्र नगरी से दूसरी तारीख को सध्या समय दस बजे प्रस्थान किया और जिस समय राजघाट पहुंचा गाडी छूटने को केवल पॉच मिनट का विलब था। झट टिकट लेकर आरोहण किया और थोड़े समय मे मोगलसराय मे पहुँचा। वहॉ पर एक दूसरे गाड़ी मे चढ़ा और निरतर चला तो सूर्योदय होते होते नैनी के स्टेशन पर पहुँचा और वहॉ उतर पड़ा क्योंकि वह गाडी इलाहाबाद जाती थी और मुझे आना था जबलपुर। वहॉ हम लोगो ने (क्योंकि एक मित्र भी मेरे साथ थे) नित्य शौच किया और चाहा कि कुछ खॉय पर वहॉ काहे को कुछ मिलता है। दूध के लिए एक मनुष्य को पैसा दिया तो वह मुह बनाये हुए आया और बोला कि अभी दूध नहीं आया। फिर हम लोगो ने पूछा कि भला यहॉ जिलेबी मिलेगी उसने कहा हॉ। पैसा देकर भेजा तो वह तेल की जिलेबी उठा लाया परतु वैसी तेल की न समझिए जैसी बनारस मे बनती है और टके की पाव भर बिकती है। यह उससे तो बढकर थी। हम लोगो ने अपना अपना माथा ठोका और इस द्रव्य को उसी मनुष्य के अर्पण किया। इतने मे नौ बजा और गाडी आई। फिर हम लोग चढ़े और जसरा, शिवराजपुर, बरगढ़, दबोरा, माणिक्यपुर, मरकुण्डी, मजगॉवा, जैतवार, सतना, उचारा, मैहरी, अधरा, जोखई, कतनी, स्लीमानाबाद रोड, सिहोरा रोड, देवरी नाम स्टेशनो को पार करते हुए सवा आठ बजे रात को जबलपुर पहुँचे। मार्ग मे जो क्लेश हुआ वह अथकनीय है। एक तो मार्तण्ड की प्रचण्ड किरण से गाड़ी ऐसी उत्तप्त हो रही थी।

यदि शरीर स्पर्श हो जाय तो यह भ्रम होता था कि फफोला तो नहीं पड़ गया, किसी प्रकार से चैन नहीं मिलता था। यदि एकाद बार खिडकी खुल जाती तो मुँह मानो प्रज्वलित अग्नि की ज्वाल से झौस जाता। प्यास के मारे कठ सूखा जाता था और मुख से आक्षर नहीं निकलते थे। जो कहीं पानी मिलै भी तो अदहन के सहस। उधर क्षुधा अलग सता रही थी। आते आते जब सतना मे पहुँचे तो थोडी सी जिलेबी लेकर खाया तब कुछ आँखे खुली फिर मैहर मे पक्का आम विक्रय होता था वह लिया। इसी भाँति ज्यो त्यो कर करके जबलपुर मे आकर उतरे। अब यहाँ कहीं टिकने का ठिकाना न मिले। थोड़ी दूर पर सुना कि एक सराय है। वहाँ गए ता देखा कि एक बड़ा भारी मैदान है और उसके किनारे किनारे छावनी सी बनी है पर वह क्या था मालूम नहीं क्योंकि यात्री सब उसी मैदान मे बिस्तरा लगाए पड़े थे। चौधरी के पास गए। (यहाँ भठियारे नहीं है) तो वह मारे मिजाज के किसी की कुछ सुनता हा न था। खैर बड़ी देर के अनतर जब हम लागो ने पूछा कि यहाँ चारपाई इत्यादि मिलेगी कि नहीं, उसने कहा जाकर बनिए से पूछो और बनिए की वहाँ कहीं सूरत भी नहीं दिखाती थी। अत को असक्त होकर वहाँ एक हलवाई था उससे कुछ लेकर हम लोगो ने क्षुधा शात किया और एक एक्केवाले को बुलाकर पुल पर पडित गोपालराव, एक्मट्रा असिस्टेट नरसिंहपुर के घर पर गए। परतु इसके पूर्व यह प्रकाश करना उचित कि यहाँ पैसा साढ़े पद्रह आने तो बिकतई है दो अन्नी और चरअन्नी भुजाने मे भी एक एक पैसा भुजाना लगता है। ऐसा अँधेर हमने और किसी स्थान मे नहीं देखा था। एक्केवाले को चरअन्नी दिया तो वह कहता है कि यह तो पद्रही पैसे हुए एक पैसा और चहिए। एक और लडके को सात पैसे के पलटे दो अन्नी दिया। हम नहीं जानते कि सरकार इन बातो को जानती है वा नहीं जानकर कान मे तेल डाले बैठी है। अभी तक जबलपुर मैंने भली भाँति देखा नहीं पर दो तीन बात यहाँ नई देखने मे आई। एक प्रत्येक चौराहे पर यहाँ लालटेन एक एक झाड टगे हैं। जै सड़क उस स्थान पर मिलती हैं उतनी हा लालटेन एक खभे मे लगी है। दूसरे

यह कि सडक बहुत परिष्कृत और प्रशस्त हैं। फिरती बार ईश्वर चाहेगा तो नगर को भली भाँति देखकर आप के पास लिखूँगा। रात भर तो उन महराज जी (उक्त महाशय के शाले) के यहाँ रहे दूसरे दिन उन्होंने बडे आतिथ्य से भोजन कराया और आदरपूर्वक बिदा किया। जबलपुर से फिर हम लोगो ने ३≈)॥ दे दे कर इटारसी का टिकट लिया और ग्रेट इडियन पेनिन्सुला रेलवे कपनी की गाड़ी पर सवार हुए। यह गाडी एक विचित्र प्रकार की होती है। ईस्ट इडियन रेलवे की गाड़ी मे कई विभाग रहते है परतु यहाँ सरासर एकी रहती है और उसमे छ: बेच लगे रहते है—तीन द्वार के एक ओर और तीन दूसरी ओर। इन गाडियो के एक कोने मे एक शौच गृह (पायखाना) भी बना रहता है और गाडी की सूरत भी बहुत भद्दी होती है। यह तो तीसरी क्लास की गाड़ी है। यहाँ एक लोकल गाडी होती है जिसमे कुली आदि नीच लोग भेंड की भाति भर दिए जाते हैं। उसमे बैठने के लिए कुछ भी स्थान नहीं बने रहते। किराया उसमे एक पैसे कोस है। यह तो गाडी की प्रशसा है। स्टेशन का प्रबध ऐसा है कि खाने की वस्तु का [redacted]ाम न लेना, लोग पानी पानी पुकारा करते है कोई सुनता नहीं। एक बेर दो तीन मनुष्य मेरी गाडी मे बहुत चिल्ला रहे थे कि एक गार्ड आया ता एक पारसी ने कहा Sir they (are) Complaining very much for water" (साहेब लोग पानी पानी बहुत चिल्लाते हैं) तो गार्ड ने उत्तर दिया Can't help (मै कुछ नहीं कर सक्ता) अब कहिये ज्येष्ठ की दुपहरी मे यदि कोई पानी बिना मर जाय तो क्या कपनी पकडी न जायगी? इस उत्तर से तो यही प्रगट होता है। जब्बलपुर और इटारसी के बीच मे ७ स्टेशन (छिंदवारा, नृसिहपुर, गदारवरा, बाकेड़ी, सोहागपुर, बाग्रा और इटारसी) पड़ते है। परतु रेल पथ के दोनो ओर जगल और पहाड़ोंके कुछ दृष्टि नहीं पडता। कोसो पर्यन्त कोई गाँव नहीं दिखाई देता। इससे आप समझ लीजिये कि यह कैसा देश है। इटारसी और बाग्रा के बीच यहा भी एक सुरग है जिसके भीतर से गाडी जाती है परतु यह सुरग जमालपुर के सुरग से बडा है क्योंकि इसमे जिस समय गाडी जाती है तो किंचित अधकार हो जाता है पर उसमे इधर से उधर तक बराबर प्रकाश रहता है।

परतु अनेक लोग कहते हैं कि वही बड़ा है। इटारसी के स्टेशन से जो बाहर आकर मैने एक बेर दृष्टि फेरी तो स्पष्ट ज्ञात हुआ कि कैसे देश मे आया हूँ क्योकि चतुर्दिक जगल और मैदान दीखने लगा। इसके आगे मार्ग ऐसा है कि केवल सग्गड और घोडे के कुछ नहीं जा सकती। हम लोगो ने भी एक गाडो पॉच रुपये पर भाडे की और चढ कर चले। आगे का समाचार दूसरे पत्र मे लिखूंगा।

एक मध्यदेश
यात्री।

—:❀:—

सरयू पार की यात्रा

अयोध्या

कल सॉझ को चिराग जले रेल पर सवार हुए, यह गए, वह गए। राह में स्टेशनो पर बडी भीड न जाने क्यो ? और मजा यह कि पानी कहीं नहीं मिलता था। यह कपनी यजीद के खानदान की मालूम होती है कि ईमानदारो को पानी तक नहीं देती। या सिप्रस का टापू सरकार के हाथ आने से और शाम मे सरकार का बंदोबस्त होने से यह भी शामत का मारा शामी तरीका अखतियार किया गया है कि शाम तक किसी को पानी न मिले। स्टेशन के नौकरो से फर्याद करो तो कहते हैं कि डॉक पहुँचावे, रोशनी दिखलावे कि पानी दे। खैर, ज्यो त्यो कर अयोध्या पहुँचे। इतना ही धन्य माना कि श्री राम-नवमी की रात अयोध्या में कटी। भीड बहुत ही है, मेला दरिद्र और मैले लोगो का। यहाँ के लोग बड़े ही कङ्गल टिर्रे हैं। इस वक्त दोपहर

को अब उस पार जाते है। ऊँट गाड़ी यहाँ से पाँच कोस पर मिलती है।

कैम्प हरैया बाजार

अब तक तीन पहर का सफर हो चुका है और सफर भी कई तरह का और तकलीफ देने वाला। पहिले सरा से गाड़ी पर चले। मेला देखते हुए रामघाट की सड़क पर गाड़ी से उतरे। वहाँ से पैदल धूप मे गर्म रेती मे सरजू किनारे गुदारा घाट पर पहुचे। वहाँ से मुश्किल से नाव पर सवार होकर सरजू पार हुए। वहाँ से बेलवाँ, जहाँ कि डॉक मिलती है और शायद जिसका शुद्ध नाम बिल्व ग्राम है, दो कोस है। सवारी कोई नहीं न राह मे छाया के पेड़, न कूआ न सडक। हवा खूब चलती थी इससे पगडडी भी नहीं नजर पड़ती, बड़ी मुश्किल से चले और बड़ी ही तकलीफ हुई। खैर बेलवाँ तक रो रो कर पहुचे। वहाँ से बैल की डॉक पर नौ बजे रात को यहाँ पहुँचे। यहाँ पहुँचते ही हरैया बाजार के नाम से यह गीत याद आया 'हरैया लागल झबिआ के रे लैहै ना'। शायद किसी जमाने मे यहाँ हरैया बहुत बिकती होगी। इसके पास ही मनोरमा नदी है। मिठाई हरैया की तारीफ के लायक है। बालूसाही बिलकुल बालू साही, भीतर काठ के टुकडे भरे हुए। लड्डू 'भूरके'। बरफी अहा हा हा ! गुड से भी बुरी। खैर, लाचार होकर चने पर गुजर की। गुजर गई गुजरान—क्या झोपडी क्या मैदान, बाकी हाल कल के खत में।

बस्ती

परसो पहिली एप्रिल थी इससे सफर करके रेती मे बेवकूफ बनने का और तकलीफ मे सफर करने का हाल लिख चुके हैं। अब आज आठ बजे सुबह रे रे करके बस्ती पहुँचे। वाह रे बस्ती, झख मारने को बसती है अगर बसती इसीको कहते है तो उजाड किसको कहेंगे। सारी बस्ती में कोई भी पडित बस्तीराम जी ऐसा पडित नहीं। खैर अब तो एक दिन यहीं बसती होगी। राह मे मेला खूब था, जगह जगह पर शहाबे का शहाबा। चूल्हे जल रहे हैं। सैकड़ो अहरे लगे हुए हैं। कोई गाता है, कोई बजाता है, कोई गप हाँकता है। राम-

लीला के मेले मे अवध प्रांत के लोगो का स्वभाव रेल, अयोध्या और इधर राह मे मिलने से खूब मालूम हुआ। बैसवारे के पुरुष अभिमानी, रूखे और रसिकमन्य होते है, रासकमन्य ही नहीं वीरमन्य भी। पुरुष सब परुष और सभी भीम, सभी अर्जुन, सभी सूत पौराणिक और सभी वाजिदअली शाह। मोटी मोटी बातो को बडे आग्रह से कहते सुनते है। नई सभ्यता अब तक इधर नहीं आई है। रूप कुछ ऐसा नही पर स्त्रियॉ नेत्र नचाने मे बडी चतुर। यहॉ के पुरुषो की रसिकता मोटी चाल सुरती आर खडी मोछ मे छिपी है और स्त्रियो की रसिकता मैले वस्त्र और सूप ऐसा नथ मे। अयोध्या मे प्रायः सभी ग्रामीण स्त्रियो के गोल आते हुए मिले। उनका गाना भी मोटी रसिकता का। मुझे तो उनकी सब गीता मे "बोला प्यारी सखियॉ सीताराम राम राम" यही अच्छा मालूम हुआ। राह मे मेला जहॉ पडा मिलता था वहॉ बारात का आनंद दिखलाई पडता था। खैर मै डॉक पर बैठा बैठा सोचता था कि काशी मे रहते तो बहुत दिन हुए परतु शिव आज ही हुए क्योकि वृषभवाहन हुए। फिर अयोध्या याद आई कि हा! यह वही अयोध्या है जो भारतवष मे सबसे पहले राजधानी बनाई गई। इसीमे महात्मा इक्ष्वाकु, माधाता, हरिश्चन्द्र, दिलीप, अज, रघु, श्री रामचन्द्र हुए है और इसी के राजवश के चरित्र मे बडे बडे कवियो ने अपनी बुद्धिशक्ति की परिचालना की है। ससार मे इसी अयोध्या का प्रताप किसी दिन व्याप्त था और सारे ससार के राजा लोग इसी अयोध्या की कृपाण से किसी दिन दबते थे वही अयाध्या अब देखी नहीं जाती। जहॉ देखिए मुसलमानो की कब्रे दिखाई पडती है। और कभी डॉक पर बैठे रेल का दुःख याद आ जाता कि रेलवे कपनी ने क्यो ऐसा प्रबध किया है कि पानी तक न मिले। एक स्टेशन पर एक औरत पानी का डोल लिए आई भी तो गुपला गुपला पुकारती रह गई, जब हमलोगो ने पानी मॉगा तो लगी कहने कि 'रहः हो पानियै पानी पडल हो' फिर कुछ जियादा जिद मे लोगो ने मॉगा तो बोली 'अब हम गारी देब'। वाह! क्या इतजाम था। मालूम होता था रेलवे कपनी स्वभाव (Nature) की बड़ी शत्रु है क्योकि जितनी बाते स्वभाव से सबंध रखती हैं अर्थात् खाना, पीना, सोना, मलमूत्र त्याग करना

इन्हीं का इसमे कष्ट है। शायद इसी से अब हिंदुस्तान मे रोग बहुत हैं। कभी सराय की खाट के खटमल और भटियारियों का लडना याद आया। यही सब याद करते कुछ सोते जागते हिलते हिलते आज बस्ती पहुँच गए। बाकी फिर। यहाँ एक नदी है उसका नाम कुआ-नय। डेढ रुपया पुल का गाडी का महसूल लगा।

बस्ती के जिले की उत्तर सीमा नैपाल, पश्चिमोत्तर की गोंडा, पश्चिम-दक्षिण अयोध्या और पूरब गोरखपुर है। नदियाँ बड़ी इनमे सरयू और इरावती। सरयू के इस पार बस्ती उस पार फैजाबाद। छोटी नदियों मे कुनेय, मनोरमा, कठनेय, आमी, बानगगा और जम-वर है। बरकरा ताल और जिरजिरवा दो बडी झील भी हैं। बाँसी, बस्ती और मकहर तीन राजा भी हैं। बस्ती सिर्फ चार पाँच हजार की बस्ती है पर जिला बडा है क्योंकि जिले की आमदनी चौदह लाख है। साहब लोग यहाँ कुल दस बारह है, उतनेही बगाली हैं। अगरवाला मैने खोजा एक भी न मिला, सिर्फ एक हैं वह भी गोरखपुरी। पुरानी बस्ती खाँई के बीच मे बसी है। राजा के महल बनारस के अर्दली बज़ार के किसी मकान से उमदा नहीं। महल के सामने मैदान, पिछ-वाडे जगल और चारो ओर खाँई है। पाँच सौ खटिको के घर महल के पास हैं जो आगे किसी जमाने में राजा के लूटमार के मुख्य सहायक थे। अब राजा के स्टेट के मैनेजर कूक साहब हैं।

यहाँ के बाजार का हम बनारस के किसी भी बाजार से मुकाबिला नहीं कर सकते। महज़ बेहैसियत। महाजन एक यहाँ हैं वह टूटे खपडे मे बैठे थे। तारीफ यह सुना कि साल भर मे दो बेर कैद होते हैं क्योंकि महाजन पर जाल करना फर्ज़ है और उसको भी छिपाने का शऊर नहीं। यहाँ का मुख्य ठाकुरद्वारा दो तीन हाथ चौडा और उतना ही लबा और उतनाही ऊँचा बस। पत्थर का कहीं दर्शन भी नहीं। यह हाल बस्ती का है। कल डाँक ही नहीं मिली कि जायँ। मेहदावल की कच्ची सडक है इससे कोई सवारी नहीं मिलती आज कँहार ठीक हुए हैं। भगवान ने चाहा तो शाम को रवाना होंगे। कल तो कुछ तबीअत भी गबडा गई थी इसमे आज खिचडी खाई। पानी यहाँ का बडा बातुल है। अकसर लोगों का गला फूल जाता है, आदमी ही का नहीं

कुत्ते और सुग्गे का भी। शायद गला फूल कबूतर यहीं से निकले है। बस अब कल मिहदावल से खत लिखेगे।

मेहदावल

आज सुबह सात बजे मेहदावल पहुँचे। सड़क कच्ची है, राह मे एक नदी उतरनी पड़ती है उसका नाम आमी है। छः आना पुराना महसूल लगा। रात को ग्यारह बजे पालकी पर सवार हुए। बदन खूब हिला। अन्न भी नहीं पचा। इस वक्त यहाँ पडे है। यहाँ मक्खी बहुत हैं और आबादी बहुत है। दो लड़को के स्कूल हैं और एक लड़कियो का स्कूल है और एक डाक्तरखाना है। बस्ती शहर है मगर उससे यह मेहदावल गाँव बहुत आबाद है। फैजाबाद मे ५।।) बस्ती तक डाक का लगा और बस्ती से मेहदावल तक ३।।।) पालकी का। अभी एक गँवार भाट आया था बेतरह बका। फूहर औरतो की तारीफ मे एक बडा भारी पचड़ा पढ़ा। यहाँ गरमी बहुत है और मक्खियाँ लखनऊ से भी जियादा। दिन को बडी बेचैनी है।

यहाँ की औरतो का नाम श्यामतोला, रामतोला, ~~सन्तोरा~~ इत्यादि विचित्र विचित्र होता है और नारगी को भी यही श्यामतोला कहते है जो सगतरा का अपभ्रश मालूम होता है क्योंकि यहीं के गँवार सतोला कहते हैं। यहाँ एक नाऊ बडे पडित थे। उनसे किसी पडित ने प्रश्न किया 'कि दूध' (तुम कौन जात हो) तब नाई ने जवाब दिया 'चटपटाक चटपटाक' (नाई)। तब ब्राह्मण ने कहा 'त दूर' (तुम दूर जाओ), तब नाई ने जवाब दिया 'कि छौर' (तब मूड़ कौन मूडेगा)। एक का बाप डूबकर मर गया उसके बाप का पिडा इस मत्र से कराया गया 'आर गगा पार गगा बीच मे पड़ गई रेत। तहाँ मर गए नायका चले बुज बुजा देत, धर दे पिडवा।'

कुछ फुटकर हाल भी यहाँ का सुन लीजिये। कल मजहब का हाल हमने नीचे लिखा था। उसका अच्छी तरह से हाल दर्याफ्त किया तो मालूम हुआ कि हमारे ही मजहब की शाखा है। इनके ग्रथो मे हमने एक श्लोक श्री महाप्रभु जी की सुबोधिनी की कारिका का देखा, इसी से हमको सदेह हुआ। फिर हमने बहुत खोद खाद कर पूछा तो यह साफ

मालूम हुआ कि इसी मत से यह मत निकला है क्योंकि एक बात वह और बोले कि हमारा मत श्री बल्लभाचारज की टीका मे लिखा है। इन लोगो के उपास्य श्री कृष्ण हैं और एकादशी, शालग्राम, मूर्तिपूजा, तीर्थ किसी को नहीं मानते। इनके पहिले आचार्य्य देवचन्द जी थे, जो जात के कायथ थे और दूसरे प्राणनाथ जी, जो कच्छ के क्षत्री (भाटिया) थे। हमारे ही मत की शाखा सही पर विचित्र Reformed मत है। वैष्णव होकर मूर्तिपूजा का खडन करने वाले यही लोग सुने।

यहाँ बूढ़े को खबीस, व्रत को बेनी राम, भोजन को बुलनी, जात को दूध, ऐसे ही अनेक विचित्र-विचित्र बोला हैं।

गाँव गन्दा बड़ा है और लोग परले सिरे के बेवकूफ। यहाँ से चार मील पर एक माता झील वा बखरा ताल नामक झील है। दर हकीकत देखने के लायक है। कई कोस लम्बा झील है और जानवर तरह तरह के देखने मे आते है। पहाड़ से चिड़ियाँ हजारो ही तरह की आती हैं और मछली भी इफरात। पेडो पर बन्दर भी। मेहदावल मे कोई चीज ~~को~~ देखने लायक नहीं। जहाँ देखो वहाँ गन्दगी। लोग वज्र मूर्ख, क्षत्री ब्राह्मण जियादा। एक यहाँ प्रान नाथ का मजहब है और दस बीस लोग उसके मानने वाले हैं। ये लोग एकादशी तीर्थ वगैरह को नहीं मानते और सुने सुनाए दो तीन श्लोक जो याद कर लिये है बस उसी पर चूर हैं। 'मदीनास्या शरदा शत' और 'गोविन्दं गोकुलानन्द मक्केश्वरं' यह श्लोक पढ के कहते हैं कि वेद मे मक्का मदीने का वर्णन है। ऐसे ही बहुत वाहियात बात कहते हैं और कोई कितना भी कहै कुछ सुनते नहीं। कहते है कि गोलोक का नाश है और गोलोक ऊपर एक 'अखड मण्डलाकार' लोक है, उसमे मेरे कृष्ण है। इनका मजहब एक प्राणनाथ नामक एक क्षत्री ने पन्ना मे करीब तीन सौ बरस हुए चलाया था। यहाँ चैत सुदी भर रात को औरते जमा होकर माता का गीत गाती हैं और बड़ा शोर करती हैं। असभ्य बकती हैं। व्यभिचार यहाँ बेतकल्लुफ है। सरयू पार के ब्राह्मण बड़े विचित्र है। मांस मछली सब खाते हैं। कूँए के जगत पर एक आदमी जो पानी भरता हो दूसरा आदमी चला आवै तो अपना घड़ा फोड़

डाले और उससे घडे का दाम ले। घडा कोई कहै तो घड़ा छू जाय क्योकि घडा मुसलमानी लफ्ज है, दाल कहै तो छू जाय क्योकि दाल मुसलमानी है। सूरज वशी छत्री राजा बाबू को छाता नहीं लगता है क्योकि वे तो सूरज वशी है, सूरज से क्या छाता लगावे। नेम बडा धरम बिलकुल नहीं। एक ब्राह्मण ने कोहार से नई सनहकी मोल लेकर उसमे पूरी बनाकर खाया, इससे वह जात से निकाल दिया गया क्योकि जैसे बर्तन मे मुसलमान खाना बनावै उस आकार के बरतन मे इसने हिंदू होकर खाना बनाया। ह हा हा ! और मजा यह कि ताजिये को सब मानते हैं। मेहदावल मे एक थाना है। थानेदार यहॉ के बादशाह हैं। एक डाक्तर खाना भी है। यह बड़ा सर्कार का पुन्य है। बस हमको तो सर्कार के पुन्य मे कसर यही मालूम होती है कि पुलो पर महसूल लिया जाता है क्योकि भला नाव या ऐसे पुल पर महसूल लगै तो ठीक है, जिसकी हर साल मरम्मत हो, पक्के पर भी महसूल। बस्ती मे अगरवाला नहीं, एक है सो जूता उतार कर लायची खाते है। मेहदावल मे एक अगरवाले है। मुसलमान फर्श पर यहॉ नहीं बैठते। पिण्डारे जिनको इस जिले मे जमीनें मिली हैं अब नवाब हो गए है और उनकी मुस्तैदी आराम से बदल गई है। यहॉ कहीं कहीं धारू लोगो का रक्खा सोना खोदने से अब तक मिलता है। यहॉ के बाबू ऐसे हठी कि बगला गिर पड़ा पर जूता उलटा था, खिद-मतगार को पुकारा वह न आया, इससे आप वहॉ से न चले और दबकर मर गए।

गोरखपुर

अहो बरनि नहि जात है आज लह्यौ जो खेद।
आतप उष्मा वायु सो चल्यो नखन सो स्वेद ॥ १ ॥
प्रिय दुरगा परसाद गृह ठहरे है इत आय।
बाट बिलोकत दुष्ट की रहे उतहि बिलगाय ॥ २ ॥
आवत ह्वैहे दुष्ट सो लीने नग निज साथ।
पै निकस्यौ जो खोट तो रहिहैं हम धुनि माथ ॥ ३ ॥
करम लिखी सो होय है यामैं कछु न सॅदेह।
वृथा लोभ बस लोग सब छॉड़त सुख मै गेह ॥ ४ ॥

"करम कमडल कर गहे तुलसी जहँ जहँ जाय ।
सरिता सागर कूप जल बूँद न अधिक समाय ॥ ५ ॥"
तऊ सोच नहि कछु करिय मम प्रभु मंगल धाम ।
करिहैं सब कल्यान ही यामैं कछु न कलाम ॥ ६ ॥
रजिस्टरी को पत्र इक गयो होइहै तत्र ।
ताहि जतन करि राखियो फिरि नहि आवै अत्र ॥ ७ ॥
जेहि छन सो खल आइहै ताही छन दिखराइ ।
ताहि तुरतहि लौटिहै तितहि पहुँचिहैं आइ ॥ ८ ॥
तित प्रबन्ध सब राखिहौ रहिहौ ह्वै हुसियार ।
कीजौ रच्छा अंग की करि उपाय हर बार ॥ ९ ॥
आवत हैं हम बेग ही यामैं ससय नाहि ।
अति व्याकुलता तित बिना मेरेहू जिय माहि ॥ १० ॥
प्रति पद माधव की प्रथम रस शिव दृग ग्रह चन्द ।
सवत मगल के दिवस लिख्यौ पत्र हरिचन्द ॥ ११ ॥*

वैद्यनाथ की यात्रा

—:✽:—

श्री मन्महाराज काशीनरेश के साथ वैद्यनाथ की यात्रा को चले। दो बजे दिन के पैसेंजर ट्रेन में सवार हुए। चारो ओर हरी हरी घास का फर्श, ऊपर रग रग के बादल, गड़हो मे पानी भरा हुआ, सब कुछ सुंदर। मार्ग मे श्री महाराज के मुख से अनेक प्रकार के अमृतमय उपदेश सुनते हुए चले जाते थे। साँझ को बक्सर पहुँचे। बक्सर के आगे बड़ा भारी मैदान, पर सब्ज काशानी मखमल से मढ़ा हुआ।

---

* हरिश्चंद्र चंद्रिका खं० ६ सं० ८ फरवरी सन् १८७९ ई०।

साँझ होने से बादल छोटे छोटे लाल पीले नीले बड़े ही सुहाने मालूम पड़ते थे। बनारस कालिज की रगीन शीशे की खिड़कियों का सा सामान था। क्रम से अंधकार होने लगा, ठढी ठढी हवा से निद्रा देवी अलग नेत्रों से लिपटी जाती थी। मैं महाराज के पास से उठकर सोने के वास्ते दूसरी गाड़ी में चला गया। झपकी का आना था कि बौछारों ने छेड़छाड़ करनी शुरू की, पटने पहुँचते पहुँचते तो घेर घारकर चारों ओर से पानी बरसने ही लगा। बस पृथ्वी आकाश सब नीरब्रह्ममय हो गया। इस धूमधाम में भी रेल कृष्णाभिसारिका सी अपनी धुन में चली ही जाती थी। सच है सावन की नदी और दृढ़प्रतिज्ञ उद्योगी और जिनके मन पीतम के पास है वे कहीं रुकते है? राह में बाज पेड़ों में इतने जुगुनू लिपटे हुए थे कि पेड़ सचमुच 'सर्व चिरागों' बन रहे थे। जहाँ रेल ठहरती थी, स्टेशन मास्टर और सिपाही बिचारे टुटरू टूँ छाता, लालटेन लिए रोजी जगाते भींगते हुए इधर उधर फिरते दिखलाई पड़ते थे। गाड अलग 'मैकिंटाश का कवच पहिने' अप्रतिहत गति से घूमते थे। आगे चलकर एक बड़ा भारी विघ्न हुआ, खास जिस गाड़ी पर श्री महाराज सवार थे, उसके धुरे घिसने से गर्म होकर शिथिल हो गए। वह गाड़ी छोड़ देनी पड़ा। जैसे धूमधाम की अंधेरी, वैसे ही जोर शोर का पानी। इधर तो यह आफत, उधर फरऊन क्या फरऊन के भी बाबाजान रेलवालों की जल्दी, गाड़ी कभी आगे हटै कभी पीछे। खैर, किसी तरह सब ठीक हुआ। इसपर भी बहुत सा असबाब और कुछ लोग पीछे छूट गए। अब आगे बढ़ते बढ़ते तो सबेरा ही होने लगा। निद्रा वधू का सयोग भाग्य में न लिखा था, न हुआ। एक तो सेकेंड क्लास की एक ही गाड़ी, उसमें भी लेडीज कंपार्टमेंट निकल गया, बाकी जो कुछ बचा उसमें बारह आदमी। गाड़ी भी ऐसी टूटी फूटी, जैसी हिंदुओं की किस्मत और हिम्मत। इस कम्बख्त गाड़ी से और तीसरे दर्जे की गाड़ी से कोई फर्क नहीं, सिर्फ एक एक धोके की टट्टी का शीशा खिड़कियों में लगा था। न चौड़े बेंच न गद्दा, न बाथरूम। जो लोग मामूली से तिगुना रुपया दे उनको ऐसी मनहूस गाड़ी पर बिठलाना, जिसमें कोई बात भी आराम की न हो, रेलवे कंपनी की सिर्फ बेइंसाफी ही नहीं वरन् धोखा देना है।

क्यो नहीं, ऐसी गाडियो के आग लगाकर जला देती या कलकत्ते मे नीलाम कर देती। अगर मारे मोह के न छोडी जाय ते उससे तीसरे दर्जे का काम ले। नाहक अपने गाहको के बेवकूफ बनाने से क्या हासिल। लेडीज कपार्टमेट खाली था, मैने गार्ड से कितना कहा कि इसमे सोने दो, न माना। और दानापुर से दा चार नीम अगरेज (लेडी नहीं सिर्फ लैड) मिले उनके बेतकल्लुफ उसमे बैठा दिया। फर्स्ट क्लास की सिर्फ दो गाडी—एक मे महाराज, दूसरी मे आधी लेडीज, आधी मे अगरेज। अब कहा सोवै कि नींद आवै। सचमुच अब ते तपस्या करके गोरी गोरी कोख से जन्म ले तब संसार मे सुख मिलै। मैं ते ज्यो ही फर्स्ट क्लास मे अंगरेज कम हुए कि सोने की लालच से उसमे घुसा। हाथ फैलाना था कि गार्ड टूटनेवाला विघ्न हुआ। महाराज के इस गाड़ी मे आने से मै फिर वहीं का वहीं। खैर, इसी सात पॉच मे रात कट गई। बादल के परदो के फाड फाड़कर ऊषा देवी ने ताकझाक आरभ कर दी। परलोकगत सज्जनो की कीर्ति की भॉति सूर्य नारायण का प्रकाश पिशुन मेघो के वागाडबर से घिरा हुआ दिखलाइ पडने लगा। प्रकृति का नाम काली से सरस्वती हुआ, ठढा-ठढी हवा मन की कली खिलाती हुई बहने लगी। दूर से धानी और काही रग के पर्वतो पर सुनहरापन आ चला। कहीं आधे पर्वत बादलो से घिरे हुए, कहीं एक साथ वाष्प निकलने से उनकी चोटियॉ छिपी हुई, और कहीं चारो ओर से उनपर जलधारा-पात से बुक्के की होली खेलते हुए बड़े ही सुहाने मालूम पडते थे। पास से देखने से भी पहाड बहुत ही भले दिखलाई पडते थे। काले पत्थरो पर हरी हरी घास और जहॉ तहॉ छोटे बडे पेड, बीच बीच मे मोटे पतले झरने, नदियो की लकीरे, कहीं चारो ओर से सघन हरियाली, कहीं चट्टानो पर ऊँचे नीचे अनगढ़ ढोके, और कहीं जलपूर्ण हरित तराई विचित्र शोभा देती थी। अच्छी तरह प्रकाश होते होते ते वैद्यनाथ के स्टेशन पर पहुॅच गए। स्टेशन से वैद्यनाथ जी कोई तीन कोस है। बीच मे एक नदी उतरनी पड़ती है जो आजकल बरसात मे कभी घटती और कभी बढ़ती है। रास्ता पहाड़ के ऊपर ही ऊपर बरसात से बहुत सुहावना हो रहा है। पालकी पर हिलते हिलते चले।

श्रीमहाराज के सोचने के अनुसार कहारो की गतिध्वनि मे भी पर-मेश्वर ही की चर्चा है। पहले 'कोह कोह' की ध्वनि सुनाई पडती है फिर 'सोह सोह' 'हंसस्सोह' की एकाकार पुकार मार्ग मे भी उससे तन्मय किए देती थी।

मुसाफिरो का अनुभव होगा कि रेल पर सोने से नाक थर्राती है और वही दशा कभी कभी और सवारियो पर होती है इसी से मुझे पालकी पर भी नींद नहीं आई और जैसे तैसे बैजनाथ जी पहुँच ही गए।

बैजनाथ जी एक गॉव है, जो अच्छी तरह आबाद है। मजिस्ट्रेट, मुनसिफ वगैरह हाकिम और जरूरी सब आफिस हैं। नीचा और तर होने से देश बातुल गदा और 'गधद्वारा' है। लोग काले काले और हतोत्साह मूर्ख और गरीब हैं। यहाँ सौथाल एक जगली जाति होती है। ये लोग अब तक निरे वहशी हैं। खाने पीने की जरूरी चीजे यहॉ मिल जाती हैं। सर्प विशेष है। राम जी की घोड़ी जिनको कुछ लोग ग्वालिन भी कहते हैं एक बालिश्त लबी और दो दो उगल मोटी देखने में आई।

मदिर वैद्यनाथ जी का टोप की तरह बहुत ऊँचा शिखरदार है। चारो ओर और देवताओ के मदिर और बीच मे फर्श है। मदिर भीतर से अँधेरा है क्योकि सिर्फ एक दरवाजा है। बैजनाथ जी की पिडी जलधरी से तीन चार उगल ऊँची बीच मे से चिपटी है। कहते है कि रावण ने मूका मारा है इससे यह गड़हा पड गया है। वैद्यनाथ बैजनाथ और रावणेश्वर यह तीन नाम महादेव जी के हैं। यह सिद्धपीठ और ज्योतिर्लिंग स्थान है। हरिद्रा पीठ इसका नाम है और सती का हृदयदेश यहॉ गिरा है। जो पार्वती अरोगा और दुर्गा नाम की सामने एक देवी हैं वही यहॉ की मुख्य शक्ति हैं। इनके मंदिर और महादेव जी के मदिर से गॉठ जोड़ी रहती है। रात को महादेव जी के ऊपर बेलपत्र का बहुत लबा चौड़ा एक ढेर करके ऊपर से कम-खाब या ताश का खोल चढ़ाकर शृगार करते है या बेलपत्र के ऊपर से बहुत सी माला पहना देते है। सिर के गड़हे मे भी रात को चदन भर देते हैं।

मे एक पूरणमल्ल ने वैद्यनाथ जी का मदिर बनाया। क्या यह मंदिरो का काम पूरणमल्ल ही को परमेश्वर ने सौपा है ?

निज मदिर का लेख

अचल शशिशायके लसित भूमि शकाब्दके।
वलति रघुनाथके वहल पूजक श्रद्धया॥
विमल गुण चेतसा नृपति पूरणेनाचित।
त्रिपुरहृग्मदिरं व्यरचि सर्वकामप्रदम्॥
नृपतिकृत पद्यमिदम्।

सभामडप का लेख

चद्र बिंब प्रतीकाश प्रासाद चातिशोभनम्।
हरिद्रा पीठके कर्तुं काम्येस्मिन्नभवन्मुनिः॥ १॥
न चेद मानुष कर्म चोलराज महामते।
भविष्यति न सदेहः कदाचिच्च कलौ युगे॥ २॥
मुनेः कल्याणमित्रस्य पार्थस्य च महात्मनः।
सवाद शृणु राजेद्र चेतिहास पुरातनम्॥ ३॥
यदा कदाचिच्च कलौ रामाशेन द्विजन्मना।
कारयेत् वै मठवरो रावणेश्वर कानने॥ ४॥
स्वयं दाता समागत्य प्रोद्धिद्य मठकूवरम्।
स करिष्यति यत्नेन प्रच्छन्नो नरविग्रहः॥ ५॥
आर्जवं शतसाहस्रमस्मिन् लिगे प्रतिष्ठितम्।
वस्वगुलं हि तल्लिग वेदिकोपरिचोत्थितम्॥ ६॥
अधोर्द्ध शिखराकारं योजनार्द्धं च विस्तृतम्।
लक्ष लिगोद्भव पुण्यं पूजनात्तस्य जायते॥ ७॥
छद्मना पद्मनाभेन वचितस्तु दशाननात्।
रक्षणाय च देवाना दैत्याना वै वधाय च॥ ८॥
कैलाशशिखरे देवी यदा मानवती सती।
तस्मिन् काले दसग्रीवद्वारस्थोन निवारयन्॥ ९॥

दोर्भिजग्राह शैलेंद्र सिंहनाद चकार सः।
तेन सन्त्रासिता देवी मान तत्याज भामिनी ॥१०॥
तस्मिन्नुपरते शब्दे जहास परमेश्वरः।
व्रीडामवाप महतीं दशग्रीव चुकोप सा ॥११॥
शश्वत् प्रीतिमना भूत्वा दैत्यराजाय वै पुरा।
एव वर ददौ शंभुर्लंङ्कागमनकारणम् ॥१२॥
तिस्रः कोट्योर्द्ध कोटिश्च देवाः सन्त्रासमाययुः।
स्मरन्ति देवीं संस्तूय कालरात्रिस्वरूपिणीम् ॥१३॥
कामरूप परित्यज्य सा सन्ध्या तमुपागता।
हरिद्रापीठमासाद्य वासश्चक्रे दशाननः ॥१४॥
एतस्मिन्नतरे राजन् द्विजरूपधरो हरिः।
हस्ते कृत्वा तु तल्लिंग क्षणमात्र स्थितस्तदा ॥१५॥
प्रस्राव कर्तुमारेभे यावद्दड दशानन.।
तावत्स विप्रस्त्वरितो लिंग तत्याज भूतले ॥१६॥

करतलैभिरकर्षच्चैकवार द्विवार तृतयमपि गृहीत्वा कुंठिता तत्र शक्तिः।
करकलितं शिरोग्र जीवताते तुरीय दशवदन भुजाना जातु मन्युर्बभूव ॥१७॥
मुषित इव तटस्थः सोर्थसिद्धेर्निरस्त. स्मरजिशनिखड सप्तपातालविद्ध.।
त्रिदिश-युवतिभाले दत्तमदारमालो दशवदनविदारीप्रादुरासीदयोध्याम् ॥१८॥

गते किमपि काले तु रावण भक्षितु नृप।
निमित्त राममासाद्य जहास परमेश्वरी ॥१९॥
नातः परतर स्थान गुह्यमुक्त तु शंभुना।
चतुरस्र क्रोशमिदं चतुः किष्कुसमुच्छ्रितन् ॥२०॥
यदा यदा भवेद् ग्लानिः स्थानेस्मिन् मनुजाधिप।
तदा तदावतरते रामः कमललोचनः ॥२१॥
यस्यैषा मानिनी देवी मातेव हितकारिणी।
स एव रामो विज्ञेयो मठ कारयिता यतो ॥२२॥

श्रीवैद्यनाथ चरणाब्ज मधुव्रतेन विप्रावत स रघुनाथ गुणार्णवेन।
प्राप्य प्रसादमजसीसमिदं विधायि प्रासाद सेतु वनवारि मठादि सर्वम् ॥२३॥

मंदिर के चारो ओर और देवताओ के मदिर है। कहीं प्राचीन जैन मूर्तियाँ हिंदू मूर्ति बनकर पुजती है। एक पद्मावती देवी की मूर्ति

बड़ी सुदर है जा सूर्यनारायण के नाम से पुजती है। यह मूर्ति पद्म पर बैठी है और दो बड़ी सुदर कमल की लता दोनो ओर बनी है। इस पर अत्यत प्राचीन पाला अच्छर मे कुछ लिखा है जा मैंने श्री बाबू राजेद्रलाल के पास पढ़ने का भेजा है। दा भैरव की मूर्ति, जिससे एक तो किसी जैन सिद्ध की और एक जैन चेत्रपाल की है, बड़ी ही सुदर है। लोग कहते है कि भागलपुर जिले मे किसी तालाब मे से निकली थीं।❀

—:❀:—

जनकपुर की यात्रा

—:❀:—

आज दोपहर को पहुँचे। राह मे रेल मे कुछ कष्ट हुआ। क्योकि सेकण्ड क्लास मे तीन चार अग्रेज थे। बस उनमे मै अकेला "जिमि दसनन मह जीभ बिचारी" कष्ट हुआ ही चाहै 'नर बानरहि सग कहु कैसे'। इसके वास्ते यह इतिजाम होना जरूर है कि हर ट्रेन मे एक गाड़ी जिसमें फर्स्ट और सेकण्ड दोनो ही हिदुस्तानियो ही के वास्ते रहै। इस विषय मे मैंने रेलवे कपनी की कनफ्रेंस के सेक्रेटरी को लिखा तो है पर 'तूती की आवाज' अगर सुनी जाय। जैसी ही उनको पान सुरता की पचापच से नफरत है वैसी इधर चुरुट के धूम्र से। ऐसी ही अनेक प्रकृति विरुद्ध बातै हैं जो केवल कष्टदायक हैं। एक बात और बहुत जरूरी है। ऐसे स्टेशनो पर जहाँ गाड़ी देर तक ठहरै फर्स्ट और सेकेण्ड क्लास के हिदुस्तानियो की पाखाना वगैरह की कोठरी

❀ यह यात्राविवरण हरिश्चद्र चद्रिका और मोहन चद्रिका ख० ७ स० ४ आषाढ शुक्ल १ स० १९३७ में छपा है और इसकी अगली सख्या में इस विवरण की पूर्ति के रूप श्रीकाष्ठजिह्व स्वामी के वैद्यनाथ विदु के २६ पद उद्धृत किए गए हैं, जो यहाँ नहीं दिए गए हैं।

अलग बननी चाहिए क्योंकि न कमोड का इनको अभ्यास न स्वतत्र जलादिक बिना इनको सुभीता। मगर गौर सभ्य बाजे तो बडे सभ्य और दिल्लगीबाज मिलते है। अब की बरसात मे सेकेड क्लास मे एक साहब सोये थे मै भी उसी मे था। पानी की कुछ बौछार भीतर आई। साहब ने जागकर पूछा Have you made water ? मैंने कहा Not I but God इस पर बहुत ही प्रसन्न हुआ। वैसे ही अब की भी एक दिल्लगीबाज थे। मेरे पास एक हिन्दोस्तानी रईस थे। इनको उन्होने पूछा यह कौन हैं ? मैने उत्तर दिया He is a rich man. His fore-fathers were very rich bankers of my city. इस पर उसने हँसकर कहा all of those fours ? इस फिकरे पर मै बहुत ही प्रसन्न हुआ। मेरे बालो पर विग विग की और दो और सोए हुए थे उन पर स्त्री पर की फबती भी अच्छी हुई। तो बाजे तो भाग्य से ऐसे मिल जाते है मगर बाजे बड़े ही कष्टदायक मिलते है और हिंदोस्तानियो से ऐसी घृणा करते हैं कि जी दुःखी हो जाता है। रे रे करके रात को बारह बजे बाढ पहुँचे। चार बजे तक सरदी मे वूहीं टपे। पॉच बजे रेल फिर चली। घाट पर पहुचे। वहॉ एक स्टीमर था। दरिद्र स्टीमर। जिसके सेकेण्ड क्लास मे सिवा इस नाम के गुण कोई नहीं। बल्कि वहॉ बैठना भले आदमी के वास्ते एक शर्म की बात है। खैर वहीं बैठ कर पार लगे। वहाँ से तिरहुत की रेल० वाह रे रेल। एक गाड़ी बालू मे गडी थी उसी मे तार घर और टिकट आफिस। तार दो दो कैंचीदार बॉसो पर। सड़क आधे आधे औंधे गोलो पर बालू मे राम भरोसे। गाडी ऊंचे नीचे पर छकडो की तरह लुडकती पुडकती चलती थी। छोटी इतनी कि जी चाहा कि सरस्वती की गुडिया को दे दूँ। सेकेण्ड क्लास महज वाहियात। भद्दा रग भद्दे काठ भद्दे लोहे। जगह सोने को कौन कहै बैठने को नही। रेल की तारीफ करू कि तार की कि स्टेशनो की कि मास्टर की। झण्डी मालूम होती थी कि कोई खेत वाला स्त्री की मैली फटी साड़ीका पल्ला फाड़कर लकडी मे लगाकर कौआ हॉकता है। खैर दरभंगे पहुँचे। कल जनकपुर जॉयगे। बाकी कल के खतमे।

—:❀:—

भारतेंदु बाबू हरिश्चन्द्र के पत्र

गोस्वामी श्रीराधाचरण जी को

(१)

श्रीकृष्ण

प्रियवरेपु

बहुत दिनो से आप का कोई पत्र नहीं आया, चित्त चिंतित है, सर्वदा कुशल पत्र से चित्त आनन्दित किया कीजिए, यहाँ योग्य कार्य हो वह भी असकुचित होकर लिखिए।

भवदीय स्नेहाभिलाषी
हरिश्चद्र

(२)

महोदयेपु

मै तीन चार दिन मे शायद श्रीवन आऊँ, कृपापूर्वक एक स्थान अपने अति निकट रखिए, दो बात, मुख्य आराम देख लीजिएगा एक तो पाखाना स्वच्छ हो और दूसरे दिन को गर्म न हो चाहे अति छोटा हो।

हरिश्चद्र

(३)

शत कोटि प्रणामानतर प्रेम्णा विज्ञापयति—श्री हरिदास, श्री हरिवश जी, श्री नागरीदास जी, श्री आनन्दघन जी, और श्री कृष्ण चैतन्य महाप्रभु के चित्र हैं अनुग्रह पूर्वक लिखिए कि और किन किन महात्माओ के चित्र आपको मिले हैं—

दासानुदास
६ शमी हरिश्चद्र

(४)

प्रणति पूर्विका विज्ञप्तिः

श्री अद्वैत महाप्रभु का उत्सव बगला पत्रो मे उत्सवो की तालिका मे वैसा ही है जैसा उत्सवावली मे लिखा है, क्या वह दिन नहीं है जो भारतेदु मे ७ लिखी है ? इसको जरा निश्चय कर लीजिए, मैंने बगला कई पत्र देखे सब मे ५ ही मिली।

दासानुदास
हरिश्चन्द्र

(५)

मित्रेषु,

दूसरी आवृत्ति मे उत्सवावली मे उत्सव का दिन शुद्ध कर दिया जायगा।

तुम्हारा
हरिश्चन्द्र

(६)

अनेक कोटि साष्टाङ्ग प्रणाम

आप का कृपा पत्र मिला चद्रिका सेवा मे भेजी है स्वीकृत हो। आप अनेक ग्रथो का अनुवाद करते हैं तो चैतन्य चद्रोदय का अनुवाद क्यो नहीं करते ? बड़ा ही प्रेममय नाटक है, इसके छद मात्र मै दत्तचित्त होकर बना दूँगा, उत्साह कीजिए। जातीय गीत भी कुछ बनें और छपैं, मैं बहुत उद्योग करता हूँ किन्तु किसी ने न बनाकर भेजे।

गुरु

आपका
हरिश्चन्द्र

(७)

अनेक कोटि साष्टाग दण्डवत् ३-५-८३

प्रणामानतर निवेदयति

लघु र० क० मिली. धन्यवाद. नाटकादि जाते हैं, भारतेदु बहुत अच्छी चाल से चला है किंतु तनिक कड़ाई विशेष है। लेख पारिपाटी उत्तम है, क्या यह वही लाहौर वाला है ? मैं अब तक नहीं अच्छा

हुआ, बड़ी ही सुस्ती है, प्राण बचैं तो कुशल है, हमारी सर्वस्य निधि जो आप सग्रह कर रहे हैं शीघ्र भेजिए, इस दुख मे सर्व प्रकार सहायक होगी।

श्री चरण सेवक
हरिश्चन्द्र।

(८)

श्रीकृष्ण

हम लोगो का बड़ा दिन।

अनेक कोटि साष्टाग दण्डवत् प्रणामातर निवेदयति—

महात्माओ ने जो पद बनाए हैं उनमे प्रिया पीतम का जो संवाद है वा अन्य सखियो की उक्ति है उन्हीं सबो के यथास्थान नियोजन से एक रूपक बनै तो बहुत ही चमत्कार हो अर्थात् नाटक की और जितनी बातै हैं अमुक आया गया इत्यादि अक दृश्य इत्यादि मात्र तो अपनी सृष्टि रहै किंतु सवाद मात्र उन्हीं प्रवीनो के पदो की योजना से हो। जहाँ कहीं पूरा पद रहै वहाँ पूरा कहीं आधा चौथाई एक टुकडा जितना आवश्यक हो उतना मात्र उनमे से ले लिया जाय। यह भी यो ही कि एक बेर पदो मे से चुन चुन कर अत्यंत चोखे चोखे जो हो वा जिनमे कोई एक टुकड़ा भी अपूर्व हो वह चिन्हित रहै फिर यथा स्थान उनकी नियोजना हो, ऐसा ही गीत गोविद से एक संस्कृत मे हो, बहुत ही उत्तम ग्रथ होगा। आप परिश्रम करैं तो हो मैं तो ऐसा निर्बल हो गया हूँ कि बरसो मे सुधरूँगा।

दासानुदास
हरिश्चन्द्र

(९)

श्री हरिः

अनेक कोटि साष्टाग दण्डवत प्रणामानतर निवेदनम्—

आज के भारतेदु मे प्रथम पत्र आर्य समाजियो के विषय मे जो है उसमे मेरी बुद्धि मे यह बात आती है कि ब्राह्मणो को एक ही बेर छोड़ देने की अपेक्षा उनको सुधारना उत्तम है—

भारतेंदु टाइप मे छपै तो बड़ी उत्तम बात है। २४ पेज मे टाइ-टेल पेज के २५० कापी छपाई कागज समेत २५) मे उत्तम छप सकता है, यहॉ छपे तो मै प्रूफ आदि भी शीघ्र दिया करूँ।

मै इन दिनो महात्माओं के चित्रो की फोटोग्राफ मे कापी करके सग्रह कर रहा हूँ, नागरीदास श्री महाप्रभु आदि कई चित्र तो हैं, कुछ यहॉ भी मिलगे ?

आगरे के उपद्रव का वृत्तान्त मैने विलायत कई मित्रो को लिखा है उसके प्रमाण के हेतु कई समाचार पत्र भी भेजे हैं। इस मास का भेजूँगा इससे इसकी एक कापी और दीजिए।

अबकी इसमे समालोचना छोटी २ बहुत सुदर हैं। शृंगारलतिका पर नकछेदी जी ने रजिस्टरी भी करा ली। यह मजा देखिए, राजा मानसिह के मानो आप पोष्यपुत्र है। ललिता ना० चन्द्रावली की छाया पर बनी है, अस्तु, विचारे वैष्णव मत का न भेद जाने न आप वैष्णव, वैष्णव पत्रिका के सपादक तो है—

नाटको मै गॅवारी बैसवारे की मेरी बुद्धि मे उत्तम होगी क्योकि इस प्रदेश मे दूर तक बोली जाती है।

प्रतिपदा

दासानुदास

हरिश्चन्द्र।

अनेक कोटि साष्टाग दडवत प्रणामानतर निवेदयति—

आप का कृपापत्र पाया, बृहद्‌गौर गणोद्देश दीपिका वा बृहद्‌गणो-द्देश दीपिका जो जो जितनी मिलै भेजिएगा। जो पुस्तके वहॉ मिलती हैं, यदि आप कृपापूर्वक उनका एक सूचीपत्र भेज दे तो बडा उपकार हो। कीर्तन की पुस्तक आप दो भेज दे एक नित्य पद की दूसरी उत्सव की पद। मुक्तावली लोग क्यो नहीं देते ? कदम्ब की लकडी श्री . . . जी के वेणु निर्म्माण के हेतु चाहिए मयूरपिच्छ चन्द्रिका मात्र ही भेजिएगा हम आपसे किसी बात से बाहर नहीं जिस प्रकार आप

भेजिएगा हमको शिरसाधार्य्य है। रासोत्सव व्यवस्था जो कल के पत्र मे छपैगी वह श्रीवन के पंडितो को दिखलाइएगा देखिए लोग क्या कहते है और सब कुशल है।

रविवासरे

भवदीय

हरिश्चद्र

आज सबेरे से यहाँ घनघोर वृष्टि हो रही है।

(११)

अनेक कोटि साष्टाग दंडवत प्रणामानतर निवेदयति—

निस्संदेह आप मुझसे व्यर्थ रुष्ट हुए, इस वर्ष के पहिले ही नम्बर मे आपका प्रतिवाद छपा है, भला इसमे मेरा क्या दोष है, जिसने आपकी निन्दा किया है उसको दो हजार आप गाली दीजिए देखिए छपता है कि नहीं। चद्रिका के भेजने का प्रबन्ध आदि सब अब प० गोपीनाथ जी के जिम्मे है। मै उनसे पूछूँगा कि क्यो नहीं गई और भिजवा दूँगा। ससार मे भले बुरे सब प्रकार के लोग हैं कोई किसी की निन्दा, कोई स्तुति करता है। हम तो केवल तटस्थ हैं, हमारे चित्त मे कल्मष तो तब आप को प्रतीत करना था जब आप का प्रतिवाद न छपता

श्रीवन से हमे कई पुस्तके मॅगाना है आप कृपापूर्वक उसका प्रबन्ध कर दे तो हम नामादिक लिख भेजे। और सर्व्व कुशल है।

आप का दासानुदास

शनि

हरिश्चन्द्र

(१२)

श्रीहरिः।

प्रिय पूज्य चरणेषु ! होली मगल

क्या आप चित्रो का विषय भूल गए ? क्या अभी तक एक भी नहीं बने ? तनिक ध्यान रहै। मेरे योग्य सेवा हो सो लिखिएगा।

दासानुदास

हरिश्चद्र

(१३)

श्रीकृष्णायनमः।

अनेक कोटि दंडवत् प्रणामानन्तर निवेदयति—

पूर्व मे एक पत्र आपको लिखा था, उसमे चित्रो के विषय मे आप को जा लिखा था उसका कुछ आपको पता लगा? व्यास जी, श्री अद्वैत प्रभु, श्री नित्यानन्द प्रभु, श्रीगोपालभट्ट जी या और और किसी महात्मा की तस्वीरे मिले और दस दिन के वास्ते भी मँगनी मिल सकै तो मै कापी करा लूं। कष्ट क्षमा—

दासानुदास
हरिश्चद्र

(१४)

शतशः प्रणति के पश्चात् निवेदन!

क्या चित्रो की याद एकबारगी भुला दी? इतने चित्र हैं, श्री श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु, स्वामी हरिदास जी, हरिवश जी, नागरीदास जी, आनन्दघन जी और हमारे आचार्य और उनके द्वितीय पुत्र गोस्वामी विट्ठलनाथ जी इनके अतिरिक्त और जिन महात्माओ के मिलै दीजिए। कष्ट देने को बारबार क्षमा कीजिए।

दासानुदास
हरिश्चन्द्र

(१५)

"भक्त्यात्वनन्ययालभ्यो हरिरन्यद्विडम्बनम्"

"Heaven is love, and love is heaven"

अनेक शतकोटि प्रणामानर निवेदयति,

कृपा पत्र मिला, बच्चा को पत्र मे लिख दिया है कि आप की सेवा मे यात्रा से लौटकर आवे, मथुरा एजेंसी वालो को कह दीजिए कि उनके पास जिन २ महात्माओ की कापी बिकाऊ हो उनका एक सूची-पत्र मेरे पास भेज दे।

पुस्तको का सूचीपत्र छापा तो है।

दासानुदास
हरिश्चद्र

(१६)

पूज्य चरणेषु,

श्री रूपसनातन गोस्वामि की जाति क्या थी ? श्री महाप्रभु का जीवन चरित्र एक बँगला से हिन्दी किया है उसमें यवन लिखा है। मैंने कायस्थ सुना है। हमारे निज सप्रदाय के ग्रथो मे भी कायस्थ लिखा है। इसका उत्तर अति शीघ्र दीजिए।

श्री शचीदेवी और श्री विष्णु प्रिया कब तक जीवित रहीं यह भी लिखिएगा। अपने परम पूज्य पिता जी से मेरा साष्टांग प्रणाम कहिएगा।

द्वितीया

दासानुदास
हरिश्च द्र

(१७)

अनेक कोटि साष्टांग दण्डवत् प्रणामानंतर निवेदयति—

आपका कृपा पत्र मिला, आपने ऐसा क्यो लिखा है। अलौकिक और लौकिक दोनों सबध से हमारे आप पूज्य है।

चित्र जो मिलै अति शीघ्र यत्नपूर्वक भेजे। जितने चित्र जितने दिन के हेतु मँगनी आवे उनका वृत्त लिखिएगा कि उतने ही दिन मे वे फेर दिए जायँ। जो मूल्य पर मिले उनका मूल्य लिखिएगा। आप अलौकिक चित्र पुस्तकादि जो मुझको भेजते हैं इसका मै जन्मजन्म ऋणी रहूँगा।

२४ डिसेम्बर १८८३
काशी

दासानुदास
हरिश्चन्द्र

(१८)

शतकोटि दण्डवत् प्रणामानंतर निवेदयति—

बाबू राजेन्द्रलाल मित्र ने एक प्रबंध मे इस बात का खडन किया है कि महाप्रभु जी मध्वमतावलबी थे इसमे प्रमाण, उन्होने यह आज्ञा किया था कि "यत श्रीधरविरुद्ध तन्नामास्माकमादरणीयम् ।" वह कहते है कि मध्व मत के ग्रथ मात्र ही श्रीधर के विरुद्ध हैं। इसका क्या उत्तर है ? वैष्णवदीक्षा आपने कब और किससे लिया था ?

दासानुदास
हरिश्चद्र

मै इन दिनो महाप्रभु जी के चरित्र का नाटक लिखता हूँ उसी के हेतु इन बातो के जानने की जल्दी है।

हरिश्चद्र

(१९)

अनेक कोटि साष्टांग दण्डवत् प्रणामानातर निवेदयति—

बच्चा और उसकी माँ व्रजयात्रा करने जाती हैं और जो चित्र हो सो बच्चा को दीजिएगा।

दासानुदास
हरिश्चन्द्र

(२०)

शतकोटि दण्डवत् प्रणामानन्तरं निवेदयति—

काशिराज ने आपसे यह प्रश्न किया है कि श्री राधारमण, श्री राधावल्लभ आदि विग्रहो के साथ श्री राधिका जी की मूर्त्ति क्यों नहीं है ? श्री मद्भागवत मे उनका वर्णन कहाँ है ?

विशेष कृपा, कष्ट क्षमा ।

चिरबाधित
हरिश्चन्द्र*

* मर्यादा सन् १९११ से उद्धृत—लेखक गोस्वामी जी के पुत्र श्री गौरचरण गोस्वामी।

श्री बद्रीनारायण जी उपाध्याय 'प्रेमघन' को

प्रिय,

एक बडी गुप्त बात है, इसमे बडी सावधानी से सहायता दीजिएगा, गोवर्धनदास रोडा उर्फ खरदूखनदास से इन दिनो माधवी से बिगाड़ हो गया है। वह चित्त का ऐसा कुनही है कि उस बिगाड का बदला यों लेना चाहता है कि माधवी की एक किता हुडी २३००) रु० की जो वास्तव मे माधवी के रुपए की है मगर उसके नाम की है उसको हजम किया चाहता है। अभी पूरी हजम नहीं किया इरादा है। इसी इरादे से वह हुडी हमसे लेकर विध्याचल चला गया। एक मकान माधवी के वास्ते लिया जाता है। उसका बयाना देने को १००) रुपया हमने उससे माँगा हुडी उसको दे दिया कि १००) आज दे बाकी रजिस्टरी के दिन दे। आज रजिस्टरी होनेवाली थी। आज रु० भेजते है यह कहके भी विध्याचल चला गया। हम स्टेशन पर गए मुलाकात हुई। एक पुरजा गट्टू मिश्र के नाम लिख दिया और कहा कि हम कह आए हैं गट्टू मिश्र रुपया दे देगे। गट्टू मिश्र कहते हैं कि हम कुछ नहीं जानते। कैसी हुडी कैसा रुपया? यहाँ मकान की रजिस्टरी की हर्ज होती है। न जाने उसको क्या मजूर है। जो हो कानूनन तो उनपर खयानत और जालसाजी का दावा अच्छा खासा होगा। मगर वह हमारे निज का आदमी है वह कभी ऐसी बेईमानी न करेगा खाली माधवी से बुरा मानकर तग करता है। आप फौरन खत पाते ही उसको बुलाकर या जाकर मिलिए और एक तार हमने आपके नाम दिया है, उसके मुताबिक अनजान बनकर पूछिए कि कौन से हुडी के रुपए के बिना बाबू साहब का हर्ज है वह भुगतान जल्दी कर दो। या तो अभी तार दो कि उनको रुपया मिल जाय या तुम कल बनारस चले जाओ। इस बखत तार उससे भिजवाइए, और एक तार हमारे नाम भी भिजवाइए। बल्कि तार की खबर का खर्च भी आप दे दीजिएगा। हम आपके हिसाब मे पाठक जी को दे देगे। हमारा खत उसको मत दिखलाइएगा न कुछ हाल कहिएगा कि मैने उसकी बुराई की है। अपना काम देखिएगा। जिसमे तार के खबर से चिट्ठी से

गवाही से आपके सामने बयान से हर तरह से उसको पाबद कर लीजिएगा। रुपए बिना बड़ा ही हर्ज है। कह दीजिए कि आज शाम तक तार का इन्तिजार देखकर वह खुद चले आवैंगे। बाहर ही से इस आदमी को रवाने किया है इससे खर्चा नहीं दिया है दे दीजिएगा। व्यय मात्र कहिएगा। आपके यहाँ के नौकरों को या पाठक जी को दे दूँगा। बड़ी सावधानी से चटपट काम हो। शाम के भीतर हमको खबर दीजिएगा तार पर कि क्या जवाब दिया। खर्चा सब मेरे जिम्मे।

भवदीय
हरिश्चंद्र

प्रियवरेषु—

आपका कृपा-पत्र आया। यह संसार दुःख का सागर है और अपनी अपनी विपत्ति मे सब फँसे है पर मै सोचता हूँ कि जितना मै चारो तरफ से दुःख मे जकड़ा हूँ इतना और कोई कम जकड़ा होगा पर क्या करूँ खैर चला ही जाता है। बाबू जी का यह तुक बहुत ही ठीक है—"है संसार का यह मजा, घन सरिस दुख तडित सम सुख मोह छाजन छजा।" इन्हीं झंझटो से आजकल पत्र नहीं लिखा। क्षमा कीजिएगा। चित्त वैसा ही है। इसमे सदेह न कीजिएगा। "सौ युग पानी में रहै मिटै न चकमक आग।" और सब कुशल है—आपका भी पचड़ेमे फँसना सुनकर बड़ा दुख होता है। ठीक है-खैर न वह रही न यह रहेगी।

भवदीय
हरिश्चद्र

समाप्त

प्रतीकानुक्रमणिका

अ

अरे जीव तू आतमा शुद्ध है ८११
अहो बरनि नहि जात है ६५७
अष्टादस श्री चिन्ह श्री ६६१

आ

आउ मोरी जानो सकल रसखानी ८२६
आवत हम हैं बेगही ६५८
आवत ह्वैहै दुष्ट सो ६५७

इ

इन आदिक जे नैचिकी ६५१
इन आदिक हरि, जेठ जे ६४६

औ

औरहु वृद्धा मेदुरा ६४८

क

कत्तोयकामिनी सीता ८४८
कनकपात्र रत नगजटित ३४०
करम लिखी सो होय है ६५७
करि करुना लखि जग विमुख ५८६
कश्य कादबरी गद्य ८४८
कहहि एक अद्वैत मत ३६
का भवा आवा है ए राम जमाना कैसा ८६३
कायस्थकुल सपूज्या ८४८
कुमुल कुड कडोल अरु ६५१
केतु छत्र स्यदन कमल ६६०
केशपाश स्वच्छ गुच्छ शोभिनी ८४४
कैसी होरी खिलाई आग तन मन में ८६२
क्यूरेसिया कागनक्क ८४८
क्यों बे सुनता नहीं सोहदे ८६४
क्रीडा गिरि गिरिराज है ६५१

ख

खर्जुरपानसद्राक्षं ८४८

ग

गल्ला कटै लगा है कि भैया जो है सो है ८६१
गुप्त द्रव्य पुंज गेह रक्षिका ८४४
गौडी माध्वी तथा पैष्टी ८४८
गौरडा गौर ससेव्या ८४८

च

चद्रहास सिव चद्रमुख ६५१
चद्रानुजा देवपीता ८४८
चार वेद प्रिय चार पद २६१
चो गरदीद ईं जराफत नामा तसनीफ ८८७

छ

छत्र चक्र ध्वज लता पुष्प ६६०
छोडि अनेकन साधन को मन मान ७५१

ज

जग्य स्रुवा को चिन्ह है ६६१
जटिला मेला घरघरा ६४८
जदपि पान करि परम अमृतमय ४२५
जयति राजराजेश्वरी १८१
जव खुर तोरन कमल लता ६६१
जानि परम उपकार पुनि ४७५
जिन पुरुषोत्तम नाम सुभ ५०५
जे सूरज सों बढि तपे ३४०
जेहि छन सो खल आइहै ६५८
जेहि लहि फिर कछु लहन की ४२५, ५२१, ५८६
जै जै श्री नद नद ४४७
जै जै श्री बल्लभ सदा ४७५

त

तऊ सोच नहिं कछु करिय ६५८
तड्डुल पुरट कुबेर ये ६४८

मदोत्कठा गुणादिष्ट ८४८
मन समुद्र भयो सूर को ७३
मामा जसबरधन जसो ६४८
मृगमद मुद्रित चारु कपोलम् ५०५

य

यह तिनकी वशावली २८१

र

रजिस्टरी को पत्र इक ६५८
रासरसिक फल देन हित ४७६
रासरसिक राधारमण ४४७

ल

लिखाय नाहीं देत्यो पढ़ाय नाही देत्यो ८६२
लोक बेद लाज पत्र फाडिनी ८४५
लोनी लता लवंग की ६६०

व

वर्द्धमान अरु वर्द्धकौ ६५१
विमल वैश्य वशावली ७
वीरभद्र भद्राग भट ६४६
वीरा मनोज्ञा मेधावी ८४८
वृदा मेला कुरलिका ६५०
वेदगर्भ भागुरि महा ६४८
व्याकुल लखि सब जीवगन ५४१
व्रजजन सुखकारी ४७६

श

शीला भेरी अरु शिखा ६४८
श्री पुरुषोत्तम राधिका ५०५
श्री वृदावन राज हैं ६४७
श्रीराधा पद मौर को ६६१

स

संप्रदायि वृद जीविकाप्रदा ८४५
सान सौकत तेरे आसिक की ८६४

सारँग रसद विलास ये ६५१
सुधाकठ फलकठ इन ६५१
सुमिरि राधिका प्रानपति ५४१
सोभन दीपक नाम के ६५१
स्नेह भरन तम हरन दोउ १८१
स्वस्तिक स्यदन सख सक्ति ६६०
स्वान व्याघ्र भ्रमरक दोऊ ६५१

ह

हसी बसी पिगला ६५१
हरि पद पकज मत्त अलि ७१
है तू इस शरीर से न्यारा ८११